Educational Measurement and Evaluation

DEDU504

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY

शैक्षिक मापन तथा मूल्यांकन

EDUCATIONAL MEASUREMENT AND EVALUATION

Copyright © 2012
All rights reserved with publishers

Produced & Printed by
USI PUBLICATIONS
2/31, Nehru Enclave, Kalkaji Extn.,
New Delhi-110019
for
Lovely Professional University
Phagwara

पाठ्यक्रम (SYLLABUS)

शैक्षिक मापन तथा मूल्यांकन
(Educational Measurement and Evaluation)

उद्देश्य:
1. मापन तथा मूल्यांकन की उपयोगिता से विद्यार्थियों को परिचित करवाना।
2. विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षणों से विद्यार्थियों को परिचित करवाना।
3. उपलब्धि परीक्षण के निर्माण के चरणों तथा एक अच्छे परीक्षण (मानकीकृत तथा अमानकीकृत) की विशेषताओं से विद्यार्थी परिचित होंगे।

Objectives:

To enable the learners to :

1. Familiarise with the utility of measurement evaluation.
2. Familiarise with different kinds of psychological tests.
3. Understand the steps of the construction of an achievement test and the characteristics of good test and type of test i.e. standardized and non-standardised tests.

Sr. No.	Description
1.	Measurement and evaluation: concept, need, scope; difference and relevance. Educational testing and assessment: concept, context, issues and current trends. Scales of measurement: ordinal, nominal, interval, ratio.
2.	Characteristics of a good test. Planning for different types of test. Validity-- types and methods and usability. Reliability-- types and methods and usability.
3.	Test construction. Test standardization. Item analysis: Item difficulty, discrimination index. Effectiveness of distracters. Development of Norms of a test.
4.	Conversion of raw scores into standard scores, T-scores, C-scores, Z-scores, Stanine scores, percentiles. Interpretation of test scores: qualitative and quantitative.
5.	Criterion referenced test, Norm reference test, Factors influencing test scores: nature of test, psychological factors and environmental factors.
6.	Integrated approach of evaluation. Marking system: need, problems and components. Grading—need, problems, components and methods. Methods of feedback for students
7.	Semester system vs annual system, Continuous assessment, Portfolio assessment Question bank, Use of computer in evaluation.
8.	Achievement test: concept, types and construction. Diagnostic test: concept and construction, remedial teaching. Objective type test: advantages and limitations
9.	Short answer type test: advantages and limitations. Essay type test: advantages and limitations
10.	Formative and Summative Evaluation. Measurement of Attitude, Aptitude, personality and intelligence

विषय-सूची

इकाई (Units)	(CONTENTS)	पृष्ठ संख्या (Page No.)
1.	शैक्षिक परीक्षण तथा मूल्यांकन (Educational Testing and Assessment: Concept, Context, Issues and Current Trends)	1
2.	मापन तथा मूल्यांकन (Measurement and evaluation: Concept, Need, Scope; Difference and Relevance)	27
3.	मापन की अनुमापनियाँ (Scales of Measurement)	37
4.	अच्छे परीक्षण के गुण (Characteristics of a Good Test)	49
5.	विभिन्न प्रकार के परीक्षणों की योजना बनाना (Planning for Different Type of Test)	56
6.	वैधता-प्रकार, विधियाँ तथा उपयोगिता (Validity-Types, Methods and Usability)	62
7.	विश्वसनीयता: प्रकार, विधियाँ तथा उपयोग। (Reliability-- Types and Methods and Usability)	87
8.	परीक्षण निर्माण (Test Construction)	114
9.	परीक्षण प्रमापीकरण (Test Standardization)	128
10.	पद विश्लेषण: पद कठिनता, विभेदीकरण सूची, विकर्षन की प्रभावशीलता (Conversion of Raw Scores into Standard Scores, T-scores, C-scores, Z-scores, Stanine Scores, Percentiles)	136
11.	परीक्षण के मानक का विकास (Development of Norms of a Test)	159
12.	अपरिष्कृत प्राप्तांक का प्रमापीकृत प्राप्तांक में परिवर्तन टी-प्राप्तांक, सी-प्राप्तांक, जैड-प्राप्तांक, स्टेनाइन प्राप्तांक। (Norms of Raw Scores into Standard Scores)	171
13.	मानदण्ड संबंधित परीक्षण (Criterion Referenced Test)	193
14.	मानक संबंधित परीक्षण (Norm Referenced Test)	197
15.	प्राप्तांक पर प्रभावी कारक : परीक्षण का प्रकार, मनौवैज्ञानिक कारक तथा पर्यावरणीय कारक (Factors Influencing Test Scores: Nature of Test, Psychological Factors and Environmental Factors)	201
16.	मूल्यांकन समेकित अधिगम की विधियाँ (Integrated Approach of Evaluation)	207
17.	मार्किंग प्रणाली : आवश्यकता, समस्याएँ, घटक (Marking System: Need, Problems, Components)	222
18.	ग्रेडिंग–आवश्यकता, समस्याएँ, घटक तथा विधियाँ (Grading—Need, Problems, Components and Methods)	235

19.	छात्रों के लिए पृष्ठपोषण की विधियाँ (Methods of Feedback for Students)	242
20.	सत्र प्रणाली बनाम वार्षिक प्रणाली (Semester System vs Annual System)	270
21.	सतत् परीक्षण (Continuous Assessment)	275
22.	पोर्टफोलियो मूल्यांकन (Portfolio Assessment)	281
23.	प्रश्न बैंक (Question Bank)	288
24.	मूल्यांकन में कम्प्यूटर का उपयोग (Use of Computer in Evaluation)	294
25.	निष्पत्ति परीक्षण : अवधारणा, प्रकार तथा निर्माण (Achievement Test : Concept, Types and Construction)	303
26.	निदानात्मक परीक्षण: अवधारणा, प्रकार तथा उपचारात्मक शिक्षण (Diagnostic Test : Concept, Types and Remedial Teaching)	316
27.	वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ : लाभ तथा सीमाएँ (Objective Type Test : Advantages and Limitations)	327
28.	लघु उत्तरीय प्रश्न परीक्षण : लाभ तथा सीमाएँ (Short Answer Type Test : Advantages and Limitations)	339
29.	निबंधात्मक परीक्षण : लाभ तथा सीमाएँ (Essay Type Test : Advantages and Limitations)	346
30.	अभिवृत्ति, प्रवणता, व्यक्तित्व तथा बुद्धि का मापन (Measurement of Attitude, Aptitude, Personality and Intelligence)	353

नोट

इकाई—1: शैक्षिक परीक्षण तथा मूल्यांकन (Educational Testing and Assessment: Concept, Context, Issues and Current Trends)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

1.1 शैक्षिक परीक्षण का अर्थ (Meaning of Educational Testing)

1.2 शैक्षिक परीक्षण का संदर्भ (Context of Educational Testing)

1.3 शैक्षिक परीक्षण की समस्याएँ (Issues of Educational Testing)

1.4 शैक्षिक परीक्षण की नवीनतम प्रवृत्तियाँ (Current Trends in Testing)

1.5 शैक्षिक मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Educational Assessment)

1.6 शैक्षिक मूल्यांकन का संदर्भ (Context of Educational Assessment)

1.7 शैक्षिक मूल्यांकन की समस्याएँ (Issues of Educational Assessment)

1.8 मूल्यांकन की वर्तमान प्रणाली की नवीनतम समस्याएँ (Current Trends of Present system of Education)

1.9 सारांश (Summary)

1.10 शब्दकोश (Keywords)

1.11 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1.12 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

प्उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- शैक्षिक परीक्षण के अर्थ एवं संदर्भ को समझने में।
- शैक्षिक परीक्षण की नवीन प्रवृत्तियों और शैक्षिक मूल्यांकन के अर्थ की व्याख्या करने में।
- वर्तमान मूल्यांकन प्रणाली की नवीन समस्याओं की समीक्षा करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षा के क्षेत्र में परीक्षण तथा मूल्यांकन दोनों ही स्तम्भ का कार्य करते हैं। परीक्षण द्वारा छात्र की पाठ्यवस्तु संबंधी उपलब्धियों की सूचनाएँ एकत्रित की जाती हैं, तथा मूल्यांकन किया जाता है। परीक्षण तथा मूल्यांकन एक दूसरे के पूरक हैं।

परंपरागत ढंग से जो प्रामाणिक निष्पत्ति परीक्षा तथा शिक्षक द्वारा निर्मित परीक्षण बनाये जाते हैं, उनका लक्ष्य

नोट

पाठ्यक्रम सम्बंधित उपलब्धियों का मापन करने का है, और छात्रों की उपलब्धि स्तर का मूल्यांकन समूह में स्तरीकरण के रूप में किया जाता है।

इन परीक्षणों के मूल्यांकन द्वारा छात्रों को सहायता प्रदान की जाती है जिससे वे यह अनुभव कर सकें कि कहाँ तक उन्होंने अपने उद्देश्यों की पूर्ति की है। इस इकाई में छात्र परीक्षण तथा मूल्यांकन का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

1.1 शैक्षिक परीक्षण का अर्थ (Meaning of Educational Testing)

शैक्षिक परीक्षण का तात्पर्य परीक्षा प्रणाली से है जिसके अन्तर्गत विद्यार्थी विषय के पाठ्यक्रम के प्रश्नों के उत्तर निश्चित समय के अन्दर, लिखित अथवा मौखिक रूप से देते हैं। परीक्षण किसी भी परीक्षा प्रणाली अथवा मूल्यांकन की सबसे अधिक महत्वपूर्ण तथा प्रभावी तकनीक है। परीक्षण द्वारा ही मूल्यांकन हेतु आँकड़े तथा सूचना प्राप्त की जाती है।

1.2 शैक्षिक परीक्षण का संदर्भ (Context of Educational Testing)

परीक्षण का निर्माण करना तथा सोद्देश्य तरीके से परीक्षण का प्रयोजन करना एक जिम्मेदारीपूर्ण कार्य है। एक उत्तम परीक्षण मानकीकृत होता है। के निर्माण कुछ निश्चित प्रक्रियाएँ होती हैं, जो आवश्यक होते हैं। परीक्षण के संदर्भ में निम्नलिखित तथ्यों का अध्ययन करेंगे।

1.2.1 परीक्षण की विशेषताएँ

1. **सोद्देश्यपूर्णता (Purposiveness)**—उत्तम परीक्षण की 'सोद्देश्यपूर्णता' एक मुख्य विशेषता है। कहने का तात्पर्य यह है कि किसी भी प्रकार की परीक्षा का निर्माण करने से पूर्व उसके विशिष्ट उद्देश्य (Specific objectives) निर्धारित कर लेने चाहिये। परीक्षा चाहे निदानात्मक है, उपलब्धि मापन हेतु है, व्यक्तित्व मापन हेतु अथवा बुद्धि मापन हेतु निर्मित की गई है, प्रत्येक के उद्देश्य भिन्न होंगे। इसी दृष्टि से एक उत्तम परीक्षण का निर्माण उसी स्थिति में सम्भव है जबकि हमारे पास कोई उद्देश्य, लक्ष्य अथवा समस्या हो। अमूर्त परिस्थितियों में परीक्षण की रचना कदापि सम्भव नहीं हो सकती क्योंकि परीक्षण तो सदैव ही उद्देश्य पूर्ति का एक साधन-मात्र है। जब हमारे समक्ष कोई उद्देश्य ही नहीं होंगे तो साधनों की क्या सार्थकता रह जायेगी। इसीलिये किसी भी परीक्षण की रचना करने से पूर्व समस्या, लक्ष्य या उद्देश्य के सम्बन्ध में निर्णय कर लेना आवश्यक हो जाता है।

2. **व्यापकता (Comprehensiveness)**—व्यापकता से तात्पर्य यह है कि परीक्षा जिस योग्यता का मापन करने के लिये बनायी गई है उस योग्यता के समस्त क्षेत्र तथा जिस पाठ्यक्रम पर आधारित हो उसके समस्त पहलुओं पर प्रश्न पूछे जायें। जितना अधिक कोई परीक्षण पाठ्यक्रम एवं उसके विभिन्न अंशों एवं क्षेत्रों से सम्बन्धित होगा उतना ही व्यापक कहलायेगा। इस प्रकार प्रश्नों की संख्या बहुत अधिक हो जायेगी। अत: यह आवश्यक है कि प्रश्न छोटे-छोटे होने चाहिये। व्यापकता के इस गुण के अन्तर्गत परीक्षण का वह प्रारुप आ जाता है जिसके द्वारा परीक्षण उस योग्यता (Trait) के विभिन्न पक्षों का मापन करने में समर्थ हो सकता है, जिसके मापन हेतु उसका निर्माण किया गया है। परीक्षण मात्र परीक्षार्थी के व्यवहार के एक ही पक्ष का मूल्यांकन न करे बल्कि जहाँ तक हो सके पूरे पाठ्यक्रम से सम्बन्धित हों।

3. **मितव्ययता (Economical)**—परीक्षण निर्माण करते समय परीक्षण निर्माता को यह अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि परीक्षण धन की दृष्टि से अनुसन्धानकर्ता के लिये महँगा सिद्ध न हो। परीक्षण निर्माता की यह कोशिश रहनी चाहिये कि परीक्षण अनावश्यक रूप से विस्तृत न हो जाये। परीक्षण के स्वरूप के अनुरुप जिन अति महत्वपूर्ण पदों के समावेश से परीक्षण उद्देश्यों की पूर्ति हो सके केवल उन्हीं पदों को परीक्षण में स्थान दिया जाना चाहिये। व्यर्थ के पदों को परीक्षण में सम्मिलित करके मात्र परीक्षण लम्बाई की औपचारिकता पूरी न की जाये। साथ ही, उत्तर प्रपत्र (Response Sheet) अत्यन्त कुशलतापूर्वक तैयार की जाये ताकि प्रपत्र अधिक विस्तृत न हो जाये। संक्षेप में, एक उत्तम परीक्षण समय एवं धन की दृष्टि से मितव्ययी होना चाहिये।

4. **ग्राह्यता (Acceptability)**—एक अच्छे परीक्षण में ग्राह्यता का गुण होना भी अनिवार्य है। ग्राह्यता से तात्पर्य है—किसी भी परीक्षण का उन व्यक्तियों पर तथा उन परिस्थितियों में सफलतापूर्वक प्रशासित किया जाना जिनको आधार बनाकर

उस परीक्षण विशेष की मानकीकरण प्रक्रिया (Process of Standardization) सम्पन्न की गई है। परीक्षण मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं—अध्यापक निर्मित परीक्षण तथा मानकीकृत परीक्षण। अध्यापक निर्मित परीक्षणों की यही एक मुख्य सीमा होती है कि उनका प्रयोग क्षेत्र अत्यन्त सीमित होता है तथा इनका सफल प्रशासन कक्षा परिस्थितियों पर अत्यन्त निर्भर करता है।

5. प्रतिनिधित्वा (Representativeness)—सृष्टि की कोई सीमा नहीं। कोई भी व्यक्ति यह दावा नहीं कर सकता कि जितना ज्ञान वह रखता है उसके आगे कुछ है ही नहीं। लेकिन फिर भी हम इस प्रकार के दावे आत्म विश्वास के साथ करते हैं, जैसे-विश्व में सारे कौवे काले होते हैं। अब यह तो है नहीं कि इस प्रकार की घोषणा करने वाले व्यक्ति ने पूरे विश्व का भ्रमण करके ऐसी बात कही हो, क्योंकि ऐसा करना सम्भव ही नहीं है। वस्तुत: हम पूरी जनसंख्या को लेकर कोई अनुसन्धान कार्य अवश्य करते हैं लेकिन पूरी जनसंख्या के आँकड़े नहीं ले पाते। अत: उसमें से एक विस्तृत न्यादर्श (Representative Sample) ले लेते हैं जिस पर हमारा सम्पूर्ण अनुसंधान कार्य आधारित होता है। एक उत्तम परीक्षण की दृष्टि से उसमें यह विशेषता होनी चाहिये कि वह प्रतिनिधि कहा जा सके। कहने का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति के व्यवहार के जिस न्यादर्श का मापन करने के लिये परीक्षण की रचना की गई है उसका मापन परीक्षण प्रतिनिधित्व से कर सके।

(1) **मानकीकृत (Standardized)**—एक उत्तम परीक्षण मानकीकृत होता है। इसका अर्थ यह है कि परीक्षण में दिये जाने वाले प्रश्नों, निर्देशों, परीक्षा लेने की विधियों तथा प्रशासन एवं फलांकन प्रक्रिया को पहले से ही निश्चित कर लिया गया हो ताकि मूल्यांकन वस्तुनिष्ठ तरीके से किया जा सके। **सी. वी. गुड (C.V.Good)** के अनुसार—एक मानकीकृत परीक्षण वह है जिसमें विषयवस्तु का चयन अनुभव के आधार पर किया गया हो, जिसके प्रशासन एवं फलांकन की समरूप विधियों को विकसित किया गया हो तथा फलांकन को वस्तुनिष्ठ विधि से किया गया हो।

(2) **वस्तुनिष्ठता (Objectivity)**—किसी भी परीक्षण का वस्तुनिष्ठा होना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि इसका प्रभाव विश्वसनीयता एवं वैधता दोनों पर ही पड़ता है। वास्तव में जो परीक्षा वस्तुनिष्ठा नहीं होती वह वैध तथा विश्वसनीय भी नहीं हो सकती। कोई परीक्षा वस्तुनिष्ठ तब होती है जब उसके प्रश्नों के उत्तरों पर अंक देते समय विभिन्न व्यक्तियों का मतभेद न हो, जिसके प्रश्नों की व्याख्या या जिनके अर्थ भिन्न-भिन्न प्रकार से न किये जा सकते हों, जिनके उत्तर बिल्कुल ठीक या बिल्कुल अशुद्ध हों और उन पर अंक देते समय विभिन्न व्यक्तियों में मतभेद न होता हो। संक्षेप में, वह परीक्षा वस्तुनिष्ठ कहलाती है जिस पर परीक्षक का व्यक्तिगत प्रभाव नहीं पड़ता है।

(3) **विभेदकारिता (Discriminative)**—एक उत्तम परीक्षण में विभेदकारिता का गुण अनिवार्य रूप से विद्यमान रहता है। वस्तुत: विभेदकारी परीक्षा उस परीक्षा को कहते हैं जो उच्च योग्यता एवं निम्न योग्यता वाले विद्यार्थियों में भेद बता सकें अर्थात्, यह परीक्षण प्रतिभाशाली एवं मन्दबुद्धि बालकों में अन्तर स्पष्ट कर सके। इस उद्देश्य से परीक्षा के प्रश्न कुछ जटिल बनाये जाते हैं और कुछ सरल जिससे कि उन्हें दोनों प्रकार के विद्यार्थी हल कर सकें। परीक्षण की यह विशेषता होनी चाहिये कि कुछ अच्छे विद्यार्थियों को अधिक अंक मिलें तथा कमजोर विद्यार्थियों को कम अंक मिलें।

(4) **विश्वसनीयता (Reliability)**—एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता उसकी विश्वसनीयता है अर्थात्, जिस पर विश्वास किया जा सके। विश्वसनीयता से हमारा तात्पर्य ऐसी परीक्षा से है जिसको बार-बार प्रशासित करने पर एक से ही निष्कर्ष प्राप्त हों।

'If refers to the consistency of measurement' अर्थात्, यदि किसी परीक्षा के परिणाम पुनर्परीक्षण के पश्चात् समान परिस्थितियों में एक समान बने रहते हैं तो उस परीक्षा को विश्वसनीय माना जाता है इस प्रकार किसी परीक्षा की विश्वसनीयता परीक्षा में न्यादर्श की मात्रा (Sample size) तथा अंकों की वस्तुनिष्ठता पर निर्भर करती है। विश्वसनीयता का सम्बन्ध मापन की यथार्थता से है। किसी भी प्रकार के मापन में कोई भी त्रुटि न हो सम्भव नहीं होता।

नोट

(5) वैधता (Validity)—वैधता किसी भी परीक्षण का एक अत्यन्त आवश्यक गुण है क्योंकि जब तक कोई परीक्षण वैध नहीं है वह उपयोगी नहीं हो सकता।

"Validity means truthfulness or purposiveness of a test." इसका आशय यह है कि यदि कोई परीक्षण वही मापन करता है। जिसका मापन करने के लिये उसका निर्माण हुआ है तो वह परीक्षण वैध कहलाता है। प्रत्येक परीक्षा का निर्माण किसी न किसी प्रयोजन को ध्यान में रखकर ही किया जाता है। यदि कोई परीक्षण किसी श्रेणी अथवा स्तर के विद्यार्थियों के लिये उसी विषय अथवा विशेषता का ही मापन करता है जिसके लिये उसका निर्माण किया गया है तो वह परीक्षा वैध (Valid) मानी जाती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि, "वैधता का अर्थ है वह कार्य कुशलता जिससे कोई परीक्षण उस तथ्य का मापन करता है जिसके लिये वह बनाया गया है।

नोट्स एक मानकीकृत परीक्षण का प्रयोग व्यापकता से किया जा सकता है। मानकीकरण के अभाव में परीक्षण का कोई अर्थ नहीं होता, चाहे वह कितना ही अच्छा क्यूँ न बनाया गया हो। प्रक्रिया के अन्त में विभिन्न प्रकार के मानक स्थापित किये जाते हैं जो परीक्षण के उद्देश्यों के अनुरुप होते हैं।

1.2.2 परीक्षण के उद्‌देश्य

1. परीक्षण को अनुचित प्रयोग से बचाने के लिए यह आवश्यक है कि सर्वप्रथम परीक्षण के अभिप्राय (Purposes) निश्चित कर लिए जायें।

अभिप्राय (Purposes) उद्देश्यों (objectives) से भिन्न हैं। उद्देश्यों का सम्बन्ध पाठ्यवस्तु से होता है। अभिप्राय का अर्थ परीक्षण के प्रयोग से सम्बन्धित है यथा-परीक्षण चयन (Selection Test) के लिये है या निदान के लिये (Diagnostic Test) अथवा कक्षोन्नति (Promotion) के लिए है। चयन परीक्षण की पाठ्यवस्तु कठिन होगी क्योंकि हमें श्रेष्ठ 5% की तुलना करनी होगी जबकि निदानात्मक परीक्षण में किसी एक इकाई पाठ्यवस्तु के प्रत्येक शिक्षण बिन्दु पर अनेक विश्लेषणात्मक प्रश्न और कक्षोन्नति परीक्षण में समस्त पाठ्यक्रम को चुना जाता है।

2. उपयुक्त पाठ्यक्रम तथा उद्देश्यों का विश्लेषण—

(क) उपयुक्त पाठ्यक्रम निर्धारित करना (Selecting appropriate Content):परीक्षा सम्बन्धी उद्देश्य निश्चित कर लेने के पश्चात् परीक्षण निर्माता उपयुक्त पाठ्यक्रम का चयन करता है जिसके आधार पर वह परीक्षा का निर्माण कर सके एवं उन सभी उद्देश्यों की प्राप्ति कर सके जो उसने पूर्व निश्चित किये हैं। परीक्षण निर्माता का एक मात्र उद्देश्य उपयुक्त पाठ्यक्रम चयन की दृष्टि से यह होना चाहिये कि जिस विषय सामग्री का समावेश वह करना चाहता है वह अधिक से अधिक वैध (Valid) बन सके। अंकगणित, बीजगणित तथा रेखागणित आदि विषयों में मानकीकृत परीक्षाओं का निर्माण अधिक आसानी से किया जा सकता है क्योंकि उनके शिक्षण के सामान्य अथवा विशिष्ट उद्देश्यों के विषय में कभी दो मत नहीं हो सकते। जिन विषयों में मात्र तथ्यों पर अधिक महत्त्व दिया जाता है उन विषयो में मानकीकृत परीक्षाओं का निर्माण आसानी से किया जा सकता है लेकिन जिन विषयों के ज्ञान के अंश दक्षतायें एवं परिणाम जिस सीमा तक अनिश्चित होते हैं उनमें प्रमापीकृत परीक्षाओं का निर्माण उतना ही कठिन हो जाता है क्योंकि उनका तन्मापीकरण (Validation) वैसा ही दुरुह एवं जटिल बन जाता है। परीक्षा के लिए चयनित पाठ्यक्रम सामान्य प्रकृति का ही होना चाहिये, किसी विद्यालय अथवा प्रदेश विशेष के लिए नहीं, क्योंकि प्रमापीकृत परीक्षाएँ कहीं भी प्रयोग में लायी जा सकती हैं।

(ख) उद्देश्य निर्धारित करना (Determining Objectives)—किसी भी परीक्षा का निर्माण करने से पूर्व परीक्षण निर्माता का सबसे प्रमुख उद्देश्य परीक्षा निर्माण का उद्देश्य निश्चित करना होता है ताकि उसी के अनुरूप उपयुक्त पाठ्यक्रम का चयन किया जा सके तथा प्रश्नों का निर्माण भी किया जा सके। उदाहरण के तौर पर, यदि हम गणित में किसी परीक्षण का निर्माण करना चाहते हैं, तो हमारे दो प्रमुख उद्देश्य हो सकते हैं। प्रथम, विद्यार्थी की तर्क शक्ति,

नोट

निरीक्षण शक्ति, विचार शक्ति आदि का मापन अथवा विषय सम्बन्धी अन्य कौशलों का ज्ञान तथा द्वितीय, गणित के मूल प्रत्ययों (basic fundamentals) सम्बन्धी तथ्यों का ज्ञान। इसी प्रकार विभिन्न विषयों के लिए अलग-अलग उद्देश्य निर्धारित किये जा सकते हैं तथा परीक्षण निष्पत्ति के मापन (Achievement Test) हेतु अथवा निदान (Diagnostic Test) हेतु है यह भी स्पष्ट होना चाहिए।

(ग) चयनित विषय-वस्तु का आलोचनात्मक विश्लेषण (Critical analysis of the Subject Matter to be tested)—यह देखने के लिये कि चयनित पाठ्य-वस्तु उस कक्षा विशेष अथवा आयु समूह के छात्रों की दृष्टि से उपयुक्त है या नहीं जिनके लिए उस परीक्षा का निर्माण किया गया है, पाठ्यवस्तु की वैधता स्थापित की जाती है। एक अध्यापक उन छात्रों की योग्यता का मापन तो आसानी से कर सकता है जिनको वह पढ़ाता है लेकिन प्रमापीकृत परीक्षा का निर्माण करने वाला न तो यह जानता है कि जिन बालकों की योग्यता का मापन वह करना चाहता है उनके अध्यापकों ने किन-किन उद्देश्यों को लेकर उनका अध्यापन प्रारम्भ किया था और न ही यह जानता है कि किस विद्यालय में किस उप-विषय पर कितना समय दिया गया है। यहाँ यह कहने में तनिक भी सन्देह नहीं कि यदि अध्यापक अपनी परीक्षा को वैध बनाना चाहता है तो उसे उन उद्देश्यों तथा महत्वपूर्ण उप-विषयों का ज्ञान होना चाहिये। लेकिन वह अपनी परिसीमाओं को ध्यान में रखकर विषय-वस्तु के क्षेत्र का चुनाव उस कक्षा में पढ़ाई जाने वाली पुस्तकों, अध्यापकों द्वारा बनाये गये प्रश्न पत्रों एवं शिक्षा परिषदों द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रमों का विश्लेषण करने के पश्चात् ही करता है। यदि भाग्यवश विषय ऐसा हुआ जिसके उद्देश्य एवं शिक्षण परिणामों पर विषय के अधिकांश अध्यापक सहमत हों तो उस विषय-वस्तु का चुनाव अपेक्षाकृत सरल हो जाता है। चयनित पाठ्यवस्तु की वैधता तीन प्रकार की होती है—(*a*) पाठ्यक्रम की वैधता, (*b*) साँख्यिकीय वैधता तथा (*c*) मनोवैज्ञानिक एवं तर्कसंगत वैधता। पाठ्यक्रम वैधता के अन्तर्गत यह देखा जाता है कि जिस कक्षा विशेष अथवा आयु समूह के लिये परीक्षा बनाई गई है उसका निर्धारित पूरा पाठ्यक्रम परीक्षा में सम्मिलित कर लिया गया है अथवा नहीं। यदि पाठ्यवस्तु का कोई भाग ऐसा है जो उस कक्षा विशेष के पाठ्यक्रम में सम्मिलित नहीं किया गया है तो उसे हटा देना चाहिये।

3. प्रश्नों की रचना (Construction of test-items)—परीक्षा के प्रश्नों की रचना करते समय यह ध्यान में रखना चाहिये कि प्रश्न पूरे पाठ्यक्रम का प्रतिनिधित्व करें। साथ ही, प्रश्नों में वे सभी विशेषताएं होनी चाहिये जो एक अच्छे प्रश्न में होती हैं। प्रश्न की सबसे प्रमुख विशेषता उसका वस्तुनिष्ठ एवं विभेदकारी होना माना जाता है। इसके अतिरिक्त प्रश्नों की रचना करते समय निम्न बातों को भी ध्यान में रखना चाहिये—

(*a*) प्रश्नों के विभिन्न रूपों का समावेश किया जाये।

(*b*) प्रश्न-पत्र के प्रारम्भिक रूप में प्रश्नों की संख्या पर्याप्त रखी जाये क्योंकि बाद में बहुत से प्रश्न कठिनाई स्तर एवं वैधता एवं दृष्टि से उचित न पाये जाने पर प्रश्न-पत्र में से निकाल दिये जाते हैं।

(*c*) प्रश्नों की भाषा सरल, संक्षिप्त एवं स्पष्ट होनी चाहिए। परीक्षार्थी को व्यर्थ में उलझाने का प्रयास न किया जाये।

(*d*) ऐसे प्रश्नों को न जाने दिया जाये जिनका उत्तर अनुमान से दिये जाने की सम्भावना हो।

(*e*) प्रश्नों का स्वरूप इस प्रकार निश्चित किया जाये ताकि छात्र-विशेष व्यक्तिगत तौर पर लाभ न उठा सके।

(*f*) परीक्षा के अन्तिम प्रारूप में प्रश्नों की संख्या न तो बहुत अधिक रखी जाये और न ही बहुत कम। प्रश्नों की संख्या कम रखने से परीक्षा की विश्वसनीयता प्रभावित होती है और अधिक रखने से छात्र को उबाऊ प्रतीत होती है।

1.2.3 परीक्षण का प्रारूप

प्रश्नों को प्रश्न पत्र के रूप में लिखकर उसे परीक्षण का रूप दिया जाता है। परीक्षार्थियों को निर्देशन, परीक्षण की कुंजी आदि को तैयार किया जाता है। अब यह परीक्षण प्रारम्भिक Try-out के लिए तैयार है।

5. प्रश्नों का चयन (Selection of test items)—परीक्षा का प्रारम्भिक प्रारूप (First try-out) तैयार हो जाने पर इस परीक्षा को प्रश्नों की छँटनी करने के लिये विद्यार्थियों के एक प्रतिनिध्यात्मक समूह (Representative sample) अथवा एक विशाल समूह पर प्रशासित किया जाता है। इस प्रारूप में यह निश्चित किया जाता है कि कौन से प्रश्न विभेदकारी हैं कौन से नहीं, सम्पूर्ण परीक्षा कहाँ तक विश्वसनीय, वैध, प्रयोज्य, व्यापक अथवा वस्तुनिष्ठ है। परीक्षा

नोट

लेने के बाद परीक्षार्थियों की उत्तर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन किया जाता है तथा उनमें से उन प्रश्नों को छाँट लिया जाता है जिन्हें 75% या उससे अधिक परीक्षार्थियों ने सही किया है तथा जिन्हें 25% परीक्षार्थी भी सही हल नहीं कर पाये हैं। 17% वाले प्रश्न अत्यन्त सरल तथा 25% वाले प्रश्न अत्यन्त कठिन समझे जाते हैं। इनके अतिरिक्त, शेष प्रश्नों को सरल से कठिन के क्रम में व्यवस्थित कर लिया जाता है।

6. प्रश्नों की वैधता निश्चित करना (Establishing Validity of test-items)—प्रश्न की वैधता की जाँच करने के लिए प्रश्न को तीन कसौटियों यथा-वस्तुनिष्ठता, स्तर एवं विभेदकारिता पर परखा जाता है। वस्तुनिष्ठता की दृष्टि से प्रश्न में निम्न तीन गुण निहित होने चाहिये—

(*a*) प्रश्न का केवल एक ही उत्तर ठीक होना चाहिये।

(*b*) प्रश्न का उत्तर प्रश्न में ही निहित नहीं होना चाहिये।

(*c*) प्रश्न की भाषा सरल, संक्षिप्त एवं स्पष्ट होनी चाहिये। परीक्षार्थी व्यर्थ में उलझन में न पड़े।

इसके अतिरिक्त, जहाँ प्रश्न की कठिनाई स्तर का सम्बन्ध है प्रश्न किसी भी कक्षा विशेष अथवा आयु समूह के मानसिक स्तर के अनुकूल हों। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रश्न न तो बहुत सरल ही हों और न ही बहुत कठिन। विभेदकारिता की दृष्टि से प्रश्न इस प्रकार के होने चाहिये कि वे योग्य और अयोग्य बालक के बीच भेद कर सकें अर्थात्, जिन प्रश्नों का उत्तर योग्य बालक आसानी से दे देते हैं अयोग्य बालक उन्हीं प्रश्नों का ठीक उत्तर न दे पायें। जिन प्रश्नों में उपरोक्त गुणों का अभाव होता है उन्हें परीक्षा से निकाल दिया जाता है अथवा उचित संशोधन या परिवर्तन कर दिया जाता है। बचे हुए प्रश्नों को फिर से क्रम में लिख लिया जाता है। अन्त में जो शोधित स्वरूप प्राप्त होता है वही प्रामाणिक परीक्षा कहलाती है।

7. समानान्तर परीक्षा प्रारूप तैयार करना (Preparation of the parallel form of the test)—प्राय: सभी प्रमापीकृत परीक्षणों का एक समानान्तर प्रारूप भी तैयार किया जाता है जो आकार, रूप, कठिनाई स्तर एवं अन्य दृष्टियों से परीक्षण के मूल रूप के समरूप होता है। ऐसा इस उद्देश्य से किया जाता है कि यदि परीक्षार्थियों की पुन: परीक्षा लेने की आवश्यकता पड़े तो इस दूसरे समानान्तर प्रारूप का प्रयोग किया जा सके। एक ही परीक्षा को दो बार प्रशासित किया जाना मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उचित प्रतीत नहीं होता। चूँकि, परीक्षा का समानान्तर प्रारूप भी तैयार करने में उतना ही समय, धन एवं परिश्रम लगता है जितना कि परीक्षा के मूल रूप को तैयार करने में, इस दृष्टि से सुविधा हेतु परीक्षा के मूल रूप को ही दो भागों में विभक्त (Split) कर लिया जाता है। इस कार्य के लिए जो सिद्धान्त प्रयोग में लाया जाता है उसके अनुसार सम्पूर्ण परीक्षा के सम प्रश्नों (Even number items) (जैसे 2, 4, 6, 8 आदि) को मूल रूप या प्रथम रूप तथा विषम प्रश्नों (Odd number) (जैसे 1, 3, 5, 7 आदि) को परीक्षा के समानान्तर प्रारूप या द्वितीय रूप में रख दिया जाता है। इस प्रकार परीक्षा के दोनों प्रारूपों में एक से ही कठिनाई स्तर के प्रश्न आ जायेंगे तथा उनका कठिनाई क्रम भी बना रहेगा।

8. मानक निर्धारण (Determining Test Norms)—जैसा कि प्रामापीकरण की परिभाषा से स्पष्ट है कि एक प्रमापीकृत परीक्षा वह होती है जिसके मानक निश्चित कर लिये गये हों इस दृष्टि से परीक्षा के प्रमापीकरण हेतु मुख्य मानक जैसे, आयु मानक (Age Norms), ग्रेड मानक (Grade Norms) तथा शतांशीय मानक (Percentile Norms) तैयार कर लिये जाते हैं। इन मानकों के अतिरिक्त कभी-कभी प्रामाणिक मानक (Standard Norms) स्थापित करने की भी आवश्यकता पड़ जाती है। यह मध्यांक मान ही उस कक्षा विशेष या आयु समूह के लिए सामान्य स्तर या मानक मान लिया जाता है। अब यदि कोई छात्र इस सामान्य स्तर से अधिक अंक प्राप्त करता है तो हम उसे बुद्धिमान कहेंगे और यदि वह इस सामान्य स्तर से कम अंक प्राप्त करता है तो हम उसे मन्द बुद्धि छात्र कहेंगें। मानक एक प्रकार की तालिका होती है जिसमें एक ओर आयु के अनुसार प्राप्त अंक तथा दूसरी ओर उन प्राप्त अंकों से सम्बन्धित बुद्धि-लब्धि अथवा साफल्य आयु दी रहती है। अब जब कभी हमें किसी बालक की बुद्धि अथवा योग्यता की परीक्षा करनी होती है तो उसे तत्सम्बन्धित बुद्धि अथवा साफल्य परीक्षा दे दी जाती है ओर उसके द्वारा प्राप्त अंकों को इन मानकों की सहायता से बुद्धि-लब्धि अथवा साफल्य आयु आदि में बदल लिया जाता है। आजकल शतांशीय

मानक (Precentile Norms) तैयार करना अधिक उपयुक्त समझा जाता है क्योंकि इन मानकों से यह आसानी से ज्ञात हो जाता है कि अमुक परीक्षार्थी की समूह में क्या स्थिति है।

9. परीक्षा का अन्तिम प्रारूप (Final form of the test)—परीक्षा को अन्तिम प्रारूप दिये जाने के बाद सम्पूर्ण परीक्षा की एक बार पुन: वैधता एवं विश्वसनीयता ज्ञात की जाती है। परीक्षा की वैधता किसी उपयुक्त कसौटी (criterion) के आधार पर स्थापित की जाती है, तथा विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए निम्न प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है—

(*a*) परीक्षण पुनर्परीक्षण विधि (Test-Retest Method)

(*b*) अर्ध-विटापन विधि (Split Half Method)

(*c*) समानान्तर प्रारूप विधि (Parallel form Method)

(*d*) कूड रिचर्डसन फार्मूला (K-R Formula)

10. परीक्षण सामग्री छपाई (Printing Test Material)—परीक्षण का अन्तिम रूप निश्चित हो जाने पर समस्त सम्बन्धित सामग्री छपवा ली जाती है। परीक्षण का विस्तृत ब्यौरा परीक्षण मैनुअल (Test-manual) के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यह मैनुअल प्रत्येक प्रामाणिक परीक्षण का एक अभिन्न तथा आवश्यक अंग समझा जाता है। इसके अन्तर्गत परीक्षा पुस्तिका की छपाई, मुखपृष्ठ पर आवश्यक निर्देश, परीक्षा की प्रकृति, उत्तर देने का ढंग, परीक्षा के लिए निर्धारित समय, फलांकन कुंजी, परीक्षक के लिये निर्देश पुस्तिका (परीक्षा किस प्रकार लेनी है, परीक्षार्थियों को क्या-क्या निर्देश देने हैं, परीक्षा में क्या-क्या सावधानियाँ बरतनी हैं, परीक्षा का मूल्यांकन किस प्रकार करना है, परीक्षाफल की व्याख्या किस प्रकार करनी है आदि) तथा मानक आदि सम्मिलित किये जाते हैं। मानकों को अलग से या निर्देश पुस्तिका में ही छपवा दिया जाता है।

क्या आप जानते हैं प्रमापीकृत परीक्षाओं में आयु मानक तथा उपलब्धि परीक्षणों (Achievement Test) में ग्रेड मानक तथा शतांशीय मानक तैयार किये जाते हैं। मानक तैयार करने के लिए किसी कक्षा विशेष अथवा आयु समूह के लिए एक परीक्षा तैयार की जाती है फिर इस परीक्षा को उस कक्षा के समस्त विद्यार्थियों पर प्रशासित करके विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त अंकों का मध्यमान ज्ञात कर लिया है।

1.2.4 परीक्षाओं के गुण (Merits of Standaridized Test)

मानकीकृत परीक्षाओं के प्रमुख गुण निम्न हैं—

1. तुलनात्मक अध्ययन में इन सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।
2. ये परीक्षाएँ छात्र का शैक्षिक एवं व्यावसायिक मार्ग-दर्शन करने में सहायक होती हैं।
3. इन परीक्षाओं के माध्यम से छात्र को अपनी कमजोरियों एवं क्षमताओं का आभास आसानी से हो जाता है।
4. इन परीक्षाओं के आधार पर किसी छात्र की विभिन्न विषयों की उपलब्धियों में सहसम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है।
5. ये परीक्षाएँ विद्यार्थियों का वर्गीकरण करने में सहायक होती हैं।
6. ये परीक्षाएँ कक्षा सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं के हल करने में अथवा विद्यार्थियों के बारे में जानकारी प्राप्त करने में अध्यापक की सहायता करती हैं।
7. ये परीक्षाएँ छात्र के व्यक्तित्व का पूर्ण रूप से परीक्षण करती हैं।
8. ये परीक्षाएँ विभिन्न विद्यालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों अथवा एक ही कक्षा में पढ़ने वाले लड़के एवं लड़कियों की बुद्धि अथवा योग्यता में विभेद करने में सहायक होती हैं।

नोट

9. इन परीक्षाओं की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इन्हें कहीं भी और किसी भी समय प्रशासित किया जा सकता है। तथा प्राप्त परिणामों की विश्वसनीयता बनी रहती है।

"Most teachers prefer standardized test that differ from their own informal examinations only in that they are provided with norms and that they are more reliable, more objective, more easily scored, more highly refined technically than their own product." *–Lindquist*

1.2.5 अधिगम मापन परीक्षाएँ (Tests for Measuring Learing)

अधिगम मापने के लिये कई प्रकार की निष्पत्ति परीक्षाओं का प्रयोग किया जाता है। निम्नलिखित पंक्तियों में हम प्रमुख निष्पत्ति परीक्षाओं पर प्रकाश डाल रहे हैं–

(*b*) मौखिक परीक्षायें (Verbal Test)–मौखिक परीक्षाओं का उद्देश्य विद्यार्थियों की मौखिक प्रश्नों द्वारा तुरन्त अभिव्यक्ति तथा क्रियाशीलता की जाँच करना है। इन परीक्षाओं का प्रयोग पहले तो छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिये ही किया जाता था परन्तु आजकल इनका प्रयोग बड़ी कक्षाओं में प्रवेश, साक्षात्कार तथा वाइवा-वोसी के लिये भी किया जाता है।

मौखिक परीक्षाओं का प्रयोग विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान, तथ्यों के ज्ञान के प्रत्यास्मरण (Recall), लिखित परीक्षा की पूर्ति तथा उनके उच्चारण की योग्यता एवं व्यक्तिगत गुणों का मापन करने के लिये किया जाता है। इन परीक्षाओं के निम्नलिखित दोष हैं–

(*i*) इनके द्वारा लज्जाशील विद्यार्थी अपने ज्ञान तथा योग्यता का प्रदर्शन नहीं कर पाते।

(*ii*) इनके परिणामों में आत्मनिष्ठता (Subjectivity) की मात्रा अधिक होती है।

(*iii*) इनका कोई लिखित प्रमाण नहीं होता। अतः अंक प्रदान करने में शिक्षक मनमानी कर सकता है।

(*iv*) ये परीक्षाएँ प्रत्येक विद्यार्थी के लिये न्याय संगत नहीं है।

लिखित परीक्षायें (Written Tests)–लिखित परीक्षायें दो प्रकार की होती हैं–(*i*) निबन्धात्मक तथा (*ii*) वस्तुनिष्ठ। उक्त दोनों प्रकार की परीक्षाओं के सम्बन्ध में हम इसी अध्याय में आगे चलकर प्रकाश डाल रहें है।

प्रयोगात्मक परीक्षायें (Practical Test)–प्रयोगात्मक परीक्षाओं में विद्यार्थी किसी निर्धारित कार्य को प्रयोग द्वारा पूरा करते हैं। इस प्रकार की परीक्षाओं का प्रयोग रसायन-शास्त्र तथा भौतिक शास्त्र एवं भूगोल आदि में होता है।

कौशल प्रदर्शन परीक्षायें (Performance Tests)–कौशल प्रदर्शन परीक्षाओं में विद्यार्थी लिखकर उत्तर नहीं देते वरन् वे अपने विषय की योग्यता का परिचय किसी कार्य को करके देते हैं। इस प्रकार की परीक्षाओं का प्रयोग संगीत, कला तथा विज्ञान आदि विषयों में विशेष रूप से किया जाता है।

(*c*) निबन्धात्मक परीक्षाएँ (Essay Type Tests): निबन्धात्मक परीक्षाओं का अर्थ (Meaning of Essay Type Tests)–निबन्धात्मक परीक्षाओं का तात्पर्य ऐसी परीक्षा प्रणाली से है जिसके अन्तर्गत विद्यार्थी पाठ्य-क्रम के कई प्रश्नों के उत्तर निश्चित समय के अन्दर निबन्ध के रूप में देते है। इन परीक्षाओं में प्रश्नों के उत्तर इतने लम्बे होते हैं कि परीक्षक विद्यार्थियों को विचार, तुलना, अभिव्यंजन, तर्क तथा आलोचना आदि शक्तियों के साथ-साथ विचारों को संगठित करने की योग्यता तथा भाषा एवं शैली का मापन भली-भाँति कर सकता है। स्मरण रहे कि प्रत्यास्मरण (Recall) तथा पहचान (Recognition) स्तर पर विद्यार्थियों की निष्पत्ति का मापन वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के द्वारा अवश्य किया जा सकता है परन्तु निर्वाचन (Interpretation), प्रयोग (Application) तथा मूल्यांकन (Evaluation) स्तर पर निबन्धात्मक परीक्षा का प्रयोग करना परम आवश्यक है।

(*d*) निबन्धात्मक परीक्षाओं के गुण (Merits of Essay Type Tests)निबन्धात्मक परीक्षाओं के गुण निम्नलिखित हैं–

(*i*) सरल निर्माण (Essay Construction)–निबन्धात्मक परीक्षाओं के प्रश्न-पत्र छोटे होते हैं। इनके बनाने में किसी विशेष योग्यता की आवश्यकता नहीं पड़ती। इन्हें बहुत ही कम समय में बनाकर थोड़े खर्चे में छपवाया जा सकता है।

नोट

(*ii*) **सभी विषयों के लिये उपयुक्त** (Suitable for all Subjects)—इन परीक्षाओं का प्रयोग प्रत्येक विषय के मापन के लिये किया जा सकता है। कुछ ही ऐसी योग्यतायें तथा कौशल हैं जिनके मापन के लिये वस्तुनिष्ठ परीक्षायें आवश्यक हैं अन्यथा ये पाठ्यक्रम के प्रत्येक विषय के मापन हेतु उपयुक्त हैं।

(*iii*) **अध्ययन करने की अच्छी आदत का विकास** (Development of Good Study Habits)—ये परीक्षायें विद्यार्थियों में प्रत्येक पाठ की रूपरेखा बनाने तथा ज्ञान के विभिन्न अंगों में सम्बन्ध स्थापित करने के लिये ऐसी प्रवृत्तियों को प्रेरणा देती है जो उनके लिये लाभदायक सिद्ध होती है। इससे विद्यार्थियों में अच्छी आदत का विकास होता है।

(*iv*) **मानसिक योग्यताओं का मापन** (Measurement of Mental Abilities)—विद्यार्थियों की विचार, तर्क, अभिव्यंजन तथा आलोचना आदि मानसिक योग्यताओं का मापन केवल निबन्धात्मक परीक्षाओं द्वारा ही सम्भव है, वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं द्वारा नहीं। स्पष्ट है कि ये परीक्षायें विद्यार्थियों की मानसिक योग्यताओं तथा शक्तियों के मापन में पूर्णरूपेण सिद्ध होती है।

(*v*) **तथ्यों का दूसरी परिस्थितियों में प्रयोग** (Test Application of Knowledge in Different Spheres)—इन परीक्षाओं के प्रश्न वर्णन करो, स्पष्ट करों, विवेचना करो, समालोचना करो तथा कारण बताओ आदि से आरम्भ होते हैं। इससे विद्यार्थी जहाँ एक और तथ्यों का वर्णन करते हैं वहीं दूसरी ओर वे उनको दूसरी परिस्थितियों में प्रयोग करना भी सीख जाते हैं। इससे इस बात का मापन आसानी से किया जा सकता है कि विद्यार्थी तथ्यों का वर्णन करने के साथ-साथ उन्हें दूसरी परिस्थितियों में कैसे प्रयोग करते हैं।

(*vi*) **भाषा तथा शैली में सुधार निश्चित** (Definite Improvement in Language and Style)—इन परीक्षाओं मे विद्यार्थियों को भाषा के लिखने पर अधिक बल दिया जाता है। इससे उनकी भाषा तथा शैली में सुधार होना निश्चित है। यह बात वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं द्वारा सम्भव नहीं है।

(*vii*) **शिक्षक की कुशलता का मापन** (Measurement of Teacher's Efficiency)—इन परीक्षाओं द्वारा जहाँ एक और विद्यार्थियों की मानसिक शक्तियों का मापन होता है, वहाँ दूसरी और इनके द्वारा शिक्षक की शिक्षण योजना, कुशलता एवं पटुता का मापन भी सरलतापूर्वक हो जाता है।

(*viii*) **सुविधाजनक** (Convenient)—इन परीक्षाओं के प्रश्न-पत्र बनाने तथा प्रश्नों को जाँचने में किसी विशेष योग्यता परिश्रम की आवश्यकता नहीं होती। यही नहीं, इन परीक्षाओं में कोई ऐसे विशेष निर्देश भी नहीं होते जिन्हें विद्यार्थी न समझ सकें। इस दृष्टि से निबन्धात्मक परीक्षायें शिक्षकों तथा विद्यार्थियों दोनों के लिये सुविधाजनक है।

(*ix*) **उत्तर की स्वतन्त्रता** (Freedom of Response)—इन परीक्षाओं में विद्यार्थियों को अपने विचारों की तर्क पूर्ण ढंग से व्यक्त करने की स्वतन्त्रता होती है। वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में विद्यार्थियों की तर्क-वितर्क करने की स्वतन्त्रता नहीं होती।

(*x*) **समय, श्रम तथा धन की मितव्ययिता** (Economy of Time Labour and Money)—इन परीक्षाओं का मूल्यांकन एक ही समय में होता है। उनकी उत्तर-पुस्तिकओं का मापन भी एक ही साथ होता है। साथ ही उनकी सफलता तथा असफलता के सम्बन्ध में बिना किसी कठिनाई के भविष्यवाणी भी की जा सकती है। उक्त सभी बातों में समय, श्रम तथा धन की मितव्ययिता होती है।

1.3 शैक्षिक परीक्षण की समस्याएँ (Issues of Educational Testing)

उपर्युक्त गुणों के होते हुये भी निबन्धात्मक परीक्षायें विद्यार्थियों की सभी निष्पत्तियों का मापन नहीं कर पातीं। निम्नलिखित पंक्तियों में हम इन परीक्षाओं के दोषों पर प्रकाश डाल रहे हैं–

(*i*) **स्पष्ट परिभाषित उद्देश्यों की कमी** (Lack of Clearly Defined Objectives)– परीक्षाओं में स्पष्ट परिभाषित उद्देश्यों की कमी होती है। विद्यार्थी इस बात को अन्त तक नहीं समझ पाते कि परीक्षक महोदय आखिर किस चीज का मापन करना चाहते हैं।

नोट

(*ii*) **उचित नमूनाकरण की कमी** (Lack of Proper Sampling)–परीक्षाओं में पाठ्यक्रम के कुछ ही अंशों पर पाँच से लेकर दस प्रश्न ही पूछे जाते हैं। दूसरे शब्दों में पचास प्रतिशत पाठ्यक्रम से प्रश्न पूछे ही नहीं जाते। इस अपर्याप्त नमूनाकरण से विद्यार्थियों के विकास का उचित मूल्यांकन नहीं हो पाता।

(*iii*) **रटने पर बल** (Emphasis on Cramming)–परीक्षाओं में कुछ खास-खास प्रश्नों को ही पूछा जाता है। अत: विद्यार्थी पूरे पाठ्यक्रम को तैयार न करके उसकी कुछ मुख्य-मुख्य बातों को ही रटने का प्रयास करते हैं। यह इन परीक्षाओं का बहुत बड़ा दोष है।

(*iv*) **उद्दीपन की कमी** (Lack of Incentive)–परीक्षाओं में उद्दीपन की बहुत कमी होती है। विद्यार्थियों को प्राय: ऐसी सामग्री रटनी पड़ती है जिसका उनके वास्तविक जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं होता। इस कमी के कारण विद्यार्थियों में सीखने की प्रवृत्ति विकसित नहीं होती।

(*v*) **लिखने की गति एवं शैली पर अधिक बल** (More Emphasis on Speed and Style of writing)–वर्तमान परीक्षण प्रणाली में लिखने की गति एवं शैली पर अधिक बल दिया जाता है। जिन विद्यार्थियों का लेख सुन्दर होता है तथा जो तीव्र गति के साथ प्रभावपूर्ण ढंग से प्रश्नों का उत्तर लिख देते हैं, उन्हें अधिक अंक मिल जाते हैं। इसके विपरीत जो विद्यार्थी तथ्यों का सम्पूर्ण ज्ञान रखते हुये भी अपने विचारों को सुन्दर तथा प्रभावपूर्ण शैली में तीव्र गति से व्यक्त नहीं कर पाते उन्हें बहुत कम अंक दिये जाते है।

(*vi*) **अंक प्रदान करने में आत्मनिष्ठता** (Subjectivity in Awarding Marks)–परीक्षाओं में परीक्षक की आत्मनिष्ठता अधिक होती है। अत: अंकों में अनिश्चितता तथा विविधता बनी रहती है। चूँकि इन परीक्षाओं में परीक्षक की रुचि, योग्यता तथा मूड के साथ उसके मानसिक दृष्टिकोण का गहरा प्रभाव पड़ता है, इसलिये यदि किसी प्रश्न को उसी परीक्षक से पुन: जँचवाया जाये तो प्राप्तांकों में आकाश और पाताल का अन्तर मिलता है।

(*vii*) **वैधता की कमी** (Lack of Validity)–परीक्षायें विद्यार्थियों की भाषा, शैली, गति लेख तथा रटने की शक्ति का मापन करती हैं। चूँकि परीक्षाओं द्वारा विद्यार्थियों की उस शक्ति का उचित मापन नहीं हो पाता जिसको परीक्षक मापना चाहता है, इसलिये परीक्षाओं में वैधता का अभाव होता है।

(*viii*) **विश्वसनीयता की कमी** (Lack of Reliability)–परीक्षाओं द्वारा प्राप्त किये हुए अंकों में विचलन (Variation) होता रहता है तथा इन के परिणाम भी सदैव एक से नहीं रहते। इसलिये इन परीक्षाओं में विश्वसनीयता की बहुत कमी होती है।

(*ix*) **भविष्यवाणी की कमी** (Lack of Predictability)–निबन्धात्मक परीक्षाओं में अंकों का प्राप्त करना विद्यार्थियों के रटने की शक्ति पर निर्भर करता है। अत: इन परीक्षाओं के परिणामों के आधार पर यह भविष्यवाणी नहीं की जा सकती कि प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने वाला विद्यार्थी सामान्य ज्ञान तथा व्यवहार में भी प्रथम ही होगा।

(*x*) **शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य में बाधा** (Interference in Mental and Physical Health)–परीक्षायें विद्यार्थियों के शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य में बाधा है। इसका कारण यह है कि इन परीक्षाओं को देने के लिये विद्यार्थी परीक्षा से केवल एक अथवा दो महीने पहले ही पढ़ना आरम्भ करते हैं। इससे उनका शारीरिक स्वास्थ्य तो खराब हो ही जाता है, वे मानसिक संघर्ष की चक्की में भी पिसते रहते है।

(*xi*) **अपूर्ण उत्तरों को पूर्ण उत्तर समझना** (Incomplete Answers Appearing as Complete)– परीक्षाओं में विद्यार्थी अपने परीक्षक को धोखा दे सकते हैं। प्राय: देखा गया है कि जब किसी चतुर विद्यार्थी को किसी प्रश्न का उत्तर पूरी तरह याद नहीं होता तो वह उस प्रश्न का उत्तर ऐसा घुमा फिरा कर परिमार्जित भाषा तथा प्रभावपूर्ण शैली में लिखता है कि परीक्षक महोदय को पूर्ण मालूम देता है और वे उस उत्तर पर अंक भी खासे दे देते हैं।

(*xii*) **मूल्यांकन मे कठिनाई** (Difficulty in Evaluation)–इन परीक्षाओं द्वारा उचित मूल्यांकन सम्भव नहीं है। अभी तक कोई ऐसा निश्चित माप दण्ड नहीं बनाया गया जो विद्यार्थियों की प्रगति का उचित मूल्यांकन कर सके।

(*xiii*) **खर्चीली तथा अधिक समय लेने वाली** (Costly and Time Consuming)—निबन्धात्मक परीक्षाओं के प्रश्न-पत्र बनाने, उन्हें छपवाने तथा उत्तर-पुस्तकों की व्यवस्था करने में अधिक धन खर्च होता है। साथ ही इन परीक्षाओं द्वारा विद्यार्थियों की निष्पत्ति के मापन में महीनों लग जाते हैं। अत: ये परीक्षायें खर्चीली तथा अधिक समय लेने वाली हैं।

टास्क क्रूड रिर्चडसन फॉमूर्ला क्या है?

1.4 शैक्षिक परीक्षण की नवीनतम प्रवृत्तियाँ (Current Trends in Testing)

मापन की प्रक्रिया में किसी गुण/चर को अंकों, संकेतों, चिन्हों तथा अनुस्थितियों में बदल लेते हैं जिससे परिमाण में आक लेते हैं। अधिकांश मापन की प्रक्रिया में गुणों/चरों को अंकों में बदल लिया जाता है। इस प्रकार प्राप्तांकों की सांख्यिकी विश्लेषण से मानकों का रूपान्तरण कर लेते हैं। जिनका अर्थापन सुगमता से किया जाता है। मानकों के अध्याय में जो प्रकार एवं सांख्यिकी प्रविधियाँ दी गई है उनमें अंकों (Score) को महत्व दिया गया है। परन्तु शिक्षा के क्षेत्र में निष्पत्ति के मापन में अंकों तथा अनुस्थितियों (Grades) को भी दिया जाता है। शिक्षा की मापन की प्रक्रिया में अनुस्थितियों को भी अधिक महत्व दिया जाने लगा है यहाँ तक परीक्षा बोर्ड अंक तालिका में ग्रेडस को अंकित करते है और उनके अर्थापन के लिये मापनी भी देते है।

इनके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार से परीक्षण प्रणाली में सुधार लाने का प्रयत्न किया जा रहा हैं जो निम्नलिखित है—

(अ) प्रश्न-पत्र बनाने में सुधार (Improvement in the Construction of Test Papers)

निबन्धात्मक परीक्षाओं के प्रश्न-पत्र बनाने में निम्नलिखित सुधार होने चाहिए—

(*i*) **अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति** (Achievement of Learning Objectives)—निबन्धात्मक परीक्षाओं के प्रश्न-पत्रों को बनाते समय परीक्षकों को यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि प्रत्येक प्रश्न अधिगम के किसी न किसी उद्देश्य का मापन अवश्य करे। दूसरे शब्दों में परीक्षकों को प्रश्न-पत्र में केवल उन्हीं प्रश्नों को देना चाहिये जिनके द्वारा अधिगम के उद्देश्य प्राप्त हो जायें।

(*ii*) **पाठ्यक्रम का प्रतिनिधित्व** (Full Representation of Curriculum)—प्रश्न-पत्र में पाठ्यक्रम का पूर्ण प्रतिनिधित्व होना चाहिये। दूसरे शब्दों में प्रश्न-पत्र के अन्दर पाठ्यक्रम के प्रत्येक प्रसंग पर प्रश्न पूछने चाहिये।

(*iii*) **प्रश्नों की प्रकृति** (Nature of Questions)—प्रश्न, सरल, सीधे तथा प्रत्यक्ष होने चाहिये। उनकी भाषा विद्यार्थियों के मानसिक स्तर के अनुसार होनी चाहिये। यही नहीं, उन्हें विद्यार्थियों की मौलिकता तथा रचनात्मक प्रवृत्ति को भी प्रोत्साहित करना चाहियें।

(*iv*) **कठिनाई स्तर पर बल** (Emphasis on Difficulty Level)—प्रश्न-पत्र में मन्द, औसत तथा प्रखर बुद्धि वाले हर प्रकार के विद्यार्थियों के लिये क्रमश: सरल, औसत तथा कठिन प्रश्नों की व्यवस्था होनी चाहिए। इससे प्रत्येक विद्यार्थी को अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार प्रश्न हल करने को मिल जायेंगे।

(*v*) **विकल्प प्रश्नों को महत्व नहीं** (No Importance to Alternate Questions)—प्रश्न-पत्रों में विकल्प प्रश्नो को महत्व देना मापन की त्रुटिपूर्ण एवं अशुद्ध करना है। अत: प्रश्न-पत्र में या तो प्रश्न अनिवार्य होने चाहियें या किसी कारणवश विकल्प प्रश्न पूछे ही जायें तो वे एक ही प्रश्न के अन्तर्गत रखे जायें।

(*vi*) **प्रश्नों की संख्या** (Number of Questions)—प्रश्न-पत्र में प्रश्नों की संख्या न बहुत कम होनी चाहिये और न बहुत अधिक। पर हाँ, इतने प्रश्न अवश्य होने चाहिये कि विद्यार्थियों की मानसिक शक्तियों तथा निर्धारित पाठ्यक्रम का मापन ठीक प्रकार से हो जाये।

नोट

(*vii*) **अंकों का विवरण** (Distribution of Marks)—प्रश्न-पत्र में सभी प्रश्नों के पूर्णांक बराबर होने चाहिये। कभी-कभी एक प्रश्न के कई भाग होते हैं। ऐसी स्थिति में, अंकों का वितरण कठिनाई-स्तर के अनुसार होना चाहिये।

नोट्स प्रश्न-पत्र में निबन्धात्मक प्रश्नों के साथ-साथ वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की व्यवस्था भी होनी चाहिये। इससे शैक्षिक निष्पत्ति के मापन में अधिक वैधता तथा विश्वसनीयता आ जायेगी।

(*i*) **कक्षोन्नति के ढंग में परिवर्तन** (Change in the Method of Promotion)—प्रत्येक कक्षा में साप्ताहिक तथा मासिक परीक्षायें होनी चाहिये। इन परीक्षाओं में होने वाली प्रगति के आधार पर विद्यार्थी जो भी अंक प्राप्त करें उन्हें अर्द्ध वार्षिक तथा वार्षिक परीक्षाओं में जोड़ देना चाहिए।

(*iii*) **मौखिक परीक्षाओं की व्यवस्था** (Provision of Verbal Test)—निबन्धात्मक परीक्षाओं के साथ-साथ विद्यार्थियों की मौखिक परीक्षाएँ भी होनी चाहिए। इससे उनकी योग्यता तथा क्षमता के मापन में सहायता मिलेगी।

(*iii*) **दो परीक्षकों की नियुक्ति** (Appointment of two Examiners)—विद्यार्थियों की मौखिक परीक्षा के लिये कम से कम दो कुशल शिक्षकों की नियुक्ति होनी चाहिये। इससे आत्मनिष्ठता (Subjectivity) का दोष कम हो जायेगा और मापन ठीक प्रकार से हो सकेगा।

(स) उत्तर पुस्तकों के मूल्यांकन में सुधार (Improvement in the Evaluation of Scripts)

उत्तर पुस्तकों के मूल्यांकन की वर्तमान विधि से अंकों की विविधता को प्रोत्साहन मिलता है। इस दोषपूर्ण विधि में ऐसे परिवर्तन की आवश्यकता है। जिससे उत्तर पुस्तकों का मूल्यांकन अधिक से अधिक वैज्ञानिक तथा वस्तुनिष्ठ बन जाये। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव दिये जा रहे हैं—

(*i*) **प्रश्नों के लिये उद्देश्यों का ज्ञान** (Knowledge of the Objectives of Questions)—विद्यार्थी तथा परीक्षक दोनों को प्रश्न-पत्र में पूछे गये प्रश्नों के उद्देश्य स्पष्ट होने चाहिये।

(*ii*) **मूल्यांकन के लिये निश्चित नियमों की तैयारी करना** (Preparation of Definie Rules for the Evaluatin of Questions)—उत्तर पुस्तकों का मूल्यांकन करने से पहले प्रधान परीक्षक (Head Examiner) को प्रत्येक प्रश्न के सम्बन्ध में निश्चित नियम तैयार करने चाहिये जिनके अनुसार सहायक परीक्षक उत्तर पुस्तकों का स्पष्ट अंकन विधि द्वारा उचित मूल्यांकन करें।

(*iii*) **केन्द्रीय मूल्यांकन की व्यवस्था** (Provision of Central Evaluation)—उत्तर पुस्तकों को मूल्यांकन हेतु परीक्षकों के घर नहीं भेजना चाहिये। इन महान कार्यों को पूरा करने के लिये केन्द्रीय मूल्यांकन की व्यवस्था की जानी चाहिये।

(*iv*) **समस्त प्रश्नों के आदर्श उत्तर तैयार करना** (Preparing Ideal Answers of all Questions)—केन्द्र पर उत्तर पुस्तकों के मूल्यांकन हेतु जिन योग्य परीक्षकों की नियुक्ति की जाये वे परीक्षक कार्य आरम्भ करने से पहले समस्त प्रश्नों के आदर्श उत्तर तैयार करें।

(*v*) **प्रश्नों का बाँटना** (Distribution of Questions)—परीक्षकों को मूल्यांकन हेतु, उत्तर पुस्तकें न बाँट कर प्रश्न बाँटे जायें। इससे अंकों की विविधता पर नियन्त्रण हो जायेगा।

(*vi*) **एक समय में केवल एक प्रश्न का मूल्यांकन** (Evaluation of only One Question at a Time)—परीक्षक को चाहिये कि वह दूसरे प्रश्नों का मूल्यांकन करने से पहले प्रथम प्रश्न को समस्त उत्तर पुस्तकों में जाँचे। इससे दो लाभ होंगे। पहला यह कि परीक्षक प्रश्नों की तुलना करके श्रेणीबद्ध कर सकेगा तथा दूसरा यह कि

नोट

परीक्षक के मस्तिक में एक ही प्रकार का उत्तर रहेगा। इससे जहाँ एक और कार्य सरल हो जायेगा वहाँ दूसरी और मूल्यांकन भी शुद्ध हो जायेगा।

(*vii*) **श्रेणी-विधि का प्रयोग** (Use of Grading of Rating Method)—परीक्षक को चाहिये कि वह सारी उत्तर पुस्तकों को एक बार सरसरी तौर से पढ़े। इसके पश्चात् उन्हें पाँच श्रेणियों में विभाजित करे। वे श्रेणी हैं– अति उत्तम तथा 10% निकृष्ट स्तर की हों, 20% उत्तम तथा 20% सामान्य से नीचे स्तर की हों एवं 40% सामान्य स्तर की हों। इस विधि का प्रयोग करते समय उत्तर पुस्तकों पर अंकों के स्थान पर अ, ब स आदि अक्षर अंक प्रदान करने चाहिये।

क्या आप जानते हैं सबसे पहले वस्तुनिष्ठ परीक्षा का लिखित रूप में निर्माण होरासमैन (भ्वतंबम डंदद) ने सन् 1854 ई. में किया था। इसके पश्चात् जार्ज फिशर (George Fisher), जे. एम. राइस (J. M. Rice) तथा स्टार्च (Starch) एवं थारनडाइक (Thorndike) आदि विद्वानों ने शैक्षिणिक निष्पत्ति के मापन हेतु सैकड़ों वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ बनाई और अब भी विद्यार्थियों के प्रत्येक क्षेत्र के विकास को मापने के लिये विभिन्न प्रकार की वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का प्रयोग किया जा रहा है।

(*i*) **कठिन निर्माण** (Difficult Construction)—वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में प्रश्नों की संख्या सौ से लेकर दो सौ तक होती है। इन प्रश्नों का निर्माण केवल योग्य, अनुभवी तथा कुशल शिक्षक ही कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में इन परीक्षाओं के प्रश्नों का निर्माण बहुत कठिन होता है।

(*ii*) **अध्यापन की प्रामाणिता** (Standerdization of Instruction)—इन परीक्षाओं के द्वारा विद्यार्थियों की चिन्तन, मनन तथा तर्क आदि शक्तियों को विकसित करने की अपेक्षा शिक्षण नीति में समानता लाने का प्रयास किया जाता है। इससे वैयक्तिक विभिन्नता के सिद्धान्त की अवहेलना होती है जिसके परिणामस्वरूप मानसिक क्रिया यान्त्रिक बन जाती है।

(*iii*) **विचार संगठन का अभाव** (Lack of Organization of Thought)—इन परीक्षाओं में विद्यार्थी छोटे-छोटे प्रश्नों के उत्तर देते हैं। इससे उनमें न तो कल्पना तथा मौलिक चिन्तन का विकास होता है और न ही वे अपने विचारों को क्रमिक रूप में संगठित कर पाते हैं।

(*iv*) **मानसिक योग्यताओं के मूल्यांकन की कठिनाई** (Difficulty of Measuring Mental Abilities)—निबन्धात्मक परीक्षाओं में विद्यार्थियों को विचार तर्क, अभिव्यंजन तथा आलोचना आदि मानसिक योग्यताओं का मापन सरलतापूर्वक किया जा सकता है। वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में उक्त मानसिक योग्यताओं का मापन नहीं किया जा सकता।

(*v*) **अधूरी सूचना** (Partial Information)—इन परीक्षाओं में प्रश्न बहुत छोटे-छोटे होते हैं। इनके उत्तरों को या तो चिन्हों में दिया जाता है अथवा एक या दो शब्दों में। इससे परीक्षक को विद्यार्थी के विषय में पूरी जानकारी नहीं हो पाती।

(*vi*) **आवश्यकता से अधिक सरल** (Over Simplification)—कभी-कभी ये परीक्षायें इतनी सरल होती हैं कि कमजोर से कमजोर विद्यार्थी भी इनके प्रश्नों का उत्तर बिल्कुल सही लिख देते हैं। इससे विद्यार्थियों के भविष्य का उचित मार्ग-दर्शन नहीं हो पाता।

(*vii*) **अनुमान तथा धोखा** (Guessing and Cheating)—इन परीक्षाओं के उत्तर देते समय विद्यार्थी अधिकतर अनुमान का सहारा लेते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि वे परीक्षक को धोखा देकर अन्य विद्यार्थियों की उत्तर-पुस्तकों से नकल भी कर देते हैं।

नोट

(*viii*) **बहुत खर्चीली** (Very Costly)—इन परीक्षकों के प्रश्न-पत्रों को बनवाने तथा छपवाने में बहुत खर्चा होता है। हमारे स्कूलों की आर्थिक स्थिति सन्तोषजनक नहीं है। अत: इन खर्चीली परीक्षाओं का प्रयोग सरलतापूर्वक नहीं किया जा सकता।

1.5 शैक्षिक मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Educational Assessment)

मूल्यांकन एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा अधिगम-परिस्थितियों तथा सीखने के अनुभवों के लिए प्रयुक्त की जाने वाली सभी विधियों एवं प्रविधियों की उपादेयता की जाँच की जाती है। मूल्यांकन शब्द शिक्षा तथा मनोविज्ञान में विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त किया गया है तथा इसको कई प्रकार से परिभाषित भी किया गया है, **'क्वालेन** तथा **हन्ना'** की परिभाषा अधिक सार्थक प्रतीत होता है। उनके अनुसार, **"विद्यालय में हुए छात्रों के व्यवहार परिवर्तन के सम्बन्ध में प्रदत्तों के संकलन तथा उनकी व्याख्या करने की प्रक्रिया को मूल्यांकन कहते हैं।"**

''Evaluation is the processof gathering and interpreting evidence on changes in the behaviour of all students as they progress through school.''

मूल्यांकन प्रक्रिया का सम्बन्ध शिक्षण के मापन और अधिगम के उद्देश्यों की प्राप्ति से होता है। परम्परागत प्रणाली में पाठ्यवस्तु तथा छात्रों की निष्पत्तियों को ही महत्व दिया जाता है। छात्रों की सफलता तथा असफलता का उत्तरदायित्व शिक्षक का न होकर उन्हीं का माना जाता है। इसलिए शिक्षण की प्रक्रिया में अधिक विकास एवं परिवर्तन नहीं हो सका है। मूल्यांकन प्रक्रिया अधिगम-उद्देश्यों की प्राप्ति के आधार पर अपनी शिक्षण-विधियों, प्रविधियों तथा सहायक सामग्री की उपादेयता का मूल्यांकन करती है, क्योंकि छात्रों की सफलता और असफलता के लिए अधिगम परिस्थितियाँ ही वास्तव में उत्तरदायी होती हैं, परन्तु अभी इस प्रक्रिया का उपयोग शिक्षा में पूरी तरह नहीं हो पा रहा है, क्योंकि मूल्यांकन के लिए शिक्षा एवं प्रशिक्षण के उद्देश्य स्पष्ट नहीं हैं तथा शैक्षिक मापन अक्सर कठिन होता है।

1.6 शैक्षिक मूल्यांकन का संदर्भ (Context of Educational Assessment)

मूलयांकन की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

1. मूल्यांकन द्वारा यह मालूम किया जाता है कि उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है।
2. मूल्यांकन प्रक्रिया से यह भी निश्चित किया जाता है कि किन विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं हो सकी है ताकि समुचित उपचारात्मक अनुदेशन (Remedial Instruction) दिया जा सके।
3. कक्षा में छात्रों के उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुसार स्तरीकरण (Ranking) किया जा सकता है।
4. शिक्षक की विधियों तथा प्रविधियों की उपादेयता और उनकी कमजोरियों को भी ज्ञात किया जाता है।
5. शिक्षण-आव्यूह (Teaching strategy) में सुधार तथा विकास किया जाता है तथा अनावश्यक अधिगम-स्रोतों को हटाया भी जा सकता है।
6. मूल्यांकन-प्रक्रिया शिक्षक तथा छात्र दोनों के लिए पुनर्बलन का कार्य करती है।

इस प्रक्रिया में मानदण्ड-परीक्षा का महत्वपूर्ण कार्य होता है, जिससे छात्रों में व्यवहार-परिवर्तन की जाँच होती है, जिसके आधार पर शिक्षक को अपनी क्रियाओं के सुधार तथा विकास के लिए दिशा मिलती है।

मूल्यांकन की प्रविधियाँ (Techniques of Assessment)

मूल्याकन की प्रक्रिया ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के सम्बन्ध में प्रदत्तों का संकलन करती है। परम्परागत परीक्षाओं से ज्ञानात्मक उद्देश्यों का ही मापन किया जाता है। मूल्यांकन की प्रक्रिया का क्षेत्र अधिक व्यापक होता है। इसमें अनेक प्रकार की प्रविधियाँ प्रयुक्त की जाती हैं।

नोट

1. ज्ञानात्मक उद्देश्यों के लिए मौखिक, लिखित, निबन्धात्मक परीक्षाएँ तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ एवं प्रयोगात्मक परीक्षाएँ उपयोग में लाई जाती हैं, इसमें निरीक्षण प्रविधि का भी प्रयोग करते हैं।
2. भावात्मक उद्देश्यों के लिए अभिरुचि सूची (Attitude Scale), रेटिंग तथा मूल्यों के परीक्षण (Values Test) आदि प्रयुक्त किये जाते हैं। निबन्धात्मक परीक्षाएँ भी आंशिक रूप से प्रयुक्त की जा सकती हैं। निरीक्षण-प्रविधि को भी प्रयोग में लाया जाता है।
3. क्रियात्मक उद्देश्यों के लिए प्रयोगात्मक परीक्षा अधिक उपयोगी मानी जाती है। इसमें छात्रों को कुछ क्रियाएँ करनी पड़ती हैं और उनके कौशल का मूल्यांकन किया जाता है।

मूल्यांकन में मानदण्ड परीक्षा को विशेष महत्व दिया जाता है। इसकी तीन प्रमुख विशेषताएँ होती हैं—

(अ) समुचित (Appropriateness)—मानदण्ड परीक्षा समुचित मानी जाती है, क्योंकि इसमें उद्देश्यों को विशेष महत्व दिया जाता है। परीक्षा के प्रश्न विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति मापन करते हैं।

(ब) प्रभावशीलता (Effectiveness)—मानदण्ड परीक्षा के मापन का कार्य भली प्रकार करना चाहिए। परीक्षा विश्वसनीय तथा वैध होनी चाहिए।

(स) व्यावहारिकता (Practicability)—मानदण्ड परीक्षा का प्रशासन सरल होना चाहिए। अंकन भी सरल हो तथा प्रदत्तों का अर्थापन सार्थक होना चाहिए। परीक्षा छात्रों तथा शिक्षकों को मान्य होनी चाहिए।

शिक्षण अनुदेशन के मूल्यांकन में प्रमुख रूप से मानदण्ड परीक्षा को प्रयुक्त किया जाता है। यदि मानदण्ड परीक्षा में छात्रों को अच्छे अंक (90/90 मानदण्ड) नहीं प्राप्त हुये तो यह इस बात का सूचक है कि अधिगम प्रक्रिया प्रभावशाली नहीं है। इसमें परिवर्तन तथा सुधार लाना चाहिए। इस प्रकार अनुदेशन अभिक्रमित की प्रभावशीलता के सम्बन्ध में निर्णय लिया जा सकता है। छात्रों की प्रतिक्रियाओं को एवं उनकी कमजोरियों को जानने के लिए भी मानदण्ड परीक्षा प्रयुक्त कर सकते हैं और उनमें सुधार ला सकते हैं।

मूल्यांकन प्रविधियों का वर्गीकरण (Classification of Assessment Techniques)

विद्यालयों में प्रयुक्त की जाने वाली सभी मूल्यांकन प्रविधियों को प्रमुख रूप से दो वर्गों में विभाजित किया जाता है।—

(अ) परिमाणात्मक प्रविधि (Quantitiative Techniques) तथा

(ब) गुणात्मक प्रविधि (Qualitative Techniques)।

(अ) परिमाणात्मक परीक्षाएँ (Quantitative Examination)

मूल्यांकन में इस प्रकार की प्रविधियाँ अधिक उपयोगी, विश्वसनीय तथा वैध होती हैं। यह तीन प्रकार की होती हैं—

(1) मौखिक परीक्षा (Oral Examination),

(2) लिखित परीक्षा (Written Examination) तथा

(3) प्रयोगात्मक परीक्षा (Practical Examination)।

(1) मौखिक परीक्षा (Oral)—इसमें मौखिक प्रश्न, वाद-विवाद प्रतियोगिता तथा नाटक आदि को प्रयुक्त किया जाता है।

(2) लिखित परीक्षा (Written)—इसमें प्रश्न लिखित रूप में पूछे जाते हैं, छात्रों को उनका उत्तर लिखना होता है। लिखित परीक्षाएँ दो प्रकार की होती हैं—

(क) निबन्धात्मक परीक्षाएँ (Essay type test) तथा

(ख) वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ (Objective type test)।

(3) प्रयोगात्मक परीक्षा (Practical)—इसमें छात्रों को कोई निर्धारित कार्य पूरा करना होता है। विज्ञान, भूगोल, गृह विज्ञान, कला, क्राफ्ट आदि विषयों में इन्हें प्रयुक्त किया जाता है।

नोट

(ब) गुणात्मक परीक्षाएँ (Qualitative Tests)

विद्यालय में गुणात्मक परीक्षाओं का उपयोग आन्तरिक मूल्यांकन के लिए किया जाता है। यह साधारणत: पाँच प्रकार की होती है–

(1) संचयी आलेख (Cumulative Records)।

(2) एनेकडोटल आलेख (Anecdotal Records)।

(3) निरीक्षण (Observation)।

(4) जाँच-सूची (Check list) तथा

(5) अनुस्थिति मापनी (Rating Scale)

(1) संचयी आलेख (Cumulative Records)–विद्यालयों में प्रत्येक छात्र के सम्बन्ध में सूचनाओं को क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित किया जाता है। इसमें शैक्षिक प्रगति, मासिक परीक्षा-फल, उपस्थिति, योग्यता तथा अन्य विद्यालयों की क्रियाओं में भाग लेने आदि का आलेख प्रस्तुत किया जाता है। छात्र की प्रगति तथा कमजोरियों को जानने के लिए अभिभावकों, शिक्षकों तथा प्रधानाचार्य के लिए अधिक उपयोगी आलेख होता है।

(2) एनेकडोटल आलेख (Anecdotal Records)–इनमें बालकों के व्यवहार से सम्बन्धित महत्वपूर्ण घटनाओं तथा कार्यों का वर्णन किया जाता है। इन कार्यों तथा घटनाओं का आलेख सही रूप में किया जाता है। निरीक्षण करने वाले छात्र की रुचियों तथा झुकावों को उत्पन्न करने वाले घटकों का भी उल्लेख करता है, इनके आधार पर छात्र के सम्बन्ध में सामान्यीकरण किया जा सकता है और निर्देशन में इसे प्रयुक्त करते हैं।

(3) निरीक्षण (Observation)–इसका प्रयोग विशेष रूप से छोटे बालकों के मूल्यांकन के लिए किया जाता है, क्योंकि उनको अन्य कोई परीक्षा नहीं दी जा सकती है और उनके व्यवहार में वास्तविकता होती है। इसका प्रयोग उनकी योग्यता तथा व्यवहारों के सम्बन्ध में किया जाता है। उच्च कक्षाओं में छात्र स्वयं आत्मनिरीक्षण के लिए भी इसे प्रयोग करता है।

(4) जाँच सूची (Check-list)–लिखित तथा मौखिक परीक्षाएँ छात्रों के ज्ञानात्मक पक्ष की जाँच करती हैं और प्रयोगात्मक परीक्षाएँ कौशल तथा क्रियात्मक पक्ष की जाँच करती हैं। जाँच सूची का प्रयोग अभिरुचियों, अभिवृत्तियों तथा भावात्मक पक्ष के लिए किया जाता है। इसमें कुछ कथन दिये जाते हैं। उन कथनों के सम्बन्ध में छात्रों को 'हाँ' अथवा 'नहीं' में उत्तर अंकित करना होता है। इस प्रकार के कथनों की सूची की रचना करते समय उद्देश्य स्पष्ट होने चाहिए। प्रत्येक कथन को किसी विशिष्ट उद्देश्य का मापन करना चाहिए; जैसे–

(1) आपको शिक्षण-सोपानों का स्मरण करने में रुचि है। हाँ/नहीं

(2) आप पाठ योजना की रचना करने में रुचि लेते हैं। हाँ/नहीं

(3) आपको कक्षा-शिक्षण के प्रस्तुतीकरण में आनन्द मिलता है। हाँ/नहीं

(4) आपको छात्रों के कार्यों की प्रशंसा करना अच्छा लगता है। हाँ/नहीं

इस जाँच सूची से छात्राध्यापकों की शिक्षण में रुचि का मूल्यांकन किया जा सकता है। हाँ/नहीं

1.7 शैक्षिक मूल्यांकन की समस्याएँ (Issues of Educational Assessment)

परम्परागत अंकन प्रणाली (Traditional Marking)–साधारण परीक्षा में पूर्णांक 100 आवंटित किये जाते हैं। इसकी अवधारणा यह है कि छात्रों की क्षमताओं की 0 से 100 के पैमाने पर शुद्ध रूप में प्रदर्शित किया जाता है। मानवीय क्षमतायें तीन प्रकार की होती हैं–ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक। इसलिए मापन में शुद्धता लाना असम्भव है। मानवीय योग्यताओं का मापन अधिक संवेदनशील है। इसलिए 0 से 100 के पैमाने पर शुद्धता नहीं लाई जा सकती है।

आर्थिक सम्भावित त्रुटि (High Probability Error)–उपरोक्त अवधारणा सही नहीं है, क्योंकि व्यावहारिक रूप

नोट

में दो प्रकार की त्रुटियाँ होती हैं–

(1) अंकन कर्त्ताओं की विषमता, तथा

(2) शिक्षण विषयों की विविधता

(1) अंकन कर्त्ताओं की विषमता (Evaluations Variability)—निबन्धात्मक परीक्षा में अंकनकर्ता की त्रुटि सबसे अधिक होती है। एक ही उत्तर पर एक परीक्षण प्रथम श्रेणी के अंक देता है और दूसरा परीक्षक तृतीय श्रेणी के अंक देता है तथा अन्य अनुत्तीर्ण के अंक देता है। इस सन्दर्भ में **हारपर** की **'नब्बे में दस'** का शोध कार्य अधिक प्रसिद्ध हैं। एक उत्तर-पुस्तिका को नब्बे परीक्षकों से अंकन करवा कर विश्लेषण किया था, जिसमें भारी विषमता प्राप्त हुई थी।

अन्य त्रुटि यह होती है कि 29 अंक में फेल होता है और 30 अंक में पास हो जाता है। इसी प्रकार 59 में द्वितीय श्रेणी ओर 60 में प्रथम श्रेणी दी जाती है। एक अंक तथा आधे अंक को कम या अधिक देने का क्या आधार है? इसका उत्तर परीक्षक नहीं दे सकता है। इसलिए वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं से इन त्रुटियों को दूर कर दिया जाता है, परन्तु निबन्धात्मक परीक्षाओं को समाप्त नहीं कर सकते हैं। इनकी अपनी विशेषताएँ तथा उपयोगिताएँ हैं।

(2) शिक्षण विषयों की विविधता (Subjects Variability)—परीक्षकों की त्रुटि के अतिरिक्त विषयों की विविधा का भी अंकन पर प्रभाव रहता है। गणित तथा विज्ञान विषयों के मूल्यांकन में अपेक्षाकृत शुद्धता होती है। सामाजिक विषयों, भाषाओं के उत्तरों के अंकन में शुद्धता कम होती है, जबकि सभी विषयों में 0 से 100 तक का पैमाना ही प्रयुक्त किया जाता है। गणित में 90 से अधिक अंक भी दिये जाते हैं, जबकि अन्य विषयों में 90 अंक कभी किसी क्षात्र के नहीं आते हैं। 0 से 100 के पैमाने पर प्रत्येक विषय में छात्रों के अंक वितरित होने चाहिए, परन्तु ऐसा नहीं होता है। विज्ञान के विषयों में अधिकतर 60 से 80 अंक दिये जाते हैं। सामाजिक विषयों में 40 से 60 अंक दिये जाते हैं। इस प्रकार 0 से 100 पैमाने की सार्थकता विषयों से अलग होती है। सामाजिक विषयों में तथा भाषाओं में 50 से 60 अंक प्राप्त करने वाले छात्रों को बहुत अच्छा माना जाता है, जबकि विज्ञान विषयों में 50 से 60 अंक प्राप्त करने वालों को सामान्य स्तर का माना जाता है। अत: 0 सं 100 पैमाने की अवधारणा सही प्रतीत नहीं होती है।

1.8 मूल्यांकन की वर्तमान प्रणाली की नवीनतम समस्याएँ (Current Trends of Present system of Education)

अनुस्थिति प्रणाली (Grading System): अनुस्थिति प्रणाली (Grading) वह साधन है, जिससे छात्रों के मापन को प्रदर्शित किया जाता है। यह आवश्यकता होती है कि छात्रों तथा अभिभावकों को यह बतला दें कि छात्र के सीखने का क्या स्तर है? छात्रों को जो अंक दिये जाते हैं, उससे यह जानकारी नहीं होती है।

दो छात्रों के अंकों से उनके अन्तर का सही ज्ञान नहीं होता है। एक परीक्षा में एक छात्र ने 50 में से 32 तथा दूसरे ने 25 अंक प्राप्त किए। दोनों छात्रों के अंकों के अन्तर से गुणात्मक अन्तर का बोध नहीं होता है। पहला दूसरे से अच्छा है, इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कह सकते हैं। यदि छात्रों को अनुस्थिति (ग्रेड) आवंटित की जाए– प्रथम को B ग्रेड तथा द्वितीय को C ग्रेड दिया जाता है तो गुणात्मक अन्तर प्रकट होता है कि प्रथम मध्य स्तर का है और द्वितीय मध्यम स्तर का है।

ग्रेडिंग प्रणाली के निम्नलिखित लाभ होते हैं–

1. परम्परागत अंकन प्रणाली पर एक सुधार के रूप में नया विकास है। मानवीय योग्यताओं का मापन शुद्ध रूप में किया जाता है।
2. अनुस्थिति प्रणाली से गुणात्मक मापन होता है और अन्तर को सार्थक रूप में प्रकट किया जाता है।
3. इस प्रणाली ने 0 से 100 के पैमाने की अवधारणा को गलत सिद्ध कर दिया है। इसमें कम विस्तार के पैमाने पर मापन तथा मूल्यांकन किया जाता है।

नोट

4. इस प्रणाली में एक मोटे रूप में क्षमताओं का आकलन किया जाता है, जो वास्तविक तथा अधिक व्यावहारिक होता है।
5. परम्परागत प्रणाली की त्रुटियों का समाधान ग्रेडिंग प्रणाली से किया जाता है। इसके अन्तर्गत 59 अंक तथा 60 अंक की जो त्रुटि है, उसकी सम्भावना कम होती है।
6. परीक्षकों की आन्तरिक विषमता भी कम हो जाती है, क्योंकि इसमें मापन का विस्तार कम कर दिया गया है।
7. इस ग्रेडिंग प्रणाली में सम्पूर्ण विस्तार का प्रयोग सभी विषयों के मापन में किया जाता है। मानवीय क्षमताओं का मूल्यांकन अपेक्षाकृत वास्तविक होता है। जबकि 0 से 100 अंकों का विस्तार व्यावहारिक नहीं है तथा अधिकांश विषयों में प्रयुक्त नहीं होता है।

अनुस्थिति के आवंटन के विभिन्न आधार (Different Basis of Grading)

प्रत्येक प्रकार की अनुस्थिति प्रणाली में प्रामाणिक स्तर का प्रयोग किया जाता है। जब यह कहते हैं कि वह वस्तु 'अच्छी' है, इस निर्णय में प्रामाणिक स्तर निहित है। प्रामाणिक स्तर भौतिक या प्रत्यात्मक प्रतिमान बाह्य रूप में होता है। जब 'अनुस्थिति' का वर्णन किया जाता है तब उसे उत्तम, सामान्य अथवा हीन कहते हैं, जिसका सन्दर्भ बिन्दु प्रामाणिक स्तर होता है। प्रामाणिक स्तर से तात्पर्य होता है अधिकांश व्यक्तियों की आदर्श अपेक्षा कितनी है? साधारणतः ग्रेडिंग मूल रूप में दो प्रकार से की जाती है, जिससे दो पृथक् प्रामाणिक स्तरों को प्रयुक्त किया जाता है–

(1) **सापेक्षिक प्रामाणिक अनुस्थिति**–इसमें परीक्षा में सम्मिलित सभी परीक्षा स्थितियों की निष्पत्तियों का ध्यान रखा जाता है।

(2) **निरपेक्ष प्रामाणिक ग्रेडिंग**–इसमें एक आदर्श मानते हैं।, उसी के अनुसार ग्रेडिंग किया जाता है। इसमें 9 बिन्दु से 5 बिन्दु में ग्रेडिंग की जाती है।

इनका विस्तृत विवरण यहाँ दिया गया है–

अनुस्थिति के लिए छात्रों के समूहों का प्रतिशत तथा अनुस्थितियाँ

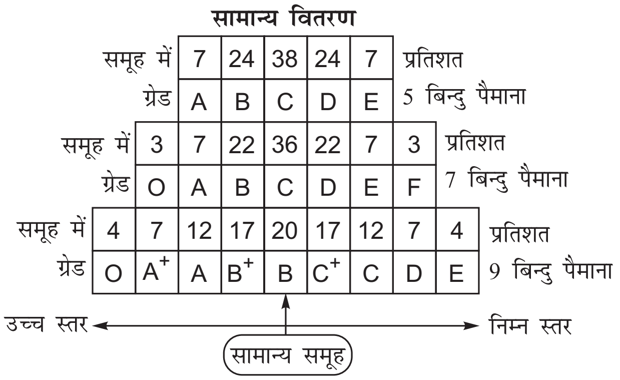

सापेक्षित अनुस्थिति का विवरण

(1) सापेक्षिक प्रामाणिक अनुस्थिति (Relative Standard Grading)–इसके अन्तर्गत छात्र को समूह के स्थान के अनुसार अनुस्थिति दी जाती है। समूह के सभी छात्रों के स्तर को ध्यान में रखा जाता है।

इसी प्रकार की अनुस्थिति प्रणाली में छात्रों का वितरण पूर्व निर्धारित कर लिया जाता है। एक छात्र को अनुस्थिति देते समय यह देखना होता है कि वह किस समूह में आता है। प्रत्येक समूह का प्रतिशत भी निर्धारित कर लिया जाता है। प्रत्येक समूह को एक क्रम में अनुस्थिति भी आवंटित करते हैं, जिसे मापन का पैमाना पिछले चार्ट द्वारा प्रस्तुत किया है।

इस वितरण को देखने से विदित होता है कि यह सन्तुलित है। केन्द्रीय समूह सदैव सामान्य ही रहता है, अन्य समूह सिकुड़ जाते हैं और समूहों का प्रतिशत बढ़ जाता है। यह तीनों प्रकार के वितरण सामान्य वक्र में है। इस प्रकार का

वितरण ही प्रामाणिक माना जाता है। सामान्य समूह के दोनों ओर वितरण का प्रतिशत समान है।

सापेक्षित अनुस्थिति की सीमाएँ (Limitations of Relative Grading)—इस प्रकार अनुस्थितियाँ विश्वविद्यालय तथा बोर्ड की परीक्षाओं में भी प्रयुक्त की जाती हैं। यह वितरण सामान्य होते हुए भी इसकी निम्नांकित सीमाएं हैं—

1. सापेक्षित अनुस्थिति से छात्रों को अपने स्तर के सम्बन्ध में सही जानकारी नहीं हो पाती है और न ही अध्यापक को अपने शिक्षण के प्रभाव का सही बोध होता है।

   ग्रेड से छात्र का कक्षा में स्थान का बोध होता है। एक छात्र का एक ग्रेड एक कक्षा में दिया जाता है। दूसरी कक्षा में ग्रेड बदल जाएगा। अत: ग्रेड का अर्थ स्थायी नहीं होता अथवा निरर्थक होता है। समूह की क्षमताओं की जानकारी होने पर ग्रेड का अर्थ सार्थक होता है।

2. सामान्य वक्र वितरण पर प्रत्येक ग्रेड के छात्रों का प्रतिशत निश्चित होता है। इस प्रकार के वितरण से शिक्षक को अपने छात्रों के सम्बन्ध में सही जानकारी नहीं प्राप्त हो पाती है कि छात्र की निष्पत्ति उत्तम है अथवा हीन है। छात्रों में ग्रेड के सम्बन्ध में गलत धारणा पैदा हो जाती है और छात्रों में स्पर्धा की भावना विकसित हो जाती है। एक-दूसरे की सहायता करने की अपेक्षा हानि पहुँचाने का प्रयत्न करता है।

(2) निरपेक्ष प्रामाणिक ग्रेडिंग (Absolute Grading Standard)—सापेक्षिक प्रामाणिक अनुस्थिति में छात्रों की संख्या प्रत्येक ग्रेड में सुनिश्चित होती है। निरपेक्ष अनुस्थिति स्तर में छात्रों के अंकों का विस्तार दिया जाता है। अनुस्थिति के स्तर में अंकों का विस्तार निम्नलिखित तालिका की भाँति दिया जाता है।

निरपेक्ष अनुस्थिति स्तर में अंकों का विस्तार (Distribution of Scores on Absolute Grading Standard)

अनुस्थिति (Grade)	**प्राप्तांकों का विस्तार** (Range of Score)	**विवरण** (Description)
0	(90–100)%	अति उत्तम स्तर
A	(80–89)%	उत्तम स्तर
B	(70–79)%	सामान्य से ऊपर
C	(60–69)%	**सामान्य स्तर**
D	(50–59)%	सामान्य से नीचे
E	(40–49)%	हीन स्तर
F	40% से कम	अतिहीन स्तर

इस वितरण के अनुसार पाठ्यक्रम अथवा स्वामित्व स्तर या कौशल के विकास का स्तर प्रत्येक अनुस्थिति में सुनिश्चित किया जाता है। इसी प्रकार विभिन्न योग्याताओं, सर्जनात्मक, बुद्धि, कल्पना-शक्ति आदि संकेतांक गणांक के लिए अनुस्थिति का आवंटन किया जाता है। इसमें अनुस्थिति गुणात्मक आधार पर दी जाती है। इसे मानदण्ड के सन्दर्भ की अनुस्थिति (criterion-referenced grading) भी कहते हैं, क्योंकि अनुस्थिति के आवंटन में उद्देश्यों की प्राप्ति को ध्यान में रखा जाता है।

निरपेक्ष अनुस्थिति प्रणाली अपेक्षाकृत छात्रों के मूल्यांकन के लिए अधिक उत्तम होती है परन्तु इसे अभ्यास तथा उपयोग करने में कुछ कठिनाइयाँ होती हैं। छात्रों हेतु अनुस्थिति प्रणाली गुणात्मक हो अथवा संख्यात्मक हो, लचीली होनी चाहिए। विभिन्न विषयों के लिए अनुस्थिति का स्तर सुनिश्चित करना सरल नहीं होता, क्योंकि उनका स्तर तार्किक ही होता है। अनुस्थिति का स्तर सापेक्षिक ही होता है।

अनुस्थिति प्रक्रिया का स्वरूप (Mechanics of the Process of Grading): अनुस्थिति प्रक्रिया का स्वरूप विभिन्न विषयों, परिस्थितियों तथा उद्देश्यों की दृष्टि से विभिन्न प्रकार से विकसित किया है। इसके लिए विभिन्न आयामों का

नोट

प्रयोग हुआ है, परन्तु जिस आयाम का वर्णन किया गया है, वह अधिक उपयोगी तथा व्यावहारिक है। इसमें प्रश्नों की अनुक्रिया हेतु कम विस्तार के पैमाने प्रयोग किये हैं। यह अधिक विश्वसनीय होते है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षा में प्रश्न का उत्तर सही या गलत होता है, परन्तु आंशिक रूप से सही नहीं होता है। इस प्रकार विस्तार 0 से 1 ही होता है, जबकि निबन्धात्मक प्रश्न के अंक 10 या 20 होते हैं, साधारणतः आंशिक रूप से सही होता है, इसमें विस्तार 0 से 10 या 1 से 20 तक होता है। वस्तुनिष्ठ परीक्षा में 2 बिन्दु का पैमाना प्रयोग किया जाता है, जबकि निबन्धात्मक में 3 बिन्दु से 11 बिन्दु तक पैमाना प्रयोग किया जा सकता है। 7 बिन्दु के पैमाने का वितरण यहाँ दिया गया है।

बिन्दु (Point)	**अनुस्थिति** (Grade)	**प्रतिशत में** (Percentage)	**अर्थापन** (Interpretation)
6	0	3	सर्वोत्तम
5	A	7	अधिक उत्तम
4	B	22	उत्तम
3	C	36	सामान्य
2	D	22	सामान्य से नीचे
1	E	7	हीन
0	F	3	अतिहीन

इस प्रकार की अनुस्थिति प्रणाली तथा पैमाने का उपयोग विभिन्न विषयों में मूल्यांकन हेतु प्रयुक्त कर सकते हैं। अन्य योग्यताओं, बुद्धि, प्रवणता, सर्जनात्मक तथा कल्पनाशक्ति आदि के मापन में प्रयोग कर सकते हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)–

1. मूल्यांकन में .... प्रक्रिया सम्मिलित होती है।
2. मापन प्रक्रिया .... होती है।
3. वस्तुनिष्ठ परीक्षा को .... बनाया जाता है।
4. निबन्धात्मक परीक्षा से सुलेख तथा .... का भी मापन किया जाता है।
5. निबन्धात्मक परीक्षा से .... उद्देश्यों का मापन किया जाता है।
6. वस्तुनिष्ठ परीक्षा में धन, समय तथा .... अधिक लगती है।

1.9 सारांश (Summary)

- परीक्षण का तात्पर्य परीक्षा प्रणाली से है जिसके अन्तर्गत विद्यार्थी विषय के पाठ्यक्रम के प्रश्नों के उत्तर निश्चित समय के अन्दर, लिखित अथवा मौखिक रूप से देते हैं। परीक्षण किसी भी परीक्षा प्रणाली अथवा मूल्यांकन की सबसे अधिक महत्वपूर्ण तथा प्रभावी तकनीक है। परीक्षण द्वारा ही मूल्यांकन हेतु आँकड़े तथा सूचना प्राप्त की जाती है।
- उत्तम परीक्षण की 'सोद्देश्यपूर्णता' एक मुख्य विशेषता है। कहने का तात्पर्य यह है कि किसी भी प्रकार की परीक्षा का निर्माण करने से पूर्व उसके विशिष्ट उद्देश्य (Specific objectives) निर्धारित कर लेने चाहियें।
- व्यापकता से तात्पर्य यह है कि परीक्षा जिस योग्यता का मापन करने के लिये बनायी गई है उस योग्यता के समस्त क्षेत्र तथा जिस पाठ्यक्रम पर आधारित हो उसके समस्त पहलुओं पर प्रश्न पूछे जायें।

नोट

- परीक्षण निर्माण करते समय परीक्षण निर्माता को यह अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि परीक्षण धन की दृष्टि से अनुसन्धानकर्ता के लिये महँगा सिद्ध न हो। परीक्षण निर्माता की यह कोशिश रहनी चाहिये कि परीक्षण अनावश्यक रूप से विस्तृत न हो जाये।
- वह परीक्षण जो निर्माण करने, छात्रों द्वारा उसको हल करने तथा उसका अंकन करने, तीनों पक्षों की दृष्टि से सरल हो, एक अच्छा परीक्षण कहलाता है। एक परीक्षण जिसके निर्माण में कठिनाई न हो, छात्रों को भी उत्तर देने में कोई असुविधा न हो, अंकन प्रक्रिया में भी किसी प्रकार की जटिलता न आये उपयोगी एवं सहजता के गुण से युक्त परीक्षण समझा जाता है।
- एक अच्छे परीक्षण में ग्राह्यता का गुण होना भी अनिवार्य है। ग्राह्यता से तात्पर्य है—किसी भी परीक्षण का उन व्यक्तियों पर तथा उन परिस्थितियों में सफलतापूर्वक प्रशासित किया जाना जिनको आधार बनाकर उस परीक्षण विशेष की मानकीकरण प्रक्रिया (Process of Standardization) सम्पन्न की गई है।
- एक उत्तम परीक्षण मानकीकृत होता है। इसका अर्थ यह हैं कि परीक्षण में दिये जाने वाले प्रश्नों, निर्देशों, परीक्षा लेने की विधियों तथा प्रशासन एवं फलांकन प्रक्रिया को पहले से ही निश्चित कर लिया गया हो ताकि मूल्यांकन वस्तुनिष्ठ तरीके से किया जा सके।
- किसी भी परीक्षण का वस्तुनिष्ठता होना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि इसका प्रभाव विश्वसनीयता एवं वैधता दोनों पर ही पड़ता है।
- परीक्षणको अनुचित प्रयोग से बचाने के लिए यह आवश्यक है कि सर्वप्रथम परीक्षण के अभिप्राय (Purposes) निश्चित कर लिए जायें।
- उपयुक्त पाठ्यक्रम तथा उद्देश्यों का विश्लेषण—

  (क) उपयुक्त पाठ्यक्रम निर्धारित करना (Selecting appropriate Content); (ख) उद्देश्य निर्धारित करना (Determining Objectives); (ग) चयनित विषय-वस्तु का आलोचनात्मक विश्लेषण (Critical analysis of the Subject Matter to be tested); प्रश्नों की रचना (Construction of test-items)।
- **परीक्षण का प्रारूप—** प्रश्नों को प्रश्न पत्र के रूप में लिखकर उसे परीक्षण का रूप दिया जाता है। परीक्षार्थियों को निर्देश, परीक्षण की कुंजी आदि को तैयार किया जाता है। अब यह परीक्षण प्रारम्भिक Try-out के लिए तैयार है।
- परीक्षा का प्रारम्भिक प्रारूप (First try-out) तैयार हो जाने पर इस परीक्षा को प्रश्नों की छँटनी करने के लिये विद्यार्थियों के एक प्रतिनिध्यात्मक समूह (Representative sample) अथवा एक विशाल समूह पर प्रशासित किया जाता है।
- **प्रश्नों की वैधता निश्चित करना—**प्रश्न की वैधता की जाँच करने के लिए प्रश्न को तीन कसौटियों यथा-वस्तुनिष्ठता, स्तर एवं विभेदकारिता पर परखा जाता है। वस्तुनिष्ठता की दृष्टि से प्रश्न में निम्न तीन गुण निहित होने चाहिये—

  (*a*) प्रश्न का केवल एक ही उत्तर ठीक होना चाहिये।

  (*b*) प्रश्न का उत्तर प्रश्न में ही निहित नहीं होना चाहिये।

  (*c*) प्रश्न की भाषा सरल, संक्षिप्त एवं स्पष्ट होनी चाहिये। परीक्षार्थी व्यर्थ में उलझन में न पड़े।
- **समानान्तर परीक्षा प्रारूप तैयार करना—**प्राय: सभी प्रमापीकृत परीक्षणों का एक समानान्तर प्रारूप भी तैयार किया जाता है जो आकार, रूप, कठिनाई स्तर एवं अन्य दृष्टियों से परीक्षण के मूल रूप के समरूप होता है। ऐसा इस उद्देश्य से किया जाता है कि यदि परीक्षार्थियों की पुन: परीक्षा लेने की आवश्यकता पड़े तो इस दूसरे समानान्तर प्रारूप का प्रयोग किया जा सके।

नोट

- **परीक्षाओं के गुण**—मानकीकृत परीक्षाओं के प्रमुख गुण निम्न हैं–
  1. तुलनात्मक अध्ययन में इन सफलापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।
  2. ये परीक्षाएँ छात्र का शैक्षिक एवं व्यावसायिक मार्ग-दर्शन करने में सहायक होती हैं।
  3. इन परीक्षाओं के माध्यम से छात्र को अपनी कमजोरियों एवं क्षमताओं का आभास आसानी से हो जाता है।
  4. इन परीक्षाओं के आधार पर किसी छात्र की विभिन्न विषयों की उपलब्धियों में सहसम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है।
  5. ये परीक्षाएँ विद्यार्थियों का वर्गीकरण करने में सहायक होती हैं।
- **अधिगम मापन परीक्षाएँ**—अधिगम मापने के लिये कई प्रकार की निष्पत्ति परीक्षाओं का प्रयोग किया जाता है। निम्नलिखित पंक्तियों में हम प्रमुख निष्पत्ति परीक्षाओं पर प्रकाश डाल रहे हैं–

  (*b*) **मौखिक परीक्षायें**—मौखिक परीक्षाओं का उद्देश्य विद्यार्थियों की मौखिक प्रश्नों द्वारा तुरन्त अभिव्यक्ति तथा क्रियाशीलता की जाँच करना है।
- इस परीक्षाओं के निम्नलिखित दोष हैं–

  (*i*) इनके द्वारा लज्जाशील विद्यार्थी अपने ज्ञान तथा योग्यता का प्रदर्शन नहीं कर पाते।

  (*ii*) इनके परिणामों में आत्मनिष्ठता (Subjectivity) की मात्रा अधिक होती हैं।

  (*iii*) इनका कोई लिखित प्रमाण नहीं होता। अत: अंक प्रदान करने में शिक्षक मनमानी कर सकता है।

  (*iv*) ये परीक्षाएँ प्रत्येक विद्यार्थी के लिये न्याय संगत नहीं है।
- **लिखित परीक्षायें**—लिखित परीक्षायें दो प्रकार की होती हैं–(*i*) निबन्धात्मक तथा (*ii*) वस्तुनिष्ठ। उक्त दोनों प्रकार की परीक्षाओं के सम्बन्ध में हम इसी अध्याय में आगे चलकर प्रकाश डाल रहें है।
- **प्रयोगात्मक परीक्षायें**—प्रयोगात्मक परीक्षाओं में विद्यार्थी किसी निर्धारित कार्य को प्रयोग द्वारा पूरा करते हैं। इस प्रकार की परीक्षाओं का प्रयोग रसायन-शास्त्र तथा भौतिक शास्त्र एवं भूगोल आदि में होता है।
- **निबन्धात्मक परीक्षाएँ– निबन्धात्मक परीक्षाओं का अर्थ**—निबन्धात्मक परीक्षाओं का तात्पर्य ऐसी परीक्षा प्रणाली से है जिसके अन्तर्ग विद्यार्थी पाठ्य-क्रम के कई प्रश्नों के उत्तर निश्चित समय के अन्दर निबन्ध के रूप में देते है। इन परीक्षाओं में प्रश्नों के उत्तर इतने लम्बे होते हैं कि परीक्षक विद्यार्थियों को विचार, तुलना, अभिव्यंजन, तर्क तथा आलोचना आदि शक्तियों के साथ-साथ विचारों को संगठित करने की योग्यता तथा भाषा एवं शैली का मापन भली-भाँति कर सकता है।
- **निबन्धात्मक परीक्षाओं के गुण**—निबन्धात्मक परीक्षाओं के गुण निम्नलिखित हैं– (*i*) सरल निर्माण; सभी विषयों के लिये उपयुक्त; (*iii*) अध्ययन करने की अच्छी आदत का विकास; (*iv*) मानसिक योग्यताओं का मापन; (*v*) तथ्यों का दूसरी परिस्थितियों में प्रयोग; (*vi*) भाषा तथा शैली में सुधार निश्चित; (*vii*) शिक्षक की कुशलता का मापन; (*viii*) सुविधाजनक; (*ix*) उत्तर की स्वतन्त्रता।
- उपर्युक्त गुणों के होते हुये भी निबन्धात्मक परीक्षायें विद्यार्थियों की सभी निष्पत्तियों का मापन नहीं कर पाती। निम्नलिखित पंक्तियों में हम इन परीक्षाओं के दोषों पर प्रकाश डाल रहे हैं–

  (*i*) **स्पष्ट परिभाषित उद्देश्यों की कमी**—निबन्धात्मक परीक्षाओं में स्पष्ट परिभाषित उद्देश्यों की कमी होती है। विद्यार्थी इस बात को अन्त तक नहीं समझ पाते कि परीक्षक महोदय आखिर किस चीज का मापन करना चाहते हैं।

  (*ii*) **उचित नमूनाकरण की कमी**—परीक्षाओं में पाठ्यक्रम के कुछ ही अंशों पर पाँच से लेकर दस प्रश्न ही पूछे जाते हैं। दूसरे शब्दों में पचास प्रतिशत पाठ्यक्रम से प्रश्न पूछे ही नहीं जाते। इस अपर्याप्त नमूनाकरण से विद्यार्थियों के विकास का उचित मूल्यांकन नहीं हो पाता।

नोट

(*iii*) **रटने पर बल**—परीक्षाओं में कुछ खास-खास प्रश्नों को ही पूछा जाता है। अत: विद्यार्थी पूरे पाठ्यक्रम को तैयार न करके उसकी कुछ मुख्य-मुख्य बातों को ही रटने का प्रयास करते हैं। यह इन परीक्षाओं का बहुत बड़ा दोष हैं।

(*iv*) **उद्दीपन की कमी**—इन परीक्षाओं में उद्दीपन की बहुत कमी होती है। विद्यार्थियों को प्राय: ऐसी सामग्री रटनी पड़ती है जिसका उनके वास्तविक जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं होता। इस कमी के कारण विद्यार्थियों में सीखने को प्रवृत्ति विकसित नहीं होती।

(*v*) **लिखने की गति एवं शैली पर अधिक बल**—वर्तमान शिक्षा प्रणाली में लिखने की गति एवं शैली पर अधिक बल दिया जाता है। जिन विद्यार्थियों का लेख सुन्दर होता है तथा जो तीव्र गति के साथ प्रभावपूर्ण ढंग से प्रश्नों का उत्तर लिख देते हैं, उन्हें अधिक अंक मिल जाते हैं। इसके विपरीत जो विद्यार्थी तथ्यों का सम्पूर्ण ज्ञान रखते हुये भी अपने विचारों को सुन्दर तथा प्रभावपूर्ण शैली में तीव्र गति से व्यक्त नहीं कर पाते उन्हें बहुत कम अंक दिये जाते है।

- मापन की प्रक्रिया में किसी गुण/चर को अंकों, संकेतों, चिन्हों तथा अनुस्थितियों में बदल लेने है जिससे परिमाण में आक लेते है। अधिकांश मापन की प्रक्रिया में गुणों/चरों को अंकों में बदल लिया जाता है। इस प्रकार प्राप्तांकों की सांख्यिकी विश्लेषण से मानकों का रूपान्तरण कर लेते हैं। जिनका अर्थापन सुगमता से किया जाता है। मानकों के अध्याय में जो प्रकार एवं सांख्यिकी प्रविधियाँ दी गई है उनमें अंकों (Score) को महत्व दिया गया है।
- **प्रश्न-पत्र बनाने में सुधार**— निबन्धात्मक परीक्षाओं के प्रश्न-पत्र बनाने में निम्नलिखित सुधार होने चाहिए—

(*i*) **अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति**—निबन्धात्मक परीक्षाओं के प्रश्न-पत्रों को बनाते समय परीक्षकों को यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि प्रत्येक प्रश्न अधिगम के किसी न किसी उद्देश्य का मापन अवश्य करे। दूसरे शब्दों में परीक्षकों को प्रश्न-पत्र में केवल उन्हीं प्रश्नों को देना चाहिये जिनके द्वारा अधिगम के उद्देश्य प्राप्त हो जायें।

(*ii*) **पाठ्यक्रम का प्रतिनिधित्व**—प्रश्न-पत्र में पाठ्यक्रम का पूर्ण प्रतिनिधित्व होना चाहिये। दूसरे शब्दों में प्रश्न-पत्र के अन्दर पाठ्यक्रम के प्रत्येक प्रसंग पर प्रश्न पूछने चाहिये। इससे निर्धारित विषय की पूरी सम्भव हो सकेगी।

(*iii*) **प्रश्नों की प्रकृति**—प्रश्न, सरल, सीधे तथा प्रत्यक्ष होने चाहिये। उनकी भाषा विद्यार्थियों के मानसिक स्तर के अनुसार होनी चाहिये। यही नहीं, उन्हें विद्यार्थियों की मौलिकता तथा रचनात्मक प्रवृत्ति को भी प्रोत्साहित करना चाहियें।

(*iv*) **कठिनाई स्तर पर बल**—प्रश्न-पत्र में मन्द, औसत तथा प्रखर बुद्धि वाले हर प्रकार के विद्यार्थियों के लिये क्रमश: सरल, औसत तथा कठिन प्रश्नों की व्यवस्था होनी चाहिए। इससे प्रत्येक विद्यार्थी को अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार प्रश्न हल करने को मिल जायेंगे।

(*v*) **विकल्प प्रश्नों को महत्व नहीं**—प्रश्न-पत्रों में विकल्प प्रश्नों को महत्व देना मापन की त्रुटिपूर्ण एवं अशुद्ध करना है। अत: प्रश्न-पत्र में या तो प्रश्न अनिवार्य होने चाहियें या किसी कारणवश विकल्प प्रश्न पूछे ही जायें तो वे एक ही प्रश्न के अन्तर्गत रखे जायें।

- **परीक्षा के ढंग में सुधार**—निबन्धात्मक परीक्षा के ढंग में सुधार करने के लिये निम्नलिखित सुधार होने चाहिये—

(*i*) **कक्षोन्नति के ढंग में परिवर्तन**—प्रत्येक कक्षा में साप्ताहिक तथा मासिक परीक्षायें होनी चाहिये। इन परीक्षाओं में होने वाली प्रगति के आधार पर विद्यार्थी जो भी अंक प्राप्त करें उन्हें अर्द्ध वार्षिक तथा वार्षिक परिक्षाओं में जोड़ देना चाहिए।

(*iii*) **मौखिक परीक्षाओं की व्यवस्था**—निबन्धात्मक परीक्षाओं के साथ-साथ विद्यार्थियों की मौखिक परीक्षाएँ भी होनी चाहिए। इससे उनकी योग्यता तथा क्षमता के मापन में सहायता मिलेगी।

नोट

- **उत्तर पुस्तकों के मूल्यांकन में सुधार**–उत्तर पुस्तकों के मूल्यांकन की वर्तमान विधि से अंकों की विविधता को प्रोत्साहन मिलता है। इस दोषपूर्ण विधि में ऐसे परिवर्तन की आवश्यकता है। जिससे उत्तर पुस्तकों का मूल्यांकन अधिक से अधिक वैज्ञानिक तथा वस्तुनिष्ठ बन जाये। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव दिये जा रहे हैं–

    (*i*) **प्रश्नों के लिये उद्देश्यों का ज्ञान**–विद्यार्थी तथा परीक्षक दोनों को प्रश्न-पत्र में पूछे गये प्रश्नों के उद्देश्य स्पष्ट होने चाहिये।

    (*ii*) **मूल्यांकन के लिये निश्चित नियमों की तैयारी करना**–उत्तर पुस्तकों का मूल्यांकन करने से पहले प्रधान परीक्षक (Head Examiner) को प्रत्येक प्रश्न के सम्बन्ध में निश्चित नियम तैयार करने चाहिये जिनके अनुसार सहायक परीक्षक उत्तर पुस्तकों का स्पष्ट अंकन विधि द्वारा उचित मूल्यांकन करें।

- **वस्तुनिष्ठ परीक्षा का अर्थ**–वस्तुनिष्ठ परीक्षा का तात्पर्य मापन की उस अच्दी प्रवधि अथवा परीक्षा से है जिसका निर्माण निबन्धात्मक परीक्षाओं के दोषों को दूर करने के लिये किया जाता है। इन परीक्षाओं में आत्मनिष्ठा को रोकते हुये अंकों की विविधता पर नियन्त्रण किया जाता है। दूसरे शब्दों में वस्तुनिष्ठ परीक्षा के अन्तर्गत विद्यार्थियों के विषय ज्ञान की उपलब्धि, अभियोग्यता, अभिवृत्ति, अभिरुचि तथा बुद्धि आदि की जाँच करना।

- **वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के दोष**–वस्तुनष्ठि परीक्षाओं के दोष निम्नलिखित हैं–

    (*i*) **कठिन निर्माण**–वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में प्रश्नों की संख्या सौ से लेकर दो सौ तक होती है। इन प्रश्नों का निर्माण केवल योग्य, अनुभवी तथा कुशल शिक्षक ही कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में इन परीक्षाओं के प्रश्नों का निर्माण बहुत कठिन होता है।

    (*ii*) **अध्यापन की प्रामाणिता**–इन परीक्षाओं के द्वारा विद्यार्थियों की चिन्तन, मनन तथा तर्क आदि शक्तियों को विकसित करने की अपेक्षा शिक्षण नीति में समानता लाने का प्रयास किया जाता है। इससे वैयक्तिक विभिन्नता के सिद्धान्त की अवहेलना होती है जिसके परिणामस्वयरूप मानसिक क्रिया यान्त्रिक बन जाती है।

- शिक्षण में मूल्यांकन शिक्षण-अधिगम व्यवस्था का अन्तिम कार्य है शिक्षण मूल्यांकन का कार्य शिक्षक ही करताा है। इस सोपान में शिक्षक यह निश्ख्ति करता है कि उसके द्वारा की गई शिक्षण व्यवस्था तथा शिक्षण को आगे बढ़ाने की क्रियाएँ कितनी सफल रही हैं। यह सफलता शिक्षण-उद्देश्यों की प्राप्ति पृष्ठपोषण (Feedback) का कार्य करती है। **ग्लेसर** ने अपने शिक्षण प्रतिमान में इस सोपान का प्रमुख कार्य पृष्ठपोषण ही माना है। यदि उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकी है तब शिक्षक अपनी शिक्षण परिंस्थितियों का मूल्यांकन करके उनमें सुधार तथा परिवर्तन है। शिक्षक को इस सोपान में तीन कार्य करने होते हैं–शिक्षक को इस सोपान में तीन कार्य करने होते हैं–

    (1) अधिगम-प्रणाली का मूल्यांकन करना, (2) अधिगम का मापन करना, (3) अधिगम उद्देश्यों के द्वारा व्यवस्था करना।

- मूल्यांकन एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा अधिगम-परिस्थितियों तथा सीखने के अनुभवों के लिए प्रयुक्त की जाने वाली सभी विधियों एवं प्रविधियों की उपादेयता की जाँच की जाती है।

- **मूल्यांकन का महत्त्व**–मूलयांकन की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

    1. मूल्यांकन द्वारा यह मालूम किया जाता है कि उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है।

- मूल्यांकन की प्रक्रिया का क्षेत्र अधिक व्यापक होता है। इसमें अनेक प्रकार की प्रविधियाँ प्रयुक्त की जाती हैं।

    1. ज्ञानात्मक उद्देश्यों के लिए मौखिक, लिखित, निबन्धात्मक परीक्षाएँ तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ एवं प्रयोगात्मक परीक्षाएँ उपयोग में लाई जाती हैं, इसमें निरीक्षण प्रविधि का भी प्रयोग करते हैं।
    2. भावात्मक उद्देश्यों के लिए अभिरुचि सूची (Attitude Scale), रेटिंग तथा मूल्यों की परीक्षण (Values Test) आदि प्रयुक्त किये जाते हैं।

- अनुस्थिति प्रणाली (Grading) यह साधन है, जिससे छात्रों के मापन को प्रदर्शित किया जाता है। यह आवश्यकता

नोट

होती है कि छात्रों तथा अभिभावकों को यह बतला दें कि छात्र के सीखने का क्या स्तर है? छात्रों को जो अंक दिये जाते हैं, उससे यह जानकारी नहीं होती है।

- दोनों छात्रों के अंकों के अन्तर से गुणात्मक अन्तर का बोध नहीं होता है। पहला दूसरे से अच्छा है, इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कह सकते हैं। यदि छात्रों को अनुस्थिति (ग्रेड) आवंटित की जाए– प्रथम को B ग्रेड तथा द्वितीय को C ग्रेड दिया जाता है तो गुणात्मक अन्तर प्रकट होता है कि प्रथम मध्य स्तर का है और द्वितीय मध्यम स्तर का है।
- **परम्परागत अंकन प्रणाली**—साधारण परीक्षा में पूर्णांक 100 आवंटित किये जाते हैं। इसकी अवधारणा यह है कि छात्रों की क्षमताओं की 0 से 100 के पैमाने पर शुद्ध रूप में प्रदर्शित किया जाता है। मानवीय क्षमतायें तीन प्रकार की होती हैं—ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक।
- ग्रेडिंग प्रणाली के निम्नलिखित लाभ होते हैं–
    1. परम्परागत अंकन प्रणाली पर एक सुधार के रूप में नया विकास है। मानवीय योग्यताओं का मापन शुद्ध रूप में किया जाता है।
    2. अनुस्थिति प्रणाली से गुणात्मक मापन होता है और अन्तर को सार्थक रूप में प्रकट किया जाता है।
    3. इस प्रणाली ने 0 से 100 के पैमाने की अवधारणा को गलत सिद्ध कर दिया है। इसमें कम विस्तार के पैमाने पर मापन तथा मूल्यांकन किया जाता है।
    4. इस प्रणाली में एक मोटे रूप में क्षमताओं का आकलन किया जाता है, जो वास्तविक तथा अधिक व्यावहारिक होता है।
- **सापेक्षिक प्रामाणिक अनुस्थिति** (Relative Standard Grading)—इसके अन्तर्गत छात्र को समूह के स्थान के अनुसार अनुस्थिति दी जाती है। समूह के सभी छात्रों के स्तर को ध्यान में रखा जाता है।
- इसी प्रकार की अनुस्थिति प्रणाली में छात्रों का वितरण पूर्व निर्धारित कर लिया जाता है। एक छात्र को अनुस्थिति देते समय यह देखना होता है कि वह किस समूह में आता है।
- **सापेक्षित अनुस्थिति की सीमाएँ** (Limitations of Relative Grading)—इस प्रकार अनुस्थितियाँ विश्वविद्यालय तथा बोर्ड की परीक्षाओं में भी प्रयुक्त की जाती हैं। यह वितरण सामान्य होते हुए भी इसकी निम्नांकित सीमाएं हैं—सापेक्षित अनुस्थिति से छात्रों को अपने स्तर के सम्बन्ध में सही जानकारी नहीं हो पाती है और न ही अध्यापक को अपने शिक्षण के प्रभाव का सही बोध होता है। ग्रेड से छात्र का कक्षा में स्थान का बोध होता है। एक छात्र का एक ग्रेड एक कक्षा में दिया जाता है। दूसरी कक्षा में ग्रेड बदल जाएगा।

1.10 शब्दकोश (Keywords)

- **ग्राह्यता**—किसी वस्तु को ग्रहण करना।
- **विभेदीकारिता**—भेद या अंतर स्पष्ट करने की प्रक्रिया।
- **वैधता**—स्पष्ट, प्रमाणिक।

1.11 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. शिक्षण-नियन्त्रण में मूल्यांकन के महत्व का उल्लेख कीजिए।
2. मापन तथा मूल्यांकन के अन्तर को समझाइये और मापन के कार्यों का उल्लेख कीजिए।
3. मानदण्ड-परीक्षा की विशेषताओं का वर्णन कीजिए। मानदण्ड-परीक्षा तथा निष्पत्ति परीक्षा के अन्तर को स्पष्ट कीजिए।

नोट

4. निबन्धात्मक तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षा का तुलनात्मक वर्णन कीजिए।
5. "निबन्धात्मक परीक्षायें दोषपूर्ण होते हुए भी इनको परीक्षा-प्रणाली से हटाया नहीं जा सकता है।" इस कथन का विवेचन कीजिए।
6. वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ कितने प्रकार की होती हैं? उनके रूपों की व्याख्या उदाहरण-सहित कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. मापन	2. परिमाणात्मक	3. प्रामाणिक
4. अभिव्यक्ति या प्रस्तुतिकरण	5. उच्च	6. शक्ति।

1.12 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

1. शैक्षिक एवं मानसिक मापन; डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. मानसिक मापन एवं मूल्यांकन; डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान; डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–2: मापन तथा मूल्यांकन (Measurement and Evaluation: Concept, Need, Scope; Difference and Relevance)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

2.1 मापन का अर्थ (Meaning of Measurement)

2.2 मापन की आवश्यकता (Need of Measurement)

2.3 मापन का क्षेत्र (Scope of Measurement)

2.4 मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Evaluation)

2.5 मूल्यांकन की आवश्यकता (Need of Evaluation)

2.6 मूल्यांकन का क्षेत्र (Scope of Evaluation)

2.7 मापन तथा मूल्यांकन में अंतर (Difference between Measurement and Evaluation)

2.8 मापन तथा मूल्यांकन में समानताएँ (Similarities between Measurement and Evaluation)

2.9 सारांश (Summary)

2.10 शब्दकोश (Keywords)

2.11 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

2.12 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- मापन के अर्थ, क्षेत्र और आवश्यकता को समझने एवं वर्णन करने में
- मूल्यांकन का अर्थ, क्षेत्र और आवश्यकता का विवेचन करने में।
- मूल्यांकन तथा मापन की समानताओं और उनके अन्तर की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

मापन एवं मूल्यांकन की प्रक्रिया प्राचीन है इसका प्रयोग केवल शिक्षा एवं मनोविज्ञान में ही नहीं किया जाता अपितु इसका प्रयोग अनेक क्षेत्रों में किया गया है। इसका आरम्भ भौतिक विज्ञान से हुआ है। मापन के सम्बन्ध में यह धारणा है कि इसका विकास मानव सभ्यता के विकास में ही हुआ है। आज जो राष्ट्र सबसे अग्रणी माना जाता है उसकी मापन की विधियाँ भी अधिक शुद्ध हैं। मापन की प्रक्रिया औपचारिक है जबकि मूल्यांकन की प्रक्रिया

नोट

अनौपचारिक है जो निरन्तर चलती रहती है। मूल्यांकन सभी- वस्तुओं, गुणों एवं तथ्यों का निरन्तर होता रहता है। मूल्यांकन प्रक्रिया गुणात्मक है जबकि मापन की प्रक्रिया परिमाणात्मक होती है। भौतिक विज्ञान में मापन का प्रयोग अधिक प्राचीन है जबकि शिक्षा एवं मनोविज्ञान में मापन बीसवीं सदी की देन है। जबकि मूल्यांकन प्रक्रिया का प्रयोग शिक्षा में अधिक प्राचीन समय से किया गया। शिक्षा के आरम्भ में मूल्यांकन प्रक्रिया का आरम्भ हुआ है।

2.1 मापन का अर्थ (Meaning of Measurement)

मनोविज्ञान का आधार व्यक्तिगत भिन्नता है। व्यक्तिगत भिन्नता का सही अध्ययन मापन के द्वारा किया जाता है। कार्ल पीयरसन ने व्यक्तिगत भिन्नता को पहचानने तथा उसके स्वरूप के विश्लेषण के लिये वैज्ञानिक तथा अधिक विकसित प्रविधि का विकास किया है। मापन का दर्शन हमें अतीत के सम्बन्ध में जानकारी देता है जिससे वर्तमान को समझने में सहायता मिलती है और भविष्य की समस्याओं के समाधान में मापन का प्रयोग किया जा सकता है। मापन की परिभाषा इस प्रकार है-

"Measurement is a process of quantification."

''मापन वह प्रक्रिया है जिससे चलराशी को परिमाण के तीन कार्य होते हैं-

(1) किसी वस्तु के गुण या चर की पहचान की जाती है और उसकी परिभाषा दी जाती है।

(2) उन क्रियाओं तथा व्यवहारों को निर्धारित किया जाता है जिनसे उस गुण अथवा चर की अभिव्यक्ति की जाती है।

(3) उस प्रक्रिया का प्रतिपादन किया जाता है जिससे निरीक्षणों को परिमाण अथवा प्राप्तांकों (Scores) में बदल लिया जाता है।

नोट्स भौतिक विज्ञान में मापन की प्रक्रिया प्रत्यक्ष होती है जबकि शिक्षा एवं मनोविज्ञान में अप्रत्यक्ष होती है। इस प्रकार मापन की प्रक्रिया अधिक व्यापक है। इसका प्रयोग वस्तुओं, पदार्थों जीवों के भौतिक एवं व्यवहारिक गुणों के मापन के लिये किया जाता है।

2.2 मापन की आवश्यकता (Need of Measurement)

व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास ही शिक्षा का उद्देश्य है अर्थात् शिक्षा के द्वारा हमें छात्रों के बौद्धिक, शारीरिक, सामाजिक, नैतिक संवेगात्मक तथा स्वभाव का उचित विकास करना माना जाता है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये हमें विद्यालयों में विभिन्न क्रियाओं का आयोजन करना पड़ता है, बौद्धिक विकास के लिये हमें विभिन्न विषयों का ज्ञान देते हैं; जिससे उनकी मानसिक शक्तियों का विकास होता है तथा समुचित शारीरिक विकास के लिये खेल-कूद तथा व्यायाम का आयोजन रहता है। इस प्रगति का पूर्ण आलेख रखने से हम जान जाते हैं कि विद्यार्थी ने कब प्रगति की है और कब उसे प्रगति का अवसर नहीं मिल पाया है। इसकी व्याख्या करके हम उसके कारणों का सही ज्ञान भी प्राप्त कर सकते हैं, उनके कारणों का ज्ञान हो जाता है, तब उसका ठीक उपाय भी किया जा सकता है। मापन एवं परिमापीकरण की प्रक्रिया है। मापन की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से है–

(*i*) **साफल्य–** मापन के द्वारा ही किसी चर को परिणाम में आँकने से यह ज्ञात हो जाता है कि समूह या व्यक्ति की कितनी क्षमता है। साफल्य का प्रयोग छात्रों के वर्गीकरण, स्तरीकरण चयन, प्रगति तथा पूर्व कथनों में किया जाता है। विद्यालयों की परीक्षा का प्रमुख कार्य साफल्य ही होता है, क्योंकि छात्रों को परीक्षा में प्राप्तांकों के आधार पर श्रेणी दी जाती है।

(*ii*) **निदान–** साफल्य में छात्रों की योग्यताओं के स्तर की जानकारी तो होती है, परन्तु छात्र की कमजोरियों का बोध नहीं होता है। अत: छात्रों की कमजोरियों का निदान करने के लिए भी मापन की आवश्यकता होती है।

(*iii*) **शोध–** आजकल शिक्षा में प्रयोगात्मक तथा वैज्ञानिक शोध कार्यों को अधिक बढ़ावा दिया जा रहा है, शोध कार्यों में चारों के संबंध को प्रदत्तों में आँक लिया जाता है। इन प्रदत्तों में साँख्यिकी के प्रयोग से सहसम्बंध गणक तथा कारक प्रभाव के लिए प्रमाणों को प्रस्तुत किया जा सकता है। अत: शोध कार्यों के सामान्यीकरण तथा निष्कर्ष के लिए भी मापन अति आवश्यक है।

2.3 मापन का क्षेत्र (Scope of Measurement)

शिक्षा का अर्थ पढ़ाना नहीं है, बल्कि बालक को अपने आप पढ़ने के लिये तैयार करना है। हम देखते हैं कि आजकल हमारी शिक्षा-प्रणाली बहुत दोषपूर्ण हो गई है। विद्यार्थियों का लक्ष्य केवल परीक्षा में अधिक अंक प्राप्त करना ही रह गया है, जबकि वास्तविक उद्देश्य परीक्षा पास करने के बाद अर्जित ज्ञान का व्यावहारिक उपयोग होना चाहिये।

दूसरी ओर अध्यापकों का ध्यान केवल विषय की ओर ही अधिक केन्द्रित रहता है और बालक जिसका स्थान आज के शिक्षा जगत में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, बिल्कुल ही नहीं रहता है। अभिभावक भी बच्चों को विद्यालयों में भेजकर यह सोच लेते हैं कि उनके बच्चों की शिक्षा यथोचित रूप से चल रही है। किसी अच्छे विद्यालय में प्रवेश मिलने मात्र से ही यह अनुमान लगाना कि हमारा बालक योग्य बन सकेगा, बिल्कुल गलत है, क्योंकि विद्यार्थी कक्षा की अपेक्षा अपना अधिकतम समय घर पर व्यतीत करता है, अत: उसके व्यक्तित्व-निर्माण पर घर की शिक्षा का विशेष प्रभाव पड़ता है।

विद्यालयों में विद्यार्थी जो शिक्षा प्राप्त करते हैं, वह अपूर्ण सी प्रतीत होती है, क्योंकि वहाँ केवल ज्ञान की वृद्धि पर ही अधिक जोर दिया जाता है। इससे शिक्षा के अन्य उद्देश्यों-- जैसे कुशलता, रुचि, चिन्तन, सामाजिक, नैतिकता इत्यादि से विकास पर पूर्णतया ध्यान नहीं दिया जा सकता है। मापन की प्रक्रिया ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के संबंध में प्रदत्तों का संकलन करती है। परम्परागत परीक्षाओं से ज्ञानात्मक उद्देश्यों का ही मापन किया जाता है। मापन का क्षेत्र अधिक व्यापक होता है। इस प्रक्रिया के प्रमुख तीन कार्य होते हैं–

(*i*) किसी वस्तु के गुण या चर की पहचान की जाती है और उसकी परिभाषा दी जाती है।

(*ii*) उन क्रियाओं तथा व्यवहारों को निर्धारित किया जाता है, जिनसे उस गुण अथवा चर की अभिव्यक्ति की जाती है।

(*iii*) उस प्रक्रिया का प्रतिपादन किया जाता है, जिससे निरीक्षण को परिणाम अथवा प्राप्तांकों में बदल दिया जाता है। मापन द्वारा किसी व्यक्ति या वस्तु का मापन नहीं होता है। अपितु उसके गुण विशेष का मापन किया जाता है। सभी चरों को व्यापक रूप से चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है–

   (*i*) **योग्यताएँ–**एक व्यक्ति क्या कर सकता है? इसे उसकी योग्यता कहते हैं। जैसे–बुद्धि। यदि कोई व्यक्ति कुछ करने का प्रयास करे, तब वह क्या कर सकता है? वह उसकी योग्यता का प्रमाण होता है।

   (*ii*) **निष्पत्ति–**व्यक्ति की वे अनुक्रियाएँ, जिनसे यह ज्ञात होता है कि उसने अब तक क्या सीखा है? उसे निष्पत्ति कहते हैं।

   (*iii*) **प्रवणता–**एक व्यक्ति क्या कर सकेगा? उसे उसकी प्रवणता कहते हैं। जैसे–शिक्षक की प्रवणता। यदि कोई व्यक्ति भविष्य में कुछ करना चाहेगा, तब वह क्या कर सकेगा? वह उसकी प्रवणता का परिचायक होगा।

   (*iv*) **लक्षण–**किसी समय तथा स्थान पर किसी व्यक्ति के जिन व्यवहारों में स्थायित्व हो और वह सामाजिक व्यवहारों से संबंधित हो, तब उसे लक्षण या व्यक्तित्व चर की संज्ञा दी जाती है।

नोट

क्या आप जानते हैं प्राचीन काल की शिक्षा में शारीरिक विकास को अधिक महत्व दिया जाता था, अत: परीक्षाएँ भी शारीरिक गुणों का ही मापन करती थीं। जैसे-जैसे शिक्षा-शास्त्रियों का ध्यान शारीरिक से मानसिक विकास की ओर अधिक केन्द्रित हुआ, वैसे-वैसे उनके समक्ष मानसिक गुणों की वृद्धि के मापन की समस्या भी आई।

2.4 मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Evaluation)

मूल्यांकन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा अधिगम-परिस्थितियों तथा सीखने के अनुभवों के लिये प्रयुक्त की जाने वाली सभी विधियों एवं प्रविधियों की उपादेयता की जांच की जाती है। मूल्यांकन शब्द शिक्षा तथा मनोविज्ञान में विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त किया गया है। तथा इसको कई प्रकार से परिभाषित भी किया गया है। ***'क्वालेन तथा हन्ना'*** की परिभाषा अधिक सार्थक प्रतीत होती है। उनके अनुसार- ''विद्यालय में हुए छात्रों के व्यवहार परिवर्तन के सम्बन्ध में प्रदत्तों के संकलन तथा उनकी व्याख्या करने की प्रक्रिया को मूल्यांकन कहते हैं।''

"Evaluation is the process of gathering and interpreting evidence on changes in the behaviour of all students as they progress through school."

2.5 मूल्यांकन की आवश्यकता (Need of Evaluation)

मूल्यांकन की अधोलिखित आवश्यकता है-

1. मूल्यांकन द्वारा यह मालूम किया जाता है कि उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है।
2. मूल्यांकन प्रक्रिया से यह भी निश्चित किया जाता है कि किन विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं हो सकी है ताकि समुचित उपचारात्मक अनुदेशन (Remedial Instruction) दिया जा सके।
3. कक्षा में छात्रों के उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुसार स्तरीकरण (Ranking) किया जा सकता है।
4. शिक्षण की विधियों तथा प्रविधियों की उपादेयता और उनकी कमजोरियों को भी ज्ञात किया जाता है।
5. शिक्षण-आव्यूह (Teaching strategy) में सुधार तथा विकास किया जाता है तथा अनावश्यक अधिगम-स्रोतों को हटायाा भी जा सकता है।
6. मूल्यांकन-प्रक्रिया शिक्षक तथा छात्र दोनों के लिये पुनर्बलन का कार्य करती है।

इस प्रक्रिया में मानदण्ड-परीक्षा का महत्वपूर्ण कार्य होता है जिससे छात्रों में व्यवहार-परिवर्तन की जाँच होती है, जिसके आधार पर शिक्षक को अपनी क्रियाओं के सुधार तथा विकास के लिये दिशा मिलती है।

2.6 मूल्यांकन का क्षेत्र (Scope of Evaluation)

मूल्यांकन एवं औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों प्रकार की प्रक्रिया है। यह आधुनिक प्रत्यय मानते हैं। मूल्यांकन एक निरन्तर होने वाली प्रक्रिया है, जो स्वत: चलती रहती है। इसमें ज्ञानात्मक, भावनात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक तीनों पक्षों का मूल्यांकन होता है। मूल्यांकन एक गुणात्मक प्रक्रिया है। इसमें इनके अतिरिक्त निरीक्षण, अनुस्थिति मापनी, साक्षात्कार आदि अन्य प्रविधियों का भी प्रयोग होता है। इसके द्वारा बालक का विकास एवं शिक्षण-अधिगम की प्रभावशीलता का बोध होता है। इसके अर्न्तगत उद्देश्यों की प्राप्ति पर विशेष महत्व दिया जाता है। इसकी प्रक्रिया शिक्षण के अधिगम स्वरूप को विकसित करती है और शिक्षा की व्यवस्था का भी मूल्यांकन किया जाता है और उसके आधार पर सुधार करते हैं।

2.7 मापन तथा मूल्यांकन में अंतर (Difference between Measurement and Evaluation)

मापन का क्षेत्र बहुत सीमित रहता है जबकि मूल्यांकन की सीमा बहुत विस्तृत होती है। व्यक्ति के गुण-विशेष, जैसे किसी के अंग्रेजी में बोलने की कुशलता या किसी के इतिहास के ज्ञान को जानना, मापन कहलाता है।

मूल्यांकन में व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक इत्यादि सभी गुणों की परीक्षा सम्मिलित रहती है। मापन में मूल्यांकन की अपेक्षा समय भी कम लगता है, क्योंकि यह एक ही परीक्षा होती है और मूल्यांकन कई परीक्षाओं का सम्मिलित रूप है। अतः इसमें अधिक समय लगता है।

मापन (Measurement)	**मूल्यांकन** (Evaluation)
1. मापन में अंक प्रदान किये जाते हैं। मापना ही मापन है। परीक्षक छात्रों की कापियों को देखकर अंकों के रूप में प्रस्तुत करते हैं।	1. अंक प्रदान करने के बाद जब हम अंकों का मूल्य निर्धारित करते हैं तो वह मूल्यांकन कहलाता है। जैसे 60 अंक प्राप्त करने वाला छात्र प्रथम है। यहाँ हम अंकों के साथ उनका मूल्य भी निर्धारित कर देते हैं जिसे मूल्यांकन कहा जाता है।
2. मापन का क्षेत्र सीमित होता है, इसके अन्तर्गत हम कुछ ही परीक्षाएँ लेते हैं, जिसका उद्देश्य केवल वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति करना है- जैसे गणित की परीक्षा तथा व्यावसायिक रुचि की परीक्षा इत्यादि।	2. मूल्यांकन में सम्पूर्ण व्यक्तित्व की परीक्षा ली जाती है, किसी का मूल्यांकन करने के लिये हमें उसकी शारीरिक, मानसिक सामाजिक, संवेगात्मक तथा अन्य पक्षों की परीक्षा लेनी पड़ेगी, तभी उसका मूल्यांकन किया जा सकता है। अतः मूल्यांकन में कई परीक्षाओं का समावेश होता है।
3. मापन के आधार पर निश्चित धारणा नहीं बनाई जा सकती है, जैसा कि ऊपर कहा गया है कि मापन में कुछ ही परीक्षाएँ होती हैं और अधिकांश परीक्षाएँ इनमें शामिल नहीं रहतीं, इसलिये इसके आधार पर निश्चित धारणा बनाने में कठिनाई रहती है। जैसे, यदि कोई विद्यार्थी अंग्रेजी में सबसे अधिक अंक प्राप्त करता है तो हम यह नहीं कह सकते कि वह कक्षा का सबसे अच्छा छात्र है।	3. मूल्यांकन के आधार पर हम निश्चित धारणा बनाने में सफल रहते हैं। मूल्यांकन में सभी परीक्षाएँ सम्मिलित रहती हैं और इसके आधार पर हम किसी भी छात्र के बारे में निश्चित धारणा बना सकते हैं, उदाहरण के तौर पर यहाँ पर सभी परीक्षाओं के अंक उपलब्ध रहते हैं और इनका योग करके जो छात्र सभी विषयों के योग के आधार पर अधिक अंक प्राप्त करता है वह सबसे योग्य है और उसकी योग्यता सार्थक मानी जाती है, क्योंकि सभी पक्षों में परीक्षा देने के बाद उसका क्रम पहला आता है।
4. मापन में समय, धन तथा श्रम की कम आवश्यकता होती है, क्योंकि इसमें परीक्षाएँ कम होती हैं।	4. मूल्यांकन में श्रम, धन तथा समय की अधिक आवश्यकता होती है, क्योंकि इसमें कई परीक्षाओं का निर्माण, प्रशासन तथा विश्लेषण सम्मिलित रहता है।
5. मापन के आधार पर भविष्यवाणी (Prediction) सार्थकता के साथ नहीं की जा सकती।	5. मूल्यांकन में भविष्यवाणी सार्थकता के साथ कर सकते हैं, क्योंकि इसमें उसके सभी पहलुओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया जाता है।

नोट

2.8 मापन तथा मूल्यांकन में समानताएँ (Similarities Between Measurement and Evaluation)

मापन और मूल्यांकन के द्वारा शिक्षा क्षेत्र में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुए हैं। मापन और मूल्यांकन के द्वारा अध्यापकों तथा अभिभावकों को छात्र को समझने में बहुत सहायता मिलती है। इस सहायता का पता हमें तभी लग सकता है, जबकि हमें इसके उद्देश्यों का ज्ञान हो। ये ही प्रकारान्तर से विशेषताएँ भी हैं।

1. उन्नति देने में सहायक (Promotion)

मापन और मूल्यांकन में हम व्यक्ति के सभी क्षेत्रों की उन्नति की परीक्षा कर लेते हैं; अत: निश्चित है कि हमें इसके बारे में अधिक ज्ञान प्राप्त हो जाता है और उसकी क्षेत्रों में हुई उन्नति के आधार पर हम उसे एक कक्षा में आसानी से उन्नति दे सकते हैं।

2. पाठ्यक्रम में संशोधन (Modification of Curriculum)

मूल्यांकन और मापन के आधार पर हम यह भी जान सकते हैं कि पाठ्यक्रम के कौन-कौन से अंश विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुकूल हैं और कौन से अंश उनकी आवश्यकता के प्रतिकूल हैं। ऐसा जानकर हम उनके पाठ्यक्रम में कुछ नयी बातें जो उनकी योग्यता के अनुकूल होती हैं, जोड़ देते हैं। जो पाठ ठीक नहीं होते, उन्हें पाठ्यक्रम से निकाल देते हैं। शिक्षा समाज का एक अंग है। समाज में समय-समय पर परिवर्तन होते हैं; अत: आवश्यक है कि सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ शिक्षा में भी उचित संशोधन व परिवर्द्धन हो। यह संशोधन हम मापन और मूल्यांकन की सहायता से सुविधापूर्वक कर सकते हैं।

3. छात्रों का वर्गीकरण (Classification of Students)

परीक्षा लेने के पश्चात् विद्यार्थियों की योग्यता के बारे में हमें पूर्ण जानकारी हो जाती है। शिक्षा व्यक्तिगत विभिन्नता के आधार पर ही देनी चाहिये अर्थात् जिसमें जितनी योग्यता हो, उसके अनुसार ही उसे कार्य मिलना चाहिये। कक्षा में विभिन्न योग्यता के विद्यार्थी होते हैं। उस समय अध्यापक के लिये यह सम्भव नहीं होता कि वह अलग-अलग विद्यार्थियों पर अलग ध्यान दे सके। उनका वर्गीकरण करके व्यक्तिगत ध्यान दिया जा सकता है। योग्यता के आधार पर विद्यार्थियों को दो प्रकार से विभाजित किया जा सकता है।

(अ) क्षैतिज वर्गीकरण (Horizontal Classification)- इस प्रकार के वर्गीकरण में समान योग्यता वाले विद्यार्थी एक ही कक्षा में रखे जाते हैं।

जैसे 'अ' कक्षा में 50 विद्यार्थी हैं जिनके अंक 30 आये हैं। इसी प्रकार 'ब' और 'स' में भी क्रमश: वे सभी विद्यार्थी हैं जिनके अंक 20, और 10 आये हैं, अत: इस प्रकार के वर्गीकरण में लगभग एक ही योग्यता के विद्यार्थी एक कक्षा में रखे जाते हैं। इससे अध्यापक को यह सुविधा रहती है कि उसे व्यक्तिगत भिन्नता का ध्यान नहीं रखना पड़ता, क्योंकि पूरे वर्ग में एक ही योग्यता के विद्यार्थी रहते हैं।

(ब) उदग्र वर्गीकरण (Vertical Classification)- इस प्रकार के वर्गीकरण में विभिन्न योग्यता वाले विद्यार्थी एक ही वर्ग में रखे जाते हैं।

एक वर्ग में 10 विद्यार्थी वे हैं जिनके 40 अंक हैं, 20 विद्यार्थी ऐसे हैं जिनके अंक 20 हैं तथा 10 विद्यार्थी ऐसे हैं जिनके अंक 10 हैं अर्थात् ये सब भिन्न-भिन्न योग्यता वाले हैं। इस प्रकार के वर्गीकरण को उदग्र वर्गीकरण कहते हैं। इस वर्गीकरण को चित्र नम्बर 2 में दिखाया गया है। प्राय: विद्यालयों में इसी प्रकार का वर्गीकरण रहता है।

4. भविष्यकथन (Prediction): मापन और मूल्यांकन से हमें विद्यार्थी की वर्तमान अवस्था के बारे में पूर्ण जानकारी हो जाती है। इस जानकारी के आधार पर हम उसके बारे में भविष्यवाणी कर सकते हैं कि वह इस विषय में आगे चलकर कैसा रहेगा। यदि एक विद्यार्थी 11 वर्ष की आयु में अंग्रेजी की परीक्षा में बहुत अच्छे अंक प्राप्त

करता है, तो हम कह सकते हैं कि अन्य बातें समान होने पर वही विद्यार्थी आगे चलकर अंग्रेजी में अच्छा स्थान प्राप्त कर सकेगा।

5. निदान (Diagnosis)

प्राय: यह देखा जाता है कि विद्यार्थियों की योग्यता सभी विषयों में समान नहीं होती। इसका एक कारण तो व्यक्तिगत भिन्नता है और दूसरे भी बहुत से कारण हो सकते हैं, जिनका पता हमें निदानात्मक परीक्षा (Diagnostic test) से लग सकता है। इससे विद्यार्थी की विषयानुसार कठिनाई का पता लगाने में सहायता मिलती है। इसके अन्तर्गत हम क्रमिक कठिनाई की परीक्षा प्रत्येक विषय में बनाते हैं और फिर उसी निश्चित क्रम में विद्यार्थी की परीक्षा लेते हैं। जहाँ पर विद्यार्थी सही रूप से उत्तर देने में असफल होता है, वहीं कठिनाई होती है। कठिनाई का पता लगने के बाद उसका कारण जानने की कोशिश की जाती है फिर उसका उपचार किया जाता है। इस प्रकार की परीक्षाओं से अध्यापक और छात्र दोनों को ही लाभ होता है।

6. वैधता (Validity)

मापन और मूल्यांकन की प्रणालियाँ अधिकतर वैध होती हैं। यदि हमारी परीक्षा हमारे उद्देश्य को मापने में सफल रहती हैं तो उसे हम वैध परीक्षा कहते हैं। जैसे यदि हमें विद्यार्थियों की लम्बाई नापनी है तो हम मीटर के निशान वाले माप-दण्ड से आसानी से माप सकते हैं, क्योंकि ऐसा मापदण्ड लम्बाई को नापने का वैध उपकरण (Instrument) है। इसी प्रकार यदि हमें विद्यार्थियों के ऐतिहासिक ज्ञान को मापना है और हमारी परीक्षा उसे मापने में सफल होती है तो वह इतिहास की वैध परीक्षा कहलायेगी।

कहने का तात्पर्य यह है कि मापन और मूल्यांकन में जितनी परीक्षाओं की हम सहायता लेते हैं, वे अधिकतर वैध होती हैं।

7. विश्वसनीयता (Reliability)

परीक्षा विश्वसनीय होनी चाहिये। इस पर विश्वास करने का अर्थ यह होता है कि यदि विद्यार्थियों की कापियों को वही अध्यापक कुछ समय के बाद फिर जाँचे तो उसे सभी विद्यार्थियों को उतने ही अंक देने चाहिए जितने कि उसने पहले दिये थे। इसके साथ-साथ यदि भिन्न-भिन्न परीक्षक भी किसी एक कापी को जाँचें तो सभी को समान अंक देने चाहिये। यदि परीक्षा में यह गुण होता है तो परीक्षा विश्वसनीय कही जाती है। प्रचलित परीक्षा में विश्वसनीयता का अभाव है।

8. वस्तुनिष्ठता (Objectivity)

परीक्षा वैषयिक होनी चाहिये अर्थात् प्रत्येक प्रश्न और उसका उत्तर पहले से ही निर्धारित कर लेना चाहिये। यदि विद्यार्थी पूर्व निर्धारित कुंजी के अनुसार उत्तर नहीं देता तो उसके अंक नहीं दिये जाते हैं। इससे यह सम्भव है कि यदि विद्यार्थी की दूसरी बार भी परीक्षा ली जाये तो उसके अंक लगभग उतने ही आयेंगे जितने पहले थे। इस तरह वैषयिकता का विश्वसनीयता से निकटतम सम्बन्ध है।

शिक्षक जब उद्देश्यों के लिये अधिगम परिस्थितियों का सावधानी से निर्धारण कर लेता है तब मूल्यांकन के लिये, परीक्षा का निर्माण किया जाता है। इस परीक्षा से यह निश्चय किया जाता है कि इन उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है। *मेगर* का कथन है कि इस सोपान में शिक्षक नियोजन, शिक्षण-विधियों, प्रविधियों, (Strategies and Tactics) अनुदेशन तथा अन्य शिक्षण सहायक सामग्री की उपयोगिता का मूल्यांकन करता है, जिससे उनमें सुधार तथा विकास के लिए शिक्षक को प्रोत्साहन मिलता है। उसके आधार पर शिक्षक उत्तम साधनों तथा स्रोतों का प्रयोग अधिगम के लिये करता है जिससे उसके शिक्षण कौशल का विकास होता है। इसके लिये शिक्षक मानदण्ड-परीक्षा (Criterion test) की रचना करता है।

निष्पत्ति-परीक्षा तथा मानदण्ड-परीक्षा में अक्सर भ्रम हो जाता है। इन दोनों में अन्तर होता है। मानदण्ड परीक्षा उद्देश्यों के मूल्यांकन पर बल देती है जबकि निष्पत्ति परीक्षा पाठ्यवस्तु के मापन को महत्व देती है।

नोट

टास्क उदग्र वर्गीकरण क्या है?

स्व–मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करो–

1. व्यक्तिगत भिन्नता का अध्ययन .... के द्वारा किया जाता है।
2. .... में अधिगम परिस्थितियों तथा सीखने के अनुभवों के लिए प्रयुक्त की जाने वाली सभी प्रविधियों की जाँच की जाती है।
3. मूल्यांकन के द्वारा छात्रों के उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुसार .... किया जा सकता है।
4. मूल्यांकन में .... सार्थकता के साथ कर सकते हैं।

2.9 सारांश (Summary)

- मापन का दर्शन हमें अतीत के सम्बन्ध में जानकारी देता है जिससे वर्तमान को समझने में सहायता मिलती है और भविष्य की समस्याओं के समाधान में मापन का प्रयोग किया जा सकता है। मापन की परिभाषा इस प्रकार है–
- मापन वह प्रक्रिया है जिससे चलराशी के परिमाण के तीन कार्य होते हैं–
  (1) किसी वस्तु के गुण या चर की पहचान की जाती है और उसकी परिभाषा दी जाती है।
  (2) उन क्रियाओं तथा व्यवहारों को निर्धारित किया जाता है जिनसे उस गुण अथवा चर की अभिव्यक्ति की जाती है।
  (3) उस प्रक्रिया का प्रतिपादन किया जाता है जिससे निरीक्षणों को परिमाण अथवा प्राप्तांकों (Scores) में बदल लिया जाता है।
- व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास ही शिक्षा का उद्देश्य है अर्थात् शिक्षा के द्वारा हमें छात्रों के बौद्धिक, शारीरिक, सामाजिक, नैतिक संवेगात्मक तथा स्वभाव का उचित विकास करना माना जाता है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये हमें विद्यालयों में विभिन्न क्रियाओं का आयोजन करना पड़ता है, बौद्धिक विकास के लिये हमें विभिन्न विषयों का ज्ञान देते हैं; जिससे उनकी मानसिक शक्तियों का विकास होता है तथा समुचित शारीरिक विकास के लिये खेल–कूद तथा व्यायाम का आयोजन रहता है। इस प्रगति का पूर्ण आलेख रखने से हम जान जाते हैं कि विद्यार्थी ने कब प्रगति की है और कब उसे प्रगति का अवसर नहीं मिल पाया है। इसकी व्याख्या करके हम उसके कारणों का सही ज्ञान भी प्राप्त कर सकते हैं, उनके कारणों का ज्ञान हो जाता है, तब उसका ठीक उपाय भी किया जा सकता है।
- मापन का क्षेत्र बहुत सीमित रहता हे जबकि मूल्यांकन की सीमा बहुत विस्तृत होती है। व्यक्ति के गुण–विशेष, जैसे किसी के अंग्रेजी में बोलने की कुशलता या किसी के इतिहास के ज्ञान को जानना, मापन कहलाता है।
- मापन में अंक प्रदान किये जाते हैं। मापना ही मापन है। परीक्षक छात्रों की कापियों को देखकर उनकी योग्यता को मापते हैं और अपना निर्णय अंकों के रूप में प्रस्तुत करते हैं।
- मापन का क्षेत्र सीमित होता है, इसके अन्तर्गत हम कुछ ही परीक्षाएँ लेते हैं, जिसका उद्देश्य केवल वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति करना है।
- मापन के आधार पर निश्चित धारणा नहीं बनाई जा सकती है।
- मापन में समय, धन तथा श्रम की कम आवश्यकता होती है, क्योंकि इसमें परीक्षाएँ कम होती हैं।

नोट

- मापन के आधार पर भविष्यवाणी (Prediction) सार्थकता के साथ नहीं की जा सकती। अंक प्रदान करने के बाद जब हम अंकों का मूल्य निर्धारित करते हैं तो वह मूल्यांकन कहलाता है। जैसे 60 अंक प्राप्त करने वाला छात्र प्रथम है। यहाँ हम अंकों के मापन और मूल्यांकन में हम व्यक्ति के सभी क्षेत्रों की उन्नति की परीक्षा कर लेते हैं; अत: निश्चित है कि हमें इसके बारे में अधिक ज्ञान प्राप्त हो जाता है और उसकी क्षेत्रों में हुई उन्नति के आधार पर हम उसे एक कक्षा में आसानी से उन्नति दे सकते हैं। साथ उनका मूल्य भी निर्धारित कर देते हैं जिसे मूल्यांकन कहा जाता है।
- मूल्यांकन में सम्पूर्ण व्यक्तित्व की परीक्षा ली जाती है, किसी का मूल्यांकन करने के लिये हमें उसकी शारीरिक, मानसिक सामाजिक, संवेगात्मक तथा अन्य पक्षों की परीक्षा लेनी पड़ेगी, तभी उसका मूल्यांकन किया जा सकता है। अत: मूल्यांकन में कई परीक्षाओं का समावेश होता है।
- मूल्यांकन के आधार पर हम निश्चित धारणा बनाने में सफल रहते हैं।
- मूल्यांकन में श्रम, धन तथा समय की अधिक आवश्यकता होती है, क्योंकि इसमें कई परीक्षाओं का निर्माण, प्रशासन तथा विश्लेषण सम्मिलित रहता है।
- मूल्यांकन में भविष्यवाणी सार्थकता के साथ कर सकते हैं, क्योंकि इसमें उसके सभी पहलुओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया जाता है।
- मार्ग-प्रदर्शन दो प्रकार का होता है। पहला शैक्षिक मार्ग-प्रदर्शन और दूसरा व्यावसायिक मार्ग-प्रदर्शन। शैक्षिक मार्ग-प्रदर्शन में हम विद्यार्थी की रुचि और योग्यता की परीक्षा लेकर उसको अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार ही विषय लेने का परामर्श देते हैं। परामर्श देने से पहले विशेष विषय में कौन-कौन सी योग्यता की आवश्यकता होती है इसका हमें पता लगाना पड़ेगा, विषयानुसार अलग-अलग सूचियाँ तैयार करनी पड़ेंगी और फिर विद्यार्थी की रुचियों और योग्यताओं की इन सूचियों से हम तुलना करेंगे।
- मूल्यांकन और मापन के आधार पर हम यह भी जान सकते हैं कि पाठ्यक्रम के कौन-कौन से अंश विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुकूल हैं और कौन से अंश उनकी आवश्यकता के प्रतिकूल हैं। ऐसा जानकर हम उनके पाठ्यक्रम में कुछ नयी बातें जो उनकी योग्यता के अनुकूल होती हैं, जोड़ देते हैं। जो पाठ ठीक नहीं होते, उन्हें पाठ्यक्रम से निकाल देते हैं।
- परीक्षा लेने के पश्चात् विद्यार्थियों की योग्यता के बारे में हमें पूर्ण जानकारी हो जाती है। शिक्षा व्यक्तिगत विभिन्नता के आधार पर ही देनी चाहिये अर्थात् जिसमें जितनी योग्यता हो, उसके अनुसार ही उसे कार्य मिलना चाहिये।
- मूल्यांकन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा अधिगम-परिस्थितियों तथा सीखने के अनुभवों के लिये प्रयुक्त की जाने वाली सभी विधियों एवं प्रविधियों की उपादेयता की जांच की जाती है। मूल्यांकन शब्द शिक्षा तथा मनोविज्ञान में विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त किया गया है।
- मूल्यांकन की अधोलिखित आवश्यकता है-
  1. मूल्यांकन द्वारा यह मालूम किया जाता है कि उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है।
  2. मूल्यांकन प्रक्रिया से यह भी निश्चित किया जाता है कि किन विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं हो सकी है ताकि समुचित उपचारात्मक अनुदेशन (Remedial Instruction) दिया जा सके।
  3. कक्षा में छात्रों के उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुसार स्तरीकरण (Ranking) किया जा सकता है।
  4. शिक्षण की विधियों तथा प्रविधियों की उपादेयता और उनकी कमजोरियों को भी ज्ञात किया जाता है।
  5. शिक्षण-आव्यूह (Teaching strategy) में सुधार तथा विकास किया जाता है तथा अनावश्यक अधिगम-स्रोतों को हटाया भी जा सकता है।
- मूल्यांकन एवं औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों प्रकार की प्रक्रिया है जबकि परीक्षा एक औपचारिक प्रणाली (System) है।

नोट

2.10 शब्दकोश (Keywords)

- **साफल्य**–सफल होने वाला।
- **निदानात्मक**–जिसका निदान हो सके।
- **शोध**–अनुसंधान।

2.11 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मापन का क्या अर्थ है?
2. मापन की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
3. मापन तथा मूल्यांकन में क्या अंतर है?
4. मापन तथा मूल्यांकन में समानता को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– स्व–मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. मापन 2. मूल्यांकन 3. स्तरीकरण 4. भविष्यवाणी

2.12 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–3: मापन की अनुमापनियाँ (Scales of Measurement)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
3.1 अप्रत्यक्ष मापन (Indirect Measurement)
3.2 प्रत्यय एवं संरचना (Concept and Construct)
3.3 चर का अर्थ (Meaning of Variable)
3.4 मापन की अनुमापनियाँ (Sclaes of Measurement)
3.5 मापन की मुख्य क्रियाएँ (Main Tasks of Measurement)
3.6 सारांश (Summary)
3.7 शब्दकोश (Keywords)
3.8 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
3.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- मापन की अनुमापनियों को समझने और व्याख्या करने में

प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षा तथा मनोविज्ञान में मापन की प्रक्रिया निरपेक्ष तथा अप्रत्यक्ष होती है। निरपेक्ष का अर्थ होता है कि भौतिक मापन की भाँति शून्य का मान निरपेक्ष नहीं होता है अपितु शून्य का मान सापेक्ष होता है। जैसे किसी विषय के परीक्षण में एक छात्र के अंक शून्य प्राप्त हुए इसका अर्थ यह नहीं है कि उस विषय में उसे कुछ भी ज्ञान नहीं है अपितु परीक्षण में सम्मिलित प्रश्नों का ज्ञान नहीं है। व्यावहारिक विज्ञानों में शून्य सन्दर्भ बिन्दु नहीं होता है अपितु समूह का निष्पादन सन्दर्भ बिन्दु माना जाता है। क्योंकि मापन की प्रक्रिया सापेक्ष होती है।

शिक्षा में मापन की सापेक्षता का अर्थ एक उदाहरण स्पष्ट किया जा सकता है। एक छात्र के गणित में 60 अंक और अंग्रेजी में 29 अंक प्राप्त किया। दोनों विषयों के पूर्णांक 100 है। इसका अर्थ हुआ 60 प्रतिशत गणित में 29 प्रतिशत अंग्रेजी में अंक प्राप्त किये गणित में प्रथम श्रेणी के अंक तथा अंग्रेजी में पास भी नहीं है। परन्तु जब कक्षा शिक्षक से जानकारी की गई तब शिक्षक ने बताया कि अंग्रेजी में सबसे अधिक प्राप्त किए और गणित में सबसे कम अंक प्राप्त किये हैं। यह अर्थापन समूह के निष्पादन के सन्दर्भ में किया गया है जो अधिक सार्थक है। यहाँ सापेक्ष से तात्पर्य समूह के सन्दर्भ में छात्र में छात्र का निष्पादन किस स्तर का है। इस इकाई में हम मापन की अनुमापनियों का अध्ययन करेंगे।

नोट

3.1 अप्रत्यक्ष मापन (Indirect Measurement)

भौतिक विज्ञान में मापन प्रत्यक्ष होता है और शिक्षा तथा मनोविज्ञान में सामान्यत: अप्रत्यक्ष होता है। भौतिक विज्ञान में जिस पक्ष का मापन करना होता है उस पर मापनी रख कर माप लेते हैं। किसी की लम्बाई, ऊँचाई ज्ञात करने के लिये पैमाना रखकर माप लेते हैं जबकि शिक्षा तथा मनोविज्ञान में जिस गुण, चर का मापन करना हो उस पर प्रत्यक्ष मापनी नहीं रख सकते क्योंकि वह चर अमूर्त होता है। उसकी संरचना का बोध व्यवहारों से होता है इसलिये अमूर्त चरों का मापन व्यवहारों की सहायता से अप्रत्यक्ष रूप में किया जाता है। उदाहरण के लिए बुद्धि एक ऐसी अनुभूति है जो व्यवहारों से प्रतीत होती है परन्तु इसका प्रत्यक्षीकरण सम्भव नहीं है। इसलिये व्यवहारों से अप्रत्यक्ष रूप में बुद्धि का मापन किया जाता है। व्यवहारों से सम्बन्धित प्रश्न मौखिक तथा लिखित रूप में पूछे जाते हैं। सही उत्तर को एक अंक तथा गलत को शून्य अंक दिया जाता है।

उदाहरण के लिये–

प्रश्न– आकाश : नीला : : दूध : (सफेद)

इस प्रश्न के सही उत्तर के लिये आकाश तथा नीले में सम्बन्ध रंग का ज्ञात करने पर ही सही उत्तर (सफेद) दे सकता है। इसमें तार्किक योग्यता की आवश्यकता है। तार्किक योग्यता बुद्धि का महत्वपूर्ण कारक है।

यह प्रश्न बुद्धि के तार्किक कारक का ही मापन नहीं करता अपितु हिन्दी की शब्दावली का भी साथ-साथ मापन करता है दूध के रंग का शब्द ज्ञान है तभी सही उत्तर दे सकता है। इस प्रकार यह प्रश्न बुद्धि तथा हिन्दी योग्यता का मापन करता है।

अप्रत्यक्ष मापन की समस्या यह है कोई भी व्यवहार ऐसा नहीं है जो केवल एक ही चर। प्रत्यक्ष का मापन करता हो, अपितु एक से अधिक का मापन करता है। मानवीय व्यवहारों की संख्या सीमित है परन्तु उसके चर अनेक हैं। इसलिये शुद्ध मापन सम्भव नहीं होता है। क्योंकि इनका मापन व्यवहारों के आधार पर अप्रत्यक्ष रूप में किया जाता है।

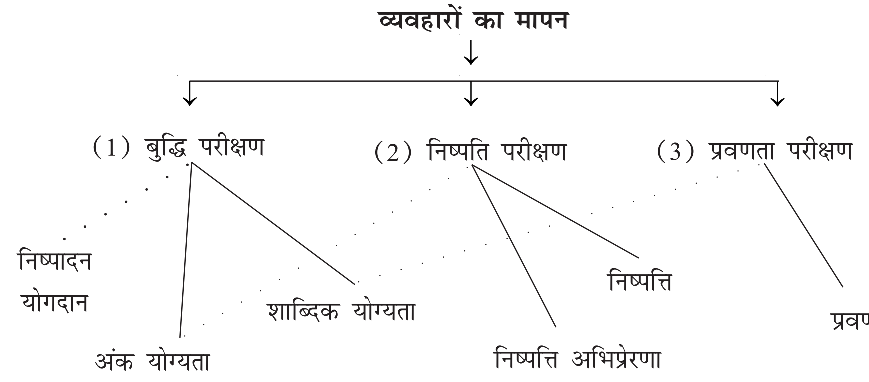

3.2 प्रत्यय एवं संरचना (Concept and Construct)

सामान्यत: प्रत्यय एवं संरचना का एक ही अर्थ होता है। किसी अमूर्त के सामान्यीकरण की अभिव्यक्ति को प्रत्यय कहते हैं। जैसे बुद्धि, निष्पत्ति, व्यक्तित्व ऊर्जा, अभिप्रेरण, आवश्यकता आदि। विशिष्ट व्यवहारों के अवलोकन से अमूर्त का स्वरूप भी निर्धारित करते हैं। उसे संरचना कहते हैं।

यदि कोई बालक अपने आयु बालकों से उच्च स्तर का व्यवहार करता है तब कहते हैं कि बालक बुद्धिमान है और अंकगणित की अपेक्षा भाषा की अभिव्यक्ति उच्च स्तर की है यह बुद्धि की 'संरचना' को प्रकट करता है। इसलिए प्रत्यय एवं संरचना का अर्थ एवं आधार समान है। बुद्धि एक प्रत्यय भी है तथा उसकी संरचना भी जिन व्यवहारों से अमूर्त के सम्बन्ध में सामान्यीकरण किया है। इस प्रकार संरचना भी एक प्रत्यय है।

नोट

3.3 चर का अर्थ (Meaning of Variable)

किसी वस्तु या व्यक्ति की विशषता को चर की संज्ञा दी जाती है। विशेषताओं के आधार पर भिन्नता का निर्धारण होता है। चर एक संकेत मात्र होता है जिसमें अंकों अथवा मूल्यों का आवंटन होता है। चर कोई भी न्याय संगत मूल्य ले सकता है। इस प्रकार संकेत कोई संख्यात्मक मान या मूल्य दिया जाता है। बुद्धि परीक्षण द्वारा विशिष्ट अंक प्रदान किये जाते हैं।

> *नोट्स* बुद्धि मापन के मूल्य को बुद्धि-लब्धि (I.Q.) कहा जाता है।

चर की प्रकार (Types of Variable)-किसी व्यक्ति या वस्तु का मापन नहीं किया जा सकता है। अपितु उसके गुणों अथवा विशेषताओं (चरों) का मापन किया जाता है। उसके आधार पर व्यक्तिगत भिन्नता ज्ञात की जाती है। चरों का विभाजन कई प्रकार से किया जाता है। चरों के प्रकार का वर्गीकरण यहाँ चार्ट द्वारा प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार चरों का विभाजन तीन प्रकार से किया जाता है-

(1) सम्पादन के आधार पर

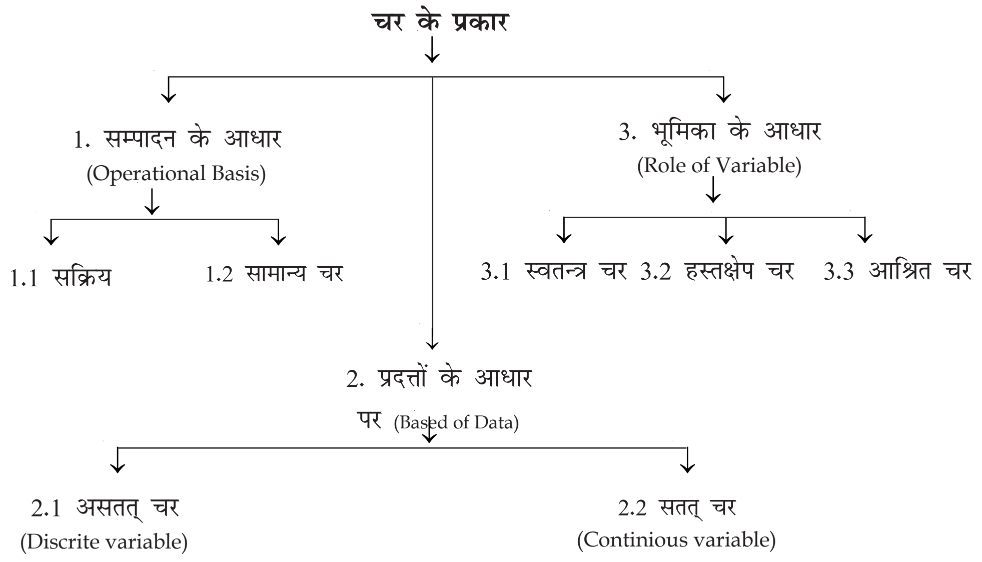

(2) प्रदत्तों के आधार पर

(3) चरों की भूमिका के आधार पर।

(1) सम्पादन के आधार पर (Operational Variable)-इस प्रकार के चरों का उपयोग प्रयोगात्मक कार्यों में किया जाता है जिस चर का प्रभाव देखा जाता है और उस चर का सम्पादन करते हैं तब उसे सक्रिय चर (Active Variable) कहते हैं। किसी चर का सामान्य विशेषता के लिए मापन किया जाता है तब उसे विशेषता चर (Attribute variable) कहते हैं।

(2) प्रदत्तों की प्रकृति के आधार पर (Based on Nature of Data)-चरों की प्रकृति में भिन्नता अधिक होती है इसलिए उनके मापन हेतु विविध प्रकार के परीक्षण प्रविधियां का उपयोग किया जाता है और उनसे प्रदत्त भी भिन्न प्रकार के प्राप्त होते हैं। प्रदत्तों की प्रकृति के आधार पर चरों का विभाजन दो वर्गों में किया जा सकता है-

नोट

(अ) असतत् चर (Discrete Variable) तथा

(ब) सतत् चर (Continuous Variable)

प्रदत्तों के आधार पर चरों के वर्गीकरण का विवरण यहाँ पर दिया गया है-

(अ) असतत् चर (Discrete Variable): इस प्रकार के चरों के मापन को नामित मापन (Nominal Measurement) भी कहते हैं। इसे वर्गीकृत चर भी कहा जाता है। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में कुछ इस प्रकार के चर होते हैं जिनका मापन पृथक् वर्गों में किया जाता है। मापन आवृत्तियों रूप में होता है। जैसे कि कक्षा में छात्र व छात्राओं की संख्या, जनगणना में पुरुष तथा महिलाओं की संख्या आदि।

वास्तव में इस प्रकार चरों का वर्गीकरण किया जाता है। इस प्रकार के चरों का मापन सबसे निम्न स्तर का होता है इसमें निरीक्षण प्रविधि के आधार पर आवृत्तियों को अंकित कर लिया जाता है।

इस प्रकार के चरों के मापन के अर्थापन के लिए बहुलांक केन्द्रवर्ती मान तथा कई वर्ग परीक्षण का उपयोग किया जाता है। इस प्रकार चरों के सह-सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए फाई तथा कंटिजेन्सी सह-सम्बन्ध की गणना की जाती है।

(ब) सतत् चर (Continuous Variable): शिक्षा तथा मनोविज्ञान में सतत् चरों का उपयोग अधिक किया जाता है। इस प्रकार के चरों का मापन में संकेतों को इस प्रकार अंक दिये जाते हैं जिनमें एक क्रम होता है, और उनकी निश्चित सीमा भी होती है। सतत् चरों के मूल्यों से एक क्रम का बोध होता है। यह मूल्यों का क्रम अनुमापनी द्वारा ज्ञान किया जाता है। प्रत्येक सदस्य को अंक दिये जाते हैं जिससे व्यक्तिगत भिन्नता का बोध होता है। सतत् चरों के मापन के लिए परीक्षणों का उपयोग किया जाता है। जैसे बुद्धि परीक्षण, निष्पत्ति परीक्षण, प्रवणता परीक्षण आदि। सतत् चरों के मापन में ऐसे प्रश्न दिये जाते हैं जिनका अंकन सही अथवा गलत को शून्य अंक दिया जाता है। अंकन में निरन्तरता नहीं होती है। एक तथा शून्य के मध्य कोई अंक नहीं दिया जाता है। जैसे छात्र का प्राप्तांक 60 है इसका अर्थ होता है (59.5 से 60.5) विस्तार में शुद्ध अंक है। इसी प्रकार सांख्यिकी में प्रदत्तों को वर्गान्तर तालिका में व्यवस्थित किया जाता है।

वर्गान्तर	वर्गान्तर सीमांक
60-69	59.5-69.5
50-59	49.5-59.5
40-49	39.5-48.5
30-39	29.5-39.5

इसी प्रकार से प्राप्तांको के शुद्ध मान ज्ञात करने के लिए सांख्यिकी का उपयोग किया जाता है।

सतत् चरों में सांख्यिकी का उपयोग-इस प्रकार के चरों के मापन से जो प्रदत्त प्राप्त होते हैं उनमें सभी प्रकार की सांख्यिकी प्रविधियों का उपयोग किया जाता है। साधारणत: मध्यमान तथा प्रमाणिक विचलन का उपयोग किया जाता है। सह-सम्बन्ध ज्ञान करने के लिए पीयर्सन विधि का उपयोग करते हैं। दो समूहों के अन्तर के लिए 'टी' परीक्षण का उपयोग किया जाता है। दो से अधिक समूहों की तुलना में चारिता विश्लेषण का उपयोग करते हैं।

सतत् चरों के मापन हेतु परीक्षणों का प्रमापीकरण करने के लिए मानको को विकसित कर लिया जाता है। इन चरों के मापन का अर्थापन करने के लिए परासांख्यिकी का उपयोग किया जाता है। इनका मापन अधिक शुद्ध स्तर पर किया जाता है जिससे अर्थापन भी अधिक शुद्ध होता है।

(3) चरों की भूमिका के आधार पर (Roles of Variable)-शिक्षा तथा मनोविज्ञान के अध्ययनों में चरों की भूमिकाओं का विशेष महत्व होता है। परिस्थिति के अनुसार चरों की भूमिकाएँ बदलती रहती हैं। भूमिकाओं के आधार पर चरों को तीन प्रकार का माना गया है- 1. स्वतन्त्र चर 2. आश्रित चर तथा 3. हस्तक्षेप चर। इनका

संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया गया है–

1. स्वतन्त्र चर (Independent Variable)–प्रयोगात्मक अध्ययनों में तथा सह–सम्बन्ध ज्ञात करते समय स्वतन्त्र चर की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। प्रयोगात्मक कार्य में जिस चर का प्रभाव देखने के लिए सम्पादन किया जाता है। वह स्वतन्त्र चर होता है। स्वतन्त्र चर की भूमिका अवधारणा पर निर्भर होती है। जैसे बुद्धि और निष्पति आश्रित चर है।

क्या आप जानते हैं असतत् चर को पामित भी कहते हैं। इस प्रकार के चरों को आवृत्तियों में मापन किया जाता है जैसे लिंग चर, राष्ट्रीयता, साक्षरता पास तथा फेल, परीक्षा में सफलता आदि का मापन आवृत्तियों में किया जाता है।

3.4 मापन की अनुमापनियाँ (Sclaes of Measurement)

मापन का नियमों तथा धारणाओं के आधार पर वर्गीकरण किया जा सकता है। यही नियम तथा धारणायें मापन–प्रक्रिया को आधार प्रदान करती हैं। स्वीवेन्स ने 1946 में मापन को निम्न चार स्तरों में विभाजित किया है–

(1) नाम–सम्बन्धी मापनी (Nominal Scale)

(2) क्रम–सूचक मापनी (Ordinal Scale)

(3) समान आवान्तर मापनी, तथा (Equal Interval Scale) तथा

(4) अनुपात मापनी (Ratio Scale)

(1) नाम–सम्बन्धी मापनी (Nominal Scale)–मापन के चारों स्तरों में यह सबसे कम शुद्ध स्तर माना जाता है इसमें केवल दो या दो से अधिक वर्गों में किसी तथ्य का विभाजन किया जाता है। उसके परिणाम का बोध नहीं होता है। उदाहरण के लिये छात्राध्यापकों का हम कई तथ्यों के आधार पर विभाजन करते हैं जैसे, लिंग (Sex) के आधार पर, शिक्षण विषयों के आधार पर इत्यादि। इस स्तर के मापन के लिये प्रश्नावली (Questionnaire) तथा निरीक्षण–प्रविधि (Observation Technique) प्रयुक्त की जाती है। इस स्तर पर प्रदत्त केवल आवृत्ति (Frequency) में प्राप्त होते हैं जिनके विश्लेषण के लिये बहुलांक (Mode), प्रतिशत काई–वर्ग (Chi-Square) तथा सह सम्बन्ध (Contingency) प्रविधियाँ प्रयुक्त की जा सकती हैं।

(2) क्रम–सूचक मापनी (Ordinal Scale)–यह मापन का स्तर पहले की अपेक्षा शुद्ध होता है। प्रत्येक वर्ग के छात्रों को एक क्रम (Rank) में व्यवस्थित किया जाता है। इसमें छात्रों को अनुपस्थिति (Rank) दिया जाता है। इस स्तर के मापन में निरीक्षण के आधार पर तर्कपूर्ण ढंग से एक क्रम में अनुपस्थिति (Rank) प्रदान किया जाता है। उनको आपस की दूरी का बोध नहीं होता है। उदाहरण के लिये छात्राध्यापकों को लड़कों तथा लड़कियों के समूहों में विभाजित करके शिक्षक यदि उनको अनुपस्थितियाँ (Rank) प्रदान करता है तब यह मापन क्रम–सूचक स्तर (Ordinal Scale) माना जायेगा। इस स्तर के मापन के लिये निरीक्षण–प्रविधि तथा स्तर–सूची (Rating Scale) को प्रयुक्त किया जाता है। इसमें आवृत्ति को एक क्रम में रखा जाता है। मध्यांक (Median) स्पीयरमेन रेंक विधि का प्रयोग सह–सम्बन्ध ज्ञात करने के लिये, काई–वर्ग (Chi-Square) परीक्षा को अन्तरों का विश्लेषण करने के लिये प्रयुक्त किया जाता है। शिक्षक अपनी शिक्षण क्रियाओं के समय छात्रों का व्यवहार के आधार पर स्तरीकरण करता है और कक्षा अधिगम क्रियाओं के मूल्यांकन में प्रयुक्त करता है।

(3) समान आवान्तर मापनी (Equal Interval Scale)–इस मापन स्तर की वही सब विशेषतायें होती हैं जो प्रथम दो स्तरों की होती हैं परन्तु इसकी विशेषता यह भी है कि यह दो व्यक्तियों के मध्य की दूरी प्रकट करता

नोट

है। इस स्तर में शून्य माना हुआ होता है क्योंकि शैक्षिक मापन अपेक्षाकृत होता है। चर (Variable) के मापन के लिये अंक प्रदान किये जाते हैं। छात्रों को परीक्षा में अंक दिये जाते हैं। विभिन्न विषयों के अंक अलग-अलग होते हैं। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में मापन का सबसे शुद्ध स्तर माना जाता अलग-अलग होते हैं। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में मापन का सबसे शुद्ध स्तर माना जाता है। निम्नलिखित उदाहरण से इसकी शुद्धता का बोध हो सकता है-

छात्र (Student)	*क्रम सूचक मापनी (Ordinal Scale)*	*समान आवान्तर स्तर (Equal-Interval Scale)*
अ	1	50
ब	2	98
स	3	99

अ, **ब** में स्तर का अन्तर एक का है और अंको में 48 का अन्तर है, जबकि **स** में रेंक का अन्तर एक का है और अंकों में भी एक का ही अन्तर है। यह मापन शुद्ध सूचना प्रस्तुत करता है। इसके लिये निष्पत्ति परीक्षा का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के प्रदत्तों के विश्लेषण में मध्यमान, प्रमाणित विचलन, सह-सम्बन्ध गुणक विधि, टी-परीक्षण, आदि अधिक शुद्ध सांख्यिकी-प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। शिक्षक को इसी स्तर के मापन को अधिक प्रयुक्त करना होता है। मापन के इस स्तर के लिये शिक्षक मानदण्ड-परीक्षा को प्रयुक्त करता है और प्राप्त अंकों के आधार पर उद्देश्यों के सम्बन्ध में निर्णय लेता है।

मापन की अनुमापनियों का तुलनात्मक विवरण
(Comparison of Scales of Measurement)

अनुमापनी	*विशेषता*	*प्रविधियाँ*	*सांख्यिकी का उपयोग*
1. नामित (Nominal)	वर्गो में आवृत्तिया सापेक्ष	निरीक्षण प्रश्नावली अप्रत्यक्ष मापन	आवृत्तियाँ बहुलांक, काई वर्ग परीक्षण एवं 'सी॰ सह-सम्बन्ध
2. अनुस्थित (Ordinal)	अनुस्थितियों क्रमानुसार सापेक्ष	रेटिंग मापनी निरीक्षण मापन अनुस्थितियाँ	मध्यांक तथा निरीक्षण स्पीयरमैन रोह सह-सम्बन्ध काई वर्ग
3. वर्गान्तर समान (Equal Interval Scale)	सापेक्ष मापन अंक समान वर्गान्तर, सापेक्ष	परीक्षण निरीक्षण मापनियाँ	मध्यमान, प्रमाणिक विचलन, पीयर्सन सह-सम्बन्ध 'टी॰' परीक्षण
4. अनुपातिक (Ratio Scale)	निरपेक्ष मापन शून्य सार्थक	भौतिक मापनियाँ प्रत्यक्ष मापन	गणित का उपयोग पीयर्सन

(4) अनुपात मापनी (Ratio Scale)-यह सबसे शुद्ध मापन का स्तर माना जाता है। इसमें इकाइयाँ समान होती है। शून्य का अस्तित्व होता है। भौतिक विज्ञान के चरों, जैसे तापक्रम, भार, आयतन आदि के मापन में इसी स्तर का प्रयोग होता है। शिक्षा तथा मनोविज्ञान के मापन में इसका प्रयोग कम होता है। इसमें सांख्यिकी की अपेक्षा प्रदत्तों के विश्लेषण में गणित का प्रयोग किया जाता है।

इन अनुमापनियों के आधार पर मापन के प्रकार भी किये जाते हैं। क्योंकि इन चारों प्रकार से मापन किया जाता है- 1. नामित मापन 2. अनुस्थिति मापन 3. समान-वर्गान्तर मापन तथा अनुपातिक मापन। इन्हें एक शुद्ध मापन चढ़ाव क्रम में प्रस्तुत किया गया है।

मापन का अर्थ होता है चरों (गणों) को संख्या/मात्रा में बदलना। संख्या में बदलने के लिए नियमों का उपयोग किया जाता है, और अवधारणाओं की सहायता ली जाती है। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में नामित मापन सबसे निम्न स्तर का होता है, और समान-वर्गान्तर मापन सबसे शुद्ध मापन माना जाता है। अनुपातिक मापन का उपयोग भौतिक विज्ञान में होता है, क्योंकि यह निरपेक्ष होता है और शून्य का मान होता है। जबकि इसके अतिरिक्त मापनियों में सापेक्ष मापन होता है शून्य माना हुआ होता है।

मापन से जो प्राप्तांक आते हैं वे अर्थहीन होते हैं उनका कोई अर्थ नहीं होता है। उनका अर्थापन करने के लिए गणित एवं सांख्यिकी की प्रविधियों का उपयोग किया जाता है तब उन्हें सार्थक बनाया जाता है। मनोविज्ञान तथा शिक्षा के मापन के प्राप्तांको में सांख्यिकी का उपयोग किया जाता है। क्योंकि सांख्यिकी का सम्बन्ध समूह अथवा न्यादर्श से होता है। इसमें अर्थापन सापेक्ष होता है।

नामित मापन में समूह के सदस्यों को दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। छात्र और छात्राओं की पृथक्-पृथक् संख्या में गणना करना। अनुस्थिति में उन्हें क्रम में रखना अथवा अनुस्थितियाँ प्रदान करना। समान-वर्गान्तर में परीक्षण देकर उन्हें अंक प्रदान करना होता है। इस प्रकार मापन की शुद्धता बढ़ती जाती है यहाँ एक उदाहरण से स्पष्ट किया गया है–

छात्र	*अनुस्थिति मापन*	*अंकों का अन्तर*	*समान-वर्गान्तर मापन*	*अंको का अन्तर*
अ	2		48	
ब	1	1	49	1
स	3	1	20	28

इस उदाहरण में ब को प्रथम, अ को द्वितीय तथा स को तृतीय अनुस्थिति प्रदान की गई है। इनका अनुस्थितियों में एक अन्तर है पर समान वर्गान्तर में ब तथा अ के अंकों का अन्तर 1 और अ और स के अंकों में अन्तर 28 का है। अनुस्थितियों के अन्तर से वास्तविक अन्तर का बोध नहीं होता है। समान-वर्गान्तर से अन्तर का बोध अंकों से होता है इसलिए समान-वर्गान्तर मापन को शुद्ध मानते हैं। नामित मापन में सभी को समान अंक दिया जाता है। जबकि सभी समान नहीं होते है। अनुस्थिति मापन में भिन्नता के आधार पर क्रम में रख लिया जाता है। अनुस्थितियों में अन्तर समान होता है। जबकि सभी के मध्य अन्तर समान नहीं होता है।

> *टास्क* नाम संबंधी मापन के लिए किन तकनीकों का प्रयोग किया जाता है?

3.5 मापन की मुख्य क्रियाएँ (Main Tasks of Measurement)

व्यक्ति के सभी गुणों का मापन तथा वर्णन करना सम्भव नहीं है इसलिए सम्बन्धित तथा सार्थक चरों का विवरण देना अधिक उपर्युक्त है। उनमें गुणात्मक पक्षो का वर्णन करना अधिक उपयोगी है। यहाँ अधिक शुद्ध रूप में परिणामात्मक प्रत्ययों का वर्णन करने का प्रयास किया गया है। यह ध्यान रखना चाहिए कि किसी व्यक्ति एवं वस्तु का मापन नहीं किया जा सकता है। अपितु उसकी विशेषताओं या चरों का मापन किया जाता है। मापन के प्रत्येक क्षेत्र में तीन सोपानों का अनुसरण किया जाता है। यह सोपान इस प्रकार है–

1. जिस गुण या चर का मापन करना है उसको पहचानना तथा उसकी व्यावहारिक परिभाषा (Operational Definition) करना।
2. उन व्यवहारों के समूह को निर्धारित करना जिससे मापन किये जाने वाले चर की अभिव्यक्ति होती है।
3. उस प्रक्रिया को परिभाषित करना अथवा स्थापित करना जिससे व्यवहारों को परिमाण में बदलना या अंक प्रदान करना या अनुस्थिति लगाना।

इन सोपानों को समझने के लिए मापन प्रक्रिया का समुचित ज्ञान करने होती है उनके लिए मापन सैद्धान्तिक पक्ष जाना आवश्यक है। इसके साथ मापन की समस्याओं का बोध भी होना चाहिए। इन सोपानों का विवरण निम्नांकित पंक्तियों में दिया गया है।

(1) चर को पहचानना और उसी परिभाषा करना (Identifying and defining a Variable): मापन प्रक्रिया में व्यक्ति का मापन नहीं होता है अपितु सदैव उसके गुणों अथवा चरों का मापन किया जाता है। अधिकांश

नोट

चरों का मापन व्यवहारों से होती है। क्योंकि यह चर अमूर्त होते, हैं। चर की संरचना का बोध व्यवहारों के विशिष्ट समूह से किया जाता है। इसलिए प्रथम क्रिया चर की पहचान करना। चर की परिभाषा सैद्धान्तिक न होकर व्यवहारिक होनी चाहिए। विशिष्ट व्यवहारों की अभिव्यक्ति के लिए समुचित उद्दीपन या परिस्थितियाँ दी जा सकती है। यह मापन की प्रक्रिया अप्रत्यक्ष होती है।

व्यावहारिक विज्ञानों के मापन की गम्भीर समस्या यह है कि अमूर्त चर की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं दी जा सकती है। जैसे बुद्धि की परिभाषाएँ मापन की दृष्टि से अहम् होती है क्योंकि परिभाषा चर का व्यावहारिक स्वरूप निर्धारित करती है।

यदि बुद्धि मापन हेतु परीक्षण की रचना करना है तब कुछ प्रश्नों का समुचित ज्ञात करना होगा। बुद्धि का क्या अर्थ है? किस प्रकार के व्यवहारों से बुद्धि का बोध होता है? बौद्धिक व्यवहारों का स्वरूप कैसा है? बुद्धि के अमूर्त प्रत्यय की कैसी संरचना है। बुद्धि की परिभाषा इस प्रकार की जाय जिसे सामान्य रूप से अधिकांश व्यक्ति स्वीकार कर सके। वस्तु स्थिति यह है कि बुद्धि को अनेक प्रकार से परिभाषित किया गया है जैसे-

1. अमूर्त चिन्तन की योग्यता को बुद्धि कहते है।
2. नवीन परिस्थितियों में समायोजन की क्षमता को बुद्धि कहते हैं।
3. सह-सम्बन्ध देखने की अन्तर्दृष्टि को बुद्धि कहते हैं।
4. किसी कार्य को कुशलता से सम्पादन करने की क्षमता को बुद्धि कहते हैं।

इस प्रकार बुद्धि प्रत्यय की अनेक परिभाषा दी गई है। प्रत्येक परिभाषा के अनुसार बुद्धि की संरचना भिन्न-भिन्न प्रकार की है तथा व्यवहारों का स्वरूप भी भिन्न-भिन्न प्रकार का है। इसलिए कोई भी एक परीक्षण का निर्माण नहीं किया जा सकता जो सभी को सम्मिलित कर सके। बुद्धि मापन के लिए- शाब्दिक बुद्धि परीक्षण, अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण तथा सम्पादन बुद्धि परीक्षण का निर्माण किया गया है। गुण अथवा चर को पहचानने और परिभाषित करने के बाद उसकी संरचना का विवरण तैयार करना होता है और सम्बन्धित व्यवहारों का स्वरूप भी निर्धारित किया जाता है जो उपयोगी प्रतीत होते हैं।

किसी एक व्यक्ति के व्यवहारों के आधार पर विवरण तैयार करना उपयोगी नहीं होता है। जिस समूह या जनसंख्या के परीक्षण का निर्माण करना है। उस समूह के व्यवहारों के आधार पर विवरण तैयार किया जाता है।

इसी प्रकार निष्पति परीक्षण के लिए विषय की पाठ्यवस्तु के सभी तत्वों पर प्रश्नों की रचना की जाती है और मानदण्ड सन्दर्भित परीक्षण के अन्तर्गत शिक्षण के उद्देश्यों मापन के लिए प्रश्नों का निर्माण किया जाता है। निष्पत्ति की पहचान एवं परिभाषा सन्दर्भ के आधार पर की जाती है। मनुष्य के गुणों के मापन में मानवीय व्यवहारों को महत्व दिया जाता है। यह व्यवहार गुणों के मापन में सम्मिलित रहते हैं। एक व्यवहार एक से अधिक गुणों या चरों का मापन करता है। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में कोई भी परीक्षण पूर्ण रूप से वैध तथा विश्वसनीय नहीं होता है। उसकी रचना में व्यक्तिगत त्रुटि का प्रभाव रहता है। मापन का अर्थापन भी शुद्ध नहीं होता है। परीक्षण पदों को सम्मिलित करने का ठोस आधार नहीं होता है।

(2) चर या गुण की अभिव्यक्ति हेतु व्यवहारों अथवा क्रियाओं का स्वरूप को निर्धारित करना- मापन का दूसरा पक्ष है चर से सम्बन्धित व्यवहारों तथा क्रियाओं की खोज करना या ज्ञात करना जिनसे अपेक्षित गुण अन्य गुणों से पृथक किया जा सके। इस व्यवहारों तथा क्रियाओं को ज्ञात करने के लिए चर की परिभाषा एवं संरचना को ध्यान में रखना होता है। परिभाषा के आधार पर व्यवहारों और क्रियाओं के निर्धारण में सहायता मिलती है। इसके लिए आवश्यक होता है कि परिभाषा का स्वरूप व्यावहारिक अथवा क्रियात्मक (Operational) होना आवश्यक होता है। परिभाषा और व्यवहारों में अन्त: क्रिया होना आवश्यक होता है। परिभाषा के आधार पर संगत व्यवहारों का निर्धारण किया जाता है। यह क्रिया तार्किक ढंग से की जाती है। इसमें अन्तर्दृष्टि का

नोट

उपयोग अधिक किया जाता है। व्यावहारिक परिभाषा प्रक्रिया का स्वरूप सुनिश्चित करती है। इसलिए गुण तथा चर की व्यावहारिक परिभाषा प्रभावशाली ढंग से की जानी चाहिए। व्यवहारों का स्वरूप ऐसा होना चाहिए, जिससे अपेक्षित व्यवहारों को कराया जा सके और उससे चर या गुण का मापन किया जा सके।

बिने ने बुद्धि परीक्षण के निर्माण में इसी प्रकार की अनेक क्रियाओं का सम्पादन किया तब वह बुद्धि परीक्षण के निर्माण करने में सफल हो सके। सर्वप्रथम उन्होंने बुद्धि प्रत्यय को एकल सिद्धान्त के रूप में और उसी के अनुसार उसकी परिभाषा की। परिभाषा को व्यावहारिक रूप देने का प्रयास किया जिससे उन्होंने बौद्धिक व्यवहारों को पहचानने और उनके स्वरूप को निर्धारित किया। इन व्यवहारों को कराने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रश्नों की रचना की, जिससे बुद्धि से सम्बन्धित व्यवहारों को करा सके और उन्हें अंक प्रदान कर सके। इस प्रकार मापन के अन्तर्गत परीक्षणों के निर्माण में व्यावहारिक संरचनाओं की विशेष भूमिका होती है। क्योंकि इनकी प्रकृति अप्रत्यक्ष होती है और सापेक्ष रूप में उनका मापन किया जाता है। समूह के सन्दर्भ में अर्थापन किया जाता है।

(3) चरों को परिमाण में बदलने के लिए इकाई का निर्धारण करना (Quantifying the Variable in Unit of Degree or Amount): इस तृतीय सोपान के अन्तर्गत जिन व्यवहारों को स्वीकार किया गया है, उन्हें कराने के लिए परिस्थिति के रूप में प्रश्न किये जाते हैं। इन प्रश्नों से जो उत्तर प्राप्त होते हैं। उनके अंकन के लिए इकाइयों का आवंटन किया जाता है। जिससे गुण या चर को परिमाण में बदल देते हैं। मापन की प्रक्रिया में साधारणत: तीन प्रकार की मापनियों का प्रयोग किया जाता है। जिनमें अंकन की प्रक्रिया पृथक्-पृथक् होती है- (अ) परीक्षण (ब) रेटिंग स्केल तथा (स) अनुसूची-(Inventory)। इनके अंकन की प्रक्रिया निम्नलिखित होती है-

(अ) परीक्षण (Testing)-इनके अन्तर्गत प्रश्नों में इस तरह के व्यवहारों को सम्मिलित किया जाता है कि उनके उत्तर सही व गलत होते हैं। सही व्यवहार के लिए एक अंक और गलत के लिए शून्य दिया जाता है। और सभी प्रश्नों के अंकों का योग कर लिया जाता है। जिन्हें प्राप्तांक कहते हैं। परीक्षणों का उपयोग बुद्धि निष्पति तथा प्रवणता के मापन में किया जाता है।

(ब) रेटिंग स्केल (Rating Scale)-इसके अन्तर्गत व्यवहारों को कथन के रूप में दिया जाता है। इन कथनों का रेटिंग कराया जाता है। जैसे- सहमत, असहमत तथा तठस्त। या पाँच बिन्दुओं में जैसे- उत्तम, अच्छा, सामान्य, हीन तथा अतिहीन। इनमें किसी एक बिन्दु पर चिन्ह लगाया जाता है। इसमें सही और गलत नहीं होता, अपितु जो उत्तर प्राप्त होता है उसके महत्व देकर अंक दिये जाते हैं। जैसे- अतिहीन को शून्य (0) और हीन को एक (1) सामान्य को दो (2) अच्छा को तीन (3) उत्तम को चार (4) अंक दिये जाते हैं। किन्हीं परिस्थितियों में ऋण में अंक दिये जाते हैं। अभिवृत्ति के मापन में अंक ऋण में दिये जाते हैं। इन अंकों का योग कर लिया जाता है। इस प्रकार की मापनियों का उपयोग अभिवृत्ति, अभिरूचि आदि का मापन किया जाता है।

(स) अनुसूची (Inventory)-इस प्रकार की मापनियों का उपयोग व्यक्तित्व, अभिरूचियों तथा मूल्यों के मापन में किया जाता है। इसमें जो व्यवहार कराये जाते हैं। वह सही एवं गलत नहीं होते बल्कि उनके व्यवहारों से उस चर के सम्बन्ध में बोध होता है। प्रश्नों को एक कथन के रूप में दिया जाता है और उन कथनों के उत्तर हाँ, ना तथा अज्ञात में दिये जाते हैं। जिनके आधार पर व्यक्तित्व और अभिरूचियों का मापन होता है।

इस सोपान की सबसे बड़ी समस्या उस समय होती है। जब किसी चर के मापन के लिए अनुमापनी की रचना की जाती है कि प्रश्नों का स्वरूप किस प्रकार का रखा गया है और किस रूप में उत्तर कराये गये हैं और उनके आकलन के लिए किस प्रकार अंक प्रदान किये जाएं। क्यांकि प्रमाणिक परिस्थितियों में अंकन की प्रक्रिया भी प्रमाणिक होनी चाहिए। इसमें चर की प्रकृति किस प्रकार की है इसका निर्धारण करना आवश्यक होता है। जैसे-अभिवृत्ति की प्रकृति द्विव-धुर्वी (Bi-polar) होती है, इसमें अभिवृत्ति धनात्मक तथा ऋणात्मक दोनो ही प्रकार की होती है। इस अभिवृत्ति में अंक ऋणात्मक भी प्राप्त हो सकते हैं। अंकन की प्रक्रिया का बोध चर की परिभाषा से होना चाहिए।

नोट

स्व–मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति करो–
   1. किसी वस्तु या व्यक्ति की विशेषता को .... कहते हैं।
   2. असतत् चर के मापन को .... भी कहते हैं।
   3. .... स्तर के मापन में निरीक्षण के आधार पर तर्कपूर्ण ढ़ंग से एक क्रम में अनुपस्थिति रैंक प्रदान किया जाता है।
   4. अनुपात मापनी में .... का अस्तित्व होता है।

3.6 सारांश (Summary)

- शिक्षा तथा मनोविज्ञान में मापन की प्रक्रिया निरपेक्ष तथा अप्रत्यक्ष होती है। निरपेक्ष का अर्थ होता है कि भौतिक मापन की भाँति शून्य का मान निरपेक्ष नहीं होता है अपितु शून्य का मान सापेक्ष होता है। जैसे किसी विषय के परीक्षण में एक छात्र के अंक शून्य प्राप्त हुए इसका अर्थ यह नहीं है कि उस विषय में उसे कुछ भी ज्ञान नहीं है अपितु परीक्षण में सम्मिलित प्रश्नों का ज्ञान नहीं है। व्यावहारिक विज्ञानों में शून्य सन्दर्भ बिन्दु नहीं होता है अपितु समूह का निष्पादन सन्दर्भ बिन्दु माना जाता है। क्योंकि मापन की प्रक्रिया सापेक्ष होती है।
- भौतिक विज्ञान में मापन प्रत्यक्ष होता है और शिक्षा तथा मनोविज्ञान में सामान्यत: अप्रत्यक्ष होता है। भौतिक विज्ञान में जिस पक्ष का मापन करना होता है उस पर मापनी रख कर माप लेते हैं। किसी की लम्बाई, ऊँचाई ज्ञात करने के लिये पैमाना रखकर माप लेते हैं जबकि शिक्षा तथा मनोविज्ञान में जिस गुण। चर का मापन करना हो उस पर प्रत्यक्ष मापनी नहीं रख सकते क्योंकि वह चर अमूर्त होता है।
- सामान्यत: प्रत्यय एवं संरचना का एक ही अर्थ होता है। किसी अमूर्त के सामान्यीकरण की अभिव्यक्ति को प्रत्यय कहते हैं। जैसे बुद्धि, निष्पत्ति, व्यक्तित्व ऊर्जा, अभिप्रेरण, आवश्यकता आदि। विशिष्ट व्यावहारों के अवलोकन से अमूर्त का स्वरूप भी निर्धारित करते हैं। उसे संरचना कहते हैं।
- किसी वस्तु या व्यक्ति की विशेषता को चर की संज्ञा दी जाती है। विशेषताओं के आधार पर भिन्नता का निर्धारण होता है। चर एक संकेत मात्र होता है जिसे अंकों अथवा मूल्यों आवंटन होता है। चर कोई भी न्याय संगत मूल्य ले सकता है।
- चर की प्रकार (Types of Variable)–किसी व्यक्ति या वस्तु का मापन नहीं किया जा सकता है। अपितु उसके गुणों अथवा विशेषताओं (चरों) का मापन किया जाता है। उसके आधार पर व्यक्तिगत भिन्नता ज्ञात की जाती है। चरों का विभाजन कई प्रकार से किया जाता है।
- सम्पादन के आधार पर (Operational Variable)–इस प्रकार के चरों का उपयोग प्रयोगात्मक कार्यो में किया जाता है।
- प्रदत्तों की प्रकृति के आधार पर (Based on Nature of Data) चरों की प्रकृति में भिन्नता अधिक होती है इसलिए उनके मापन हेतु विविध प्रकार के परीक्षण प्रविधियों का उपयोग किया जाता है।
- सतत् चरों में सांख्यिकी का उपयोग–इस प्रकार के चरों के मापन से जो प्रदत्त प्राप्त होते हैं उनमें सभी प्रकार की सांख्यिकी प्रविधियों का उपयोग किया जाता है। साधारणत: मध्यमान तथा प्रामाणिक विचलन का उपयोग किया जाता है।
- चरों की भूमिका के आधार पर (Roles of Variable)–शिक्षा तथा मनोविज्ञान के अध्ययनों में चरों की भूमिकाओं का विशेष महत्व होता है।
- स्वतन्त्र चर (Independent Variable)–प्रयोगात्मक अध्ययनों में तथा सह-सम्बन्ध ज्ञात करते समय स्वतन्त्र चर की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। प्रयोगात्मक कार्य में जिस चर का प्रभाव देखने के लिए सम्पादन किया जाता है।

नोट

- मापन का नियमों तथा धारणाओं के आधार पर वर्गीकरण किया जा सकता है। यही नियम तथा धारणायें मापन-प्रक्रिया को आधार प्रदान करती हैं।
- नाम-सम्बन्धी मापनी (Nominal Scale)
- क्रम-सूचक मापनी (Ordinal Scale)
- समान आवान्तर मापनी (Equal Interval Scale), तथा
- अनुपात मापनी (Ratio Scale)
- नाम-सम्बन्धी मापनी (Nominal Scale)-मापन के चारों स्तरों में यह सबसे कम शुद्ध स्तर माना जाता है इसमें केवल दो या दो से अधिक वर्गो में किसी तथ्य का विभाजन किया जाता है। उसके परिणाम का बोध नहीं होता है।
- क्रम-सूचक मापनी (Ordinal Scale)-यह मापन का स्तर पहले की अपेक्षा शुद्ध होता है। प्रत्येक वर्ग के छात्रों को एक क्रम (Rank) में व्यवस्थित किया जाता है। इसमें छात्रों को अनुपस्थिति (Rank) दिया जाता है। इस स्तर के मापन में निरीक्षण के आधार पर तर्कपूर्ण ढंग से एक क्रम में अनुपस्थिति (Rank) प्रदान किया जाता है।
- समान आवान्तर मापनी (Equal Interval Scale)-इस मापन स्तर की वही सब विशेषतायें होती हैं जो प्रथम दो स्तरों की होती हैं परन्तु इसकी विशेषता यह भी है कि यह दो व्यक्तियों के मध्य की दूरी प्रकट करता है। इस स्तर में शून्य माना हुआ होता है क्योंकि शैक्षिक मापन अपेक्षाकृत होता है। चर (Variable) के मापन के लिये अंक प्रदान किये जाते हैं।
- अनुपात मापनी (Ratio Scale)-यह सबसे शुद्ध मापन का स्तर माना जाता है। इसमें इकाइयाँ समान होती है। शून्य का अस्तित्व होता है। भौतिक विज्ञान के चरों, जैसे तापक्रम, भार, आयतन आदि के मापन में इसी स्तर का प्रयोग होता है।
- मापन का अर्थ होता है चरों (गणों) को संख्या/मात्रा में बदलना। संख्या में बदलने के लिए नियमों का उपयोग किया जाता है और अवधारणाओं की सहायता ली जाती है।
- मापन से जो प्राप्तांक आते हैं वे अर्थहीन होते हैं उनका कोई अर्थ नहीं होता है। उनका अर्थापन करने के लिए गणित एवं सांख्यिकी की प्रविधियों का उपयोग किया जाता है, तब उन्हें सार्थक बनाया जाता है।
- व्यक्ति के सभी गुणों का मापन तथा वर्णन करना सम्भव नहीं है इसलिए सम्बन्धित तथा सार्थक चरों का विवरण देना अधिक उपर्युक्त है। उनमें गुणात्मक पक्षो का वर्णन करना अधिक उपयोगी है। यहाँ अधिक शुद्ध रूप में परिणामात्मक प्रत्ययों का वर्णन करने का प्रयास किया गया है।
- जिस गुण या चर का मापन करना है, उसको पहचानना तथा उसकी व्यावहारिक परिभाषा (Operational Definition) करना।
- उन व्यवहारों के समूह को निर्धारित करना जिससे मापन किये जाने वाले चर की अभिव्यक्ति होती है।
- उस प्रक्रिया को परिभाषित करना अथवा स्थापित करना जिससे व्यवहारों को परिमाण में बदलना या अंक प्रदान करना या अनुस्थिति लगाना।
- चर को पहचानना और उसकी परिभाषा करना।
- मापन प्रक्रिया में व्यक्ति का मापन नहीं होता है अपितु सदैव उसके गुणों अथवा चरों का मापन किया जाता है। अधिकांश चरों का मापन व्यवहारों से होती है। क्योंकि यह चर अमूर्त होते हैं। चर की संरचना का बोध व्यवहारों के विशिष्ट समूह से किया जाता है।
- चर या गुण की अभिव्यक्ति हेतु व्यवहारों अथवा क्रियाओं का स्वरूप को निर्धारित करना

नोट

- मापन का दूसरा पक्ष है चर से सम्बन्धित व्यवहारों तथा क्रियाओं की खोज करना या ज्ञात करना जिनसे अपेक्षित गुण अन्य गुणों से पृथक किया जा सके। इन व्यवहारों तथा क्रियाओं को ज्ञात करने के लिए चर की परिभाषा एवं संरचना को ध्यान में रखना होता है। परिभाषा के आधार पर व्यवहारों और क्रियाओं के निर्धारण में सहायता मिलती है।
- इस तृतीय सोपान के अन्तर्गत जिन व्यवहारों को स्वीकार किया गया है, उन्हें कराने के लिए परिस्थिति के रूप में प्रश्न किये जाते हैं।
- परीक्षण (Testing)–इनके अन्तर्गत प्रश्नों मे इस तरह के व्यवहारों को सम्मिलित किया जाता है कि उनके उत्तर सही व गलत होते हैं। सही व्यवहार के लिए एक अंक और गलत के लिए शून्य दिया जाता है।
- रेटिंग स्केल (Rating Scale)–इसके अन्तर्गत व्यवहारों को कथन के रूप में दिया जाता है। इन कथनों का रेटिंग कराया जाता है। जैसे- सहमत, असहमत तथा तटस्थ।
- **अनुसूची (Inventory)**–इस प्रकार की मापनियों का उपयोग व्यक्तित्व, अभिरूचियों तथा मूल्यों के मापन में किया जाता है। इसमें जो व्यवहार कराये जाते हैं। वह सही एवं गलत नहीं होते बल्कि उनके व्यवहारों से उस चर के सम्बन्ध में बोध होता है।

3.7 शब्दकोश (Keywords)

- **चर**–जिसका मान बदलता है।
- **बहुलांक**–अंक जिनकी संख्या अधिक हो।

3.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

(*i*) प्रत्यय, संरचना तथा चर का अर्थ बताइए तथा इनमें अन्तर भी स्पष्ट कीजिए। चरों के प्रकार बताइए।

(*ii*) असतत् चर तथा सतत् चर में अन्तर बताइए और मापन में इनके महत्त्व का वर्णन कीजिए।

(*iii*) मापन के स्तर, अनुमापनी तथा चर में सम्बन्ध स्पष्ट कीजिए। अनुमापनियों का अर्थ बताइए और तुलना कीजिए।

(*iv*) मापन की क्रियाओं के सोपान बताइए। इन सोपानों की क्रियाओं तथा समस्याओं का वर्णन कीजिए।

उत्तर– स्व–मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. 1. चर 2. नामित मापन 3. क्रम सूचक मापनी 4. शून्य

3.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–4: अच्छे परीक्षण के गुण (Characteristics of a Good Test)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

4.1 परीक्षण की अवधारणा (Concept of Test)

4.2 परीक्षण के कार्य (Functions of Test)

4.3 अच्छे परीक्षण की विशेषताऐं (Characteristics of Hood Test)

4.4 मापन की विधियाँ (Methods of Measurement)

4.5 अच्छी मापन प्रविधि की विशेषताएँ (Characteristics of Good Measuring Techniques)

4.6 सारांश (Summary)

4.7 शब्दकोश (Keywords)

4.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

4.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- परीक्षण की अवधारणा, कार्य और विशेषताओं की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

वह परीक्षण जो निर्माण करने, छात्रों द्वारा उसको हल करने तथा उसका अंकन करने, तीन पक्षों की दृष्टि सरल हो, एक अच्छा परीक्षण कहलाता है। मूल्यांकन में सुविधा की दृष्टि से निर्माता को ऐसे परीक्षण की रचना करनी चाहए, जिसे विद्यार्थी अपनी सामयिक परिस्थितियों के अनुकूल प्रभावी ढंग से प्रभावित कर सकें। इस इकाई में हम अच्छे परीक्षण के गुणों की विवेचना करेंगे।

4.1 परीक्षण की अवधारणा (Concept of Testing)

मापन एक प्रक्रिया है जिससे विशेषताओं तथा गुणों को परिमाण में बदला जाता है। मापन में अनेक विधियों को प्रयुक्त किया जाता है जिसमें परीक्षण एक विधि है। इसके अन्तर्गत कार्य की तथा परीक्षण अवधि की परिभाषा की जाती है। परीक्षण की परिस्थितियाँ इस प्रकार की होती हैं जो सही तथा गलत होती हैं। सही को एक अंक दिया जाता है और गलत के लिए शून्य दिया जाता है। इस परीक्षण का आधार आन्तरिक व्यवहार होता है। एक परीक्षण में कई विशेषताएँ होती हैं इसका अध्ययन हम इस इकाई में करेंगे।

नोट

4.2 परीक्षण के कार्य (Functions of Test)

मनोविज्ञान तथा शिक्षा के परीक्षणों के मुख्य तीन कार्य होते हैं-

1. एक व्यक्ति क्या कर सकता है? योग्यता ज्ञात करना।
2. एक व्यक्ति क्यों नहीं कर सकता है? निदान करना।
3. एक व्यक्ति का व्यावसायिक भविष्य क्या होगा, भविष्यवाणी करना।

प्रथम कार्य में व्यक्ति की योग्यता स्तर का बोध होता है जिससे उसका वर्गीकरण कर सकते हैं, प्रोन्नति कर सकते हैं, चयन कर सकते हैं, आदि।

द्वितीय कार्य से छात्र की कमजोरियों का निदान कर लेते हैं उनके उपचार हेतु प्रयुक्त करते हैं और उसका विकास तथा सुधार करते हैं।

तृतीय कार्य में व्यक्ति के भावी जीवन की सफलता हेतु पूर्वकथन करते हैं। शैक्षिक तथा व्यवसायिक निर्देशन में प्रयुक्त किया जाता है।

इन तीनों कार्यों के अतिरिक्त चौथा महत्वपूर्ण कार्य परीक्षण शोध अध्ययनों में प्रमाणिक प्रदत्तों को संकलन करना होता है। शोध निष्कर्षों की वैधता प्रदत्तों की प्रमाणिकता पर निर्भर होती है। परीक्षण से प्रमाणिक प्रदत्तों को प्राप्त किया जाता है।

4.3 अच्छे परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Good Test)

परीक्षण की महत्वपूर्ण विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. परीक्षण में ऐसे प्रश्नों को सम्मलित किया जाता है जिन्हें सही तथा गलत में अंकन करते हैं। सही को एक अंक तथा गलत को शून्य अंक देते हैं।
2. परीक्षण के प्रश्नों को दो प्रकार से व्यवस्थित किया जाता है-

   (अ) योग्यता मापन हेतु परीक्षण में प्रश्नों को कठिनाई स्तर के क्रम में रखते हैं। सबसे सरल आरम्भ में और सबसे कठिन अन्त में रखा जाता है।

   (ब) निदान हेतु परीक्षण में प्रश्नों को सीखने के क्रम में रखा जाता है। जिससे धनात्मक स्थानान्तरण को अवसर मिल सके।
3. परीक्षण के दो रूप होते हैं-

   (अ) शक्ति परीक्षण (Power Test)- इसमें प्रश्नों के कठिनाई स्तरों में अधिक अन्तर होता है और परीक्षण की अवधि छात्राओं के प्रश्नों के हल करने पर निर्भर होती है कि उतनी अवधि में अधिकांश छात्र अन्तिम प्रश्न को सरल कर सके।

   (ब) गति परीक्षण (Speed Test)- इस प्रकार के परीक्षण में सभी प्रश्न समान कठिनाई स्तर के होते हैं। सरल करने के लिए समय अवधि इतनी कम होती है कि कोई छात्र अन्तिम प्रश्न तक न पहुँच सके क्योंकि इस प्रकार के परीक्षण से छात्रों की गति का मान किया जाता है।
4. परीक्षण के प्रश्नों का चयन पद विश्लेषण के आधार पर किया जाता है। प्रत्येक पद के चयन में उसके कठिनाई स्तर तथा विभेदीकरण की शक्ति पर ध्यान दिया जाता है। परीक्षण के उद्देश्य की दृष्टि से इन विशेषताओं का स्तर निर्धारित किया जाता है।
5. परीक्षण का **चर त्रुटि** (variable error) की भी गणना की जाती है। इसके लिए विश्वसनीयता गुणक ज्ञात करते हैं जिससे चर त्रुटि का बोध होता है।

6. **अचल त्रुटि** (Constant error) के लिए वैधता गुणक की गणना करते हैं। इससे बोध होता है कि परीक्षण जिस गुण के मापन हेतु बनाया गया है। उसे कहां तक मापन करना है।
7. **परीक्षण का प्रमापीकरण** (Standardization of Test)– परीक्षण द्वारा जो अंक प्राप्त होते हैं वह अर्थहीन होते हैं। उनके अर्थापन के लिए मानकों को विकसित किया जाता है जिससे अर्थापन की त्रुटि कम होती है। परीक्षण के प्राप्तांकों का अर्थापन समूह के सन्दर्भ में किया जाता है। परीक्षण के मानकों से प्रमापीकरण होता है।
8. परीक्षण को देते समय निर्देशनों का स्वरूप भी निश्चित होता है। परीक्षण के निर्देशों का प्रमापीकरण किया जाता है। निर्देशन का सही अनुसरण न करने पर शुद्ध अंक प्राप्त नहीं होते हैं।
9. **परीक्षण निर्देशिका** (Manual of Test) परीक्षण की निर्देशका के बिना, इसका उपयोग करना सम्भव नहीं होता है। इसके अन्तर्गत परीक्षण सम्बन्धी सभी आवश्यक सूचनायें निर्देशिका में दी जाती है। जैसे परीक्षण अवधि, निर्देशन, अंकन प्रक्रिया, कुन्जी, तथा मानक आदि दिये जाते हैं।

नोट्स परीक्षण की प्रक्रिया मापन की प्रमुख विधि है। मापन में परीक्षण के उपयोग से गुणों तथा चरों का मापन शुद्ध रूप में किया जाता है। इसके द्वारा अर्थापन तथा निष्कर्ष वैध तथा विश्वसनीय होते हैं।

4.4 मापन विधियाँ (Methods of Measurement)

एक व्यक्ति के गुणों या चरों में अधिक विषमता होती है क्योंकि चरों का क्षेत्र एवं प्रकृति भिन्न होती है। इसलिए मापन की विधियाँ भी कई प्रकार की होती हैं। इन मापन विधियाँ को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है–

1. परीक्षण विधि (Test Method),
2. निरीक्षण विधि (Observation Method), तथा
7. मिश्रित विधि (Mixed Method)।

1. परीक्षण विधि (Test Method)– इस विधि में कार्य एवं समय की परिभाषा की जाती है तथा ऐसी परिस्थिति उत्पन्न की जाती है जो सही या गलत होती है। सभी अनुक्रियाओं के लिये एक प्राप्तांक तथा गलत के लिए शून्य दिया जाता है। इन विधियों को बुद्धि, प्रवणता तथा निष्पत्तियों के मापन के लिए किया जाता है। इस विधि का स्थायी आलेख होता है जिसे मूल्यांकन या जांच के आधार पर तैयार किया जाता है।

2. निरीक्षण विधि (Observation Method)– इस विधि से व्यवहारों का निरीक्षण स्वाभाविक जीवन परिस्थितियों में किया जाता है। निरीक्षण की अनेक विधियाँ हैं–

(क) **स्वतः निरीक्षण** (Self Observation) में व्यक्ति स्वयं अपने व्यवहारों के सम्बन्ध में बतलाता है। यह दो प्रकार का होता है–

1. **नियोजित निरीक्षण** (Planned Observation)– में निरीक्षण की पूर्वव्यवस्था की जाती है। विशिष्ट समय में विशिष्ट व्यवहारों का निरीक्षण किया जाता है।
2. **अतीत का निरीक्षण** (Retrospective Observation)– में अतीत के स्मरण के आधार पर मूल्यांकन किया जाता है।

(ख) **अन्य व्यक्तियों द्वारा निरीक्षण** (Observation by others) में इसमें अन्य व्यक्ति किसी व्यक्ति के व्यवहारों का निरीक्षण करके उसके सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रिया करते हैं। यह दो प्रकार का होता है

नोट

1. नियोजित निरीक्षण (Planned Observation)
2. अतीत के आधार पर निरीक्षण (Retrospective Observation)।

3. मिश्रित विधि (Mixed Method)- इस विधि में परीक्षण दोनों को एक किया जाता है। इस प्रकार की विधि में अनुसूचियों (Inventories) परिस्थिति परीक्षण, अनुस्थितियाँ सूची (Rating), आयोजन सूची, अभिवृत्ति सूची (Attitude Scale) तथा व्यक्तित्व अनुसूचियों का प्रयोग किया जाता है।

क्या आप जानते हैं परीक्षण की उपयोगिता के लिए योग्यता अंक (Qualifying score) भी निधारित किया जाता है। योग्यता अंक के बिना परीक्षण का उपयोग साथर्क नहीं होता है।

4.5 अच्छी मापन प्रविधि की विशेषताएँ (Characteristics of Good Measuring Techniques)

मापन के प्रमुख चार स्तरों के लिये विभिन्न प्रकार की परीक्षायें जैसे- निरीक्षण प्रविधि प्रश्नावली, रेटिंग स्केल, निष्पत्ति परीक्षा आदि का प्रयोग किया जाता है। एक अच्छे परीक्षण की निम्नलिखित विशेषतायें होनी चाहिये-

1. वस्तुनिष्ठता (Objectivity)- एक उत्तम प्रकार की परीक्षा वस्तुनिष्ठ होनी चाहिये। अंकन (Scoring) में व्यक्तिगत पक्षों का प्रभाव नहीं होना चाहिये। निबन्धात्मक परीक्षा का यह दोष है कि वे वस्तुनिष्ठ नहीं होती हैं। एक उत्तर-पुस्तक को जितने अधिक परीक्षक देखते हैं, उनके अंकों में उतना ही अधिक अन्तर होता है। नवीन प्रकार की परीक्षायें वस्तुनिष्ठ होती हैं।

2. विश्वसनीयता (Reliability)- अच्छी परीक्षा विश्वसनीय होनी चाहिए। यदि किसी परीक्षा को एक ही समूह को दुबारा दें तब उनके अंकों में अन्तर नहीं होना चाहिये। निबन्धात्मक परीक्षाओं की अपेक्षा वस्तुनिष्ठ परीक्षायें अधिक विश्वसनीय होती हैं। मानदण्ड-परीक्षा में वस्तुनिष्ठ परीक्षा के प्रश्नों को सम्मिलित करना चाहिये। जब एक ही परीक्षा को एक ही समूह को विभिन्न अवसरों पर देने पर उनके अंक समान आते हैं तब उस परीक्षा को विश्वसनीय माना जाता है। मानदण्ड परीक्षा विश्वसनीय होनी चाहिये।

3. वैधता (Validity)- उत्तम परीक्षा वैध (Valid) होती है। वैधता से तात्पर्य परीक्षा की सार्थकता से है। परीक्षा जिस मापन के लिये बनाई गई है उसका उसे मापन करना चाहिये। शैक्षिक मापन में परीक्षाओं को वैध होना आवश्यक होता है क्योंकि अधिकांश मापन अप्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। मानदण्ड परीक्षा की वैधता, गुणक की (Validity Coefficient) गणना करनी चाहिये। परीक्षा के अंकों तथा मानदण्ड-परीक्षा के अंकों के सह-सम्बन्ध गुणक की गणना करने से वैधता के स्तर की जाँच की जाती है।

4. व्यावहारिकता (Usability)- एक अच्छी परीक्षा की प्रमुख विशेषता यह होती है कि उसका प्रयोग, अंकन एवं प्राप्ति प्रदत्तों की व्याख्या करना सरल होता है। किसी भी परीक्षा की रचना छात्रों की अधिगम उपलब्धियों (Learning-outcomes) के लिये की जाती है। अत: परीक्षा का व्यावहारिक होना नितान्त आवश्यक होता है। मापदण्ड परीक्षा के निर्माण के समय उसकी व्यावहारिकता को ध्यान में रखना चाहिये।

टास्क अचल त्रुटि क्या है?

नोट

स्व–मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में 'सत्य' तथा 'असत्य' पर लिखिए :-

1. मापन एक प्रक्रिया है, जिससे विशेषताओं तथा गुणों को परिमाण में बदला जाता है।
2. परीक्षण में ऐसे प्रश्नों को सम्मिलित नहीं किया जाता जिन्हें सही तथा गलत में अंकन करते हैं।
3. गति परीक्षण में सभी प्रश्न समान कठिनाई स्तर के होते हैं।
4. निबन्धात्मक परीक्षा वस्तुनिष्ठ होती है।

4.6 सारांश (Summary)

- मापन एक प्रक्रिया है जिससे विशेषताओं तथा गुणों को परिमाण में बदला जाता है। मापन में अनेक विधियों को प्रयुक्त किया जाता है जिसमें परीक्षण एक विधि है।
- मनोविज्ञान तथा शिक्षा की एक प्रमापीकृत प्रक्रिया है जिससे किसी गुण या पक्ष को परिमाण में माप लिया जाता है। इस परीक्षण की प्रक्रिया में शाब्दिक तथा अशाब्दिक व्यवहारों को जो उस गुण से सम्बन्धित होते हैं और उन्हें सही अथवा गलत में रखा जाता है। सही को एक अंक देकर उनका योग करके अंक प्राप्त कर लिये जाते हैं।
- परीक्षण के कार्य (Functions of Test)
- मनोविज्ञान तथा शिक्षा के परीक्षणों के मुख्य तीन कार्य होते हैं–
- प्रथम कार्य में व्यक्ति की योग्यता स्तर का बोध होता है जिससे उसका वर्गीकरण कर सकते हैं, प्रोन्नति कर सकते हैं, चयन कर सकते हैं।
- द्वितीय कार्य से छात्र की कमजोरियों का निदान कर लेते हैं उन्हें उपचार हेतु प्रयुक्त करते हैं और उसका विकास तथा सुधार करते हैं।
- तृतीय कार्य में व्यक्ति के भावी जीवन की सफलता हेतु पूर्वकथन करते हैं। शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन में प्रयुक्त किया जाता है।
- परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Test)

1. परीक्षण में ऐसे प्रश्नों को सम्मिलित किया जाता है, जिन्हें सही तथा गलत में अंकन करते हैं। सही को एक अंक तथा गलत को शून्य अंक देते हैं।
2. परीक्षण के प्रश्नों को दो प्रकार से व्यवस्थित किया जाता है–

(अ) योग्यता मापन हेतु परीक्षण में प्रश्नों को कठिनाई स्तर के क्रम में रखते हैं। सबसे सरल आरम्भ में और सबसे कठिन अन्त में रखा जाता है।

(ब) निदान हेतु परीक्षण में प्रश्नों को सीखने के क्रम में रखा जाता है। जिससे धनात्मक स्थानान्तरण को अवसर मिल सके।

3. परीक्षण के दो रूप होते हैं–

(अ) शक्ति परीक्षण (Power Test)– इसमें प्रश्नों के कठिनाई स्तरों में अधिक अन्तर होता है और परीक्षण की अवधि छात्रों के प्रश्नों के हल करने पर निर्भर होती है कि उतनी अवधि में अधिकांश छात्र अन्तिम प्रश्न को सरल कर सके।

(ब) गति परीक्षण (Speed Test)– इस प्रकार के परीक्षण में सभी प्रश्न समान कठिनाई स्तर के होते हैं। सरल करने के लिए समय अवधि इतनी कम होती है कि कोई छात्र अन्तिम प्रश्न तक न पहुँच सके क्योंकि इस प्रकार के परीक्षण से छात्रों की गति का मान किया जाता है।

नोट

4. परीक्षण के प्रश्नों का चयन पद विश्लेषण के आधार पर किया जाता है। प्रत्येक पद के चयन में उसके कठिनाई स्तर तथा विभेदीकरण की शक्ति पर ध्यान दिया जाता है।
5. परीक्षण का चर त्रुटि (variable error) की भी गणना की जाती है। इसके लिए विश्वसनीयता गुणक ज्ञात करते हैं जिससे चर त्रुटि का बोध होता है।
6. अचल त्रुटि (Constant error) के लिए वैधता गुणक की गणना करते हैं। इससे बोध होता है कि परीक्षण जिस गुण के मापन हेतु बनाया गया है। उसे कहां तक मापन करता है।
7. परीक्षण का प्रमापीकरण (Standardization of Test)- परीक्षण द्वारा जो अंक प्राप्त होते हैं वह अर्थहीन होते हैं। उनके अर्थापन के लिए मानकों को विकसित किया जाता है जिससे अर्थापन की त्रुटि कम होती है।

- एक व्यक्ति के गुणों या चरों में अधिक विषमता होती है क्योंकि चरों का क्षेत्र एवं प्रकृति भिन्न होती है। इसलिए मापन की विधियाँ भी कई प्रकार की होती हैं। इन मापन विधियाँ को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है-

1. परीक्षण विधि (Test Method),
2. निरीक्षण विधि (Observation Method), तथा
3. मिश्रित विधि (Mixed Method)।

1. परीक्षण विधि (Test Method)- इस विधि में कार्य एवं समय की परिभाषा की जाती है तथा ऐसी परिस्थिति उत्पन्न की जाती है जो सही या गलत होती है।
2. निरीक्षण विधि (Observation Method)- इस विधि से व्यवहारों का निरीक्षण स्वाभाविक जीवन परिस्थितियों में किया जाता है। निरीक्षण की अनेक विधियाँ हैं-

(क) स्वत: निरीक्षण (Self Observation) में व्यक्ति स्वयं अपने व्यवहारों के सम्बन्ध में बतलाता है। यह दो प्रकार का होता है-

1. नियोजित निरीक्षण (Planned Observation)- में निरीक्षण की पूर्वव्यवस्था की जाती है। विशिष्ट समय में विशिष्ट व्यवहारों का निरीक्षण किया जाता है।
2. अतीत का निरीक्षण (Retrospective Observation)- में अतीत के स्मरण के आधार पर मूल्यांकन किया जाता है।

(ख) अन्य व्यक्तियों द्वारा निरीक्षण (Observation by others) में इसमें अन्य व्यक्ति किसी व्यक्ति के व्यवहारों का निरीक्षण करके उसके सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रिया करते हैं। यह दो प्रकार का होता है

1. नियोजित निरीक्षण (Planned Observation)
2. अतीत के आधार पर निरीक्षण (Retrospective Observation)।

3. मिश्रित विधि (Mixed Method)- इस विधि में परीक्षण दोनों को एक साथ प्रयुक्त करते हैं। व्यवहारों के निरीक्षण के आधार पर कुछ गुणों का मूल्यांकन किया जाता है।

- मापन के प्रमुख चार स्तरों के लिये विभिन्न प्रकार की परीक्षायें जैसे- निरीक्षण प्रविधि प्रश्नावली, रेटिंग स्केल, निष्पत्ति परीक्षा आदि का प्रयोग किया जाता है। अच्छे परीक्षण की निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए-

1. वस्तुनिष्ठता (Objectivity)
2. विश्वसनीयता (Reliability)

नोट

3. वैधता (Validity)
4. व्यावहारिकता (Usability)

4.7 शब्दकोश (Keywords)

- **प्रदत्त**–दिया गया, देना।
- **संकलन**–एकत्रित करना।

4.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. परीक्षण का अर्थ तथा कार्य लिखिए।
2. अच्छे परीक्षण की विशेषताएँ बताइये।
3. परीक्षण के प्रमाणीकरण से क्या तात्पर्य है?
4. अच्छी मापन विधियों की विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर– स्व–मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1.. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. असत्य

4.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–5: विभिन्न प्रकार के परीक्षणों की योजना बनाना (Planning for Different Type of Test)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

5.1 परीक्षणों की योजना तैयार करना (Planning for Different Types of Test)

5.2 सारांश (Summary)

5.3 शब्दकोश (Keywords)

5.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

5.5 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- विभिन्न प्रकार के परीक्षणों की योजना बनाने में।

प्रस्तावना (Introduction)

परीक्षण मूल्यांकन के लिए प्रयुक्त विभिन्न तकनीकों एवं प्रविधियों के एक प्रमुख वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन्हें परिमाणात्मक एवं गुणात्मक दोनों प्रकार के व्यवहार परिवर्तनों की जाँच के लिए काम में लाया जा सकता है। परीक्षणों को तैयार करना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। परीक्षण को एक अच्छा तथा व्यवस्थित रूप देने के लिए पहले इसकी योजना बनाई जाती है। एक ब्लूप्रिंट तैयार किया जाता है, जिस पर पूरे परीक्षण का प्रारूप निर्भर करता है। इस इकाई में हम परीक्षण की योजना के विभिन्न चरणों का अध्ययन करेंगे।

5.1 परीक्षणों की योजना तैयार करना (Planning for Different Types of Test)

किसी भी परीक्षण को तैयार करने से पहले उसका प्रारूप तैयार किया जाता है। सभी प्रकार के परीक्षण की परियोजना के चरण लगभग एक ही प्रकार के हैं, चाहे वह कक्षा का इकाई परीक्षण (Unit test) हो या वार्षिक परीक्षा का प्रश्न पत्र। ये विभिन्न चरण निम्नलिखित हैं–

प्रारूप तैयार करना

किसी भी परीक्षण को तैयार करने का प्रथम चरण है, इसका प्रारूप बनाना। परीक्षण केवल प्रश्नों का एक साथ एकत्रित रूप नहीं है। इसे बनाते समय पाठ्यक्रम तथा विषयवस्तु का ध्यान रखना पड़ता है, यह देखा जाता है कि पूछे गये प्रश्नों द्वारा विषयवस्तु का सही मूल्यांकन हो रहा है या नहीं। इसके अनुसार ही प्रश्न-पत्र में वस्तुनिष्ठ प्रश्न, निबन्धात्मक प्रश्न तथा अन्य विविध प्रकार के प्रश्न परीक्षण में पूछे जाते हैं, जिससे विषयवस्तु तथा विद्यार्थी की उपलब्धियों का ठीक प्रकार से ज्ञान हो सके।

नोट

उद्देश्यों को सही अंकों से मूल्यांकित करना

इसके बाद विषयवस्तु के उद्देश्यों का विश्लेषण किया जाता है तथा निर्णय लिया जाता है किस उद्देश्य को कितने अंक देने हैं। विभिन्न उद्देश्यों के महत्व के अनुसार उन्हें प्रांकित किया जाता है।

उदाहरण के लिए अंग्रेजी भाषा में, तीन प्रमुख उद्देश्य क्षेत्र हैं—भाषा के तत्वों का ज्ञान, काम्प्रीहेन्शन और एक्सप्रेशन। इन तीनों क्षेत्रों को प्रतिशत के अनुसार अंकन किया जाता है। उदाहरणार्थ किसी 50 अंकों के परीक्षण के लिए निम्नलिखित भारांक देना निश्चित किया गया है—

क्षेत्र	अंकों का प्रतिशत	भारांक
ज्ञान	10%	5
काम्प्रीहेन्शन	40%	20
एक्सप्रेशन	50%	25
कुल	100%	50

विषयवस्तु के विभिन्न क्षेत्रों का भारांक

पाठ्यक्रम का विश्लेषण करना तथा इसके विभिन्न क्षेत्रों का भारांक निश्चित करना एक महत्वपूर्ण चरण है। इससे परीक्षण की वैधता को स्थापित करने में सहायता मिलती है। कक्षा XI की अंग्रेजी भाषा की एक काल्पनिक उदाहरण इसको समझने में सहयोगी होगा।

विषयवस्तु क्षेत्र	अंकों का प्रतिशत	भारांक
पक्षन क्षेत्र	30%	15
लेखन क्षेत्र	30%	15
पाठ्य विषयवस्तु	40%	20
कुल	100%	50

प्रश्नों के विभिन्न रूपों का मूल्यांकन

उद्देश्य तथा विषयवस्तु के मूल्यांकन के बाद यह देखा जाता है कि इनका परीक्षण किस प्रकार करना है। कौन सा विषय तथा उससे संबंधित जानकारी किस प्रकार के प्रश्न से अधिक और प्रभावी ढंग से मूल्यांकित हो सकती है, इसलिए एक विषयवस्तु में प्रश्न के विभिन्न रूपों द्वारा विषय की जानकारी का परीक्षण किया जाता है।

उदाहरण के लिए, निबन्धात्मक प्रश्न, लघु उत्तरीय प्रश्न तथा अति लघु उत्तरीय प्रश्न एक ही विषय की एक इकाई में पूछे जा सकते हैं।

प्रश्न का प्रकार	प्रश्नों की संख्या	अंक	अंकों का प्रतिशत
निबन्धात्मक प्रश्न	3	19	38%
लघुउत्तरीय प्रश्न	9	23	46%
अति लघुउत्तरीय प्रश्न	8	8	16%
कुल	20	50	100%

प्रभागों की योजना

प्रश्नपत्र का प्रारूप बनाते समय कागज पर प्रश्नों का वर्गीकरण भी होता है। उदाहरण के लिए किसी प्रश्नपत्र में

नोट

बहुविकल्पीय तथा अन्य प्रकार के प्रश्न (निबंधात्मक, लघु उत्तरीय, अति लघुउत्तरीय प्रश्न होते हैं। परीक्षण यह प्रश्न विभिन्न भागों में विभाजित हो जैसे एक सैक्शन, अध्ययन काम्प्रीहेन्शन, दूसरा लिखावट के लिए तथा तीसरा व्याकरण सम्बन्धी।

ऑप्शन की योजना

कक्षा में हर प्रकार की IQ के छात्र होते हैं, कुछ बच्चे कठिन प्रश्नों को बहुत जल्दी हल कर लेते हैं तो, कुछ बच्चे आसान प्रश्नों को हल करने में भी बहुत समय लगाते हैं, इस समस्या को ध्यान में रखते हुए भी प्रश्नपत्र में कठिन प्रश्नों तथा सरल प्रश्नों की प्रतिशतता का ध्यान रखा जाता है। कठिन तथा आसान प्रश्नों की प्रतिशतता 20 होती है जबकि औसत कठिनाई के प्रश्नों की प्रतिशतता 60 तक होती है। प्रश्नों की कठिनाई का स्तर, छात्रों के स्तर के अनुरूप होता है।

प्रश्नपत्र के प्रारूप का ब्लूप्रिंट

प्रश्नपत्र का प्रारूप तैयार होने के पश्चात् इसका ब्लू प्रिंट तैयार किया जाता है। ब्लूप्रिंट एक त्रिविमीय चार्ट होता है जो कि प्रत्येक प्रश्न की संख्या तथा उसका स्थान विषयवस्तु के अनुसार प्रदर्शित करता है। ब्लूप्रिंट इसलिए भी आवश्यक होता है; प्रश्नपत्र तैयार करने वाला यह जानता है कि किस यूनिट से कितने अंक या कौन-सा प्रश्न लेना है। एक अच्छे ब्लूप्रिंट को तैयार करने के लिए निम्न बातों का ध्यान रखना बहुत आवश्यक होता है।

- दिये हुए फार्मेट में, ज्ञान, काम्प्रीहेन्शन तथा एक्सप्रेशन को मूल्यांकित किया जाना चाहिए।
- फार्मेट के बायीं तरफ विषयवस्तु की यूनिट तथा दायीं तरफ उसका भारांक अथवा अंक प्रतिशत लिखना चाहिए।
- ब्लूप्रिंट में सबसे पहले निबन्धात्मक प्रश्नों को स्थान दिया जाता है। प्रश्नों के अंक उद्देश्य के अंतर्गत बने कॉलम में लिखा जाता है, तथा प्रश्नों के क्रम कोष्ठक में लिखे जाते हैं।
- इसके बाद अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों का क्रम आता है।
- इसी प्रकार वस्तुनिष्ठ या वैकल्पिक प्रश्नों को रखना चाहिए। अंक कोष्ठक के बाहर तथा प्रश्न क्रमांक कोष्ठक के अंदर रखना चाहिए।
- सभी ऑब्जेक्टिव्स के अन्तर्गत आने वाले प्रश्नों का कुल योग कर लेना चाहिए।
- कुल योग, ब्लूप्रिंट के उद्देश्य तथा विषयवस्तु के भारांक के बराबर होना चाहिए।

अंत में सारांश में प्रश्नों के प्रकार, प्रभावों की योजना तथा विकल्पों की योजना में भरा जाता है।

नोट्स निबन्धात्मक प्रश्नों के बाद लघु उत्तरीय प्रश्नों को रखना चाहिए।

ब्लूप्रिंट के आधार पर प्रश्न तैयार करना

एक बार जब ब्लूप्रिंट बन जाता है, तो उसके आधार पर प्रश्न बनाये जाते हैं। उदाहरण के लिए ब्लूप्रिंट में लेखन कौशल के क्षेत्र में निबन्धात्मक प्रश्नों में एक पत्र अथवा रिपोर्ट लिखने को दी जाती है, इसी प्रकार लघु उत्तरीय प्रश्नों में, नोटिस आदि दिया जाता है। प्रश्नपत्र बनाते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि ये प्रश्न उद्देश्य, विषयवस्तु के क्षेत्र तथा कठिनाई के स्तर को पूरी तरह से मूल्यांकित कर सकें।

प्रश्न बनाते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए।

(*i*) यह ब्लूप्रिंट शिक्षण के विशेष उद्देश्य पर आधारित होता है, जैसा कि ब्लूप्रिंट में दर्शाया गया है।

(*ii*) यह विषय वस्तु क्षेत्र से संबंधित होता है।

(*iii*) यह कठिनाई के हर स्तर को प्रदर्शित करता है।

नोट

(*iv*) यह शुद्ध, उचित तथा आसान भाषा में लिखा जाना चाहिए जिससे यह आसानी से छात्रों को समझ आ सके।

(*v*) इसमें उत्तर के शब्दों को पूर्णत: प्रदर्शित करना चाहिए। जैसे (20-60) शब्द (40-100) शब्द के उत्तर आदि।

प्रश्न पत्र को व्यवस्थित करना

प्रश्न बन जाने के बाद इन्हें कागजी प्रारूप पर व्यवस्थित किया जाता है। इसके लिए निर्देश लिखा जाता है। प्रश्नपत्र विषय तथा प्रश्नों को देखते हुए कई प्रकार से व्यवस्थित किये जाते हैं, जैसे विज्ञान तथा गणित आदि विषयों में पहले वैकल्पिक प्रश्न, फिर अति लघुउत्तरीय तथा दीर्घउत्तरीय प्रश्न। वहीं भाषा आदि विषयों में पहले निबन्धात्मक प्रश्न जैसे अपठित गद्यांश, गद्य या पद्य की व्याख्या करना आदि तथा बाद में लघु तथा दीर्घ उत्तरीय प्रश्न तथा अन्य प्रकार के प्रश्न लिखे जाते हैं।

क्या आप जानते हैं सामान्य निर्देश प्रश्नपत्र के ऊपरी स्थान पर लिखे जाते हैं जबकि प्रश्नों से संबंधित निर्देश प्रश्न के सामने लिखे जाते हैं।

स्कोरिंग की तथा अंकयोजना तैयार करना

वैकल्पिक प्रश्नों के लिए स्कोरिंग की तथा दूसरे प्रश्नों के लिए अंकयोजना का प्रयोग किया जाता है। स्कोरिंग का अर्थ है कि वैकल्पिक प्रश्नों के उत्तर के लिए कोई अक्षर तथा प्रश्नों के लिए अंक। कभी-कभी निर्देश बहुत अधिक जानकारी देते हैं जैसे स्पैलिंग आदि में त्रुटि होने पर कितने अंक काट लिये जाएँगे। कम्पोजिंग की व्याख्या के कितने अंक हैं। यह जानकारी स्कोरिंग की विश्वसनीयता को प्रदर्शित करता है।

प्रश्नों का विश्लेषण करना

जब प्रश्नपत्र तथा उसकी अंक योजना का कार्य पूर्ण हो जाता है तो इसका विश्लेषण किया जाता है, यह विश्लेषण ब्लूप्रिंट से प्रश्नों को मिलाने में सहायता करता है, तथा प्रश्नपत्र की मजबूत तथा कमजोर को समझने में मदद करता है। निम्नलिखित बिन्दुओं पर विश्लेषण की प्रक्रिया की जाती है।

- प्रश्नों की संख्या
- प्रश्न द्वारा उद्देश्य का परीक्षण
- विशिष्टता जिस पर प्रश्न आधारित होता है
- प्रश्नों के प्रकार
- निर्धारित अंक
- उत्तर के लिए अपेक्षित समय
- प्रश्न की कठिनाई के स्तर

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

1. किसी भी परीक्षण को तैयार करने से पहले उसका .... बनाया जाता है।
2. प्रश्नपत्र बनाते समय, कागज पर प्रश्नों का .... किया जाता है।
3. सामान्य निर्देश प्रश्नपत्र के .... भाग में लिखे जाते हैं।
4. प्रश्नपत्र तथा उसकी योजना का कार्यपूर्ण हो जाने के बाद इसका .... किया जाता है।

नोट

टास्क प्रश्नों के विभिन्न रूपों का मूल्यांकन किस प्रकार किया जाता है?

5.2 सारांश (Summary)

- किसी भी परीक्षण को तैयार करने से पहले उसका प्रारूप तैयार किया जाता है। सभी प्रकार के परीक्षण की परियोजना के चरण लगभग एक ही प्रकार के हैं, चाहे वह कक्षा का इकाई परीक्षण (Unit test) हो या वार्षिक परीक्षा का प्रश्न पत्र। ये विभिन्न चरण निम्नलिखित हैं—

  प्रारूप तैयार करना—किसी भी परीक्षण को तैयार करने का प्रथम चरण है, इसका प्रारूप बनाना। परीक्षण केवल प्रश्नों का एक साथ एकत्रित रूप नहीं है। इसे बनाते समय पाठ्यक्रम तथा विषयवस्तु का ध्यान रखना पड़ता है, यह देखा जाता है कि पूछे गये प्रश्नों द्वारा विषयवस्तु का सही मूल्यांकन हो रहा है या नहीं।
- **उद्देश्यों को सही अंकों से मूल्यांकित करना**—इसके बाद विषयवस्तु के उद्देश्यों का विश्लेषण किया जाता है तथा निर्णय लिया जाता है किस उद्देश्य को कितने अंक देने हैं।
- पाठ्यक्रम का विश्लेषण करना तथा इसके विभिन्न क्षेत्रों का भारांक निश्चित करना एक महत्वपूर्ण चरण है। इससे परीक्षण की वैधता को स्थापित करने में सहायता मिलती है।
- उद्देश्य तथा विषयवस्तु के मूल्यांकन के बाद यह देखा जाता है कि इनका परीक्षण किस प्रकार करना है। कौन सा विषय तथा उससे संबंधित जानकारी किस प्रकार के प्रश्न से अधिक और प्रभावी ढंग से मूल्यांकित हो सकती है, इसलिए एक विषयवस्तु में प्रश्न के विभिन्न रूपों द्वारा विषय की जानकारी का परीक्षण किया जाता है।
- प्रश्नपत्र का प्रारूप बनाते समय कागज पर प्रश्नों का वर्गीकरण भी होता है।
- कक्षा में हर प्रकार की IQ के छात्र होते हैं, कुछ बच्चे कठिन प्रश्नों को बहुत जल्दी हल कर लेते हैं तो, कुछ बच्चे आसान प्रश्नों को हल करने में भी बहुत समय लगाते हैं, इस समस्या को ध्यान में रखते हुए भी प्रश्नपत्र में कठिन प्रश्नों तथा सरल प्रश्नों की प्रतिशतता का ध्यान रखा जाता है।
- प्रश्नपत्र का प्रारूप तैयार होने के पश्चात् इसका ब्लू प्रिंट तैयार किया जाता है। ब्लूप्रिंट एक त्रिविमीय चार्ट होता है जो कि प्रत्येक प्रश्न की संख्या तथा उसका स्थान विषयवस्तु के अनुसार प्रदर्शित करता है। ब्लूप्रिंट इसलिए भी आवश्यक होता है; प्रश्नपत्र तैयार करने वाला यह जानता है कि किस यूनिट से कितने अंक या कौन-सा प्रश्न लेना है।
- एक बार जब ब्लूप्रिंट बन जाता है, तो उसके आधार पर प्रश्न बनाये जाते हैं। उदाहरण के लिए ब्लूप्रिंट में लेखन कौशल के क्षेत्र में निबन्धात्मक प्रश्नों में एक पत्र अथवा रिपोर्ट लिखने को दी जाती है, इसी प्रकार लघु उत्तरीय प्रश्नों में, नोटिस आदि दिया जाता है।
- वैकल्पिक प्रश्नों के लिए स्कोरिंग की तथा दूसरे प्रश्नों के लिए अंकयोजना का प्रयोग किया जाता है।
- जब प्रश्नपत्र तथा उसकी अंक योजना का कार्य पूर्ण हो जाता है तो इसका विश्लेषण किया जाता है, यह विश्लेषण ब्लूप्रिंट से प्रश्नों को मिलाने में सहायता करता है।

5.3 शब्दकोश (Keywords)

- **गुणात्मक**—गुणों के आधार पर।
- **भारांक**—प्रश्नानुसार अंक निर्धारण।

5.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. परीक्षण का प्रारूप किस प्रकार बनाया जाता है। विभिन्न चरणों का उल्लेख कीजिए।
2. नीलपत्र (ब्लूपिंट) क्या है? उल्लेख कीजिए।
3. प्रश्नपत्र को किस प्रकार व्यवस्थित किया जाता है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. ब्लूप्रिंट 2. वर्गीकरण 3. ऊपरी 4. विश्लेषण

5.5 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–6: वैधता– प्रकार, विधियाँ तथा उपयोगिता (Validity— Types, Methods and Usability)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

6.1 वैधता का अर्थ (Meaning of Validity)

6.2 वैधता के प्रकार (Types of Validity)

6.3 वैधता ज्ञात करने की विधियाँ (Methods of Estimating Validity)

6.4 मापन की प्रक्रिया में वैधता का उपयोग (Usability of Validity in Measurement)

6.5 परीक्षण वैधता को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affective Validity of Test)

6.6 वैधता तथा विश्वसनीयता में संबंध (Relation between Validity and Reliability)

6.7 सारांश (Summary)

6.8 शब्दकोश (Keywords)

6.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

6.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- वैधता के अर्थ, प्रकार और ज्ञात करने वाली विधियों को समझने में।
- वैधता तथा विश्वसनीयता में सम्बंध की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

किसी भी परीक्षण का सबसे महत्वपूर्ण गुण या विशेषता उसकी वैधता है। किसी परीक्षण की वैधता इस बात की सूचक होती है कि उसमें स्थायी त्रुटि (Constant Error) कितनी है। यदि स्थायी त्रुटि कम होती है तो उसकी वैधता अधिक होगी। परीक्षण की वैधता का अर्थ उसके परीक्षण की सत्यता या सोद्देश्यता से होता है इसका तात्पर्य यह है कि परीक्षण की रचना जिस गुण-विशेष के मापन के लिए की गयी है उसका मापन किसी सीमा तक करता है।

शिक्षा और मनोविज्ञान के मापन में जिन परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है वे उस विशेषता का मापन पूर्ण से रूप से नहीं कर पाता है, साथ ही किसी अन्य गुण का भी मापन करता है। जैसे-शाब्दिक बुद्धि परीक्षण (Verbal Test of Intelligence) के द्वारा बुद्धि के मापन के साथ-साथ, भाषा की निष्पत्ति (Language Achievement) का भी मापन होता है। जब भी इस परीक्षा का प्रयोग होता है भाषा निष्पत्ति की स्थायी त्रुटि रहती है। इस प्रकार शिक्षा मनोविज्ञान के परीक्षण पूर्णरूप से वैध नहीं होते हैं। यह मापन अप्रत्यक्ष होता है।

नोट

6.1 वैधता का अर्थ (Meaning of Validity)

परिभाषाओं से वैधता का अर्थ स्पष्ट होता है कि वैधता परीक्षण का एक महत्वपूर्ण गुण है जिससे यह विदित होता है कि एक परीक्षण किस सीमा तक उस विशेषता का मापन करता है जिसके लिए उसका निर्माण किया गया है। वैधता से तात्पर्य होता है कि परीक्षण अपने उद्देश्यों की पूर्ति किस सीमा तक करता है। वैधता परीक्षण की सार्थकता को प्रदर्शित करती है।

वैधता का सूचांक यह प्रदर्शित करता है कि परीक्षण में स्थायी-त्रुटि (Constant Error) की मात्रा कितनी है यदि वैधता का सूचांक अधिक है तो इससे यह माना जाता है कि उस परीक्षण में स्थायी त्रुटि कम है और यदि वैधता सूचांक कम है तो उस परीक्षण में स्थायी त्रुटि अधिक है। इसका तात्पर्य यह भी है कि परीक्षण जिसका मापन करने के लिए बनाया गया है इसके अतिरिक्त अन्य किसी गुण का मापन अधिक करता है। शिक्षा और मनोविज्ञान में कोई परीक्षण पूर्णरूप से वैध नहीं होता क्योंकि शिक्षा और मनोविज्ञान में ऐसा परीक्षण नहीं बनाया जा सकता है, जो पूर्णरूप से वैध हो क्योंकि शिक्षा और मनोविज्ञान में ऐसा परीक्षण नहीं बनाया जा सकता जो पूर्ण रूप से उसी का मापन करे जिसके लिए उसका निर्माण किया गया है। अत: शिक्षा मनोविज्ञान का परीक्षण पूर्णरूप से वैध होना सम्भव नहीं होता है।

वैधता का अर्थ सांख्यिकीय से भी समझा जा सकता है। वैधता का गुणक परीक्षण के प्राप्तांकों का सह-सम्बन्ध मानदण्ड परीक्षण प्राप्तांकों से किया जा सकता है। अर्थात् वैधता तात्पर्य उस सह-सम्बन्ध से है जो एक परीक्षण का अन्य मानदण्ड से होता है। इसको अग्रांकित चित्र से प्रदर्शित कर सकते हैं।

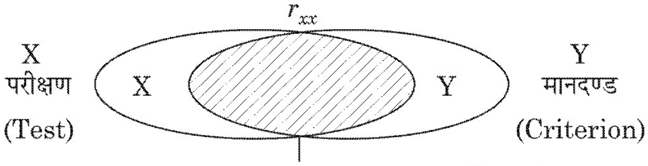

सह-सम्बन्ध (Correlation) X तथा Y परीक्षण में

अग्रांकित चित्र द्वारा वैधता को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। वैधता गुणक का तात्पर्य बाह्य सह-सम्बन्ध से होता है। एक परीक्षण एक समूह को दिया जाता है और उनके प्राप्तांकों का सहसम्बन्ध निकाला जाता है। साधारणत: सहसम्बन्ध गुणक .50 के लगभग होने पर परीक्षण को वैध माना जाता है। वैधता ज्ञात करने की यह एक प्रमुख विधि है।

जिस प्रकार विश्वसनीयता के अर्थ को परीक्षण चरिता (Test Variance) के रूप में बताया जाता है, जैसे–विश्वसनीयता गुणक से तात्पर्य यह है कि परीक्षण सम्पूर्ण चरिता (Total Variance) का कौन-सा अनुपात वास्तविक चरिता का (True Variance) है। इसी तथ्य का आगे विश्लेषण करके वैधता गुणक को समझ सकते हैं। ("Reliability is the proportion of true variance.") वास्तविक चरिता का अनुपात होता है। अवधारणा (Assumptions) पर आधारित है कि परीक्षण की कठिनाई छात्रों की जानकारी पर आधारित होता है और उसी प्रश्न समान कठिनाई स्तर के होते हैं।

T	E	
σ_t^2	σ_e^2	$X\sigma_x^2$

वास्तविक अंक + त्रुटि अंक = सम्पूर्ण अंक अथवा प्राप्तांक

$$r_{tt} = \frac{\sigma_t^2}{\sigma_x^2} = \frac{\text{वास्तविक चरिता}}{\text{परीक्षण चरिता}} = \text{विश्वसनीयता गुणक}$$

वैधता सम्मलित चरिता का अनुपात होता है

नोट

C.F.	S.F.		
σ^2_{ct}	σ^2_{st}	σ^2_{e}	X
T – सम्मलित	S – विशिष्ट	E – त्रुटि	

$$\text{वैधता गुणक } (r_{te}) = \frac{\sigma^2_{et}}{\sigma^2_x} = \frac{\text{सम्मिलित कारक चारिता}}{\text{परीक्षण चरिता}}$$

यह सूत्र एक अवधारणा पर आधारित है कि परीक्षण की कठिनाई छात्रों की जानकारी पर आधारित होती है और सभी प्रश्न समान कठिनाई के होते हैं।

$$X = C + S$$

वास्तविक प्राप्तांक = सम्मलित प्राप्तांक + विशिष्ट प्राप्तांक

परीक्षण प्राप्तांक = सम्मलित प्राप्तांक + विशिष्ट प्राप्तांक + त्रुटि प्राप्तांक

$$X = C + S + E$$

वास्तविक प्राप्तांक = सम्मलिति प्राप्तांक + विशिष्ट प्राप्तांक

$$\text{बैधता गुणक} = \frac{\text{सम्मलित कारक चारिता}}{\text{परीक्षण चरिता}} = \frac{\alpha^2_e}{\alpha^2_x}$$

उपरोक्त चित्रों एवं समीकरणों से यह विदित होता है कि वास्तविक चरिता को दो भागों में विभाजित किया जाता है। प्रथम-सम्मिलित कारक चरिता; द्वितीय-विशिष्ट चारिता। सम्मलित चरिता परीक्षण का कौन सा अनुपात है, वह वैधता गुणक होता है।

"Validity is the proportion of common factor variance."

इस विवेचन से यह भी स्पष्ट होता है कि वैधता गुणक सदैव विश्वसनीयता गुणक से कम होता है। क्योंकि भाजक में दोनों स्थानों पर परीक्षण रहता है और वैधता में सम्मिलित कारक रहता है जो वास्तविक चरिता से सदैव कम रहता है। वैधता के प्रत्यय में किया गया है।

परीक्षण वैधता की परिभाषा (Definition of Test Validity)

वैधता की परिभाषा शिक्षा और मनोविज्ञान के विद्वानों ने अनेक प्रकार से की है। उनमें से कुछ प्रमुख विद्वानों की परिभाषाओं को यहाँ दिया गया है–

ली जे. क्रानबैक के अनुसार–किसी परीक्षण की वैधता उसकी वह सीमा है, जिस सीमा तक वह, वही मापता है, जिसके लिए उसका निर्माण किया गया है।

"Validity is the extent to which a test measures what it purposes to measure." *–Lee J. Cronback*

आर. एल. थार्नडाइक के अनुसार–कोई भी मापन-विधि उस सीमा तक वैध है, जिस सीमा तक वह उस कार्य के किसी सफल मापन से सह-सम्बन्ध है, जिसके विषय में पूर्व कथन हेतु उसकी रचना की गयी है।

"A measurement procedure is valid so far as it correlates with some measurement of success in the job for which is is being used as a predictor."

–R. L. Thorndike

फ्रेंक, एस. फ्रीमैन के अनुसार–वैधता का सूचांक उस मात्रा को व्यक्त करता है जिस मात्रा तक एक परीक्षण उस चर को मापता है, जिसके मापन हेतु वह बनाया गया हो, जबकि उसकी तुलना किसी स्वीकृति मानदण्ड से की जाती है।

"A index of validity shows the degree to which a test measures what it purports to measure, when compared with accepted criterion." *–Frank, S. Freeman*

एच. गुलिक सेन के अनुसार–किसी कसौटी के साथ परीक्षण का सह-सम्बन्ध ही वैधता है।

"It is the correlation of test with some criterion."

इ. इ. घिसेली के अनुसार–वैधता की सम्भव परिभाषा यह है कि एक परीक्षण किस सीमा तक प्रस्तावित उद्देश्यों का मापन करता है।

"Validity refers to the extent to which a test or a set of operations measures what it is supposed to measure."
–E. E. Ghiselli

6.2 वैधता के प्रकार (Types of Validity)

परीक्षण में वैधता की समस्या उत्पन्न इसलिए होती है क्योंकि शिक्षा और मनोविज्ञान में मापन अप्रत्यक्ष रूप में किया जाता है। सभी विशेषताओं (गुणों) का मापन व्यवहार की सहायता से किया जाता है। यहीं कारण है कि शिक्षा और मनोविज्ञान में एक गुण के मापन के लिए अनेक परीक्षणों की रचना की गयी है जबकि भौतिक विज्ञान में एक गुण के मापन के लिए एक ही परीक्षण का प्रयोग होता है और शिक्षा मनोविज्ञान में एक ही गुण के लिए अनेक परीक्षण प्रयोग किए जाते हैं। इसलिए उन परीक्षणों की वैधता का जानना आवश्यक होता है। वैधता का वर्गीकरण विद्वानों ने अनेक प्रकार से किया है और पुस्तकों में भी वैधता के स्वरूप अलग-अलग पढ़ने को मिलते हैं वैधता के प्रकार को समझने की इन सभी आयामों को तीन मौलिक प्रकारों में प्रदर्शित किया जा सकता है। वैधता के इस वर्गीकरण में परीक्षण की सम्पूर्ण परिस्थिति और सभी पक्षों को ध्यान में रखकर किया गया है।

अग्रांकित चित्र के द्वारा प्रत्येक परीक्षार्थी की सम्पूर्ण परीक्षण परिस्थितियाँ का विचार किया गया है। जिसमें तीन प्रमुख तथ्य पाये जाते हैं।

परीक्षण की सम्पूर्ण परिस्थिति

(1) परीक्षण देने का व्यवहार (Test Taking Behaviour)।

(2) मानसिक योग्यताएँ (Mental Traits or Abilities), तथा

(3) मानदण्ड व्यवहार अथवा परिस्थिति (Criterion Behaviour or Situation)।

इस प्रकार यह तीन प्रकार के तथ्य प्रमुख रूप से वैधता की मुख्य तीन प्रकार से प्रदर्शित करते हैं। मापन की पुस्तकों में अनेक प्रकार का वर्णन मिलता है, उन सभी प्रकारों को इन तीन प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है। उपरोक्त इन तीनों परिस्थितियों का अर्थ निम्नलिखित वाक्यों में समझाया गया है।

(1) परीक्षण देने का व्यवहार (Test Taking Behaviour)–इसके अन्तर्गत परीक्षण में जिन प्रश्नों को सम्मिलित किया है उनसे किन्ही विशिष्ट व्यवहारों का मापन किया जाता है। उन्हें परीक्षण देने का व्यवहार कहते हैं। निष्पत्ति परीक्षण में यह व्यवहार पाठ्य-वस्तु के स्वरूप से सम्बन्धित होते हैं। इसका अवलोकन पाठ्यक्रम में निहित पाठ्यवस्तु से तार्किक ढंग से किया जाता है। अतः इसे विषय-वस्तु या पाठ्यक्रम-वैधता कहते हैं। इसे तार्किक वैधता भी कहते हैं।

नोट

(2) मानसिक योग्यता (Mental Traits)–इस परीक्षण परिस्थिति में जिन व्यवहारों को सम्मिलित किया गया है वह व्यवहार किन मानसिक योग्यताओं का मापन करते हैं अथवा वे व्यवहार किन-किन मानसिक क्षमताओं पर आधारित हैं। इस प्रकार का विश्लेषण या मूल्यांकन करते हैं, तो यह अन्य प्रकार की वैधता को प्रगट करती है। जिसे मनोवैज्ञानिक वैधता (Psychological Validity) या कारक विश्लेषण वैधता (Factorial Validity) कहते हैं।

(3) मानदण्ड व्यवहार अथवा परिस्थिति (Criterion Behaviour or Situation)–इसके अन्तर्गत परीक्षण देने के व्यवहारों का सम्बन्ध मानदण्ड व्यवहारों से किया जाता है, तब ये तीसरे प्रकार की वैधता होती है। इसमें परीक्षण व्यवहरों की तुलना उनके वास्तविक व्यवहारों से करें, अथवा किसी अन्य प्रमाणिक परीक्षण को उन्हीं छात्रों को दे कर उनका सहसम्बन्ध ज्ञात करें तो उसे अनुभवजन्य वैधता (Empirical Validity) कहा जाता है।

इन तीनों प्रकार की वैधता के अन्तर्गत सभी प्रकारों को सम्मिलित कर सकते हैं–

परीक्षण परिस्थिति तथा वैधता के प्रकार

परीक्षण परिस्थितियाँ (Testing Situations)	**वैधता के प्रकार** (Types of Validity)
(अ) परीक्षा देने का व्यवहार (Test-Taking Behaviour)	**(1) पाठ्यवस्तु वैधता** (Content-Validity) (1) आमुख वैधता (Face Validity) (2) तार्किक वैधता (Logical Validity) (3) विषय-वस्तु वैधता (Curricular Validity) (4) न्यादर्श वैधता (Factorial Validity) (5) कारक वैधता (Factorial Validity) (6) उद्देश्य वैधता (Objectives Validity)
(ब) मानसिक योग्यता (Mental Traits or Ablities)	**(2) मनोवैज्ञानिक वैधता** (Psychological Validity) (1) सरंचनात्मक वैधता (Construct Validity) (2) सैद्धान्तिक वैधता (Theoretical Validity) (3) कारक वैधता (Factorial Validity)
(स) मानदण्ड व्यवहार या परिस्थिति (Criterion Behaviour or Situation)	**(3) अनुभव-जन्य वैधता** (Empirical Validity)

नोट

(1) पूर्वकथित वैधता
(Predictive Validity)

(2) तात्कालिक वैधता
(Concurrent Validity)

(3) मानदण्ड वैधता
(Criteirion Validity)

उपरोक्त वैधता के प्रकार का उल्लेख *अनस्टेसी* ने अपने मापन की पुस्तक में किया है। यह वैधता की प्रकार अधिक सार्थक एवं व्यावहारिक है।

इसके अतिरिक्त अन्य मनोवैज्ञानिक ने भी वैधता के प्रकार का उल्लेख किया है। उनमें से प्रमुख विद्वानों को उल्लेख अधोलिखित हैं–

क्रानबैक के अनुसार वैधता के प्रकार (Types of Validity According to Lee J. Conback)–इन्होंने वैधता की चार प्रकार दी हैं–

(1) पाठ्य-वस्तु वैधता (Content Validity)

(2) तात्कालिक वैधता (Concurrent Validity)

(3) पूर्वकथित वैधता (Predictive Validity)

(4) संरचनात्मक वैधता (Construct Validity)।

ग्रीन, जोरेगेन्सन तथा जरवेरिच के अनुसार (Green, Jorgansen and Jurverich)–इन्होंने वैधता के तीन प्रकारों का उल्लेख किया है–

(1) पाठ्य-वस्तु वैधता (Curricular Validity)

(2) सांख्यिकी वैधता (Statistical Validity)

(3) तार्किक वैधता (Logical Validity)।

फ्रीमैन के अनुसार वैधता के प्रकार (According to Freeman)–इन्होंने वैधता के चार प्रकार बताए हैं–

(1) व्यावहारिक वैधता (Operational Validity)

(2) कार्यात्मक वैधता (Functional Validity)

(3) कारक वैधता (Factorial Validity)

(4) आमुख वैधता (Face Validity)।

जोर्डन के अनुसार वैधता के प्रकार (According to Jordon)–इन्होंने वैधता के दो ही प्रकार बतलायें हैं–

(1) आन्तरिक-वैधता (Internal Validity)

(2) बाह्य-वैधता (External Validity)।

रॉस के अनुसार वैधता के प्रकार (According to Roos)–रॉस ने वैधता के चार प्रकार बताए हैं–

(1) पूर्वकथित वैधता (Predictive-Validity)

(2) तात्कालिक-वैधता (Concurrent-Validity)

(3) पाठ्यवस्तु वैधता (Content Validity)

(4) संरचनात्मक वैधता (Construct or Congruent Validity)।

उपरोक्त वैधता की प्रकार का अवलोकन करने पर स्पष्ट होता है कि *अनस्टेसी* का वर्गीकरण अधिक व्यापक एवं सार्थक है। क्योंकि सभी प्रकार की वैधता का वर्गीकरण परीक्षण की परिस्थितियों के आधार पर तीन में किया जा सकता है और उन तीनों के अन्तर्गत अन्य प्रकारों को भी विभाजित कर सकते हैं। इन वैधताओं का वर्णन यहाँ किया गया है–

नोट

(1) पाठ्यवस्तु वैधता (Content Validity)—इस प्रकार की वैधता से तात्पर्य यह है कि परीक्षण में जिस पाठ्यवस्तु को सम्मिलित किया गया है वह उस विषय के पाठ्यक्रम का प्रतिनिधित्व करता है। इसका अर्थ यह होता है कि सम्पूर्ण पाठ्यक्रम पर प्रश्न उस परीक्षण में सम्मिलित किये गये हैं। इस प्रकार के प्रमाण विषय-वस्तु के विशेषज्ञ के द्वारा तार्किक ढंग से एकत्रित किये जाते हैं। इसलिए इसे तार्किक *वैधता* भी कहते हैं। इसके अन्तर्गत प्रश्नों की पाठ्यवस्तु सम्पूर्ण पाठ्यक्रम का न्यादर्श होता है। इसलिए इसे *न्यादर्श वैधता* भी कहते हैं। इस प्रकार की वैधता के लिए परीक्षण में प्रश्नों द्वारा जो परिस्थितियाँ दी जाती है। उनका परीक्षण व्यवहार के रूप में देखते हैं कि वह पाठ्यक्रम से सम्बन्धित सभी व्यवहारों को सम्मिलित करते हैं अथवा उनका प्रतिनिधित्व करते हैं। इसलिए इसे *पाठ्यक्रम वैधता* (Curricular Validity) कहते हैं। पाठ्यवस्तु वैधता की परिभाषा अनस्टेसी ने इस प्रकार दी है:–

"Test scores can be interpreted in terms of school ability the performance of to-day is well defined type of situation or subject matter thus called content validity." –*Anastasi*

इसका अर्थ यह है कि किसी परीक्षण के प्राप्तांकों का अर्थापन विद्यालय की क्षमताओं अथवा कार्य सम्पादन के रूप में किया जाये जबकि परीक्षण परिस्थिति या पाठ्यवस्तु को भली प्रकार परिभाषित आज के सन्दर्भ में किया हो तब उसे *पाठ्यवस्तु वैधता* कहते हैं।

इस प्रकार की *वैधता निष्पत्ति परीक्षण* की होती है। इस प्रकार के परीक्षण का यह उद्देश्य होता है कि जिस पाठ्यवस्तु को पढ़ाया गया है उसी पाठ्यवस्तु का परीक्षण मापन करता है, यदि निष्पत्ति परीक्षाओं की रचना शैक्षिक उद्देश्यों के मापन के लिए की गयी है तो उस परीक्षण के उन्हीं उद्देश्यों का मापन करना चाहिए। मूल्यांकन आयाम में शैक्षिक परीक्षण में उद्देश्यों का मापन किया जाता है। तब उसे परीक्षण की वस्तुनिष्ठ वैधता होनी चाहिए। इस प्रकार के शैक्षिक परीक्षण को मानदण्ड परीक्षा कहा जाता है।

(2) संरचना वैधता (Construct Validity)—इस प्रकार की वैधता का अर्थ यह है कि जब यह देखा जाता है कि परीक्षण में सम्मिलित व्यवहारों के लिए किन मानसिक योग्यताओं की आवश्यकता होती है अथवा यह व्यवहार किन मानसिक क्षमताओं पर आधारित है। इस प्रकार की वैधता मनोवैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित होती है, इसलिए इसे मनोवैज्ञानिक वैधता कहते हैं। *अनस्टेसी* ने इस प्रकार के वैधता की परिभाषा इस प्रकार की है।

"The test scores can be interpreted in terms of psychological theory or in terms of cognitive ability, that is the test score have psychological speaking (mental traits) is called the construct validity."

इसका अर्थ यह है कि किसी परीक्षण के प्राप्तांकों का अर्थापन ज्ञानात्मक योग्यताओं अथवा मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के रूप में किया जाये कि परीक्षण अंक में अमुक मानसिक क्षमाएँ निहित हैं तो उसे संरचनात्मक वैधता कहते हैं।

इस प्रकार की वैधता मनोवैज्ञानिक परीक्षणों में होना आवश्यक है। उदहारण के लिए बुद्धि परीक्षण, सर्जनात्मक परीक्षण तथा प्रवणता आदि में इस प्रकार की वैधता ज्ञात की जाती है साधारणत: सभी परीक्षण व्यवहार मानसिक क्षमताओं पर ही आधारित होते हैं परन्तु उपरोक्त परीक्षण विशेष रूप से ज्ञानात्मक क्षमताओं तथा योग्यताओं का मापन करते हैं जिनकी प्रकृति मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त द्वारा समझी जाती है। इसलिए क्षमताओं का स्वरूप परिकल्पनात्मक संकल्पना पर आधारित होता है। इस प्रकार की वैधता का प्रतिपादन *क्रानबैक* ने किया है। इस वैधता का स्वरूप जटिल होता है। इसलिए इसे सैद्धान्तिक वैधता कहते हैं।

(3) अनुभवजन्य वैधता (Empirical Validity)—इस प्रकार की वैधता का तात्पर्य यह है कि परीक्षण उन गुणों का मापन किस सीमा तक करता है जिसके लिए उसकी रचना की गयी है। इस बात की पुष्टि के लिए परीक्षण के व्यवहारों का सह-सम्बन्ध मानदण्ड व्यवहारों से ज्ञात किया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि छात्र परीक्षण परिस्थितियों में जो व्यवहार करता है उसकी पुष्टि उसके वास्तविक व्यवहारों या कसौटी के व्यवहारों से की जाती है। तो उसे अनुभवजन्य वैधता कहते हैं। *अनस्टेसी* ने इस वैधता की परिभाषा निम्न प्रकार से की है–

"Test score can be used to predict the futrue behaviour of the students are the present behavirour the students in actual situation thus the validity is calld Empirical Validity." –*Anastasi*

इसका अर्थ यह है कि किसी परीक्षण के प्राप्तांकों को छात्र के भविष्य के व्यवहार को बताने के लिए अथवा उसके वर्तमान की वास्तविक परिस्थितियों में व्यवहार को जानने के लिए प्रयोग किया जाये तो उसे अनुभवजन्य व्यवहार कहा जाता है।

इस प्रकार की वैधता के लिए परीक्षण में प्राप्तांकों का सह-सम्बन्ध किसी उपलब्ध मानदण्ड परीक्षण के प्राप्तांकों से किया जाये या परीक्षण व्यवहारों के आधार पर छात्र के भविष्य के व्यवहारों के रूप में (पूर्वानुमान) अर्थात् किया जाये या किसी मानदण्ड के व्यवहार से सम्बन्ध स्थापित किया जाये तो उसे *अनुभवजन्य वैधता* कहा जाता है। इस प्रकार की वैधता को तीन खण्डों में विभाजित किया जा सकता है।

(अ) पूर्वकथित वैधता (Predictve Validity)

(ब) तात्कालिक वैधता (Concurrent Validity)

(स) मानदण्ड से सम्बन्धित वैधता (Criterion Related Validity)।

(अ) पूर्वकथित वैधता (Predictive Validity)—पूर्वकथित वैधता से तात्पर्य यह है कि परीक्षण व्यवहारों के आधार पर किसी सीमा तक व्यक्ति के भविष्य के व्यवहारों के सम्बन्ध में पूर्व कथन कर सकते हैं। उदाहरण के लिए—बी. एड. की परीक्षा का उद्देश्य यह होता है कि ऐसे छात्रों का चयन किया जाये तो शिक्षण का कार्य कुशलता से कर सकें, इस प्रकार बी. एड. परीक्षा की पूर्वकथित वैधता होनी चाहिए। इसकी वैधता ज्ञात करने के लिए यह सैद्धान्तिक पाठ्यक्रमों के प्राप्तांकों और प्रयोगात्मक शिक्षण के प्राप्तांकों को मानदण्ड मानकर प्रवेश परीक्षा के प्राप्तांकों से सह-सम्बन्ध की गणना कर सकते हैं, यह मानदण्ड एक वर्ष के बाद उपलब्ध होंगे। इस प्रकार पूर्वकथित वैधता के लिए एक वर्ष प्रतीक्षा करनी होगी। इसके अतिरिक्त बी. एड. की परीक्षा पास करने के बाद जब वे किसी विद्यालय में शिक्षण कार्य आरम्भ करते हैं तो उनकी पढ़ाई में छात्रों का परीक्षाफल भी मानदण्ड हो सकता है और उससे भी सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जा सकता है।

ई. के स्ट्रांग (E.K. Strong) ने अपनी अभिरुचि मापनी की पूर्वकथित वैधता ज्ञात करने के लिए सोलह वर्ष बाद मानदण्ड व्यवहारों को एकत्रित करके सह-सम्बन्ध निकाला था। *ई. के. स्ट्रांग* ने जिन छात्रों की अभिरुचि ज्ञात करने के लिए परीक्षण अथवा उद्योगों को करना पसन्द करता है जिन्हें सोलह वर्ष पूर्व अभिरूचि परीक्षण ने दर्शाया था।

इसी प्रकार एम. बी. बी. एस. की प्रवेश परीक्षा की भी पूर्वकथित वैधता होनी चाहिए। इस प्रवेश परीक्षा की वैधता के लिए कम से कम 5 वर्ष की प्रतीक्षा करनी होगी, जो एम. बी. बी. एस. के अन्तिम वर्ष के बाद जो परीक्षाफल होगा उसे मानदण्ड मानकर सह-सम्बन्ध की गणना की जायेगी।

परीक्षण के प्राप्तांक और मानदण्ड परीक्षा (Criterion test) के प्राप्तांकों में जो सह-सम्बन्ध होता है वह पूर्वकथित वैधता गुणक कहलाता है। इन दोनों के प्राप्तांकों के आधार पर इनके माध्यम और प्रमाणिक विचलन की गणना करके ऐसा समीकरण विकसित किया जा सकता है जिसकी सहायता से मानदण्डों व्यवहारों तथा मानक परिस्थितियों के बारे में भविष्यवाणी की जा सकती है। यह समीकरण निम्नलिखित हैं—

$$Y = r_{xy} \frac{\sigma_y}{\sigma_x} (X - M_x) + M_y \qquad ...(1)$$

जबकि,

r_{xy} = परीक्षण और मानदण्ड प्राप्तांकों में सह-सम्बन्ध गुणक

M = परीक्षण पर प्राप्तांक

M_x = परीक्षण प्राप्तांक का मध्यमान

M_y = मानदण्ड परीक्षण का मध्यमान

σ_x = परीक्षण प्राप्तांकों का प्रमाणिक विचलन

σ_y = मानदण्ड परीक्षण के प्राप्तांकों का प्रमाणिक विचलन

Y = मानदण्ड प्राप्तांक का पूर्वनुमान

नोट

इस प्रकार की वैधता का उपयोग प्रवणता परीक्षा में विशेष रूप से किया जाता है। इसके अतिरिक्त अभिरूचि अनुसूची तथा प्रवेश परीक्षा में भी पूर्वकथित वैधता का प्रयोग किया जाता है।

> *क्या आप जानते हैं* परीक्षण व्यवहारों में व्यक्ति के भविष्य के व्यवहारों के बारें में पूर्वकथन किसी सीमा तक किया जा सकता है उसे पूवकथित वैधता की संज्ञा दी जाती है। इस प्रकार की वैधता के लिए आशय जो मानदण्ड व्यवहार अथवा कसौटी व्यवहार एकत्रित करने का अन्तराल छः माह से अधिक होना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि परीक्षण देने से छः माह से अधिक समय के बाद मानदण्ड व्यवहारों को एकत्रित किया जाये।

तात्कालिक वैधता (Concurrent Validity)–तात्कालिक वैधता से तात्पर्य यह है कि परीक्षण व्यवहारों के आधार पर किस सीमा तक छात्र के तात्कालिक व्यवहारों के बारे में मापन किस सीमा तक किया जा सकता है उसे तात्कालिक वैधता कहते हैं। इस वैधता की गणना के लिए जो मानदण्ड लिया जाता है वह तात्कालिक व्यवहारों से सम्बन्धित होता है। इसका अर्थ यह है कि परीक्षण देने के छः सप्ताह से पूर्व ही मानदण्ड व्यवहारों को एकत्रित कर लिया जाये। तब उसे तात्कालिक व्यवहार माना जाता है। इस प्रकार की वैधता अभिवृत्ति-मापनी में विशेष रूप से प्रयुक्त की जाती है। क्योंकि समय व्यतीत होने के साथ-साथ हमारी अभिवृत्ति तथा भावनाएँ बदल जाती हैं। इसलिए अभिवृत्ति मापनी के लिए तात्कालिक वैधता की ही गणना की जाती है, और मानदण्ड व्यवहारों का अन्तराल छः सप्ताह से अधिक नहीं होना चाहिए।

उदाहरण के लिए–बी. एड. के प्रवेश के समय छात्रों की शिक्षण अभिवृत्ति (Teaching Attitude) का मापन किया गया, और उसकी तात्कालिक वैधता ज्ञात करने के लिए यह ज्ञात करना होगा कि छात्र बी. एड. के पाठ्यक्रमों में किस सीमा तक रूचि ले रहे हैं और प्रयोगात्मक शिक्षण अभ्यास कितनी लगन से करते हैं यह सब कसौटी व्यवहार माने जाते हैं। इसी प्रकार के व्यवहारों को शिक्षण अभिवृत्ति मापनी में सम्मिलित किया गया है। छात्र मापनी पर जो व्यवहार करते हैं उसी प्रकार के व्यवहार वास्तविक परिस्थितियों में करते हैं तो मापनी को वैध माना जायेगा। तात्कालिक वैधता की परिभाषा अधोलिखित हैं–

"Concurrent Validity means invesitgating the degree of correspondence which the tests reveals with regard to criterion of actual job performance those who have taken the tests."

तात्कालिक वैधता का तात्पर्य यह है कि एक परीक्षण या मापनी किस सीमा तक यह प्रगट करता है कि जिस व्यक्ति ने परीक्षा दी है वह उस वास्तविक परिस्थिति में वैसा व्यवहार करता है या नहीं जैसे व्यवहारों को परीक्षण में सम्मिलित किया गया है।

किसी अध्यापक की नियुक्ति के समय यह प्रश्न किया जाये कि तुम शिक्षण व्यवसाय में क्यों जाना चाहते हों, अभ्यर्थी यह उत्तर यह देता है कि मुझे शिक्षण व्यवहसाय अच्छा लगता है मेरी इसमें रूचि हैं इसलिए आना चाहता हूँ। यदि उसकी नियुक्ति हो जाती है और वह शिक्षण कार्य रूचि और लगन के साथ करता है, तो इस परीक्षण में तात्कालिक वैधता है।

(स) मानदण्ड से सम्बन्धित वैधता (Criterion related Validity)–यह तीसरे प्रकार की अनुभवजन्य वैधता है। परन्तु वैधता का यह प्रकार प्रचलित है और साधारणतया इसका सभी प्रयोग करते हैं। आजकल जो भी प्रशिक्षण की रचना करते हैं जो अपनी परीक्षण की वैधता के लिए इसी प्रकार की वैधता का उपयोग करते हैं। इस वैधता का तात्पर्य यह है कि परीक्षण को मानदण्ड परीक्षण के रूप में दिया जाता है। यह परीक्षण भी उसी गुण का मापन करता है, जिसके लिए निर्माण किया हुआ परीक्षण करेगा। इन दोनां प्राप्तांकों (परीक्षण और मानदण्ड) में सह-सम्बन्ध की गणना की जाती है। सह-सम्बन्ध गुणक वैधता सूचकांक होता है। जिसे मानदण्ड सम्बन्धित वैधता कहते हैं।

नोट

इस प्रकार की वैधता का प्रयोग सामान्यत: उन सभी प्रकार के परीक्षणों और मापनियों की वैधता के लिए किया जा सकता है जिनमें प्रामाणिक परीक्षण तथा मापनी उपलब्ध है। जैसे–निष्पत्ति परीक्षण, बुद्धि परीक्षण, अभिवृत्ति मापनी, अभिरुचि मापनी तथा प्रवणता परीक्षण आदि। सर्जनात्मक परीक्षण के लिए भी इस प्रकार की वैधता का प्रयोग होता है।

उपरोक्त तीनों प्रकार की वैधता *अनुभवजन्य वैधता* का ही रूप है। पूर्वकथित और तात्कालिक वैधता में मुख्य अन्तर उसके उद्देश्य का है तथा प्रवणता परीक्षण में पूर्वकथित और अभिरूचि मापनी में तात्कालिक वैधता को महत्व दिया जाता है। दूसरा अन्तर समय का है। पूर्वकथित वैधता का अन्तराल छ: माह से अधिक जबकि तात्कालिक में छ: सप्ताह से कम होता है। मानदण्ड सम्बन्धित वैधता एक प्रकार की विधि है जिससे परीक्षण की वैधता की गणना की जाती है। यदि प्रवणता परीक्षण की रचना करनी है और प्रमाणिक प्रवणता परीक्षा उपलब्ध है तो वैधता अभिवृत्ति मापनी की रचना और उसकी वैधता के लिए मानदण्ड सम्बन्धित वैधता विधि का प्रयोग किया जा सकता है।

(4) कारक वैधता (Factorial Validity)–कारक वैधता भी मानक सम्बन्धित वैधता की तरह एक विधि है जो बुद्धि परीक्षणों, व्यक्तित्व परीक्षणों तथा निष्पत्ति परीक्षणों में निहित कारकों का मापन एक साथ होता है। ऐसी स्थिति में परीक्षण वैधता के लिए तत्व विश्लेषण विधि (Factor Analysis) का प्रयोग किया जाता है। इसलिए इसे कारक वैधता कहते हैं। *अनस्टेसी* के अनुसार कारक वैधता का अर्थ इस प्रकार है–

"The Factorial Validity of a test is the correlation between the test and factors common to a group of the test or other measures of behaviour." *–Anastasi*

इस वैधता की विधि द्वारा विभिन्न परीक्षणों के माध्यम आपसी सहसम्बन्ध ज्ञात किया जाता है, या उस परीक्षण के अन्दर सम्मिलित उप-परीक्षणों के मध्य भी सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है, और कारक विश्लेषण विधि का प्रयोग करके उनमें निहित कारकों को ज्ञात किया जाता है। जो कारक विश्लेषण के बाद निकलकर आते हैं उन्हें कारक वैधता कहते हैं। *जी. पी. गिलोर्ड* ने कारक वैधता को सबसे महत्वपूर्ण प्रकार की वैधता माना है। क्योंकि इस प्रकार की वैधता से प्रगट होता है कि परीक्षण कौन-से कारकों या तत्वों का मापन करता है इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें सदैव सांख्यिकी प्रक्रियाओं द्वारा विश्लेषण किया जाता है।

इस प्रकार की वैधता का प्रमुख उदाहरण **थर्स्टन** की प्राथमिक मानसिक योग्यताएँ हैं। *थर्स्टन* ने बुद्धि के लिए तिरेपन (53) तरह के व्यवहारों को प्रयुक्त किया था, और प्रत्येक प्रकार के व्यवहारों के लिए तिरपन (53) तरह के परीक्षणों की रचना की और उन्हें समूह पर दे करके जो प्राप्तांक इन परीक्षणों पर प्राप्त हुए उनके मध्य आपसी सहसम्बन्ध की गणना की। इस प्रकार चौदह सौ इकत्तीस (1431) सहसम्बन्ध गुणक प्राप्त हुए और इसके बाद उन्होंने अपनी तत्व विश्लेषण केन्द्रीय विधि का प्रयोग किया। इसके फलस्वरूप उन्हें छ: तत्व प्राप्त हुए। जिन्हें थर्स्टन ने प्राथमिक योग्यताओं (P.M.A) की संज्ञा दी। वे छ: तत्व इस प्रकार हैं–

1. शाब्दिक योग्यता (Verbal Ability),
2. संख्यात्मक योग्यता (Numerical Ability),
3. तार्किक योग्यता (Reasoning Ability),
4. स्मृति योग्यता (Memory Ability),
5. शब्द-प्रवाह योग्यता (Words Fluency Ability) तथा
6. स्थान सम्बन्ध योग्यता (Spatial Ability)।

उपरोक्त छ: तत्व उस बुद्धि परीक्षण की कारक वैधता ज्ञात की गयी थी इस प्रकार की वैधता की सहायता से बुद्धि सम्बन्ध सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। वैधता ज्ञात करने की इस विधि में सांख्यिकी की सह-सम्बन्धी उच्च विधियों का प्रयोग किया जाता है। जिसकी सहायता से तत्वों का अर्थापन या नामकरण किया जाता है। उस समय वस्तुनिष्ठता नहीं रह पाती। यइ इसका प्रमुख दोष है। इस कारक विश्लेषण विधि का विस्तार में वर्णन अलग अध्याय में किया गया है।

नोट

वैधता के अन्य प्रकार (Other Types of Validity)

मनोवैज्ञानिकों ने कुछ अन्य प्रकार की वैधता का उल्लेख किया है। जैसे–

(1) **आन्तरिक वैधता** (Internal Validity)–इसी को अन्य विद्वानों ने व्यावहारिक (Operational) वैधता की संज्ञा दी है।

(2) **बाह्य वैधता** (External Validity)–इस प्रकार की वैधता को अन्य विद्वानों ने क्रियात्मक (Functional) वैधता की संज्ञा दी है। इसे सांख्यिकी वैधता (Statistical Validity) कहा है।

(1) आन्तरिक वैधता (Internal Validity) **अथवा क्रियात्मक वैधता** (Operational Validity)–इसका अर्थ यह है कि परीक्षण के द्वारा जिन व्यवहारों का मापन करना है उन्हें पर्याप्त रूप से किया जाता है। जिन्हें मनोवैज्ञानिक वैधता परीक्षण देने के व्यवहार के समान है। उदाहरणार्थ-यदि किसी निष्पत्ति परीक्षण पदों के जिन प्रकरणों पर रचना की गयी है वह उस विषय के सम्पूर्ण पाठ्यक्रम से लिए गए हैं। इसलिए इस प्रकार की वैधता को आन्तरिक वैधता की संज्ञा दी है। परीक्षण में सम्मिलित पदों को देखकर तार्किक रूप में वैधता ज्ञात की जाती है, इसलिए इसे सक्रियात्मक वैधता भी कहते हैं। इसके लिए किसी बाह्य मानदण्ड को प्रयुक्त नहीं किया जाता। यह वैधता, पाठ्यक्रम वैधता, तार्किक वैधता और कारक वैधता की संज्ञा दी है। जिनका उल्लेख पहले किया जा चुका है।

(2) बाह्य वैधता (External Validity) **अथवा क्रियात्मक वैधता** (Functional Validity)–इस प्रकार की वैधता से तात्पर्य यह है कि परीक्षण प्रश्नों के आधार पर उनके भविष्य के व्यवहार के सम्बन्ध में किस सीमा तक भविष्यवाणी की जा सकती है। इस प्रकार की वैधता के लिए बाह्य मानदण्ड की आवश्यकता होती है। बाह्य मानदण्ड कोई अन्य प्रमाणिक परीक्षा भी हो सकती है, अथवा भविष्य के कसौटी व्यवहार के व्यवसाय में जो करके कितनी कुशलता से अपना कार्य करते हैं। यदि परीक्षण में सर्वोत्तम अंक प्राप्त हुए हैं और व्यवसाय में भी जा करके एक कुशल या प्रभावी कार्यकर्त्ता है तो उसे बाह्य वैधता कहा जाता है यदि देखा जाये तो इस प्रकार की वैधता में भी आन्तरिक वैधता निहित है। क्योंकि परीक्षण व्यवहारों के आधार पर उनके भविष्य के कसौटी के व्यवहार के सम्बन्ध में भविष्यवाणी करते हैं।

अन्य मनोवैज्ञानिक ने कार्यात्मक वैधता (Functional Validity) भी कहा है क्योंकि इस प्रकार की वैधता का मानदण्ड वास्तविक व्यवसाय की कार्यकुशलता के व्यवहार होते हैं। इसी प्रकार की वैधता को पूर्वकथित वैधता, तात्कालिक वैधता, अनुभवजन्य वैधता तथा मानदण्ड सम्बन्ध वैधता कहा है।

आमुख वैधता (Face Validity)–इस प्रकार की वैधता के समय में मनोवैज्ञानिक एक राय नहीं हैं। कुछ लोगों इसे एक वैधता के प्रकार मानते हैं, और कुछ लोग नहीं मानते। क्योंकि इसके लिए कोई न्याय संगत औचित्य नहीं है। इस प्रकार की वैधता का महत्व व्यावसायिक दृष्टि से तो है परन्तु मनोवैज्ञानिक दृष्टि से नहीं है।

इस प्रकार की वैधता से तात्पर्य यह है कि परीक्षण का बाह्य रूप ऐसा हो जिससे यह प्रतीत हो कि यह विशेष व्यवहारों या गुण के मापन के लिए बनाया गया है। परीक्षण देखने में भी ऐसा प्रतीत हो कि उससे अमुक उद्देश्य की प्राप्त की जा सकती है, अथवा अमुक चरों का मापन करता है। इस प्रकार की वैधता प्रकाशक के लिए आवश्यक होती है। जैसे-व्यक्तित्व मापन परीक्षण के मुख पृष्ठ पर स्याही का धब्बा बना हो। शिक्षण प्रवणता परीक्षण पर एक अध्यापक को श्यामपट्ट पर लिखता हुआ मुखपृष्ठ पर दिखाया जाये। मुखपृष्ठ पर देखते ही उस परीक्षण के उपयोग के बारे में खरीदने वाले को अभ्यास हो जाये। इस प्रकार की वैधता से सम्बन्धित होती है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **निम्नलिखित कथनों में 'सत्य' तथा 'असत्य' लिखिए–**

   1. वैधता और स्थिर त्रुटि का ऋणात्मक सम्बन्ध होता है।
   2. वैधता से परीक्षण की सार्थकता का बोध नहीं होता है।
   3. परीक्षण वैध होने पर विश्वसनीय भी होता है।
   4. प्राप्तांकों में सम्मलित कारक, विशिष्ट कारक तथा त्रुटि कारक सम्मिलित नहीं होते हैं।

नोट

5. वैधता ज्ञात करने के लिए दो प्रमुख प्रकार तथा विधियाँ है।
6. वैधता से अर्हय अंक ज्ञात किया जाता है।

6.3 वैधता ज्ञात करने की विधियाँ (Methods of Estimating Validity)

वैधता ज्ञात करने की प्रमुख तीन विधियाँ हैं। इनका प्रयोग वैधता गुणक ज्ञात करने के लिए कहा जाता है–

(1) **अनुमानित तालिका** (Expectancy Table)।

(2) **सह-सम्बन्ध** (Coefficient of Correlation)–तत्व विश्लेषण (Factor Analysis) में भी सह-सम्बन्ध गुणक का प्रयोग होता है। तत्व विश्लेषण सहसम्बन्ध का ही विस्तार है। बहु-सहसम्बन्ध (Multiple Correlation) भी सहसम्बन्ध गुणक का विस्तार है।

(3) **पुष्टि वैधकरण** (Cross-Validation)–यह विधि वैधता के लिए दो प्रकार से प्रयोग की जाती है। इसलिए इसके अन्दर दो विधियाँ साधारणतया प्रयुक्त की जाती है।

(अ) अनुभवजन्य वैधकरण (Empirical Validation), तथा

(ब) तार्किक वैधकरण (Rational Validation)।

(1) अनुमानित तालिका विधि (Expectancy Table Method)

अनुमानित तालिका द्वारा मानकों (Norms) के प्रस्तुतीकरण का एक उत्तम ढंग है। इस अनुमानित तालिका द्वारा प्रशिक्षण को प्रयोग करने वाला उसके प्राप्तांकों का प्रत्यक्ष रूप से भविष्य में उनके व्यवहार क्या होंगे? अर्थापन कर सकता है।

इस तालिका का मुख्य उद्देश्य यह होता है कि अनुभवों के अधार पर सम्भावनाओं को इंगित कर सकें कि व्यक्ति ने परीक्षण पर जो अंक प्राप्त किए हैं उनके आधार पर उनके भविष्य के व्यवहार के बारे में बतला सकें। उदाहरणार्थ एक व्यक्ति यह चाहता है कि वह एक अच्छा अध्यापक होगा। इसके लिए आवश्यक है कि दोनों प्रकार के प्राप्तांक का शिक्षण निरीक्षण की अनुस्थितियों (Ratings) से सह सम्बन्ध देखा जाये। इसका उदाहरण निम्नांकित तालिका है–

अनुमानित तालिका एक शिक्षक सफलता हेतु (Expectancy Table)

परीक्षण पर प्राप्तांक	सफलता की अनुपस्थितियाँ			योग	
	निम्न	सामान्य	उत्तम	आवृत्ति	प्रतिशत
उच्च वर्ग	1	3	5	9	18
(66-100)	2%	6%	10%		
मध्य वर्ग	10	18	8	36	73
(36-65)	20%	36%	16%		
निम्न वर्ग	2	2	1	5	10
(0-35)	4%	4%	2%		
योग	13	23	14	50	100

सह-सम्बन्ध लगभग = .50

इस तालिका को नौ वर्गो में प्रस्तुत किया गया है और तीन वर्गो में प्रामाणिक समूह के प्राप्तांकों की आवृत्ति लगायी गयी है। पूरे समूह के प्राप्तांकों को तीन वर्गो में विभाजित किया गया है। उच्च वर्ग, मध्य वर्ग, और निम्न वर्ग और उस वर्ग की सफलताओं की अनुस्थितियों (Ratings) को भी इसी प्रकार तीन वर्गो में बांटा गया है। प्रत्येक व्यक्ति की आवृत्ति को लगाया। जैसे-एक प्रकार अनुस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अमुक वर्ग में आवृत्ति को लगाया। जैसे-एक व्यक्ति के प्राप्तांक सत्तर (70) और अनुस्थिति उच्च है तो उसके लिए आवृत्ति प्रथम पंक्ति के अन्तिम स्तम्भ में लगानी होगी। आवृत्तियों को लगा करके उन्हें गिन लिया जायेगा और उस संख्या को उसी वर्ग की आवृत्ति में लिखकर

नोट

अनुमानित तालिका तैयार कर लेते हैं। तत्पश्चात इन आवृत्तियों को प्रतिशत में बदल लेते हैं। और तालिका के कर्ण के वर्गों की आवृत्तियों को प्रतिशत में बदल लेते हैं। उनका योग प्राप्तांक और अनुस्थितियों के सह-सम्बन्ध को प्रतिशत में प्रकट करता है।

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से यह तथ्य प्रगट होता है कि प्रमाणिक समूह के चार प्रतिशत ऐसे हैं जिनके प्राप्तांक भी निम्न हैं और अनुस्थितियाँ भी निम्न स्तर की हैं। आगे देखने से विदित होता है कि छत्तीस प्रतिशत (36%) के प्राप्तांक (10%) ऐसे व्यक्ति हैं जिनके प्राप्तांक उच्च वर्ग के हैं और अनुस्थितियाँ भी उच्च वर्ग की हैं। इन तीनों वर्गो का योग पचास प्रतिशत (50%) है। इसका अर्थ यह होता है कि परीक्षण व्यवहार के आधार पर उनके मानदण्ड व्यवहार के लिए पचास प्रतिशत भविष्यवाणी सही है। इस प्रकार वैधता गुणांक .50 है।

अनुमानित तालिका की विशेषताएँ–इसकी विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं–

1. वैधता ज्ञात करने की यह सबसे सरल विधि है।
2. अनुमानित तालिका की सहायता से परीक्षण प्राप्तांकों का अर्थापन प्रत्यक्ष रूप में किया जा सकता है।
3. प्राप्तांकों को तालिका की सहायता से सार्थक बना लिया जाता है। जिसकी मापन में विशेष आवश्यकता होती है।
4. किसी अमुक व्यक्ति के बारे में भी इस तालिका की सहायता से उसके प्राप्तांकों का अर्थापन किया जा सकता है।
5. इस तालिका से परीक्षण की प्रकृति की सम्भावना को भी प्रगट कर लेते हैं।

अनुमानित तालिका की सीमाएँ–इसकी सीमाएँ इस प्रकार हैं–

1. इस तालिका की सहायता से वैधता के सम्बन्ध में तार्किक ढंग से अर्थापन कम करने के लिए किया जाता है। परन्तु इसके लिए जो पर्याप्त सूचनाएँ चाहिए, वह इस तालिका से उपलब्ध नहीं हो पाती।
2. इस तालिका का सबसे बड़ा दोष यह है कि इसका प्रयोग अर्थापन त्रुटि को कम करने के लिए किया जाता है। परन्तु इसके लिए जो पर्याप्त सूचनाएँ चाहिए वह इस तालिका से उपलब्ध नहीं हो पाती।
3. इस तालिका का प्रयोग सामान्यीकरण के लिए भी नहीं किया जा सकता, कि इसका उपयोग नवीन परिस्थितियों में कर सकें।

(2) सह-सम्बन्ध गुणक विधि (Coefficient of Correlation Method)

इस विधि को संख्यिकीय वैधता भी कहते हैं। क्योंकि इस विधि के प्रयोग में सांख्यिकीय की सह-सम्बन्ध की प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। इसके अन्तर्गत प्रामाणिक समूह को परीक्षण दिया जाता है और वैधता ज्ञात करने के लिए एक अन्य प्रामाणिक परीक्षण जो उसी गुण का मापन करता है, उसको दिया जाता है। इस प्रकार इस समूह के परीक्षण प्राप्तांक और मानदण्ड परीक्षण प्राप्तांक (Criterion tests) के सम्बन्धों के लिए सह-सम्बन्ध गुणक की गणना की जाती है। सांख्यिकीय में सह-सम्बन्ध ज्ञात करने की अनेक विधियाँ हैं। परन्तु इस प्रकार की वैधता ज्ञात करने के लिए *कार्ल पीयर्स* की सह-सम्बन्ध विधि का प्रयोग प्रमुख रूप से किया जाता है। इसके प्रयोग करने के कई कारण हैं। मुख्य कारण यह है अन्य वैधता ज्ञात करने की विधियों में यह विधि सहायक होती है। जैसे-तत्व विश्लेषण (Factor Analysis) विधि तथा बहु-सहसम्बन्ध विधि (Multiple Correlation) पीयर्सन के सह-सम्बन्ध आदि।

यहाँ यह जानना आवश्यक है कि मानदण्ड परीक्षण कितने प्रकार के होते हैं और उनकी क्या प्रमुख विशेषताएँ हैं। क्योंकि वैधता गुणक इस बात पर निर्भर होता है कि परीक्षण के वैधकरण में किस प्रकार के मानदण्ड परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

मानदण्ड परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of a Criterion Tests)–मानदण्ड परीक्षण की वे सभी विशेषताएँ होनी चाहिए जो एक अच्छे परीक्षण की होती है। जैसे-विश्वसनीयता, वैधता, प्रामाणिकता, उपयोगिता एवम् उपलब्धता।

मानदण्ड परीक्षण की प्रमुख विशेषता यह होती है कि वह परीक्षण के समानान्तर हो, अर्थात जो उद्देश्य परीक्षण का

नोट

है वही मानदण्ड का होना चाहिए और परीक्षण जिन व्यवहारों का मापन करता है उन्हीं के समतुल्य व्यवहारों का मापन मानदण्ड परीक्षण को करना चाहिए।

थार्नडाइक ने भी मानदण्ड परीक्षण की विशेषताओं का उल्लेख अपनी पुस्तक में किया है। वे इस प्रकार हैं—

(1) **सार्थकता** (Relevance)—इसका तात्पर्य यह है कि मानदण्ड परीक्षण से सम्बन्धित हो। इसके लिए दोनों परीक्षण में सम्मिलित व्यवहार में समानता होनी चाहिए इसके लिए कोई ठोस प्रमाण होना चाहिए। जैसे-निष्पत्ति परीक्षणों के लिए उस विषय के शिक्षकों की राय लेनी चाहिए।

(2) **व्यक्तिगत पक्षों का प्रभाव न होना** (Freedom from Bias)—इसका अर्थ यह है कि परीक्षार्थी को अच्छे अंक प्राप्त करने के लिए सभी समान अवसर मिलने चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि विभिन्न स्कूलों की एक कक्षा को एक ही विषय पढ़ाने वाले अध्यापकों की योग्यता और शिक्षण कुशलता में अधिक अन्तर पाया जाता है। यदि उन सभी को एक ही परीक्षा दी जाती है तो निश्चय ही योग्य अध्यापकों के पढ़ाये हुए छात्रों के प्राप्तांक अधिक होंगे। अत: मानदण्ड में इस तरह का कोई पक्षपात न हो।

(3) **उपलब्धता** (Availability)—यह विशेषता व्यवहारिक दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि मानदण्ड परीक्षण यदि उपलब्ध नहीं है तो उसका प्रयोग करना सम्भव नहीं होगा। अत: मानदण्ड परीक्षण का चुनाव करते समय उसकी उपलब्धता को ध्यान में रखना आवश्यक है।

(4) **उपयोगिता** (Usability)—मानदण्ड परीक्षण के चुनाव करते समय उसकी उपयोगिता को भी ध्यान में रखना आवश्यक होता है। ऐसे मानदण्ड परीक्षण का चयन करना चाहिए जिसका प्रयोग अन्य लोगों ने अपने शोधकार्य तथा निर्देशन हेतु प्रयुक्त किया हो और उससे अच्छे परिणाम प्राप्त हुए। हों। ऐसा परीक्षण भले ही कम विश्वसनीय तथा वैध हो। यदि ऐसे परीक्षण का चयन करते हैं जिसकी विश्वसनीयता वैधता अधिक है और इससे पहले किसी ने प्रयोग नहीं किया है तो उसका चयन करना जोखिम पूर्ण होगा। अत: मानदण्ड परीक्षण का चयन करते समय यह सावधानी रखनी चाहिए।

मानदण्ड परीक्षण के प्रकार (Types of Criteria)—परीक्षण के वैधकरण के लिए विभिन्न प्रकार के मापदण्डों का जैसे-निष्पत्ति परीक्षण, बुद्धि परीक्षण, व्यक्तित्व अनुसूची तथा प्रवणता परीक्षण में प्रयोग करते हैं। इनका संक्षिप्त विवरण आगे की पंक्तियों में किया गया है।

(1) **शैक्षिक निष्पत्ति** (Academic Achievement)—इस मापदण्ड का प्रयोग निष्पत्ति परीक्षणों तथा बुद्धि परीक्षणों के वैधकरण में मुख्य रूप से किया जाता है। इसके अन्तर्गत कक्षाओं में दिये गये निष्पत्ति परीक्षणों के प्राप्तांकों, विद्यालयों के प्रगति आलेख (Progress Report) अध्यापकों द्वारा दी गयी अनुपस्थितियां (Rating) आदि को मापदण्ड के रूप में प्रयोग करते हैं, और इनकी सहायता से बुद्धि परीक्षणों का वैधकरण किया जाता है। किसी विषय की कक्षा में जो बालक सामान्य से उच्च स्तर का व्यवहार करता है तो इस विषय का शिक्षक उसे बुद्धिमान छात्र की संज्ञा देते हैं।

(2) **वास्तविक व्यवसाय में निष्पादन** (Performance in the Job)—इस प्रकार के मापदण्ड का प्रयोग प्रवणता परीक्षण में किया जाता है। विभिन्न व्यवसायों के लिए व्यक्तियों के चयन के लिए प्रवणता परीक्षण को प्रयुक्त किया जाता है, और उसके वैधकरण के लिए प्रतीक्षा करनी होती है जिनका चयन किया गया था, वे वास्तविक व्यवसाय में जाकर कैसा निष्पादन कर रहे हैं। इसका आलेख पूर्वकथित वैधता में किया जा चुका है। अर्थात् इस प्रकार के मानदण्ड का उपयोग *पूर्वकथित वैधता* के लिए किया जाता है।

(3) **अनुस्थितियाँ** (Rating)—इनका प्रयोग निष्पत्ति परीक्षण, प्रवणता परीक्षण और बुद्धि परीक्षण के वैधकरण में किया जाता है। छात्रों की निष्पत्ति को अध्यापक अनुस्थितियाँ प्रदान करता है। किसी भी प्रकार के प्रशिक्षण के प्रशिक्षक भी अपने अभ्यार्थियों के निष्पादन के लिए अनुस्थितियाँ प्रदान करते हैं। इन अनुस्थितियों को उस प्रशिक्षण के वैधकरण के लिए प्रयोग किया जाता है। जब कोई अन्य मानदण्ड उपलब्ध नहीं हो पाता तो

नोट

अनुस्थितियों का प्रयोग परीक्षण के वैधकरण के लिए करना सम्भव होता है। यह मानदण्ड वस्तुनिष्ठ (Objective) नहीं होता, क्योंकि अनुस्थितियां प्रदान करने वाले के पक्षों का प्रभाव रहता है।

(4) **परीक्षणों के सहसम्बन्ध** (Correlation with Other Tests)–शिक्षा और मनोविज्ञान में ही एक गुण के मापन के लिए अनेक परीक्षणों की रचना की गयी। जैसे-बुद्धि परीक्षण के लिए अनेक शाब्दिक बुद्धि परीक्षण उपलब्ध हैं। अत: किसी परीक्षण के वैधकरण के लिए यदि उससे पहले कोई समतुल्य परीक्षण उपलब्ध है तो उसे मानदण्ड के रूप में प्रयुक्त कर लेते हैं। परीक्षण तथा मानदण्ड दोनों के प्राप्तांकों में सह-सम्बन्ध ज्ञात कर लेते हैं जिसे वैधता गुणक कहते हैं।

(5) **आन्तरिक स्थिरता** (Internal Consistency)–प्राप्तांकों को उस परीक्षण के पद-विश्लेषण में मानदण्ड के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। पद विश्लेषण में परीक्षणों के प्राप्तांक के आधार पर छात्रों को उच्च और निम्न वर्गों में विभाजित करते हैं। सबसे ऊपर के 27% को उच्च वर्ग और सबसे नीचे के 27% को निम्नवर्ग में रखते हैं। और किसी पद के कठिनाई स्तर और विभेदीकरण की गणना इन दोनों समूह के प्राप्तांकों की सहायता से की जाती है। तत्पश्चात अन्तिम परीक्षा के लिए पदों का चयन किया जाता है, और अनुपयुक्त को निरस्त किया जाता है। और कुछ का संशोधन भी कर लिया जाता है। इस प्रकार पद विश्लेषण में परीक्षण प्राप्तांक को मानदण्ड के रूप में प्रयुक्त करते हैं।

(3) पुष्टि वैधकरण विधि (Cross Validation Method)

किसी परीक्षण के चयन का सबसे महत्वपूर्ण आधार यह होता है कि परीक्षण की रचना के बाद अन्य लोगों ने शोधकार्य में, निर्देशन में तथा अन्य किसी उद्देश्य के लिए प्रयोग किया है और उससे सार्थक परिणाम प्राप्त हुए हैं। ऐसे परीक्षण का चयन करना अधिक उत्तम माना जाता है। वास्तव में उपयोगिता तथा गुण पुष्टि वैधकरण (Cross Validation) की प्रक्रिया है।

पुष्टि वैधकरण का अर्थ (Meaning of Cross-Validation)–पुष्टि वैधकरण का अर्थ निम्न प्रकार से है–

(1) सरल भाषा में पुष्टिकरण का अर्थ यह होता है कि परीक्षण की विशेषताओं का अवलोकन स्वतन्त्र रूप से दुबारा किया जाये और पहले अवलोकन की पुष्टि की जाय। पुष्टि तभी होगी जब दोनों बार के परिणामों में समरूपता हो। उदाहरणार्थ–एक शिक्षण प्रवणता परीक्षा का वैधकरण अन्तिम परीक्षा के प्राप्तांकों से किया गया और वैधता गुणक .52 प्राप्त हुआ। इसी परीक्षण को अन्य समूह पर दिया गया और अन्तिम परीक्षा के प्राप्तांकों से उनका वैधकरण किया गया तब वैधता गुणक .48 प्राप्त हुआ। यह पहले वैधकरण की पुष्टि करता है।

(2) दूसरी प्रकार के वैधकरण में पहली बार शिक्षण प्रवणता परीक्षण के प्राप्तांकों का सहसम्बन्ध अन्तिम परीक्षा के प्राप्तांकों से किया और वैधता गुणक .52 प्राप्त हुआ। दुबारा अवलोकन के लिए प्रशिक्षक द्वारा उसी समूह के निष्पादन के लिए अनुस्थितियाँ प्रदान की गयीं। और इन अनुस्थितियों को प्राप्तांक में बदल करके परीक्षण प्राप्तांकों से सहसम्बन्ध ज्ञात किया, और वैधता गुणक .54 प्राप्त हुआ। यह परिणाम वैधकरण की पुष्टि करते हैं।

पुष्टि वैधकरण का सिद्धान्त यह उद्देश्य होता है कि हमारा परीक्षण वास्तव में कितना अच्छा कार्य करता है। परीक्षण की वैधता ज्ञात करने की यह तीसरी विधि है। यह पुष्टि वैधकरण भी तीन प्रकार का होता है–

(अ) मापन के चिन्ह (Psychometric Sign),

(ब) वैधता का सामान्यीकरण (Validity Generalization), तथा

(स) वैधता का विस्तार (Validity Extension)।

इन तीनों प्रकार की पुष्टि वैधकरण का विवरण यहाँ पंक्तियों में किया है–

(अ) मापन के चिन्ह (Psychometric Signs)–पुष्टिकरण का विशेष महत्व परीक्षणों के पदों के चयन के लिए

नोट

होता है। इसलिए इसे मापनी चिह्न की संज्ञा दी गयी है। पदों का चयन उनकी कठिनाई स्तर और विभेदीकरण की शक्ति के आधार पर किया जाता है। यदि एक परीक्षण को दो समूहों में अलग-अलग देकर और उनके पदों का अलग-अलग ही विश्लेषण किया जाये, इस प्रकार प्रत्येक पद के लिए दो कठिनाई स्तर और दो विभेदीकरण शक्ति प्राप्त होंगे। उन्हीं पदों का चयन किया जाये जिनके कठिनाई स्तर और विभेदीकरण में समानता हो और जिनमें अधिक विषमता हो उन्हें निरस्त कर दिया जाये। इस प्रकार की पुष्टि वैधकरण में दो अथवा दो से अधिक समूहों को प्रयुक्त किया जाता है।

(ब) वैधता का सामान्यीकरण (Validity Generalization)—किसी परीक्षण की उपयोगिता को नवीन परिस्थिति में जानने के लिए यह आवश्यक होता है कि उसका पुष्टिकरण किया जाये। पुष्टिकरण के लिए अन्य जनसंख्या में से न्यादर्श लेकर और उसी मापदण्ड का प्रयोग किया जाये जिसका प्रयोग पहले समूह पर कर चुके हैं। प्रक्रिया को वैधता का सामान्यीकरण कहते हैं।

(स) वैधता का विस्तार (Validity Extension)—इस प्रकार की वैधता में अतिरिक्त सूचना प्राप्त की जाती है। इसका तात्पर्य यह है कि परीक्षण के वैधकरण में एक से अधिक मानदण्ड प्रयुक्त किए हों तो उस प्रक्रिया को वैधता का विस्तार कहते हैं।

पुष्टि वैधकरण को संक्षिप्त में यह कह सकते हैं कि किसी परीक्षण की उपयोगिता के बारे में अधिक शुद्ध जानकारी देता है।

पुष्टि वैधकरण का महत्व एवं उपयोग (Importance and Use of Cross Validation)—पुष्टि वैधकरण का उपयोग व महत्व इस प्रकार है।

(1) *मुआइजर* ने अभी हाल ही में पुष्टि वैधकरण की अनेक प्रकार की वैधताओं का उल्लेख किया है। यह प्रयोगात्मक प्रारूप पर निर्भर करती है। यदि इन प्रारूपों में कुछ सुधार कर लिया जाये तो उसे पुनर्रावृत्ति पुष्टि वैधकरण कहते हैं। इस प्रकार का महत्व बहु-सहसम्बन्ध समीकरणों में होता है।

(2) पदों के चयन में पद विश्लेषण के समय किया जाता है।

(3) इसका महत्व एवम् उपयोगिता प्रवणता परीक्षण के लिये होती है। इनके प्राप्तांकों के आधार पर भविष्य के व्यवहारों के सम्बन्ध में एक सही अनुमान लगाया जा सकता है और अभ्यर्थियों का चयन सही रूप में किया जा सकता है।

(4) पुष्टि वैधकरण की प्रक्रिया द्वारा *विभाजक-अंक* (Cut-off score) का निर्धारण शुद्ध रूप में किया जाता है जो अधिक सार्थक एवं व्यावहारिक होता है। विभाजक अंक को अर्द्ध अंक भी कहते हैं।

(5) पुष्टि वैधकरण की प्रक्रिया में वैधता-गुणक दो अलग-अलग परिस्थितियों में प्राप्त किया जाता है। या दो मानदण्डों का प्रयोग करके दो वैधता-गुणक होते हैं। ऐसी परिस्थिति में यह कठिनाई होती है कि किस वैधता-गुणक को महत्व दिया जाये और किस परीक्षण का चयन किया जाए।

(6) पुष्टि वैधकरण की आवश्यकता परीक्षण बैटरी में अधिक पड़ती है। विशेष रूप से पद-विश्लेषण की प्रक्रिया में पुष्टि वैधकरण की संस्तुति की जाती है।

(7) इस प्रक्रिया द्वारा परीक्षण के उपयोग में जोखिम कम हो जाती है। और किसी को धोखा भी नहीं दिया जा सकता तथा परीक्षण के चयन का मुख्य आधार माना जाता है।

(8) पुष्टि वैधकरण में सांख्यिकी का प्रयोग किया जाता है, विशेष रूप से सहसम्बन्ध विधि का प्रयोग करते हैं। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत विश्वसनीयता गुणक और वैधता-गुणक की भी गणना दुबारा की जाती है। क्योंकि आज हम अनुभवजन्य आयामों को विशेष महत्व देते हैं।

(9) प्रश्न बनाने वाले का यह उत्तरदायित्व होता है कि इसे पद-विश्लेषण की प्रक्रिया में, *विभाजक अंक निर्धारण* में पुष्टि वैधकरण की प्रक्रिया का प्रयोग करना चाहिए। जिससे अन्य लोग इसका चयन एवं प्रयोग नि:संकोच कर सकें।

नोट

वास्तविक वैधकरण की प्रक्रिया से तात्पर्य यह है कि परीक्षण के विशेषताओं का अवलोकन एक नये समूह को दे करके किया जाय।

> *नोट्स* पुष्टि वैधकरण एक प्रकार से परीक्षण की उपयोगिता के बारे में मूल्यांकन करता है कि उसके पूर्वकथन के समीकरण से परीक्षण और *विभाजक अंक* (Cut off Scores) की क्षमताओं के बारे में जानकारी प्रदान करता है।

6.4 मापन की प्रक्रिया में वैधता का उपयोग (Ability of Validity in Measurement)

परीक्षण के वैधता-गुणक का प्रयोग मापन के अन्तर्गत तीन उद्देश्यों के लिए किया जाता है–

(1) स्थायी त्रुटि (Constant Error) की जानकारी के लिए।

(2) विभाजक अंक के निर्धारण में (Determining Cut of Score)

(3) पूर्वकथन के लिए समीकरणों का विकास (Developing Equation for Prediction Purpose)।

(1) स्थायी त्रुटि (Constant Error) **की जानकारी के लिए**–किसी भी परीक्षण की प्रमुख विशेषता यह होती है कि जिस उद्देश्य के लिए उसकी रचना की गयी है उसका मापन वह किस सीमा तक करता है। इसका अर्थ यह है कि जिसके मापन के लिए उसकी रचना की गयी है इसके अतिरिक्त भी कुछ मापन करता है। उसे स्थायी त्रुटि की संज्ञा देते हैं। वैधता गुणक के लिए परीक्षण प्राप्तांकों का सहसम्बन्ध मानदण्डों के प्राप्तांकों से किया जाता है। जो सह-सम्बन्ध गुणक आता है वह दो तथ्यों को प्रकट करता है। प्रथम-जिस उद्देश्य के लिए बनाया गया है। उसका किस सीमा तक मापन करता है और अन्य व्यवहारों को किस सीमा तक मापन करता है। यह स्थायी त्रुटि होती है। एक अच्छे परीक्षण का वैधता गुणक .50 के लगभग मान्य होता है। इसका अर्थ है कि यदि कोई परीक्षण 50% की सीमा तक अपने उद्देश्यों की पूर्ति करता है तो उसे वैध माना जाता है वह 50 प्रतिशत अन्य गुणों को मापता है।

(2) विभाजक-अंक के निर्धारण में (Determining Cut of Score)–परीक्षणों की उपयोगिता साधारणत: अभ्यर्थियों के चयन के लिए होती है। इसके लिए आवश्यकता है कि उसका विभाजक बिन्दु (Cut-of Score) निर्धारित किया जाये। लगभग सभी परीक्षाओं का विभाजक बिन्दु निर्धारित किया जाता है। बोर्ड की परीक्षाओं तथा विश्वविद्यालय की परीक्षाओं का विभाजक अंक 33% प्राप्तांक को प्रयुक्त करते हैं। जो छात्र इस अंक से कम अंक प्राप्त करते हैं उन्हें फेल और अधिक अंक वालों को पास घोषित किया जाता है। यह विभाजक अंक परम्परागत है। इसका कोई विशेष आधार नहीं है। केवल इतना कह सकते हैं कि छात्र को अध्यापन पाठ्य-वस्तु का 33% समझ लेना चाहिए। जिन परीक्षणों की हम रचना करते हैं उनके विभाजक अंक का निर्धारण वैज्ञानिक प्रक्रिया द्वारा किया जाता है। इस प्रक्रिया में वैधता गुणक तथा सहसम्बन्ध के लिए बनायी गयी तालिका को प्रयुक्त किया जाता है। इस प्रक्रिया का विवरण आगामी पंक्तियों में किया गया है।

विभाजक अंक निर्धारण की विधि (Method of Determining Cut-off Score)–एक परीक्षण का वैधता गुणक परीक्षण प्राप्तांक और मानदण्ड के प्राप्तांकों के सहसम्बन्ध से ज्ञात किया जाता है। इस सहसम्बन्ध के लिये *पीयर्सन* की विधि का प्रयोग करते हैं। इसमें न्यादर्श का चयन किया जाता है जिसका आकार बड़ा होता है। पीयर्सन विधि में इसके लिए द्विभुजी आकृति विवरण तालिका तैयार किया जाता है। तालिका की एक भुजा पर परीक्षण प्राप्तांक और दूसरी भुजा पर मानदण्ड प्राप्तांक को व्यवस्थित किया जाता है। वैधता गुणक .50 के लगभग होता है। तो आवृत्तियों का विवरण नीचे दी हुई तालिका जैसा होता है।

नोट

परीक्षण के उत्तम विभाजक प्राप्तांकों के लिए प्रस्तुतीकरण

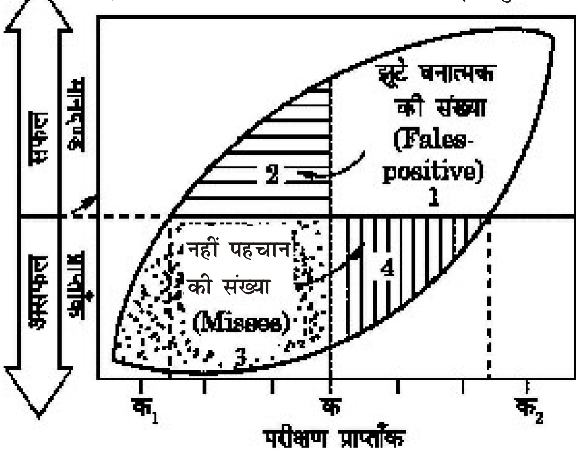

विभाजक प्राप्तांक परीक्षण प्राप्तांकों के वितरण के मध्य में होगा। ताकि झूठे धनात्मक की संख्या (False Positives) तथा नहीं पहिचाने गये की संख्या (Misses) की समान होनी चाहिए। उपरोक्त अंडाकार आवृत्ति में क ऐसा ही बिन्दु है। **क** बिन्दु से जो खड़ी रेखा खींची जाती है और मानदण्ड के **ख** बिन्दु से एक समान्तर रेखा खींचते हैं जो अंडाकार आ आकृति को चार भागों में विभाजित करती है। मानदण्ड परीक्षण का **ख** विभाजक बिन्दु **ख** से अधिक अंक पाने वाले उत्तीर्ण माने जायेंगे और **ख** से कम पाने वाले अनुत्तीर्ण माने जायेंगे परीक्षण प्राप्तांक में **क** को विभाजक अंक निर्धारित किया है यह भी समूह को दो भागों में बाँटता है इससे ऊपर वाले उत्तीर्ण और नीचे वाले अनुत्तीर्ण में आते हैं। परन्तु **ख** से ऊपर अंक पाने वाले परीक्षण में अनुत्तीर्ण घोषित किए, जिन्हें असत्य धनात्मक कहते हैं। इसका तात्पर्य यह हुआ कि यदि इन्हें चयन कर लिया जाता है तो मानदण्ड व्यवहार में सफल रहते हैं। इसके विपरीत **ख** से नीचे अंक प्राप्त करने वाले जिन्हें परीक्षण में उत्तीर्ण घोषित किया उन्हें न पहचानने की संज्ञा दी गयी। इसका तात्पर्य यह है कि यह परीक्षण में तो सफल हो गये परन्तु मानदण्ड व्यवहारों में असल रहेंगे।

विभाजक बिन्दु के निर्धारण में यह सावधानी रखी जाती है कि ऐसा अंक लिया जाये जिससे असत्य धनात्मक और न पहचानने की संख्या समान हो। उपरोक्त अंडाकार आकृति को चार खण्डों में बाँटा गया है। प्रथम खण्ड में ऐसे छात्र है जो मानदण्ड और परीक्षण दोनों में उत्तीर्ण हैं। और तृतीय खण्ड में ऐसे छात्र हैं जो दोनों में अनुत्तीर्ण हैं। खण्ड दो में असत्य धनात्मक और चौथे खण्ड में नहीं पहचाने गये की संख्या है। द्वितीय और चतुर्थ खण्ड में छात्रों की संख्या लगभग समान है अत: **क** सबसे उपर्युक्त परीक्षण का विभाजक अंक है। यदि **क** को विभाजक अंक लिया जायेगा तो न पहिचानने (Misses) की संख्या अधिक होगी। और झूठे धनात्मक की संख्या अधिकतम होगी और न पहिचानने वालों की संख्या शून्य होगी। अत: **क** विभाजक अंक ही सबसे उत्तम कहा जायेगा।

(3) पूर्वकथन के लिए समीकरणों का विकास (Developing Equation for Prediction Purpose)—परीक्षणों के प्राप्तांकों का साधारणतया उपयोग अभ्यर्थियों के भविष्य के व्यवहार के बारे में अनुमान लगाने के लिए किया जाता है। शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन में इस प्रकार के पूर्व अनुमानों की आवश्यकता होती है। इस प्रकार के पूर्व-अनुमानों की गणना करने के लिए समीकरणों को विकसित किया जाता है। एक परीक्षण की वैधता गुणक के लिए परीक्षण प्राप्तांक और **क** भुजा पर परीक्षण प्राप्तांक व्यवस्थित किये जाते हैं। इस तालिका के सभी पंक्तियों के मध्यमानों से होती हुई एक सरल रेखा खींचते हैं इसी प्रकार स्तम्भ के मध्यमानों से होती हुई दूसरी सरल रेखा खींचते हैं। इन रेखाओं को गणित के समीकरणों से भी प्रदर्शित करते हैं। इनका प्रयोग पूर्व अनुमानों की गणना के लिए किया जाता है।

नोट

परीक्षण प्राप्तांकों तथा मानदण्डों प्राप्तांकों का विवरण

परीक्षण प्राप्तांकों तथा मानदण्ड प्राप्ताकों का विवरण

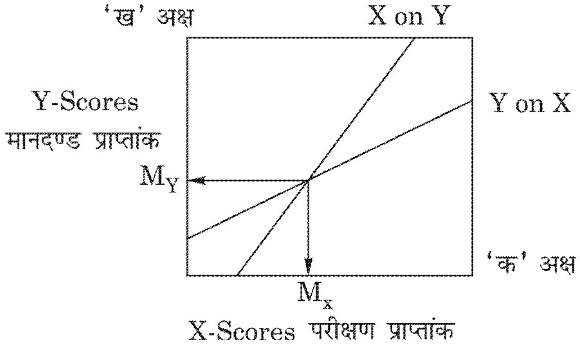

$$Y = \gamma \frac{\sigma_Y}{\sigma_X} (X - M_x) + M_y \qquad \text{Y on } x \qquad ...(1)$$

जबकि Y = मानदण्ड व्यवहार का पूर्व अनुमान अंक

γ = सहसम्बन्ध गुणक/वैधता गुणक

σ_Y = मानदण्ड प्राप्तांकों को प्रमाणिक विचलन

σ_X = परीक्षण प्राप्तांकों को प्रमाणिक विचलन

M_Y = मानदण्ड प्राप्तांकों का मध्यमान

M_X = परीक्षण प्राप्तांकों का मध्यमान

X = परीक्षण प्राप्तांक

उपरोक्त समीकरण की सहायता से मानदण्ड प्राप्तांक के सम्बन्ध में पूर्व अनुमान लगाया जा सकता है यदि परीक्षण के प्राप्तांक उपलब्ध हैं। उपरोक्त समीकरण और आकृति से यह भी स्पष्ट होता है कि वैधता गुणक यदि अधिक होगा तो पूर्व अनुमान भी उतना ही सही होगा। अत: परीक्षण की वैधता का उपयोग पूर्वकथनों तथा पूर्व अनुमानों के लिए किया जाता है।

6.5 परीक्षण वैधता को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affective Validity of Test)

एक परीक्षण की वैधता को अनेक कारक प्रभावित करते हैं। वहाँ पर कुछ प्रमुख कारकों का उल्लेख किया गया है।

(1) परीक्षण का आकार (Length of the Test)—यदि किसी परीक्षण में पदों की संख्या बढ़ा दी जाये तो केवल विश्वसनीयता गुणक की ही वृद्धि नहीं होती अपितु वैधता भी बढ़ जाती है। परीक्षण का आकार जितना बड़ा होता है उतनी ही अधिक विश्वसनीयता और वैधता होती है। इसके विपरीत परीक्षण का आकार जितना छोटा होता है यह प्रश्नों की संख्या जितनी कम होती है वैधता एवं विश्वसनीयता उतनी ही कम होती है। इस प्रकार परीक्षण का आकार बढ़ाने से उसकी वैधता भी बढ़ जाती है। परीक्षण में सजातीय पदों की वृद्धि करने से वैधता की वृद्धि की गणना अधोलिखित सूत्र से की जाती है।

टास्क स्थायी त्रुटि क्या है?

नोट

$$r_{n(XY)} \frac{nr_{xy}}{\sqrt{n + n(n-1)r_{xx}}}$$

जबकि r_{xy} = वैधता गुणक

r_{xx} = विश्वसनीयता गुणक

n = परीक्षण के आकार की वृद्धि

$r_{n(xy)}$ = वृद्धि हुई वैधता गुणक

उदाहरणार्थ-एक परीक्षण की वैधता गुणक .50 तथा विश्वसनीयता गुणक .90 है। यदि परीक्षण का आकार बढ़ाकर दुगुना कर दिया जाये तो उसकी वैधता ज्ञात कीजिए।

$$r_{n(xy)} \frac{2 \times .50}{\sqrt{2 + 2(2-1).90}} = \frac{1.00}{\sqrt{3.80}} = 0.52$$

एक परीक्षण का आकर दुगुना करने पर वैधता गुणक में वृद्धि .02 की हुई।

(2) परीक्षण की गत्यात्मकता (Speededness of the Test)—परीक्षण की वैधता और उसकी गत्यात्मक का गहन सम्बन्ध होता है। यदि परीक्षण की प्रशासन की अवधि को बढ़ा दिया जाये तो परीक्षण की गत्यात्मकता (Speededness) कम हो जाती है और वैधता गुणक बढ़ता है और यदि उसकी प्रशासनिक अवधि कम कर दी जाये तो गत्यात्मकता बढ़ती है और वैधता गुणक कम होता है। इस प्रकार परीक्षण की गत्यात्मकता उसकी वैधता को प्रभावित करती है।

(3) समूह की सजातीयता (Homegeneity of the Sample)—परीक्षण जिस समूह को दिया जाता है उसकी सजातीयता और विजातीयता वैधता को प्रभावित करती है। यदि समूह के छात्र सजातीय है तो वैधता गुणक अधिक होगा और यदि समूह के छात्र विजातीय हैं तो वैधता गुणक कम होगा। इस प्रकार समूह की विजातीयता बढ़ने से वैधता गुणक कम होता जाता है। इस कारक को सूत्र से स्पष्ट कर सकते हैं—

$$r_{xy} \frac{\sigma^2_{ef}}{\sigma^2_x} = \frac{\text{कारक चरिता}}{\text{सम्पूर्ण चरिता}}$$

जबकि r_{xy} = परीक्षण वैधता गुणक

σ^2_{ef} = सम्मलित कारक चरिता परीक्षण

σ^2_x = समूह की चरिता (विजातीयता)

इस सूत्र में जो भाजक है वह समूह की विजातीयता की सांख्यिकीय चरिता है। इसके बढ़ने से वैधता गुणक कम होगा।

(4) अस्पष्ट निर्देशन (Ambiguous Instructions)—परीक्षण के प्रशासन में जो निर्देश दिये जाते हैं उनमें समरूपता तथा स्पष्टता होनी चाहिए। यदि यह निर्देशन स्पष्ट नहीं है तो परीक्षण की वैधता प्रभावित होगी। अर्थात् वास्तविक वैधता से प्राप्त की हुई वैधता कम होगी। अत: परीक्षण देते समय जिन निर्देशों का प्रयोग किया जाये वह भी प्रमाणिक होने चाहिए।

(5) सामाजिक एवम् सांस्कृतिक अन्तर का प्रभाव (Socio-cultural difference)—समाज के विभिन्न समूहों को परीक्षण दिया जाता है तो उनके प्राप्तांकों पर उनके आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक पक्षों का प्रभाव पड़ता है जो उस परीक्षण की वैधता को प्रभावित करता है। अत: किसी परीक्षण को बनाते समय यह सावधानी रखनी चाहिए कि परीक्षण के पदों का स्वरूप ऐसा हो जिन पर सांस्कृतिक, सामाजिक वह आर्थिक पक्षों का कम से कम प्रभाव हो। जब कोई परीक्षण सांस्कृतिक तथा सामाजिक सीमाओं को पार कर लेता है तब भी परीक्षण की वैधता प्रभावित नहीं होती है। परन्तु ऐसा करना सम्भव नहीं होता है।

नोट

(6) परीक्षण के पदों का कठिनाई स्तर (Difficulty Values of the Item)—किस परीक्षण में ऐसे प्रश्नों को सम्मिलित किया जाता है जिनके कठिनाई स्तर का विस्तार बहुत अधिक होता है तब उस परीक्षण की विश्वसनीयता और वैधता कम हो जाती है परीक्षण की वैधता वास्तव में उसके पदों के कठिनाई स्तर तथा उनकी विभेदीकरण शक्ति पर निर्भर होती है।

(7) अनुक्रिया प्रवृत्ति (Response Set)—वस्तुनिष्ठ परीक्षणों में अनुमान प्रश्नों को सही करता है तब वैधता गुणक कम होगा और विश्वसनीयता गुणक भी कम होगा। इसलिए परीक्षार्थी के प्राप्तांकों के लिए अनुमान से सही करने के सूत्र का प्रयोग करना चाहिए।

(8) वैधता गुणक की विधि का प्रभाव (Methods of Estimating Coefficient)—वैधता गुणक के लिए अनेक विधियों को प्रयोग किया जाता है, जिनमें से कुछ का उल्लेख इस अध्याय में किया जा चुका है। एक परीक्षण की वैधता गुणक पृथक-पृथक प्राप्त होते हैं। इसका अर्थ यह है कि वैधता गुणक की विधि भी प्रभावित करती है।

अधिकांश विधियों की यह अवधारणा है कि परीक्षण के पदों का कठिनाई स्तर समान होता है और पद की कठिनाई परीक्षार्थियों की जानकारी पर निर्भर होती है। यदि हम किसी पद को जानते हैं तो सरल है नहीं जानते हैं तो कठिन है। इस प्रकार वैधता और विश्वसनीयता की गणना में पदों की चरिता को महत्व नहीं दिया जाता। इसलिए वैधता गुणक वास्तविकता से कम होता है। सैद्धान्तिक रूप से पद चरिता होती है और उसको वैधता गुणक की गणना में महत्व देना चाहिए। इस तथ्य को एक सूत्र से स्पष्ट किया जा सकता है।

$$r_{xy}\ \frac{\sigma_{ef}^2}{\sigma_x^2} = \frac{\text{सम्मिलित कारक चरिता}}{\text{समूह की चरिता}}$$

$$r_{xy}\ \frac{\sigma_{ef}^2}{\sigma_x^2 - \sigma_i^2} = \frac{\text{सम्मिलित कारक चरिता}}{\text{समूह की चरिता - पदों की चरिता}}$$

जबकि

r_{xy} = वैधता गुणक

σ_{ef}^2 = सम्मलित कारक चरिता

σ_x^2 = समूह की चरिता

σ_i^2 = पदों की चरिता

उपरोक्त सूत्र से विदित होता है कि समूह की चरिता में से पदों की चरिता हटाने से भाजक कम होगा और वैधता गुणक अधिक होगा जो परीक्षण का वास्तविक वैधता गुणक प्राप्त होगा।

6.6 वैधता तथा विश्वसनीयता में संबंध (Relation between Validity and Reliability)

(1) वैधता यह विश्वास है कि ये परिस्थितियाँ समान हों तो एक परीक्षण की वैधता का विश्वसनीयता से सीधा सम्बन्ध होता है। यदि एक परीक्षण की वैधता अधिक हो तो वह अधिक विश्वसनीय भी होता है। यदि किसी परीक्षण में त्रुटि चरिता अधिक है तो तत्व चरिता (Common Factor Variance) का कम होगी। कारक चरिता वैधता का स्रोत होता है। यदि हम किसी परीक्षण को अधिक विश्वसनीय बनाना चाहते हैं तो उसके लिए कारक चरिता बढ़ानी होगी, जिससे उसकी वैधता बढ़ जायेगी। इस तथ्य का स्पष्टीकरण निम्नांकित आकृतियों से किया गया है

नोट

विश्वसनीयता–

	वास्तविक अंक	त्रुटि अंक	
प्राप्तांक = X	T σ_i^2	E σ_i^2	σ_i^2 प्राप्तांक चरिता

$$r_i \frac{\sigma_i^2}{\sigma_x^2} = \frac{\text{वास्तविक अंक चरिता}}{\text{प्राप्तांक चरिता}}$$

वैधता–

	σ_i^2			
	σ_x^2	σ_e^2	σ_e^2	
	Common factor	S	E	त्रुटि चरिता
	कारक चरिता	विशिष्ट चरिता		

$$r_{xy} \frac{\sigma_{ef}^2}{\sigma_x^2 - \sigma_i^2} = \frac{\text{सम्मिलित कारक चरिता}}{\text{प्राप्तांक चरिता - पदों की चरिता}}$$

कारक चरिता (σ_{ef}^2) के बढ़ने से वैधता बढ़ेगी तथा विश्वसनीयता भी बढ़ेगी क्योंकि वास्तविक अंक चरिता बढ़ जायेगी।

(2) विश्वसनीयता और वैधता का सम्बन्ध होता है, परन्तु इसके कुछ अपवाद हैं। यदि परीक्षण के अन्तर्गत विजातीय पदों को सम्मिलित किया गया है तो उसके विश्वसनीयता कम होगी और उसकी वैधता अधिक होगी। यदि परीक्षण में सजातीय पदों को सम्मिलित किया जाए तो विश्वसनीयता बढ़ जायेगी परन्तु वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। विश्वसनीयता बढ़ाने से कारक वैधता बढ़नी चाहिये, परन्तु ऐसा नहीं होता है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि विश्वसनीयता वैधता में सहसम्बन्ध नहीं हैं।

(3) परीक्षण के इन दोनों गुणों में कई प्रकार से इनकी तुलना करना उचित नहीं है, क्योंकि दोनों का उद्देश्य अलग-अलग हैं विश्वसनीयता त्रुटि चरिता और वास्तविक अंक चरिता से सम्बन्धित होती है जबकि वैधता स्थायी त्रुटि और कारक चरिता से सम्बन्धित होती है। वास्तविक अंक चरिता के दो पक्ष होते हैं एक-कारण चरिता; द्वितीय-विशिष्ट कारक चरिता है।

(4) उच्चतम विश्वसनीयता गुणक प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक होता है कि परीक्षण के पदों में आपसी आन्तरिक सह-सम्बन्ध अधिक हो। जबकि उच्चतम वैधता-गुणक के लिये परीक्षण के पदों में आपसी आन्तरिक सह-सम्बन्ध कम हो।

नोट्स अधिकतम वैधता गुणक के लिए यह भी आवश्यक होता है कि परीक्षण के पदों का कठिनाई स्तर समान हो। जबकि अधिगम वैधता गुणक के लिए परीक्षण पदों के कठिनाई स्तर में अन्तर होना चाहिए।

नोट

विश्वसनीयता–

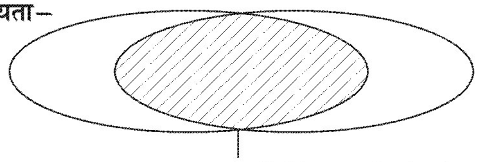

वैधता–

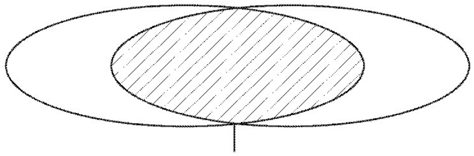

(5) विश्वसनीयता और वैधता एक परीक्षण की दो प्रमुख विशेषताएँ हैं। विश्वसनीयता गुणक ज्ञात करने के लिए एक ही परीक्षण को एक ही समूह को दो बार दे करके उनमें सह-सम्बन्ध निकाला जाता है। जबकि परीक्षण की वैधता के लिए परीक्षण प्राप्तांकों तथा किसी बाह्य मानदण्ड के प्राप्तांकों में सहसम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

इस विश्वसनीयता तथा वैधता के सहसम्बन्ध के विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि किन्हीं परिस्थितियों में इन दोनों में सह-सम्बन्ध होता है, ओर किन्हीं अन्य परिस्थितियों में सहसम्बन्ध नहीं होता है। इनके सहसम्बन्ध के लिए परीक्षण पदों की सजातीयता और विजातीयता कठिनाई स्तर के सन्दर्भ में अधिक महत्वपूर्ण हैं लेकिन किसी भी परिस्थिति में वैधता-गुणक विश्वसनीयता गुणक से अधिक नहीं होती है।

एक परीक्षण की रचना करते समय यह प्रयास नहीं करना चाहिए कि हमारी विश्वसनीयता भी अधिक हो और वैधता भी अधिक हो क्योंकि इन दोनों के उद्देश्य तथा कार्य अलग-अलग हैं। एक गत्यात्मक परीक्षण की विश्वसनीयता अधिक होती है और वैधता कम होती है, क्योंकि इस प्रकार के परीक्षण के पदों का कठिनाई-स्तर समान होता है। एक शक्ति परीक्षण का (Power test) वैधता-गुणक अधिक होता है और विश्वसनीयता कम होती है, क्योंकि इस प्रकार के परीक्षण के कठिनाई स्तर में अधिक अन्तर होता है।

विश्वसनीयता ज्ञात करने की विधियों की अवधारणाएँ उस परीक्षण के विश्वसनीयता गुणक को प्रभावित करती है, जबकि परीक्षण की वैधता-गुणक ज्ञात करने में ही मानदण्ड परीक्षण का प्रभाव अधिक होता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

1. वैधता सांख्यिकी में .... सहसम्बन्ध होता है।
2. परीक्षण की स्थिर त्रुटि .... को निर्धारित करती है।
3. वैधता से परीक्षण की .... का बोध होता है
4. वैधता के मूल .... रूप होते हैं।
5. वैधता गणना की मुख्य .... विधियाँ होती है।
6. वैधता से .... अंक को निर्धारित किया जाता है।

6.7 सारांश (Summary)

- वैधता की परिभाषा शिक्षा और मनोविज्ञान के विद्वानों ने अनेक प्रकार से की है। उनमें से कुछ प्रमुख विद्वानों की परिभाषाओं को यहाँ दिया गया है।

नोट

- **ली जे. क्रानबैक** के अनुसार—किसी परीक्षण की वैधता उसकी वह सीमा है, जिस सीमा तक वह, वही मापता है, जिसके लिए उसका निर्माण किया गया है।
- **आर. एल. थार्नडाइक** के अनुसार—कोई भी मापन-विधि उस सीमा तक वैध है, जिस सीमा तक वह उस कार्य के किसी सफल मापन से सह-सम्बन्ध है, जिसके विषय में पूर्व कथन हेतु उसकी रचना की गयी है।
- **क्रानबैक के अनुसार वैधता के प्रकार**—इन्होंने वैधता की चार प्रकार दी हैं– (1) पाठ्य-वस्तु वैधता (Content Validity); (2) तात्कालिक वैधता (Concurrent Validity); (3) पूर्वकथिक वैधता (Predicitive Validity); (4) संरचनात्मक वैधता (Construct Validity)।
- **ग्रीन, जोरेगेन्सन तथा जरवेरिच के अनुसार** (Green, Jorgansen and Jurverich)—इन्होंने वैधता की तीन प्रकारों का उल्लेख किया है—(1) पाठ्य-वस्तु वैधता (Curricular Validity); (2) सांख्यिकी वैधता (Statistical Validity); (3) तार्किक वैधता (Logical Validity)।
- **फ्रीमैन के अनुसार वैधता के प्रकार** (According to Freeman)—इन्होंने वैधता के चार प्रकार बताए हैं– (1) व्यावहारिक वैधता (Operational Validity); (2) कार्यात्मक वैधता (Functional Validity); (3) कारक वैधता (Factorial Validity); (4) आमुख वैधता (Face Validity)।
- **वैधता के अन्य प्रकार**– मनोवैज्ञानिकों ने कुछ अन्य प्रकार की वैधता का उल्लेख किया है। जैसे– **(1) आन्तरिक वैधता** (Internal Validity)—इसी को अन्य विद्वानों ने व्यावहारिक (Operational) वैधता की संज्ञा दी है। **(2) बाह्य वैधता** (External Validity)—इस प्रकार की वैधता को अन्य विद्वानों ने क्रियात्मक (Functional) वैधता की संज्ञा दी है। इसे सांख्यिकी वैधता (Statistical Validity) कहा है।

  (1) आन्तरिक वैधता (Internal Validity) **अथवा क्रियात्मक वैधता** (Operational Validity)—इसका अर्थ यह है कि परीक्षण के द्वारा जिन व्यवहारों का मापन करना है उन्हें पर्याप्त रूप से किया जाता है। जिन्हें मनोवैज्ञानिक वैधता परीक्षण देने के व्यवहार के समान है।

  (2) बाह्य वैधता (External Validity) **अथवा क्रियात्मक वैधता** (Functional Validity)—इस प्रकार की वैधता से तात्पर्य यह है कि परीक्षण प्रश्नों के आधार पर उनके भविष्य के व्यवहार के सम्बन्ध में किस सीमा तक भविष्यवाणी की जा सकती है। इस प्रकार की वैधता के लिए बाह्य मानदण्ड की आवश्यकता होती है।
- **आमुख वैधता** (Face Validity)—इस प्रकार की वैधता के समय में मनोवैज्ञानिक एक राय नहीं हैं। कुछ लोगों इसे एक वैधता के प्रकार मानते हैं, और कुछ लोग नहीं मानते। क्योंकि इसके लिए कोई न्याय संगत औचित्य नहीं है। इस प्रकार की वैधता का महत्व व्यावसायिक दृष्टि से तो है परन्तु मनोवैज्ञानिक दृष्टि से नहीं है। इस प्रकार की वैधता से तात्पर्य यह है कि परीक्षण का बाह्य रूप ऐसा हो जिससे यह प्रतीत हो कि यह विशेष व्यवहारों या गुण के मापन के लिए बनाया गया है।
- वैधता ज्ञात करने की प्रमुख तीन विधियाँ हैं। इनका प्रयोग वैधता गुणक ज्ञात करने के लिए कहा जाता है–

  (1) अनुमानित तालिका (Expectancy Table)।

  (2) सह-सम्बन्ध (Coefficient of Correlation)—तत्व विश्लेषण (Factor Analysis) में भी सह-सम्बन्ध गुणक का प्रयोग होता है। तत्व विश्लेषण सहसम्बन्ध का ही विस्तार है। बहु-सहसम्बन्ध (Multiple Correlation) भी सहसम्बन्ध गुणक का विस्तार है।

  (3) पुष्टि वैधकरण (Cross-Validaiton)—यह विधि वैधता के लिए दो प्रकार से प्रयोग की जाती है। इसलिए इसके अन्दर दो विधियाँ साधारणतया प्रयुक्त की जाती हैं।

  (अ) अनुभवजन्य वैधकरण (Empricial Validation), तथा

  (ब) तार्किक वैधकरण (Rational Validation)।

नोट

6.8 शब्दकोश (Keywords)

- **वैधता**–शुद्ध वैध होने की अवस्था।
- **अनुभवजन्य**–अनुभव से प्राप्त होने वाला।
- **पुष्टि**–प्रमाणिक।

6.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. वैधता का अर्थ एवं परिभाषा दीजिए। वैधता स्थायी त्रुटि पर किस प्रकार निर्भर होती है?
2. वैधता कितने प्रकार की होती है? उन सभी का संक्षिप्त विवरण दीजिए। तथा वैधता गुणक प्रभावित करने वाले घटकों को बताइए।
3. वैधता ज्ञात करने की कितनी विधियाँ हैं? उनका वर्णन कीजिए।
4. वैधता और विश्वसनीयता के सम्बन्ध एवं अन्तर को स्पष्ट कीजिए।
5. वैधता से योग्यता विभाजक अंक (Cut of score) ज्ञात करने की विधि का वर्णन कीजिए।
6. वैधता का अर्थ समझाइए तथा परिभाषा दीजिए।
7. वैधता गुणक की मापन में आवश्यकता बताइए।
8. स्थिर त्रुटि (Constant error) का अर्थ समझाइए।
9. वैधता के मुख्य प्रकार बताइए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1.	1. सत्य	2. असत्य	3. सत्य	4. असत्य
	5. असत्य	6. सत्य।		
2.	1. बाह्य,	2. वैधता,	3. सार्थकता,	4. तीन,
	5. तीन,	6. अर्हय।		

6.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—7: विश्वसनीयता: प्रकार, विधियाँ तथा उपयोग (Reliability— Types and Methods and Sability)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

7.1 विश्वसनीयता का अर्थ तथा परिभाषा (Meaning and Definition of Reliability)

7.2 विश्वसनीयता के प्रकार अथवा विश्वसनीयता की विधियाँ (Types of Reliability or Methods of Computing Reliability)

7.3 विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले घटक (Factors Affecting Reliability of Test)

7.4 विश्वसनीयता गुणक का अर्थापन (Interpretation of Reliability Coefficient)

7.5 विश्वसनीयता की उपयोगिता (Uses of Reliability)

7.6 सारांश (Summary)

7.7 शब्दकोश (Keywords)

7.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

7.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- विश्वसनीयता के अर्थ, विधियाँ, प्रभावित करने वाले घटक एवं उपयोगिता को समझने एवं विश्लेषण करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

एक अच्छे परीक्षण की कई विशेषतायें होती हैं। उनमें से परीक्षण की विश्वसनीयता एक विशेष गुण माना जाता है। परीक्षण की विश्वसनीयता इस तथ्य को प्रकट करती है कि उसमें चर-त्रुटि (Variable Error) कितनी हैं यदि परीक्षण में चर त्रुटि कम है तो वह अधिक विश्वसनीय परीक्षण होगा, इसके विपरीत यदि चर त्रुटि अधिक है तो परीक्षण की विश्वसनीयता कम होगी। परीक्षण की विश्वसनीयता का अर्थ यह होता है कि उस परीक्षण के प्राप्तांकों में स्थायित्व (Consistency) है। इससे तात्पर्य यह है कि यदि एक परीक्षण को एक समूह के विभिन्न अवसरों पर दिया जाये तो अभ्यर्थियों के प्राप्तांकों को समरूपता अथवा स्थायित्व होना चाहिए।

सांख्यिकीय दृष्टि से विश्वसनीयता अपने स्वयं के सह-सम्बन्ध को प्रगट करती है। (Reliability is the self correlation of a test) इस तथ्य को निम्नांकित चित्र द्वारा भी प्रदर्शित किया जा सकता है।

नोट

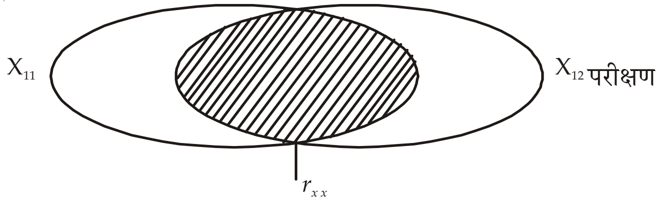

$r_{x,x}$ = विश्वसनीयता गुणक

विश्वसनीयता परीक्षण के आकार पर निर्भर करती है, जिसे अंग्रेजी भाषा में व्यक्त करते हैं कि—"Reliability is the function of the test length"

इसका तात्पर्य यह है कि एक परीक्षण में जितने अधिक पदों को सम्मिलित किया जाता है उतना ही परीक्षण अधिक विश्वसनीय होता है। जैसे—निबन्धात्मक परीक्षा में साधारणत: पांच प्रश्न सरल कराये जाते हैं इसलिए कम विश्वसनीय होता है और वस्तुनिष्ठ परीक्षा में लगभग सौ प्रश्न हल कराये जाते हैं, इसलिए अधिक विश्वसनीय होता है एक परीक्षण में पदों की संख्या बढ़ा देने से उसकी विश्वसनीयता भी बढ़ जाती है।

7.1 विश्वसनीयता का अर्थ तथा परिभाषा (Meaning and Definition of Reliability)

परीक्षण की विश्वसनीयता शिक्षा और मनोविज्ञान के विद्वानों ने कई प्रकार से की है, उनमें से प्रमुख परिभाषायें अधोलिखित है–

एनेस्टी के अनुसार–परीक्षण विश्वसनीयता विभिन्न अवसरों या समान पदों के विभिन्न विन्यासों में एक ही संगति प्राप्तांकों की ओर इंगित करती है।

"The reliability of a test refers to the consistency of scores, obtained by the same individual on different occassions with different sets of equivalent items." —*Anastasi*

गिलफोर्ड के अनुसार–विश्वसनीयता प्राप्त परीक्षण प्राप्तांकों में वास्तविक चरता का अनुपात है।

"Briefly reliability is the proportion of the true variance in obtained test scores." —*J.P. Guilford*

घिसेली के अनुसार–मापन की विश्वसनीयता को व्यक्ति के कुछ गुणों पर प्राप्तांकों के अव्यवस्थित विचलन की सीमा के रूप में परिभाषित किया गया है जबकि उस गुण को अनेक बार मापा गया है।

"Defined reliability of measurement as the extent of unsystematic variation in scores of an individual on some traits when that trait is measured a number of times." —*Ghiselli*

स्टोडोला एवं स्टोरडल के अनुसार–एक ही समूह के व्यक्तियों पर समरूप परीक्षण प्रशासित कर एवं दो से अधिक फलकों के विन्यासों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात करने के रूप में परीक्षण विश्वसनीयता को परिभाषित किया जा सकता है।

"The reliability of a test can be defined as the correlation between two or more sets of scores on equivalent test from the same group of individuals." —*Stodola and Stordahl*

एच० ई० गैरिट के अनुसार–एक परीक्षण या मानसिक मापन परीक्षण की विश्वसनीयता उस संगति पर निर्भर करती है जो उन व्यक्तियों की योग्यता का अनुमान लगाती है जिनके लिए उसका प्रयोग होता है।

"The reliability of a test of any measuring instrument depends upon the consistency with which it gauges the ability to whom it is applied." —*H.E. Garrett*

उपरोक्त परिभाषाओं से विश्वसनीयता के अर्थ का बोध होता है कि एक परीक्षण को एक ही समूह पर एक से अधिक बार देने पर प्राप्तांकों की समरूपता अथवा स्थायित्व कितना है।

नोट

> नोट्स परीक्षण की विश्वसनीयता सामान्यीकृत गुण नहीं होती अपितु वह एक विशेष जनसंख्या के लिए विशेष परिस्थितियों के लिए प्रयुक्त की जाती है।

विश्वसनीयता की मूलभूत परिभाषा (Basic Definition of Reliability)

सैद्धान्तिक रूप से परीक्षण की विश्वसनीयता का सम्बन्ध वास्तविक प्राप्तांकों से होता है, जो छात्र अंक प्राप्त करता है वह उसके वास्तविक अंक नहीं होते उनमें त्रुटि होती है, जिसे चर त्रुटि की संज्ञा दी जाती है। यह धनात्मक और ऋणात्मक दोनों हीं हो सकती है। इसका तात्पर्य यह है कि प्राप्तांक वास्तविक अंकों से कम भी हो सकते हैं। इस तथ्य को अधोलिखित रूप में जे. पी. गिलफोर्ड ने परिभाषित किया है–

"Reliability of any set of measurement is logically defined as the proportion of the variance that is true variance."
—*J.P. Guilford*

परीक्षण की वैधता को तार्किक ढंग से परिभाषित किया जा सकता है कि यह वास्तविक चरिता अंश होता है।

$$\text{विश्वसनीयता} = \frac{\text{वास्तविक अंकों की चरिता}}{\text{प्राप्तांकों की चरिता}} = \frac{\sigma_1^2}{\sigma_x^2}$$

गिलफोर्ड ने भी विश्वसनीयता की यही मूलभूत परिभाषा दी है। इस परिभाषा का स्पष्टीकरण इस प्रकार है। प्राप्तांक = (वास्तविक अंक + त्रुटि अंक)

वास्तविक अंक + त्रुटि अंक

X	T	E	प्राप्तांक

$$r_u = \frac{\sigma_1^2}{\sigma_x^2} = \frac{\text{वास्तविक अंकों की चरिता}}{\text{प्राप्तांकों चरिता}}$$

$$r_u = 1 - \frac{\sigma_e^2}{\sigma_x^2} = 1 - \frac{\text{त्रुटि अंक चरिता}}{\text{प्राप्तांकों चरिता}}$$

जबकि $X = T + E$

प्राप्तांक = (वास्तविक अंक + त्रुटि अंक)

$$\sigma_x^2 = \sigma_1^2 + \sigma_e^2$$

प्राप्तांक चरिता = वास्तविक अंक चरिता + त्रुटि अंक चरिता

$$\frac{\sigma_x^2}{\sigma_x^2} = \frac{\sigma_1^2}{\sigma_x^2} + \frac{\sigma_e^2}{\sigma_x^2}$$ (प्राप्तांक चरिता को भाग देने पर)

$$1 = r_u + \frac{\sigma_e^2}{\sigma_x^2} \quad \therefore \text{ चूँकि } \left(r_u = \frac{\sigma_1^2}{\sigma_x^2}\right)$$

$$\frac{\sigma_e^2}{\sigma_x^2} = 1 - r_u \Rightarrow \sigma_e^2 = \sigma_x^2 (1 - r_u)$$

$$\sigma_e^2 = \sigma_x^2 (1 - r_u)$$

नोट

$$\sigma_e = \sigma_x \sqrt{(1 - r_u)}$$

जबकि s_e = प्रमाणिक मापन त्रुटि होती है = SE_M

$$SE_M = \sigma_x \sqrt{(1 - r_u)}$$

उपरोक्त मूलभूत विश्वसनीयता की परिभाषा के आधार पर चर त्रुटि अथवा मापन के प्रामाणिक त्रुटि की गणना का सूत्र विकसित किया गया है। त्रुटि चर को ही मापन की त्रुटि (Error of measurement) कहा जाता है। इस त्रुटि की पहचान दो घटकों से की जाती है। प्रथम–**पूरक त्रुटि (Compensating error)** तथा द्वितीय–**व्यक्तिनिष्ठ त्रुटि (Baised error)**।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. निम्नलिखित कथनों में से 'सत्य' अथवा 'असत्य' लिखिए (State whether the following statements are 'True' or 'False')–

1. विश्वसनीयता से चर त्रुटि का बोध होता है।
2. सांख्यिकी में विश्वसनीयता स्व सह-सम्बन्ध होता है।
3. विश्वसनीयता परीक्षण का सामान्यीकृत गुण होता है।
4. प्राप्तांकों में वास्तविक अंक तथा त्रुटि सम्मिलित होते हैं।
5. विश्वसनीयता साधारणत: चार प्रकार की होती है।
6. विश्वसनीयता तथा वैधता में सम्बन्ध होता है।

7.2 विश्वसनीयता के प्रकार अथवा विश्वसनीयता की विधियाँ (Types of Reliability or Methods of Computing Reliability)

विश्वसनीयता के प्रकार तथा विश्वसनीयता की गणना करने की विधि एक ही होती है। जबकि वैधिता के प्रकार और उसकी विधियाँ अलग होती है।

विश्वसनीयता की गणना करने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने कई विधियों का विकास किया है। किसी परीक्षण की विश्वसनीयता की गणना करने की प्रमुख समस्या यह है कि वास्तविक अंकों की चरिता का अनुमान शुद्ध रूप में कैसे किया जाय अथवा त्रुटि अंक चरिता का अनुमान शुद्ध रूप में कर लिया जाये तो वास्तविक अंक चरिता निकाल सकते हैं। विश्वसनीयता गुणक वास्तविक अंक चरिता का अंश होता हैं प्राप्तांक चरिता उपलब्ध होती है। मनोवैज्ञानिकों ने इन विभिन्न विधियों द्वारा यही अनुमान लगाने का प्रयास किया है कि प्राप्तांक चरिता में वास्तविक अंक चरिता कितनी हो सकती है। जैसे–

$$\text{प्राप्तांक} = \text{वास्तविक अंक चरिता} + \text{त्रुटि चरिता}$$

$$\text{विश्वसनीयता गुणक} = \frac{\text{वास्तविक अंक चरिता}}{\text{प्राप्तांक चरिता}}$$

$$\text{विश्वसनीयता गुणक} = \frac{\text{प्राप्तांक चरिता} - \text{त्रुटि अंक}}{\text{प्राप्तांक चरिता}}$$

$$r_u = \frac{\sigma_x^2 - \sigma_1^2}{\sigma_x^2} = \frac{\sigma_e^2}{\sigma_x^2}, \qquad \sigma_e^2 = r_u \sigma_x^2$$

$$(\sigma_x^2 = \sigma_1^2 + \sigma_e^2), \qquad \sigma_e^2 = \sigma_x^2 - \sigma_1^2$$

विश्वसनीयता की गणना में वास्तविक अंक चरिता अथवा त्रुटि चरिता का अनुमान लगाने का प्रयास किया जाता है।

नोट

इसके लिए जिन प्रमुख विधियों को साधारणतया प्रयुक्त करते हैं वे अधोलिखित हैं—

ली जे॰ क्रानबैक ने अपनी पुस्तक में चार विधियों का उल्लेख किया है। इन्होंने विश्वसनीयता गुणक को स्वत: सह-सम्बन्ध बताया है।

(1) **स्थायित्व गुणक (Coefficient of Stability)**—अन्य मनोवैज्ञानिकों ने परीक्षण को पुन: परीक्षण विधि (Test retest method) की संज्ञा दी है।

(2) **तुल्यता गुणक (Coefficient of Equivalence)**—जिसे अन्य विद्वानों ने समान प्रारूप विधि अथवा विकल्प प्रारूप कहा है।

(3) **स्थायित्व एवं तुल्यता गुणक (Coefficient of Stability and Equivalence)**—अन्य विद्वान अर्द्ध-विच्छेद विधि (Split half method) भी कहते हैं।

(4) **आन्तरिक स्थायित्व गुणक (Coefficient of Internal consistency)**—अन्य विद्वान इसे तर्कयुक्त तुल्यता विधि (Rational Equivalence method) भी कहते हैं। इसे *कूडर रिचार्डसन* ने दिया है। इन विधियों के अतिरिक्त पाँचवी *ह्वाइट* ने दी है जो विश्वसनीयता गुणक का अनुमान अधिक शुद्ध रूप में करती है।

(5) **चरिता विश्लेषण विधि (Analysis of variance method)**—इस विधि का विकास हाइड ने किया है इसलिए इस विधि को ह्वाइड विश्वसनीयता (Hoyt Reliability) भी कहते हैं।

(1) स्थायित्व गुण (Coefficient of Stability)

क्रानबैक की इस विधि को गिलफोर्ड ने परीक्षण पुनर्परीक्षण विधि (Test Retest Reliability) कहा है। विश्वसनीयता की यह विधि सबसे सरल तथा सुगम विधि है। इस विधि में एक न्यादर्श का चयन करके यह परीक्षण दिया जाता है। तथा कुछ समयोपरान्त उसी न्यादर्श को वही परीक्षण दिया जाता है। इस प्रकार न्यादर्श के दो प्राप्तांक मिल जाते हैं। इन दोनों में सांख्यिकीय की प्रविधि द्वारा सह-सम्बन्ध की गणना की जाती है। इसी सह-सम्बन्ध गुणक को विश्वसनीयता गुणक (Coefficient of Stability) कहते हैं।

पुनर्परीक्षण विधि की अवधारणा (Assumptions of Coefficient of Stability)—इस विधि की निम्नलिखित अवधारणाएँ हैं—

1. परीक्षण में पदों की संख्या अधिक होती है इसलिए परीक्षार्थी पदों का स्मरण नहीं रख पाते, और अभ्यास का भी पुर्नपरीक्षण के प्राप्तांक पर प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. परीक्षार्थी की आन्तरिक योग्यता स्थायी होने के कारण परिपक्वता का भी प्रभाव पुनर्परीक्षण के प्राप्तांकों पर नहीं होता।

पुनर्परीक्षण विधि की विशेषताएँ (Characteristics of Coefficient of Stability)—इस विधि की निम्नांकित विशेषताएँ हैं—

1. यह विश्वसनीयता ज्ञात करने की सबसे सरल विधि है।
2. यह विधि गति परीक्षणों के लिए अधिक उपयुक्त है।
3. इस विधि में सांख्यिकी की सह-सम्बन्ध प्रविधि का प्रयोग सरलता से किया जाता है जो विश्वसनीयता गुणक होता है।
4. पुनर्परीक्षण की अवधि छ: माह से कम ही होनी चाहिए।

पुनर्परीक्षण विधि की सीमाएँ (Limitations of Coefficient of Stability)—इस विधि की अधोलिखित सीमाएँ है—

1. पुनर्परीक्षण के प्राप्तांकों पर स्मृति, अभ्यास, परिपक्वता एवम् कौशल का प्रभाव पड़ता है।
2. परीक्षणों का कठिनाई-स्तर समान नहीं होता है, इसलिए पदों की विजातीयता विश्वसनीयता गुणक को प्रभावित करती है।

नोट

3. इस विधि में समय और शक्ति अधिक अपव्यय होता है और विश्वसनीयता गुणक शुद्ध नहीं होता है। परीक्षण की वास्तविक विश्वसनीयता सदैव कम होती है।
4. पुनर्परीक्षण के समय न्यादर्श के सभी परीक्षार्थी का उपलब्ध होना भी सम्भव नहीं हो पाता है यह भी देखा गया है कि पुनर्परीक्षण में अभ्यर्थी इतने गम्भीर नहीं रहते, जिससे उनके प्राप्तांकों में अधिक अन्तर हो जाता है।

स्थायित्व गुणक का अर्थापन (Interpretation of Coefficient of Stability)—इस विधि द्वारा जो विश्वसनीयता गुणक प्राप्त होता है उसका अर्थापन अधोलिखित रूप में कर सकते हैं—

परीक्षार्थी	प्रथम बार	द्वितीय बार
1.	X_{11}	X_{21}
2.	X_{12}	X_{22}
3.	X_{13}	X_{23}
4.	X_{14}	X_{24}
⋮	⋮	⋮
N	N_{1N}	X_{2N}

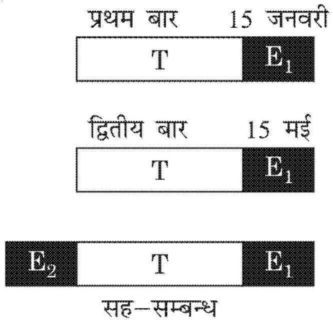

उसकी $X_1 = T + E_1$ $\quad x_1 = t = e_1$ विचलन

$X_2 = T + E_2$ $\quad x_2 = t = e_2$ विचलन

सहसम्बन्ध ज्ञात करने हेतु *पीयरसन सह-सम्बन्ध विधि* का प्रयोग करते हैं जिसका मूल सूत्र है—

$$r_{x_1x_2} = \frac{\Sigma\, x_1x_2}{N\, \sigma_{x_1}\sigma_{x_2}} \quad \therefore \quad x_1 = t + e_1$$

$$x_2 = t + e_2$$

$$= \frac{\Sigma(t + e_1)(t + e_2)}{N\, \sigma_{x_1}\sigma_{x_2}}$$

जबकि $\Sigma e_1 = 0,$ $\quad \Sigma e_2 = 0$ जब बड़े न्यादर्श करते है

$$= \frac{\Sigma\, t_2}{N\, \sigma_{x_1}\sigma_{x_2}} = \frac{\Sigma\, t_2}{N\, \sigma^2}$$

जबकि

$$\sigma_x = \sqrt{\frac{(\Sigma T - M)^2}{N}}$$

$$r_{xx} = \frac{\sigma_1^2}{\sigma_x^2} = \frac{\text{वास्तविक अंक चरिता}}{\text{प्राप्तांक अंक चरिता}}$$

इस विधि द्वारा विश्वसनीयता गुणक वास्तविक अंक चरिता का अंश होता है। यह विश्वसनीयता गुणक का सैद्धान्तिक आधार है। स्थायित्व गुणक का अर्थापन *क्रानबैक* ने एक आकृति की सहायता से किया है जिसमें दो प्रकार के गुणों को सम्मिलित किया है—सामान्य और विशिष्ट। यह स्थायी और दो प्रकार के गुण होते हैं जिन्हें निम्नांकित आकृति में प्रदर्शित किया है। स्थायित्व गुणक परीक्षण की स्थायी विशेषताओं के कारण होती हैं, जो परीक्षार्थी के सामान्य और विशिष्ट दोनों गुणों को सम्मिलित करती है। पुनर्परीक्षण में परीक्षा प्रथम बार पन्द्रह जनवरी को और दूसरी बार पन्द्रह मई को दी गयी है। इन दोनों प्राप्तांकों में सह-सम्बन्ध परीक्षण के स्थायी विशेषता पर निर्भर होता है जिसमें वास्तविक अंक के सामान्य और विशिष्ट दोनों कारक सम्मिलित होते हैं।

नोट

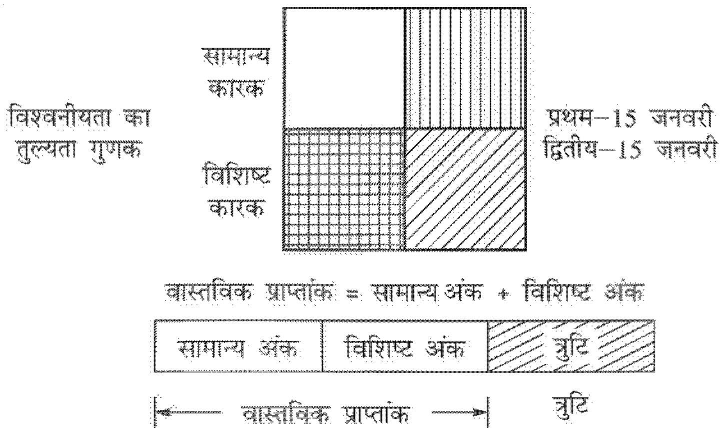

(2) तुल्यता गुणक अथवा समान्तर प्रारूप विधि या विकल्प प्रारूप विधि (Coefficient of Equivalence or Parallel form or Alternative Form Method)

यह विधि प्रथम विधि का सुधारात्मक रूप है। पहली विधि की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए इस विधि का विकास किया गया है, जिससे स्मृति, अभ्यास, परिपक्वता एवम् कौशलता आदि विश्वसनीयता गुणक को प्रभावित न कर सकें। इस विधि के अन्तर्गत दो समान्तर परीक्षणों की रचना की जाती है। एक ही प्रकारण पर दो परीक्षण समान पदों की संख्या तथा समान परीक्षण देने का समय रखा जाता है और पदों की विशेषताओं में समरूपता रखने का प्रयास किया जाता है। इन दोनों परीक्षणों को एक ही न्यादर्श पर एक ही दिन किया जाता है। दोनों परीक्षणों के प्राप्तांकों में सह-सम्बन्ध गुणक ज्ञात किया जाता है इसे तुल्यता गुणक कहते हैं।

तुल्यता गुणक विधि की अवधारणा (Assumptions of Coefficient of Equivalence)—इस विधि की अधोलिखित अवधारणाएँ हैं–

1. परीक्षण के दो समान्तर प्रारूप पाठ्यवस्तु पदों की संख्या पदों के प्रकार, पदों के कठिनाई स्तर व विभेदीकरण शक्ति और परीक्षण देने की दृष्टि से समान होते हैं।
2. इस विधि में परीक्षण के दोनों प्रारूपों को एक ही दिन दिया जाता है, इसलिए छात्रों की परिपक्वता विश्वसनीयता गुणक को प्रभावित नहीं करती हैं।
3. इन दोनों परीक्षणों के प्राप्तांकों के मध्य जो सह-सम्बन्ध होता है वह विश्वसनीय गुणक को प्रगट करता है। जिसे तुल्यता गुणक कहते हैं।

तुल्यता गुणक विधि की विशेषताएँ (Characteristics of Coefficient of Equivalence)—इस विधि की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

1. यह विधि पुनर्परीक्षण विधि के सुधार के रूप में विकसित की गयी है।
2. इस विधि में छात्रों की स्मृति, अभ्यास तथा परिपक्वता का प्रभाव नहीं होता है।
3. इस विधि में दोनों प्रारूपों को एक ही न्यादर्श पर दिया जाता है इसलिए समय की बचत होती है, जबकि पुनर्परीक्षण में समय की प्रतीक्षा की जाती है।

तुल्यता गुणक विधि की सीमाएँ (Limitations of Coefficient of Equivalence)—इस विधि की अधोलिखित सीमाएँ हैं–

1. परीक्षण के दो समान्तर प्रारूपों का बनाना एक कठिन कार्य है।
2. इस विधि में समय, धन और शक्ति तीनों का अधिक अपव्यय होता है, क्योंकि एक परीक्षण की रचना के बजाय दो परीक्षणों की रचना करनी होती है, जिसमें दो गुनी समय शक्ति और धन की आवश्यकता होती है।

नोट

3. **गिलफोर्ड** तथा अन्य विद्वानों ने सांख्यिकीय की दृष्टि से विश्वसनीयता गुणक को स्वत: सह-सम्बन्ध (Self Correlation) की संज्ञा दी है।
4. परीक्षण के दो समान्तर प्रारूप में पदों के कठिनाई स्तर तथा विभेदीकरण की शक्ति में समानता लाना सम्भव नहीं है।
5. इस विधि में एक ही दिन एक ही समूह को दोनों परीक्षण दिये जाते हैं इसलिए दुबारा के परीक्षण में थकान और रूचि प्रभावित करती है।

तुल्यता गुणक का अर्थापन (Interpretation of Coefficient of Equivalence)—इस विधि द्वारा जो विश्वसनीयता गुणक प्राप्त होता है उसका अर्थापन अग्रलिखित रूप में कर सकते हैं–

परीक्षार्थी	**प्रथम परीक्षा (X_1)**	**द्वितीय परीक्षा (X_2)**
1.	X_{11}	X_{21}
2.	X_{12}	X_{22}
3.	X_{13}	X_{23}
4.	X_{14}	X_{24}
⋮	⋮	⋮
N	N_{1N}	X_{2N}

$$\text{तुल्यता गुणक} = r_{x_1x_2} = \frac{\Sigma\, x_1x_2}{N\,\sigma_{x_1}\sigma_{x_2}}$$

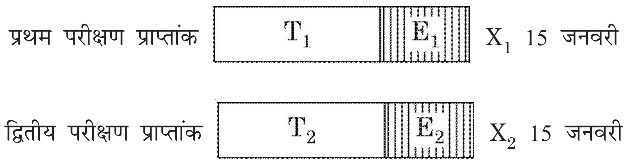

$T = (\text{सामान्य} + \text{विशिष्ट}_1)$ अंक

$= G + S_1 \quad \therefore \quad X_1 = G + S_1 + E_1$

$T_2 = (\text{सामान्य} + \text{विशिष्ट}_2)$ अंक

$= G + S_2 \quad \therefore \quad X_2 = G + S_2 + E_2$

इस विधि में दो समान्तर परीक्षणों के प्राप्तांकों में सह-सम्बन्ध उनके सामान्य कारकों की वजह से आता है। इस प्रकार विश्वसनीयता गुणक पुनर्परीक्षण विधि से कम होता है। क्योकि प्राप्तांक में विशिष्ट कारक और आ जाता है।

तुल्यता गुणक का अर्थापन क्रानबैक ने भी सामान्य तथा विशिष्ट कारकों और उनके स्थायी विशेषता के रूप में किया है–

नोट

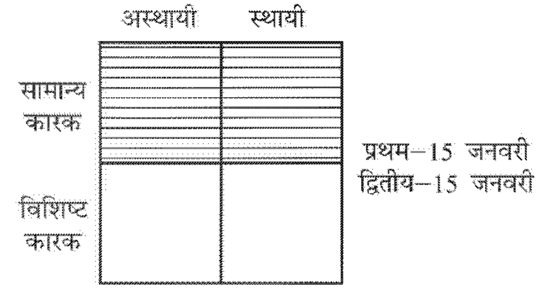

विश्वनीयता का तुल्यता गुणक

वास्तविक प्राप्तांक = सामान्य अंक + विशिष्ट अंक

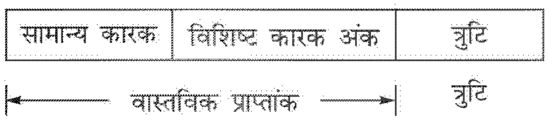

तुल्यता गुणक परीक्षण के सामान्य कारक अंकों के स्थायी और अस्थायी गुणों पर आधारित होती है। इस विधि के अन्तर्गत परीक्षण के दो समान्तर प्रारूप एक ही दिन एक ही न्यादर्श को दिये जाते हैं इसलिए उन दोनों प्रारूपों के प्राप्तांकों में सह-सम्बन्ध सामान्य कारक के स्थायी और अस्थायी दोनों गुणों पर आश्रित होता है, जबकि पुनर्परीक्षण में सामान्य और विशिष्ट कारकों के स्थायी गुण पर आधारित होते हैं। इसलिए पुनर्परीक्षण गुणक, तुल्यता गुणक से सदैव अधिक होता है।

(3) स्थायित्व एवं तुल्यता गुणक अथवा अर्द्ध विच्छेद विधि (Coefficient of Stability and Equivalence or Split half Method)— विश्वसनीयता ज्ञात करने की यह विधि उपरोक्त दोनों विधियों की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए इस विधि का विकास किया गया है। इस विधि में परीक्षण को न्यादर्श के परीक्षार्थियों को एक ही बार दिया जाता है और एक ही बार के प्राप्तांकों का विश्लेषण करके विश्वसनीयता गुणक ज्ञात कर लिया जाता है। इस विधि में परीक्षण के पदों को दो समान भागों में विभाजित कर लिया जाता है, जैसे—(Even) समक्रम संख्याओं के पदों को एक खण्ड में और दूसरे विषमक्रम में (Odd) विषमक्रम संख्याओं के पदों को दूसरे खण्ड में सम्मिलित करते हैं, और प्रत्येक छात्र के प्राप्तांक को भी इसी प्रकार दो खण्डों में अलग-अलग अंकन करके व्यवस्थित करते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि एक परीक्षार्थी के उत्तरों का अंकन समक्रम संख्याओं के पदों का अंकन पृथक रूप में करते हैं और दूसरी बार विषमक्रम संख्याओं के पदों का अंकन करते हैं। इन दोनों खण्डों के प्राप्तांकों में *पीयर्सन* की विधि द्वारा सह-सम्बन्ध की गणना करते हैं। यह सह-सम्बन्ध गुणक आधे परीक्षण की विश्वसनीयता को प्रदर्शित करता है। इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—

परीक्षार्थी	**प्रथम खण्ड (X_1) सम क्रमसंख्या पद**	**द्वितीय खण्ड (X_2) विषम क्रमसंख्या पद**
1.	X_{11}	X_{21}
2.	X_{12}	X_{22}
3.	X_{13}	X_{23}
4.	X_{14}	X_{24}
⋮	⋮	⋮
N	N_{1N}	X_{2N}

विश्वसनीयता गुणक (आधे परीक्षण की) $r_{x_{1,2}x_{1,2}} = \dfrac{\Sigma\, x_1 x_2}{N\, \sigma_{x_1} \sigma_{x_2}}$

नोट

उपरोक्त विधि द्वारा आधे परीक्षण की विश्वसनीयता गुणक की गणना की जाती है। सम्पूर्ण परीक्षण की विश्वसनीयता गुणक के लिए *स्पीयरमेन ब्राउन प्रोफेसी सूत्र* (Spearman Brown Prophesy Formula) का प्रयोग करते हैं जो निम्नांकित है–

$$r_{xx} = \frac{nr_{x_{1,2}x_{1,2}}}{1+(n-1)\,r_{x_{1,2}x_{1,2}}}$$ आधे परीक्षण का सहसम्बन्ध गुणक ज्ञात होता है।

अथवा $$r_u = \frac{nr_{t/2t/2}}{1+(n-1)r_{t/2t/2}} = \frac{2r_{t/2t/2}}{1+r_{t/2t/2}}$$ सम्पूर्ण परीक्षण हेतु दुगना करना होता है।

जबकि r_u = सम्पूर्ण परीक्षण की विश्वसनीयता

n = परीक्षण के आधार में वृद्धि अर्थात दुगना

$r_{t/2t/2}$ = आधे परीक्षण की विश्वसनीयता

उदाहरण–आधे परीक्षण की विश्वसनीयता .80 है तो सम्पूर्ण परीक्षण की विश्वसनीयता ज्ञात कीजिए। परीक्षण का आकार दुगना (n = 2) होगा।

$$r_u = \frac{2 \times .80}{1+.80} = \frac{1.60}{1.80} = \frac{8}{9} = \mathbf{0.89}$$

अर्द्ध-विच्छेद विधि की अवधारणा (Assumptions of Split-half Method)–इस विधि की अवधारणाएँ अधोलिखित हैं–

1. परीक्षण के सभी पदों का कठिनाई स्तर समान होता है इसलिए दो खण्डों में बाँटने से दोनों समान होते हैं। इसलिए इसे तुल्यता गुणक कहते हैं।
2. दोनों खण्डों के विभाजन में यह भी ध्यान रखा जाता है कि पाठ्यवस्तु भी दोनों में समान हो, इसलिए स्थायित्व (Satability) गुणक भी कहते हैं।
3. दोनों खण्डों में पदों की संख्या समान होती है तथा दोनों खण्डों के पदों को सरल करने में समय भी समान लगता है।
4. इस विधि में सम्पूर्ण परीक्षण का विश्वसनीयता गुणक ज्ञात करने में **स्पीयरमैन ब्राउन प्रोफेसी** सूत्र का प्रयोग आवश्यक होता है। अतः इस सूत्र की अवधारणाएँ भी इस विधि में मान्य होती हैं–

अर्द्ध-विच्छेद विधि के विशेषताएँ (Characteristics of Split-half Method)–इस विधि की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

1. उपरोक्त दोनों विधियों की सीमाओं का इस विधि में पूर्ण रूप से सुधार किया गया है।
2. विश्वसनीयता गुणक को स्मृति, अभ्यास, कौशल परिपक्वता आदि कारक प्रभावित नहीं करते हैं।
3. यह विधि समय, शक्ति और धन की दृष्टि से मितव्ययी है। क्योंकि इसमें परीक्षण एक ही बार किया जाता है।
4. यह विधि गति परीक्षण अथवा सजातीय परीक्षण की विश्वसनीयता के लिए अधिक उपयुक्त है, क्योंकि इसकी अवधारणा यह है कि पदों का कठिनाई-स्तर समान होता है।

अर्द्ध विच्छेद विधि के उपयोग (Use of Split-halfs Method)–इस विधि का प्रयोग अधोलिखित परीक्षणों के लिए किया जाता है–

1. इस विधि में आकस्मिक त्रुटि में विश्वसनीयता गुणक के अधिक होने की सम्भावना रहती है।
2. परीक्षण को दो खण्डों में कई प्रकार से विभाजित कर सकते हैं, जैसे–आरम्भ के पचास प्रतिशत और अन्त के पचास प्रतिशत अथवा विषम क्रमसंख्या और सम क्रमसंख्या के पदों को अथवा लॉटरी प्रणाली के द्वारा आदि।

नोट

प्रत्येक विभाजन से विश्वसनीय गुणक अलग-अलग प्राप्त होगा, इसलिए कौन-सा विभाजन उत्तम है यह निर्णय लेना भी कठिन हो जाता है।

3. परीक्षण के पदों को दो समान खण्डों में विभाजित करना सम्भव नहीं है, क्योंकि किसी प्रकार के विभाजन से दो खण्डों का प्रारूप प्रत्येक दृष्टि से समान नहीं हो सकता है।
4. इस विधि को शक्ति परीक्षण (Power test) अथवा विजातीय पदों के परीक्षण में प्रयुक्त नहीं कर सकते हैं।

अर्द्ध-विच्छेद विश्वसनीयता का अर्थापन (Interpretation of Split-half Reliability)—इस विधि द्वारा जो विश्वसनीयता गुणक प्राप्त होता है उसका अर्थापन तुल्यता गुणक के समान ही कर सकते हैं। इस विधि में दोनों खण्डों के सामान्य कारक अंकों के स्थायी और अस्थायी गुणों पर निर्भर होते हैं। क्योंकि एक परीक्षण के दो खण्ड किए जाते हैं उन दोनों के विशिष्ट कारक और त्रुटि पृथक् हो जबकि सामान्य कारक अंक दोनों के एक हों। अत: विश्वसनीयता-गुणक सामान्य कारक अंक के स्थायी और अस्थायी गुणों पर आश्रित होता है। इस विधि से प्राप्त विश्वसनीयता गुणक वास्तविक से कम होता है।

(4) आन्तरिक स्थायित्व गुणक अथवा तर्कयुक्त तुल्यता विधि अथवा कूडर रिचर्डसन विधि (Coefficient of Internal Consitency or Rational Equivalence Method or Kuder Richardson Method or K.R. Reliability)

यह विधि *कूडर रिचर्डसन* ने विकसित की है इस विधि द्वारा उपरोक्त तीनों विधियों की सीमाओं को ध्यान में रखकर विधि विकसित की गयी है। वास्तव में यह विधि प्रत्यक्ष स्वरूप में अर्द्ध विच्छेद विधि का सुधार रूप है इसमें सांख्यिकीय विधियों एवम् सूत्रों को प्रयोग किया गया है। इसके अन्तर्गत पदों के पारस्परिक सम्बन्ध तथा पदों के समस्त परीक्षण से सह-सम्बन्ध के बारे में जानकारी को महत्व दिया जाता है। इस विधि में पदों चरिता के योग का मापन किया जाता है।

कूडर रिचार्डसन ने विश्वसनीयता की गणना के लिए कई सूत्रों का विकास किया है। यहाँ पर केवल दो सूत्रों का उल्लेख किया गया है—

प्रथम वह सूत्र जो सबसे शुद्ध तथा व्यावहारिक है, इसे के॰ आर॰—20 (KR-20) कहते हैं। इसे के॰ आर विश्वसनीयता भी कहते हैं—

$$r_u = \left(\frac{n}{n-1}\right)\left(\frac{\sigma_1^2 - \Sigma\, pq}{\sigma_1^2}\right) \qquad \text{...KR-20}$$

जबकि n = परीक्षण में पदों की संख्या

σ_1^2 = सम्पूर्ण समूह के प्राप्तांकों की चरिता

p = एक पद को सही करने का अंश

q = $(1 - p)$ एक पद को गलत करने का अंश

Σ = योग

उदाहरण—परीक्षण के पदों की संख्या 60 तथा प्रमाणिक विचलन 8.50 है और Σpq का मान 12.43 है।

$$r_u = \left(\frac{60}{60-1}\right)\left(\frac{8.50^2 - 12.43}{8.50^2}\right) \qquad \text{...KR-20}$$

$$= \frac{60}{59} \times \frac{72.25 - 12.43}{72.25}$$

$$= \frac{60 \times 59.82}{59 \times 72.25} = \frac{3589.2}{4262.75} = \mathbf{.84}$$

नोट

द्वितीय वह सूत्र जो सबसे सरल और अधिक उपयोगी सूत्र माना जाता है परन्तु विश्वसनीयता गुणक अधिक शुद्ध नहीं होता अपितु लगभग जिसे के॰ आर॰–21 (KR-21) कहते हैं।

$$r_u = \frac{n\,\sigma_1^2 - M(n - M)}{\sigma_1^2(n-1)} \quad \text{...KR-21}$$

जबकि r = विश्वसनीयता गुणक

n = परीक्षण के पदों की संख्या

σ = प्राप्तांकों का प्रमाणिक विचलन

M = प्राप्तांकों का मध्यमान

उदाहरण–परीक्षण के पदों की संख्या 60, प्रामाणिक विचलन 8 और प्राप्तांकों का मध्यमान 40 है। के॰ आर॰ 21 से विश्वसनीयता गुणक की गणना कीजिए।

$$r_u = \frac{60 \times 64 - 40(60 - 40)}{64(60 - 1)} \quad \text{...KR-21}$$

$$= \frac{60 \times 64 - 40 \times 20}{64 \times 59} = \frac{3040}{3776} = \mathbf{0.81}$$

इस विधि में परीक्षण को अर्द्ध विच्छेदित विधि की भाँति एक ही बार दिया जाता है और जो प्राप्तांक मिलते हैं उनको विश्लेषण करके सूत्र के अनुसार अपेक्षित सांख्यिकी की गणना करते हैं और सूत्र में उनका मान रखकर विश्वसनीयता गुणक ज्ञात कर लिया जाता है।

तार्किक तुल्यता गुणक विधि की अवधारणा (Assumptions of Rational Equivalence Method)–कूडर रिचार्डसन ने अपनी विधि में अधोलिखित अवधारणाओं को प्रयुक्त किया है।

1. एक परीक्षण के सभी पदों का कठिनाई स्तर समान होता है। पद की कठिनाई स्तर परीक्षार्थी की जानकारी पर निर्भर करता है। यदि वह पद को जानता है तो सरल है और यदि पद की जानकारी नहीं है तो कठिन है। पद की कठिनाई जानने पर निर्भर करती है।
2. यह दूसरी अवधारणा भी पहली से सम्बन्धित है कि पदों का कठिनाई स्तर समान होते हुए यह आवश्यक नहीं कि एक व्यक्ति प्रत्येक पद को सही कर ले।
3. कूडर रिचार्डसन ने अपने सूत्रों में पदों की चरिता को महत्व नहीं दिया है अपितु परीक्षार्थियों के प्राप्तांकों की ही चरिता का प्रयोग किया है।

तार्किक तुल्यता गुणक विधि की विशेषताएँ (Characteristics of Rational Equivalence method)–इस विधि की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. यह विधि अर्द्धविच्छेद विधि के सुधार के रूप में विकसित की गयी है। अर्द्धविच्छेद विधि की सीमाओं को ध्यान में रखा गया है।
2. यह विधि अपेक्षाकृत मितव्ययी है, क्योंकि परीक्षण को एक ही बार देकर उनके प्राप्तांकों का विश्लेषण करके विश्वसनीयता की गणना कर लेते हैं।
3. इस विधि के अन्दर कूडर ने ऐसे सूत्रों का विकास किया है, जिससे शुद्ध विश्वसनीयता गुणक की गणना की जा सकती है, इसके अतिरिक्त ऐसा भी सूत्र दिया है जिनके प्रयोग से शीघ्र ही विश्वसनीयता गुणक ज्ञात कर सकते हैं।
4. यह सबसे उत्तम प्रकार की सरल विधि है, इसका प्रयोग ऐसे परीक्षणों के लिए उत्तम होता है जिनमें कठिनाई स्तर की दृष्टि से सजातीय पदों को सम्मलित किया जाता है। यह विधि गति परीक्षणों के लिए अधिक उपयोगी है।

तार्किक तुल्यता गुणक विधि की सीमाएँ (Limitations of Rational Equivalence Method)—इसकी प्रमुख सीमाएँ अधोलिखित हैं—

1. इस विधि का दोष यह है कि विश्वसनीयता की गणना में पदों के कठिनाई स्तर को महत्व नही दिया जाता है। कूडर ने इन सूत्रों का विकास यह मानकर किया है कि पदों का कठिनाई स्तर समान होता है।
2. इस विधि से विश्वसनीयता गुणक वास्तविकता से कम आता है क्योंकि सूत्रों में विश्वसनीयता की गणना में पदों की चरिता को अलग नहीं किया जाता है। पदों का अपना कठिनाई स्तर होता है।
3. इस विधि का प्रयोग शक्ति परीक्षणों (Power test) अथवा विजातीय पदों के परीक्षण के लिए अधिक उपयोगी नहीं है।

तार्किक तुल्यता विश्वसनीयता का अर्थापन (Interpretation of Rational Equivalence Reliability)—इस विधि द्वारा प्राप्त विश्वसनीयता गुणक सामान्य और विशिष्ट कारकों के स्थायी और अस्थायी गुणों पर आधारित होती है। क्योंकि परीक्षण को एक ही बार देकर विश्लेषण द्वारा विश्वसनीयता की गणना की जाती है।

(5) चरिता विश्लेषण विधि अथवा ह्वाइट विश्वसनीयता (Analysis Variance Method or Hoyt's Reliability)

यह विधि उपरोक्त सभी विधियों के सुधार के रूप में है, क्योंकि उपरोक्त सभी विधियों की यह अवधारणा है कि परीक्षण के पदों का कठिनाई-स्तर समान होता है और पद की कठिनाई परीक्षार्थी की जानकारी पर निर्भर करती है। परन्तु यह अवधारणा न्याय संगत नहीं है। क्योंकि पद विश्लेषण (Item Analysis) में पदों का चयन उनके कठिनाई-स्तर और विभेदीकरण की शक्ति को ध्यान में रखकर किया जाता है। इससे स्पष्ट है कि परीक्षार्थी की जानकारी के साथ-साथ पद का कठिनाई स्तर भी होता है। शक्ति परीक्षण और गत्यात्मक परीक्षण (Speeded Test) में पदों को कठिनाई स्तर के आधार पर परीक्षण में रखा जाता है। सबसे सरल सबसे पहले और सबसे कठिन सबसे अन्त में, यह क्रम रखा जाता है। अत: उपरोक्त चारों विधियाँ गति परीक्षण (Speed test) की विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए उपयुक्त प्रतीत होती है। गत्यात्मक परीक्षण की विश्वसनीयता के लिए प्रयुक्त करने पर शुद्ध विश्वसनीयता गुणक नहीं प्राप्त होता है।

ह्वाइट (Hoyt) ने अपनी विधि चरिता विश्लेषण में पद चरिता और परीक्षार्थी चरिता दोनों को महत्व दिया है। प्राप्तांकों की चरिता में से पदों की चरिता को घटाकर विश्वसनीयता गुणक की गणना की जाती है। इस तथ्य का स्पष्टीकरण यहाँ किया गया है। यह गुणक अपेक्षाकृत अधिक होता है—

$$\text{विश्वसनीयता गुणक} = \frac{\text{वास्तविक अंक की चरिता}}{\text{प्राप्तांक चरिता}} \quad r_{tt} = \frac{\sigma_t^2}{\sigma_x^2}$$

ह्वाइट के अनुसार विश्वसनीयता—

$$\text{विश्वसनीयता गुणक} = \frac{\text{वास्तविक अंकों की चरिता}}{\text{प्राप्तांक चरिता} - \text{पदों की चरिता}}$$

$$r_{tt} = \frac{\sigma_t^2}{\sigma_x^2 - \sigma_i^2}$$

जबकि σ_i^2 = पद चरिता

σ_X^2 = अंकों की चरिता

σ_t^2 = वास्तविक अंकों की चरिता

उपरोक्त सूत्र से स्पष्ट होता है कि पद चरिता के घटाने पर भाजक कम हो जायेगा जिससे विश्वसनीयता गुणक पहले से अधिक प्राप्त होगा जो वास्तविक विश्वसनीयता गुणक के समीप होगी। इस प्रकार अधिक शुद्ध गुणांक प्राप्त होता है।

नोट

हाइट ने पदों के अंक और परीक्षार्थियों के प्राप्तांकों के आधार पर द्विमार्गी कारकीय प्रारूप बनाया और उसमें चरिता विश्लेषण प्रविधि का प्रयोग करके विश्वसनीयता गुणक को ज्ञात करने की विधि का विकास किया। विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए हाइट ने जो मूलसूत्र दिया वह इस प्रकार है–

$$r_n = 1 - \frac{V_r}{V_e} = \frac{V_e - V_r}{V_e}$$

जबकि r_{tt} = विश्वसनीयता गुणक

V_e = परीक्षार्थी चरिता

V_t = शेष के योग के वर्ग की चरिता

$$\Sigma d_e^2 = \frac{\Sigma X_i^2}{n} - \frac{(\Sigma X_t)^2}{nN}$$

जबकि Σd_e^2 = परीक्षार्थी के प्राप्तांकों के वर्गो का योग

X_t = प्रत्येक परीक्षार्थी के प्राप्तांक

n = परीक्षण में पदों की संख्या

N = न्यादर्श में परीक्षार्थी की संख्या

$$\Sigma d_t^2 = \frac{\Sigma R_i^2}{N} - \frac{(\Sigma X_t)^2}{Nn}$$

जबकि Σd_i = पदों के अंकों के वर्ग का योग

R_i = सही उत्तरों की संख्या

ΣX_t^2 = सम्पूर्ण प्राप्तांकों के वर्गो का योग

N = न्यादर्श में परीक्षार्थियों की संख्या

$$\Sigma X_t^2 = \frac{(\Sigma R_i)(\Sigma W_i)}{\Sigma R_i + \Sigma W_i}$$

W_i = गलत उत्तरों की संख्या

$$\Sigma X_r^2 = \Sigma X_i^2 - (\Sigma d_e + \Sigma d_i)^2$$

जबकि X_i = शेष अंक

चरिता विश्लेषण की तालिका

चरिता का स्त्रोत	अंश की स्वतंत्रता	वर्गों का योग	वर्गों के योग का मध्यमान
परीक्षार्थी V_e	$(N-1)$	ΣX_e^2	$[\Sigma X_e^2 / (N-1)] = V_e$
पद V_i	$(n-1)$	ΣX_i^2	$[\Sigma X_i^2 / (n-1)] = V_i$
शेष V_e	$(N-1)(n-1)$	अन्तर	$[SX_r^2 / (N-1)(n-1)] = V_r$
योग V_X	$(N-1) + (n-1) + (N-1)(n-1)$	ΣX_i^2	

$$r_{tt} = \frac{V_e - V_r}{V_e} = \frac{\Sigma d_e^2 - \Sigma d_r^2}{\Sigma d_e^2}$$

हाइट की विधि को स्पष्ट करने हेतु एक उदाहरण यहाँ दिया गया है जिसकी सहायता से इसे स्पष्ट समझ सकते हैं।

नोट

प्रथम सोपान—परीक्षार्थियों के प्राप्तांकों के वर्गों का योग

$$Sd_e^2 = \frac{\Sigma X_i^2}{n} - \frac{(\Sigma X_i)^2}{nN}$$

$$= \frac{517}{12} - \frac{65^2}{12 \times 10} = 43.08 - 35.20 = \mathbf{7.88}$$

परीक्षार्थी के उत्तरों की मूल्यांकन प्रक्रिया

पद परीक्षार्थी	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	X_t	X_t^2
1	√	√	2	4										
2	√	√	√	√	4	16								
3	√	√	√	√	4	16								
4	√	√	√	√	√	5	25							
5	√	√	√	√	√	5	25							
6	√	√	√	√	√	√	6	36						
7	√	√	√	√	√	√	√	7	49					
8	√	√	√	√	√	√	√	√	√	9	81			
9	√	√	√	√	√	√	√	√	√	√	√	11	121	
10	√	√	√	√	√	√	√	√	√	√	√	√	12	144
R_i	10	9	9	7	6	6	5	4	3	3	2	1	65	$\Sigma X_i^2 = 517$
W_i	0	1	1	3	4	4	5	6	7	7	8	9	55	$\Sigma R_i^2 = 447$
p	1.0	.9	.9	.7	.6	.6	.5	.4	.3	.3	.2	.1		
q	0	.1	.1	.3	.4	.4	.5	.6	.7	.7	.8	.9		
pq	0	.09	.09	.21	.24	.24	.25	.24	.21	.21	.16	.09	Σpq	2.03

यहाँ पर $n = 12$, $N = 10$,

$M_i = 6.50$, $\sigma_i^2 = 9.45$

द्वितीय सोपान—पदों के अंकों के वर्गों का योग

$$\Sigma d_i^2 = \frac{\Sigma R_i^2}{N} - \frac{(\Sigma X_i)^2}{nN} = \frac{447}{10} - 35.20$$

$$= 44.70 - 35.20 = \mathbf{9.50}$$

तृतीय सोपान—प्राप्तांकों के वर्गों का योग

$$\Sigma X_i^2 = \frac{\Sigma R_i \times \Sigma W_i}{\Sigma R_i + \Sigma W_i}$$

$$= \frac{65 \times 55}{65 + 55} = \frac{3575}{120} = \mathbf{29.80}$$

नोट

चतुर्थ सोपान–

चरिता विश्लेषण तालिका

चरिता का स्त्रोत	अंश की स्वतंत्रता	वर्गों का योग	वर्गों का मध्यमान
1. परीक्षार्थियों की	(10 – 1) = 9	7.88	$0.875 = V_e$
2. पदों की	(12 – 1) = 11	9.50	$0.863 = V_i$
3. शेष अथवा त्रुटि	99	12.43	$0.126 = V_r$
चरिता का योग	199	29.80	

$$r_{tt} = \frac{V_e - V_r}{V_e} = \frac{.875 - .126}{.875} = \frac{.749}{.875} = \mathbf{0.875}$$

= **.875** अथवा 0.88 विश्वसनीयता गुणक

इस विधि में दो भुजी तालिका (परीक्षार्थी पद) तैयार की जाती है इसका प्रयोग कूडर के सूत्रों के लिए भी उपयोगी है तथा चरिता विश्लेषण में प्रयुक्त किया जाता है। इस विधि की प्रमुख विशेषता है कि पदों के अंकों की चरिता की गणना करके तब विश्वसनीयता गुणक ज्ञात किया जाता है।

चरिता विश्लेषण विधि की अवधारणाएँ (Assumptions of Analysis Variance Method)–इस विधि की प्रमुख विशेषताएँ अधोलिखित हैं–

1. परीक्षण के पदों के कठिनाई स्तर में भिन्नता होती है और परीक्षण के पद विजातीय होते हैं।
2. प्राप्तांकों की चरिता में परीक्षार्थियों की चरिता पदों की चरिता तथा त्रुटि भी सम्मिलित होती है।

$$\sigma_x^2 = \sigma_e^2 + \sigma_i^2 + \sigma_r^2$$

चरिता = परीक्षार्थी + पद + त्रुटि

जबकि σ_x^2 = प्राप्तांकों की चरिता

σ_e^2 = परीक्षार्थियों की चरिता

σ_i^2 = पदों की चरिता

σ_r^2 = शेष अथवा त्रुटि

उपयोगिता (Advantage)–इस चरिता विश्लेषण विधि की अधोलिखित उपयोगिता है–

1. उपरोक्त दी गई चारों विधियों के सुधार के रूप में इनकी सभी सीमाओं को ध्यान में रखकर विकसित किया गया है।
2. इस विधि से प्राप्त विश्वसनीयता गुणक वास्तविक विश्वसनीयता गुणक के अधिक समीप होती है। जबकि उपरोक्त विधियों द्वारा प्राप्त गुणक वास्तविक गुणक से कम होता है।
3. इस विधि का प्रयोग शक्ति परीक्षण तथा गत्यात्मक परीक्षण के लिए अधिक उपयुक्त है। इसका प्रयोग नीति परीक्षण के लिए भी किया जा सकता है।
4. इस विधि द्वारा प्राप्त विश्वसनीयता गुणक सामान्य और विशिष्ट गुणों के स्थायी और अस्थायी दोनों पक्षों पर निर्भर होता है।

सीमाएँ (Limitations)–इस विधि की अधोलिखित सीमाएँ हैं–

1. इस विधि में सांख्यिकी की चरिता विश्लेषण प्रविधि का प्रयोग किया जाता है अत: इस विधि में ज्ञान और कौशल की आवश्यकता होती है।
2. दो भुजीय तालिका का तैयार करना भी कठिन कार्य है बड़े न्यादर्श तथा परीक्षण का आकार बड़ा होने पर असम्भव-सा प्रतीत होता है।

नोट

विश्वसनीयता के प्रकार

किसी परीक्षण की विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए अनेक विधियों का विकास किया गया है। इन विधियों में गुणक की शुद्धता को महत्व दिया है। प्रत्येक विधि की अपनी सीमायें है। अधिकांश विधियाँ पदों के कठिनाई स्तर को महत्व नहीं देती अपितु सभी को समान कठिनाई स्तर का मानती है। विश्वसनीयता के प्रकार भी वही हैं जो विधियाँ हैं। विश्वसनीयता के मुख्य प्रकार निम्न है—

विश्वसनीयता के प्रकार	विश्वसनीयता की प्रकृति
1. पुनर्परीक्षण	स्थायित्व गुणक
2. समान प्रारूप विश्वसनीयता	तुल्यात्मक गुणक
3. अर्द्ध-विच्छेद विश्वसनीयता	स्थायित्व एवं तुल्यात्मक गुणक
4. के. आर. विश्वसनीयता	आन्तरिक स्थायित्व
5. ह्वाइट विश्वसनीयता चरिता विश्लेषण	आन्तरिक स्थायित्व

कुडर-रिचर्डसन ने विश्वसनीयता के लिए कई सूत्रों को दिया है। कुछ सूत्र अधिक शुद्ध गुणक प्रदान करते हैं।

विश्वसनीयता ज्ञात करने की विधियाँ एवं प्रकार

(Methods & Types of Estimating Reliability)

विश्वसनीयता की विधि	विश्वसनीयता गुणक का स्वरूप	प्रक्रिया
1. पुनर्परीक्षण विधि	स्थायित्व गुणक (Stability)	एक परीक्षण को एक समूह पर दो बार देकर उनमें सह-सम्बन्ध ज्ञात करते हैं।
2. समान प्रारूप विधि	तुलनात्मक गुण (Equivalence)	दो समानान्तर परीक्षणों की रचना की जाती है और एक समूह को दोनों परीक्षण दिये जाते हैं और उनमें सह-सम्बन्ध ज्ञात करते हैं।
3. अर्द्ध-विच्छेद विधि	स्थायित्व एवं तुल्यात्मक (Stability & Equivalence)	एक परीक्षण को एक समूह पर एक बार ही देकर परीक्षण को दो समान भागों में विभाजित करते है। (Odd and Even No. Question) उनमें सह-सम्बन्ध ज्ञात करके स्पीयरमैन ब्राउन सूत्र से विश्वसनीयता ज्ञात करते है।
4. कुडर-रिचार्डसन (K-R) विधि	आन्तरिक स्थायित्व गुणक (Internal Consistency)	के. आर. ने अनेक सूत्रों का विकास किया जिसमें सांख्यिकीय मानो को रखकर विश्वसनीयता की गणना करते है। परीक्षण को समुहबद्ध कर दिया जाता है। उन प्रदत्तों का विश्लेषण करके सूत्र का उपयोग करते है।
5. ह्वाइट विधि तथा चरिता-विश्लेषण विधि	आन्तरिक स्थायित्व गुणक (Internal Consistency)	परीक्षण को एक ही बार दिया जाता है और प्राप्तांकों को छात्रों के अनुसार तथा प्रश्नों के अनुसार ज्ञात करके चरिता विश्लेषण का उपयोग करके विश्वसनीयता ज्ञात कर लेते है। प्रश्नों की कठिनाई स्तरों को महत्व दिया जाता है।

नोट

> *क्या आप जानते हैं* परीक्षण के पदों का कठिनाई-स्तर समान होता है पद की कठिनाई परीक्षार्थी की जानकारी पर निर्भर करती है। यदि परीक्षार्थी को पद की जानकारी है तो वह सरल होता है और यदि पद की जानकारी नहीं है तो कठिन होता है।

7.3 विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले घटक (Factors Affecting Reliability of Test

एक परीक्षण के विश्वसनीयता गुणांक को प्रभावित करने वाले अनेक कारक होते हैं उनमें से प्रमुख कारणों का उल्लेख अधोलिखित है–

(1) परीक्षण का आकार अथवा परीक्षण में पदों की संख्या (Length of the Test)–*परीक्षण की विश्वसनीयता उसके आधार पर निर्भर होती है।* अर्थात् जिस परीक्षण में पदों की संख्या अधिक होती है उसकी विश्वसनीयता भी अधिक है। निबन्धात्मक परीक्षणों में पदों या प्रश्नों की संख्या कम होती है इसलिए विश्वसनीय नहीं होता है अर्थात् प्राप्तांकों में स्थायित्व नहीं होता है जबकि वस्तुनिष्ट परीक्षाओं में पदों की संख्या अधिक होती है इसलिए वह विश्वसनीय अधिक होते हैं। पदों की संख्या अधिक होने से सम्पूर्ण प्रकरणों को सम्मिलित कर लिया जाता है जिससे वास्तविक अंकों में वृद्धि होती है और विश्वसनीयता गुणांक बढ़ जाता है।

स्परीयरमैन ब्राउन–प्रोफेसी सूत्र भी इस कारक से सम्बन्धित है कि आकार बढ़ाने से विश्वसनीयता गुणांक बढ़ जाता है। अर्द्ध विच्छेदी-विधि में इसे प्रयुक्त किया गया है। दो खण्डों में विभाजित करके विश्वसनीयता आधे परीक्षण की होती है। पूर्ण परीक्षण के लिए सूत्र का प्रयोग कर विश्वसनीयता गुणांक की गणना की जाती है। जबकि $n = 2$ और $r_{½½}$ आधे परीक्षण की विश्वसनीयता गुणक है।

$$r_{tt} = \frac{nr_{t/2t/2}}{1 + (n-1)r_{1/2t/2}} = \frac{2r_{t/2t/2}}{1 + r_{1/2t/2}}$$

(2) विश्वसनीयता गुणांक की विधियाँ (Methods of Estimating Reliability)–एक परीक्षण की विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिये कई विधियों को दिया गया है। प्रत्येक विधि द्वारा विश्वसनीयता गुणांक अलग-अलग प्राप्त होता है। इस प्रकार विश्वसनीयता की विधि भी प्रभावित करती है। विश्वसनीयता गुणांक के बारे में सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता है।

प्रथम दोनों विधियों द्वारा विश्वसनीयता गुणांक वास्तविक विश्वसनीयता से कम होता है जबकि *कूडर* और अर्द्ध विच्छेद विधि द्वारा वास्तविक विश्वसनीयता से अधिक होता है और चरिता विश्लेषण विधि द्वारा विश्वसनीयता के समीप होता है। इस प्रकार विश्वसनीयता की विधियाँ भी इसको प्रभावित करती है।

(3) समूह की विजातीयता (Group Heterogenwity)–विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाला तीसरा घटक समूह की विजातीयता है। विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिये परीक्षण को जिस समूह को दिया जाता है और वह यदि विजातीय समूह है तो प्राप्तांकों की चरिता अधिक होगी और विश्वसनीयता गुणांक वास्तविक से कम होगा। यदि यह समूह विजातीय है तो प्राप्तांकों की चरिता कम होगी और विश्वसनीयता गुणांक अपेक्षाकृत अधिक होगा। इस तथ्य को सूत्र से स्पष्ट कर सकते हैं–

$$\text{विश्वसनीयता } r_{tt} = \frac{\sigma_t^2}{\sigma_x^2} = \frac{\text{वास्तविक अंकों की चरिता}}{\text{प्राप्तांक अंक की चरिता}}$$

समूह की विजातीयता से प्राप्तांकों की अंक चरिता अधिक होगी और वास्तवकि अंक चरिता वही रहेगी तो विश्वसनीयता गुणांक कम हो जायेगा।

$$SE = \sigma \times \sqrt{(1 - r_n)}$$

मापन त्रुटि भी बढ़ जायेगी।

नोट

(4) परीक्षण की गत्यात्मकता (Speededness of the test)—विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाला चौथा घटक परीक्षण की गत्यात्मकता होता है। परीक्षण की यह विशेषता गति परीक्षण और शक्ति परीक्षण के मध्य की स्थिति होती है। यदि परीक्षण गयात्मकता (.50) से बढ़ती है तो विश्वसनीयता गुणांक कम हो जाता है और गयात्मकता घट जाती है तो विश्वसनीयता बढ़ती है। प्रथम चारों विधियों को गति परीक्षण के लिये उपयोगी मानते हैं और व्हाइट विश्वसनीयता को गत्यात्मक परीक्षण के लिए अधिक उपयुक्त माना जाता है। यह गुण परोक्ष रूप से परीक्षण के पदों की सजातीयता और विजातीयता (कठिनाई स्तर की दृष्टि) पर निर्भर होता है। शक्ति परीक्षण में समय कारक अधिक महत्वपूर्ण नहीं होती है। गति परीक्षण मे समय कारक ही प्रमुख होता है क्योंकि परीक्षार्थियों की गति का मापन किया जाता है इसलिये समय महत्वूपर्ण कारक है।

(5) पदों को अनुमान से सही करने का अवसर (Guessing Errors)—परीक्षण में पदों को अनुमान से सही करने का जितना अधिक अवसर होता है वह भी विश्वसनीयता को प्रभावित करता है। जैसे सत्य/असत्य प्रकार के पदों में पचास प्रतिशत पदों का अनुमान से सही करने की सम्भावना रही है। बहुविकल्पी पदों को अनुमान से सही करने की सम्भावना विकल्पों की संख्या पर आधारित होती है। यदि चार विकल्प हैं तो सम्भावना पच्चीस प्रतिशत (25%) और यदि पांच विकल्प हैं तो अनुमान से सही करने की सम्भावना बीस प्रतिशत (20%) होती है। इस प्रकार अनुमान से सही करने की त्रुटि जितनी कम होती है उतनी ही परीक्षण की विश्वसनीयता अधिक होती है। यही कारण है कि बहुविकल्पीय पदों को उत्तम माना जाता है।

(6) परीक्षण देने की परिस्थितियाँ तथा अंकन की प्रक्रिया (Testing Conditions and Scoring Procedure)—परीक्षण को देने की परिस्थितियों में जिन निर्देशों को प्रयुक्त किया जाये उनमें स्थायित्व न होने पर भी विश्वसनीयता प्रभावित होती है। इसके अतिरिक्त परीक्षार्थी को जिन परिस्थितियों में परीक्षण दिया जाये उनमें भी समानता रहनी चाहिये, यदि इन परिस्थितियों में विषमता होगी तो परीक्षण की विश्वसनीयता कम हो जायेगी।

परीक्षार्थियों की उत्तर पुस्तिकाओं के अंकन की प्रक्रिया स्पष्ट एवं वस्तुनिष्ठ होनी चाहिये। जैसे-सही के लिए एक अंक और गलत के लिये शून्य। परन्तु कुछ परीक्षण पदों के अंकन के सही के लिये दो तथा गलत के लिये शून्य तथा आंशिक रूप से सही करने वालों के लिये अंक निर्धारित किया जाये तो परीक्षण की विश्वसनीयता कम होगी।

(7) परीक्षण की रचना (Construction of Test)—परीक्षण के प्रश्नों का स्वरूप उनकी कठिनाई स्तर विभेदीकरण की शक्ति परीक्षण में पदों की व्यवस्था, परीक्षण के पदों में विकल्पों की संख्या, परीक्षण का समय, परीक्षण देने के निर्देश आदि सभी क्रियायें एवं विशेषतायें परीक्षण की विश्वसनीयता को प्रभावित करती हैं। यदि परीक्षण के पदों की व्यवस्था कठिनाई स्तर के चढ़ाव के क्रम में की जाती है तो विश्वसनीयता अधिक होगी यदि कठिनाई स्तर की दृष्टि से उनकी व्यवस्था नहीं की जाती तो विश्वसनीयता कम होगी।

(8) परीक्षार्थियों का योग्यता स्तर (Ability of Examinee)—यदि परीक्षण को केवल अधिक योग्य छात्रों को देकर विश्वसनीयता ज्ञात की जाये तो विश्वसनीयता गुणक वास्तविकता से अधिक आयेगा। यदि सभी प्रकार की योग्यता वाले छात्र सम्मिलित किये जायें तो विश्वसनीयता अधिक शुद्ध होती है।

विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिये परीक्षण को छोटे समूह के छात्रों को दिया जाये तो विश्वसनीयता सही नहीं होगी, यदि बड़े समूह को दिया जाये तो विश्वसनीयता अधिक शुद्ध होती है। इस प्रकार परीक्षार्थियों की योग्यता और समूह का आकार, विश्वसनीयता को प्रभावित करती है।

परीक्षण की अविश्वसनीयता के स्रोत (Source of test of Unreliability)—

परीक्षण की विश्वसनीयता के स्रोतों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है-(1) आन्तरिक स्रोत तथा (2) बाह्य स्रोत।

(1) आन्तरिक स्रोत (Internal Sources)—आन्तरिक स्रोत परीक्षण के स्वरूप से सम्बन्धित होते हैं। इनका मुख्य स्रोत पदों की संख्या, पदों के प्रकार, पदों की व्यवस्था, पदों का कठिनाई स्तर और उनके विभेदीकरण की शक्ति, पदों को अनुमान से सही करने का अवसर तथा सभी पाठ्य-वस्तु पदों की रचना परीक्षण की विश्वसनीयता के आन्तरिक स्रोत कहलाते हैं परीक्षण को बनाते समय इन स्रोतों का ध्यान रखने से, इन स्रोतों को कम किया जा सकता है।

नोट

(2) बाह्य स्त्रोत (External Sources)—परीक्षण की बाह्य परिस्थितियों से सम्बन्धित होते हैं जैसे—परीक्षण में सम्मिलित होने वाले परीक्षार्थी, परीक्षण देने की परिस्थितियाँ और उनके उत्तर पुस्तिकाओं के अंकन प्रक्रिया आदि प्रमुख स्त्रोतों को कम कर सकते हैं।

ननले (Nunnally) ने अपनी 'मापन पुस्तक' में परीक्षण की विश्वसनीयता के छ: स्त्रोतों का उल्लेख किया है। जो इस प्रकार है—

1. दिन-प्रतिदिन की विषमता।
2. पाठ्य-वस्तु का सही प्रतिनिधित्व न होना।
3. परीक्षण के पदों का समुचित ढंग से अंकन न होना।
4. अनुमान से सही करने की सम्भावना।
5. परीक्षण का प्रमापीकरण न होना।
6. समय अवधि की अस्थिरता।

7.4 विश्वसनीयता गुणक का अर्थापन (Interpretation of Reliability Coefficient)

सामान्यत: विश्वसनीयता को सह-सम्बन्ध गुणांक से प्रदर्शित किया जाता है विश्वसनीयता ज्ञात करने की सभी विधियों द्वारा विश्वसनीयता गुणांक का उल्लेख किया गया है। विश्वसनीयता गुणांक के लिए निम्नांकित सामान्य अधिनियमों का अनुसरण किया जाता है।

(1) विश्वसनीयता गुणांक से यह विदित होता है कि परीक्षण की चरिता का कितना अंश त्रुटि चरिता रहित है। अर्थात् वास्तवकि चरिता कितनी है?

(2) विश्वसनीयता गुणक परीक्षण के पदों की संख्या पर निर्भर होता है।

(Reliablility Coefficient is the function of the length of the test.)

(3) विश्वसनीयता गुणक परीक्षार्थियों के प्राप्तांकों के प्रसार पर आधारित होता है।

(4) एक परीक्षण समूह किसी एक योग्यता स्तर पर विश्वसनीयता हो सकता है और अन्य योग्यता स्तर पर अविश्वसनीय हो सकता है।

(5) विश्वसनीयता गुणक वैधता गुणक के सम्बन्धित होता है। परन्तु वैधता-गुणक विश्वसनीयता गुणक के वर्गमूल से अधिक नहीं हो सकता।

$$\text{वैधता गुणांक} \ngtr \sqrt{\text{विश्वसनीयता गुणांक}}$$

$$r_{xy} \ngtr \sqrt{r_{xx}}$$

परीक्षणों के प्रकार (Types of Tests)—विश्वसनीयता के विवेचन में परीक्षणों के प्रकार का भी उल्लेख किया गया है। इसलिए यहाँ पर परीक्षणों के प्रकार और उनकी विशेषताओं का भी उल्लेख किया गया है। साधारणत: परीक्षणों को मूलरूप में तीन वर्गो में विभक्त कर सकते हैं।

(1) शक्ति परीक्षण या विजातीय परीक्षण पद (Power Test or Heterogeneous Test Items)

(2) गति परीक्षण या सजातीय परीक्षण (Speed Test or Homogenous Test Items)

(3) गत्यात्मक परीक्षण (Speeded Test)।

(1) शक्ति परीक्षण या विजातीय परीक्षण (Power Test or Heterogeneous Test Items)—शक्ति परीक्षण उसे कहते हैं, जिसमें परीक्षा देने के समय की कोई सीमा नहीं होती है। प्रत्येक परीक्षार्थी को इतना समय दिया जाता है जिससे वह अन्तिम प्रश्न तक पहुँच कर सरल कर सके। ऐसी परिस्थितियों में प्रत्येक परीक्षार्थी सभी प्रश्नों को हल करने का प्रयास करता है। परीक्षार्थी के प्राप्तांक पूर्ण रूप से छात्र की योग्यता पर निर्भर करता है कि वह कितने प्रश्नों

नोट

को सही कर सकता है। शक्ति परीक्षण में कठिनाई स्तर अलग-अलग होता है। इस दृष्टि से परीक्षण को विजातीय कहा जाता है। परीक्षण में पदों को कठिनाई स्तर के क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। सबसे सरल सबसे पहले और सबसे कठिन सबसे अन्त में रखा जाता है।

व्यावहारिक रूप में कोई भी परीक्षण ऐसा नहीं होता जिसमें छात्रों को या परीक्षार्थी को असीमित समय उसकों हल करने को दिया जाता है। सभी परीक्षणों को देने की समय सीमा होती है। समय सीमा का निर्धारण इस प्रकार किया जाता है कि परीक्षण का निर्माण जिस समूह के लिए किया गया है। इस समूह के 75 प्रतिशत परीक्षार्थी सभी प्रश्नों को हल कर सकते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि समूह के 75 परीक्षार्थी निर्धारित समय सीमा में अन्तिम पद तक पहुँच सकते हैं। इस प्रकार के परीक्षण में यह आवश्यक नहीं कि परीक्षार्थी द्वारा हल किए गए सभी प्रश्न सही हों।

(2) गति परीक्षण एवं सजातीय परीक्षण (Speed Test or Homogeneous Test Items)—गति परीक्षण के अन्तर्गत सभी प्रश्नों का कठिनाई स्तर समान होता है, इस दृष्टि से इसे सजातीय कहते हैं। गति परीक्षणों के द्वारा छात्रों की पदों के सरल करने की *गति का मापन* किया जाता है। जबकि शक्ति परीक्षण में परीक्षार्थी की **योग्यता एवं क्षमताओं का मापन** होता है। इसमें समय सीमा के अन्तर्गत एक भी छात्र अन्तिम पद तक नहीं पहुँच पाता है। परन्तु जितने प्रश्नों को हल करता है वे सभी सही होते हैं। छात्रों के प्राप्तांकों में अन्तर पूर्णतया प्रश्नों को हल करने की गति पर निर्भर करता है। इस प्रकार के परीक्षणों की प्रमुख बात यह है कि परीक्षार्थी ने कितने प्रश्न हल किए हैं। जितने प्रश्न हल किए हैं वे सभी सही होंगे उनमें कोई गलत नहीं होता है। गति परीक्षण में प्राप्तांकों की विषमता छात्रों के हल करने की गति पर निर्भर होती है। जबकि शक्ति परीक्षण में हल किए हुए प्रश्नों में कितने सही हैं यह प्राप्तांक परीक्षा की योग्यता पर निर्भर करता है।

(3) गत्यात्मक परीक्षण (Speeded Test)—व्यावहारिक कारणोवश वास्तव में कोई भी परीक्षण शक्ति परीक्षण नहीं होता है। किसी भी परीक्षण में असीमित समय नहीं दिया जाता है। शक्ति परीक्षण में कठिनाई स्तर और विभेदीकरण की दृष्टि से अधिक विषमता होती है और समय की सीमा भी होती है। समय की सीमा का निर्धारण इस प्रकार किया जाता है कि समूह के 75 प्रतिशत में 90 प्रतिशत अभ्यर्थी कितने समय में अन्तिम प्रश्न तक पहुँच पाते हैं, वही परीक्षण की समय सीमा होती है। इसलिए सभी शक्ति परीक्षण गत्यात्मक परीक्षण होते हैं।

किसी परीक्षण का गत्यात्मक अंश मापन करने के अनेक ढंग हैं। गत्यात्मक अंश (Degree of speededness) का प्रमुख सूत्र निम्नलिखित है—

$$\text{गत्यात्मक गुणांक} = \frac{S_r^2}{S_x^2} = 5.0$$

जबकि S_r^2 = प्राप्तांकों की चरिता जो परीक्षार्थियों की पहुँच को गिनकर गणना की गई।

जबकि S_x^2 = प्राप्तांकों की चरिता जो परीक्षार्थियों के सही किए गये प्रश्नों को गिनकर गणना की गई।

इस सूत्र के प्रयोग में निम्न प्रमुख परिस्थितियों की सम्भावना होती है—

(1) यदि परीक्षार्थी सभी प्रश्नों के अन्त तक पहुँच गये जैसे कि शक्ति परीक्षण में होता है, क्योंकि असीमित समय दिया जाता है। ऐसी स्थिति में (S_r^2=0) क्योंकि सभी छात्र अन्तिम प्रश्न तक पहुँच जाते हैं।

$$\text{शक्ति परीक्षण गुणांक} = \frac{S_r^2}{S_e^2} = \frac{0}{S_e^2} = 0$$

(2) परन्तु इन दोनों चरिताओं का अनुपात कितना है इस पर परीक्षण की विश्वसनीयता निर्भर करती है। परन्तु इस तथ्य से विश्वसनीयता को निर्धारित नहीं किया जा सकता है।

इस सन्दर्भ में इतना कह सकते हैं कि यदि गत्यात्मक गुणांक .50 और उससे अधिक हैं तो उसे उच्च गत्यात्मक परीक्षण (Highly Speeded Test) कहते हैं। यदि इससे (.50) कम है तब कुछ कहना सम्भव नहीं है।

विभिन्न परीक्षणों के लिए विश्वसनीयता का मान (Value of Reliabilities for Various Type of Tests)—शिक्षा तथा मनोविज्ञान में अनेक प्रकार के परीक्षणों को है। अपितु *जी. सी. हेलम्सटेडर* ने अपनी पुस्तक में एक तालिका की सहायता से परीक्षणों तथा इन मानों का उल्लेख किया है जिनका प्रयोग परीक्षणों की विश्वसनीयता के अर्थापन में कर सकते हैं।

नोट

विभिन्न परीक्षण के लिए विश्वसनीयता का मान
(जी. सी. हेलम्सटेडर के अनुसार)

परीक्षण के प्रकार	निम्न	मध्य	उच्च
1. निष्पति परीक्षण (Achievement)	0.66	0.92	0.98
2. शैक्षिक प्रवणता परीक्षण (Scholastic Ablity)	0.56	0.90	0.97
3. प्रवणता मापन परीक्षण (Aptitude)	0.26	0.88	0.96
4. व्यक्तित्व मापन परीक्षण (Personality)	0.46	0.85	0.97
5. अभिरूचि अनुसूची (Interest)	0.42	0.84	0.93
6. अभिवृत्ति मापनी (Attitude)	0.47	0.79	0.98

इस तालिका से विदित होता है कि विभिन्न परीक्षणों की विश्वसनीयता गुणांकों में अधिक भिन्नता होती है। निम्न गुणांक का विस्तार 0.26 से 0.66 तक होता है और मध्य गुणांक का विस्तार 0.79 से 0.92 तक माना जाता है। परीक्षणों (Tests) का विश्वसनीयता गुणांक अधिक उच्च होता है जबकि अनुसूची और मापनी आदि का गुणांक मध्य होता है प्रवणता परीक्षण का विस्तार सबसे अधिक होता है निम्न गुणांक 0.26 सबसे कम होता है। इसलिए विभिन्न परीक्षणों के क्षेत्र में विश्वसनीयता गुणांक के ज्ञात करने और उसके अर्थापन में इन तथ्यों को ध्यान में रखना नितान्त आवश्यक है।

7.5 विश्वसनीयता की उपयोगिता (Uses of Reliability)

विश्वसनीयता की उपयोगिता विभिन्न प्रकार से है। कई प्रकार की त्रुटियों को केवल विश्वसनीयता की विभिन्न विधियों द्वारा पकड़ा जा सकता है। उनका वर्गीकरण तीन प्रकार से किया जा सकता है–

(1) मापन प्रविधि की त्रुटि (Error of Technique)—शिक्षा मापन में जिस प्रविधि का प्रयोग किया जाता है उसमें भी त्रुटि होती है। कुछ पदों के सही के लिए एक अंक और गलत के लिए शून्य अंक दिये जाते हैं तथा अन्य पदों के सही के लिए दो अंक और गलत के लिए शून्य दिया जाता है। ऐसी स्थिति में पदों का विश्लेषण, विश्वसनीयता और वैधता ज्ञात करना कठिन हो जाता है। इस प्रकार के दोष को अंकगणितीय त्रुटि कहते हैं।

परीक्षण के प्रयोग करने में अनुपयुक्त साधन से भी मापन में त्रुटि आती है, जैसे—छात्र अनुमान से प्रश्नों को सही कर लेता है। सत्य/असत्य प्रकार के पदों में पचास प्रतिशत पदों को अनुमान से ही किए जा सकते हैं, इसे हम अनुपयुक्त साधन प्रयोग की त्रुटि कहेंगे।

(2) मापन की त्रुटि (Errors of Measurement)—मापन की त्रुटि तीन प्रकार से होती है। यदि मापन का परीक्षण अपूर्ण है तो मापन की त्रुटि होती है। अपूर्ण परीक्षण का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकारण के लिए परीक्षण की रचना की गयी है, उसमें सभी पक्षों पर पद नहीं बनाये गये। परिणामत: विश्वसनीयता कम होगी। सम्पूर्ण प्रकरण पर पदों को सम्मिलित करने से उसका आकार बढ़ जायेगा और परीक्षण की विश्वसनीयता भी बढ़ जायेगी।

जब किसी परीक्षण का प्रयोग अप्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा किया जाता है तब भी प्राप्तांकों में भिन्नता अधिक हो जाती है जिसे मापन की त्रुटि कहते हैं। विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए एक परीक्षण को एक समूह पर विभिन्न अवसरों पर दिया जाता है तो प्राप्तांकों में उतार-चढ़ाव भी होता है। इस तरह से भी मापन में त्रुटि आती है।

मापन त्रुटि को दो कारकों द्वारा पहचाना जा सकता है, अर्थात् इसे दो प्रकार की त्रुटियों में विभाजित कर सकते हैं–

(अ) आपूर्ति की त्रुटि (Compensating errors) तथा

(ब) पक्षपात त्रुटि (Baised error)।

(अ) आपूर्ति की त्रुटि (Compensating error)—इस प्रकार की त्रुटि भी तीन प्रकार की होती है।

नोट

(1) परीक्षण में असीमित पदों को सम्मिलित न कर सकना।

(2) परीक्षण को असीमित बार छात्रों को न दे सकना।

(3) परीक्षण के उत्तरों को असीमित परीक्षकों द्वारा अंकन न कर सकना।

यदि किसी परीक्षण में उपरोक्त तीनों परिस्थितियों का अनुसरण कर सके तब मापन की त्रुटि शून्य हो जाती है क्योंकि कुछ छात्रों के प्राप्तांक वास्तविक अंकों से अधिक तथा अन्य कुछ छात्रों के प्राप्तांक वास्तविक अंकों से कम होते हैं जिससे त्रुटि की पूर्ति हो जाती है और त्रुटियों का समस्त योग शून्य हो जाता है। मापन का यह तथ्य सैद्धान्तिक आधार प्रस्तुत करता है, इस तथ्य को एक उदारहण से स्पष्ट किया गया है—

(ब) पक्षपात त्रुटि (Baised error)—पक्षपात त्रुटियाँ निम्नांकित कारणों से होती है।

(1) जिन कारकों का परीक्षण द्वारा मापन किया जाता है उनकी सजातीयता के आधार पर विभाजन न कर सकना।

(2) प्रश्न का पद किस विशेषता का मापन करता है इसका सही चयन न कर सकना।

(3) परीक्षण के लिए अच्छे पदों का चयन न कर सकना।

(4) छात्रों के उत्तरों को ईमानदारी के साथ अंकन न कर सकना।

(5) परीक्षण में विभिन्न प्रकार के पदों का समुचित रूप से सम्मिलित न कर सकना।

इन उपरोक्त पाँच परिस्थितियों के द्वारा जो मापन में त्रुटि होती है उसे पक्षपातपूर्ण त्रुटि कहा जाता है। इस प्रकार आपूर्ति त्रुटि और पक्षपातपूर्ण त्रुटि, मापन त्रुटि के प्रमुख घटक हैं।

मापन त्रुटि एक व्यक्ति के प्राप्तांकों को प्रभावित करती है। इसका तात्पर्य यह है कि परीक्षण पर जो प्राप्तांक आये हैं वह व्यक्ति के वास्तविक अंक नहीं हैं। उसमें मापन त्रुटि भी सम्मिलित है। वास्तविक अंक की गणना विश्वसनीयता गुणक और समूह के प्रमाणिक विचलन की सहायता से ज्ञात कर सकते हैं।

(3) न्यादर्श की त्रुटि (Errors of Sampling)—तीसरे प्रकार की त्रुटि न्यादर्श के चयन के कारण होती है। यदि न्यादर्श जनसंख्या का शुद्ध रूप में प्रतिनिधित्व करता हो तो इस प्रकार की त्रुटि शून्य हो जाती है परन्तु शिक्षा और मनोविज्ञान में न्यादर्श चयन करने की किसी भी ऐसी प्रविधि का विकास नहीं हो सका है जिससे शुद्ध प्रतिनिधित्व करने वाले न्यादर्श का चयन हो सके। इसलिए शिक्षा और मनोविज्ञान के अन्तर्गत न्यादर्श की त्रुटि रहती है। जिसके दो प्रमुख कारण हैं : प्रथम कारण यह है कि न्यादर्श के छात्रों के प्राप्तांकों में उतार-चढ़ाव का अवसर (Chance of Fluctuation) रहता है।

न्यादर्श का आकार साधारणतया अधिक रखा जाता है, चाहे उसका प्रयोग मापन के क्षेत्र में हो या अनुसन्धान के क्षेत्र में। न्यादर्श के आकार को बड़ा रखने से दो लाभ होते हैं।

प्रथम—मापन त्रुटि शून्य हो जाती है समूह में अधिक व्यक्तियों को सम्मिलित करने से चर त्रुटि का योग सदैव शून्य होता है।

द्वितीय—न्यादर्श का आकर जितना बढ़ाते जाते हैं उतना ही वह जनसंख्या का प्रतिनिधित्व शुद्ध रूप में करता है। यदि न्यादर्श का आकार अनन्त कर दिया जाय तो वह शुद्ध जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करेगा। इस तथ्य को सांख्यिकी के विश्वसनीयता सूत्रों की सहायता से अधिक स्पष्ट कर सकते हैं। जैसे—

टास्क गत्यात्मक परीक्षण किसे कहते हैं?

नोट

स्व-मूल्यांकन

निम्नलिखित प्रश्नों में सही विकल्पों का चुनाव कीजिए—

1. चरिता विश्लेषण विधि का विकास .... ने किया था।
   (क) हाइड (ख) एडवर्ड (ग) पीटर (घ) फ्रायड
2. .... विधि में संर्पूण परीक्षण का विश्वसनीयता गुणक ज्ञात करने में स्पीयरमैन ब्राउन प्रोफेसी सूत्र का उपयोग आवश्यक होता है।
   (क) तुल्यता गुणक विधि (ख) अर्थ-विच्छेद विधि
   (ग) तर्कयुक्त तुल्यता विधि (घ) चरिता विश्लेषण विधि
3. 'ननले' ने अपनी 'मापन पुस्तक' में परीक्षण की विश्वसनीयता के .... स्त्रोतों का उल्लेख किया है।
   (क) 3 (ख) 4 (ग) 5 (घ) 6
4. साधारणत: परीक्षणों को मूलरूप में .... वर्गों में विभक्त किया गया है।
   (क) 2 (ख) 3 (ग) 4 (घ) 5
5. परीक्षण के लिए अच्छे पदों का चयन न कर सकना .... है।
   (क) पक्षपात त्रुटि (ख) न्यादर्श की त्रुटि
   (ग) आपूर्ति की त्रुटि (घ) उपरोक्त में से कोई नहीं

7.6 सारांश (Summary)

- एक अच्छे परीक्षण की कई विशेषताएँ होती हैं। उनमें से परीक्षण की विश्वसनीयता एक विशेष गुण माना जाता है। परीक्षण की विश्वसनीयता इस तथ्य को प्रकट करती है कि उसमें चर-त्रुटि (Variable Error) कितनी हैं यदि परीक्षण में चर त्रुटि कम है तो वह अधिक विश्वसनीय परीक्षण होगा, इसके विपरीत यदि चर त्रुटि अधिक है तो परीक्षण की विश्वसनीयता कम होगी।
- एक परीक्षण में जितने अधिक पदों को सम्मिलित किया जाता है उतना ही परीक्षण अधिक विश्वसनीय होता है। जैसे—निबन्धात्मक परीक्षा में साधारणत: पांच प्रश्न सरल कराये जाते हैं इसलिए कम विश्वसनीय होता है और वस्तुनिष्ठ परीक्षा में लगभग सौ प्रश्न हल कराये जाते हैं, इसलिए अधिक विश्वसनीय होता है एक परीक्षण में पदों की संख्या बढ़ा देने से उसकी विश्वसनीयता भी बढ़ जाती है।
- एक परीक्षण या मानसिक मापन परीक्षण की विश्वसनीयता उस संगति पर निर्भर करती है जो उन व्यक्तियों की योग्यता का अनुमान लगाती है जिनके लिए उसका प्रयोग होता है।
- सैद्धान्तिक रूप से परीक्षण की विश्वसनीयता का सम्बन्ध वास्तविक प्राप्तांकों से होता है, जो छात्र अंक प्राप्त करता है वह उसके वास्तविक अंक नहीं होते उनमें त्रुटि होती है, जिसे चर त्रुटि की संज्ञा दी जाती है। यह धनात्मक और ऋणात्मक दोनों हीं हो सकती है। इसका तात्पर्य यह है कि प्राप्तांक वास्तविक अंकों से कम भी हो सकते हैं
- विश्वसनीयता की गणना करने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने कई विधियों का विकास किया है। किसी परीक्षण की विश्वसनीयता की गणना करने की प्रमुख समस्या यह है कि वास्तविक अंकों की चरिता का अनुमान शुद्ध रूप में कैसे किया जाय अथवा त्रुटि अंक चरिता का अनुमान शुद्ध रूप में कर लिया जाये तो वास्तविक अंक चरिता निकाल सकते हैं। विश्वसनीयता गुणक वास्तविक अंक चरिता का अंश होता है प्राप्तांक चरिता उपलब्ध होती है।
- **ली जे॰ क्रानबैक** ने अपनी पुस्तक में चार विधियों का उल्लेख किया है। इन्होंने विश्वसनीयता गुणक को स्वत: सह-सम्बन्ध बताया है।
  (1) **स्थायित्व गुणक—**अन्य मनोवैज्ञानिकों ने परीक्षण को पुन: परीक्षण विधि (Test retest method) की संज्ञा दी है।
  (2) **तुल्यता गुणक—**जिसे अन्य विद्वानों ने समान प्रारूप विधि अथवा विकल्प प्रारूप कहा है।

नोट

(3) **स्थायित्व एवं तुल्यता गुणक**—अन्य विद्वान अर्द्ध-विच्छेद विधि (Split half method) भी कहते हैं।

(4) **आन्तरिक स्थायित्व गुणक**—अन्य विद्वान इसे तर्कयुक्त तुल्यता विधि (Rational Equivalence method) भी कहते हैं। इसे *कूडर रिचार्डसन* ने दिया है। इन विधियों के अतिरिक्त पाँचवी *ह्वाइट* ने दी है जो विश्वसनीयता गुणक का अनुमान अधिक शुद्ध रूप में करती है।

- **पुर्नपरीक्षण विधि की अवधारणा**—इस विधि की निम्नलिखित अवधारणाएँ हैं—
  1. परीक्षण में पदों की संख्या अधिक होती है इसलिए परीक्षार्थी पदों का स्मरण नहीं रख पाते, और अभ्यास का भी पुर्नपरीक्षण के प्राप्तांक पर प्रभाव नहीं पड़ता है।
  2. परीक्षार्थी की आन्तरिक योग्यता स्थायी होने के कारण परिपक्वता का भी प्रभाव पुनर्परीक्षण के प्राप्तांकों पर नहीं होता।
- **पुनर्परीक्षण विधि की विशेषताएँ**—इस विधि की निम्नांकित विशेषताएँ हैं—
  1. यह विश्वसनीयता ज्ञात करने की सबसे सरल विधि है।
  2. यह विधि गति परीक्षणों के लिए अधिक उपयुक्त है।
  3. इस विधि में सांख्यिकी की सह-सम्बन्ध प्रविधि का प्रयोग सरलता से किया जाता है जो विश्वसनीयता गुणक होता है।
- **पुनर्परीक्षण विधि की सीमाएँ**—इस विधि की अधोलिखित सीमाएँ है—
  1. पुनर्परीक्षण के प्राप्तांकों पर स्मृति, अभ्यास, परिपक्वता एवम् कौशल का प्रभाव पड़ता है।
  2. परीक्षणों का कठिनाई-स्तर समान नहीं होता है, इसलिए पदों की विजातीयता विश्वसनीयता गुणक को प्रभावित करती है।
- **तुल्यता गुणक अथवा समान्तर प्रारूप विधि या विकल्प प्रारूप विधि**—यह विधि प्रथम विधि का सुधारात्मक रूप है। पहली विधि की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए इस विधि का विकास किया गया है, जिससे स्मृति, अभ्यास, परिपक्वता एवम् कौशलता आदि विश्वसनीयता गुणक को प्रभावित न कर सकें।
- **तुल्यता गुणक विधि की अवधारणा**—इस विधि की अधोलिखित अवधारणाएँ हैं—
  1. परीक्षण के दो समान्तर प्रारूप पाठ्यवस्तु पदों की संख्या पदों के प्रकार, पदों के कठिनाई स्तर व विभेदीकरण शक्ति और परीक्षण देने की दृष्टि से समान होते हैं।
  2. इस विधि में परीक्षण के दोनों प्रारूपों को एक ही दिन दिया जाता है, इसलिए छात्रों की परिपक्वता विश्वसनीयता गुणक को प्रभावित नहीं करती हैं।
- विश्वसनीयता ज्ञात करने की यह विधि उपरोक्त दोनों विधियों की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए इस विधि का विकास किया गया है। इस विधि में परीक्षण को न्यादर्श के परीक्षार्थियों को एक ही बार दिया जाता है और एक ही बार के प्राप्तांकों का विश्लेषण करके विश्वसनीयता गुणक ज्ञात कर लिया जाता है।
- **अर्द्ध-विच्छेद विधि के विशेषताएँ**—इस विधि की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

1. उपरोक्त दोनों विधियों की सीमाओं का इस विधि में पूर्ण रूप से सुधार किया गया है।
2. विश्वसनीयता गुणक को स्मृति, अभ्यास, कौशल परिपक्वता आदि कारक प्रभावित नहीं करते हैं।

- **अर्द्ध विच्छेद विधि के उपयोग**—इस विधि का प्रयोग अधोलिखित परीक्षणों के लिए किया जाता है—

1. इस विधि में आकस्मिक त्रुटि में विश्वसनीयता गुणक के अधिक होने की सम्भावना रहती है।
2. परीक्षण को दो खण्डों में कई प्रकार से विभाजित कर सकते हैं, जैसे—आरम्भ के पचास प्रतिशत और अन्त के पचास प्रतिशत अथवा विषम क्रमसंख्या और सम क्रमसंख्या के पदों को अथवा लॉटरी प्रणाली के द्वारा आदि।

- **अर्द्ध-विच्छेद विश्वसनीयता का अर्थापन**—इस विधि द्वारा जो विश्वसनीयता गुणक प्राप्त होता है उसका अर्थापन तुल्यता गुणक के समान ही कर सकते हैं। इस विधि में दोनों खण्डों के सामान्य कारक अंकों के स्थायी और अस्थायी गुणों पर निर्भर होते हैं।

नोट

- **आन्तरिक स्थायित्व गुणक अथवा तर्कयुक्त तुल्यता विधि अथवा कूडर रिचर्डसन विधि**—यह विधि *कूडर रिचर्डसन* ने विकसित की है इस विधि द्वारा उपरोक्त तीनों विधियों की सीमाओं को ध्यान में रखकर विधि विकसित की गयी है।
- **तार्किक तुल्यता गुणक विधि की अवधारणा**—कूडर रिचार्डसन ने अपनी विधि में अधोलिखित अवधारणाओं को प्रयुक्त किया है।
  1. एक परीक्षण के सभी पदों का कठिनाई स्तर समान होता है। पद की कठिनाई स्तर परीक्षार्थी की जानकारी पर निर्भर करता है। यदि वह पद को जानता है तो सरल है और यदि पद की जानकारी नहीं है तो कठिन है। पद की कठिनाई जानने पर निर्भर करती है।
  2. यह दूसरी अवधारणा भी पहली से सम्बन्धित है कि पदों का कठिनाई स्तर समान होते हुए यह आवश्यक नहीं कि एक व्यक्ति प्रत्येक पद को सही कर ले।
- इस विधि की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—
  1. यह विधि अर्द्धविच्छेद विधि के सुधार के रूप में विकसित की गयी है। अर्द्धविच्छेद विधि की सीमाओं को ध्यान में रखा गया है।
  2. यह विधि अपेक्षाकृत मितव्ययी है, क्योंकि परीक्षण को एक ही बार देकर उनके प्राप्तांकों का विश्लेषण करके विश्वसनीयता की गणना कर लेते हैं।
- **तार्किक तुल्यता गुणक विधि की सीमाएँ (Limitations of Rational Equivalence Method)**—इसकी प्रमुख सीमाएँ अधोलिखित हैं—
  1. इस विधि का दोष यह है कि विश्वसनीयता की गणना में पदों के कठिनाई स्तर को महत्व नही दिया जाता है। कूडर ने इन सूत्रों का विकास यह मानकर किया है कि पदों का कठिनाई स्तर समान होता है।
  2. इस विधि से विश्वसनीयता गुणक वास्तविकता से कम आता है क्योंकि सूत्रों में विश्वसनीयता की गणना में पदों की चरिता को अलग नहीं किया जाता है। पदों का अपना कठिनाई स्तर होता है।
- परीक्षार्थी की जानकारी के साथ-साथ पद का कठिनाई स्तर भी होता है। शक्ति परीक्षण और गत्यात्मक परीक्षण (Speeded Test) में पदों को कठिनाई स्तर के आधार पर परीक्षण में रखा जाता है। सबसे सरल सबसे पहले और सबसे कठिन सबसे अन्त में, यह क्रम रखा जाता है।
- **उपयोगिता** (Advantage)—इस चरिता विश्लेषण विधि की अधोलिखित उपयोगिता है—
  1. उपरोक्त दी गई चारों विधियों के सुधार के रूप में इनकी सभी सीमाओं को ध्यान में रखकर विकसित किया गया है।
  2. इस विधि से प्राप्त विश्वसनीयता गुणक वास्तविक विश्वसनीयता गुणक के अधिक समीप होती है। जबकि उपरोक्त विधियों द्वारा प्राप्त गुणक वास्तविक गुणक से कम होता है।
- **सीमाएँ (Limitations)**—इस विधि की अधोलिखित सीमाएँ हैं—
  1. इस विधि में सांख्यिकी की चरिता विश्लेषण प्रविधि का प्रयोग किया जाता है अतः इस विधि में ज्ञान और कौशल की आवश्यकता होती है।
  2. दो भुजीय तालिका का तैयार करना भी कठिन कार्य है बड़े न्यादर्श तथा परीक्षण का आकार बड़ा होने पर असम्भव-सा प्रतीत होता है।
- एक परीक्षण के विश्वसनीयता गुणांक को प्रभावित करने वाले अनेक कारक होते हैं उनमें से प्रमुख कारणों का उल्लेख अधोलिखित है— **परीक्षण का आकार अथवा परीक्षण में पदों की संख्या**—*परीक्षण की विश्वसनीयता उसके आधार पर निर्भर होती है।* अर्थात् जिस परीक्षण में पदों की संख्या अधिक होती है उसकी विश्वसनीयता भी अधिक है। निबन्धात्मक परीक्षणों में पदों या प्रश्नों की संख्या कम होती है इसलिए विश्वसनीय नहीं होता है।
- एक परीक्षण की विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिये कई विधियों को दिया गया है। प्रत्येक विधि द्वारा विश्वसनीयता गुणांक अलग-अलग प्राप्त होता है।

नोट

- **परीक्षण देने की परिस्थितियाँ तथा अंकन की प्रक्रिया—**परीक्षण को देने की परिस्थितियों में जिन निर्देशों को प्रयुक्त किया जाये उनमें स्थायित्व न होने पर भी विश्वसनीयता प्रभावित होती है।
- **मापन प्रविधि की त्रुटि—**शिक्षा मापन में जिस प्रविधि का प्रयोग किया जाता है उसमें भी त्रुटि होती है परीक्षण में पदों के निर्धारण में भी त्रुटि रहती है।
- **मापन की त्रुटि—**मापन की त्रुटि तीन प्रकार से होती है। यदि मापन का परीक्षण अपूर्ण है तो मापन की त्रुटि होती है। अपूर्ण परीक्षण का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकारण के लिए परीक्षण की रचना की गयी है, उसमें सभी पक्षों पर पद नहीं बनाये गये। परिणामत: विश्वसनीयता कम होगी।
- मापन त्रुटि को दो कारकों द्वारा पहचाना जा सकता है, अर्थात् इसे दो प्रकार की त्रुटियों में विभाजित कर सकते हैं—(अ) आपूर्ति की त्रुटि (Compensating errors) तथा (ब) पक्षपात त्रुटि (Baised error)। **आपूर्ति की त्रुटि—**इस प्रकार की त्रुटि भी तीन प्रकार की होती है। (1)परीक्षण में असीमित पदों को सम्मिलित न कर सकना। (2)परीक्षण को असीमित बार छात्रों को न दे सकना। **(ब) पक्षपात त्रुटि—**पक्षपात त्रुटियाँ निम्नांकित कारणों से होती है। (1) जिन कारकों का परीक्षण द्वारा मापन किया जाता है उनकी सजातीयता के आधार पर विभाजन न कर सकना। (2)प्रश्न का पद किस विशेषता का मापन करता है इसका सही चयन न कर सकना।

7.7 शब्दकोश (Keyword)

- **विजातीय—**सबसे अलग।

7.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. विश्वसनीयता का अर्थ एवं परिभाषा दीजिए। विश्वसनीयता का सम्बन्ध चर त्रुटि से किस प्रकार होता है।
2. मापन त्रुटि का अर्थ बताइए। त्रुटि कितने प्रकार की होती है? उनका संक्षेप में वर्णन कीजिए।
3. विश्वसनीयता कितने प्रकार की होती है? विश्वसनीयता ज्ञात करने की विधियाँ समझाइए।
4. विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले घटकों का वर्णन कीजिए।
5. "विश्वसनीयता प्रश्न-पत्र के पदों की संख्या पर निर्भर करती है।" इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1.	1. सत्य	2. सत्य	3. सत्य	4. सत्य	5. असत्य	6. सत्य
2.	1. (क)	2. (ख)	3. (घ)	4. (ख)	5. (क)	

7.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–8: परीक्षण निर्माण
(Test Construction)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
8.1 परीक्षण (लिखित परीक्षा) (Test (Written Examination))
8.2 परीक्षण निर्माण के सोपान (Steps of Test Construction)
8.3 सारांश (Summary)
8.4 शब्दकोश (Keywords)
8.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
8.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- परीक्षण और परीक्षण निर्माण के सोपान को विवेचित करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

साधारणत: तीन प्रकार के परीक्षण का उपयोग किया जाता है।

(1) मौखिक परीक्षा (Oral examination),
(2) लिखित परीक्षण (Written examination) तथा
(3) प्रयोगात्मक परीक्षा (Practical examination)।

मौखिक परीक्षा में साक्षात्कार प्रविधि का उपयोग किया जाता है। मौखिक परीक्षा व्यक्तिनिष्ठ होती है। छात्रों की अभिव्यक्ति के कौशल एवं क्षमताओं का आकलन किया जाता है। साक्षात्कार प्रविधि को प्रमाणिक बनाना कठिन है। प्रयोगात्मक परीक्षा का उपयोग विशिष्ट कौशल तथा कार्य क्षमताओं का आकलन किया जाता है। शिक्षण कौशलों के आकलन के लिए शिक्षण की प्रयोगात्मक परीक्षाओं निरीक्षण प्रविधियों का उपयोग किया जाता है। निरीक्षण प्रविधि भी व्यक्तिनिष्ठ होती है। इस इकाई में हम विभिन्न परीक्षणों के निर्माण तथा उससे संबंधित परिप्रेक्ष्य का अध्ययन करेंगे।

8.1 परीक्षण (लिखित परीक्षा) (Test (Written Examination))

छात्रों के निष्पादन के मूल्यांकन तथा आकलन में लिखित परीक्षाओं को प्राथमिकता दी जाती है। इन परीक्षाओं से ज्ञानात्मक पक्ष का आकलन किया जाता है। इन परीक्षाओं को प्रमाणिक बनाया जाता है। यह परीक्षण वस्तुनिष्ठ भी होते हैं। साधारणत: लिखित परीक्षाएँ तीन प्रकार की होती है–

(1) वस्तुनिष्ठ परीक्षा (Objective Type Examination)

नोट

(2) सूक्ष्म उत्तर परीक्षा (Short Answer Questions) तथा

(3) निबन्धात्मक परीक्षा (Essay Type Examinatio)।

छात्रों की उपलब्धियों के मूल्यांकन में वस्तुनिष्ठ तथा निबन्धात्मक परीक्षाओं का उपयोग अधिक किया जाता है। निबन्धात्मक परीक्षाएँ दोष-पूर्ण होते हुए छात्रों के मूल्यांकन में इनका विशेष उपयोग तथा महत्व है। छात्रों की अभिव्यक्ति सुलेख, पाठ्यवस्तु की व्यवस्था की क्षमता, भाषा की योग्यता आदि का भी आकलन निबन्धात्मक परीक्षाओं से ही सम्भव है। यह वस्तुनिष्ठ तथा विश्वसनीय नहीं होती है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का उपयोग निष्पादन तथा निदान दोनों में किया जाता है। यह वस्तुनिष्ठ तथा विश्वसनीय होती है उन्हें प्रामाणिक भी बनाया जाता है। अंकन में व्यक्तिनिष्ठ पक्ष प्रभावित नहीं करते हैं। वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की निर्माण विधि के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। इस अध्याय में वस्तुनिष्ठ परीक्षण में निर्माण विधि को उदाहरणों से समझाया गया है। वस्तुनिष्ठ तथा निबन्धात्मक परीक्षाओं की तुलना में की गई है।

अधिगम-उद्देश्यों द्वारा व्यवस्था (Managing by Learning Objectives-MBO)

'उद्देश्यों द्वारा व्यवस्था' एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रबन्धक अपनी क्रियाओं की व्यवस्था का मूल्यांकन उद्देश्यों के सन्दर्भ में करता है, और जिसके आधार पर नवीन ढंग से व्यवस्था करने के लिये निर्देशन प्रदान करता है। इसका तात्पर्य है कि समस्त व्यवस्था का नियन्त्रण (Management by Objective-MBO) उद्देश्यों द्वारा किया जाता है। शिक्षण व्यवस्था का कार्य आगे बढ़ाना है। मूल्यांकन प्रक्रिया भी उद्देश्यों से नियन्त्रित होती है। उद्देश्यों द्वारा व्यवस्था, प्रक्रिया कर प्रयोग उद्योग, व्यापार, सेना आदि में भी किया जाता है, परन्तु शिक्षा में इसके प्रशिक्षण की विशेष आवश्यकता है, क्योंकि इस प्रक्रिया के सिद्धान्तों का प्रशिक्षण में व्यावहारिक रूप में प्रयोग किया जाता है। 'उद्देश्यों द्वारा व्यवस्था' का मूल्यांकन अधिगम के उद्देश्यों द्वारा किया जाता है। शिक्षण के प्रथम सोपान में जिन उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखा जाता है उनकी प्राप्ति हुई है अथवा नहीं इसका मूल्यांकन किया जाता है और प्रदत्तों के आधार पर शिक्षण-व्यवस्था में परिवर्तन अथवा सुधार लाया जाता है।

'उद्देश्यों द्वारा व्यवस्था' की प्रक्रिया में मानदण्ड-परीक्षा का महत्वपूर्ण कार्य होता है। इस परीक्षा का प्रत्येक प्रश्न अधिगम के उद्देश्य का मापन करने के लिये परिस्थिति उत्पन्न करता है। अत: शिक्षक को मानदण्ड परीक्षा (Criterion Test) के प्रश्नों की रचना में निपुण होना चाहिये। मानदण्ड-परीक्षा का रूप वस्तुनिष्ठ एवं निबन्धात्मक दोनों ही प्रकार का हो सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि वस्तुनिष्ठ परीक्षायें तथा निबन्धात्मक परीक्षायें केन्द्रित होनी चाहिये।

क्या आप जानते हैं **पीटर डिरोकर** ने (1954) 'उद्देश्यों द्वारा व्यवस्था' (Management by Objectives) का एक नया प्रत्यय प्रयुक्त किया था। तभी से इसका प्रयोग व्यापक रूप से किया जाने लगा है।

8.2 परीक्षण निर्माण के सोपान (Step of Test Construction)

स्टेनले तथा रॉस के अनुसार परीक्षा के निर्माण में चार सोपानों का अनुसरण किया जाता है—(1) नियोजन (2) निर्माण (3) जाँच करना तथा (4) मूल्यांकन।

प्रथम सोपान—नियोजन (Planning)

1. उद्देश्यों को निर्धारित करना।
2. उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना।
3. पाठ्य-वस्तु का विश्लेषण करना।
4. प्रश्नों के रूप का निर्धारण करना तथा कुल प्रश्नों की संख्या का निर्धारण करना।

नोट

5. विशिष्टीकरण तालिका (Table of Specification) को बनाना जो द्वितीय सोपान के लिये निर्देशन दे सके।
6. परीक्षा आकृति, प्रशासन का समय, मुद्रण आदि के सम्बन्ध में निर्णय लेना।

द्वितीय सोपान–पदों की रचना करना (Preparing Test Items)

1. पदों की रचना करने में विशिष्टीकरण तालिका का अनुसरण किया जाता है।
2. दो प्रकार के पदों की रचना की जाती है–

(अ) **प्रत्यास्मरण रूप** (Recall Type)।

1. सामान्य प्रत्यास्मरण (Simple Recall)
2. रिक्त-स्थान की पूर्ति रूप (Completion Type)

(ब) **अभिज्ञान रूप** (Recognition type)।

1. एकान्तर-अनुक्रिया रूप (Alternatinve Response) अथवा सत्य/असत्य रूप (True/False Type)।
2. बहु-विकल्पीय रूप (Multiple choice type)।
3. समानता रूप (Matching Type)।
4. वर्गीकरण रूप (Classification Type)
5. सादृश-अनुभव रूप (Analogy Type)।

3. प्रत्येक प्रकार के प्रश्नों का अध्ययन निम्न पक्षों में किया जाता है–

(अ) रूप का अर्थ एवं परिभाषा।

(ब) अनुमान से सही करने के अवसर।

(स) उपयोगिता तथा सीमायें।

(द) सावधानियाँ।

4. नियम तथा सुझाव जिनको पदों के निर्माण में ध्यान में रखना चाहिये।

तृतीय सोपान–परीक्षा की जांच करना (Try out the Test)

1. परीक्षा की पूर्व-जाँच करना (Pre-Try out) यह छोटे समूह पर की जाती है।
2. परीक्षा की सही जाँच करना (Proper Try out)

(*i*) पद-विश्लेषण (Item analysis)

(*ii*) पद-विश्वसनीयता तथा वैधता की गणना करना।

(*iii*) पदों के चयन के लिए मानदण्डों को निर्धारित करना।

(*iv*) परीक्षण का अन्तिम रूप तैयार करना।

3. परीक्षण की अन्तिम जाँच के लिये बड़े समूह पर प्रयोग करना।

चतुर्थ सोपान–मूल्यांकन (Evaluation)

1. विशाल समूह पर परीक्षा का प्रशासन करना।
2. अंकन करना और प्राप्त प्रदत्तों की व्यवस्था करना।
3. विश्वसनीय गुणक की गणना करना।
4. वैधता गुणक की गणना करना।
5. मानकों (Norms) का विकास करना।
6. निर्देशिका (Manual) तैयार करना।

नोट

अधिगम-उद्देश्यों के मूल्यांकन में मानदण्ड-परीक्षा प्रयुक्त की जाती है। इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि यह उद्देश्य-केन्द्रित होती है। मानदण्ड-परीक्षा विश्वसनीय तथा वैध होनी चाहिये, परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि उसे प्रामाणिक बनाया जाये, एक उत्तम वस्तुनिष्ठ परीक्षा का रूप ही साधारणत: मानदण्ड-परीक्षाओं में प्रयुक्त किया जाता है। इसे ज्ञान, बोध तथा प्रयोग उद्देश्यों के मूल्यांकन के लिये सफलतापूर्वक प्रयोग किया जाता है।

नोट्स उत्तम मानदण्ड-परीक्षा के निर्माण में उपयुक्त चारों सोपानों का अधिगम के उद्देश्यों, कार्य-विश्लेषण तथा अधिगम स्वरूपों को विशेष महत्व दिया जाता है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षा प्रश्नों या पदों के प्रकार (Forms of Objective Type Test Items)

वस्तुनिष्ठ परीक्षा प्रश्नों की दो रूप में रचना की जाती है–

(अ) अभिज्ञान रूप (Recognition Type) तथा

(ब) प्रत्यास्मरण रूप (Recall Type)

(अ) अभिज्ञान रूप (Recognition Type)

इस प्रकार के प्रश्न में कई सम्भावित उत्तर भी दिये जाते हैं। छात्र को उनमें से ही उत्तर का चयन करना पड़ता है। इसमें पहचानने की शक्ति की जांच होती है। इसमें छात्र अनुमान से भी सही उत्तर का चयन कर सकता है। इस प्रकार के प्रश्नों के रूप का वर्णन यहाँ किया गया है–

(1) एकान्तर अनुक्रिया रूप (Alternative Response Type)

इसमें कुछ कथन दिये जाते हैं जो सही तथा गलत भी होते हैं। छात्रों को सत्य/असत्य दो विकल्पों में से एक को अंकित करना होता है। इन्हें सत्य/असत्य (True/False) रूप भी कहा जाता है।

उदाहरण

निर्देश–निम्नांकित कथनों में यदि सही हों तो 'सत्य' और यदि गलत हो तो 'असत्य' को सही (√) से चिन्हित कीजिये।

प्रश्न (1) शिक्षण तथा अधिगम में कोई अन्तर नहीं होता है। सत्य/असत्य

प्रश्न (2) शिक्षण-प्रतिमान, शिक्षण-सिद्धान्त का प्रारूप होता है। सत्य/असत्य

प्रश्न (3) अभिप्रेरणा से होने वाले व्यवहार परिवर्तन को अधिगम कहते हैं। सत्य/असत्य

प्रश्न (4) बुनियादी शिक्षण-प्रतिमान को *ग्लेसर* ने दिया है। सत्य/असत्य

कुन्जी– 1. असत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. सत्य।

विशेषताएँ–इन पदों के निम्न प्रमुख गुण हैं–

1. इनकी रचना करना सरल होता है।
2. सभी विषयों की परीक्षाओं में प्रयुक्त किया जाता है।
3. कम समय में अधिक प्रश्नों के उत्तर दिये जाते हैं।
4. इनका अंकन करना सरल होता है।

सीमाएँ–इनके निम्न मुख्य दोष हैं–

1. छात्र अनुमान से 50 प्रतिशत प्रश्नों को सही कर सकता है।
2. छात्र को उत्तर देने की स्वतन्त्रता नहीं होती है।

नोट

3. एक प्रश्न से छोटे प्रत्यय का ही मापन होता है।
4. इन प्रश्नों के प्रयोग से परीक्षा की विश्वसनीयता तथा वैधता कम होती है।

सुझाव–इनकी रचना में इन बातों को ध्यान में रखना चाहिये–

1. ऐसे केवल 10% प्रश्नों को ही परीक्षा में सम्मिलित करना चाहिये।
2. तीसरा विकल्प 'अज्ञात' (Not Known) भी होना चाहिये, जिससे छात्र उत्तर दे सके।

(2) बहु-विकल्पीय प्रश्न (Multiple-Choice Type)

इन प्रश्नों में एक कथन के लिये कई उत्तर दिये रहते हैं। इन विकल्पों में से छात्र को सबसे सही उत्तर चयन करना होता है। इस प्रकार के प्रश्नों को *ई. एफ. लिंडक्वट, क्रानवेक तथा रॉस* ने सबसे उत्तम प्रकार का माना है। वस्तुनिष्ठ परीक्षा में इस प्रकार के प्रश्नों को ही अधिकांश रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

उदाहरण–

निर्देश–निम्नांकित कथनों के चार सम्भावित उत्तर दिये गये है। इनमें से सही उत्तर को सही (√) से चिहित कीजिये–

प्रश्न (1) मापन के कार्य हैं–

(अ) साफल्य (Prognosis) (ब) निदान (Diagnosis)

(स) शोध (Research) (द) उपरोक्त सभी

प्रश्न (2) बुनियादी शिक्षण प्रतिमान (Basic Teaching model) का प्रतिपादन किया है–

(अ) बी. एफ. स्किनर (ब) जे. ब्रूनर

(स) रॉबर्ट ग्लेसर (द) हिल्दा तक

प्रश्न (3) रॉबर्ट गेने की प्रमुख देन हैं–

(अ) शिक्षण-प्रतिमान (ब) शिक्षण सिद्धान्त

(स) अधिगम की परिस्थितियाँ (द) उपरोक्त सभी

कुन्जी–1. (द) 2. (स) 3. (द) 4. (द)।

विशेषताएँ–बहु-निर्वाचन परीक्षाओं की अधोलिखित विशेषतायें हैं–

1. अभिज्ञान की योग्यताओं के मापन के लिये यह परीक्षा सबसे उत्तम मानी जाती है।
2. इनमें अनुगम से सही करने की सम्भावना कम होता है।
3. इनका अंकन तथा विश्लेषण करना सरल होता है।
4. इनमें वस्तुनिष्ठता अधिक होती है।
5. तर्कपूर्ण चिन्तन एवं सूझ की क्षमताओं की परीक्षा की जाती है।
6. मानदण्ड परीक्षा के लिये उत्तम परीक्षा मानी जाती है।

सीमाएँ–इस परीक्षा की निम्नलिखित सीमायें हैं–

1. इनकी रचना करना कठिन है।
2. अनुमान से सही करने की सम्भावना रहती है।
3. एक प्रश्न से एक छोटे से तत्व का मापन किया जाता है।
4. सभी विषयों की पाठ्य-वस्तुओं में इनका प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

सुझाव–इस परीक्षा की रचना में निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिये–

1. कम से कम चार तथा अधिक से अधिक छः विकल्पों को प्रयुक्त करना चाहिये।
2. विकल्पों में समरूपता होनी चाहिये।

नोट

3. भाषा तथा व्याकरण आदि से सही विकल्प का बोध नहीं होना चाहिये।
4. निर्देश स्पष्ट रूप में दिये जाने चाहिये।
5. एक परीक्षा में 50 प्रतिशत से अधिक प्रश्न सम्मिलित करने चाहिये।

(3) समानता रूप (Matching Type)

इन प्रश्नों को दो स्तम्भों में लिखा जाता है। एक स्तम्भ में कुछ प्रश्न दिये रहते हैं तथा दूसरे में उनके उत्तर दिये जाते हैं। परन्तु उन्हें क्रमबद्ध रूप में नहीं रखा जाता है। छात्र को सही उत्तर का चयन करना होता है। दूसरे स्तम्भ में पहले की अपेक्षा अधिक कथन दिये जाते हैं। एक प्रश्न में कई बहुनिर्वाचन रूप के प्रश्नों को सम्मिलित किया जाता है।

उदाहरण—समानता रूप प्रश्न

निर्देश—निम्नांकित प्रश्नों को दो स्तम्भों 'अ' तथा 'ब' में प्रस्तुत किया गया है, प्रथम स्तम्भ 'अ' में कई कथन दिये गये हैं। उनके स्तर स्तम्भ 'ब' में दिये गये हैं, जो क्रमशः नहीं लिये गये हैं। दूसरे स्तम्भ के सही खण्ड को प्रथम स्तम्भ खण्ड के रिक्त स्थान में अंकित कीजिए।

समानता रूप प्रश्न (Matching Type)

स्तम्भ 'अ' शिक्षण प्रतिमान		स्तम्भ 'ब' शिक्षण प्रतिमान के प्रवर्तक
(1) आगमन-शिक्षण प्रतिमान	(.........)	(क) जीन प्याजे
(2) विकासात्मक-प्रतिमान	(.........)	(ख) बी. एफ. स्किनर
(3) एडवांस ऑर्गनाइजर प्रतिमान	(.........)	(ग) हिल्दा तवा
		(घ) डेविड आसुवेल
(4) सक्रिय अनुबन्ध-अनुक्रिया प्रतिमान	(.........)	(य) विलियम गोर्डन
(5) कक्षा सभा प्रतिमान	(.........)	(र) विलयम ग्लेसर
		(ल) नेड ए फ्लैडर

विशेषताएँ—इन पदों की निम्नलिखित विशेषतायें हैं—

1. रचना तथा समय की दृष्टि से ये प्रश्न मितव्ययी होते हैं।
2. इनकी रचना करना तथा अंकन करना सरल होता है।
3. ज्ञानात्मक उद्देश्यों के मापन के लिये अधिक उपयोगी होते हैं।
4. लिंडक्विस्ट (Lindquiest) के अनुसार यह प्रश्न 'कब', 'क्या' तथा 'कौन' परिस्थितियों के लिये अधिक उपयोगी होते हैं।
5. इस प्रकार के प्रश्नों में अनुमान लगाना कठिन हो जाता है।

सीमाएँ—इनकी मुख्य सीमायें अधोलिखित हैं—

1. इन प्रश्नों को सूचना तथा ज्ञान उद्देश्यों के लिये ही प्रयोग किया जाता है।
2. इनमें अनुमान लगाने का अवसर रहता है।
3. इनका अंकन तथा विश्लेषण कठिन होता है।
4. दोनों स्तम्भों में समान खण्डों के होने पर अन्तिम कथन का उत्तर स्वतः मिल जाता है।

सुझाव—इनके प्रयोग में निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिये—

1. दूसरे स्तम्भ में पहले स्तम्भ की अपेक्षा अधिक कथन होने चाहिये।

नोट

2. सूचना तथा ज्ञान उद्देश्यों के लिये प्रयुक्त करना चाहिये।
3. निर्देशों को स्पष्ट रूप में लिखना चाहिये।
4. दोनों स्तम्भों में संगत कथन ही रखने चाहिये।

(4) वर्गीकरण रूप प्रश्न (Classification Type Item)

इन प्रश्नों के अन्तर्गत कुछ ऐसे शब्दों का समूह छात्रों के सामने रखा जाता है जिनमें से एक शब्द असंगत अथवा समूहों के शब्दों से भिन्न होता है। छात्रों को चयन करके रेखांकित करना होता है।

उदाहरण—एक प्रकार के प्रश्नों के उदाहरण दिये गये हैं—

निर्देश—प्रत्येक प्रश्न में पाँच शब्द दिये गये हैं। प्रत्येक समूह में एक शब्द अन्य से भिन्न है उसका चयन करके रेखांकित कीजिये—

प्रश्न (1) साफल्य, निदान, *विश्वसनीयता,* शोध तथा पूर्वकथन।

प्रश्न (2) नियोजन, व्यवस्था, अग्रसरण, *वर्गीकरण* तथा नियन्त्रण।

प्रश्न (3) कानपुर, लखनऊ, बनारस, आगरा, दिल्ली।

प्रश्न (4) राजेन्द्र प्रसाद, राधा कृष्णन, जवाहरलाल नेहरू, जाकिर हुसैन।

कुन्जी—1. विश्वसनीयता 2. वर्गीकरण 3. दिल्ली 4. जाकिर हुसैन।

इस प्रकार के प्रश्नों का बोध-उद्देश्य तथा विभेदीकरण की क्षमताओं के लिये प्रयुक्त किया जाता है। इनका निष्पत्ति तथा बुद्धि परीक्षाओं में भी प्रयोग होता है।

(5) सादृश-अनुभव प्रश्न (Analogy Type Items)

इनमें दो समान परिस्थितियों को प्रस्तुत किया जाता है। पहली परिस्थिति पूर्ण, दूसरी अपूर्ण होती है। पहली परिस्थिति के आधार पर समान सम्बन्ध स्थापित करते हुए दूसरी परिस्थिति की पूर्ति की जाती है। यह प्रत्यास्मरण (Recall) तथा अभिज्ञान (Recognition) दोनों ही प्रकार के होते हैं।

निर्देश—निम्नांकित प्रश्नों में दो परिस्थितियाँ प्रयुक्त की गई हैं। दूसरी परिस्थिति अपूर्ण है। पहली के आधार पर दूसरे की पूर्ति कीजिये—

प्रश्न (1) नियोजन : उद्देश्य : : अग्रसरण......... (*अभिप्रेरणा*)

प्रश्न (2) राजस्थान : जयपुर : : उत्तर प्रदेश......... (*लखनऊ*)

प्रश्न (3) ग्लेसर : शिक्षण प्रतिमान : : राबर्ट गेने......... (अधिगम स्वरूप)

प्रश्न (4) प्रत्यास्मरण : उत्तर देना : : अभिज्ञान......... (चयन करना)

इस प्रकार के प्रश्नों में सूझ तथा तार्किक क्षमताओं का मापन किया जाता है। ये विश्लेषण के उद्देश्यों के मापन के लिये प्रयोग किये जाते हैं।

(ब) प्रत्यास्मरण रूप प्रश्न (Recal Type Items)

इनमें प्रश्न पूछे जाते हैं या अपूर्ण कथन दिया जाता है। छात्र अपनी स्मरण तथा धारण शक्ति के आधार पर उत्तर देता है अथवा कथन की पूर्ति करता है। ये दो प्रकार के होते हैं—

(1) सामान्य प्रत्यास्मरण रूप प्रश्न (Simple Recall Type Items)

इनमें छात्र को विषय से सम्बन्धित सूचनाओं को पुनःस्मरण करके उत्तर देना होता है। इसमें साधारण प्रश्न पूछा जाता है। प्रश्न का रूप इस प्रकार का होता है जिसका एक ही विशिष्ट उत्तर हो।

उदाहरण—

निर्देश—नीचे कुछ प्रश्न दिये हैं। उनका उत्तर सामने दिये गये स्थान में लिखना है।

नोट

प्रश्न (1) शिक्षण व्यवस्था के सिद्धान्तों को किसने दिया है? (.........)

प्रश्न (2) 'अधिगम स्वरूपों' का प्रवर्तक कौन है? (*गैने*) (.........)

प्रश्न (3) 'आवश्यकता के सिद्धान्त का प्रतिपादन किसने किया है? (*मासलों*) (.........)

प्रश्न (4) 'बी. एस. ब्लूम' का क्या योगदान है? (*मूल्यांकन आयाम*) (.........)

विशेषताएँ—इनमें अनुमान से सही करने की सम्भावना बिल्कुल नहीं होती है। इनकी रचना करना तथा अंकन करना सरल होता है। एक प्रश्न से एक तत्व का ही मापन किया जाता है। ऐसे 10 प्रतिशत प्रश्न ही परीक्षा में सम्मिलित करने चाहिये। प्रश्न के रूप इस प्रकार का होना चाहिये जिसका एक ही उत्तर हो।

(2) रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न (Completion Type Items)

इन प्रश्नों को अपूर्ण कथनों अथवा वाक्यों में लिखा जाता है। छात्र इन कथनों की पूर्ति करता है। छात्र की रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये प्रत्यास्मरण की सहायता लेनी पड़ती है। रिक्त स्थान के लिये एक ही सही शब्द होता है।

उदाहरण—

निर्देश—निम्नांकित कथनों अथवा वाक्यों में रिक्त स्थान छोड़ दिया गया है। रिक्त स्थान की पूर्ति उपयुक्त शब्द द्वारा कीजिये।

प्रश्न (1) शिक्षा के वैज्ञानिक आधार की देन शिक्षण .... है। (*तकनीकी*)

प्रश्न (2) शिक्षण-उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने का प्रयास .... ने किया है। (*रॉबर्ट मेगर*)

प्रश्न (3) अधिगम-सिद्धान्तों की अपेक्षा अधिगम परिस्थितियों को .... ने महत्व दिया है। (*रॉबर्ट गने*)

प्रश्न (4) शिक्षण-अधिगम व्यवस्था के चार सोपानों का विवेचन .... ने किया है। (*आई. के. डेवीज*)

विशेषताएँ—इन प्रश्नों की अधोलिखित विशेषतायें हैं—

1. इनमें अनुमान से सही उत्तर नहीं दिया जा सकता है।
2. इनकी रचना तथा अंकुन करना सरल होता है।
3. इनमें प्रत्यास्मरण का अभ्यास होता है।
4. इनका प्रयोग ज्ञान-उद्देश्य के मापन के लिये होता है।
5. छात्रों को उत्तर देने की स्वतन्त्रता होती है।

सुझाव—रिक्त स्थान की पूर्ति के प्रश्नों के प्रयोग में निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिये—

1. एक प्रश्न में दो से अधिक रिक्त स्थान नहीं देने चाहिये।
2. वाक्य के मध्य अथवा अन्त में रिक्त स्थान देना चाहिये। वाक्य के आरम्भ में रिक्त स्थान नहीं देना चाहिये।
3. इस प्रकार के दस प्रतिशत प्रश्न ही परीक्षा में सम्मिलित किये जाने चाहिये।
4. रिक्त स्थान के लिये एक ही विशिष्ट शब्द उपयुक्त होना चाहिये।
5. प्रश्न की भाषा स्पष्ट तथा बोधगम्य होनी चाहिये।
6. सही उत्तर देने के लिये कोई संकेत नहीं होना चाहिये।

अधिगम उद्देश्यों के मूल्यांकन के लिये परीक्षा (Tests for Evaluating Learning Objectives)

उद्देश्यों के आधार पर व्यवस्था (Management by Objectives) प्रक्रिया को शिक्षण प्रक्रिया में सफलतापूर्वक प्रयुक्त किया जा सकता है। इसके लिये परीक्षा प्रश्नों के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

शिक्षण तकनीकी की मानदण्ड परीक्षा

ज्ञान उद्देश्य—(1) छात्र में शिक्षण स्तरों के अभिज्ञान की क्षमता है।

निर्देश—निम्नांकित कथन के चार सम्भावित उत्तर दिये गये हैं। इनमें से सही उत्तर को (✓) से चिन्हित कीजिये—

नोट

प्रश्न–शिक्षण के स्तर हैं–

(अ) स्मरण स्तर (ब) बोध स्तर

(स) चिन्तन स्तर (द) उपरोक्त सभी (स) (सभी)

(2) छात्रों में शिक्षण-अधिगम व्यवस्था के सोपानों में प्रत्यास्मरण करने की क्षमता है।

निर्देश–यहाँ एक अपूर्ण कथन दिया गया है। रिक्त स्थान की पूर्ति उपयुक्त शब्द द्वारा कीजिये–

प्रश्न–शिक्षण-अधिगम व्यवस्था प्रक्रिया में.........सोपानों का अनुसरण किया जाता है। (चार)

बोध उद्देश्य–(3) छात्रों में मापन की क्रियाओं के वर्गीकरण करने की योग्यता है।

निर्देश–इस कथन में पाँच शब्द लिये गये हैं। इनमें एक शब्द ऐसा है जो अन्य चारों की श्रेणी में नहीं आता है उसे रेखांकित कीजिये।

साफल्य, निदान, विश्वसनीयता, शोध, पूर्व-कथन, मापन।

हिन्दी भाषा की मानदण्ड परीक्षा के लिये प्रश्न

ज्ञान-उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप

(1) छात्र में समान शब्दों में अभिज्ञान करने की योग्यता है।

प्रश्न (1) प्रार्थना का समान शब्द है–

(अ) सम्मान (ब) दयालु

(स) विनती (द) आभूषण (स) विनती

प्रश्न (2) अलंकार का समान शब्द है–

(अ) समास (ब) सुन्दर

(स) उत्तम (द) आभूषण (द) आभूषण

बोध-उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप

(2) छात्र में शब्दों के वर्गीकरण की क्षमता है।

प्रश्न (1) अंगूर, सेब, टमाटर, आम, केला। (टमाटर)

प्रश्न (2) कलम, कागज, पुस्तक, मोटर, दवात। (मोटर)

प्रश्न (3) जल, पानी, नीर, कमल, सलिल। (कमल)

(3) छात्र में शब्दों की वर्तनी के प्रत्यास्मरण करने की योग्यता है।

निर्देश–निम्नलिखित वाक्यों में एक शब्द छोड़ दिया गया है, उसकी पूर्ति कीजिये।

(1) रामचरित मानस के रचयिता .... हैं। (*तुलसीदास*)

(2) जयशंकर प्रसाद की प्रमुख कृति .... है। (*कामायनी*)

सामान्य विज्ञान की मानदण्ड परीक्षा के लिये प्रश्न

ज्ञान-उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप

(1) छात्र में फूल के कार्यो के अभिज्ञान की योग्यता है।

प्रश्न–फूल का कार्य है–

(अ) वाष्पोत्सर्जन (ब) निषेचन (द) प्रकाश संश्लेषण

(स) श्वसन (द) प्रकाश संश्लेषण

(2) छात्र में पौधे के भागों को प्रत्यास्मरण करने की क्षमता है।

निर्देश—पौधों के दो मुख्य भाग.........तथा.........होते हैं। (प्रारोह, जल)

बोध-उद्देश्य

(3) छात्र में जानवरों के वर्गीकरण की योग्यता है।

निर्देश—यहाँ कुछ जानवरों के नाम दिये गये हैं। इनमें एक अन्य से मेल नहीं खाता है, उसे चिह्नित कीजिये।

प्रश्न—गाय, भैंस, मेंढक, बकरी, हाथी, ऊँट। (*मेंढक*)

भूगोल विषय की मानदण्ड परीक्षा के प्रश्नों का रूप

ज्ञान-उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप—

(1) छात्रों में उत्तर प्रदेश की राजधानी के अभिज्ञान की योग्यता है।

प्रश्न—उत्तर प्रदेश की राजधानी है—

(अ) कानपुर (ब) इलाहाबाद

(स) लखनऊ (द) बनारस (स) (*लखनऊ*)

(2) छात्रों में भारत की राजधानी के प्रत्यास्मरण की योग्यता है।

प्रश्न—भारत की राजधानी..........है। (*दिल्ली*)

प्रयोग-उद्देश्य का व्यावहारिक रूप—

प्रश्न—चन्द्रग्रहण पड़ता है क्योंकि—

(अ) पृथ्वी अपनी कीली पर परिभ्रमण करती है।

(ब) सूर्य के चारों और पृथ्वी तथा चन्द्रमा पृथ्वी के चारों और चक्कर लगाता है।

(स) पृथ्वी का आकार चन्द्रमा से बड़ा है।

(द) पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है।

टास्क अधिगम उद्देश्यों द्वारा व्यवस्था से क्या तात्पर्य है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)—

1. छात्रों के निष्पादन के मूल्यांकन तथा आकलन में ········· को प्राथमिकता दी जाती है।
2. पदों की रचना करने में ········· का अनुसरण किया जाता है।
3. ········· का रूप ही साधारणत: मानदण्ड परीक्षाओं में प्रयुक्त किया जाता है।
4. ········· में प्रश्न पूछे जाते हैं या अपूर्ण कथन दिया जाता है।

8.3 सारांश (Summary)

- छात्रों के निष्पादन के मूल्यांकन तथा आकलन में लिखित परीक्षाओं को प्राथमिकता दी जाती है। इन परीक्षाओं से ज्ञानात्मक पक्ष का आकलन किया जाता है। इन परीक्षाओं को प्रमाणिक बनाया जाता है। यह परीक्षण वस्तुनिष्ठ भी होते है। साधारणत: लिखित परीक्षाएँ तीन प्रकार की होती हैं:—

  (1) वस्तुनिष्ठ परीक्षा (Objective Type Examination)

  (2) सूक्ष्म उत्तर परीक्षा (Short Answer Questions) तथा

  (3) निबन्धात्मक परीक्षा (Essay Type Examination)।

नोट

- छात्रों की उपलब्धि के मूल्यांकन में वस्तुनिष्ठ तथा निबन्धात्मक परीक्षाओं का उपयोग अधिक किया जाता है। निबन्धात्मक परीक्षाएँ दोष-पूर्ण होते हुए छात्रों के मूल्यांकन में इनका विशेष उपयोग तथा महत्व है।
- वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का उपयोग निष्पादन तथा निदान दोनों में किया जाता है। यह वस्तुनिष्ठ तथा विश्वसनीय होती है उन्हें प्रामाणिक भी बनाया जाता है। अंकन में व्यक्तिनिष्ठ पक्ष प्रभावित नहीं करते हैं। वस्तुनिष्ठ परीक्षणों की निर्माण विधि के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।
- **पीटर डिरोकर** ने (1956) 'उद्देश्य द्वारा व्यवस्था' (Management by Objectives) का नया प्रत्यय प्रयुक्त किया था। तभी से इसका प्रयोग व्यापक रूप से किया जाने लगा है।
- 'उद्देश्यों द्वारा व्यवस्था' एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रबन्धक अपनी क्रियाओं की व्यवस्था का मूल्यांकन उद्देश्यों के सन्दर्भ में करता है, और जिसके आधार पर नवीन ढंग से व्यवस्था करने के लिये निर्देशन प्रदान करता है। इसका तात्पर्य है कि समस्त व्यवस्था का नियन्त्रण (Management by Objective-MBO) उद्देश्यों द्वारा किया जाता है। शिक्षण व्यवस्था का कार्य आगे बढ़ाना है।
- स्टेनले तथा रॉस के अनुसार परीक्षा के निर्माण में चार सोपानों का अनुसरण किया जाता है–(1) नियोजन (2) निर्माण (3) जाँच करना तथा (4) मूल्यांकन।
- **प्रथम सोपान-नियोजन** (Planning)
  1. उद्देश्यों को निर्धारित करना।
  2. उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना।
  3. पाठ्य-वस्तु का विश्लेषण करना।
- **द्वितीय सोपान-पदों की रचना करना** (Preparing Test Items):
  1. पदों की रचना करने में विशिष्टीकरण तालिका का अनुसरण किया जाता है।
  2. दो प्रकार के पदों की रचना की जाती है–
- **(अ) प्रत्यास्मरण रूप** (Recall Type)।
  1. सामान्य प्रत्यास्मरण (Simple Recall)
  2. रिक्त-स्थान की पूर्ति रूप (Completion Type)
- **(ब) अभिज्ञान रूप** (Recognition type)।
  1. एकान्तर-अनुक्रिया रूप (Alternative Response) अथवा सत्य/असत्य रूप (True/False Type)।
  2. बहु-विकल्पीय रूप (Multiple choice type)।
  3. समानता रूप (Matching Type)।
  4. वर्गीकरण रूप (Classification Type)
  5. सादृश-अनुभव रूप (Analogy Type)।
- **तृतीय सोपान-परीक्षा की जांच करना** (Try out the Test)

  (1) परीक्षा की पूर्व-जाँच करना (Pre-Try out) यह छोटे समूह पर की जाती है।

  (2) परीक्षा की सही जाँच करना (Proper Try out)

  (i) पद-विश्लेषण (Item analysis)

  (ii) पद-विश्वसनीयता तथा वैधता की गणना करना।

  (iii) पदों के चयन के लिए मानदण्डों को निर्धारित करना।

  (iv) परीक्षण का अन्तिम रूप तैयार करना।

नोट

- **चतुर्थ सोपान-मूल्यांकन** (Evaluation)
    1. विशाल समूह पर परीक्षा का प्रशासन करना।
    2. अंकन करना और प्राप्त प्रदत्तों की व्यवस्था करना।
    3. विश्वसनीय गुणक की गणना करना।
    4. वैधता गुणक की गणना करना।
    5. मानकों (Norms) का विकास करना।
- अधिगम-उद्देश्यों के मूल्यांकन में मानदण्ड-परीक्षा प्रयुक्त की जाती है। इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि यह उद्देश्य-केन्द्रित होती है। मानदण्ड-परीक्षा विश्वसनीय तथा वैध होनी चाहिये, परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि उसे प्रामाणिक बनाया जाये।
- वस्तुनिष्ठ परीक्षा प्रश्नों या पदों के प्रकार

  वस्तुनिष्ठ परीक्षा प्रश्नों की दो रूप में रचना की जाती है—

  (अ) अभिज्ञान रूप (Recognition Type) तथा

  (ब) प्रत्यास्मरण रूप (Recall Type)
- **(अ) अभिज्ञान रूप** (Recognition Type)

  इस प्रकार के प्रश्न में कई सम्भावित उत्तर भी दिये जाते हैं। छात्र को उनमें से ही उत्तर का चयन करना पड़ता है। इसमें पहचानने की शक्ति की जांच की जाती है।
- इसमें कुछ कथन दिये जाते हैं जो सही तथा गलत भी होते हैं। छात्रों को सत्य/असत्य दो विकल्पों में से एक को अंकित करना होता है। इन्हें सत्य/असत्य (True/False) रूप भी कहा जाता है।
- **विशेषताएँ**—इन पदों के निम्न प्रमुख गुण हैं—
    1. इनकी रचना करना सरल होता है।
    2. सभी विषयों की परीक्षाओं में प्रयुक्त किया जाता है।
    3. कम समय में अधिक प्रश्नों के उत्तर दिये जाते हैं।
- **सीमाएँ**—इनके निम्न मुख्य दोष हैं—
    1. छात्र अनुमान से 50 प्रतिशत प्रश्नों को सही कर सकता है।
    2. छात्र को उत्तर देने की स्वतन्त्रता नहीं होती है।
    3. एक प्रश्न से छोटे प्रत्यय का ही मापन होता है।
- **बहु-विकल्पीय प्रश्न**—...................इन प्रश्नों में एक कथन के लिये कई उत्तर दिये रहते हैं। इन विकल्पों में से छात्र को सबसे सही उत्तर चयन करना होता है।
- **विशेषताएँ**—बहु-निर्वाचन परीक्षाओं की अधोलिखित विशेषतायें हैं—
    1. अभिज्ञान की योग्यताओं के मापन के लिये यह परीक्षा सबसे उत्तम मानी जाती है।
    2. इनमें अनुगम से सही करने की सम्भावना कम होता है।
    3. इनका अंकन तथा विश्लेषण करना सरल होता है।

  इस परीक्षा की निम्नलिखित सीमायें हैं—
    1. इनकी रचना करना कठिन है।
    2. अनुमान से सही करने की सम्भावना रहती है।

नोट

- **(3) समानता रूप**

  इन प्रश्नों को दो स्तम्भों में लिखा जाता है। एक स्तम्भ में कुछ प्रश्न दिये रहते हैं तथा दूसरे में उनके उत्तर दिये जाते है। परन्तु उन्हें क्रमबद्ध रूप में नहीं रखा जाता है।
- इन पदों की निम्नलिखित विशेषतायें हैं–
  1. रचना तथा समय की दृष्टि से ये प्रश्न मितव्ययी होते हैं।
  2. इनकी रचना करना तथा अंकन करना सरल होता है।
  3. ज्ञानात्मक उद्देश्यों के मापन के लिये अधिक उपयोगी होते हैं।
- इनकी मुख्य सीमायें अधोलिखित हैं–
  1. इन प्रश्नों को सूचना तथा ज्ञान उद्देश्यों के लिये ही प्रयोग किया जाता है।
  2. इनमें अनुमान लगाने का अवसर रहता है।
- **(4) वर्गीकरण रूप प्रश्न**

  इन प्रश्नों के अन्तर्गत कुछ ऐसे शब्दों का समूह छात्रों के सामने रखा जाता है जिनमें से एक शब्द असंगत अथवा समूहों के शब्दों से भिन्न होता है। छात्रों का चयन करके रेखांकित करना होता है।
- **सादृश-अनुभव प्रश्न**–इनमें दो समान परिस्थितियों को प्रस्तुत किया जाता है। पहली परिस्थिति पूर्ण, दूसरी अपूर्ण होती है। पहली परिस्थिति के आधार पर समान सम्बन्ध स्थापित करते हुए दूसरी परिस्थिति की पूर्ति की जाती है। यह प्रत्यास्मरण (Recall) तथा अभिज्ञान (Recognition) दोनों ही प्रकार के होते हैं।
- **प्रत्यास्मरण रूप प्रश्न**–इनमें प्रश्न पूछे जाते हैं या अपूर्ण कथन दिया जाता है। छात्र अपनी स्मरण तथा धारण शक्ति के आधार पर उत्तर देता है अथवा कथन की पूर्ति करता है। ये दो प्रकार के होते हैं–
- **(1) सामान्य प्रात्यास्मरण रूप प्रश्न**

  इनमें छात्र को विषय से सम्बन्धित सूचनाओं को पुनःस्मरण करके उत्तर देना होता है।

  इनमें अनुमान से सही करने की सम्भावना बिल्कुल नहीं होती है। इनकी रचना करना तथा अंकन करना सरल होता है। एक प्रश्न से एक तत्व का ही मापन किया जाता है।
- **रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न**–इन प्रश्नों को अपूर्ण कथनों अथवा वाक्यों में लिखा जाता है। छात्र इन कथनों की पूर्ति करता है। छात्र की रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये प्रत्यास्मरण की सहायता लेनी पड़ती है।
- इन प्रश्नों की अधोलिखित विशेषतायें हैं–
  1. इनमें अनुमान से सही उत्तर नहीं दिया जा सकता है।
  2. इनकी रचना तथा अंकन करना सरल होता है।
  3. इनमें प्रत्यास्मरण का अभ्यास होता है।
- **अधिगम उद्देश्यों के मूल्यांकन के लिये परीक्षा**–उद्देश्यों के आधार पर व्यवस्था (Management by Objectives) प्रक्रिया को शिक्षण प्रक्रिया में सफलतापूर्वक प्रयुक्त किया जा सकता है। इसके लिये परीक्षा प्रश्नों के उदाहरण निम्नलिखित हैं–
- **शिक्षण तकनीकी की मानदण्ड परीक्षा**

  ज्ञान उद्देश्य–(1) छात्र में शिक्षण स्तरों के अभिज्ञान की क्षमता है।

  बोध उद्देश्य–(3) छात्रों में मापन की क्रियाओं के वर्गीकरण करने की योग्यता हैं।
- **बोध-उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप**– (2) छात्र में शब्दों के वर्गीकरण की क्षमता है।
- **सामान्य विज्ञान की मानदण्ड परीक्षा के लिये प्रश्न।**

नोट

8.4 शब्दकोश (Keywords)

- **प्रत्यास्मरण**—विशेष स्मरण।
- **अभिज्ञान**—पहचान।
- **एकान्तर**—एक का अंतर देकर आने वाला।

8.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. परीक्षण निर्माण से आप क्या समझते हैं?
2. परीक्षा के निर्माण विधि के सोपानों की विवेचना कीजिए।
3. बहुनिर्वाचन परीक्षाओं की अधोलिखित विशेषताएँ क्या हैं?
4. सामान्य प्रत्यास्मरण रूप प्रश्न क्या हैं? इनकी विशेषताएँ बताइये?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. लिखित परीक्षा
2. विशिष्टीकरण तालिका
3. वस्तुनिष्ठ परीक्षा
4. प्रत्यास्मरण रूप प्रश्न

8.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—9: परीक्षण प्रमापीकरण (Test Standardisation)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

9.1 परीक्षण प्रमापीकरण का अर्थ (Meaning of Test Standardisation)

9.2 निबन्धात्मक परीक्षाएँ तथा अधिगम के उद्देश्य (Essay Type Test and Learning Objectives)

9.3 मानदण्ड संबंधित परीक्षण (Criterion Referenced Test)

9.4 मानदण्ड तथा मानक संबंधित परीक्षणों में अंतर (Difference Between Criterion and Norm Reference Test)

9.5 रूप देय परीक्षण तथा योग देय परीक्षण (Formative and Summative Test)

9.6 सारांश (Summary)

9.7 शब्दकोश (Keywords)

9.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

9.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- परीक्षण प्रमापीकरण के अर्थ और मानदण्ड सम्बंधी परीक्षण को जानने में।
- रूपदेय एवं योगदेय परीक्षण का विवेचन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

अध्यापक अपने छात्रों की शैक्षिक योग्यता का तुलनात्मक अध्ययन करने हेतु विभिन्न प्रकार की परीक्षाओं का निर्माण करता है। लेकिन इस तुलनात्मक अध्ययन में केवल एक ही कक्षा के छात्रों की योग्यता की तुलना करना पर्याप्त नहीं बल्कि हम यहां यह भी देखना चाहेंगे कि एक कक्षा के छात्र दूसरी कक्षा के छात्रों से एक आयु समूह के छात्र दूसरी आयु समूह के छात्रों से योग्यता में किस प्रकार भिन्न हैं जिस प्रकार भार को हम ग्राम में प्रदर्शित करते हैं, लम्बाई को मीटर में प्रदर्शित करते हैं उसी प्रकार छात्र की विभिन्न विषयों संबंधित अनेक योग्यताओं एवं व्यक्तित्व संबंधी अनेक विशेषताओं एवं कोशलों का मूल्यांकन करने हेतु हमें एक प्रामाणिकरण पैमाने की आवश्यकता होती है। परीक्षण प्रामापीकरण से तात्पर्य उन परीक्षाओं से है जिनका प्रमापीकरण कर दिया गया हो। इस अध्याय में हम परीक्षण प्रमापीकरण का अध्ययन करेंगे।

नोट

9.1 परीक्षण प्रमापीकरण का अर्थ (Meaning of Test Standardisation)

किसी भी प्रमाणिक पैमाने में विश्वसनीयता, वैधता, मानक, व्यापकता आदि गुणों का निहित होना अनिवार्य है। लेकिन शिक्षण कार्य में प्रयुक्त पैमाने में प्रमुख कठिनाई निर्देश बिन्दु (Reference point) को निश्चित करने की होती है। यह पैमाना भौतिक निरीक्षणों सम्बंधी पैमाने (Physical Observation) जैसे—लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई से भिन्न होता है क्योंकि भैतिक निरीक्षणों के कार्य में हमारा निर्देश बिन्दु (Reference point) परम शून्य (Absolute zero) होता है जबकि शिक्षण कार्य में प्रदत्त किसी भी अंक को हम निर्देश बिन्दु नहीं मान सकते। व्यक्तित्व समबन्धी विभिन्न गुणों जैसे— बुद्धि, रुचि, अभियोग्यता, निष्पादन (Achievement) आदि के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि ये गुण किसी व्यक्ति में बिल्कुल नहीं हैं अथवा वह सर्वगुण सम्पन्न है। थोड़े बहुत गुण प्रत्येक व्यक्ति में उपस्थित रहते हैं। जिस प्रकार भौतिक गत में मापन हम परम शून्य से करते हैं उसी प्रकार शैक्षणिक मापन में भी ऐसे ही निर्देश बिन्दु से मापन प्रारम्भ करते हैं। यह निर्देश बिन्दु ही प्रमाप (Standard) कहलाता है।

एक मानकीकृत परीक्षण वह परीक्षण है जिसमें विषयवस्तु का चयन अनुभव के आधार पर किया गया हो, जिसके मानक ज्ञात हों, जिसके प्रशासन एवं फलांकन की समरूप विधियों को विकसित किया गया हो तथा फलांकन को वस्तुनिष्ठ विधि से किया गया हो।

9.2 निबन्धात्मक परीक्षाएँ तथा अधिगम के उद्देश्य (Essay Type Test and Learning Objectives)

निबन्धात्मक परीक्षायें विश्वसनीय तथा वैध नहीं होती हैं फिर भी शिक्षा के क्षेत्र में इनका अधिक प्रयोग होता है। उच्च अधिगम-उद्देश्यों के मापन के लिये निबन्धात्मक परीक्षायें ही सफलतापूर्वक प्रयुक्त की जा सकती है। निबन्धात्मक परीक्षाओं की सीमायें होते हुए भी इनको हटाया नहीं जा सकता है, अपितु इनके सुधार की आवश्यकता है। निबन्धात्मक परीक्षाओं में तीन प्रकार के सुधारों की आवश्यकता है-

1. प्रश्नों में सुधार
2. प्रश्न-पत्रों में सुधार
3. उत्तर-पुस्तकों के मूल्यांकन में सुधार

1. प्रश्नों में सुधार-निबन्धात्मक प्रश्नों के सुधार के लिये निम्नलिखित बातों को ध्यान से रखना चाहिये।

प्रत्येक प्रश्न को किसी अधिगम के विशेष उद्देश्य का मापन करना चाहिये। प्रश्नों की रचना में पाठ्य-वस्तु के साथ उद्देश्य को भी महत्व देना चाहिये। प्रश्नों में सम्मिलित की गई पाठ्य-वस्तु शुद्ध तथा वास्तविक होनी चाहिये। प्रश्नों की भाषा स्पष्ट तथा सरल होनी चाहिये। प्रश्नों का स्वरूप ऐसा होना चाहिये जिसके लिये निश्चित उत्तर हों। प्रश्नों का कठिनाई स्तर छात्रों के अनुकूल होना चाहिये। प्रश्नों का स्वरूप भी विविध प्रकार का होना चाहिये।

2. प्रश्न-पत्रों में सुधार—प्रश्न-पत्र ऐसे होने चाहिये जिनके द्वारा सभी अधिगम उद्देश्यों का मूल्यांकन किया जा सके। पाठ्य-वस्तु के साथ उद्देश्यों को विशेष महत्व दिया जाना चाहिये। एक ही पाठ्य-वस्तु विभिन्न उद्देश्यों के लिये प्रयुक्त की जा सकती है। प्रश्न-पत्र में अधिक विकल्प न दिये जायें अपितु प्रश्नों के अन्दर ही विकल्प देने चाहिये। प्रश्न-पत्र के निर्देश स्पष्ट तथा सरल भाषा में होने चाहिये। प्रश्न-पत्र का कठिनाई स्तर छात्रों के अनुरूप ही होना चाहिये। अंकों का वितरण प्रश्न के साथ ही देना चाहिये। मूल्यांकन के हेतु उत्तरों के नमूने भी देने चाहिये।

3. उत्तर-पुस्तकों के मूल्यांकन में सुधार—निबन्धात्मक परीक्षा को उत्तर-पुस्तकों के मूल्यांकन में सुधार करना चाहिये। मूल्यांकन के लिये योग्य व्यक्तियों को परीक्षक नियुक्त करना चाहिये। मूल्यांकन निर्देश सरल तथा स्पष्ट भाषा में होने चाहिये। उत्तरों के नमूने परीक्षकों को भेजने चाहिये। प्रश्न के प्रत्येक खण्ड के अलग-अलग अंक देने चाहिये। अंकों के स्थान पर रेंक (Rank) अथवा ग्रेड (Grade) दिये जाने चाहिये। केन्द्रित मूल्यांकन की व्यवस्था होनी चाहिये और परीक्षकों को उत्तर पुस्तक बांटने के बजाय प्रश्न बांटने चाहियें। एक ही परीक्षक द्वारा सभी उत्तर-पुस्तकों के एक प्रश्न का अंकन करना चाहिये।

नोट

अधिगम के उच्च उद्देश्यों के मूल्यांकन में निबन्धात्मक प्रश्न सफलतापूर्वक प्रयुक्त किये जाते हैं। उदाहरण निम्नांकित हैं।

शिक्षण तकनीकी की मानदण्ड परीक्षा के लिये निबन्धात्मक प्रश्न

सर्जनात्मक उद्देश्य का व्यावहारिक रूप

(1) छात्रों में शिक्षण-तकनीकी की परिभाषा के मूल्यांकन की योग्यता है।

प्रश्न– "शिक्षण के वैज्ञानिक-ज्ञान को कक्षा-शिक्षण में प्रयोग करने को शिक्षण-तकनीकी कहते हैं।" इस कथन की व्याख्या कीजिये।

(2) छात्रों में निबन्धात्मक परीक्षाओं की विशेषताओं के मूल्यांकन करने की क्षमता है।

प्रश्न– "निबन्धात्मक परीक्षाओं को हटाया नहीं जा सकता है अपितु उनमें सुधार की आवश्यकता है।" इस कथन की विवेचना कीजिये।

प्रश्न– "वस्तुनिष्ठ परीक्षा, निबन्धात्मक परीक्षा की विरोधी नहीं अपितु पूरक होती है।" इस कथन की आलोचना कीजिये।

(3) छात्रों में शिक्षण प्रक्रिया के तत्वों के विश्लेषण करने की योग्यता है।

प्रश्न– शिक्षण कला ही नहीं अपितु विज्ञान भी है। शिक्षण के वैज्ञानिक विश्लेषण की व्याख्या कीजिये।

इतिहास विषय की मानदण्ड-परीक्षा के लिये निबन्धात्मक प्रश्न

सर्जनात्मक उद्देश्य का व्यावहारिक रूप

(1) छात्रों में भारतीय इतिहास पर भूगोल के प्रभाव के विश्लेषण की योग्यता है।

प्रश्न– भारत की उत्तरी सीमा ने भारतीय इतिहास को कैसे प्रभावित किया है? विस्तार में विवेचन कीजिये।

(2) छात्रों में अशोक के मानव-कल्याण के योगदान के मूल्यांकन करने की क्षमता है।

प्रश्न– अशोक के मानव-कल्याण के योगदान की व्याख्या कीजिये।

प्रश्न– 'अशोक केवल एक कुशल प्रशासक ही नहीं अपितु समाज सुधारक भी था।' इस कथन की विवेचना कीजिये।

हिन्दी-भाषा की मानदण्ड-परीक्षा के लिये निबन्धात्मक प्रश्न

सर्जनात्मक उद्देश्य का व्यावहारिक रूप

(1) छात्रों में सूर एवं तुलसी के कार्यों के मूल्यांकन की योग्यता है।

प्रश्न– "सूर शशि, तुलसी रवि, उड्गन केशवदास" कथन की विवेचना कीजिये।

(2) छात्रों में 'साहित्य' के महत्व का समाज के सन्दर्भ में मूल्यांकन करने की योग्यता है।

प्रश्न– "साहित्य समाज का दर्पण है।" इस कथन की व्याख्या कीजिये।

भूगोल-विषय के मानदण्ड-परीक्षा हेतु निबन्धात्मक प्रश्नः

सर्जनात्मक उद्देश्य का व्यावहारिक रूप

(1) छात्रों में भूगोल तथा इतिहास के सम्बन्ध का विश्लेषण करने की योग्यता है।

प्रश्न– "भूगोल, पृथ्वी एवं मानव का अध्ययन है।" इस कथन की व्याख्या कीजिये।

प्रश्न– "भूगोल, पृथ्वी एवं मानव का अध्ययन है।" इस कथन की व्याख्या कीजिये। मानदण्ड परीक्षा में निबन्धात्मक तथा वस्तुनिष्ठ दोनों प्रकार की परीक्षाओं को प्रयुक्त किया जा सकता है।

9.3 मानदण्ड संबंधित परीक्षण (Criterion-Referenced Test)

मापन के क्षेत्र में (1960) से नवीन शब्दावली का विकास हुआ जिसे मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षण (Criterion Referenced Test) कहते हैं। शैक्षिक मापन में नवीन प्रकार के परीक्षणों का विकास हुआ जो परम्परागत निष्पत्ति परीक्षण से भिन्न प्रकार के परीक्षण माने जाते हैं। इन्हें 'उद्देश्य केन्द्रित परीक्षण' (Objective Centred Test) भी कहते हैं। इन्हें कई नामों से सम्बोधित किया जाता है, वास्तव में यह 'ज्ञान पक्ष सम्बन्धित परीक्षण (Domain Referenced Test)' अधिक व्यावहारिक है।

परम्परागत ढंग से जो 'प्रमाणिक-निष्पत्ति परीक्षा' तथा 'शिक्षक द्वारा निर्मित परीक्षण बनाये जाते हैं। उन्हें 'मानक सम्बन्धित परीक्षा' (Norm Referenced Test) की संज्ञा दी जाने लगी है। इसका लक्ष्य पाठ्यक्रम सम्बन्धित उपलब्धियों का मापन करने का है और छात्रों की उपलब्धि स्तर का मूल्यांकन समूह में स्तरीकरण (मानक) के रूप में किया जाता है। शिक्षण-अधिगम के उद्देश्यों की प्राप्ति को महत्व नहीं दिया जाता है। इन परीक्षणों की पाठ्य वैधता (Content-Validity) होती है। परीक्षण में सम्पूर्ण पाठ्य-वस्तु पर प्रश्न सम्मिलित किये जाते हैं।

मानदण्ड परीक्षण अधिक उपयोगी होते हैं। इनसे अधिगम-शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति के सम्बन्ध में विशिष्ट जानकारी होती है। इस परीक्षण के प्रवर्त्तक मानक परीक्षणों की आलोचना भी करते हैं शिक्षण-अधिगम के विशिष्ट इकाई के सम्बन्ध में कोई जानकारी नहीं होती है। मानक परीक्षणों से छात्रों के सामान्य स्तर का बोध होता है।

क्या आप जानते हैं ई. के. स्टॉग ने (1960) में नवीन प्रकार से शैक्षिक परीक्षाओं का विकास किया जो परम्परागत परीक्षणों से भिन्न हैं। स्टाग ने इन्हें 'मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षण' की संज्ञा दी जिनकी रचना तथा उपयोग मनोवैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित है।

परम्परागत परीक्षणों को शैक्षिक-मापन क्षेत्र में जितना शीघ्र हो सके, मापन के क्षेत्र से हटा देना चाहिये और उनके स्वप्न पर नवीन प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग करना चाहिये। इनका कथन है कि नवीन प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग करना चाहिये। इनका कथन है कि नवीन प्रकार के परीक्षण परम्परागत परीक्षणों से उत्तम तो नहीं कहे जो सकते अपितु इनकी उपयोगिता अधिक तथा विशेषतायें भिन्न हैं। इनका प्रयोग विशिष्ट परिस्थितियों में ही किया जा सकता है।

इन दोनों प्रकार परीक्षणों की विशेषताओं में समानता भी है तथा एक-दूसरे से विशिष्ट रूप में भिन्न भी हैं। दोनों प्रकार के परीक्षणों को व्यापक रूप में बोधगम्य किया जा सकता है। दोनों परीक्षणों का रूप समान होता है। वस्तुनिष्ठ परीक्षणों के प्रारूप को ही दोनों प्रकार के परीक्षणों में प्रयुक्त किया जाता है। पाठ्य-वस्तु दोनों परीक्षणों की एक ही होती है तथा अंकन (Scoring) प्रक्रिया भी समान होती है। इन समानताओं के अतिरिक्त दो परीक्षण एक-दूसरे से भिन्न होते हैं।

9.4 मानदण्ड तथा मानक संबंधित परीक्षणों में अन्तर (Difference Between Criterion and Norm Referenced Test)

इन दोनों प्रकार के परीक्षणों में अधोलिखित अन्तर होते हैं—

(1) दोनों परीक्षण भिन्न प्रकार की सूचनाओं को देते हैं, 'मानदण्ड परीक्षण' के प्रयोग से यह ज्ञात होता है कि अनुदेशन तथा शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है, जबकि 'मानक परीक्षण' के प्रयोग से यह विदित होता है कि छात्रों ने पाठ्य-वस्तु कहाँ तक सीखी है।

नोट

(2) दोनों परीक्षणों के परिणामों के अर्थापन में अन्तर होता है। मानदण्ड परीक्षण 'अनुदेशनात्मक उद्देश्यों' की प्राप्ति को बतलाते हैं तथा यह भी जानकारी होती है कि छात्र के सीखने में कहाँ पर कमजोरी रही है। उद्देश्यों की प्राप्ति के रूप में किया जाता है। मानक परीक्षण के परिणामों का अर्थापन कक्षा समूह के स्तर के रूप में किया जाता है जिसे शंताशमान भी कहते हैं। छात्र की कमजोरियां तथा उपलब्धियों का अर्थापन समूह में उसके स्थान से किया जाता है।

(3) मानदण्ड परीक्षण के निर्माण में अनुदेशन तथा शिक्षण के सभी उद्देश्यों पर प्रश्नों की रचना की जाती है, जिससे उद्देश्यों की दृष्टि से वैध (Valid) बनाया जा सके। मानक परीक्षण की रचना में शिक्षण की समस्त पाठ्य-वस्तु की दृष्टि से कई उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है अर्थात् एक ही पाठ्य-वस्तु का शिक्षण विभिन्न स्तरों पर किया जाता है जिससे विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है। इस दृष्टि से 'मानदण्ड परीक्षण' अधिक उत्तम प्रकार का शैक्षिक मापन है।

(4) मानदण्ड परीक्षण पर छात्रों के उत्तरों के अंकन से यह विदित होता है कि छात्रों में उद्देश्यों की प्राप्ति में कितनी सफलता रही है, जबकि 'मानक परीक्षण' पर छात्रों के उत्तरों के अंकन से यह ज्ञात होता है कि छात्रों ने पाठ्य-वस्तु को कितना सीखा है।

(5) मानदण्ड परीक्षण के परिणाम छात्र की अपेक्षा शिक्षक के लिये अधिक उपयोगी होते हैं जिनसे वह अपने अनुदशन की प्रक्रिया में सुधार तथा विकास कर सकता है यह पुनर्बलन (Reinforcement) का कार्य करता है, जबकि 'मानक परीक्षण' से शिक्षक को अपने विकास के लिये कोई दिशा नहीं मिलती है।

(6) मानदण्ड परीक्षण के निर्माण में शिक्षण-अधिगम उद्देश्यों को प्राथमिकता दी जाती है। पद विश्लेषण में पद कठिनाई तथा भिन्नता मान के अतिरिक्त उद्देश्यों को महत्व दिया जाता है। मानकों का विकास नहीं किया जाता है। उद्देश्यों का वर्गीकरण किया जाता है। जबकि मानव परीक्षण का निर्माण परम्परागत प्रक्रिया से किया जाता है, इन्हें प्रामाणिक बनाने के मानकों को विकसित करना आवश्यक होता है।

नोट्स 'मानदण्ड परीक्षण' से उद्देश्यों की प्राप्ति का उल्लेख किया जाता है और मानक परीक्षणों से छात्र में कितने प्रश्नों के उत्तर सही दिये हैं, उसके स्तर का बोध होता है।

9.5 रूप देय परीक्षण तथा योग देय परीक्षण (Formative and Summative Tests)

आधुनिक शैक्षिक मापन के क्षेत्र में बड़ी तेजी से विकास हो रहा है। नवीन प्रकार के परीक्षणों का विकास तथा उपयोग किया जाने लगा है। मानदण्ड परीक्षण को शिक्षण-अधिगम के मापन की दृष्टि से इन्हें दो विशिष्ट रूपों में विकसित किया जाता है–

1. रूप देय परीक्षण (Formative Test) तथा
2. योग देय परीक्षण (Summative Test)|

1. रूप देय परीक्षण (Formative Test)–शिक्षण तथा अनुदेशन के प्रस्तुतीकरण के पाठ्य-वस्तु को इकाइयों में बाँट कर शिक्षण किया जाता है। अत: प्रत्येक इकाई के अन्त में परीक्षण किया जाना चाहिये, छात्रों की अपेक्षित प्राप्ति न होने पर निदान किया जाये और पुन: सुधारात्मक (Remedial teaching) शिक्षण किया जाये। और इसके बाद इकाई परीक्षण या रूप देय परीक्षण (Formative test) दिया जाये। इस प्रकार के परीक्षण का रूप मानदण्ड परीक्षणों के समान होता है परन्तु इसकी रचना प्रत्येक इकाई के मापन के लिये की जाती है जिससे छात्रों को पाठ्य-वस्तु के स्वामित्व का अवसर दिया जाता है। रूप देय परीक्षण (Formative test) का उपयोग अधिगम-शिक्षण को प्रभावशाली बनाने तथा छात्रों की पाठ्य-वस्तु की इकाई के रूप में स्वामित्व एवं उद्देश्यों की प्राप्ति को महत्व दिया जाता है।

नोट

2. योग देय परीक्षण (Summative Test)—पाठ्य-वस्तु की सभी इकाई के शिक्षण के अन्त में जब छात्र सभी इकाइयों को पृथक्-पृथक् रूप में देय परीक्षणों (Formative Tests) को पास कर लेते हैं उसके अन्त में योग देय परीक्षण (Summative Test) को दिया जाता है जिससे छात्रों को सामान्य स्तर का बोध होता है और छात्रों की सफलता के आधार पर शिक्षण व अनुदेशन की प्रभावशीलता का मूल्यांकन होता है, जिससे शिक्षक तथा अनुदेशन को पुनर्बलन मिलता है और अपने आगे के शिक्षण के नियोजन तथा व्यवस्था में सहायता मिलती है। छात्रों की सफलता के आधार पर उद्देश्यों की प्राप्ति का भी निर्णय लिया जाता है। ये दोनों प्रकार के परीक्षण शिक्षण-अधिगम की दृष्टि से एक-दूसरे के पूरक हैं। रूप देय परीक्षण में छात्रों की अधिगम कठिनाइयों को महत्व दिया जाता है योग देय परीक्षण से शिक्षण की प्रभावशीलता का मापन होता है।

अधिगम-उद्देश्यों के मूल्यांकन की दृष्टि से वस्तुनिष्ठ तथा निबन्धात्मक परीक्षायें एक दूसरे की पूरक होती हैं। 'उद्देश्यों द्वारा व्यवस्था' प्रक्रिया को शिक्षण की व्यवस्था में प्रयुक्त करने से परीक्षाओं को विशिष्ट एवं सार्थक बनाया जा सकता है। परीक्षाओं के प्रदत्तों के आधार पर शिक्षण व्यवस्था (Organising teaching) तथा शिक्षण को आगे बढ़ने (Leading teaching) में सुधार एवं परिवर्तन लाया जा सकता है।

टास्क उद्देश्य केन्द्रित परीक्षण क्या है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में 'सत्य' तथा 'असत्य' लिखिए—

1. परीक्षण में अपेक्षित प्रश्नों को सम्मिलित करने से 50 प्रतिशत अधिक प्रश्नों का निर्माण किया जाता है।
2. पद विश्लेषण से प्रत्येक पद के कठिनाई स्तर तथा विभेदीकरण शक्ति की गणना की जाती है।
3. निबन्धात्मक परीक्षाएँ उच्च अधिगम उद्देश्यों के मापन के लिए सर्वोत्तम होती है।
4. एक ही पाठ्य वस्तु विभिन्न उद्देश्यों के लिए प्रयुक्त नहीं की जा सकती है।

9.6 सारांश (Summary)

- परीक्षण के पदों/प्रश्नों के निर्माण के बाद उनकी जाँच की जाती है। परीक्षण में अपेक्षित प्रश्नों को सम्मलित करने से 50 प्रतिशत अधिक प्रश्नों का निर्माण किया जाता है।
- परीक्षण पदों की जाँच दो स्तर पर की जाती है। आरम्भिक जाँच व्यक्तिगत रूप से कुछ छात्रों पर की जाती है जिससे पदों की भाषा की कठिनाई तथा विकल्पों की उपयुक्तता आदि में सुधार किया जाता है। उसके बाद परीक्षण का प्रारूप तैयार कर लिया जाता है। इसके बाद परीक्षण से सम्बन्धित समूह को दिया जाता है और परीक्षण की अवधि का भी अनुमान लगाया जाता है। समूह पर परीक्षण की जाँच द्वारा जो उत्तर पत्रक प्राप्त होते हैं उनके आधार पर पद-विश्लेषण किया जाता है।
- अन्तिम परीक्षण को एक बड़े समूह पर दिया जाता है जिसके लिए परीक्षण का निर्माण किया गया है। बड़े समूह को देने के बाद जो प्राप्तांक आते हैं उनकी सहायता से परीक्षण की विश्वसनीयता तथा वैधता ज्ञात की जाती है।
- इसके बाद परीक्षण को अधिक बड़े समूह को देकर प्राप्तांकों के आधार पर मानको का विकास किया जाता है। परीक्षण जब विश्वसनीय तथा वैध होता है तभी मानकों का विकास किया जाता है।

नोट

- उच्च अधिगम-उद्देश्यों के मापन के लिये निबन्धात्मक परीक्षायें ही सफलतापूर्वक प्रयुक्त की जा सकती है। निबन्धात्मक परीक्षाओं की सीमायें होते हुए भी इनको हटाया नहीं जा सकता है, अपितु इनके सुधार की आवश्यकता है। निबन्धात्मक परीक्षाओं में तीन प्रकार के सुधारों की आवश्यकता है–
  1. प्रश्नों में सुधार
  2. प्रश्न-पत्रों में सुधार
  3. उत्तर-पुस्तकों के मूल्यांकन में सुधार
- छात्रों में शिक्षण-तकनीकी की परिभाषा के मूल्यांकन की योग्यता है।
- वस्तुनिष्ठ परीक्षा, निबन्धात्मक परीक्षा की विरोधी नहीं अपितु पूरक होती है।
- छात्रों में भारतीय इतिहास पर भूगोल के प्रभाव के विश्लेषण की योग्यता है।
- छात्रों में अशोक के मानवी-कल्याण के योगदान के मूल्यांकन करने की क्षमता है।
- मापन के क्षेत्र में (1960) से नवीन शब्दावली का विकास हुआ जिसे मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षण (Criterion Referenced Test) कहते हैं। शैक्षिक मापन में नवीन प्रकार के परीक्षणों का विकास हुआ जो परम्परागत निष्पत्ति परीक्षण से भिन्न प्रकार के परीक्षण माने जाते हैं। इन्हें 'उद्देश्य केन्द्रित परीक्षण' (Objective Centred Test) भी कहते हैं। इन्हें कई नामों से सम्बोधित किया जाता है, वास्तव में यह 'ज्ञान पक्ष सम्बन्धित परीक्षण (Domain Referenced Test)' अधिक व्यावहारिक है।
- परम्परागत ढंग से जो 'प्रमाणिक-निष्पत्ति परीक्षा' तथा 'शिक्षक क्षरा निर्मित परीक्षण बनाये जाते हैं उन्हें 'मानक सम्बन्धित परीक्षा' (Norm Referenced Test) की संज्ञा दी जाने लगी है। इसका लक्ष्य पाठ्यक्रम सम्बन्धित उपलब्धियों का मापन करने का है और छात्रों की उपलब्धि स्तर का मूल्यांकन समूह में स्तरीकरण (मानक) के रूप में किया जाता है।
- इन दोनों प्रकार के परीक्षणों में अधोलिखित अन्तर होते हैं–

  (1) दोनों परीक्षण भिन्न प्रकार की सूचनाओं को देते हैं, 'मानदण्ड परीक्षण' के प्रयोग से यह ज्ञात होता है कि अनुदेशन तथा शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है, जबकि 'मानक परीक्षण' के प्रयोग से यह विदित होता है कि छात्रों ने पाठ्य-वस्तु कहाँ तक सीखा है।

  (2) दोनों परीक्षणों के परिणामों के अर्थापन में अन्तर होता है। मानदण्ड परीक्षण 'अनुदेशनात्मक उद्देश्यों' की प्राप्ति को बतलाते हैं तथा यह भी जानकारी होती है कि छात्र के सीखने में कहाँ पर कमजोरी रही हैं। उद्देश्यों की प्राप्ति के रूप में किया जाता है। मानक परीक्षण के परिणामों का अर्थापन कक्षा समूह के स्तर के रूप में किया जाता है जिसे शंताशमान भी कहते हैं। छात्र की कमजोरियां तथा उपलब्धियों का अर्थापन समूह में उसके स्थान से किया जाता है।
- आधुनिक शैक्षिक मापन के क्षेत्र में बड़ी तेजी से विकास हो रहा है। नवीन प्रकार के परीक्षणों का विकास तथा उपयोग किया जाने लगा है। मानदण्ड परीक्षण को शिक्षण-अधिगम के मापन की दृष्टि से इन्हें दो विशिष्ट रूपों में विकसित किया जाता है–
  1. **रूप देय परीक्षण (Formative Test)**–शिक्षण तथा अनुदेशन के प्रस्तुतीकरण के पाठ्य-वस्तु को इकाइयों में बाँट कर शिक्षण किया जाता है। अत: प्रत्येक इकाई के अन्त में परीक्षण किया जाना चाहिये, छात्रों की अपेक्षित प्राप्ति न होने पर निदान किया जाये और पुन: सुधारात्मक (Remedial teaching) शिक्षण किया जाये।
  2. **योग देय परीक्षण (Summative Test)**–पाठ्य-वस्तु की सभी इकाई के शिक्षण के अन्त में जब छात्र सभी इकाइयों को पृथक्-पृथक् रूप में देय परीक्षणों (Formative Tests) को पास कर लेते हैं उसके अन्त में योग देय परीक्षण (Summative Test) को दिया जाता है जिससे छात्रों को सामान्य स्तर का बोध होता है और छात्रों की सफलता के आधार पर शिक्षण व अनुदेशन की प्रभावशीलता का मूल्यांकन होता है।

नोट

9.7 शब्दकोश (Keywords)

- **परीक्षण**—जाँच करना।
- **निबन्धात्मक**—निबंध के रूप में।

9.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. परीक्षण के प्रमाणीकरण से आप क्या समझते हैं? उल्लेख कीजिए।
2. मानदण्ड परीक्षण क्या है?
3. मानदण्ड तथा मानक सम्बन्धिक परीक्षणों में अंतर बताइये।
4. रूप देय तथा योग देय परीक्षण की व्याख्या कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. असत्य।

9.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–10: पद विश्लेषण: पद कठिनता, विभेदीकरण सूची, विकर्षन की प्रभावशीलता (Conversion of Raw Scores into Standard Scores, T-scores, C-scores, Z-scores, Stanine Scores, Percentiles)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

10.1 पद विश्लेषण का अर्थ (Meaning of Item Analysis)

10.2 पद की कठिनाई के स्तर की परिभाषा (Definition of Item Difficulty Value)

10.3 पद विश्लेषण की विधियाँ (Methods of Item Analysis)

10.4 पद विश्लेषण की प्रक्रिया (Procedure of Item Analysis)

10.5 पदों के चयन एवं निरस्त करने के मानदण्ड (Criteria for Item Selection and Rejection)

10.6 निदानात्मक परीक्षण के पदों का विश्लेषण (Item Analysis of Diagnostic Test-Item)

10.7 कठिनाई सूचांक एवं विभेदीकरण को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Influencing Item Difficulty and Discrimination Index)

10.8 पद विश्लेषण की समस्याएँ (Problem of Item Analysis)

10.9 पद विश्लेषण का मूल्यांकन (Evaluation of Item Analysis)

10.10 सारांश (Summary)

10.11 शब्दकोश (Keywords)

10.12 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

10.13 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- पद विश्लेषण के अर्थ, प्रक्रिया के चयन एवं मूल्यांकन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

परीक्षण की प्रमुख विशेषताएँ परीक्षण में सम्मिलित पदों पर निर्भर होती हैं। एक परीक्षण की सबसे प्रमुख विशेषता उसकी वैधता होती है। वैधता का तात्पर्य यह है कि परीक्षण जिस गुण-विशेष के लिए बनाया गया है उसका मापन किस सीमा तक करता है। यह विशेषता परीक्षण में सम्मिलित *पदों की वैधता* (Item Validity) पर निर्भर करती

नोट

है। यदि परीक्षण के पदों की वैधता अधिक है तो इसकी भी वैधता अधिक होगी। इसलिए इस अध्याय में पदों की विशेषताओं और उनकी गणनाओं का विस्तार में वर्णन किया गया है।

10.1 पद विश्लेषण का अर्थ (Meaning of Item Analysis)

पद विश्लेषण एक ऐसी प्रविधि है जिसके द्वारा एक परीक्षण के पदों का चयन किया जाता है, पदों को निरस्त किया जाता है, तथा पदों में सुधार भी किया जाता है। परीक्षण के लिए पद विश्लेषण द्वारा चयन किए हुए पदों द्वारा उसके उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है, क्योंकि चयनित पदों की ऐसी विशेषताएँ होती हैं जिससे परीक्षण के प्रमुख उद्देश्यों की प्रप्ति की जा सके। एक परीक्षण के प्रमुख उद्देश्य अधोलिखित होते हैं–

1. अभ्यर्थियों का चयन करना,
2. अभ्यर्थियों का वर्गीकरण करना,
3. अभ्यर्थियों को अनुस्थितियाँ प्रदान करना,
4. अभ्यर्थियों की पदोन्नति करना,
5. अभ्यर्थियों के भविष्य के व्यवहारों के सम्बन्ध में पूर्व कथन करना, तथा
6. अभ्यर्थियों में व्यक्तिगत भिन्नता स्थापित करना।

परीक्षण के उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अलग-अलग परीक्षणों की रचना करनी होती है, और उनमें सम्मिलित पदों की विशेषताएँ भिन्न होती हैं। उदाहरण के लिए प्रथम उद्देश्य–पद विश्लेषण प्रविधि द्वारा एक परीक्षण को अधिक सार्थक और उपयोगी बनाया जा सकता है। पदों की विशेषताएँ और उनका चयन इस प्रविधि द्वारा ही सम्भव होता है। इस प्रकार पद विश्लेषण की क्रिया मापन के अन्तर्गत सबसे महत्वपूर्ण होती है।

> *नोट्स* अभ्यर्थियों का चयन करने के लिए जिस परीक्षण की रचना की जायेगी उसमें सम्मिलित पदों का कठिनाई स्तर (Difficulty Value) अधिक होना चाहिए, जबकि शेष उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए परीक्षण के पदों का कठिनाई स्तर सामान्य होना चाहिए।

पद विश्लेषण के कार्य (Function of Items Analysis)

पद विश्लेषण के प्रमुख तीन कार्य हैं–

(1) परीक्षण के लिए अपेक्षित पदों का चयन करना,

(2) अनुपयुक्त पदों को निरस्त करना, तथा

(3) पदों की संरचना में सुधार करना

पदों की जाँच में यह भी विदित हो जाता है कि बहुविकल्पीय प्रश्नों में कौन सा विकल्प (क्पेजतंबजवत) अधिक शक्तिशाली है, और कौन-सा शक्तिहीन है। इस प्रकार की जानकारी होने पर ऐसे विकल्पों को बदलने से पदों में सुधार किया जाता है।

इन कार्यों के अतिरिक्त पद विश्लेषण में अधोलिखित कार्यों को करना सम्भव होता है, जिससे परीक्षण की सार्थकता और उपादेयता बढ़ती है।

(अ) परीक्षण निर्माणकर्त्ता को प्रत्येक पद के सम्बन्ध में सांख्यिकीय द्वारा *कठिनाई स्तर सूचांक* तथा *विभेदीकरण सूचांक* प्राप्त हो जाता है, जिससे पदों की जाँच वस्तुनिष्ठ रूप से की जाती है।

नोट

(ब) किन्हीं परिस्थितियों में दो समान्तर परीक्षणों की रचना करने की आवश्यकता होती है। दोनों परीक्षणों की पाठ्यवस्तु एक ही होती है, परन्तु पदों की विशेषताएँ भिन्न होती हैं। इसलिए पदों के समान सूचांकों को अलग-अलग दो परीक्षणों में रखने से परीक्षण के समानान्तर रूप तैयार किए जा सकते हैं।

(स) **शक्ति परीक्षण** (Power Test) के अन्तर्गत विजातीय को सम्मिलित किया जाता है। शक्ति परीक्षण को सामान्यत: गत्यात्मक परीक्षण के रूप में प्रयुक्त करते हैं। इसलिए परीक्षणों को विजातीय बनाने के लिए पद विश्लेषण प्रविधि को प्रयुक्त किया जाता है।

पद की विशेषताएँ (Characteristics of an Item)

एक पद की प्रमुख विशेषताएँ तीन होती हैं–

(1) कठिनाई स्तर (Difficulty Value or Pass Percentage),

(2) विभेदीकरण की शक्ति अथवा पद विश्वसनीयता (Discriminating Power or Item reliability), तथा

(3) विभेदीकरण की शक्ति अथवा पद वैधता (Discriminatory Power or Item Validity)।

इन विशेषताओं को अधोलिखित पंक्तियों में दिया गया है–

(1) कठिनाई स्तर अथवा पद सही करने वालों का प्रतिशत (Difficulty Value or Pass Percentage of an Item)–परीक्षण को सोद्देश्य बनाने में पद की प्रथम विशेषता-कठिनाई स्तर का विशेष महत्व होता है। पद विश्लेषण के प्रथम सोपान के पदों के कठिनाई स्तर की गणना की जाए। कठिनाई स्तर का तात्पर्य यह होता है कि समूह के कितने प्रतिशत छात्रों को उसका वास्तव में सही उत्तर ज्ञात है। यदि किसी पद को सभी छात्र सही कर लेते हैं, अर्थात् 100 प्रतिशत छात्र उसका सही उत्तर जानते हैं, तो उस पद का कठिनाई सूचांक एक होगा। इसके विपरीत कोई भी छात्र पद का सही उत्तर नहीं दे सका तो उसका सूचांक शून्य होगा, परन्तु प्रथम पद जिसे सभी छात्र सही कर लेते हैं तो वह सबसे सरल पद होगा। जिसे कोई छात्र नहीं कर पाता, उसका कठिनाई सूचांक शून्य है। वह सबसे कठिन प्रश्न होगा। इस प्रकार के पदों को किसी प्रकार के परीक्षण में सम्मिलित नहीं किया जाता है, क्योंकि ऐसे पदों से मापन के उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती है। इसलिए परीक्षण में इन दोनों पदों के मध्य सूचनांक वाले पदों का चयन किया जाता है।

> *क्या आप जानते हैं* *गति परीक्षण* में पद विश्लेषण का विशेष उपयोग नहीं है और गत्यात्मक परीक्षण में पदों की व्यवस्था कठिनाई स्तर के आधार पर की जाती है। सबसे सरल प्रश्न सबसे पहले और सबसे कठिन प्रश्न सबसे अंत में रखा जाता है। साधारणत: गत्यात्मक परीक्षणों का उपयोग किया जाता है।

10.2 पद की कठिनाई के स्तर की परिभाषा (Definition of Item Difficulty Value)

कठिनाई स्तर की परिभाषा अधोलिखित हैं–"किसी पद को एक समूह के परीक्षार्थी किस अनुपात अथवा कितने प्रतिशत सही कर लेते हैं उसे कठिनाई स्तर कहते हैं।"

"The difficulty value of an item is defined as the proportion or percentage of the examinees who answer the item correclty."

इस परिभाषा में पद को सही करने के प्रतिशत को कठिनाई स्तर कहा है, परन्तु किसी पद को अनुमान से भी सही किया जा सकता है तथा करते भी है। अत: सही करने वालों का प्रतिशत पद का वास्तविक कठिनाई स्तर नहीं होता है। कठिनाई स्तर का सम्बन्ध परीक्षार्थियों के उस प्रतिशत से होता है, जो वास्तव में पद के सही उत्तर

नोट

को जानते हैं। अत: कठिनाई स्तर की अधोलिखित परिभाषा अधिक सही है।

"किसी पद को एक न्यादर्श के परीक्षार्थियों का कितने अनुपात में उस पद के उत्तर को वास्तविक रूप में जानते हैं। उस अनुपात को कठिनाई स्तर सूचांक कहा जाता है।"

"It means the difficulty value of an item may be defined as the proportion of certain sample of subject who actually know the answer of an item."

यह परिभाषा वास्तव में कठिनाई स्तर की मूल परिभाषा है। किसी पद को पास करने की प्रतिशत पद का सही कठिनाई स्तर सूचांक नहीं हो सकता है। साधारणत: कठिनाई स्तर को इसी सन्दर्भ में परिभाषित किया जाता है, जो वास्तव में सही नहीं है।

यह कठिनाई स्तर का सूचांक ज्ञात करते समय अनुमान से सही करने का सूचांक प्रयुक्त नहीं किया जायेगा तो कठिनाई स्तर सूचांक अधिक प्राप्त होगा। इसलिए आवश्यक है कि शुद्ध कठिनाई स्तर सूचांक के लिए अनुमान से सही करने का सूत्र का प्रयोग किया जाए तथा करना भी चाहिए।

(2) विभेदीकरण शक्ति अथवा पद विश्वसनीयता की परिभाषा (Definition of Discriminating Power or Item Reliability)—परीक्षण के पद की दूसरी प्रमुख विशेषता उसकी विभेदीकरण की शक्ति होती है। यह विशेषता भी परीक्षण को सोद्देश्य बनाने में आवश्यक है। विभेदीकरण की शक्ति से तात्पर्य यह है कि वह उच्च योग्यता वाले एवं निम्न योग्यता वाले छात्रों में अन्तर करती है। यदि परीक्षण के पद में यह शक्ति नहीं है, तो उसका चयन करना व्यर्थ है, और परीक्षण से उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं हो सकती पद विश्वसनीयता की परिभाषा इस प्रकार है—

यदि परीक्षण का एक पद उच्च और निम्न समूह के परीक्षार्थियों में किस अंश तक अन्तर करता है, उच्च और निम्न समूह को उसी प्रशिक्षण के प्राप्तांकों के आधार पर किया हो तो उसे पद विश्वसनीयता अथवा विभेदीकरण शक्ति कहते हैं।"

"Item reliability may be defined as the degree to which an item differentiates between high and low groups, they are high and low on the basis of the same test scores."

पद के *विभेदीकरण शक्ति* का तात्पर्य यह होता है कि उच्च और निम्न वर्ग के छात्रों में किस अंश तक अन्तर करता है। यदि किसी परीक्षण के पद को उच्च वर्ग के परीक्षार्थी जितने प्रतिशत सही कर पाते हैं उतने ही प्रतिशत यदि निम्न वर्ग के परीक्षार्थी सही कर लेते हैं तो पद की विभेदीकरण की शक्ति शून्य होगी अर्थात् वह उच्च और निम्न वर्ग में अन्तर नहीं कर पाता है। यदि उच्च वर्ग के परीक्षार्थियों की सही करने की प्रतिशत निम्न वर्ग के छात्रों की अपेक्षा अधिक होती है तो उस पद की विभेदीकरण की शक्ति धनात्मक होती है अर्थात् वह पद उच्च और निम्न वर्ग में अन्तर कर लेता है। ऐसे पद का ही चयन किया जाता है। उच्च और निम्न वर्ग का निर्धारण उसी परीक्षण के प्राप्तांकों के आधार पर किया जाता है।

(3) पद वैधता अथवा विभेदीकरण शक्ति (Definition of Item Validity or Discriminating Power)—पद के विभेदीकरण की शक्ति की गणना दो प्रकार से की जाती है। जब उच्च और निम्न वर्ग का निर्धारण उसी परीक्षण के प्राप्तांकों के आधार पर किया जाता है और प्रत्येक पद का विश्लेषण करते हैं कि उच्च और निम्न वर्ग में किस अंश तक अन्तर करता है, तो उसे पद विश्वसनीयता कहा जाता है जिसका उल्लेख उपरोक्त पंक्तियों में किया गया है।

परन्तु जब उच्च वर्ग का निर्धारण किसी अन्य मानदण्ड परीक्षण अथवा कसौटी के आधार पर किया जाये तब किसी परीक्षण के पदों का विश्लेषण करें कि इन उच्च और निम्न वर्ग किस अंश तक अन्तर करता है तब उसे *पद-वैधता* कहते हैं। इसकी परिभाषा अधोलिखित है—

यदि परीक्षण का एक पद उच्च और निम्न समूह के परीक्षार्थियों में किस अंश तक अन्तर करता है, उच्च और निम्न समूह का निर्धारण किसी अन्य मानदण्ड परीक्षण के प्राप्तांकों के आधार पर किया हो तो *पद वैधता* कहते हैं। अथवा विभेदीकरण की शक्ति भी कहते हैं।

"Item validity may be defined as the degree to which the item differentiate between high and low groups, they are high and low on the basis of some criterion test score."

नोट

इन परिभाषाओं से विदित होता है कि विभेदीकरण की शक्ति की गणना के लिए उच्च और निम्न समूहों का निर्धारण करना आवश्यक होता है चाहे उसे परीक्षण के प्राप्तांकों अथवा किसी अन्य मानदण्ड परीक्षण के आधार पर किया जाए। उसके बाद पदों का विश्लेषण किया जाता है कि उनमें इन समूहों में किस अंश तक अन्तर करने की शक्ति है।

विभेदीकरण की शक्ति तीन प्रकार की होती है–

(अ) शून्य विभेदीकरण,

(ब) धनात्मक विभेदीकरण, तथा

(स) ऋणात्मक विभेदीकरण।

(अ) शून्य विभेदीकरण–शून्य विभेदीकरण उसे कहते हैं जब किसी पद को उच्च और निम्न समूह के समान अनुपात में सही कर लेते हैं, जब किसी पद को उच्च वर्ग के 30 प्रतिशत और निम्न वर्ग के भी 30 प्रतिशत छात्र सही करते हैं। दोनों समूह के परीक्षार्थियों के सही करने के प्रतिशत समान है। इसका अर्थ यह है कि पद उच्च और निम्न वर्ग में अन्तर नहीं करता है। ऐसे पदों का चयन नहीं होता उसे निरस्त कर दिया जाता है, क्योंकि ऐसे पदों से किसी प्रकार के उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती है।

(ब) धनात्मक विभेदीकरण–धनात्मक विभेदीकरण उसे कहते है कि जब किसी पद को उच्च वर्ग के परीक्षार्थियों के सही करने की प्रतिशत निम्न समूह के परीक्षार्थियों के सही करने की प्रतिशत की अपेक्षा अधिक होती है। जैसे–किसी पद को उच्च वर्ग के 35 प्रतिशत परीक्षार्थी सही कर लेते हैं और उसे निम्न वर्ग के 15 प्रतिशत परीक्षार्थी सही कर पाते हैं, तब इन दोनों में अन्तर 20 प्रतिशत का है। इसका अर्थ यह है कि इस पद को निम्न वर्ग की अपेक्षा उच्च वर्ग के 20 प्रतिशत छात्र अधिक सही कर लेते हैं। परीक्षण की रचना में ऐसे ही पदों का चयन किया जाता है जिससे परीक्षण सोद्देश्य बनता है। यह धनात्मक विभेदीकरण शक्ति होती है।

(स) ऋणात्मक विभेदीकरण–ऋणात्मक विभेदीकरण शक्ति उसे कहते हैं जब किसी पद को उच्च वर्ग के परीक्षार्थियों के सही प्रतिशत निम्न वर्ग के परीक्षार्थियों के सही करने की प्रतिशत की अपेक्षा कम करते हैं। जैसे–उच्च वर्ग के 25 प्रतिशत (25%) छात्र किसी पद को सही करते हैं और निम्न वर्ग के 30 प्रतिशत (30%) छात्र किसी पद को सही कर लेते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि उच्च वर्ग की अपेक्षा निम्न वर्ग के 5 प्रतिशत छात्र अधिक सही कर लेते हैं। यह 5 प्रतिशत ऋणात्मक है, ऐसे पदों को निरस्त किया जाता है और किसी भी प्रकार के परीक्षणों में सम्मिलित नहीं करते।

विभेदीकरण की शक्ति की गणना में उच्च और निम्न वर्ग के सही करने की प्रतिशत अथवा अनुपात को प्रयुक्त किया जाता है, परन्तु परीक्षार्थी पद को अनुमान से भी सही कर लेते हैं। इसलिए सही करने के प्रतिशत से वास्तविक विभेदीकरण की शक्ति नहीं ज्ञात की जा सकती, इसके लिए अनुमान से सही करने के सूत्र का प्रयोग करके यह प्रयास किया जाए कि वास्तव में उच्च और निम्न वर्ग के कितने प्रतिशत छात्र पद के सही उत्तर को जानते हैं। तभी वास्तविक विभेदीकरण सूचांक प्राप्त किया जा सकता है।

10.3 पद विश्लेषण की विधियाँ (Methods of Item Analysis)

मापन के साहित्य का अवलोकन करने पर यह विदित होता है कि पद विश्लेषण की अनेक विधियों को विकसित किया गया है, परन्तु उनमें से दो विधियाँ अधिक प्रचलित हैं–

(1) डेविस की पद विश्लेषण विधि (Davis Method Item Analysis)–यह पद विश्लेषण की मूल प्रविधि है जिसका प्रयोग साफल्य परीक्षण के पदों के चयन के लिए किया जाता है। इस विधि की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें परीक्षार्थियों के सही उत्तरों को प्रयुक्त करते हैं।

(2) स्टेनले की पद विश्लेषण विधि (Stanley Method of Item Analysis)—यह प्रविधि भी अधिक प्रयुक्त की जाती है, क्योंकि इसका प्रयोग निदानात्मक परीक्षण के पद विश्लेषण में किया जाता है। इसके अन्तर्गत परीक्षार्थियों के गलत उत्तरों को पद विश्लेषण में प्रयुक्त करते हैं।

पद विश्लेषण में कठिनाई सूचांक और विभेदीकरण सूचांक ज्ञात करने में अलग-अलग प्रविधियों को प्रयुक्त करते हैं।

1. **कठिनाई सूचांक की प्रविधि** (Techniques of Item difficulty Value)—साधारणतया दो प्रविधियों को प्रयुक्त करते हैं—
   (अ) डेविस तथा हार्पर की अनुपात प्रविधि।
   (ब) प्रामाणिक प्राप्तांक अथवा सामान्य सम्भवयता वक्र। (Standard Scores or Normal Probability Curve)।
2. **विभेदीकरण अथवा पद वैधता की प्रविधि** (Technique of Item Discriminating Power or Item Validity)—यह प्रविधि इस प्रकार है—
   (अ) डेविस हार्पर की अनुपात विधि,
   (ब) सह-सम्बन्ध प्रविधियाँ निम्नलिखित हैं—
      (1) द्विपांक्तिक सह-सम्बन्ध प्रविधि (Bi-Serial correlation technique)
      (2) बिन्दु-द्विपांक्तिक सह-सम्बन्ध प्रविधि (Point bi-serial correlation techniques)
      (3) फाई सह-सम्बन्ध प्रविधि (Phi-correlation technique)
      (4) टेट्राकोरिक सह-सम्बन्ध प्रविधि (Tetrachoric correlation technique)
      (5) फ्लेनागन सह-सम्बन्ध प्रविधि
      (6) साइमण्ड प्रविधि (Symond's Technique)।

(3) चरिता विश्लेषण विधि द्वारा पद विश्लेषण (Item Analysis Through Analysis Variance Technique)—पद विश्लेषण के लिए सांख्यिकी की चरिता विश्लेषण की प्रविधि को प्रयुक्त करते हैं। इसके लिए द्विभुजी तालिका तैयार की जाती है। पंक्ति में पद और स्तम्भ में परीक्षार्थी को व्यवस्थित करके परीक्षार्थियों के सही उत्तरों को अंकित करते हैं, जिससे दो तरह के प्रदत्त निकलते हैं कि परीक्षार्थियों ने कुल कितने पद सही किए हैं, और दूसरे पद को कितने परीक्षार्थियों ने सही किया। इस प्रकार परीक्षार्थी चरिता और पद चरिता दोनों को ज्ञात कर पदों के सूचांक की गणना की जाती है। उस प्रकार की तालिका को विश्वसनीयता के अध्याय में दिया गया है। इसका प्रयोग विश्वसनीयता गुणांक ज्ञात करने के लिए किया गया, जो सबसे शुद्ध विधि मानी जाती है।

नोट्स "परीक्षण के अन्तिम रूप तैयार करने से पूर्व उत्तम पदों के चयन हेतु पद-विश्लेषण विधि का प्रयोग करना आवश्यक होता है, क्योंकि परीक्षण की विभिन्न विशेषताएँ उसके सम्मिलित पदों के गुणों पर ही निर्भर होती है।" जैसे—विश्वसनीयता, वैधता, प्राप्तांक, वितरण आदि।

10.4 पद विश्लेषण की प्रक्रिया (Procedure of Item Analysis)

पद विश्लेषण से सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा करने पर विदित होता है कि पद विश्लेषण करने की तेईस (23) विधियाँ है। इन विभिन्न विधियों द्वारा एक पद की उपरोक्त विशेषताओं का विश्लेषण किया जाता है। इस अध्याय में दो विधियों का विवेचन विस्तार में किया गया है—

नोट

(1) निष्पादन परीक्षण के पदों का विश्लेषण *डेवीज की विधि* द्वारा
(Item Analysis of Prognostic Test)

(2) निदानात्मक विश्लेषण के पदों का विश्लेषण स्टेनले की विधि द्वारा
(Item Analysis of Dignostic Test)।

पद विश्लेषण के लिए किसी भी विधि का प्रयोग करें, उन सभी के लिये यह आवश्यक है कि अनुमान से सही करने की त्रुटि को कम किया जाए और यह ज्ञात किया जाए कि कितने परीक्षार्थी वास्तव में उस प्रश्न के सही उत्तर को जानते हैं तभी कठिनाई सूचांक और विभेदीकरण सूचांक की गणना शुद्ध रूप में की जा सकती है। इसके लिए मनोवैज्ञानिक ने अलग-अलग सूत्रों को प्रयोग किया है।

अनुमान से सही करने में शुद्धीकरण (Correction for Guessing)—अनुमान से सही करने के अवसर में शुद्धिकरण के लिए मनोवैज्ञानिक ने कई प्रकार के सूत्रों का विकास किया। यहाँ *जे.पी. गिलफोर्ड* तथा *हारस्ट* द्वारा विकसित सूत्रों का उल्लेख किया गया है—

(1) गिलफोर्ड का सूत्र (Guilford's Formula-Correction for Guessing)।

गिलफोर्ड ने जिस सूत्र को विकसित किया है उसका प्रयोग साधारणत: किया जाता है, सूत्र इस प्रकार है—

$$S = R - \frac{W}{(n-1)} \qquad ...(1)$$

जबकि—

S = वास्तविक रूप से सही उत्तर जानने वालों की संख्या

R = सही करने वालों की संख्या

W = गलत करने वालों की संख्या

n = पद में दिए गए विकल्पों की संख्या

गिलफोर्ड का यह सूत्र अधोलिखित अवधारणाओं पर आधारित है—

1. प्रथम अवधारणा यह है कि पद के सभी विकल्प समान रूप से परीक्षार्थियों को आकर्षिक करते हैं। इसलिए वास्तविक प्राप्तांक के लिए उनका औसत घटा देना चाहिए।
2. दूसरी अवधारणा यह है कि सभी परीक्षार्थी प्रश्नों के उत्तर को अनुमान से देने का प्रयास करते हैं।

इस सूत्र को एक उदाहरण से स्पष्ट किया गया है। यहाँ पर एक बहुविकल्प प्रश्न दिया गया है तथा उन विकल्पों पर छात्रों के उत्तरों को अंकित किया गया है—

पद	पद विश्लेषण का कार्य
(अ) उत्तम पदों का चयन करना	8
(ब) अनुपयुक्त पदों को निरस्त करना	7
(स) पदों का चयन करना तथा निरस्त करना	20
(द) उपरोक्त सभी	15

इस पद को 50 छात्रों ने सरल किया, जिसका सही उत्तर (द) है और (अ), (ब) तथा (स) विकल्प है। इसमें *गिलफोर्ड* का सूत्र प्रयोग करने पर— $R = 15$ तथा $W = 35$ विकल्पों की संख्या $n = 4$ है। सूत्र का प्रयोग करने पर—

$$S = R - \frac{W}{(n-1)} \qquad ...(1)$$

$$= 15 - \frac{35}{3} = 15 - 12 = \mathbf{3}$$

इसका अर्थ यह हुआ कि इस पद के सही उत्तरों को वास्तव में 3 ही छात्र जानते हैं।

नोट

(2) हॉरस्ट का शुद्धि सूत्र (Horst's Formula Correction for Guessing)—**हॉरस्ट** ने जो सूत्र विकसित किया है उसमें अधिक शक्तिशाली विकल्प को महत्व दिया है। सूत्र इस प्रकार है—

$$S = R - Dp \quad \text{...(2)}$$

जबकि— S = वास्तविक रूप में सही उत्तर जानने वालों की संख्या

R = सही करने वालों की संख्या

Dp = सबसे शक्तिशाली विकल्प

हॉरस्ट का यह सूत्र निम्नांकित अवधारणाओं पर आधारित है—

1. पहली अवधारणा यह है कि सभी विकल्प समान रूप से परीक्षार्थियों को आकर्षित नहीं करते, परन्तु उनके आकर्षण करने का एक क्रम होता है।
2. यह अवधारणा अधिक शुद्ध तथा सूक्ष्म है, क्योंकि इसमें शक्तिशाली विकल्प को महत्व दिया जाता है जो बहु-विकल्प प्रश्नों के लिए अधिक उपयुक्त है।

उपरोक्त उदारहण में (स) विकल्प सबसे अधिक शक्तिशाली विकल्प है, क्योंकि इसने सबसे अधिक छात्रों को आकर्षित किया है। यह सही उत्तर से भी अधिक शक्तिशाली है। क्योंकि इस पद में $R = 15$ तथा $Dp = 20$ है। सूत्र का प्रयोग करने पर—

$$S = R - Dp$$

$$S = 15 - 20 = 5$$

इसका अर्थ यह हुआ कि इस पद के सही उत्तर को कोई नहीं जानता, बल्कि सही जानने वालों की संख्या ऋण में प्राप्त हुई है।

अनुमान से सही करने का सूत्र प्रयोग करने से पहले यह भी देख लेना चाहिए कि विकल्प सही विकल्प से अधिक आकर्षक न हो, यदि ऐसा है तो उनके चयन करने के बजाय उसमें सुधार किया जाए, और ऐसे शक्तिशाली विकल्प को हटा देना चाहिए और उसकी जगह अन्य विकल्प लिया जाए, जैसे—

पद—	**पद**	**विश्लेषण का कार्य**
	(अ) उत्तम पदों का चयन करना	12
	(ब) अनुपयुक्त पदों को निरस्त करना	8
	(स) पदों का चयन करना तथा निरस्त करना	10
	(द) उपरोक्त सभी	20

इस पद में सही उत्तर (द) विकल्प है। इस प्रश्न में हॉरस्ट का सूत्र प्रयोग करने पर $R = 20$ तथा $Dp = 12$ है। सूत्र का प्रयोग करने पर—

$$S = R - Dp$$

$$= 20 - 12 = \mathbf{8}$$

इसका अर्थ यह हुआ कि 50 छात्रों में से 8 छात्र उसके सही उत्तर को वास्तव में जानते हैं।

गिलफोर्ड का सूत्र प्रयोग करने पर—

जबकि $R = 20, W = 30$ तथा $n = 4$

$$S = R - \frac{W}{n-1} = 20 - \frac{30}{3}$$

$$= 20 - 10 = \mathbf{10}$$

नोट

गिलफोड्ड के सूत्र के अनुसार वास्तव में सही उत्तर जानने वालों की संख्या 10 है। पद विश्लेषण में इस मान का उपयोग किया जायेगा।

इन दोनों सूत्रों में गिलफोर्ड सूत्र अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है क्योंकि हॉरस्ट की अपेक्षा परीक्षार्थी कम दण्डित होता है। इसलिए गिलफोर्ड सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

उच्च एवं निम्न समूह में विभाजन की प्रविधि (कैली का वर्गीकरण) (Technique of Dichotomising High and Low Groups)

पद के विभेदीकरण का सूचांक ज्ञात करने में उच्च और निम्न समूह का होना आवश्यक होता है। तभी यह गणना की जा सकती है कि उच्च समूह के और निम्न समूह के छात्र किस अनुपात में उस पद को सही कर लेते हैं। किसी समूह को अनेक प्राप्तांकों के आधार पर तीन प्रमुख ढंग से उच्च और निम्न वर्ग में विभाजित कर सकते हैं।

(1) प्राप्तांकों की दृष्टि से सबसे ऊपर के 25 प्रतिशत तथा तल के 25 प्रतिशत (Top and bottom 25 percent)

(2) प्राप्तांकों की दृष्टि से सबसे ऊपर के 33 प्रतिशत तथा तल के 33 प्रतिशत (Top and bottom 35 percent)

(3) प्राप्तांकों की दृष्टि से सबसे ऊपर के 27 प्रतिशत तथा तक के 27 प्रतिशत (Top and bottom 27 percent) यह कैली ने दिया।

साधारणत: तीसरे प्रकार का विभाजन ऊपर के तथा तल के 27 प्रतिशत छात्रों को लिया जाता है। ऊपर वालों को उच्च समूह तथा नीचे वालों को निम्न समूह की संज्ञा दी जाती है। इस विभाजन को *टी. एल. कैली* ने दिया था। **कैली** का यह विभाजन अधिक प्रसिद्ध है। इसका प्रमुख कारण कोई सैद्धान्तिक आधार नहीं है। इसका प्रचलन पदों के विश्लेषण में सभी ने किया है, और इससे अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं। इसका तात्पर्य यह है कि विभेदीकरण सूचांक प्रभावी प्राप्त हुए हैं। उपयोगिता के आधार पर इसे महत्व दिया जाता है।

विभाजन प्रविधि में पद विश्लेषण के लिए परीक्षण को एक समूह पर दिया है। जिसे जाँच सोपान (trying-out) कहते हैं। समूह की उत्तर पुस्तिकाओं का कुंजी की सहायता से अंकन कर लेते हैं। इस प्रकार से जो प्राप्तांक मिलते हैं उन्हें आवृत्ति वितरण में व्यवस्थित कर लिया जाता है। उच्च समूह के चयन के लिए सबसे ऊपर के 27 प्रतिशत छात्रों को लिया जायेगा। इसके लिए 73 शतांश ज्ञात किया जाता है, और निम्न समूह के चयन के लिए 27 शतांश की गणना की जाती है।

परीक्षण प्राप्तांकों की आवृत्ति वितरण तालिका
(उच्च तथा निम्न 27 प्रतिशत कैली वर्गीकरण)

प्राप्तांक	आवृत्ति	संचयी आवृत्ति	शतांश	समूह तथा विस्तार
90–99	4	100		
80–89	6	96	उच्च 27%	उच्च वर्ग विस्तार
70–79	10	90	प्रतिशत	(65–99)
60–69	14	80	P 73	.........65.5
50–59	28	66	मध्य	46 प्रतिशत
40–49	16	38	P 27	.........42.63
30–39	12	22	निम्न	निम्न विस्तार
20–29	7	10	27 प्रतिशत	
10–19	3	3	प्रतिशत	(10–43)
योग	100			

नोट

इस तालिका से विदित होता है कि शतांश 27 का मान 42.63 और शतांश 73 का मान 64.50 है इसका अर्थ यह हुआ कि इस समूह के 43 प्राप्तांक तक के छात्रों को निम्न वर्ग तथा 65 प्राप्तांक से ऊपर के छात्रों को उच्च वर्ग में सम्मिलित किया जायेगा और इनके उत्तर पत्रकों का अंकन अलग-अलग किया जायेगा।

परीक्षण के उत्तर पत्रकों का अंकन दो प्रकार से किया जाता है—

1. प्रत्येक छात्र ने परीक्षण के कितने पदों का उत्तर सही दिया है सही उत्तरों का योग छात्र का प्राप्तांक कहलाता है। साधारणतः इसी प्रकार के अंकन का प्रचलन है।
2. परन्तु पद विश्लेषण में अंकन प्रक्रिया भी भिन्न है। इसके अन्तर्गत पद का अंकन किया जाता है कि समूह के कितने छात्रों ने उस पद को सही किया है। इस प्रकार के अंकन की गणना छात्रों के सही करने के अनुपात अथवा छात्रों के सही करने की प्रतिशत में की जाती है।

कैली के विभाजन सत्ताईस (27) प्रतिशत उच्च और सत्ताईस (27) प्रतिशत निम्न प्रविधि का प्रयोग उपरोक्त तालिका में किया गया है। इस विधि के अन्तर्गत उत्तर पत्रकों को उनके प्राप्तांकों के आधार पर आरोही-अवरोही क्रम में व्यवस्थित करके ऊपर के 27 प्रतिशत उत्तर पत्रक अलग कर लिये जायें जिन्हें उच्च वर्ग कहेंगे और तल के 27 प्रतिशत अलग करके निम्न वर्ग कहा जायेगा।

उच्च तथा निम्न समूह द्वारा पदों के पास करने के अनुपात अथवा प्रतिशत की गणना करना (Calculation of Proportion or Percentages Passing items by High and Low Groups)

पदों को सही करने वाले छात्रों की गणना उच्च और निम्न समूह द्वारा अलग-अलग की जाती है। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक पद को सही करने का अनुपात उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के लिए अलग-अलग ज्ञात किया जायेगा। सही अनुपात की गणना में अनुमान से सही करने के सूत्र का भी प्रयोग साथ-साथ कर सकते हैं। इसमें **गिलफोर्ड** अथवा **डेविस** के सूत्र का प्रयोग करना अधिक उपयुक्त रहता है। इस तथ्य का विवेचन एक उदाहरण की सहायता से उपरोक्त पंक्तियों में किया जा चुका है।

उच्च वर्ग के सही करने के अनुपात च्$_h$ तथा निम्न वर्ग के सही करने के अनुपात च्$_1$ से प्रगट करते हैं। सूत्र इस प्रकार है—

$$P_h = \frac{R - \frac{W}{(n-1)}}{R + W} \qquad ...(1)$$

जबकि— R = पद को सही करने वाले छात्रों की संख्या

W = पद को गलत करने वाले छात्रों की संख्या

n = पद में विकल्पों की संख्या

तथा P_h = उच्च वर्ग के पद सही करने वालों का अनुपात

इसी प्रकार—

$$P_1 = \frac{R - \frac{W}{(n-1)}}{R + W} \qquad ...(2)$$

जबकि— R = पद को सही करने वाले छात्रों की संख्या

W = पद को गलत करने वाले छात्रों की संख्या

n = पद में विकल्पों की संख्या

तथा P_1 = निम्न वर्ग के पद सही करने वालों का अनुपात

नोट

उदाहरणार्थ–एक पद को उच्च वर्ग के 10 छात्रों में सभी ने सही किया और निम्न वर्ग के 10 छात्रों में से 4 छात्रों ने सही किया। पद में विकल्पों की संख्या 4 है।

$$P_h = \frac{10 - \frac{0}{3}}{10 + 0} = \frac{10}{10} = \mathbf{1.00}$$

$$P_L = \frac{4 - \frac{6}{3}}{4 + 6} = \frac{2}{10} = \mathbf{0.20}$$

उपरोक्त सूत्रों का प्रयोग परीक्षण के आरम्भिक पदों के लिए किया जाता है परन्तु अन्तिम प्रश्नों के अनुपात की गणना हेतु निम्नांकित सूत्रों का प्रयोग होता है–

$$P_h = \frac{R - \frac{W}{(n-1)}}{T - NR} \text{ तथा } P_L = \frac{R - \frac{W}{(n-1)}}{T - NR} \qquad \text{...(3)}$$

जबकि– P_h = उच्च वर्ग के छात्रों का अनुपात

P_1 = निम्न वर्ग के छात्रों का अनुपात

R = पद को सही करने वालों की संख्या

W = पद को गलत करने वालों की संख्या

T = छात्रों का योग

तथा NR = कितने छात्र उस पद तक नहीं पहुँच सके

उदहारण 2–उच्च वर्ग के 10 छात्रों में से 8 वें पद को 6 सही कर सके और 2 छात्र उस पद को नहीं पहुँच सके और 2 ने गलत किया। निम्न वर्ग के 10 छात्रों में से इसी पद को 3 ने सही किया और 3 ने गलत किया तथा 4 छात्र उस पद तक नहीं पहुँच सके। इनका अनुपात ज्ञात कीजिए जबकि पद में 4 विकल्प दिए गये हैं।

उच्च वर्ग

$$P_h = \frac{R - \frac{W}{(n-1)}}{T - NR} = \frac{6 - \frac{2}{3}}{10 - 2} \qquad \text{...(3)}$$

$$= \frac{6 - 0.67}{8} = \frac{5.33}{8} = \mathbf{0.67}$$

निम्न वर्ग

$$P_L = \frac{R - \frac{W}{(n-1)}}{T - NR} = \frac{3 - \frac{3}{3}}{10 - 4} = \frac{2}{6} = \mathbf{0.33} \qquad \text{...(4)}$$

उच्च और निम्न वर्ग के छात्रों द्वारा प्रत्येक पद को छात्रों द्वारा सही के अनुपात की गणना की जाती है। उपरोक्त सूत्रों के अन्तर्गत अनुमान से सही करने के सूत्र को भी प्रयुक्त कर लिया गया है, जिसके वास्तविक सही करने का अनुपात प्राप्त हो सके। यह अनुपात सरल सूत्रों द्वारा भी ज्ञात किया जा सकता है वह मान शुद्ध नहीं होते हैं। जैसे–

नोट

$$P_h = \frac{R_h}{T}, \quad P_L = \frac{R_L}{T} \qquad ...(5)$$

प्रथम उदाहरण में इन सूत्रों का प्रयोग करने पर–

$$P_h = \frac{10}{10} = \mathbf{1.00} \qquad P_L = \frac{4}{10} = \mathbf{0.40}$$

उच्च वर्ग के अनुपात में अन्तर नहीं आया अपितु निम्न वर्ग के अनुपात में अन्तर अधिक प्राप्त हुआ क्योंकि इसमें अनुमान से सही करने वालों की त्रुटि सम्मिलित है। यदि पद-विश्लेषण में कठिनाई सूचांक तथा विभेदीकरण सूचांक की गणना सही नहीं होगी। परिणाम यह होगा कि उत्तम पदों का चयन नहीं होगा और परीक्षण विश्वसनीय तथा वैध भी नहीं होगा। अत: अनुमान से सही करने का सूत्र अनुपात की गणना में प्रयुक्त करना आवश्यक होता है।

पद विश्लेषण की प्रक्रिया में परीक्षा के प्रत्येक पद के लिए अंकन उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के लिए अलग-अलग किया जाता है और इन सूत्रों की सहायता से सही करने का अनुपात ज्ञात कर लेते हैं। अनुमान से सही करने के सूत्र के प्रयोग से सही करने वाले छात्रों की संख्या भी ज्ञात की जा सकती है। अधोलिखित तालिका में इसी प्रक्रिया का अनुसरण करके पदों के सूचांकों की गणना की गई है।

पद-विश्लेषण तालिका

पद	उच्च वर्ग		निम्न वर्ग		कठिनाई	विभेदीकरण
क्रम संख्या	सही करने वालों की संख्या	अनुपात P_h	सही करने वालों की संख्या	अनुपात P_L	सूचांक D.V.	सूचनांक D.V.
1	10	1.00	3	0.30	0.65	0.70
2	8	0.80	4	0.40	0.60	0.40
3	7	0.70	2	0.20	0.45	0.50
4	6	0.60	5	0.50	0.55	0.10
5	3	0.30	5	0.50	0.40	−0.20
6	9	0.90	6	0.60	0.75	0.30
7	5	0.50	2	0.20	0.35	0.30
8	4	0.40	4	0.40	0.40	0.00

इस तालिका में अनुपात के आधार पर कठिनाई सूचांक तथा विभेदीकरण सूचांक की गणना की है और अधोलिखित सूत्रों का प्रयोग किया गया है–

$$\text{कठिनाई सूचांक (D.V.)} = \frac{P_h + P_L}{2} = \frac{1 + .30}{2} = \mathbf{0.65}$$

$$\text{विभेदीकरण सूचांक (D.V.)} = (P_h - P_L) = 1 - 0.30 = \mathbf{0.70}$$

जबकि– P_h = उच्च वर्ग के सही करने का अनुपात 1.00

P_L = निम्न वर्ग के सही करने का अनुपात 0.30

विभेदीकरण सूचांक तीन प्रकार का होता है–

(1) धनात्मक सूचांक–वह होता है जब उच्च वर्ग का अनुपात निम्न वर्ग के अनुपात की अपेक्षा अधिक होता है।

(2) ऋणात्मक सूचांक–वह होता है जब उच्च वर्ग का अनुपात निम्न वर्ग के अनुपात की अपेक्षा कम होता है।

नोट

(3) **शून्य सूचांक**–वह होता है जब उच्च वर्ग का अनुपात निम्न वर्ग के अनुपात के समान होता है।
विभेदीकरण सूचांक के आधार पर पदों का चयन करना तथा निरस्त करना अधिक सरल होता है। ऋणात्मक सूचांक वाले शून्य सूचांक वाले पदों को निरस्त कर दिया जाता है, परन्तु कठिनाई सूचांक में ऐसा वर्गीकरण नहीं किया जा सकता है, अपितु परीक्षण के उद्देश्य की दृष्टि से कठिनाई सूचांक का निर्धारण चयन के लिए किया जाता है। कठिनाई सूचांक प्राप्तांकों के वितरण को निर्धारित करता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **दिए गए कथन के सामने सही (✓) अथवा (×) का निशान लगाइए–**
   1. पद विश्लेषण से अच्छे प्रश्नों का चयन नहीं किया जाता है। ☐
   2. पदों के चयन में कठिनाई तथा विभेदीकरण सूचांक दोनों को महत्व दिया जाता है। ☐
   3. पद विश्लेषण से पदों को निरस्त भी किया जाता है। ☐
   4. पद विश्लेषण में कैली विभाजन को प्रयुक्त नहीं करते हैं। ☐
   5. निदानात्मक परीक्षण पदों में गलत उत्तरों को महत्व दिया जाता है। ☐
   6. पद-विश्लेषण में अनुमान सही करने का सूत्र सूचांकों को प्रभावित नहीं करता है। ☐

10.5 पदों के चयन एवं निरस्त करने के मानदण्ड (Criteria for Item Selection and Rejection)

परीक्षण के लिए पदों का चयन निम्नांकित मानदण्डों के आधार पर किया जाता है–चयन करना, निरस्त करना तथा सुधार करना तीन क्रियाये होती है।

1. जिन पदों का कठिनाई सूचांक सबसे अधिक या सबसे कम होता है, उन्हें निरस्त किया जाता है। अधिक कठिनाई स्तर का अर्थ यह होता है कि बहुत कम छात्र उस पद को सही कर पाते हैं। सबसे कम कठिनाई स्तर का तात्पर्य यह है कि सभी परीक्षार्थी उस पद को सही कर लेते हैं। ऐसे पदों को परीक्षण में सम्मिलित करने से किसी भी प्रकार के उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती है।
2. ऐसे पद जिनका विभेदीकरण सूचांक ऋणात्मक अथवा शून्य होता है। उन्हें भी निरस्त किया जाता है, क्योंकि ऐसे पद अनुपयुक्त होते हैं।
3. ऐसे पदों को जिनका कठिनाई सूचांक (.40 से .70) तक होता है, उनका चयन कर लिया जाता है। ऐसे पदों की संख्या लगभग 50 प्रतिशत होनी चाहिए।
4. ऐसे पद जिनका विभेदीकरण सूचांक धनात्मक हो, उनका ही चयन किया जाता है।
5. कठिनाई सूचांक के आधार पर परीक्षण में पदों का प्रतिशत निम्नलिखित ढंग से होना चाहिए–

कठिनाई सूचांक के आधार पर पदों की संख्या

क्रमांक	कठिनाई सूचांक (D.V.)	पदों का प्रतिशत	पदों के प्रकार
1.	(.20 – .30)	5	अधिक कठिन
2.	(.30 – .40)	20	कठिन
3.	(.40 – .50)	50	सामान्य
4.	(.60 – .70)	20	सरल
5.	(.70 – .80)	5	अधिक सरल
विस्तार	**(.20 – .80)**	**100**	

साधारणतः .20 से .80 के कठिनाई सूचांक का चयन उपरोक्त अनुपात में किया जाना चाहिए।

कठिनाई सूचांक के सम्बन्ध मे यह सावधानी रखनी चाहिए कि कठिनाई सूचांक अधिक होने पर पद सरल होगा, अर्थात् कठिनाई स्तर होगा। जैसे—किसी पद का कठिनाई सूचांक 0.80 है, इसका अर्थ यह है कि 80 प्रतिशत छात्र उसे सरल कर लेते हैं अर्थात् पद सरल है। इसके विपरीत यदि कठिनाई सूचांक कम है तो पद कठिन है, अर्थात् कठिनाई स्तर अधिक होगा। जैसे—किसी पद की कठिनाई स्तर सूचांक .20 है अर्थात 20 प्रतिशत छात्र ही उसे सही कर पाते हैं, जिससे पद कठिन है तथा कठिनाई स्तर अधिक है।

किसी पद का चयन केवल किसी एक सूचांक के आधार पर नहीं किया जा सकता, प्रत्येक पद का चयन कठिनाई सूचांक और विभेदीकरण सूचांक दोनों को ध्यान में रखकर किया जाता है। उदाहरणार्थ—किसी पद का कठिनाई सूचांक .50 है, परन्तु विभेदीकरण शून्य है तो ऐसे पद को भी निरस्त कर दिया जाता है।

पद विश्लेषण में पदों का चयन करना, निरस्त करना तथा पदों में सुधार करने का निर्णय प्रत्येक पद के दोनों सूचांकों के आधार पर किया जाता है। व्यावहारिक रूप से निर्णय लेने की प्रक्रिया कठिन होती है। इसलिए मनोवैज्ञानिकों ने इस प्रक्रिया के लिए ग्राफ के प्रस्तुतीकरण का प्रयोग किया, जिसका वर्णन निम्नांकित पंक्तियों में किया गया है।

ग्राफ की सहायता से पदों का चयन करना (Selection of items with the help of Graphical presentation)—परीक्षण के पदों के कठिनाई सूचांक तथा विभेदीकरण सूचांक को ग्राफ पर प्रस्तुत करते हैं। 'क' अक्ष पर कठिनाई सूचांक और 'ख' अक्ष पर विभेदीकरण सूचांक प्रदर्शित करते हैं। सूचांक को प्रदर्शित करने का पैमाना (.10 सूचांक = 1 सेमी.) होता है। दोनों सूचांकों को एक ही पैमाने से दो दशमलव अंकों तक प्रदर्शित किया जाता है। कठिनाई सूचांक तथा विभेदीकरण सूचांक की सहायता से प्रत्येक पद का ग्राफ पर अंकित कर लिया जाता है। परीक्षण के उद्देश्य की दृष्टि से इनका सीमांक कर लिया जाता है।

पद विश्लेषण से पदों का कठिनाई स्तर तथा विभेदीकरण की शक्ति

पद क्रमांक	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20
क.स्त. D.V.	.60	.54	.62	.55	.40	.70	.35	.55	.28	.68	.70	.25	.40	.18	.50	.70	.50	.82.	.40	.48
वि.श.	.70	.42	.56	.10	00	.32	.40	.64	.50	.16	.54	.22	.62	.30	.30	.64	.72	.40	.24	.50

प्रत्येक पद को ग्राफ पर प्रदर्शित करने के लिए दोनों मानों कठिनाई सूचांक तथा विभेदीकरण सूचांक की सहायता ली गई है। कठिनाई सूचांक को 'क' अक्ष पर तथा विभेदीकरण सूचांक को 'ख' अक्ष पर प्रदर्शित किया गया है। जिससे पदों के चयन की छलनी (filter) तैयार की जाती है। प्रत्येक पद पर चयन हेतु विचार नहीं करना होता है।

पदों का ग्राफ पर प्रदर्शन

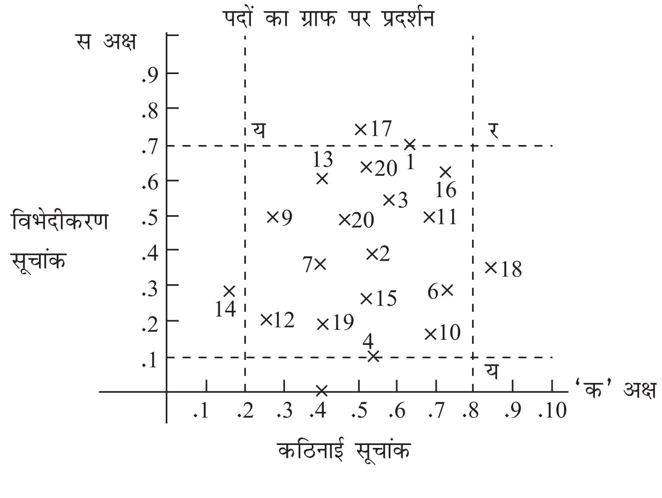

नोट

ग्राफ के प्रदर्शन में परीक्षण के सभी पदों क्रमांक उनके कठिनाई सूचांक तथा विभेदीकरण सूचांक के आधार पर अंकित किया जाता है। परीक्षण के उद्देश्य प्राप्ति की दृष्टि से अपेक्षित पदों का कठिनाई सूचांक का विस्तार .20 से .80 तक होना चाहिए और विभेदीकरण सूचांक का विस्तार .10 से .70 तक होना चाहिए। इन सीमाओं को बिन्दु रेखाओं द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। य र ल व आयत के अन्तर्गत के क्रमांकों वाले सभी पदों का चयन कर लिया जायेगा और उससे बाहर वाले क्रमांक पदों को निरस्त कर दिया जायेगा और जो क्रमांक पद इस चतुर्भुज की सीमा पर अंकित हुए हैं उनमें सुधार किया जा सकता है, यदि अधिक पदों की आवश्यकता हो। इसे पद विश्लेषण की छलनी भी कहते हैं। पदों के सम्बन्ध में निर्णय लेने के लिए सोचना नहीं पड़ता, अपितु अपेक्षित पद स्वत: ही प्राप्त हो जाते हैं। सबसे उत्तम एवं सरल विधि है।

पद विश्लेषण की प्रविधि केवल एक बार से सम्पन्न नहीं होती अर्थात् अपेक्षित पदों के लिए सुधार किए गये पदों की पुन: जांच समूह को देकर की जाती है। कितनी बार समूह को देकर पद विश्लेषण करना होगा, इसकी कोई संख्या सुनिश्चित नहीं की जा सकती हैं परीक्षण निर्माणकर्त्ता के कौशल एवं दक्षता पर निर्भर करता है। दूसरे पदों की अपेक्षित संख्या एक बार में भी प्राप्त हो सकती है, परन्तु अपेक्षित संख्या न होने पर कई बार भी करनी पड़ती है।

साधारणत: यह प्रविधि परीक्षण के अन्तिम सोपान में की जाती है।

हारपर द्वारा डेविस के ग्राफ में सुधार (Modification by Harper in Davis's Graph)—*हार्पर* ने कठिनाई सूचांक और विभेदीकरण सूचांक की उपरोक्त गणना विधि में सुधार किया है। इन्होंने संशोधित मान प्राप्त करने के लिए एक चार्ट को तैयार किया है। किसी पद के उच्च समूह के अनुपात तथा निम्न समूह के अनुपात को प्रयुक्त करके चार्ट की सहायता से कठिनाई सूचांक और विभेदीकरण सूचांक प्राप्त कर लिया जाता है। चार्ट की सहायता से संशोधित मान प्राप्त होते हैं।

हारपर द्वारा संशोधित मान

पद	उच्च समूह	निम्न समूह	डेविस के अनुसार		हार्पर चार्ट के अनुसार	
	P_h	P_L	क. सू.	वि. सू.	क. सू.	वि. सू.
1.	75	50	62.5	25	58	15
2.	82	25	53.5	57	52	40
3.	60	50	55	10	48	7
4.	55	45	50	10	44	5
5.	40	15	27.5	25	25	12

उपरोक्त तालिका से *डेविस* के द्वारा कठिनाई सूचांक और विभेदीकरण सूचांक की गणना की गई और इन्हीं पदों के आनुपातिक मान की सहायता से *हार्पर* चार्ट से कठिनाई सूचांक तथा विभेदीकरण सूचांक ज्ञात किया गया है। इन मानों में अधिक अन्तर प्रतीत होता है। *हार्पर* चार्ट द्वारा प्राप्त मानों को संशोधित मान कहा गया है।

हार्पर के चार्ट की सहायता से इन मानों को शीघ्रता से प्राप्त किया जा सकता है। समय की बचत होती है तथा प्राप्त मान संशोधित होते हैं। डेविस में मानों की अपेक्षा व्यावहारिक होते हैं। इसलिए पद-विश्लेषण *हैर्पर* के *चार्ट* का प्रयोग किया जाता है। समूह पर जाँच कई बार करनी होती है तथा पदों में सूचांक भी ज्ञात करने होते हैं। यह चार्ट पर विश्लेषण की प्रविधि को सरल कर देता है।

10.6 निदानात्मक परीक्षण के पदों का विश्लेषण (Item Analysis of Diagnostic Test-Item)

स्टेनले ने निदानात्मक परीक्षण के पदों के विश्लेषण के लिए प्रविधि का विकास किया है। निदानात्मक परीक्षण का प्रमुख उद्देश्य छात्र की कमजोरियों और उनके कारणों का निदान करना होता है। इसलिए छात्रों की त्रुटियाँ को अधिक

नोट

महत्वपूर्ण माना गया है। छात्र ने पद को सही क्यों नहीं किया, इसका निदान गलत उत्तर के आधार पर किया जाता है। इसलिए *स्टेनले* ने निदानात्मक परीक्षण के पद विश्लेषण में सही उत्तरों के स्थान पर गलत उत्तरों का प्रयोग किया है। परीक्षार्थियों को उच्च और निम्न वर्ग में विभाजित करके गलत उत्तरों के आनुपातिक मान ज्ञात किये जाते हैं। और उसी प्रकार पद के सूचांकों की गणना की जाती है।

स्टेलने की विधि द्वारा पद विश्लेषण

पद	उच्च वर्ग की त्रुटि 10	निम्न वर्ग की त्रुटि 10	उच्च वर्ग अनुपात P_h	निम्न वर्ग अनुपात P_L	कठिनाई सूचांक	विभेदीकरण सूचांक	
1.	1	5	.10	.50	.30	.40	√
2.	2	7	.20	.70	.45	.50	√
3.	4	8	.40	.80	.60	.40	√
4.	8	10	.80	1.00	.90	.20	√
5.	0	2	.00	.20	.10	.20	√
6.	3	8	.30	.80	.55	.50	√
7.	7	4	.70	.40	.55	−.30	×
8.	4	8	.40	.80	.60	.40	√
9.	8	8	.80	.80	.80	.00	×
10.	2	9	.20	.90	.50	.70	√

कठिनाई स्तर तथा विभेदीकरण शक्ति के लिए सूत्र प्रयुक्त होते हैं–

$$\textbf{कठिनाई स्तर} \text{ (D.V.)} = \frac{P_h + P_l}{2} = \frac{.10 + .50}{2} = \mathbf{.30}$$

विभेदीकरण की शक्ति (D.P.) = $P_L - P_h$ = .50 – .10 = **.40**

इस विधि में कठिनाई सूचांक अधिक होने पर पद का कठिनाई स्तर भी अधिक होता है क्योंकि उच्च कठिनाई सूचांक होने पर यह प्रगट होता है कि इतने प्रतिशत पद को सही नही कर सके। कम छात्रों ने गलत किया है, इसका अर्थ यह हुआ कि पद सरल है। पदों के चयन में उन्हीं मानदण्डों को प्रयुक्त किया जाता है, जिनकी विभेदीकरण शक्ति ऋणात्मक या शून्य होती है उन्हें निरस्त कर दिया जाता है।

10.7 कठिनाई सूचांक एवं विभेदीकरण को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Influencing Item Difficulty and Discrimination Index)

किसी परीक्षण के पदों को पद विश्लेषण में कठिनाई सूचांक और विभेदीकरण सूचांक को कई कारक प्रभावित करते हैं। उनमें से प्रमुख कारकों का उल्लेख निम्नलिखित है–

(1) पद का स्वरूप (Structure of Item)—साधारणत: पद के दो खण्ड होते हैं। प्रश्न और विकल्प यदि प्रश्न का रूप जटिल है, अथवा अस्पष्ट है, तो उसका कठिनाई सूचांक कम होगा। इसका अर्थ यह है कि प्रश्न का स्वरूप सूचांक को प्रभावित करता है। दूसरे यदि विकल्प शक्तिशाली है, उस परिस्थिति में भी पद के सूचांक प्रभावित होंगे।

(2) परीक्षार्थियों के पद के स्वरूप की जानकारी (Awareness of examinees about the form of the item)—पद को सरल करने वाले परीक्षार्थियों को यदि कोई अनुभव नहीं है कि ऐसे प्रश्नों का उत्तर कैसे दिया जाता है तब भी सूचांक प्रभावित होंगे। यह जानकारी परीक्षार्थियों के लिए आवश्यक होती है।

(3) कठिनाई तथा विभेदीकरण सूचांक ज्ञात करने की विधि (Method of estimating difficulty and discriminating index)—पद विश्लेषण की विधियों की समीक्षा से विदित होता है कि 23 विधियों का विकास हो चुका है। प्रत्येक विधि की अपनी अवधारणाएँ, सीमाएँ तथा विशेषताएँ हैं। एक परीक्षण के पदों का पद विश्लेषण विभिन्न विधियों से कर लेने पर उनके सूचांक अलग-अलग प्राप्त होते हैं। इससे विदित होता है कि पद विश्लेषण विधि भी सूचांकों को प्रभावित करता है।

(4) उच्च एवं निम्न वर्ग के विभाजन की प्रविधि (Technique of dichotomy of high and low Groups)—पद विश्लेषण के लिए समूह को उच्च एवं निम्न वर्ग में विभाजन करना होता है। इस विभाजन के लिए भी कई प्रविधियों को प्रयुक्त किया जाता है। कैली की प्रविधि को अधिक प्रयुक्त किया जाता है। यदि परीक्षण के पद-विश्लेषण के लिए प्रविधि के लिए विभाजन के लिए एक से अधिक प्रविधियों को किया जाये तो पद के सूचांक भी अलग-अलग प्राप्त होंगे। इस प्रकार उच्च एवं निम्न वर्ग में विभाजन की प्रविधि भी सूचांक को प्रभावित करती है।

(5) अनुमान से सही करने का सूत्र (Formula for Correction Guessing)—पद सूचांक की गणना में प्रयास किया जाता है कि पद को सही करने वालों का अनुपात शुद्ध हो कि वास्तव में इस अनुपात के लोग सही उत्तर जानते हैं। इसके लिए अनुमान से सही के सूत्र का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार के सूत्र मनोवैज्ञानिकों ने अलग-अलग विकसित किये हैं, उनकी अवधारणायें भी अलग-अलग हैं। इसलिए इन सूत्रों का प्रयोग भी पदों के सूचांक को प्रभावित करता है।

(6) परीक्षार्थियों की सजातीय एवं विजातीयता (Homogenity and hetrogenity of the examinees)—पद विश्लेषण में परीक्षार्थियों के सही उत्तरों को प्रयुक्त किया जाता है। यदि परीक्षार्थी समान योग्यता वाले हों तो विभेदीकरण सूचांक एवं कठिनाई सूचांक वास्तविक से कम होगा और यदि परीक्षार्थी के स्तर में अंतर होंगे तो विभेदीकरण सूचांक अधिक होगा और कठिनाई सूचांक सामान्य होगा। इसी प्रकार पद के विकल्पों की सजातीयता भी सूचांक को प्रभावित करती है।

(7) संशोधित चार्ट (Modified Chart)—मनोवैज्ञानिक ने पदों के सूचांकों की गणना के लिए कुछ संशोधित चार्ट भी विकसित किए हैं। *डेविस* की पद विश्लेषण विधि का संशोधन हार्पर ने किया है। यदि डेविस की विधि में हार्पर के संशोधित चार्ट का प्रयोग करते हैं तो पदों के सूचांक मान बदल जाते हैं और डेविस विधि में किसी अन्य के संशोधित चार्ट का प्रयोग करते हैं तो पदों के सूचांक मान कुछ और आते हैं। इस प्रकार संशोधित चार्ट भी इन सूचांकों को प्रभावित करते हैं।

(8) पद की गत्यात्मकता (Speedness of the Test)—पदों की कठिनाई स्तर विभेदीकरण की शक्ति पद की गत्यात्मकता पर भी निर्भर करती है। क्योंकि पद परीक्षण शक्ति परीक्षण (Power Test) नहीं होता है। प्रत्येक अन्तिम प्रश्न तक नहीं पहुँच पाता है।

इन कारकों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि पद के सूचांकों का सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता है। परीक्षण के पदों के कठिनाई सूचांक और विभेदीकरण सूचांक, पद विश्लेषण प्रविधि, पद के स्वरूप, उच्च एवं निम्न वर्ग के विभाजन की प्रविधि, अनुमान से सही करने के सूत्र और परीक्षण के समूह पर निर्भर होते हैं।

टास्क धनात्मक सूचक क्या होता है?

10.8 पद विश्लेषण की समस्याएँ (Problems of Item Analysis)

पद विश्लेषण के लिए अनेक विधियों एवं प्रविधियों को विकसित किया गया है, जिससे परीक्षण के निर्माण में कोई कठिनाई न हो। फिर भी परीक्षण के निर्माण में और पद विश्लेषण में अधोलिखित समस्याएँ रहती हैं–

(1) अनुमान से सही करने की समस्याएँ (Problems Associated with Guessing)—वस्तुनिष्ठ परीक्षणों में कई

नोट

प्रकार के पदों की रचना की जाती है और उनमें अनुमान से सही करने के अवसर भी अलग-अलग होते हैं। जैसे—सत्य और असत्य प्रकार के पदों को अनुमान से सही करने का 50 प्रतिशत अवसर होता है जब कि बहुविकल्प प्रश्नों में यह अवसर कम हो जाता है। यदि विकल्पों की संख्या चार है तो अनुमान से सही करने का प्रतिशत 25 है। यदि विकल्पों की संख्या बढ़ाकर पाँच कर दी जाये तो अनुमान से सही करने का प्रतिशत 20 रह जाता है। मनोवैज्ञानिकों ने अनुमान से सही करने के सूत्र के प्रयोग का सुझाव दिया है, किन्हीं परिस्थितियों में अनुमान के सूत्र का प्रयोग करने से ऋणात्मक मान प्राप्त होता है जो व्यावहारिक विज्ञानों के मापन में न्यायोचित नहीं है। इसका अर्थ यह है कि परीक्षार्थी एक दण्डित हुआ। अनुमान से सही करने के सूत्र की यह अवधारणाा है कि प्रत्येक परीक्षार्थी अनुमान से सहीं करने का प्रयास करता है परन्तु कुछ परीक्षार्थी ऐसे अवश्य होते हैं, जो अनुमान से सही करने का प्रयास नहीं करते उन्हें भी दण्डित किया जाता है।

(2) परीक्षार्थी का अन्तिम पद तक न पहुँचना (The examinees not reaching to the last item)—जैसा पहले उल्लेख किया जा चुका है कि वास्तव में कोई शक्ति परीक्षण (Power Test) नहीं होता है। सभी परीक्षणों में समय सीमित होता है। इसलिए वह गत्यात्मक परीक्षण (Speeded test) होते हैं। पद विश्लेषण के लिए परीक्षण को एक समूह पर दिया जाता है, परन्तु निर्धारित समय में समूह के कुछ परीक्षार्थी अन्तिम प्रश्नों तक नहीं पहुँच पाते हैं, यदि उन्हें समय मिल पाता तो शायद वे सही कर सकते थे। यह समस्या पद विश्लेषण मे रहती है। दूसरे उन्होंने जितने पद सही किए उनकों उसमें अनुमान से सही करने के लिए दण्डित किया गया।

(3) पद और परीक्षण के प्राप्तांकों में सह-सम्बन्ध (Correlation between item and total scores) —साधारणतया: पद विश्लेषण में उच्च और निम्न वर्ग का विभाजन उसी परीक्षण के प्राप्तांकों के आधार पर किया जाता है और उच्च एवं निम्न वर्ग के अनुपात के अन्तर से विभेदीकरण सूचांक की गणना की जाती है। इसका तात्पर्य यह है कि पद का सह-सम्बन्ध परीक्षण के प्राप्तांकों से निकाला गया। पद दोनों स्थानों पर कार्य करता है। इसलिए यह सह-सम्बन्ध कृत्रिम ही होगा।

(4) द्वि-ध्रुवीय पदों से सम्बन्धित समस्याएँ (Problem relating to bi-polar items)—कुछ परीक्षणों में इस प्रकार के पदों को सम्मिलित किया जाता है कि उनके लिए दो प्रकार के विकल्प दिए जाते हैं, जैसे—सत्य/असत्य, हाँ/ना, सहमत/असहमत और उनके बनाते समय यह ध्यान रखा जाये कि 50 प्रतिशत सत्य सही होंगे और 50 प्रतिशत असत्य सही होंगे और सही के लिए एक अंक तथा गलत के लिए शून्य अंक दिये जायेंगे। ऐसे परीक्षणों के पद विश्लेषण में कठिनाई यह आती है कि धनात्मक पद का सह-सम्बन्ध, ऋणात्मक पद से करना होता है तथा ऋणात्मक पद का सह-सम्बन्ध धनात्मक पद से करना होता है, क्योंकि सम्पूर्ण प्राप्तांकों में ऋणात्मक और धनात्मक दोनों पदों के अंक सम्मिलित होते हैं जो न्यायोचित नहीं है।

(5) अवांछित कारकों की समस्या (Problems of unwanted factors)—गत्यात्मक परीक्षण सजातीय तथा विजातीय दोनों प्रकार के होते हैं। जो परीक्षण विजातीय होते हैं, उनमें विभिन्न-योग्यताओं के पदों को सम्मिलित किया जाता है। जैसे—शिक्षण प्रवणता परीक्षण के अन्तर्गत शाब्दिक, अशाब्दिक, तार्किक योग्यताओं के मापन के लिए तीन प्रकार के पदों को सम्मिलित किया जाता है। शाब्दिक योग्यता, अशाब्दिक योग्यता, संख्यात्मक योग्यता को सम्मिलित किया जाता है। ऐसे परीक्षण के पद विश्लेषण में शाब्दिक पद का सह-सम्बन्ध, संख्यात्मक पद से देखा जायेगा तथा संख्यात्मक पद का सह-सम्बन्ध शब्दिक से देखा जायेगा, जिससे पद के कठिनाई विभेदीकरण सूचांक सही नहीं होंगे। विजातीय परीक्षणों के पद विश्लेषण में यह समस्या रहती है।

10.9 पद विश्लेषण का मूल्यांकन (Evaluation of Item Analysis)

पद-विश्लेषण के मूल्यांकन के आधार पर अधोलिखित कथन दिए गए हैं—

1. कठिनाई स्तर तथा विभेदीकरण की शक्ति पर विश्लेषण विधि एवं न्यादर्श पर आधारित होती है, सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता है।

नोट

2. कठिनाई स्तर में न्यादर्श से न्यादर्श स्थायित्व होता है। विश्लेषण विधि का भी विशेष प्रभाव नहीं होता है।
3. पद-वैधता या विभेदीकरण शक्ति में अपेक्षाकृत स्थायित्व कम होता है यह मान न्यादर्श और पद विश्लेषण विधि से अधिक प्रभावित होता है।
4. परीक्षण-वैधता की अनुमानित, गणना पदों की औसत वैधता और पदों की औसत विश्वसनीयता के अनुपात से की जा सकती है।

$$\text{परीक्षण की वैधता} = \frac{\text{पदों की औसत वैधता गुणांक}}{\text{पदों की औसत विश्वसनीयता गुणांक}}$$

6. यदि परीक्षण का आन्तरिक स्थायित्व बढ़ता है तो परीक्षण की अनुभवजन्य वैधता घटती है।

   "The difficulty value is the function of item variation with regard to subject."
7. विभेदीकरण मान पद के आधार पर परीक्षार्थियों-विषमता का अर्थ सूचांक होता है।

   "The discriminative power is the function of the subject variation with regard to an item."

पद विश्लेषण में परीक्षार्थी ने कितने पद सही किए हैं तथा पद को कितने परीक्षार्थियों ने सही किया है, दोनों प्रकार से अंकन किया जाता है जिससे पद-चरिता (Item variation) और परीक्षार्थी चरिता (Subject-variation) को प्रयुक्त किया जाता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

1. पद विश्लेषण से .... पदों का चयन किया जाता है।
2. पद विश्लेषण से कठिनाई तथा .... सूचांकों की गणना की जाती है।
3. स्टेनले विधि का प्रयोग .... पदों के विश्लेषण में किया जाता है।
4. पदों के चयन में .... सूचांकों को महत्व दिया जाता है।
5. डेविस के सूचांकों का संशोधन .... ने किया।

10.10 सारांश (Summary)

- पद विश्लेषण एक ऐसी प्रविधि है जिसके द्वारा एक परीक्षण के पदों का चयन किया जाता है, पदों को निरस्त किया जाता है, तथा पदों में सुधार भी किया जाता है। परीक्षण के लिए पद विश्लेषण द्वारा चयन किए हुए पदों द्वारा उसके उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है।
- परीक्षण को सोद्देश्य बनाने में पद की प्रथम विशेषता-कठिनाई स्तर का विशेष महत्व होता है। पद विश्लेषण के प्रथम सोपान के पदों के कठिनाई स्तर की गणना की जाए। कठिनाई स्तर का तात्पर्य यह होता है कि समूह के कितने प्रतिशत छात्रों को उसका वास्तव में सही उत्तर ज्ञात है।
- परीक्षण के पद की दूसरी प्रमुख विशेषता उसकी विभेदीकरण की शक्ति होती है। यह विशेषता भी परीक्षण को सोद्देश्य बनाने में आवश्यक है। विभेदीकरण की शक्ति से तात्पर्य यह है कि वह उच्च योग्यता वाले एवं निम्न योग्यता वाले छात्रों में अन्तर करती है।
- पद के *विभेदीकरण शक्ति* का तात्पर्य यह होता है कि उच्च और निम्न वर्ग के छात्रों में किस अंश तक अन्तर करता है। यदि किसी परीक्षण के पद को उच्च वर्ग के परीक्षार्थी जितने प्रतिशत सही कर पाते हैं उतने ही प्रतिशत यदि निम्न वर्ग के परीक्षार्थी सही कर लेते हैं तो पद की विभेदीकरण की शक्ति शून्य होगी अर्थात् वह उच्च और निम्न वर्ग में अन्तर नहीं कर पाता है।

नोट

- पद के विभेदीकरण की शक्ति की गणना दो प्रकार से की जाती है। जब उच्च और निम्न वर्ग का निर्धारण उसी परीक्षण के प्राप्तांकों के आधार पर किया जाता है और प्रत्येक पद का विश्लेषण करते हैं कि उच्च और निम्न वर्ग में किस अंश तक अन्तर करता है, तो उसे पद विश्वसनीयता कहा जाता है।
- विभेदीकरण की शक्ति तीन प्रकार की होती है—

(अ) शून्य विभेदीकरण,

(ब) धनात्मक विभेदीकरण, तथा

(स) ऋणात्मक विभेदीकरण।

- शून्य विभेदीकरण उसे कहते हैं जब किसी पद को उच्च और निम्न समूह के समान अनुपात में सही कर लेते हैं, जब किसी पद को उच्च वर्ग के 30 प्रतिशत और निम्न वर्ग के भी 30 प्रतिशत छात्र सही करते हैं।
- धनात्मक विभेदीकरण उसे कहते है कि जब किसी पद को उच्च वर्ग के परीक्षार्थियों के सही करने की प्रतिशत निम्न समूह के परीक्षार्थियों के सही करने की प्रतिशत की अपेक्षा अधिक होती है।
- ऋणात्मक विभेदीकरण शक्ति उसे कहते हैं जब किसी पद को उच्च वर्ग के परीक्षार्थियों के सही प्रतिशत निम्न वर्ग के परीक्षार्थियों के सही करने की प्रतिशत की अपेक्षा कम करते हैं।
- विभेदीकरण की शक्ति की गणना में उच्च और निम्न वर्ग के सही करने की प्रतिशत अथवा अनुपात को प्रयुक्त किया जाता है, परन्तु परीक्षार्थी पद को अनुमान से भी सही कर लेते हैं। इसलिए सही करने के प्रतिशत से वास्तविक विभेदीकरण की शक्ति नहीं ज्ञात की जा सकती।
- पद विश्लेषण की अनेक विधियों को विकसित किया गया है, परन्तु उनमें से दो विधियाँ अधिक प्रचलित हैं—

  (1) **डेविस की पद विश्लेषण विधि** (Davis Method Item Analysis)—यह पद विश्लेषण की मूल प्रविधि है जिसका प्रयोग साफल्य परीक्षण के पदों के चयन के लिए किया जाता है। इस विधि की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें परीक्षार्थियों के सही उत्तरों को प्रयुक्त करते हैं।

  (2) **स्टेनले की पद विश्लेषण विधि** (Stanley Method of Item Analysis)—यह प्रविधि भी अधिक प्रयुक्त की जाती है, क्योंकि इसका प्रयोग निदानात्मक परीक्षण के पद विश्लेषण में किया जाता है। इसके अन्तर्गत परीक्षार्थियों के गलत उत्तरों को पद विश्लेषण में प्रयुक्त करते हैं।
- पद विश्लेषण में कठिनाई सूचांक और विभेदीकरण सूचांक ज्ञात करने में अलग-अलग प्रविधियों को प्रयुक्त करते हैं।
- **कठिनाई सूचांक की प्रविधि** (Techniques of Item difficulty Value)—साधारणतया दो प्रविधियों को प्रयुक्त करते हैं—

  (अ) डेविस तथा हार्पर की अनुपात प्रविधि। (ब)प्रामाणिक प्राप्तांक अथवा सामान्य सम्भवयता वक्र।।
- **विभेदीकरण अथवा पद वैधता की प्रविधि**—यह प्रविधि इस प्रकार है—

  (अ) डेविस हार्पर की अनुपात विधि,

  (ब) सह-सम्बन्ध प्रविधियाँ निम्नलिखित हैं— (1) द्विपांक्तिक सह-सम्बन्ध प्रविधि; (2) बिन्दु-द्विपांक्तिक सह-सम्बन्ध प्रविधि; (3) फाई सह-सम्बन्ध प्रविधि; (4) टेट्राकोरिक सह-सम्बन्ध प्रविधि।
- पद विश्लेषण के लिए सांख्यिकी की चरिता विश्लेषण की प्रविधि को प्रयुक्त करते हैं। इसके लिए द्विभुजी तालिका तैयार की जाती है।
- पद विश्लेषण से सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा करने पर विदित होता है कि पद विश्लेषण करने की तेईस (23) विधियाँ है। इन विभिन्न विधियों द्वारा एक पद की उपरोक्त विशेषताओं का विश्लेषण किया जाता है। इस अध्याय में दो विधियों का विवेचन विस्तार में किया गया है— (1) निष्पादन परीक्षण के पदों का विश्लेषण *डेवीज की विधि* द्वारा; (2) निदानात्मक विश्लेषण के पदों का विश्लेषण स्टेनले की विधि द्वारा।

नोट

- **कैली की इस विभाजन प्रविधि** पद विश्लेषण के लिए परीक्षण को एक समूह पर दिया है। जिसे जाँच सोपान (traying-out) कहते हैं। समूह की उत्तर पुस्तिकाओं का कुंजी की सहायता से अंकन कर लेते हैं। इस प्रकार से जो प्राप्तांक मिलते हैं, उन्हें आवृत्ति वितरण में व्यवस्थित कर लिया जाता है।
- पदों को सही करने वाले छात्रों की गणना उच्च और निम्न समूह द्वारा अलग-अलग की जाती है। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक पद को सही करने का अनुपात उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के लिए अलग-अलग ज्ञात किया जायेगा। सही अनुपात की गणना में अनुमान से सही करने के सूत्र का भी प्रयोग साथ-साथ कर सकते हैं।
- विभेदीकरण सूचांक तीन प्रकार का होता है–

(1) **धनात्मक सूचांक**–वह होता है जब उच्च वर्ग का अनुपात निम्न वर्ग के अनुपात की अपेक्षा अधिक होता है।

(2) **ऋणात्मक सूचांक**–वह होता है जब उच्च वर्ग का अनुपात निम्न वर्ग के अनुपात की अपेक्षा कम होता है।

(3) **शून्य सूचांक**–वह होता है जब उच्च वर्ग का अनुपात निम्न वर्ग के अनुपात के समान होता है।

- जिन पदों का कठिनाई सूचांक सबसे अधिक या सबसे कम होता है, उन्हें निरस्त किया जाता है। अधिक कठिनाई स्तर का अर्थ यह होता है कि बहुत कम छात्र उस पद को सही कर पाते हैं। सबसे कम कठिनाई स्तर का तात्पर्य यह है कि सभी परीक्षार्थी उस पद को सही कर लेते हैं। ऐसे पदों को परीक्षण में सम्मिलित करने से किसी भी प्रकार के उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती है।
- ऐसे पद जिनका विभेदीकरण सूचांक ऋणात्मक अथवा शून्य होता है। उन्हें भी निरस्त किया जाता है, क्योंकि ऐसे पद अनुपयुक्त होते हैं।
- ऐसे पदों को जिनका कठिनाई सूचांक (.40 से .70) तक होता है, उनका चयन कर लिया जाता है। ऐसे पदों की संख्या लगभग 50 प्रतिशत होनी चाहिए।
- किसी पद का चयन केवल किसी एक सूचांक के आधार पर नहीं किया जा सकता, प्रत्येक पद का चयन कठिनाई सूचांक और विभेदीकरण सूचांक दोनों को ध्यान में रखकर किया जाता है। उदाहरणार्थ–किसी पद का कठिनाई सूचांक .50 है, परन्तु विभेदीकरण शून्य है तो ऐसे पद को भी निरस्त कर दिया जाता है।
- *स्टेनले* ने निदानात्मक परीक्षण के पदों के विश्लेषण के लिए प्रविधि का विकास किया है। निदानात्मक परीक्षण का प्रमुख उद्देश्य छात्र की कमजोरियों और उनके कारणों का निदान करना होता है। इसलिए छात्रों की त्रुटियाँ को अधिक महत्वपूर्ण माना गया है।
- किसी परीक्षण के पदों को पद विश्लेषण में कठिनाई सूचांक और विभेदीकरण सूचांक को कई कारक प्रभावित करते हैं। उनमें से प्रमुख कारकों का उल्लेख निम्नलिखित है–
- साधारणत: पद के दो खण्ड होते हैं। प्रश्न और विकल्प यदि प्रश्न का रूप जटिल है, अथवा अस्पष्ट है, तो उसका कठिनाई सूचांक कम होगा।
- पद को सरल करने वाले परीक्षार्थियों को यदि कोई अनुभव नहीं है कि ऐसे प्रश्नों का उत्तर कैसे दिया जाता है तब भी सूचांक प्रभावित होंगे। यह जानकारी परीक्षार्थियों के लिए आवश्यक होती है।
- पद विश्लेषण की विधियों की समीक्षा से विदित होता है कि 23 विधियों का विकास हो चुका है।
- पद विश्लेशषण के लिए समूह को उच्च एवं निम्न वर्ग में विभाजन करना होता है। इस विभाजन के लिए भी कई प्रविधियों को प्रयुक्त किया जाता है।
- पद सूचांक की गणना में प्रयास किया जाता है कि पद को सही करने वालों का अनुपात शुद्ध हो कि वास्तव में इस अनुपात के लोग सही उत्तर जानते हैं।
- पद विश्लेषण में परीक्षार्थियों के सही उत्तरों को प्रयुक्त किया जाता है।

नोट

- मनोवैज्ञानिक ने पदों के सूचांकों की गणना के लिए कुछ संशोधित चार्ट भी विकसित किए हैं।
- पदों की कठिनाई स्तर विभेदीकरण की शक्ति पद की गत्यात्मकता पर भी निर्भर करती है।
- परीक्षण के निर्माण में और पद विश्लेषण में अधोलिखित समस्या रहती हैं—पद विश्लेषण के लिए परीक्षण को एक समूह पर दिया जाता है, परन्तु निर्धारित समय में समूह के कुछ परीक्षार्थी अन्तिम प्रश्नों तक नहीं पहुँच पाते हैं, यदि उन्हें समय मिल जाता तो शायद वे सही कर सकते थे। यह समस्या पद विश्लेषण मे रहती है; कुछ परीक्षणों में इस प्रकार के पदों को सम्मिलित किया जाता है कि उनके लिए दो प्रकार के विकल्प दिए जाते हैं, जैसे—सत्य/असत्य, हाँ/ना, सहमत/असहमत और उनके बनाते समय वह ध्यान रखा जाये कि 50 प्रतिशत सत्य सही होंगे और 50 प्रतिशत असत्य सही होंगे।
- पद-विश्लेषण के मूल्यांकन के आधार पर अधोलिखित कथन दिए गए हैं—
  1. कठिनाई स्तर तथा विभेदीकरण की शक्ति पर विश्लेषण विधि एवं न्यादर्श पर आधारित होती है, सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता है।
  2. कठिनाई स्तर में न्यादर्श से न्यादर्श स्थायित्व होता है। विश्लेषण विधि का भी विशेष प्रभाव नहीं होता है।
  3. पद-वैधता या विभेदीकरण शक्ति में अपेक्षाकृत स्थायित्व कम होता है यह मान न्यादर्श और पद विश्लेषण विधि से अधिक प्रभावित होता है।

10.11 शब्दकोश (Keywords)

- **विभेदीकरण**—अन्तर स्थापित करना।
- **आरोही-अवरोही**—बढ़ते-घटते क्रम।

10.12 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. पद विश्लेषण का अर्थ तथा आवश्यकता का विवेचन कीजिए। पद विश्लेषण के कार्यों का उल्लेख कीजिए।
2. पद की विशेषताओं को बताइए। पद के कठिनाई स्तर तथा विभेदीकरण शक्ति का अर्थ बताइए तथा परिभाषा भी दीजिए।
3. पद-विश्लेषण की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए। अनुमान से सही करने के सूत्रों का उल्लेख कीजिए। कैली विभाजन प्रविधि को समझाइए।
4. पद के कठिनाई सूचांक तथा विभेदीकरण शक्ति या सूचांक की गणना विधि तथा चयन की प्रक्रिया का उल्लेख कीजिए।
5. पद सूचांकों को प्रभावित करने वाले कारकों को बताइए तथा पद विश्लेषण की समस्याओं का भी उल्लेख कीजिए।
6. पद विश्लेषण की आवश्यकता बताइए।
7. पद विश्लेषण के सूचांक बताइए।
8. पदों के चयन के आधार पर बताइए।
9. कठिनाई स्तर को समझाइए।
10. विभेदीकरण शक्ति को समझाइए।
11. पद विश्लेषण को प्रभावित करने वाले घटक बताइए।

नोट

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. 1. (×) 2. (✓) 3. (✓) 4. (×)
5. (✓) 6. (×)

2. 1. अपेक्षित 2. विभेदीकरण 3. निदानात्मक 4. दोनों
5. हार्पर।

10.13 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—11: परीक्षण के मानक का विकास (Development of Norms of a Test)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
11.1 मानक का अर्थ (Meaning of Norm)
11.2 मानक निर्धारण की आवश्यकता (Need of Establishing Norm)
11.3 मानकों के प्रकार (Types of Norm)
11.4 मानकों के आवश्यक गुण (Essential Qualities of Norms)
11.5 सारांश (Summary)
11.6 शब्दकोश (Keywords)
11.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
11.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- परीक्षण के मानक का अर्थ और मानक निर्धारण की आवश्यकता की व्याख्या करने में।
- मानक के आवश्यक गुण और प्रकारों का विवेचन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

मानक ऐसे Standards होते हैं जिनके साथ हम किसी भी प्राप्तांक की तुलना करके उसकी व्याख्या कर सकते हैं या उसका अर्थ लगा सकते हैं। दूसरे शब्दों में मानक किसी विशिष्ट समूह के विद्यार्थियों के वास्तविक मापन का औसत प्राप्तांक होते हैं (Norms are averages or values determined by actual measurement of a group of persons who are the representative of specific population.) जबकि प्रतिमान एक वाँछित उद्देश्य रखता है जो प्राप्त मानक से कम या अधिक भी हो सकता है।

मानक तैयार करने के लिये हम परीक्षण को एक विस्तृत समूह पर या विशाल जनसंख्या पर प्रशासित करके समूह के प्राप्तांकों को शतांशीय मानों (Percentiles) अथवा प्रामाणिक आँकड़ों (Standard scores) में बदल देते हैं।

11.1 मानक का अर्थ (Meaning of Norm)

किसी भी परीक्षण का मानक वह प्राप्तांक है जिसे किसी विशेष समूह द्वारा प्राप्त किया गया हो। दूसरे शब्दों में, "मानक से तात्पर्य कार्य के उस नमूने से है जिसे समस्त समूह के द्वारा प्रदर्शित किया गया हो।" (By norms we meant

नोट

specimen of work which represent the commonest type of work for the whole group in question)। अनुसन्धान के क्षेत्र में विभिन्न परीक्षणों को प्रशासित करके जब हम कुछ अंक प्राप्त करते हैं तो इन प्राप्तांकों के आधार पर कोई निष्कर्ष निकालना एक कठिन कार्य होता है जब तक कि हमारे पास उसके लिए कोई आधार न हो। मानक के आधार पर हम किसी भी परीक्षण के द्वारा समूह के दो व्यक्तियों की तुलना कर सकते हैं तथा किसी समूह में अमुक व्यक्ति की क्या स्थिति है? इसको भी ज्ञात कर सकते हैं। Interpretive error को दूर करने के लिए ही हम मानक का प्रयोग करते हैं। (Norms have been defined as the standard performance of a group of pupils on a test.) यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि मानक एवं प्रतिमान दोनों में अन्तर हैं। जहाँ मानक (norms) किसी विशिष्ट समूह के वास्तविक निष्पादन का परिचायक होते हैं। (Norms are the actual achievement of students at standardized level) वहाँ प्रतिमान (standard) निष्पादन के वांछित स्तर को ही व्यक्त करते हैं।

11.2 मानक निर्धारण की आवश्यकता (Need of Establishing Norm)

निम्न कारणों से मानकों के निर्धारण की आवश्यकता पड़ती है–

(*a*) मूल आँकड़ों (raw-scores) को तुलना योग्य बनाना।

(*b*) मूल आँकड़े को इस योग्य बनाना ताकि उसे दूसरे आँकड़ों में जोड़ा जा सके।

(*c*) मूल आँकड़े और अधिक सार्थक (meaningful) बनाने के लिये।

व्यक्तियों के जिस समूह पर ये मानक तैयार किये जाते हैं उसे सन्दर्भ समूह (Reference group) कहते हैं अर्थात, मानक सन्दर्भ समूह की प्रामाणिक उपलब्धि (Standard performance) को व्यक्त करते हैं। मानक प्राय: निम्न प्रश्नों के उत्तर देने में हमारी सहायता करते हैं।

(*a*) कोई एक व्यक्ति उस परीक्षण पर दूसरों की अपेक्षा कितना नीचे अथवा ऊपर है।

(*b*) किसी व्यक्ति का एक परीक्षा पर उपलब्ध प्राप्तांक उसी विशेषता का मापन करने वाली दूसरी परीक्षा की तुलना में कितना कम अथवा अधिक है। इस प्रकार की तुलना के आधार पर उसकी सफलताओं एवं कमजोरियों का पता लगाया जा सकता है।

(*c*) विद्यार्थी की प्रगति का अध्ययन किस प्रकार आसानी से एवं सफलतापूर्वक किया जाये।

(*d*) छात्र की भावी सफलता के बारे में भविष्यवाणी (Prediction) किस प्रकार की जाय।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. निम्नलिखित कथनों में 'सत्य' अथवा 'असत्य' लिखिए–

1. किसी भी परीक्षण का मानक वह प्राप्तांक है, जिसे किसी विशेष समूह द्वारा प्राप्त किया गया हो।
2. मूल आँकड़ों को तुलना योग्य बनाने के लिए मानक निर्धारण की आवश्यकता नहीं होती है।
3. व्यक्तियों के जिस समूह पर ये मानक तैयार किये जाते हैं उसे सन्दर्भ समूह कहते हैं।
4. मानक संदर्भ समूह की प्रामाणिक उपलब्धि को व्यक्त करते हैं।

11.3 मानकों के प्रकार (Types of Norms)

मानक किस समूह के बालकों अथवा व्यक्तियों के लिये बनाये गये हैं इस दृष्टिकोण से दो प्रकार के होते हैं। वैसे मुख्य रूप से चार प्रकार के मानक निर्धारित किये जाते हैं–

1. आयु मानक (Age Norms)
2. श्रेणी मानक (Grade Norms)

नोट

3. शतांशीय मानक (Percentile Norms)
4. प्रामाणिक अंक मानक (Standard Score Norms)

1. आयु मानक (Age Norms)—इस प्रकार के मानकों का प्रयोग बिने (Binnett) के बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test) में किया गया। इस प्रकार के मानकों की आधारभूत मान्यता यह है कि आयु के साथ-साथ दूसरी राशि (Variable) भी बढ़े।

"The variable must increase with the age."

आयु मानकों से अभिप्राय उस परीक्षण पर विभिन्न आयु के छात्रों के औसत प्राप्ताकों से है। आयु मानक हम उन्हीं राशियों का ज्ञात करते हैं जो आयु के साथ-साथ बढ़ते हैं जैसे, Height, Weight, Intelligence, Reading Ability, Vocabulary, Mental Age आदि। अब मान लीजिए हमें Height, Age Norm ज्ञात करना है। इसके लिए सर्वप्रथम परीक्षण को विभिन्न आयु वर्ग के विद्यार्थियों के समूहों पर प्रशासित किया जाता है तथा विद्यार्थियों द्वारा उस परीक्षण पर प्राप्त अंकों को लिख लिया जाता है। प्रत्येक आयु वर्ग के छात्रों द्वारा प्राप्त अंकों का औसत ही उस आयु के विद्यार्थियों के लिए मानक कहलाता है। उदाहरणार्थ, हम 12 वर्ष की आयु वर्ग के छात्रों की ऊँचाई (Height) का मानक ज्ञात करना चाहते हैं। इसके लिए हम सर्वप्रथम 12 वर्ष की आयु वर्ग के कुछ छात्रों को लेंगे जो सम्पूर्ण जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करते हों। फिर उन सब छात्रों की ऊँचाई नापकर उसका औसत निकाल लेंगे। यह औसत ही समस्त 12 वर्षीय बालकों के लिए ऊँचाई मानक (Height Norm) कहलायेगा। अब इसके आधार पर हम किसी भी छात्र की ऊँचाई नापकर उसकी व्याख्या कर सकते हैं। यदि उसकी ऊंचाई इस मानक ऊंचाई से कम होगी तो उसे सामान्य से कम लम्बा छात्र कहा जायेगा और यदि उसकी ऊंचाई इस मानक ऊंचाई से अधिक होगी तो उसे सामान्य से अधिक लम्बा छात्र कहा जायेगा। जैसे, यदि 15 वर्षीय आयु वर्ग के लड़कों की औसत ऊंचाई 135 से. मी. है तथा अभिषेक की आयु 145 से. मी. है तो हम कहेंगे कि अभिषेक अपनी आयु के सापेक्ष अधिक लम्बा है चाहे उसकी वास्तविक आयु कितनी ही क्यों न हो। इसके विपरीत सभी 16 वर्षीय आयु वर्ग के लड़कों की औसत ऊंचाई यदि 145 से. मी. है तो हम कहेंगे कि अभिषेक 16 वर्ष के छात्र के बराबर Height age रखता है। बुद्धि मापन के क्षेत्र में मानसिक आयु का प्रत्यय वास्तव में आयु मानकों का ही एक रूप है। यदि कोई छात्र उन प्रश्नों को सही हल कर लेता है जिन्हें 18 वर्षीय छात्र हल कर लेता है तो उस छात्र की मानसिक आयु 18 वर्ष कही जायेगी चाहे उसकी शारीरिक आयु 15 वर्ष की ही है। समस्त बुद्धि परीक्षणों में मानकों को 'मानसिक आयु' के रूप में तथा उपलब्धि परीक्षण में 'शैक्षिक आयु' के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

"Age or Grade Norms locate the pupil in terms of age or grade groups, but not necessarily with pupils of his own age and grade." *– D. Baron and H.W. Bernard.*

परिसीमाएँ (Limitations)

1. इन मानकों का प्रयोग तभी किया जाना चाहिए जबकि आयु के साथ-साथ मापे जाने वाले अन्य चरों में भी वृद्धि हो जैसे—भार, वृद्धि, शैक्षिक उपलब्धि आदि।
2. आयु मानकों की प्रमुख परिसीमा यह है कि प्रत्येक बालक का विकास हर उम्र में एक जैसा नहीं होता है। 5-7 आयु वर्ग में विकास 11-14 आयुवर्ग की अपेक्षा तीन गुना अधिक होता है। परिणामस्वरूप विभिन्न आयु वर्ग के लिये मानकों का अन्तर समान नहीं होता।
3. ये मानक केवल 20 वर्ष तक की आयु के परीक्षार्थियों के लिए ही ठीक रहते हैं।
4. प्रतिनिधित्व न्यादर्श (Representative Sample) का चयन कठिन कार्य है।
5. इन मानकों का प्रयोग व्यक्तित्व परीक्षण, रुचि परीक्षण, अभिवृत्ति परीक्षण (Aptitude Tests) आदि परीक्षणों में नहीं किया जा सकता है।
6. कुछ गुणों में मानसिक विकास नहीं होता। जैसे, शब्द भण्डार (Vocabulary) तो निरन्तर बढ़ता रहता है लेकिन पथजाल-अंकन (Maze-Tracing) किशोरावस्था के बाद रुक जाती है। अत: इस प्रकार के Traits की तुलना आयु मानकों द्वारा नहीं की जा सकती।

नोट

7. किशोरावस्था एवं युवावस्था में योग्यता के स्तर को व्यक्त करने के लिए आयु की इकाई अनुपयुक्त है।
8. एक ही आयु वाले बालकों की योग्यता की तुलना आयु मानकों के द्वारा नहीं की जा सकती।

2. श्रेणी मानक (Grade Norms)—श्रेणी मानक आयु मानकों के ही समान होते हैं। इन दोनों में अन्तर केवल इतना है कि आयु मानकों का सम्बन्ध जहाँ आयु से होता है वहाँ श्रेणी मानकों का सम्बन्ध कक्षा से होता है। इन्हें कक्षा मानक भी कहा जाता है। किसी परीक्षण में श्रेणी मानकों से अभिप्राय विभिन्न कक्षाओं में छात्रो के औसत प्राप्तांक से होता है। इनका प्रशासन विद्यालय में पहले से ही वर्गीकृत विद्यार्थियों पर किया जाता है। आयु मानकों की तरह श्रेणी मानकों में भी श्रेणी के साथ दूसरा चर (variable) वही लिया जाय जो ग्रेड के साथ-साथ बढ़े।

"The variable must increase with the grade."

ग्रेड मानक ज्ञात करने के लिए परीक्षण को विभिन्न कक्षाओं के विद्यार्थियों पर प्रशासित किया जाता है किसी कक्षा विशेष के लिये चुने गये छात्र उस कक्षा के छात्रों की समस्त जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाले होते हैं। फिर प्रत्येक कक्षा के छात्रों द्वारा प्राप्त अंकों का औसत ज्ञात कर लिया जाता है। विभिन्न कक्षाओं के लिए उस परीक्षण पर प्राप्त अंकों के औसत ही कक्षा मानक कहलाते हैं। उदाहरणार्थ, मान लीजिए हम गणित विषय में ग्रेड मानक स्थापित करना चाहते है। तब सर्वप्रथम हम कक्षा 7 के लिए एक गणित परीक्षा बनाकर उसे विद्यालय की विभिन्न कक्षाओं जैसे—VIIth, VIIIth, IXth and Xth के प्रतिनिधित्व समूह को देकर प्रत्येक श्रेणी के औसत अंकों को ज्ञात कर लिया जायेगा। अब हमें जिस विद्यार्थी की वर्तमान उपलब्धि का मापन करना होता है उसे हम यह परीक्षण दे देते हैं तथा उसके प्राप्तांकों को ग्रेड मानक के आधार पर व्याख्या करते हैं। यदि एक VIIth Grade का बालक IX Grade के औसत अंकों को प्राप्त कर लेता है तो वह श्रेष्ठ बालक समझा जायेगा और इसके विपरीत यदि एक IX Grade का बालक VIIth Grade के औसत अंकों को ही प्राप्त करता है तो वह निम्न स्तर का बालक समझा जायेगा। उपलब्धि परीक्षणों में अधिकांश रूप से श्रेणी मानक ही निर्धारित किये जाते हैं। इस प्रकार, श्रेणी मानक प्रत्येक श्रेणी स्तर के औसत बालकों के निष्पादन से सम्बन्धित होते हैं।

ग्रेड मानकों का अध्यापकों के लिए अत्यन्त महत्व है। वह इन मानकों के आधार पर विद्यार्थियों की योग्यता की व्याख्या कर सकता है और यह पता लगा सकता है कि अमुक कक्षा में विद्यार्थियों या किसी छात्र की क्या स्थिति है।

परिसीमाएँ (Limitations)

1. आयु मानकों की भाँति ग्रेड मानक भी समान नहीं होते।
2. ग्रेड मानकों का निर्वाचन अधिक स्पष्ट नहीं होता है।
3. इन मानकों का प्रयोग औपचारिक शिक्षा संस्थाओं में ही सम्भव है।
4. इनके द्वारा केवल उपलब्धि परीक्षणों का ही विवेचन कर सकते हैं।
5. शैक्षिक उपलब्धि, बुद्धि विकास आदि चरों की गति कक्षा के अनुसार एक समान नहीं होती है।
6. यदि एक ही आयु के बालकों की योग्यता की तुलना करनी हो तो ग्रेड मानक हमारी सहायता नहीं करते। जैसे 7 वर्षीय बालक शलभ की तुलना हम अन्य बालकों से कर सकते हैं जो 8, 9 या 10 वर्ष के हैं लेकिन शलभ जैसे यदि अन्य 99 बालक भी 7 वर्ष के हों तो उनकी तुलना आपस में कैसे की जायेगी? ऐसे छात्रों की आपस में तुलना शतांशीय मानों (Percentile Ranks) में की जाती है।

क्या आप जानते हैं आयु मानकों को आसानी से स्थापित किया जा सकता है। यही कारण है कि शिक्षा के क्षेत्र में इनका प्रयोग अधिकता से किया जाता है।

नोट

3. शतांशीय मानक (Percentile Norms)—किसी परीक्षण में शतांशीय मानक से हमारा अभिप्राय उस परीक्षण पर छात्रों के किसी बड़े समूह द्वारा प्राप्त प्राप्तांकों के विभिन्न शतांकों से है। दूसरे शब्दों में, शतांशीय मान वे प्राप्तांक हैं जिनसे कम अंक प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या एक दी गई प्रतिशत के बराबर होती है। उदाहरण—पचहत्तरवाँ (75th) शतांशीय मान इससे अधिक अंक प्राप्त करते हैं। शतांशीय मानक निकालने में व्यक्ति की तुलना उस समूह से करते हैं जिसका कि वह सदस्य है। शतांशीय फलांकों का अर्थ है—शतांशों में व्यक्त व्यक्ति की श्रेणी। मान लीजिए 100 विद्यार्थी किसी दौड़ में भाग ले रहे हैं। एक विद्यार्थी सबसे तेज दौड़ता है और दौड़ में प्रथम आता है। वह 99 विद्यार्थियों से दौड़ में अच्छा है अत: उसका प्रतिशत मान 99 है। दौड़ में दूसरी स्थिति पर आने वाला विद्यार्थी 98 विद्यार्थियों से अच्छा है अर्थात उसकी प्रतिशतमक स्थिति 98th है। पहले और दूसरे विद्यार्थी के बीच में कितनी ही दूरी क्यों न हो उसकी प्रतिशतमक स्थिति में कोई अन्तर नहीं आ सकता। जो विद्यार्थी सबसे पीछे है उसके पीछे और कोई दौड़ने वाला विद्यार्थी नहीं है इसलिए उसकी प्रतिशतमक स्थिति शून्य मानी जायेगी। इसी प्रकार, शैक्षिक स्थितियों में जब कई छात्रों का अध्ययन किया जाये या विभिन्न विद्यालयों के छात्रों के मध्य तुलना की जाये तो यह उपयोगी रहता है कि उन क्रमों को शततमक क्रम (Percentile ranks) में रूपान्तरित कर लिया जाय। साधारण रूप में, "शतांशीय मापनी (Percentile Scale) पर यह एक ऐसा बिन्दु है जिसके नीचे किसी विवरण का एक निश्चित प्रतिशत पड़ता है।"
(Percentile is the point on the scale below which a fixed percentage of the distribution falls.)

चूँकि, इनका प्रयोग एक ही सामान्य समूह के समस्त व्यक्तियों पर प्रत्येक स्थिति में सम्भव होता है इसलिए इनके सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि, "शतांशीय मानक किसी विशेष समूह में व्यक्ति के प्राप्तांकों के विवेचन का आधार प्रदान करते हैं।"
(Percentile norms provide a basis for interpreting the score of an individual in terms of his standing in some particular group.)

शतांशीय एवं शतांशीय क्रम (P.R.) की गणना करने के लिये मान लीजिये किसी बड़े समूह पर परीक्षण प्रशासित करने पर M = 100, S.D. = 10 तो उसके लिये विभिन्न शतांशीय (Percentiles) इस प्रकार होंगे—

90th	100	+	1.28 × 10	=	112.8[90 = 50 + 40 (4000σ Value]
80th	100	+	.84 × 10	=	108.4
70th	100	+	.52 × 10	=	105.2
60th	100	+	.25 × 10	=	102.5
50th	100	+	.0 × 10	=	100.0
40th	100	–	.25 × 10	=	97.5
30th	100	–	.52 × 10	=	94.8
20th	100	–	.84 × 10	=	91.6
10th	100	–	1.28 × 10	=	87.2

उपरोक्त आधार पर यदि किसी व्यक्ति को अमुक परीक्षण देने पर 100 अंक प्राप्त होते है तो उसका P.R. 50 होगा तथा उसका निष्पादन औसत स्तर का माना जायेगा।

विशेषताएँ (Merits)

1. शतांक मानक आसानी से विकसित किये जा सकते हैं।
2. इनका विवेचन सरल होता है।
3. इनकी सहायता से ऐसे फलांक भी जिनकी इकाइयाँ और संख्यात्मक प्रतिमान समान नहीं होते अर्थपूर्ण ढंग से व्यक्त किये जा सकते हैं।
4. शतांशीय मानक निकालने में यह आवश्यक नहीं है कि पहले एक प्रतिनिधित्व न्यादर्श (Representative Sample) लिया जाय जैसा कि अन्य परीक्षणों में किया जाता है। अत: इन मानकों में पूर्व-अभिधारणा (Hypothesis) नहीं बनानी पड़ती। इसलिए इनका प्रयोग अत्यन्त विस्तृत रूप से किया जाता है।

नोट

5. व्यक्तित्व परीक्षणों, बुद्धिलब्धि परीक्षणों, रुचि परीक्षणों आदि के लिये प्राय: शतांक मानक ही ज्ञात किये जाते हैं।
6. ये मानक सभी प्रकार की परस्थितियों जैसे–शैक्षिक, औद्योगिक, सैन्य आदि में समान रूप से उपयोगी हैं।

परिसीमाएँ (Limitations)

1. शतांशीय मानक प्राय: प्रतिशत फलांक से भ्रमित हो जाते हैं।
2. इन मानकों का सांख्यिकीय विश्लेषण सम्भव नहीं।
3. इन मानकों के आधार पर व्यक्ति की समूह में सापेक्षिक स्थिति (relative position) ज्ञात होती है। व्यक्ति की वास्तविक योग्यता अथवा सामर्थ्य की निरपेक्ष व्याख्या सम्भव नहीं।
4. विभिन्न परीक्षणों के शतांशीय फलांकों की तुलना तब तक नहीं की जा सकती जब तक कि वे समूह भी जिन पर उनका प्रशासन हुआ है, तुलनात्मक न हों। उदाहरणार्थ–यदि किसी व्यक्ति परीक्षण पर किशोरावस्था की लड़कियों में किसी बड़े समूह द्वारा प्राप्त प्राप्तांकों से शतांक मान विकसित किये गये हैं तो किशोरावस्था वाली लड़कियों के प्राप्तांकों की व्याख्या इन मानकों से की जा सकती है।
5. शतांशीय फलांकों की इकाइयाँ समान नहीं होतीं। यदि वास्तविक प्राप्तांकों का विवरण लगभग सामान्य हो तो मध्यांक के समीप प्राप्तांकों को शतांशीय मान में परिवर्तित करने पर काफी अन्तर रहता है जबकि वितरण के दोनों छोरों पर परिवर्तन करने पर उतना अन्तर नहीं रहता है।
6. सामान्य दशाओं में शतांशीय मान से प्रत्येक व्यक्ति की सापेक्षिक स्थिति का ज्ञान हो जाता है लेकिन किसी अन्य व्यक्ति से उसके फलांक का अन्तर कितना है यह पता नहीं चलता।

4. प्रामाणिक अंक मानक (Standard Score Norms)–शतांशीय मानकों की सबसे बड़ी कमी यह है कि इसमें प्राप्तांकों की इकाई समान नहीं होती है अर्थात, किन्हीं भी दो लगातार क्रमिक शतांकों के बीच का अन्तर समान नहीं होता है जैसे–30th व 40th शतांकों के बीच का अन्तर तथा 60th व 70th शतांकों के बीच का अन्तर समान नहीं होता है। शतांशीय मानकों के इस दोष के कारण इन मानकों का प्रयोग विभिन्न छात्रों के मध्य अन्तरों की तुलना करने के लिए नहीं किया जा सकता। अत: परीक्षण निर्माता ऐसी इकाइयों की खोज करता है जो समस्त प्रसार तक समरुप से अर्थपूर्ण हों। इसी दृष्टि से प्रामाणिक अंक मानकों का प्रयोग अत्यधिक प्रचलित है। इन मानकों को Z प्राप्तांक मानक (Z Score Norms) के नाम से भी जाना जाता है।

प्रामाणिक मानकों से अभिप्राय छात्रों के मूल प्राप्तांकों को प्रामाणिक प्राप्तांकों में बदल लेने से है। इस प्रकार के मानकों को मानक विचलन (S. D. Or σ) की सहायता से ज्ञात किया जाता है। यह मानक विचलन किसी समूह के प्राप्तांकों के प्रसार का एक मापन है। प्रामाणिक मानक सामान्यीकृत समूह (Normative group) पर आधारित होते हैं। ये मानक भी शतांशीय मानकों की भाँति किसी विशेष समूह के सन्दर्भ में व्यक्ति के प्राप्तांकों के आधार पर उसके निष्पादन (Achievement) की विवेचना करते हैं। चूँकि ये बिलकुल समान इकाइयों को व्यक्त करते हैं इसलिए ये शतांशीय मानों से भिन्न होते हैं। इसकी मूल इकाई सन्दर्भ समूह (Reference group) का मानक विचलन होता है तथा व्यक्ति का प्राप्तांक समूह के मध्यमान से नीचे तथा ऊपर मानक विचलन इकाइयों की संख्या में व्यक्त होता है।

प्रामाणिक मानकों को सिगमा प्राप्तांक मानक के अतिरिक्त अन्य मानकों में भी व्यक्त किया जाता है, जैसे–Z प्राप्तांक, *t*-प्राप्तांक, स्टेन-प्राप्तांक, स्टेनाइन-प्राप्तांक आदि। मूल रूप में ये सभी एक ही हैं तथा एक ही स्केल के परिवर्धित रूप हैं।

(They are linear transformation of the s-scale)

Z-Score का मध्यमान शून्य तथा मानक विचलन 1 होता है। t-Score का मध्यमान 50 तथा मानक विचलन 10 होता है। Sten-Score का मध्यमान 55 तथा मानक विचलन 2 एवं Stanine-Score का मध्यमान 5 व मानक विचलन 2 होता है। *t*-Score का प्रयोग **मेक्कॉल** (Mc-Call) तथा Sten-Score का प्रयोग **आर. बी. कैंटिल** ने सर्वप्रथम किया था। यदि किसी परीक्षण पर छात्रों के किसी बड़े समूह का मध्यमान M तथा मानक विचलन σ हो तो उस परीक्षण पर छात्र द्वारा प्राप्त प्राप्ताँक निम्न सूत्रों की सहायता से ज्ञात किया जा सकता है।

नोट

$$Z - \text{Score} = X - M/\sigma$$
$$t - \text{Score} = 50 + (X - M/\sigma) \times 10$$
$$\text{Sten} - \text{Score} = 5.5 + (X - M/\sigma) \times 2$$
$$\text{Stanine} - \text{Score} = 5 + (X - M/\sigma) \times 2$$

Z-Score साधारणतः + – 3 के बीच तथा *t*-Score साधारणतः 20 — 80 के मध्य होते हैं, जबकि Sten-Score 0-10 तथा Stanine-Score 0-9 के मध्य होते हैं। किसी प्राप्तांक के सापेक्ष *Z*, *t*, Sten या Stanine का मान बताता है कि वह प्राप्तांक अपने मध्यमान (क्रमशः 0, 50, 5.5 अथवा 5) से कितना कम या अधिक है। T-Scores भी *t*-Scores की भाँति ही होते हैं। अन्तर केवल इतना है कि T-Scores निकालने से पूर्व मूल आँकड़ों के वितरण को सम (Normalized) कर लिया जाता है। सभी प्रामाणिक प्राप्ताँकों का आधार सम वितरण वक्र भी होता है। यदि वितरण सम नहीं है तो मूल आँकड़ों के समरूप (Equivalent) प्रामाणिक आँकड़े सही नहीं होंगे। अतः पहले वितरण को सम बना लिया जाता है और उसके पश्चात् मूल आंकड़ों (Raw-Scores) को प्रामाणिक अंकों (Standard-Scores) में बदला जाता हैं। शेष सभी विशेषताएँ T-Scores की वही होती हैं जो t-Scores की होती है। STANINES का अर्थ है Standard Nine अर्थात् स्केल की इकाइयाँ जिसमें 9 भाग होते हैं। STANINE 9 सबसे बड़ी इकाई होती है तथा STANINE 1 सबसे छोटी इकाई, बीच में STANINE 5 होता है।

प्रामाणिक मानक ज्ञात करने के लिए परीक्षण को छात्रों के किसी बड़े समूह पर प्रशासित किया जाता है तथा प्राप्तांकों का मानक विचलन व मध्यमान ज्ञात कर लिया जाता है। अब हमें जिस किसी भी प्राप्तांक की व्याख्या करनी होती है उसे किसी प्रामाणिक प्राप्तांक (Z अथवा *t* आदि) में बदल लेते हैं तथा प्राप्त प्रामाणिक प्राप्तांक की व्याख्या कर लेते हैं। प्रामाणिक प्राप्तांक का मान बताता है कि छात्र मध्यमान से कितना कम या अधिक है। परीक्षण निर्माता प्रायः मूल आँकड़ों को किसी प्रामाणिक प्राप्तांक में बदलने के लिए सारणी बनाता है जिसकी सहायता से परीक्षण पर प्राप्त किसी भी मूल आँकड़े को सीधे प्रामाणिक प्राप्तांक में बदला जा सकता है। उदाहरणार्थ, मान लीजिए हृदयेश के गणित उपलब्धि परीक्षण में 60 प्राप्तांक हैं तथा उस परीक्षण पर 60 Score के लिये Z Score का मान + 2 है तो इसका आशय यह है कि हृदयेश गणित उपलब्धि में औसत छात्र से + 2 मानक विचलन के बराबर अधिक अंक प्राप्त करता है। (2Z = 0Z + 2Z)। इसी प्रकार यदि करुणेश के अंग्रेजी प्राप्तांकों के लिए *t*-Score का मान 75 है तो इसका आशय यह है कि वह अंग्रेजी में औसत छात्रों से 25 *t*-Score के बराबर अधिक अंक प्राप्त करता है। (75 *t* = 50 t + 25 t अथवा 75 = 50 + 25) इसी प्रकार से Sten व Stanine Score की भी व्याख्या की जा सकती है।

प्रायः हमें प्रामाणिक प्राप्तांकों एवं मानकों में समानता प्रतीत होती है जो कि एक भ्रम है। वास्तव में इन दोनों में मूलभूत अन्तर है। **रॉस एवं स्टेनले** के अनुसार प्रामाणिक शब्द से लक्ष्य का भाव निहित रहता है अर्थात्, प्रामाणिक से हमारा अभिप्राय है क्या होना चाहिए? जबकि मानक वर्तमान उपलब्धि की ओर संकेत करता है। हम प्रमाप की ओर बढ़ना चाहते हैं जो कि स्थिर रहते हैं जबकि मानक में स्थिरता की मात्रा कम रहती है।

नोट्स शतांक मान ज्ञात करने के लिए परीक्षण को छात्रों के किसी बड़े समूह पर प्रशासित कर लेते हैं तथा छात्रों द्वारा प्राप्त अंकों से विभिन्न शतांक मान ज्ञात कर लेते हैं। यह शतांक मान ही शतांक मानक होते हैं।

11.4 मानकों के आवश्यक गुण (Essential Qualities of Norms)

मानकों के आवश्यक गुण (Essential qualities of Norms)—

किसी भी परीक्षण के मानकों में निम्न आवश्यक गुणों का होना अत्यन्त महत्वपूर्ण है—

(*a*) नवीनता (Novelty)

नोट

(*b*) प्रतिनिधित्वता (Representativeness)

(*c*) सार्थकता (Meaningfulness)

(*d*) तुलनीयता (Comparability)

(*a*) नवीनता (Uptodate)—मानकों की नवीनता से तात्पर्य है कि मानक काफी समय पुराने नहीं होने चाहिये अर्थात, मानक काफी समय पूर्व प्रशासित परीक्षण के अंकों के आधार पर नहीं तैयार किये जाने चाहिये। चूँकि समय अन्तराल के कारण छात्रों की योग्यताओं में परिवर्तन हो सकता है इस कारण 1970 में बुद्धि परीक्षण के लिये विकसित किये गये मानकों की सहायता से यदि 1984 में छात्रों द्वारा प्राप्त अंकों की व्याख्या की जायेगी तो यह व्याख्या छात्रों की वास्तविक योग्यता का वर्णन नहीं कर सकेगी। अत: मानकों में समय-समय पर परिवर्तन करते रहना चाहिये जिससे कि वे नवीन बने रहे।

(*b*) प्रतिनिधित्वता (Representativeness)—मानकों की प्रतिनिधित्वता से तात्पर्य है कि मानकों का विकास उन्हीं छात्रों के प्रतिनिधि समूह से प्राप्त आँकड़ों से किया गया है जिनके प्राप्तांकों की व्याख्या की जानी है। अत: यदि कक्षा 9 के विद्यार्थियों की किसी योग्यता की व्याख्या की जानी है तो मानकों का विकास भी कक्षा 9 के विद्यार्थियों से प्राप्त प्राप्तांकों की सहायता से ही किया जाना चाहिये। साथ ही, ये विद्यार्थी अन्य गुणों में भी उन विद्यार्थियों के समान होने चाहिए जिनके गुणों की व्याख्या की जानी है। परीक्षण मानों का निर्माण किसी बड़े समूह के छात्रों द्वारा प्राप्त अंकों के आधार पर ही किया जाना चाहिये। एक छोटा समूह सम्पूर्ण जनसंख्या का सही प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता है जिसके कारण छोटे समूह पर विकसित मानक गलत व्याख्या दे सकते हैं।

(*c*) सार्थकता (Meaningfulness)—मानकों की सार्थकता से अभिप्राय मानकों के प्रकार से है। विकसित किये गये मानकों को परीक्षण उद्देश्यों तथा मापन किये जाने वाले गुणों पर निर्भर करना चाहिये। जहाँ गुणों में वृद्धि आयु के साथ-साथ होती है वहाँ आयु मानक अथवा ग्रेड मानक विकसित करना अधिक उपयुक्त रहता है। किन्तु यदि व्यक्तित्व का मापन करना हो तो शतांशीय मानक अथवा प्रामाणिक अंक मानक प्रयोग करने चाहिये। इसी प्रकार यदि परीक्षण का उद्देश्य छात्र की शारीरिक अथवा शैक्षिक उपलब्धि की वाँछनीयता को जानना हो तो आयु अथवा ग्रेड मानकों का प्रयोग अधिक उपयुक्त रहता है परन्तु यदि परीक्षण का उद्देश्य किसी बड़े समूह में छात्र की स्थिति का पता लगाना है तो शतांशीय एवं प्रामाणिक मानक प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

(*d*) तुलनीयता (Comparibility)—तुलनीयता भी मानकों का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण गुण है। परीक्षण के मानक आपस में तुलनीय होने चाहिए तभी उन मानकों की सहायता से विभिन्न छात्रों की तुलना की जा सकती है। इसके साथ ही मानक पर्याप्त रूप से वर्णित होने चाहिए अर्थात, परीक्षण के विभिन्न सन्दर्भ बिन्दुओं के अर्थ को स्पष्ट रूप से वर्णन करना चाहिए ताकि छात्रों की योग्यता का शाब्दिक वर्णन स्पष्ट ढंग से किया जा सके।

मानकों के उपरोक्त गुणों के सन्दर्भ में मानक निर्धारित करते समय निम्न सावधानियाँ बरतनी चाहिये—

(*a*) मानक ज्ञात करने के लिए प्रयोग किया जाना वाला न्यादर्श समस्त जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाला होना चाहिये।

(*b*) मानक सावधानीपूर्वक ज्ञात करने चाहिये। इसके लिए एक परीक्षार्थी के विभिन्न परीक्षाओं में प्राप्त अंकों को देखना चाहिये न कि उसके एक ही परीक्षण में प्राप्त अंकों को।

टास्क ग्रेड मानक से क्या तात्पर्य है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. सही विकल्प चुनिए (Choose the correct Option)–

1. .... मानक का प्रकार नहीं है।
   (क) आयु मानक (ख) श्रेणी मानक (ग) शतांशीय मानक (घ) भार मानक
2. श्रेणी मानक को .... भी कहा जाता है।
   (क) कक्षा मानक (ख) विद्यालय मानक
   (ग) आयु मानक (घ) प्रमाणिक अंक मानक
3. आयु मानकों के अनुसार, 5-7 आयु वर्ग में विकास 11-14 आयु वर्ग की अपेक्षा .... अधिक होता है।
   (क) 2 गुना (ख) तीन गुना (ग) चार गुना (घ) पाँच गुना
4. .... द्वारा अध्यापक विद्यार्थियों की योग्यता की व्याख्या कर सकता है।
   (क) आयु मानक (ख) ग्रेड मानक
   (ग) शतांश मानक (घ) प्रमाणिक अंक मानक
5. Z-स्कोर का मध्यमान शून्य तथा मानक विचलन .... होता है।
   (क) 1 (ख) 2 (ग) 3 (ग) 4

11.5 सारांश (Summary)

- किसी भी परीक्षण का मानक वह प्राप्तांक है, जिसे किसी विशेष समूह द्वारा प्राप्त किया गया हो। दूसरे शब्दों में, "मानक से तात्पर्य कार्य के उस नमूने से है जिसे समस्त समूह के द्वारा प्रदर्शित किया गया हो।"
- निम्न कारणों से मानकों के निर्धारण की आवश्यकता पड़ती है–
  (*a*) मूल आँकड़ों (raw-scores) को तुलना योग्य बनाना।
  (*b*) मूल आँकड़े को इस योग्य बनाना ताकि उसे दूसरे आँकड़ों में जोड़ा जा सके।
  (*c*) मूल आँकड़े और अधिक सार्थक (meaningful) बनाने के लिये।
- व्यक्तियों के जिस समूह पर ये मानक तैयार किये जाते हैं, उसे सन्दर्भ समूह (Reference group) कहते हैं अर्थात, मानक सन्दर्भ समूह की प्रामाणिक उपलब्धि (Standard performance) को व्यक्त करते हैं। मानक प्राय: निम्न प्रश्नों के उत्तर देने में हमारी सहायता करते हैं।
- व्यक्तियों के जिस समूह पर ये मानक तैयार किये जाते हैं उसे सन्दर्भ समूह (Reference group) कहते हैं अर्थात, मानक सन्दर्भ समूह की प्रामाणिक उपलब्धि (Standard performance) को व्यक्त करते हैं। मानक प्राय: निम्न प्रश्नों के उत्तर देने में हमारी सहायता करते हैं।
  (*a*) कोई एक व्यक्ति उस परीक्षण पर दूसरों की अपेक्षा कितना नीचे अथवा ऊपर है।
  (*b*) किसी व्यक्ति का एक परीक्षा पर उपलब्ध प्राप्तांक उसी विशेषता का मापन करने वाली दूसरी परीक्षा की तुलना में कितना कम अथवा अधिक है।
- मानक किस समूह के बालकों अथवा व्यक्तियों के लिये बनाये गये हैं इस दृष्टिकोण से दो प्रकार के होते हैं। वैसे मुख्य रूप से चार प्रकार के मानक निर्धारित किये जाते हैं–
  1. आयु मानक (Age Norms)
  2. श्रेणी मानक (Grade Norms)
  3. शतांशीय मानक (Percentile Norms)
  4. प्रामाणिक अंक मानक (Standard Score Norms)

नोट

- इस प्रकार के मानकों का प्रयोग बिने (Binnett) के बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test) में किया गया। इस प्रकार के मानकों की आधारभूत मान्यता यह है कि आयु के साथ-साथ दूसरी राशि (Variable) भी बढ़े।
- आयु मानकों से अभिप्राय उस परीक्षण पर विभिन्न आयु के छात्रों के औसत प्राप्ताकों से है। आयु मानक हम उन्हीं राशियों का ज्ञात करते हैं जो आयु के साथ-साथ बढ़ते हैं जैसे, Height, Weight, Intelligence, Reading Ability, Vocabulary, Mental Age आदि।
- आयु मानकों को आसानी से स्थापित किया जा सकता है। यही कारण है कि शिक्षा के क्षेत्र में इनका प्रयोग अधिकता से किया जाता है।
- **परिसीमाएँ** (Limitations)
  1. इन मानकों का प्रयोग तभी किया जाना चाहिए जब आयु के साथ-साथ मापे जाने वाले अन्य चरों में भी वृद्धि हो जैसे—भार, वृद्धि, शैक्षिक उपलब्धि आदि।
  2. आयु मानकों की प्रमुख परिसीमा यह है कि प्रत्येक बालक का विकास हर उम्र में एक जैसा नहीं होता है।
  3. ये मानक केवल 20 वर्ष तक की आयु के परीक्षार्थियों के लिए ही ठीक रहते हैं।
  4. प्रतिनिधित्व न्यादर्श (Representative Sample) का चयन कठिन कार्य है।
- **परिसीमाएँ** (Limitations)
  1. आयु मानकों की भाँति ग्रेड मानक भी समान नहीं होते।
  2. ग्रेड मानकों का निर्वाचन अधिक स्पष्ट नहीं होता है।
  3. इन मानकों का प्रयोग औपचारिक शिक्षा संस्थाओं में ही सम्भव है।
- किसी परीक्षण में शतांशीय मानक से हमारा अभिप्राय उस परीक्षण पर छात्रों के किसी बड़े समूह द्वारा प्राप्त प्राप्तांकों के विभिन्न शतांकों से है। दूसरे शब्दों में, शतांशीय मान वे प्राप्तांक हैं जिनसे कम अंक प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या एक दिए गए प्रतिशत के बराबर होती है। उदाहरण—पचहत्तरवाँ (75th) शतांशीय मान इससे अधिक अंक प्राप्त करते हैं।
- **विशेषताएँ (Merits):**
  1. शतांक मानक आसानी से विकसित किये जा सकते हैं।
  2. इसका विवेचन सरल होता है।
  3. इनकी सहायता से ऐसे फलांक भी जिनकी इकाइयाँ और संख्यात्मक प्रतिमान समान नहीं होते अर्थपूर्ण ढंग से व्यक्त किये जा सकते हैं।
- **परिसीमाएँ (Limitations)**
  1. शतांशीय मानक प्राय: प्रतिशत फलांक से भ्रमित हो जाते हैं।
  2. इन मानकों का सांख्यिकीय विश्लेषण सम्भव नहीं।
  3. इन मानकों के आधार पर व्यक्ति की समूह में सापेक्षिक स्थिति (relative position) ज्ञात होती है।
- शतांशीय मानकों की सबसे बड़ी कमी यह है कि इसमें प्राप्तांकों की इकाई समान नहीं होती है अर्थात, किन्हीं भी दो लगातार क्रमिक शतांकों के बीच का अन्तर समान नहीं होता है जैसे—30th व 40th शतांकों के बीच का अन्तर तथा 60th व 70th शतांकों के बीच का अन्तर समान नहीं होता है। शतांशीय मानकों के इस दोष के कारण इन मानकों का प्रयोग विभिन्न छात्रों के मध्य अन्तरों की तुलना करने के लिए नहीं किया जा सकता।
- Z-Score साधारणत: + - 3 के बीच तथा *t*-Score साधारणत: 20 – 80 के मध्य होते हैं, जबकि Sten-Score 0-10 तथा Stanine-Score 0-9 के मध्य होते हैं। किसी प्राप्तांक के सापेक्ष *Z*, *t*, Sten या Stanine का मान बताता है कि वह प्राप्तांक अपने मध्यमान (क्रमश: 0, 50, 5.5 अथवा 5) से कितना कम या अधिक है।

- Z-Score साधारणत: + – 3 के बीच तथा *t*-Score साधारणत: 20 – 80 के मध्य होते हैं, जबकि Sten-Score 0-10 तथा Stanine-Score 0-9 के मध्य होते हैं।
- प्रामाणिक मानक ज्ञात करने के लिए परीक्षण को छात्रों के किसी बड़े समूह पर प्रशासित किया जाता है तथा प्राप्तांकों का मानक विचलन व मध्यमान ज्ञात कर लिया जाता है।
- **मानकों के आवश्यक गुण** (Essential qualities of Norms)—किसी भी परीक्षण के मानकों में निम्न आवश्यक गुणों का होना अत्यन्त महत्वपूर्ण है—
  - (*a*) नवीनता (Novelty)
  - (*b*) प्रतिनिधित्वता (Representativeness)
  - (*c*) सार्थकता (Meaningfulness)
  - (*d*) तुलनीयता (Comparability)
- मानकों की नवीनता से तात्पर्य है कि मानक काफी समय पुराने नहीं होने चाहिये अर्थात, मानक काफी समय पूर्व प्रशासित परीक्षण के अंकों के आधार पर नहीं तैयार किये जाने चाहिये।
- मानकों की प्रतिनिधित्वता से तात्पर्य है कि मानकों का विकास उन्हीं छात्रों के प्रतिनिधि समूह से प्राप्त आँकड़ों से किया गया है जिनके प्राप्तांकों की व्याख्या की जानी है।
- मानकों की सार्थकता से अभिप्राय मानकों के प्रकार से है। विकसित किये गये मानकों को परीक्षण उद्देश्यों तथा मापन किये जाने वाले गुणों पर निर्भर करना चाहिये।
- तुलनीयता भी मानकों का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण गुण है। परीक्षण के मानक आपस में तुलनीय होने चाहिए तभी उन मानकों की सहायता से विभिन्न छात्रों की तुलना की जा सकती है।

11.6 शब्दकोश (Keywords)

- **प्रतिनिधित्व**—प्रतिनिधि का कार्य करना।
- **श्रेणी**—विभिन्न वर्ग।
- **तुलनीयता**—तुलना करने योग्य।

11.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. 'मानक' का क्या अर्थ है?
2. मानकों के कितने प्रकार हैं। प्रत्येक को उदाहरण सहित समझाइये।
3. मानक निर्धारण की आवश्यकता क्यों है?
4. प्रामाणिक मापन किस प्रकार किया जाता है?
5. मानकों के आवश्यक गुण क्या हैं।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. 1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. असत्य।

2. 1. (घ) 2. (क) 3. (ख) 4. (ग) 5. (क)

नोट

11.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—12: अपरिष्कृत प्राप्तांक का प्रमापीकृत प्राप्तांक में परिवर्तन टी-प्राप्तांक, सी-प्राप्तांक, जैड-प्राप्तांक, स्टेनाइन प्राप्तांक (Norms of Raw Scores into Standard Scores)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

12.1 प्राप्तांकों के मानकों के अर्थ (Meaning of Norms of Test)

12.2 प्राप्तांकों का Z-अंकों में मानक (Norms of Raw Scores into Z-Scores)

12.3 प्राप्तांकों का T-अंकों में मानक (Norms of Raw Scores into T-Scores)

12.4 प्राप्तांकों का नव-स्तर अंकों में मानक (Norms of Raw Scores into Stanine Scores)

12.5 प्राप्तांकों का बुद्धि लब्धि विचलन अंकों में मानक (Norms of Raw Scores into Deviation I.Qs. Scores)

12.6 प्राप्तांकों का शतांश अंकों में मापन (Norms of Raw Scores into Percentiles)

12.7 सारांश (Summary)

12.8 शब्दकोश (Keywords)

12.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

12.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- प्राप्तांकों के मानकों का अर्थ स्पष्ट करने में।
- प्राप्तांकों का प्रामाणिक अंकों में परिवर्तन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

सांख्यिकी में प्रदत्तों का विश्लेषण इसलिये किया जाता है। कि अर्थहीन प्रदत्तों को सार्थक बनाया जा सके और उनसे निष्कर्ष निकाले जा सके। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में मापन प्रक्रिया सापेक्ष होती है। इसलिये प्राप्तांकों (Raw Scores) से कोई अर्थ नहीं निकाला जा सकता है। अर्थापन की त्रुटि को दूर करने के लिये प्राप्तांकों को प्रामाणिक अंकों में रूपान्तरण कर लिया जाता है। मापन के क्षेत्र में इसे 'मानक' (Norms) की संज्ञा दी जाती है। अनेक प्रकार के प्रामाणिक अंक विकसित किये गये हैं इसलिये मानक कई प्रकार के होते हैं जिनका विवरण मापन की पुस्तकों में दिया जाता है। प्राप्तांकों के रूपान्तरण का मुख्य सम्बन्ध मानक सम्प्रत्यय से है। मानक विकसित करने में प्राप्तांकों को रूपान्तरण किया जाता है।

नोट

12.1 प्राप्तांकों के मानकों का अर्थ (Meaning of Norms of Test)

'प्राप्तांकों का रूपान्तरण' के अनेक अर्थ होते हैं प्रमुख अर्थों का उल्लेख यहाँ पर किया गया है–

1. किसी समूह के प्राप्तांकों को प्रमाणिक अंकों में बदलना जिससे उन्हें सार्थक बनाया जा सके।
2. प्राप्तांकों का अर्थापन करना सम्भव नहीं होता है इसलिये ऐसे अंकों में बदल लिया जाता है जिससे उनका शुद्ध अर्थापन किया जा सके।
3. किसी परीक्षण को प्रामाणिक करने के लिये उसके प्राप्तांकों के लिये प्रामाणिक अंकों के स्तर पर विकसित कर लिया जाता है।
4. किसी परीक्षण के लिये 'मानक' विकसित करने का अर्थ होता है प्राप्तांकों को प्रामाणिक अंकों में रूपान्तरित करना।
5. प्राप्तांकों के रूपान्तरण का तात्पर्य होता है विशिष्ट समूह का औसत स्तर निर्धारित करना।
6. किसी प्राप्तांक का अपने समूह में कहाँ स्थान है यह प्राप्तांक रूपान्तरण को प्रकट करते हैं।

मानक की परिभाषा (Definition of Norm)

प्राप्तांकों के रूपान्तरण की परिभाषा दी गई है–

"प्राप्तांकों के रूपान्तरण से तात्पर्य होता है किसी विशिष्ट परीक्षण के लिये विशिष्ट जनसंख्या के प्रामाणिक अंक का विकास करना।"

"Transformed scores are the average or standard score on a particular test made by specified population."
–Frank S. Freeman

"प्राप्तांकों का रूपान्तरण एक परीक्षण पर प्रामाणिक न्यादर्श का औसत निष्पादन होता है।"

"Transformed scores are defined as the average performance on a particular test made by standardisation sample." *–Thorndik and Hagen*

इन परिभाषाओं में 'प्राप्तांकों के रूपान्तरण' की विशेषताओं का उल्लेख किया है, वे इस प्रकार है–

1. प्राप्तांकों का रूपान्तरण एक समूह का औसत निष्पादन होता है।
2. प्राप्तांकों का रूपान्तरण किसी विशिष्ट परीक्षण से सम्बन्धित होता है।
3. प्राप्तांकों का रूपान्तरण प्रामाणिक न्यादर्श अथवा विशिष्ट जनसंख्या पर आधारित होता है। रूपान्तरण भी विशिष्ट होता है।
4. प्राप्तांकों का रूपान्तरण किसी विशिष्ट प्रामाणिक अंकों के स्तर में किया जाता है।

> *नोट्स* प्राप्तांकों के रूपान्तरण का अर्थ होता है कि प्राप्तांकों के लिये मानदण्ड स्तर विकसित करना।

12.2 प्राप्तांकों का Z-अंकों में मानक (Norms of Raw Scores into Z-Scores)

प्राप्तांकों का प्रामाणिक अंकों (Z-अंकों) में रूपान्तरण, शतांश अंकों पर सुधार रूप है। इसमें इकाई समान रूप से वितरित होती है। सिकुड़न या फैलाव नहीं होता है। शतांश अंकों की असमानता की सीमा को इसमें दूर किया गया है।

प्रामाणिक अंकों को इस प्रकार प्रदर्शित किया जाता है। इन्हें जैड-अंक तथा सिगमा अंक (σ-Scores) भी कहते हैं क्योंकि इनका विकास सामान्य वक्र की सहायता से किया जाता है। इसके प्रयोग करने में यह अवधारणा होती है। बड़े समूह के प्राप्तांकों का वितरण सामान्य सम्भाविता वक्र के रूप में होता है। इसकी प्रमुख तीन विशेषताएँ हैं–

1. यह एक बहुलांकी वितरण अथवा बहुलाक मान 3989 होता है।
2. इसकी वक्रता शून्य होती है। (मध्यमान = मध्यांक = बहुलांक)।

नोट

3. यह मेसोकर्टिक वक्र अर्थात चपटापन सामान्य होता है। (KU = .263)।

प्रामाणिक अंकों में रूपान्तर की प्रविधि (Techniques of Transformation of Raw Scores into Standard Scores)

शतांश अंकों के रूपान्तरण की अपेक्षा प्रामाणिक अंकों की प्रविधि अधिक कठिन तथा समय भी अधिक लगता है। प्रत्येक प्राप्तांक के लिये गणना की जाती है। शतांश अंकों के रूपान्तरण में जो तालिका दी गई है उसी का प्रयोग यहाँ पर किया गया है। सर्वप्रथम इस आवृत्ति वितरण के मध्यमान तथा प्रामाणिक विचलन की गणना की जायेगी।

प्राप्तांकों की आवृत्ति वितरण तालिका

(Frequency Distribution of Raw Scores)

प्राप्तांक (X)	आवृत्तियाँ (f)	विचलन (d)	(fd)	(fd^2)
90–99	8	4	32	128
80–89	20	3	60	180
70–79	32	2	64	128
60–69	80	1	80	80
50–59	120	0	0	0
40–49	78	– 1	– 78	78
30–39	34	– 2	– 68	136
20–29	18	– 3	– 54	162
10–19	10	– 4	– 40	160
योग	**= 400**		$\Sigma fd = -4$	$\Sigma fd^2 = 1052$

इस वितरण का मध्यमान–

$$\text{मध्यमान (Mn)} = AM + \frac{\Sigma fd}{N} i \quad \text{मध्यमान का सूत्र}$$

$$Mn = 54.5 + \frac{-4 \times 10}{400} = 54.5 - \frac{1}{10} = \mathbf{54.40}$$

प्राप्तांकों का प्रामाणिक विचलन–

$$\text{प्रा. वि. (SD)} = \frac{i}{N}\sqrt{[N\,\Sigma\, fd^2 - (\Sigma fd)^2]} \quad \text{प्रा. वि. का सूत्र}$$

$$= \frac{10}{40}\sqrt{[400 \times 1052 - 16]}$$

$$SD = \frac{10}{40}\sqrt{420784} - \frac{632.67}{40} = \mathbf{15.80}$$

प्रामाणिक अंकों में बदलने के लिये अधोलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है। सामान्य वितरण अथवा प्रामाणिक अंकों (Z जैड अंक) का मध्यमान शून्य होता है। और प्रामाणिक विचलन का मान एक होता है–

$$Z = \frac{X - M}{\sigma} = \frac{Z - 0}{1} \quad \text{रूपान्तरण सूत्र} \quad ...(1)$$

इसकी इकाई (σ) सिगमा होती है।

इन विशेषताओं के अतिरिक्त इस वितरण का मध्यमान शून्य और प्रामाणिक विचलन एक होता है। इसका विस्तार -3σ से लेकर $+3\sigma$ तक होता है।

नोट

शतांश अंक की तरह इन अंकों को विकसित रहने के लिये प्राप्तांकों को प्रामाणिक अंकों (Scores) में परिवर्तित किया जाता है। प्रामाणिक अंकों में परिवर्तित करने के लिये निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$\text{प्रामाणिक अंक} = \frac{\text{प्राप्तांक} - \text{मध्यमान}}{\text{प्रमाणिक विचलन}} \qquad Z = \frac{(X - M)}{\sigma}$$

प्रामाणिक अंकों का परिवर्तन एक रेखीय परिवर्तन का उदाहरण है शतांश अंकों में जो वितरण दिया गया है उसे प्रामाणिक अंकों में भी परिवर्तित किया जा सकता है। इसके लिये उसका मध्यमान तथा प्रामाणिक विचलन ज्ञात करना होगा। गणना करने पर उसका मध्यमान 54.40 तथा प्रामाणिक विचलन 15.80 है। इन सांख्यिकियों की सहायता से उपरोक्त सूत्र का प्रयोग करके प्राप्तांकों को प्रामाणिक अंकों में परिवर्तित कर सकते हैं। जिनकी गणना अधोलिखित है–

प्राप्तांक (Raw Score)	गणना (Calculation)	प्रामाणिक अंक (Standard Score)
5		...$Z_5 = -3.12\sigma$
10	$Z_{10} = \frac{10 - 54.40}{15.80}$	$= -2.80\sigma$
15		...$Z_{15} = -2.50\sigma$
20	$Z_{20} = \frac{20 - 54.40}{15.80}$	$= -2.18$
25		...$Z_{25} = -1.86\sigma$
30	$Z_{30} = \frac{30 - 54.40}{15.80}$	$= -1.54\sigma$
35		...$Z_{35} = -1.23\sigma$
40	$Z_{40} = \frac{40 - 54.40}{15.80}$	$= -0.91\sigma$
45		...$Z_{45} = -0.69\sigma$
50	$Z_{50} = \frac{50 - 54.40}{15.80}$	$= -0.28\sigma$
55		...$Z_{55} = -0.04\sigma$
60	$Z_{60} = \frac{60 - 54.40}{15.80}$	$= -0.35\sigma$
65		...$Z_{60} = -0.67\sigma$
70	$Z_{70} = \frac{70 - 54.40}{15.80}$	$= 1.00\sigma$
75		...$Z_{75} = 130\sigma$
80	$Z_{80} = \frac{80 - 54.40}{15.80}$	$= 1.62\sigma$
85		...$Z_{85} = 1.94\sigma$
90	$Z_{90} = \frac{90 - 54.40}{15.80}$	$= 2.25\sigma$
95		...$Z_{95} = 2.57\sigma$
100	$Z_{100} = \frac{100 - 54.40}{15.80}$	$= 2.90\sigma$

इस सूत्र के प्रयोग से प्राप्तांकों को प्रामाणिक अंकों में रूपान्तरित कर लिया जाता है। उपयोग की सुविधा हेतु एक तालिका भी तैयार कर ली जाती है। इन प्राप्तांकों के प्रामाणिक अंकों को एक तालिका में यहाँ व्यवस्थित किया

गया है।

नोट

प्राप्तांकों का प्रामाणिक अंकों में मानक

(Norms of Raw Scores in Standard Scores)

प्राप्तांक (Raw Scores)	प्रामाणिक अंक (जैड) (Standard Scores)	प्राप्तांक (Raw Scores)	प्रामाणिक अंक (जैड) (Standard Scores)
5	– 3.12σ	55	0.04σ
10	– 2.80σ	60	0.35σ
15	– 2.50σ	65	0.67σ
20	– 2.18σ	70	1.00σ
25	– 1.86σ	75	1.30σ
30	– 1.54σ	80	1.62σ
35	– 1.23σ	85	1.94σ
40	– 0.91σ	90	2.25σ
45	– 0.16σ	95	2.57σ
50	– 0.28σ	100	2.90σ

इस तालिका की सहायता से प्राप्तांकों को प्रामाणिक अंकों में परिवर्तित करके अर्थापन किया जाता है।

प्रामाणिक अंकों की विशेषताएँ (Advantage of Standard Scores)

प्रामाणिक अंकों की निम्नलिखित विशेषतायें हैं–

1. प्रामाणिक अंक के लिये सम्भावना वक्र का प्रयोग किया जाता है साधरणतया प्रामाणिक न्यादर्श का वितरण सामान्य वक्र जैसा होता है।
2. प्राप्तांकों को सरलता से प्रामाणिक अंकों में परिवर्तित किया जाता है।
3. इसका अर्थापन करना भी सरल होता है क्योंकि प्रामाणिक अंकों का मान ऋणात्मक और धनात्मक दोनों ही प्रकार का होता है। ऋणात्मक का अर्थ होता है मध्यमान से नीचे और धनात्मक का अर्थ होता है मध्यमान से ऊपर।
4. इसका प्रयोग बुद्धि-परीक्षण एवं प्रवणता परीक्षणों में अधिक किया जाता है।
5. प्रामाणिक अंक एक रेखीय परिवर्तन होता है।

प्रामाणिक अंकों की सीमाएँ (Limitations of a Standard Scores)

इन प्रामाणिक अंकों की निम्नलिखित सीमायें होती हैं–

1. इसके अन्तर्गत प्रत्येक प्राप्तांक के लिये प्रामाणिक अंक की गणना की जाती है।
2. इस अंक का अर्थापन केवल मध्यमान के सन्दर्भ में ही किया जा सकता है कि परीक्षार्थी का स्तर मध्यमान से ऊपर है या नीचे शतांश अंक की तरह उसके विशिष्ट स्तर का बोध नहीं हो पाता है।
3. निष्परीक्षण में इस प्रकार के अंकों का प्रयोग अधिक उपयोगी नहीं होता है। शताँश अंकों की तरह सभी प्रकार के परीक्षणों में प्रयुक्त नहीं कर सकते हैं।
4. व्यावहारिक रूप में प्राप्ताँकों का वितरण पूर्ण रूप से सम्भावित वक्र नहीं बनता, अपितु उसे सामान्यीकृत

नोट

किया जाता है।

12.3 प्राप्तांकों का T-अंकों में मानक (Norms of Raw Scores into T-Scores)

टी-अंक भी प्रामाणिक अंकों की तरह ही है। प्रामाणिक अंक ऋणात्मक तथा धनात्मक दोनों ही प्रकार के होते हैं। मानवीय क्षमताओं का मापन तथा अर्थापन ऋणात्मक अंकों में बोधगम्य नहीं होता है। ऋणात्मक भ्रामक होते हैं। इस प्रकार से टी-अंक प्रामाणिक अंक पर सुधार रूप है। टी-अंकों के वितरण का मध्यमान 50 तथा प्रामाणिक विचलन 10 होता है। इस प्रकार टी-अंक धनात्मक होते हैं। अधोलिखित सूत्र की सहायता से प्राप्तांकों को टी-अंकों में रूपान्तरण कर लिया जाता है।

$$\frac{T-50}{10} = \frac{X-M}{\sigma} = \text{रूपान्तरण सूत्र} \quad ...(1)$$

$$T = 10\left(\frac{X-M}{\sigma}\right) + 50 \quad T = 10Z + 50$$

जबकि– T = टी-अंक X = प्राप्तांक

M = वितरण का मध्यमान σ = वितरण का प्रामाणिक विचलन

टी-अंकों का रूपान्तरण भी एक रेखीय परिवर्तन का उदाहरण है। जो वितरण उपरोक्त रूपान्तरित अंकों के लिये प्रयुक्त किया गया है उसी प्रकार प्रयोग टी-अंकों के रूपान्तरण में किया गया है। इस वितरण का मध्यमान 54.40 तथा प्रामाणिक विचलन 15.80 है। उपरोक्त सूत्र $T = 10(X - M)/\sigma + 50$ का प्रयोग करके प्राप्तांकों को टी-अंकों में रूपान्तरित किया गया है, जिसकी गणना निम्नांकित है–

प्राप्तांक (Raw Score)	गणना (Calculation)		प्रामाणिक अंक (Standard Score)
5			...T_5 = 19
10	$T_{10} = 10\frac{(10-54.40)}{15.80} + 50$	= 22	
15			...T_{15} = 25
20	$T_{20} = 10\frac{(20-54.40)}{15.80} + 50$	= 28	
25			...T_{25} = 31
30	$T_{30} = 10\frac{(30-54.40)}{15.80} + 50$	= 35	
35			...T_{35} = 38
40	$T_{40} = 10\frac{(40-54.40)}{15.80} + 50$	= 41	
45			...T_{45} = 44
50	$T_{50} = 10\frac{(50-54.40)}{15.80} + 50$	= 47	
55			...T_{55} = 50
60	$T_{60} = 10\frac{(60-54.40)}{15.80} + 50$	= 54	
65			...T_{65} = 57
70	$T_{70} = 10\frac{(70-54.40)}{15.80} + 50$	= 60	
75			...T_{75} = 63

नोट

80	$T_{80} = 10\dfrac{(80-54.40)}{15.80}+50$	$= 66$	
85			$...T_{85} = 70$
90	$T_{90} = 10\dfrac{(90-54.40)}{15.80}+50$	$= 72$	
95			$...T_{95} = 76$
100	$T_{100} = 10\dfrac{(100-54.40)}{15.80}+50$	$= 79$	

प्राप्तांक (Raw Scores)	टी-अंक (T-Scores)	प्राप्तांक (Raw Scores)	टी-अंक (T-Scores)
5	19	55	50
10	22	60	54
15	25	65	57
20	28	70	60
25	31	75	63
30	35	80	66
35	38	85	70
40	41	90	72
45	44	95	76
50	47	100	79

परीक्षण द्वारा जो भी प्राप्तांक किसी भी परीक्षार्थी को मिलेगा उसे उपरोक्त तालिका की सहायता से टी-अंकों का रूपान्तरण करके उसका अर्थापन किया जा सकता है।

टी-अंकों की विशेषताएँ (Advantage of T-Scores)

इस प्रकार के अंकों की अधोलिखित विशेषतायें हैं–

1. इस प्रकार के अंकों को विकसित करना सरल है। सूत्र का प्रयोग करके प्राप्तांकों को टी-अंकों में परिवर्तित करते हैं।
2. इसका अर्थापन करना भी सरल होता है। इसमें टी-अंकों का मान सदैव धनात्मक होता है और मध्यमान 50 तथा प्रामाणिक विचलन मान 10 होता है।
3. इसका प्रयोग निष्पत्ति परीक्षण तथा प्रवणता परीक्षणों में अधिक किया जाता है।
4. टी-अंक का वितरण रेखीय परिवर्तन होता है।

टी-अंकों की सीमाएँ (Limitations of T-Scores)

इन अंकों की अधोलिखित सीमायें हैं–

1. इसमें प्रत्येक प्राप्तांक के लिये टी-अंक की गणना की जाती है। इसलिये यह अंक मितव्ययी नहीं है।
2. इन अंकों की सहायता से प्राप्तांकों का अर्थापन मध्यमान (50) के सन्दर्भ में ही किया जा सकता है कि परीक्षार्थी का स्तर मध्यमान से ऊपर है अथवा नीचे। समूह में उसके स्तर का सही बोध नहीं होता है।

नोट

3. बुद्धि-परीक्षण में इस प्रकार के अंकों का प्रयोग अधिक उपयोगी नहीं होता। इसका प्रयोग सीमित परीक्षणों में ही कर सकते हैं।
4. इसका प्रयोग वितरण सामान्य होने पर करना ही उचित होता है।

> *क्या आप जानते हैं* प्रत्येक प्राप्तांक को टी-अंकों में रूपान्तरित करने के लिये शक्ति सूत्र तथा प्रक्रिया का अनुसरण किया जाता है। इनके उपयोग हेतु प्राप्तांकों तथा रूपान्तरित टी-अंकों हेतु एक तालिका बना ली जाती है जिसमें प्राप्तांकों तथा उनके टी-अंकों को व्यवस्थित कर लिया जाता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. निम्नलिखित कथनों में 'सत्य' तथा 'असत्य' लिखिए—

1. परीक्षण मानक तथा परीक्षण स्तर में अन्तर होता है।
2. परीक्षण मानक दो प्रकार के होते हैं।
3. आयु मानक का उपयोग बुद्धि परीक्षण में होता है।
4. प्रामाणिक अंक मानक से छात्र की अनुस्थिति का बोध होता है।
5. शतांश मानकों का उपयोग अधिकांश परीक्षणों में किया जाता है।
6. नव-स्तर मानक का उपयोग अधिक किया जाने लगा है।

12.4 प्राप्तांकों का नव-स्तर अंकों में मानक (Norms of Raw Scores into Stanine Scores)

प्रामाणिक नव अंक स्तर, प्रामाणिक अंकों का ही एक परिवर्तित रूप है। इन अंकों में भी यह अवधारणा होती है कि प्राप्तांकों का वितरण सम्भावित वक्र (Normal Curve) में होता है और इस वितरण को नौ प्रामाणिक स्तरों में विभाजित किया जा सकता है। इन अंकों का विशेष प्रयोग कम्प्यूटर के आई.बी.एम. कार्ड में किया जाता था, क्योंकि आई.बी.एम. कार्ड में साधारणतया 9 पंक्तियाँ अथवा 9 स्तम्भ होते हैं। इन्हीं की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुये प्रामाणिक नव अंक विकसित किये जाते हैं। सम्भावित वक्र को निम्नांकित रूप में नव-स्तर में विभाजित करते हैं—

प्रामाणिक नव-स्तर मानकों का वितरण

(Distribution of Stanine Norms)

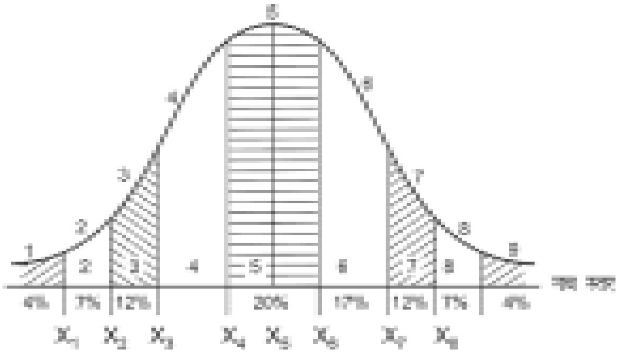

नोट

प्रतिशत		प्रामाणिक नव-स्तर अंक
4%	ऊपर का तल या नीचे का तल	1, 9
7%	जनसंख्या जो प्रथम और नव के समीप	2, 8
12%	जनसंख्या जो द्वितीय और अष्टम के समीप	3, 7
17%	जनसंख्या जो तृतीय और सप्तम के समीप	4, 6
20%	जनसंख्या जो 4 व 6 के मध्य की है	तथा 5
100%	जनसंख्या योग	

प्रामाणिक नव-स्तर अंकों का रूपान्तरण भी एक रेखीय परिवर्तन का उदाहरण है। जो शतांश अंक में प्राप्तांकों के वितरण का उदाहरण दिया गया है, उसे प्रामाणिक नव-स्तरों में भी परिवर्तित कर सकते हैं। वितरण का मध्यमान 55 और प्रामाणिक विचलन 15.80 है। इस वितरण को सम्भाविता वक्र में मानकर नव-स्तरों की सीमाओं की गणना अधोलिखित रूप में की जा सकती है—

$X_5 = M + .25\sigma = 55 + .25 \times 15.80 = 58$

$X_4 = M - .25\sigma = 55 - .25 \times 15.80 = 51$

$X_6 = M + .74\sigma = 55 + .74 \times 15.80 = 64$

$X_3 = M - .76\sigma = 55 - .74 \times 15.80 = 45$

$X_7 = M + 1.23\sigma = 55 + 1.23 \times 15.80 = 70$

$X_2 = M - 1.23\sigma = 55 - 1.23 \times 15.80 = 39$

$X_8 = M + 1.75\sigma = 55 + 1.75 \times 15.80 = 86$

$X_1 = M - 1.75\sigma = 55 - 1.75 \times 15.80 = 33$

नव-स्तर मानकों का वितरण

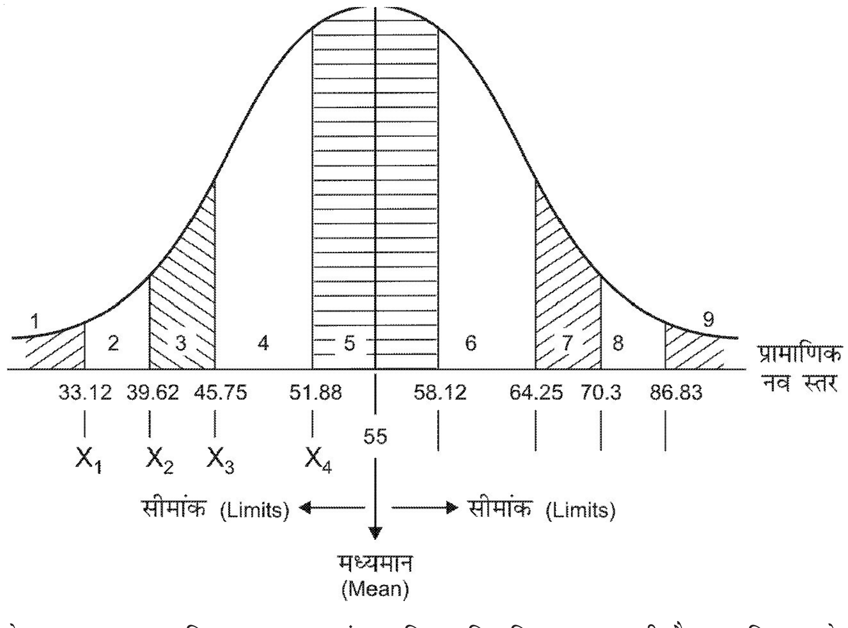

इस गणना के आधार पर प्रामाणिक नव-स्तर अंक तालिका विकसित कर सकती है। इस वितरण के आधार पर परिवर्तित नव-स्तर तालिका अधोलिखित है—

नोट

प्रामाणिक नव-स्तर मानक तालिका

(Stanine Scores)

प्राप्तांकों का विस्तार (Raw Score)	सीमांक (σ Limits)	प्रामाणिक नव-स्तर मानक (Stanine Scores)
0–33	(– 1.75σ के नीचे)	1
34–40	(– 1.23σ से – 1.75σ)	2
41–46	(– .74σ से – 1.23σ)	3
47–52	(– .25σ से – .74σ)	4
53–58	(– .25σ से .25σ)	5
59–64	(.25σ से .74σ)	6
65–70	(.74σ से 1.23σ)	7
71–77	(1.23σ से 1.75σ)	8
78 तथा ऊपर	(1.75σ से ऊपर)	9

उपरोक्त तालिका प्रामाणिक नव अंकों के परिवर्तन को प्रदर्शित करती है। इस तालिका की सहायता से प्राप्तांकों को प्रामाणिक नव अंकों में परिवर्तित करके अर्थापन कर सकते हैं। अर्थापन के लिये प्रामाणिक स्तर 5 सन्दर्भ बिन्दु का कार्य करता है।

प्रामाणिक नव-स्तर मानकों की विशेषताएँ (Characteristics of Stanine Scores)

इन अंकों की अधोलिखित विशेषतायें हैं–

1. इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि इसका प्रयोग आई.बी.एम. कार्ड में सुगमता से किया जाता है और प्रदत्तों का विश्लेषण कम्प्यूटर से करना सरल हो जाता है।
2. इन अंकों में सामान्य वक्र की सहायता ली जाती है। साधारणत: न्यादर्श का वितरण सामान्य वक्र जैसा ही होता है।
3. इसका अर्थापन करना भी सरल होता है, क्योंकि समस्त प्राप्तांकों के विवरण को नव-स्तरों में विभाजित कर लेते हैं और स्तर पाँच अर्थापन के लिये सन्दर्भ बिन्दु माना जाता है।
4. इसका उपयोग निष्पत्ति परीक्षणों तथा प्रवणता परीक्षणों में किया जाता है।
5. प्रामाणिक नव-स्तर परिवर्तन रेखीय होता है।

प्रामाणिक नव-स्तर अंकों की सीमाएँ (Limitations of Stanine Scores)

इन अंकों की अधोलिखित सीमायें हैं–

1. इन अंकों को विकसित करने में प्रत्येक स्तर के लिये प्राप्तांकों के विस्तार की गणना करनी होती है। इसके लिये सम्भावित वक्र तालिका की सहायता ली जाती है, इसलिये यह मितव्ययी नहीं है।
2. इन अंकों की सहायता से प्राप्तांकों का अर्थापन विशिष्ट रूप में नहीं किया जा सकता, केवल स्तर पाँच के सन्दर्भ में अर्थापन करते हैं कि सामान्य से ऊपर अथवा नीचे।
3. इसका प्रयोग सीमित परीक्षणों में किया जा सकता है यह अंक बुद्धि परीक्षणों के लिये उपयोगी नहीं है।

4. साधारणतया न्यादर्श के प्राप्तांकों का वितरण पूर्णरूप से सम्भाविता वक्र नहीं बनाता, अपितु इन अंकों को विकसित करने के लिये सामान्यीकृत किया जाता है, इसलिये अंक रूपान्तरण में सामान्यीकृत करने की त्रुटि रहती है।

12.5 प्राप्तांकों का बुद्धि-लब्धि विचलन अंकों में मानक (Norms of Raw Scores into Deviation I.Qs. Scores)

किसी बुद्धि परीक्षण के प्राप्तांकों के वितरण को बुद्धि-लब्धि विचलन अंकों में रूपान्तरण कर लिया जाता है। जिनका समझना तथा अर्थापन करना सरल एवं सुगम होता है। एक बड़े समूह के प्राप्तांकों का वितरण सामान्य सम्भाविता वक्र में होता है। इसलिये बुद्धि-लब्धि-परीक्षण के प्राप्तांकों को किसी प्रामाणिक अंकों में रूपान्तरण के स्थान बुद्धि-लब्धि (I.Q.) में परिवर्तित किया जाता है। यह रूपान्तरण भी प्रामाणिक अंकों के रूपान्तरण के समान ही होता है। और वितरण का मध्य बुद्धि-लब्धि होती है जिसका वितरण भी सामान्य होता है और वितरण का मध्यमान 100 तथा प्रामाणिक विचलन 16 होता है। इस प्रकार बुद्धि-परीक्षण के प्राप्तांकों को बुद्धि-लब्धि (I.Qs.) में रूपान्तरण कर लिया जाता है। इसके लिये निम्नांकित सूत्र का प्रयोग किया जाता है–

$$\left(\frac{I.Q. - 100}{16}\right) = \left(\frac{X - M}{\sigma}\right) \text{ रूपान्तरण सूत्र}$$

$$I.Q. = 16\left(\frac{X - M}{\sigma}\right) + 100 = 16Z + 100 \qquad ...(1)$$

जबकि–I.Q. = बुद्धि–लब्धि X = प्राप्तांक

M = वितरण का मध्यमान σ = वितरण का प्रामाणिक विचलन

बुद्धि-लब्धि का परिवर्तन भी एक रेखीय परिवर्तन होता है। शतांश अंकों में जो प्राप्तांकों का वितरण दिया गया है उसको उपरोक्त सूत्र की सहायता से बुद्धि-लब्धि में परिवर्तित कर सकते हैं। प्रामाणिक सूत्र के प्राप्तांकों का मध्यमान 54.40 और प्रामाणिक विचलन 15.80 है। निम्नांकित प्रक्रिया के द्वारा प्राप्तांकों को बुद्ध-लब्धि अंक में भी परिवर्तित किया जा सकता है।

प्राप्तांक (Raw Score)	गणना (Calculation)	बुद्धि-लब्धि (I.Q.)
10	$I.Q._{10} = 16\left(\frac{10 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 55
15	$I.Q._{15} = 16\left(\frac{15 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 60
20	$I.Q._{20} = 16\left(\frac{20 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 65
25	$I.Q._{25} = 16\left(\frac{25 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 70
30	$I.Q._{30} = 16\left(\frac{30 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 75

नोट

35	$I.Q._{35} = 16\left(\frac{35 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 80
40	$I.Q._{40} = 16\left(\frac{40 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 85
45	$I.Q._{45} = 16\left(\frac{45 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 90
50	$I.Q._{50} = 16\left(\frac{50 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 95
55	$I.Q._{55} = 16\left(\frac{55 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 100
60	$I.Q._{60} = 16\left(\frac{60 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 105
65	$I.Q._{65} = 16\left(\frac{65 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 110
70	$I.Q._{70} = 16\left(\frac{70 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 115
75	$I.Q._{75} = 16\left(\frac{75 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 120
80	$I.Q._{80} = 16\left(\frac{80 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 125
85	$I.Q._{85} = 16\left(\frac{85 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 130
90	$I.Q._{90} = 16\left(\frac{90 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 135
95	$I.Q._{95} = 16\left(\frac{95 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 140
100	$I.Q._{100} = 16\left(\frac{100 - 54.40}{15.80}\right) + 100$	= 145

इस प्रकार सूत्र की सहायता से प्राप्तांक को बुद्धि-लब्धि में रूपान्तरित कर लिया जाता है। प्राप्तांकों के उपयोग एवं सरलता के लिये प्राप्तांकों तथा अनेक बुद्धि-लब्धि रूपान्तरण को एक तालिका में व्यवस्थित कर लिया जाता है।

नोट

इस प्रकार की रूपान्तरित बुद्धि-परीक्षण को अनुसूची में दी जाती हैं। जिससे परीक्षण के प्राप्तांकों को बुद्धि-लब्धि में बदल लिया जाता है जिनका समझना तथा अर्थापन करना सरल एवं अधिक शुद्ध होता है।

प्राप्तांकों का बुद्धि-लब्धि में रूपान्तरण तालिका
(Transformation of Raw Scores into I.Qs.)

प्राप्तांक (Raw Scores)	बुद्धि-लब्धि (I.Qs.)	प्राप्तांक (Raw Scores)	बुद्धि-लब्धि (I.Qs.)
10	55	55	100
15	60	60	105
20	65	65	110
25	70	70	115
30	75	75	120
35	80	80	125
40	85	85	130
45	90	90	135
50	95	95	140
		100	145

बुद्धि-लब्धि में मानक की विशेषताएँ

प्राप्तांकों का बुद्धि-लब्धि में रूपान्तरण से प्रमुख लाभ है–

1. यह बुद्धि-लब्धि में रूपान्तरण की सरल विधि है।
2. प्राप्तांकों को अर्थापन तथा समझना भी सरल होता है।
3. इनका प्रयोग परामर्श तथा समझना भी सरल होता है।
4. बुद्धि-परीक्षण को प्रमापीकृत किया जाता है।
5. इस रूपान्तरण विधि का प्रयोग बुद्धि-परीक्षणों में किया जाता है।

बुद्धि-लब्धि में मानक की सीमाएँ

इसकी प्रमुख सीमायें अधोलिखित हैं–

1. इस रूपान्तरण में समय अधिक लगता है प्रत्येक प्राप्तांक के लिये गणना अलग से की जाती है।
2. बुद्धि-लब्धि के रूपान्तरण का प्रयोग बुद्धि-परीक्षणों तक ही सीमित है।
3. यह रूपान्तरण सामान्य सम्भाविता वक्र की अवधारणा पर आधारित है जबकि पूर्णरूप से वितरण सामान्य नहीं होता है।
4. इस विधि के द्वारा सीधे बुद्धि-लब्धि में बदल लिया जाता है। मानसिक आयु तथा वास्तविक आयु को प्रयुक्त नहीं किया जाता है।

नोट्स बुद्धि-लब्धि में वास्तविक आयु की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। बुद्धि लब्धि का अर्थापन वास्तविक आयु के सन्दर्भ में ही सार्थक होता है।

मानक अंकों की तुलना (Comparison of Transformed Scores)

प्राप्तांकों से रूपान्तरित अंकों में बदलने में विभिन्न अंकों का वर्णन किया गया है। तथा एक ही प्राप्तांक के वितरण

नोट

से उनके रूपान्तरण की प्रक्रिया को स्पष्ट किया गया है। शतांश अंकों के दोनों को भी प्रकट किया गया है।

मानक प्रामाणिक अंकों का सम्बन्ध

(Relation Among Norms Scores)

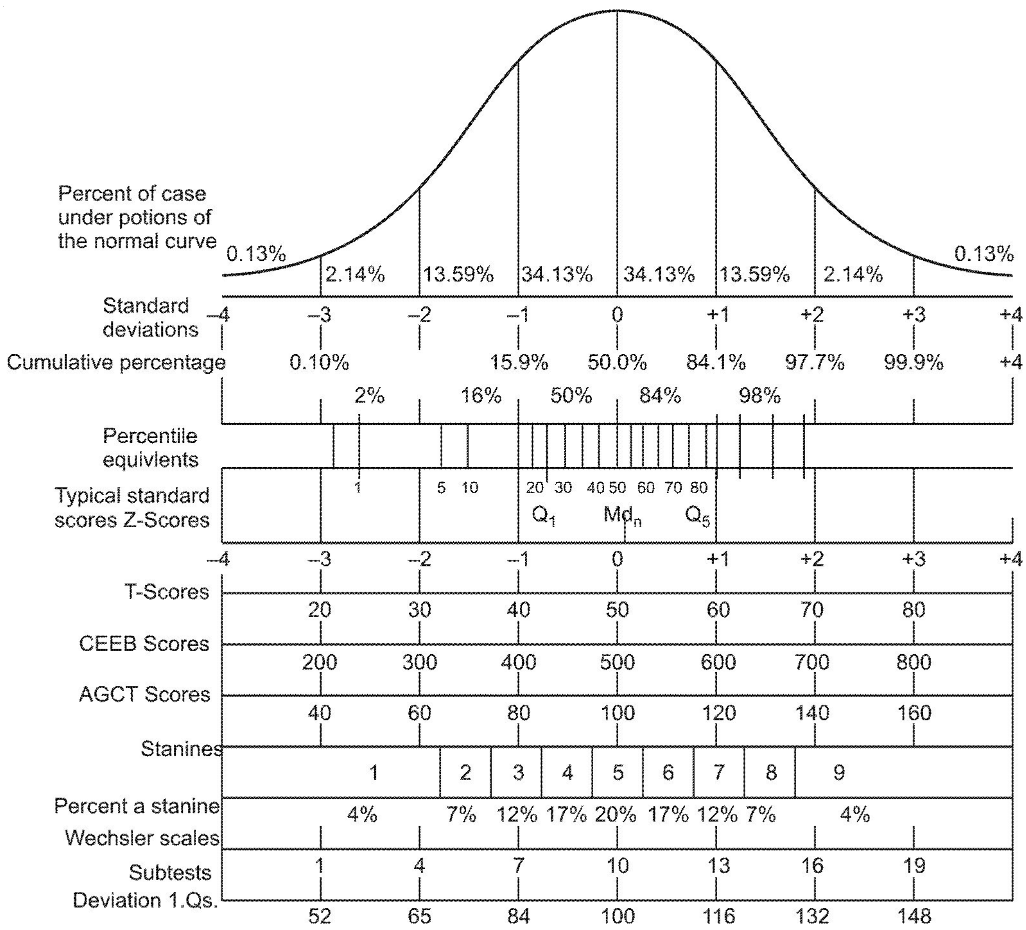

सभी प्राप्तांकों के रूपान्तरण की अवधारणा यह होती है कि वितरण रेखीय है और वितरण सामान्य है अधिकांश प्रामाणिक अंकों में सामान्य वितरण की विशेषताओं को ही प्रयुक्त करते हैं। परन्तु साधारणत: कोई वितरण पूर्णरूप से सामान्य नहीं होता है। इसलिये रूपान्तरण में यह त्रुटि रहती है। इस अध्याय में पाँच प्रकार के रूपान्तरणों का उल्लेख किया गया है। इन्हें सामान्य वक्र पर प्रदर्शित किया गया है जिससे उनके स्वरूप तथा विस्तार का बोध होता है।

सामान्य वक्र की सहायता से सभी रूपान्तरित प्रामाणिक अंकों के सम्बन्ध को प्रस्तुत किया गया है। एक प्राप्तांक अंकों (जैड-अंक) का विस्तार (-3σ से $+3\sigma$) तक होता है तथा बुद्धि-लब्धि का विस्तार 52 से 148 तक दिया हैं नव-स्तर अंकों को प्रतिशत के रूप में दर्शाया गया हैं शतांश अंकों को भी सामान्य वक्र वितरण पर प्रदर्शित किया गया है।

नोट

मानक अंकों की तुलनात्मक तालिका
(Comparison of Various Norms Scores)

प्राप्तांक (Raw Scores)	शतांश अंक (Percentile Scores)	प्रामाणिक अंक (Standard Scores)	टी-अंक (T-Scores)	नव-स्तर अंक (Stanine Scores)	बुद्धि-लब्धि विचलन अंक (Deviation I.Qs.)
5	0	– 3.12s	19	1	50
10	0	– 2.28σ	22	1	55
15	2	– 2.50σ	25	1	60
20	2.50	– 2.18σ	28	1	65
25	5	– 1.86σ	31	1	70
30	7	– 1.54σ	35	1	75
35	9.50	– 1.23σ	38	2	80
40	15.50	– .91σ	41	2	85
45	20	– .60σ	44	2	90
50	35	– .28σ	47	4	90
55	50	– 0.4σ	50	5	100
60	65	.35σ	54	5	105
65	72	.67σ	57	6	110
70	85	1.00σ	60	7	115
75	87	1.30σ	63	8	120
80	93	1.62σ	66	9	125
85	95	1.94σ	70	9	130
90	98	2.25σ	72	9	135
95	99	2.75σ	76	9	140
100	100	2.90σ	79	9	145

12.6 प्राप्तांकों का शतांश अंकों में मानक (Norms of Raw Scores into Percentiles)

शतांश अंक प्रतिशत अंकों से भिन्न होते हैं प्रतिशत में गणना हेतु अंकगणित का उपयोग होता है और शतांश अंकों में बदलने के लिये सांख्यिकी का प्रयोग किया जाता है जिसका सन्दर्भ बिन्दु समूह होता है जबकि प्रतिशत का सन्दर्भ बिन्दु शून्य होता है।

प्रमापीकृत परीक्षण की रचनाओं में शतांश अंक का प्रयोग अधिक होता है। भारत में शैक्षिक और मनोवैज्ञानिक प्रमापीकृत परीक्षणों में शतांश अंक का प्रयोग अधिकतर किया गया है। इस प्रकार के अंकों के लिये परीक्षण के प्राप्तांकों को शतांश अनुस्थितियों (Percentile Ranks) में परिवर्तित कर लिया जाता है और प्राप्तांकों को प्रमापीकृत समूह में उनका स्तर निर्धारित किया जाता है।

शतांश अंक का अर्थ (Meaning of Percentile Rank)

शतांश अंकों को प्राप्तांकों की प्रतिशत में भ्रम नहीं करना चाहिये, क्योंकि प्राप्तांकों की प्रतिशत भी परीक्षण प्राप्तांकों (Raw Scores) के समान ही होती है कि इतने प्रतिशत प्रश्नों को परीक्षार्थी ने सही किया। परन्तु शतांश अंक परीक्षण प्राप्तांकों को इस रूप में परिवर्तित करते हैं जिससे परीक्षार्थी का प्रमापीकृत समूह में स्तर निर्धारित हो।

इस प्रत्यय को एक उदाहरण से स्पष्ट किया गया हैं जैसे–एक परीक्षार्थी ने पचास प्रश्नों में से पैंतीस प्रश्न सही किये पैंतीस अंक प्राप्त किये, इसे प्रतिशत में बदलने से 70 प्रतिशत अंक प्राप्त किये, अर्थात् परीक्षार्थी ने परीक्षण के 70 प्रतिशत प्रश्नों को सही किया है।

शतांश अंक के लिये 35 प्राप्तांकों को शतांश अनुस्थितियों में परिवर्तित करना होगा कि उस परीक्षार्थी का प्रमापीकृत समूह में स्तर कहाँ हैं। यदि शतांश अनुस्थिति गणना करने पर 84 प्राप्त होती है, इसका अर्थ यह हुआ कि प्रमापीकृत समूह के 84 प्रतिशत परीक्षार्थियों के अंक उससे कम हैं और 16 प्रतिशत छात्रों के अधि क हैं। इस प्रकार प्राप्तांकों की प्रतिशत और शतांश अनुस्थितियों में अधिक अन्तर होता है। शतांश अंक को प्रामाणिक समूह सन्दर्भ में अर्थापन किया जाता है।

शतांश अंक की गणना (Calculation of Percentile Scores)

शतांश अंक को विकसित करने के लिये परीक्षण को एक ऐसे समूह को दिया जाता है जो उसकी विशिष्ट जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता हो। परीक्षण के बाद परीक्षार्थियों के उत्तर पत्रकों का अंकन किया जाता है। इस प्रकार जो अंक प्राप्त होते हैं उनके आवृत्ति-वितरण तालिका में व्यवस्थित करते हैं और संचयी आवृत्तियों की गणना की जाती है। उसके बाद इन्हें प्रतिशत में बदल लिया जाता है। इन प्रदत्तों की सहायता से संचयी आवृत्ति प्रतिशत वक्र (Ogive) की रचना की जाती है।

आवृत्ति वितरण तालिका
(Frequency Distribution Table)

प्राप्तांक (X)	आवृत्ति (f)	संचयी आवृत्ति	सीमांक (Limits)	संचयी आवृत्तियों की प्रतिशत
90–99	8	400	100	100
80–89	20	392	90	98
70–79	32	372	80	93
60–69	80	340	70	85
50–59	120	260	60	65
40–49	78	140	50	35
30–39	34	62	40	15.5
20–29	18	28	30	7
10–19	10	10	20	2.50
योग =	**400**	*Cf*	Limits	*Cf*%

इस तालिका के प्राप्तांकों का शतांश अंकों में रूपान्तरण करने के लिये दो प्रविधियों को प्रयुक्त किया जाता है।

(1) सूत्र का प्रयोग तथा

(2) संचयी आवृत्ति प्रतिशत वक्र की रचना से।

शतांश अंकों की गणना हेतु सूत्र (Formula for Calculating Percentile Points)

यह सूत्र भी दो प्रकार का होता है–एक प्राप्तांकों से शतांश अंकों की गणना करना, द्वितीय शतांश अनुस्थिति से शतांश बिन्दु की गणना करना। यहाँ पर प्रथम प्रकार का सूत्र अधिक व्यवहारिक तथा उपयोग किया जाता है। प्राप्तांकों का शतांश अंकों के रूपान्तरण हेतु सूत्र–

$$\text{PP} = \text{L} + \left(\frac{\text{PN} - fb}{fa}\right)i \quad \ldots(1)$$

नोट

जबकि PP = शतांश बिन्दु

L = वर्गान्तर की निम्न सीमांक जिसमें प्राप्तांक है

PN = आवृत्तियों का प्रतिशत

fa = वर्गान्तरों की वास्तविक आवृत्तियाँ

fb = वर्गान्तर के नीचे की आवृत्तियों का योग

यदि शतांश अनुस्थिति (PR) दी गई हो तब शतांश बिन्दु ज्ञात करते हैं। जैसे—50 शतांश अनुस्थित के शतांश बिन्दु की गणना हेतु—

$$P_{50} = 49.5 + \left(\frac{200 - 140}{120}\right)10 = 49.5 + \frac{60 \times 10}{120} = 54.50$$

द्वितीय सूत्र में शतांश बिन्दु दिया गया हो तब शतांश अनुस्थिति ज्ञात करते हैं—

$$PR = \frac{fb + \frac{i}{fa}(X - L)}{N} 100 \qquad ...(2)$$

जबकि— PR = शतांश अनुस्थिति

X = प्राप्तांक, *i* = वर्गान्तर का आकार

L = वर्गान्तर की निम्न सीमांक

fb = नीचे की समस्त आवृत्तियों का योग

fa = वर्गान्तर की वास्तविक आवृत्तियाँ

प्राप्तांक 65 का शतांश अंक की गणना—

$$65 \text{ के लिये } PR_{65} = \frac{260 + \frac{10}{80}(65 - 60)}{400} 100$$

$$PR_{65} = \frac{260 + 0.62}{4} = \frac{260.62}{4} = 65$$

इस सूत्र की सहायता से किसी भी प्राप्तांक अथवा सभी को शतांश अंकों में रूपान्तरित किया जा सकता है। परन्तु यह प्रविधि मितव्ययी नहीं है इसलिये ओगिव (Ogive) की रचना की जाती है। जिससे किसी भी प्राप्तांक को शतांश अंक में बदल लिया जाता है। शतांश अनुस्थित का शतांश बिन्दु ज्ञात कर सकते हैं।

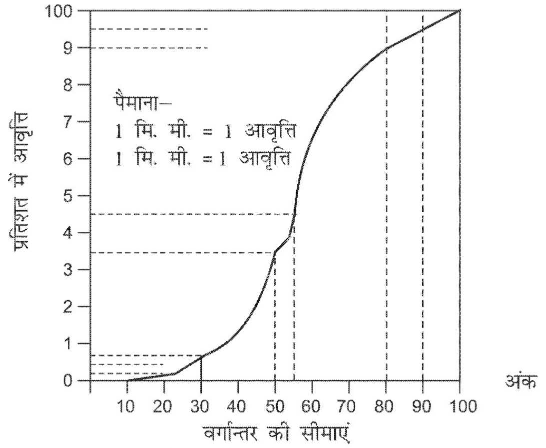

संचयी आवृत्ति प्रतिशत वक्र (OGIVE)

नोट

इस तालिका के सीमांक तथा संचयी आवृत्तियों की प्रतिशत की सहायता से ग्राफ पर संचयी आवृत्ति प्रतिशत वक्र की रचना की जाती है। सीमांकों को 'क' अक्ष पर संचयी आवृत्ति की प्रतिशत को 'ख' अक्ष पर प्रदर्शित करते हैं। इसके लिये पैमाना मानना पड़ता है। इस प्रकार के वक्र की रचना की अवधारणा यह होती है कि वर्गान्तर में आवृत्तियों का वितरण समान रूप से होता है।

अत: संचयी आवृत्तियों की प्रतिशत से इस वक्र की रचना की जाती है जो एक मापनी का कार्य करता है।

यह वक्र एक पैमाने के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। प्राप्तांकों को शतांश अनुस्थितियों में परिवर्तित किया जाता है और शतांश अंक तालिका तैयार की जाती है। निम्नांकित तालिका में शतांश अंक दिये गये हैं–

प्राप्तांकों हेतु शतांश अंक तालिका

(Percentile Scores)

प्राप्तांक (Raw Scores)	शतांश अंक (Percentile Score)	प्राप्तांक (Raw Scores)	शतांश अंक (Percentile Scores)
5	0	55	50
10	0	60	65
15	2.00	65	72
20	2.50	70	85
25	5.00	75	87
30	7.00	80	93
35	9.50	85	95
40	15.50	90	98
45	20.00	95	99
50	35.00	100	100

इस तालिका की सहायता से प्राप्तांकों को शतांश अनुस्थितियों में परिवर्तित करके अर्थापन किया जा सकता है।

शतांश अंक के लाभ (Advantages of Percentile Scores)

शतांश अंक की अधोलिखित विशेषतायें हैं, इसलिये सबसे अधिक प्रयोग किया जाता है–

(1) शतांश अंक की गणना करना सरल तथा मितव्ययी है।

(2) शतांश अंक को सरलता से बोधगम्य किया जा सकता है।

(3) इसका अर्थापन करना भी सरल होता है।

(4) इनका प्रयोग बच्चों एवं बड़ों दोनों के लिये समान रूप से भली प्रकार कर सकते हैं।

(5) इनका प्रयोग सभी प्रकार के परीक्षणों जैसे निष्पत्ति, बुद्धि, व्यक्तित्व, प्रवणता आदि में करते हैं।

(6) इनका प्रयोग अधिक व्यापक रूप से किया जा सकता है।

शतांश अंक की सीमाएँ (Limitations of Percentile Scores)

(1) इसका प्रमुख दोष यह है कि शतांश अंकों का वितरण असमान होता है। शतांश अंकों के वितरण के दोनों सिरों का वितरण सिकुड़ता है, जबकि मध्य के अंकों का विस्तार होता है। इस दोष का शतांश वक्र से स्पष्ट कर सकते हैं कि प्राप्तांक 20 और 30 का अन्तर 10 है। और शतांश अंकों का 4.5 है। इसी प्रकार 80 और 90 प्राप्तांकों का अन्तर 10 है, और शतांश उनके शतांश अंश का अन्तर 30 है, अर्थात् शतांश अंकों का विस्तार तिगुना हो गया, जबकि सिरों का 10 से सिकुड़ करके आधार 5 हो गया। शतांश अंश के लिये यह सत्य है कि मध्यांक के आस-पास अंक प्राप्त करने वालों के शतांश का विस्तार अधिक होता है।

नोट

(2) दूसरी प्रमुख सीमा यह है कि शतांश अनुस्थितियाँ अथवा संचयी आवृत्तियों की प्रतिशत प्राप्तांकों का एक रेखीय परिवर्तन नहीं है। यह तभी संभव हो सकता है जब वितरण एक आयताकार रूप में हो। इस दोष को निम्नांकित आकृति से स्पष्ट किया जा सकता है—

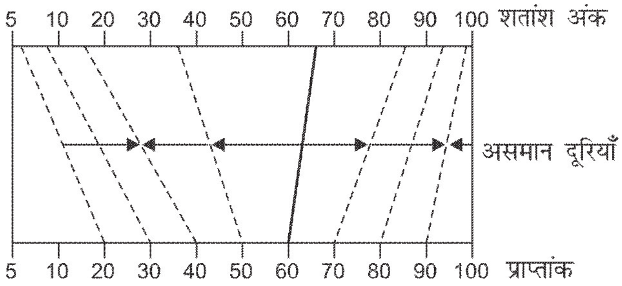

शतांश अंक की इकाइयाँ प्राप्तांकों के अन्तर से बिल्कुल नहीं मिलती हैं। यह तभी सम्भव हो सकता है जबकि प्राप्तांकों का वितरण समान आयताकार आकृति में हो, परन्तु अधिकांश प्राप्तांकों का वितरण सम्भावित वक्र के रूप में होता है।

रूपान्तरित विभिन्न प्रामाणिक अंकों की एक ही तालिका में व्यवस्थित किया गया है। जिससे उनके आपसी सम्बन्ध को उदाहरण से भी समझा जा सकता है। एक ही प्राप्तांक के विभिन्न रूपान्तरित अंक दिये गये हैं। प्राप्तांकों को रूपान्तरित करने का एक ही उद्देश्य होता है कि उनका सही अर्थापन किया जा सके। व्यावहारिक विज्ञानों में मापन सापेक्ष होता है। इसलिये प्राप्तांकों से कोई अर्थ निकालना सम्भव नहीं होता है। सभी गुणों तथा चरों का मापन व्यवहारों के मध्य से किया जाता है। इन सभी रूपान्तरित अंकों का सन्दर्भ बिन्दु समूह का निष्पादन होता है। समूह को भी प्रामाणिक समूह का स्तर दिया जाता है।

इस तालिका से स्पष्ट होता है कि प्राप्तांक को किसी भी प्रामाणिक अंकों में रूपान्तरित किया जा सकता है। सभी रूपान्तरित अंकों का मापक (Scale) अलग-अलग होता है। मापक में मध्यमान तथा विचलन मान अलग-अलग होते हैं। किसी में मध्यमान शून्य तथा किसी में 100 होता है इसी प्रकार विचलन मान एक भी होता है तथा किसी में 16 भी होता है। परन्तु मूल तथ्य यह है कि सभी में समूह के औसत निष्पादन को ही सन्दर्भ बिन्दु मानते है उसका मान कुछ भी हो सकता है। प्राप्तांकों के वितरण को सामान्य वक्र में मानते है। इनमें अर्थापन की त्रुटि कम होती है और प्राप्तांकों को उपयोगी बनाया जाता है।

टास्क प्रमाणिक नव स्तर अंक क्या है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)—

1. परीक्षण मानक .... प्रकार के होते हैं।
2. अधिकांश परीक्षणों में .... मानकों का उपयोग करते हैं।
3. कुछ बुद्धि परीक्षणों में .... मानक को प्रयुक्त करते हैं।
4. मानकों से प्राप्तांकों का .... किया जाता है।
5. मानकों का सम्बन्ध समूह के .... मान से होता है।
6. मानक प्राप्तांकों का .... होता है।

नोट

12.7 सारांश (Summary)

- अर्थहीन प्रदत्तों को सार्थक बनाया जा सके और उनसे निष्कर्ष निकाले जा सकें। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में मापन प्रक्रिया सापेक्ष होती है।
- "प्राप्तांकों के रूपान्तरण से तात्पर्य होता है किसी विशिष्ट परीक्षण के लिये विशिष्ट जनसंख्या के प्रामाणिक अंक का विकास करना।"
- 'प्राप्तांकों के रूपान्तरण' की विशेषताओं का उल्लेख किया है, वे इस प्रकार है–
  1. प्राप्तांकों का रूपान्तरण एक समूह का औसत निष्पादन होता है।
  2. प्राप्तांकों का रूपान्तरण किसी विशिष्ट परीक्षण से सम्बन्धित होता है।
  3. प्राप्तांकों का रूपान्तरण प्रामाणिक न्यादर्श अथवा विशिष्ट जनसंख्या पर आधारित होता है। रूपान्तरण भी विशिष्ट होता है।
- प्राप्तांकों का प्रामाणिक अंकों (Z-अंकों) में रूपान्तरण, शतांश अंकों पर सुधार रूप है। इसमें इकाई समान रूप से वितरित होती है। सिकुड़न या फैलाव नहीं होता है। शतांश अंकों की असमानता की सीमा को इसमें दूर किया गया है।
- प्रामाणिक अंकों को इस प्रकार प्रदर्शित किया जाता है। इन्हें जैड-अंक तथा सिगमा अंक (σ-Scores) भी कहते हैं क्योंकि इनका विकास सामान्य वक्र की सहायता से किया जाता है।
- शतांश अंकों के रूपान्तरण की अपेक्षा प्रामाणिक अंकों की प्रविधि अधिक कठिन तथा समय भी अधिक लगता है। प्रत्येक प्राप्तांक के लिये गणना की जाती है। शतांश अंकों के रूपान्तरण में जो तालिका दी गई है।
- प्रामाणिक अंकों की निम्नलिखित विशेषतायें हैं–
  1. प्रामाणिक अंक के लिये सम्भावना वक्र का प्रयोग किया जाता है साधरणतया प्रामाणिक न्यादर्श का वितरण सामान्य वक्र जैसा होता है।
  2. प्राप्तांकों को सरलता से प्रामाणिक अंकों में परिवर्तित किया जाता है।
  3. इसका अर्थापन करना भी सरल होता है क्योंकि प्रामाणिक अंकों का मान ऋणात्मक और धनात्मक दोनों ही प्रकार का होता है। ऋणात्मक का अर्थ होता है मध्यमान से नीचे और धनात्मक का अर्थ होता है मध्यमान से ऊपर।
  4. इसका प्रयोग बुद्धि-परीक्षण एवं प्रवणता परीक्षणों में अधिक किया जाता है।
- इन प्रामाणिक अंकों की निम्नलिखित सीमायें होती हैं–
  1. इसके अन्तर्गत प्रत्येक प्राप्तांक के लिये प्रामाणिक अंक की गणना की जाती है।
  2. इस अंक का अर्थापन केवल मध्यमान के सन्दर्भ में ही किया जा सकता है कि परीक्षार्थी का स्तर मध्यमान से ऊपर है या नीचे शतांश अंक की तरह उसके विशिष्ट स्तर का बोध नहीं हो पाता है।
  3. निष्पत्तिपरीक्षण में इस प्रकार के अंकों का प्रयोग अधिक उपयोगी नहीं होता है। शताँश अंकों की तरह सभी प्रकार के परीक्षणों में प्रयुक्त नहीं कर सकते हैं।
- टी-अंक भी प्रामाणिक अंकों की तरह ही है। प्रामाणिक अंक ऋणात्मक तथा धनात्मक दोनों ही प्रकार के होते हैं। मानवीय क्षमताओं का मापन तथा अर्थापन ऋणात्मक अंकों में बोधगम्य नहीं होता है। ऋणात्मक भ्रामक होते हैं। इस प्रकार से टी-अंक प्रामाणिक अंक पर सुधार रूप है।
- इस प्रकार के अंकों की अधोलिखित विशेषतायें हैं–
  1. इस प्रकार के अंकों को विकसित करना सरल है। सूत्र का प्रयोग करके प्राप्तांकों को टी-अंकों में परिवर्तित करते हैं।
  2. इसका अर्थापन करना भी सरल होता है। इसमें टी-अंकों का मान सदैव धनात्मक होता है और मध्यमान 50 तथा प्रामाणिक विचलन मान 10 होता है।

नोट

3. इसका प्रयोग निष्पत्ति परीक्षण तथा प्रवणता परीक्षणों में अधिक किया जाता है।

- इन अंकों की अधोलिखित सीमायें हैं–

1. इसमें प्रत्येक प्राप्तांक के लिये टी-अंक की गणना की जाती है। इसलिये यह अंक मितव्ययी नहीं है।
2. इन अंकों की सहायता से प्राप्तांकों का अर्थापन मध्यमान (50) के सन्दर्भ में ही किया जा सकता है कि परीक्षार्थी का स्तर मध्यमान से ऊपर है अथवा नीचे। समूह में उसके स्तर का सही बोध नहीं होता है।

- प्रामाणिक नव अंक स्तर, प्रामाणिक अंकों का ही एक परिवर्तित रूप है। इन अंकों में भी यह अवधारणा होती है कि प्राप्तांकों का वितरण सम्भावित वक्र (Normal Curve) में होता है और इस वितरण को नौ प्रामाणिक स्तरों में विभाजित किया जा सकता है। इन अंकों का विशेष प्रयोग कम्प्यूटर के आई.बी.एम. कार्ड में किया जाता था, क्योंकि आई.बी.एम. कार्ड में साधारणतया 9 पंक्तियाँ अथवा 9 स्तम्भ होते हैं।
- प्रामाणिक नव-स्तर अंकों का रूपान्तरण भी एक रेखीय परिवर्तन का उदाहरण है। जो शतांश अंक में प्राप्तांकों के वितरण का उदाहरण दिया गया है, उसे प्रामाणिक नव-स्तरों में भी परिवर्तित कर सकते हैं।
- इन अंकों की अधोलिखित विशेषतायें हैं–

1. इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि इसका प्रयोग आई.बी.एम. कार्ड में सुगमता से किया जाता है और प्रदत्तों का विश्लेषण कम्प्यूटर से करना सरल हो जाता है।
2. इन अंकों में सामान्य वक्र की सहायता ली जाती है। साधारणत: न्यादर्श का वितरण सामान्य वक्र जैसा ही होता है।

- इन अंकों की अधोलिखित सीमायें हैं–

1. इन अंकों को विकसित करने में प्रत्येक स्तर के लिये प्राप्तांकों के विस्तार की गणना करनी होती है। इसके लिये सम्भावित वक्र तालिका की सहायता ली जाती है, इसलिये यह मितव्ययी नहीं है।
2. इन अंकों की सहायता से प्राप्तांकों का अर्थापन विशिष्ट रूप में नहीं किया जा सकता, केवल स्तर पाँच के सन्दर्भ में अर्थापन करते हैं कि सामान्य से ऊपर अथवा नीचे।

- किसी बुद्धि परीक्षण के प्राप्तांकों के वितरण को बुद्धि-लब्धि विचलन अंकों में रूपान्तरण कर लिया जाता है। जिनका समझना तथा अर्थापन करना सरल एवं सुगम होता है। एक बड़े समूह के प्राप्तांकों का वितरण सामान्य सम्भाविता वक्र में होता है।
- शतांश अंकों को प्राप्तांकों की प्रतिशत में भ्रम नहीं करना चाहिये, क्योंकि प्राप्तांकों की प्रतिशत भी परीक्षण प्राप्तांकों (Raw Scores) के समान ही होती है कि इतने प्रतिशत प्रश्नों को परीक्षार्थी ने सही किया। परन्तु शतांश अंक परीक्षण प्राप्तांकों को इस रूप में परिवर्तित करते हैं जिससे परीक्षार्थी का प्रमापीकृत समूह में स्तर निर्धारित हो।
- शतांश अंक के लिये 35 प्राप्तांकों को शतांश अनुस्थितियों में परिवर्तित करना होगा कि उस परीक्षार्थी का प्रमापीकृत समूह में स्तर कहाँ हैं। यदि शतांश अनुस्थिति गणना करने पर 84 प्राप्त होती है, इसका अर्थ यह हुआ कि प्रमापीकृत समूह के 84 प्रतिशत परीक्षार्थियों के अंक उससे कम हैं और 16 प्रतिशत छात्रों के अधि क हैं।
- शतांश अंक को विकसित करने के लिये परीक्षण को एक ऐसे समूह को दिया जाता है जो उसकी विशिष्ट जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता हो। परीक्षण के बाद परीक्षार्थियों के उत्तर पत्रकों का अंकन किया जाता है। इस प्रकार जो अंक प्राप्त होते हैं उनके आवृत्ति-वितरण तालिका में व्यवस्थित करते हैं और संचयी आवृत्तियों की गणना की जाती है।
- शतांश अंक की अधोलिखित विशेषतायें हैं, इसलिये सबसे अधिक प्रयोग किया जाता है–

(1) शतांश अंक की गणना करना सरल तथा मितव्ययी है।

(2) शतांश अंक को सरलता से बोधगम्य किया जा सकता है।

नोट

(3) इसका अर्थापन करना भी सरल होता है।

(4) इनका प्रयोग बच्चों एवं बड़ों दोनों के लिये समान रूप से भली प्रकार कर सकते हैं।

- इसका प्रमुख दोष यह है कि शतांश अंकों का वितरण असमान होता है। शतांश अंकों के वितरण के दोनों सिरों का वितरण सिकुड़ता है, जबकि मध्य के अंकों का विस्तार होता है। इस दोष का शतांश वक्र से स्पष्ट कर सकते हैं कि प्राप्तांक 20 और 30 का अन्तर 10 है। और शतांश अंकों का 4.5 है। इसी प्रकार 80 और 90 प्राप्तांकों का अन्तर 10 है, और शतांश उनके शतांश अंश का अन्तर 30 है, अर्थात् शतांश अंकों का विस्तार तिगुना हो गया, जबकि सिरों का 10 से सिकुड़ करके आधार 5 हो गया। शतांश अंश के लिये यह सत्य है कि मध्यांक के आस-पास अंक प्राप्त करने वालों के शतांश का विस्तार अधिक होता है। दूसरी प्रमुख सीमा यह है कि शतांश अनुस्थितियाँ अथवा संचयी आवृत्तियों की प्रतिशत प्राप्तांकों का एक रेखीय परिवर्तन नहीं है।

12.8 शब्दकोश (Keywords)

- **रूपान्तरित**–परिवर्तित रूप।
- **प्रविधियों**–तकनीकों।

12.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. परीक्षण मानक का अर्थ समझाइए।
2. परीक्षण स्तर तथा परीक्षण मान में अन्तर कीजिए।
3. परीक्षण मानको के प्रकार बताइए।
4. शतांश मानक की विशेषताओं को बताइए।
5. प्रमाणिक अंक (जैड अंक) की सीमायें बताइए।
6. नव स्तर मानक की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1.	1. सत्य	2. असत्य	3. सत्य	4. असत्य
	5. सत्य	6. सत्य।		
2.	1. अनेक	2. शतांश	3. आयु	4. अर्थापन
	5. औसत	6. रूपान्तर।		

12.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–13: मानदण्ड संबंधित परीक्षण
(Criterion Referenced Test)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
13.1 मानदण्ड संबंधित परीक्षण का अर्थ (Meaning of Criterion Referenced Test)
13.2 मानदण्ड संबंधित परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Criterion Referenced Test)
13.3 मानदण्ड संबंधित परीक्षण के लाभ (Advantages of Criterion Referenced Test)
13.4 मानदण्ड संबंधित परीक्षण की सीमाएँ (Limitations of Criterion Referenced Test)
13.5 मानदण्ड संबंधित परीक्षण के उपयोग (Applications of Criterion Referenced Test)
13.6 सारांश (Summary)
13.7 शब्दकोश (Keywords)
13.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
13.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- मानदण्ड संबंधित परीक्षण के अर्थ, लाभ एवं विशेषताओं की व्याख्या करने में और इसकी सीमाओं व उपयोग का विवेचन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

मानदण्ड परीक्षण ऐसे परीक्षण हैं जो छात्र के बुद्धि तथा कौशल संबंधी मूल्यांकन करते हैं। इन्हें 'डोमेन परीक्षण' भी कहा जाता है।, यह ग्लेज़र (1962) तथा पॉम्हम और ह्यूसेक (1969) ने सबसे पहले इस परीक्षण का प्रतिपादन किया। इस परीक्षण को, कौशल परीक्षण, उद्‌देश्य परीक्षण, मानक आधार परीक्षण आदि नामों से सम्बोधित किया जाता है। यह परीक्षण विषय वस्तु केन्द्रित होता है।

13.1 मानदण्ड संबंधित परीक्षण का अर्थ (Meaning of Criterion Referenced Test)

मापन के क्षेत्र में (1960) से नवीन शब्दावली का विकास हुआ, जिसे 'मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षण' (Criterion reference test) कहते हैं। शैक्षिक मापन में नवीन प्रकार के परीक्षणों का विकास हुआ, जो परम्परागत निष्पत्ति परीक्षण से भिन्न प्रकार के परीक्षण माने जाते हैं। इन्हें उद्‌देश्य केन्द्रित परीक्षण (Objective centered test) भी कहते हैं। मानदण्ड परीक्षण 'अनुदेशात्मक उद्‌दश्यों' की प्राप्ति को बतलाते हैं तथा यह भी जानकारी होती है कि छात्र के सीखने में कहाँ पर कमज़ोरी रही है। अत: "मानदण्ड संबंधित परीक्षण वे परीक्षण हैं जिनकी रचना तथा उपयोग मनोवैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है। इनसे अधिगम शिक्षण के उद्‌देश्यों की प्राप्ति के सम्बंध में विशिष्ट जानकारी होती है।

नोट

नोट्स मानदण्ड परीक्षणों में पास-फ़ेल के आधार पर छात्रों की विशिष्ट क्षमताओं का मापन किया जाता है।

13.2 मानदण्ड संबंधित परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Criterion Referanced Test)

मानदण्ड संबंधित परीक्षण की कुछ विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(*i*) मानदण्ड परीक्षण के प्रयोग से यह ज्ञात होता है कि अनुदेशन तथा शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है।

(*ii*) मानदण्ड परीक्षण 'अनुदेशात्मक उद्दश्यों' की प्राप्ति मे बतलाते हैं तथा यह भी जानकारी होती है कि छात्र के सीखने में कहाँ पर कमज़ोरी रही।

(*iii*) मानदण्ड परीक्षण के निर्माण में अनुदेशन तथा शिक्षण के सभी उद्देश्यों पर प्रश्नों की रचना की जाती है, जिससे उद्देश्यों की दृष्टि से वैध बनाया जा सके।

(*iv*) मानदण्ड परीक्षणों पर छात्रों के उत्तरों के अंकन से यह विदित होता है कि छात्रों में उद्देश्यों की प्राप्ति में कितनी सफलता रही है।

(*v*) मानदण्ड परीक्षा के परिणाम छात्र की अपेक्षा शिक्षक के लिए अधिक उपयोगी होते हैं, जिनसे वह अपने अनुदेशन की प्रक्रिया में सुधार तथा विकास कर सकता है, यह पुनर्बलन (Reinforcement) का कार्य करता है।

(*vi*) मानदण्ड परीक्षणों में पद विश्लेषण में पद कठिनाई तथा भिन्नता मान के अतिरिक्त उद्देश्यों को महत्व दिया जाता है।

(*vii*) मानदण्ड परीक्षण की सहायता से विभिन्न छात्रों को विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में वर्गीकृत करके उनका ठीक प्रकार से मूल्यांकन किया जा सकता है।

क्या आप जानते हैं ई. के. स्टॉग ने (1960) में नवीन प्रकार से शैक्षिक परीक्षाओं का विकास किया जो परम्परागत परीक्षणों से भिन्न हैं। स्टॉग ने इन्हें 'मानदण्ड सम्बंधित परीक्षण' की संज्ञा दी।

13.3 मानदण्ड संबंधित परीक्षण के लाभ (Advantages of criterion Referenced Test)

मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षणों के द्वारा न केवल बच्चे को उसकी बुद्धि के अनुसार वर्गीकृत किया जा सकता है, बल्कि उसके कौशल, तथा अधिगम का सही तथा वैध मूल्यांकन भी किया जा सकता है, मानदण्ड संबंधित परीक्षणों के लाभ निम्नलिखित है–

(*i*) मानदण्ड परीक्षण मानक परीक्षणों से उचित तथा वैध होते हैं क्योंकि इन परीक्षणों में प्राप्त किये गए अंकों द्वारा छात्र की वास्तविक योग्यता का पता चलता है, उसने पाठ्यक्रम के अनुसार, किस प्रकार और कितना सीखा, तथा अध्ययन सामग्री से कितना सीखा इन सबकी जानकारी मानदण्ड संबंधित परीक्षणों से ज्ञात होती हैं।

(*ii*) मानदण्ड संबंधित परीक्षण कक्षा स्तर पर बनाये जाते हैं। यदि परीक्षण में निर्धारित मानक नहीं होते हैं तो, अध्यापक अपने कौशल द्वारा इन कमियों को पूरा कर लेते हैं। प्रत्येक विद्यार्थी का तुलनात्मक परीक्षण मूल्यांकन न होकर अलग तथा व्यक्तिगत होता है तथा परीक्षण के परिणाम छात्र के प्रदर्शन का फीडबैक दे देते हैं।

13.4 मानदण्ड संबंधित परीक्षण की सीमाएँ (Limitations of Criterion Referenced Test)

मानदण्ड संबंधित परीक्षण के लाभ के साथ कुछ सीमाएँ भी हैं, ये सीमाएँ निम्नलिखित हैं।

(*i*) इन परीक्षणों को वैंध तथा विश्वसनीय बनाने के लिए अत्यधिक परिश्रम तथा समय व्यय होता है।

(*ii*) ये परीक्षण कुछ विशिष्ट उद्दश्यों तथा कार्यक्रमों के लिए बनाये जाते हैं अत: ये बड़े समूह के प्रदर्शन के मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है।

(*iii*) शिक्षण अधिगम के विशिष्ट इकाई के सम्बंध में कोई जानकारी नहीं होती है।

13.5 मानदण्ड संबंधित परीक्षण के उपयोग (Applications of Criterion Referenced Test)

मानदण्ड संबंधी परीक्षण कई प्रकार से उपयोगी होते हैं—

(*i*) कक्षाध्यापक इन परीक्षणों का उपयोग दैनिक गतिविधियों में छात्र के प्रदर्शन द्वारा उनका मूल्यांकन करने में करते हैं।

(*ii*) इन परीक्षणों द्वारा छात्र का कक्षा स्तर, विद्यालय स्तर, राज्य स्तर पर शैक्षिक मूल्यांकन, तथा शैक्षिक जवाबदेही के लिए लाभप्रद साबित होते हैं।

(*iii*) ये परीक्षण पूर्ण रूप से पाठ्यक्रम पर आधारित होते हैं, तथा इनसे ज्ञात होता है कि छात्र ने पाठ्यक्रम से कितना सीखा तथा उपलब्ध पाठ्यक्रम तथा शैक्षिक प्रणाली कितनी प्रभावी है।

(*iv*) मानदण्ड परीक्षण, शिक्षण कार्यक्रमों में अधिगम के निर्धारण तथा मूल्यांकन हेतु उपयोग में लाये जाते हैं।

टास्क मानदण्ड परीक्षण को उद्देश्य केन्द्रित परीक्षण क्यों कहते हैं?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)—

1. मानदण्ड सम्बंधित परीक्षण का उपयोग छात्र के दैनिक प्रदर्शन के .... में करते हैं।
2. यह परीक्षण पूर्णरूप से .... पर आधारित होते हैं।
3. प्रशिक्षण कार्यक्रमों में .... के निर्धारण तथा मूल्यांकन हेतु मानदण्ड परीक्षण उपयोग में लाया जाता है।
4. मानदण्ड परीक्षण की .... बनाये रखने के लिए अत्यधिक परिश्रम एवं समय व्यय होता है।
5. मानदण्ड परीक्षण के उपयोग से ज्ञात होता है कि .... के उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकती है।

13.6 सारांश (Summary)

- "मानदण्ड संबंधित परीक्षण वे परीक्षण हैं जिनकी रचना तथा उपयोग मनोवैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है। इनसे अधिगम शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति के सम्बंध में विशिष्ट जानकारी होती है।
- मानदण्ड संबंधित परीक्षण की कुछ विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(*i*) मानदण्ड परीक्षण के प्रयोग से यह ज्ञात होता है कि अनुदेशन तथा शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है।

नोट

(*ii*) मानदण्ड परीक्षण 'अनुदेशात्मक उद्देश्यों' की प्राप्ति मे बतलाते हैं तथा यह भी जानकारी होती है कि छात्र के सीखने में कहाँ पर कमज़ोरी रही।

(*iii*) मानदण्ड परीक्षण के निर्माण में अनुदेशन तथा शिक्षण के सभी उद्देश्यों पर प्रश्नों की रचना की जाती है, जिससे उद्दश्यों की दृष्टि से वैध बनाया जा सके।

- मानदण्ड संबंधित परीक्षणों के लाभ निम्नलिखित है– मानदण्ड परीक्षण मानक परीक्षणों से उचित तथा वैध होते हैं क्योंकि इन परीक्षणों में प्राप्त किये गए अंकों द्वारा छात्र की वास्तविक योग्यता का पता चलता है, उसने पाठ्यक्रम के अनुसार, किस प्रकार और कितना सीखा, तथा अध्ययन सामग्री से कितना सीखा इन सबकी जानकारी मानदण्ड संबंधित परीक्षणों से ज्ञात होती हैं।
- मानदण्ड संबंधित परीक्षण के लाभ के साथ कुछ सीमाएँ भी हैं, ये सीमाएँ निम्नलिखित हैं।

(*i*) इन परीक्षणों को वैंध तथा विश्वसनीय बनाने के लिए अत्यधिक परिश्रम तथा समय व्यय होता है।

(*ii*) ये परीक्षण कुछ विशिष्ट उद्देश्यों तथा कार्यक्रमों के लिए बनाये जाते हैं अत: ये बड़े समूह के प्रदर्शन के मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है।

- मानदण्ड संबंधी परीक्षण कई प्रकार से उपयोगी होते है–

(*i*) कक्षाध्यापक इन परीक्षणों का उपयोग दैनिक गतिविधियों में छात्र के प्रदर्शन द्वारा उनका मूल्यांकन करने में करते हैं।

(*ii*) इन परीक्षणों द्वारा छात्र का कक्षा स्तर, विद्यालय स्तर, राज्य स्तर पर शैक्षिक मूल्यांकन, तथा शैक्षिक जवाबदेही के लिए लाभप्रद साबित होते हैं।

13.7 शब्दकोश (Keywords)

- **मानदण्ड**–निश्चित मानक।
- **बुद्धि कौशल**–बुद्धिमत्ता।

13.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षण का क्या अर्थ है? इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. मानदण्ड सम्बंधित परीक्षण के क्या लाभ हैं? संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
3. मानदण्ड सम्बंधित परीक्षण की सीमाओं का उल्लेख करते हुए इसकी उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. मूल्यांकन 2. पाठ्यक्रम 3. अधिगम 4. विश्वसनीयता
5. अनुदेशन तथा शिक्षण

13.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—14: मानक संबंधित परीक्षण
(Norm Referenced Test)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
14.1 मानक संबंधित परीक्षण का अर्थ (Meaning of Norm Referenced Test)
14.2 मानक संबंधित परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Norm Referenced Test)
14.3 मानक संबंधित परीक्षण के लाभ (Advantages of Norm Referenced Test)
14.4 मानक संबंधित परीक्षण की सीमाएँ (Limitations of Criterion Referenced Test)
14.5 सारांश (Summary)
14.6 शब्दकोश (Keywords)
14.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
14.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- मानक संबंधित परीक्षण के अर्थ, लाभ एवं विशेषताओं की व्याख्या करने में और इसकी सीमाओं का विश्लेषण करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

मापन के क्षेत्र में मानक संबंधित परीक्षणों का बहुत महत्त्व है, इनका द्वारा पाठ्यक्रम संबंधित उपलब्धियों का मापन करने का है और छात्रों की उपलब्धि स्तर का मूल्यांकन समूह में स्तरीकरण (मानक) के रूप में किया जाता है। इस इकाई में विद्यायी मानक संबंधित परीक्षण के विषय में अध्ययन करेंगे।

14.1 मानक संबंधित परीक्षण का अर्थ (Meaning of Norm Referenced Test)

परम्परागत ढंग से बनाये प्रमाणिक निष्पत्ति परीक्षा अथवा शिक्षक द्वारा निर्मित परीक्षणों को 'मानक सम्बंधित परीक्षा (Norm referenced Test) कहते हैं। इसका लक्ष्य पाठ्यक्रम सम्बंधित उपलब्धियों का मापन करने का है और छात्रों की उपलब्धि स्तर का मूल्यांकन समूह में स्तरीकरण (मानक) के रूप में किया जाता है। शिक्षण अधिगम के उद्देश्यों की प्राप्ति को महत्व नहीं दिया जाता है। मानक संबंधित परीक्षण में छात्र की उपलब्धि तथा कौशल का मूल्यांकन उसके आयु वर्ग के अन्य छात्रों से किया जाता है।

इस प्रकार के परीक्षणों का उपयोग अध्यापक छात्रों का विभिन्न योग्यता स्तरों पर उनके समूह में चयन करने में किया जाता है।

नोट

> नोट्स मानक संबंधित परीक्षणों की आवश्यकता मुख्यत: छात्रों को उपलब्धि के आधार पर वर्गीकृत करने के लिए पड़ती है।

14.2 मानक संबंधित परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Norm Referanced Test)

मानक संबंधित परीक्षण को शैक्षिक मापन के क्षेत्र में एक नये विचार के रूप में देखा जाता है, इसकी विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) मानक संबंधित परीक्षण यह सूचना देते हैं कि छात्रों ने पाठ्य वस्तु का कहाँ तक अध्ययन किया है।

(ii) ये परीक्षण छात्र के बोध स्तर का मूल्यांकन करते हैं।

(iii) यहाँ परीक्षण परिणामों की व्याख्या कक्षा समूह के स्तर के रूप में की जाती है, अर्थात् छात्र विशेष का अपने समूह में क्या स्थान है? यहाँ शतांशीय मानों को महत्व दिया जाता है।

(iv) इन परीक्षणों पर प्राप्त परिणाम अध्यापक को कोई पुनर्बलन प्रदान नहीं करते ताकि वह अपनी शिक्षण प्रक्रिया में सुधार हेतु कोई नवीन दिशा अपना सकें।

(v) अंकन प्रक्रिया के आधार पर हम अनुमान लगा सकते हैं कि छात्र ने कितनी पाठ्य वस्तु का अध्ययन किया है।

(vi) इन परीक्षणों का निर्माण परम्परागत तरीके से किया जाता है।

(vii) इन परीक्षणों को मानकीकृत करने के लिए मानकों का विकास करना आवश्यक होता है।

(viii) ये परीक्षण कम उपयोगी माने जाते हैं क्योंकि ये छात्र के संबंध में सामान्य जानकारी ही प्रदान करते है।

> *क्या आप जानते हैं* इन परीक्षणों में व्यापक पाठ्य वस्तु को प्रश्नों की रचना के लिए मुख्य आधार बनाया जाता है ताकि विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति आसानी से हो सके।

14.3 मानक संबंधित परीक्षण के लाभ (Advantages of Norm Referenced Test)

मानक संबंधित परीक्षण के निम्नलिखित लाभ हैं–

(i) मानक संबंधित परीक्षण द्वारा अपनी आयु वर्ग के छात्रों में छात्र का उपलब्धि मूल्यांकन किया जा सकता है।

(ii) ये परीक्षण तुलनात्मक रूप से कम खर्चीले तथा प्रशासकीय दृष्टि से आसान होते हैं।

(iii) मानक परीक्षण की रचना में शिक्षण की समस्त पाठ्यवस्तु की दृष्टि से कई उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है, अर्थात् एक ही पाठ्य वस्तु का शिक्षण विभिन्न स्तरों पर किया जाता है।

मानक परीक्षण की परिणामों का अर्थापन कक्षा समूह के स्तर के रूप में किया जाता है।

14.4 मानक संबंधित परीक्षण की सीमाएँ (Limitations of Norm Referenced Test)

मानक संबंधित परीक्षण की सीमाएँ निम्नलिखित हैं–

(i) मानक परीक्षण का निर्माण परम्परागत प्रक्रिया से किया जाता है इन्हें प्रामाणिक बनाने के लिए मानकों को विकसित करना आवश्यक होता है।

नोट

(*ii*) मानक परीक्षण से शिक्षक को अपने विकास के लिए कोई दिशा नहीं मिलती है।

(*iii*) मानक परीक्षणों से छात्रों के केवल सामान्य स्तर का बोध होता है, उनकी विशिष्ट योग्यताओं का आकलन नहीं किया जाता है।

(*iv*) ये परीक्षण पूर्ण रूप से स्मरण तथा रूटीन कार्य पर ही केन्द्रित होते हैं, छात्र अध्ययन सामग्री से रटकर कुछ प्रश्न के उत्तर देते हैं, किन्तु वे उस विषय पर गहन विचार करने अथा शोध कार्य करने की क्षमता नहीं रखते।

टास्क मानक संबंधित परीक्षण मानदण्ड संबंधित परीक्षण से किस प्रकार भिन्न है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)—

1. मानक सम्बंधित परीक्षण द्वारा अपनी आयु वर्ग के छात्रों में छात्र का ……… किया जा सकता है।
2. यह परीक्षण तुलनात्मक रूप से कम से कम खर्चीले तथा ……… दृष्टि से आसान होते हैं।
3. ……… के आधार पर हम अनुमान लगा सकते हैं कि छात्र ने कितनी ……… का अध्ययन किया है।
4. इन परीक्षणों का निर्माण ……… तरीके से किया जाता है।
5. मानक सम्बंधी परीक्षण में परिणामों की व्याख्या ……… के स्तर के रूप में की जाती है।

14.5 सारांश (Summary)

- परम्परागत ढंग से बनाये प्रमाणिक निष्पत्ति परीक्षा अथवा शिक्षक द्वारा निर्मित परीक्षणों को 'मानक सम्बंधित परीक्षा (Norm reference Test) कहते हैं। इसका लक्ष्य पाठ्यक्रम सम्बंधित उपलब्धियों का मापन करने का है और छात्रों की उपलब्धि स्तर का मूल्यांकन समूह में स्तरीकरण (मानक) के रूप में किया जाता है।
- मानक संबंधित परीक्षण को शैक्षिक मापन के क्षेत्र में एक नये विचार के रूप में देखा जाता है, इसकी विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—
  (*i*) मानक संबंधित परीक्षण यह सूचना देते हैं कि छात्रों ने पाठ्य वस्तु का कहाँ तक अध्ययन किया है।
  (*ii*) ये परीक्षण छात्र के बोध स्तर का मूल्यांकन करते हैं।
- मानक संबंधित परीक्षण के निम्नलिखित लाभ हैं—
  (*i*) मानक संबंधित परीक्षण द्वारा अपनी आयु वर्ग के छात्रों में छात्र का उपलब्धि मूल्यांकन किया जा सकता है।
  (*ii*) ये परीक्षण तुलनात्मक रूप से कम खर्चीले तथा प्रशासकीय दृष्टि से आसान होते हैं।
- मानक संबंधित परीक्षण की सीमाएँ निम्नलिखित हैं—
  (*i*) मानक परीक्षण का निर्माण परम्परागत प्रक्रिया से किया जाता है इन्हें प्रामाणिक बनाने के लिए मानकों को विकसित करना आवश्यक होता है।
  (*ii*) मानक परीक्षण से शिक्षक को अपने विकास के लिए कोई दिशा नहीं मिलती है।

14.6 शब्दकोश (Keywords)

- **पुनर्बलन**—पुन: अवसर नहीं मिलना।
- **शतांशीय**—सैंकड़ा, एक सौ।

नोट

14.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मानक सम्बंधी परीक्षण का क्या अर्थ है? इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. मानक सम्बंधी परीक्षण के क्या लाभ है? विश्लेषण कीजिए।
3. मानक सम्बंधी परीक्षण की सीमाओं का विवेचन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. उपलब्धि मूल्यांकन 2. प्रशासकीय 3. पाठ्यवस्तु 4. परम्परागत
5. कक्षा समूह

14.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—15: प्राप्तांक पर प्रभावी कारक : परीक्षण का प्रकार, मनौवैज्ञानिक कारक तथा पर्यावरणीय कारक
(Factors Influencing Test Scores: Nature of Test, Psychological Factors and Environmental Factors)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

15.1 मानक परीक्षण प्राप्तांक (Standardized Test Scores)

15.2 परीक्षण की प्रकृति (Nature of Test)

15.3 मनोवैज्ञानिक कारक (Psychological Factors)

15.4 पर्यावरणीय कारक (Environmental Factors)

15.5 सारांश (Summary)

15.6 शब्दकोश (Keywords)

15.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

15.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- मानक परीक्षण प्राप्तांक, परीक्षण की प्रकृति और मनोवैज्ञानिक-पर्यावरणीय कारकों की व्याख्या एवं विवेचन में।

प्रस्तावना (Introduction)

परीक्षण में अंक लाना एक कला है। कभी-कभी बहुत होशियार छात्र भी परीक्षा के अनुरूप अच्छे अंक प्राप्त नहीं कर पाते हैं। इसका सीधा संबंध छात्र के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक तथा पर्यावरणीय वातावरण से होता है। प्रत्येक अभिभावक बच्चों से आशा करते हैं कि उनका बच्चा 99% अंक प्राप्त करे किन्तु वे भूल जाते हैं कि सब बच्चों का मानसिक स्तर समान नहीं होता है। कुछ कारक ऐसे होते हैं जो आनुवांशिक होते हैं, तथा कुछ वातावरण के प्रभाव से जो छात्र की अंकों को प्राप्त करने की क्षमता पर गहरा प्रभाव डालते हैं। इस अध्याय में हम समस्त कारकों का अध्ययन करेंगे जो परीक्षा के प्राप्तांक पर प्रभाव डालते हैं।

नोट

15.1 मानक परीक्षण प्राप्तांक (Standardized Test Scores)

मानक परीक्षण, परीक्षण प्राप्तांक का एक प्रकार का सूचक है जो यह बताता है कि छात्र में एक निश्चित समय अवधि की परीक्षा में क्या प्रदर्शन किया तथा एक छात्र ने अध्ययनरत रहकर कितना ज्ञानार्जन किया। ऐसे कई कारक हैं जिनका प्रभाव प्राप्तांक पर पड़ता है। परीक्षा परिणाम के अतिरिक्त छात्र की अन्य गतिविधियों में सम्मिलित होकर उसमें बेहतर प्रदर्शन करना भी छात्र की उपलब्धियों को दर्शाता है।

15.2 परीक्षण की प्रकृति (Nature of Test)

अध्यापकों तथा परीक्षकों द्वारा जो अंक प्रदान किये जाते हैं, वे छात्र प्रदर्शन, शिक्षक प्रभावशीलता तथा प्रदर्शन मानकों के द्योतक हैं। वास्तव में परीक्षा में प्राप्त होने वाले अंक बहुत से कारकों पर निर्भर करते हैं, जैसे छात्र का ज्ञान, उसकी समझ तथा विशिष्ट विषय में उसकी योग्यता। किन्तु कुछ कारक ऐसे होते हैं जो सभी छात्रों के लिए समान रूप से उनके प्राप्तांकों पर प्रभाव डालते हैं। ये कारक निम्नलिखित हैं–

(i) **परीक्षण का कठिन स्तर**–परीक्षण का निर्माण करते समय किसी विशिष्ट प्रश्न की कठिनाई का स्तर जानना संभव नहीं होता है। जब परीक्षा के परिणाम से ज्ञात होता है कि बहुत कम छात्रों ने उस प्रश्न को हल किया है, तब उसकी कठिनाई के स्तर का पता चलता है। कुछ प्रश्न ऐसे होते हैं, जिसे सभी छात्रों ने हल किया है। यह तथ्य प्रदर्शित करता है, कि प्राप्तांक का संबंध परीक्षा में पूछे गए प्रश्नों से हैं, तथा कठिन परीक्षा एक ऐसा कारक है, जो छात्रों के अंकों पर सीधा प्रभाव डालती है।

(ii) **परीक्षार्थियों की योग्यता तथा क्षमता**–जिस प्रकार प्रत्येक छात्र की बुद्धि लब्धि या बौद्धिक योग्यता अलग अलग होती है, उसी प्रकार अलग अलग विद्यालयों में कक्षा में पढ़ने वाले छात्रों का स्तर भी भिन्न होता है, विद्यालयों के परिणाम से पता चलता है, कि कोई विशिष्ट कठिन प्रश्न, छात्रों के विशिष्ट समूह द्वारा किस प्रकार हल किया गया है।

(iii) **निर्देशात्मक प्रभावशीलता**–प्रत्येक विद्यालय में अध्यापकों के शिक्षण तथा निर्देशन की शैली भिन्न होती है, अत: किसी विद्यालय में कोई विशिष्ट विषय का विशिष्ट टॉपिक अच्छी तरह छात्र सीखते हैं, तो किसी विद्यालय में कोई और। इससे विदित होता है कि शिक्षक अध्यापन शैली भी छात्रों के प्राप्ताकों पर प्रभाव डालने वाला एक कारक है।

(iv) **समय सीमा का ठीक प्रकार से गणना न कर पाना**–यदि प्रश्न पत्र बनाते समय अध्यापक या प्रश्न पत्र निर्माण समिति यह ध्यान न रखे कि दिये गये प्रश्नों में कितना समय लगेगा तो वे गलत ढंग से बन जायेगा, अर्थात प्रश्नों की संख्या, समय सीमा से अधिक हो जायेगी अत: तो विद्यार्थी उस दिये हुए समय में पूरा प्रश्न पत्र हल नहीं कर पायेंगे जिससे वे फ़ेल हो जायेंगे या आशा के अनुरूप अंक प्राप्त नहीं कर पाएंगे।

(v) परीक्षा प्रश्न पत्र का निर्माण करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि किस प्रकार के प्रश्नों द्वारा छात्रों का सही मूल्यांकन किया जा सकता है जैसे यदि सभी प्रश्नों के उत्तर निबन्धात्मक होंगे तो दिये हुए निश्चित समय में सभी परीक्षार्थी सभी प्रश्न नहीं कर पायेंगे। इसलिए उनके प्राप्तांकों पर भी प्रभाव पड़ेगा। इसलिए प्रश्नों के प्रकार पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है।

नोट्स प्रश्न पत्र की प्रकृति छात्रों के प्राप्तांकों पर बहुत अधिक प्रभाव डालती है।

15.3 मनोवैज्ञानिक कारक (Psychological Factors)

प्रश्नपत्रों की प्रकृति के अतिरिक्त बहुत से मनोवैज्ञानिक कारक ऐसे हैं जो छात्रों की अंक प्राप्त करने की क्षमता तथा योग्यता पर प्रभाव डालते हैं। ये कारक निम्नलिखित हैं–

नोट

(*i*) **चिंता**—कुछ छात्र परीक्षा में बिल्कुल जड़ हो जाते हैं। विषय से सम्बन्धित बहुत से तथ्यों की जानकारी होते हुए भी वे उसे हल नहीं कर पाते हैं, यह विशेषत: तब होता है, जब छात्रों पर परीक्षा का अत्यधिक दबाव होता है। सहपाठियों से तुलना, अभिभावकों द्वारा चिंता तथा दबाव के कारण छात्र अपने मानसिक तनाव के बीच इतना फँस जाते हैं कि उन्हें अपने अंदर आत्मविश्वास की कमी लगने लगती है, तथा वे आसान प्रश्नों को भी कठिन समझकर उन्हें छोड़ देते हैं।

(*ii*) **शारीरिक स्वास्थ्य**—यदि कोई बच्चा बीमार है, अथवा शारीरिक या मानसिक रूप से तनाव में हैं, नींद में कमी है, भूखा है, तो ये सभी कारक परीक्षा में छात्र के प्रदर्शन पर गहरा प्रभाव डालते हैं। बच्चा परीक्षा पर ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाता तथा उसका प्रदर्शन खराब हो जाता है।

(*iii*) **संवेगात्मक स्वास्थ्य**—छात्र की संवेगात्मक स्थिति का भी छात्रों के प्रदशर्न पर गहरा प्रभाव पड़ता है। यदि बच्चे के माता-पिता के बीच घरेलू झगड़े होते हैं, या घर में कोई बीमार है, वह किसी यौन शोषण का शिकार है, अथवा आने वाली किसी शादी, जन्मदिन या समारोह को लेकर अतिउत्साहित है, तो वह अपना ध्यान परीक्षा की और केन्द्रित नहीं कर पाता है, और उसका कुप्रभाव उसके परीक्षा के प्रदर्शन पर पड़ता है।

(*iv*) **सांस्कृतिक अंतर**—यदि कोई बच्चा भिन्न संस्कृति से आया है, तो दूसरी संस्कृति से संबंधित प्रश्नों को समझने में कठिनाई होती है तथा वह ठीक प्रकार से प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाता है, इसका प्रभाव प्राप्तांक पर भी पड़ता है।

(*v*) **आर्थिक अंतर**—बहुत से बच्चे ऐसे परिवारों से आते हैं, जहाँ धन का अभाव होता है, वे ठीक प्रकार से फ़ीस नहीं भर पाते, किताबें तथा अन्य पठन सामग्री नहीं खरीद पाते, विविध स्थानों जैसे चिड़ियाघर, डॉल म्यूज़ियम या अन्य संग्रहालय नहीं आ पाते हैं, जिससे वे सामान्य ज्ञान तथा इनसे जुड़े सम्बंधित प्रश्नों में प्राय: भ्रमित हो जाते हैं, इन तथ्यों तथा अभाव का भी छात्रों की कार्यकुशलता तथा परीक्षा में, प्राप्त अंकों पर प्रभाव पड़ता है, वे अपने से अधिक धनवान बच्चों की तुलना में बेहतर प्रदर्शन नहीं कर पाते हैं।

(*vi*) **अभिभावक प्रवणता**—कुछ लोगों के घरों में शिक्षा तथा ज्ञान को बहुत महत्व दिया जाता है, इस सब का बच्चों की शैक्षिक सफ़लता पर गहरा प्रभाव पड़ता है, शिक्षा से अति प्रेम करने वाले अभिभावक अपने बच्चे को घर में ऐसा वातावरण उपलब्ध कराते हैं जिससे बच्चा सहज रूप से किसी भी विषय को आसानी से समझ सकता है, घर में माता-पिता से शिक्षा संबंधी अन्य जानकारी भी लेता रहता है। जबकि जिन घरों में शिक्षा का प्रचलन नहीं हैं, वे अभिभावक अपने बच्चों की शैक्षिक प्रगति के प्रति उदासीन या संवेदनहीन बने रहते हैं, तथा बच्चे भी शिक्षा में अधिक रूचि नहीं लेते, वे केवल पास होने योग्य अंक लाने की कोशिश भी नहीं करते हैं, जिससे उनका परीक्षा परिणाम अच्छा नहीं आता।

(*vii*) **कक्षा स्थिति**—यदि कक्षा में क्षमता से अधिक छात्रों की संख्या है, कक्षा में अध्यापकों की शिक्षण शैली ठीक नहीं है, वर्ष में कई बार अध्यापक बदलते रहते हैं, अनुशासनहीनता है, तो छात्रों के प्रदर्शन पर दुष्प्रभाव पड़ता है। वे परीक्षा में बेहतर प्रदर्शन नहीं कर पाते हैं।

इस प्रकार उपरोक्त सभी मनोवैज्ञानिक कारक हैं, जो छात्र के प्रदर्शन पर प्रभाव डालते हैं, अध्यापकों को इन सभी मनोवैज्ञानिक कारकों पर प्रभाव डालते हैं, अध्यापकों को इन सभी मनोवैज्ञानिक कारकों का प्रत्येक छात्र पर प्रभाव का अध्ययन करके उन्हें इनसे बाहर निकालकर उन्हें सही दिशा निर्देश देना चाहिए। जिससे परीक्षा में वे बेहतर प्रदर्शन कर सकें तथा उनका उचित मूल्यांकन हो सके।

क्या आप जानते हैं अध्ययनों से ज्ञात है कि 16 वर्ष तक की आयु तक पहुँचते पहुँचते मानव की सभी बौद्धिक क्षमताओं का विकास हो जाता है।

नोट

15.4 पर्यावरणीय कारक (Environmental Factors)

इस अंत बिन्दु तक पहुँचने के बाद बौद्धिक लब्धि लगभग स्थिर हो जाती है। बौद्धिक लब्धि (I.Q) अंत बिन्दु तक पहुँचने में पर्यावरण एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसलिए पर्यावरणीय कारक परीक्षा तथा प्राप्तांक के लिए भी पर्यावरणीय कारक बहुत महत्वपूर्ण हैं। जो निम्नलिखित है–

(*i*) **आधुनिक मनोरंजन**–आधुनिक मनोरंजन के रूप जैसे टी. वी. फ़िल्म, कम्प्यूटर खेल, इलैक्ट्रॉनिक उपकरण तथा यंत्र, इंटरनेट आदि में बच्चे अधिक रूचि लेते हैं, जिसके कारण वे उसमें पूरी तरह से डूब जाते हैं, जिससे वे पढ़ाई की और उचित ध्यान नहीं देते जिससे परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

(*ii*) **गर्भावस्था परिस्थितियाँ**–जब कोई महिला गर्भावस्था में एल्कोहॉल अथवा मादक पदार्थों का सेवन करती है, तो गर्भस्थ शिशु पर बुरा प्रभाव पड़ता है, न केवल शारीरिक रूप से बल्कि वे बौद्धिक स्तर पर भी पीछे रह जाते हैं। उनका बौद्धिक स्तर (IQ) सामान्य तथा एल्काहॉल न लेने वाले महिलाओं के बच्चों की तुलना में बहुत कम होता है। इसका भी प्राप्तांकों पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के बच्चों के प्रसव के समय मस्तिष्क डैमेज तथा मानसिक अवरोध जैसी कई समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।, ऐसे बच्चे जन्म के समय कम वजन के होते हैं।

(*iii*) **स्तनपान**–जो माँए जन्म के पश्चात् अपने बच्चों को दूध पिलाती हैं उनके बच्चे अन्य बच्चों (जिन्हें माँ का दूध प्राप्त नहीं हुआ है।) की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान होते हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि माँ का दूध पीने वाले बच्चों की बुद्धि लब्धि दूध न पीने वाले बच्चों की IQ स्तर से 5.2 अंक बेहतर होता है।

(*iv*) **पोषण**–बच्चों में प्रमुख पोषक तत्वों की कमी के कारण भी मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है। जिंक, लौहतत्व, विटामिन B तथा प्रोटीन की कमी बुद्धि लब्धि में कमी लाती है, जिससे बच्चे की शैक्षिक उपलब्धियों पर प्रभाव पड़ता है।

(*v*) **प्रदूषण**–हानिकारक लैड का सीधा प्रभाव बच्चों के बुद्धि कौशल पर पड़ता है, जो लब्धि पर लैड उत्पादक उद्योगों के आसपास रहते हैं उनकी बुद्धि लब्धि पर दुष्प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार अन्य हानिकारक व विषैले पदार्थों का प्रभाव बच्चों की मानसिक स्थिति पर पड़ता है, और वे परीक्षा में बेहतर प्रदर्शन नहीं करते हैं, जिससे उन्हें कम अंक प्राप्त होते हैं।

टास्क अभिभावक प्रवणता बालक के शैक्षिक परीक्षण पर किस प्रकार प्रभाव डालती है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. मनुष्य की सभी बौद्धिक क्षमताओं का विकास .... की आयु तक पहुँचते-पहुँचते हो जाता है।
2. आधुनिक .... एक ओर जहाँ ज्ञान का अथाह सागर है तो वहीं दूसरी ओर इसके अधिकाधिक प्रयोग से छात्र अपनी पढ़ाई पर ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते।
3. यदि कक्षा (क्लास रूम) में .... है तो छात्रों के प्रदर्शन पर दुष्प्रभाव पड़ता है।
4. परीक्षा तथा प्राप्तांक के लिए .... कारक बेहद महत्वपूर्ण होते हैं।
5. उन घरों के बच्चों का परीक्षा प्राप्तांक अच्छा होता है जिनके .... घर में शैक्षिक वातावरण अच्छा बनाये रखते हैं।

नोट

15.5 सारांश (Summary)

- मानक परीक्षण, परीक्षण प्राप्तांक का एक प्रकार का सूचक है जो यह बताता है कि छात्र में एक निश्चित समय अवधि की परीक्षा में क्या प्रदर्शन किया तथा एक छात्र ने अध्ययनरत रहकर कितना ज्ञानार्जन किया।
- अध्यापकों तथा परीक्षकों द्वारा जो अंक प्रदान किये जाते हैं, वे छात्र प्रदर्शन, शिक्षक प्रभावशीलता तथा प्रदर्शन मानकों के द्योतक हैं।
- कुछ कारक ऐसे होते हैं जो सभी छात्रों के लिए समान रूप से उनके प्राप्तांकों पर प्रभाव डालते हैं। ये कारक निम्नलिखित हैं–
  (*i*) **परीक्षण का कठिन स्तर**–परीक्षण का निर्माण करते समय किसी विशिष्ट प्रश्न की कठिनाई का स्तर जानना संभव नहीं होता है।
  (*ii*) **परीक्षार्थियों की योग्यता तथा क्षमता**–जिस प्रकार प्रत्येक छात्र की बुद्धि लब्धि या बौद्धिक योग्यता अलग अलग होती है, उसी प्रकार अलग अलग विद्यालयों में कक्षा में पढ़ने वाले छात्रों का स्तर भी भिन्न होता है।
  (*iii*) **निर्देशात्मक प्रभावशीलता**–प्रत्येक विद्यालय में अध्यापकों के शिक्षण तथा निर्देशन की शैली भिन्न होती है, अत: किसी विद्यालय में कोई विशिष्ट विषय का विशिष्ट टॉपिक अच्छी तरह छात्र सीखते हैं, तो किसी विद्यालय में कोई और।
  (*iv*) **समय सीमा का ठीक प्रकार से गणना न कर पाना**–यदि प्रश्न पत्र बनाते समय अध्यापक या प्रश्न पत्र निर्माण समिति यह ध्यान न रखे कि दिये गये प्रश्नों में कितना समय लगेगा तो वे गलत ढंग से बन जायेगा, अर्थात प्रश्नों की संख्या, समय सीमा से अधिक हो जायेगी।
  (*v*) परीक्षा प्रश्न पत्र का निर्माण करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि किस प्रकार के प्रश्नों द्वारा छात्रों का सही मूल्यांकन किया जा सकता है।
- प्रश्नपत्रों की प्रकृति के अतिरिक्त बहुत से मनोवैज्ञानिक कारक ऐसे हैं जो छात्रों की अंक प्राप्त करने की क्षमता तथा योग्यता पर प्रभाव डालते हैं। ये कारक निम्नलिखित हैं–
  (*i*) **चिंता**–कुछ छात्र परीक्षा में बिल्कुल जड़ हो जाते हैं। विषय से सम्बन्धित बहुत से तथ्यों की जानकारी होते हुए भी वे उसे हल नहीं कर पाते हैं।
  (*ii*) **शारीरिक स्वास्थ्य**–यदि कोई बच्चा बीमार है, अथवा शारीरिक या मानसिक रूप से तनाव में हैं, नींद में कमी है, भूखा है, तो ये सभी कारक परीक्षा में छात्र के प्रदर्शन पर गहरा प्रभाव डालते हैं।
  (*iii*) **संवेगात्मक स्वास्थ्य**–छात्र की संवेगात्मक स्थिति का भी छात्रों के प्रदशर्न पर गहरा प्रभाव पड़ता है। यदि बच्चे के माता-पिता के बीच घरेलू झगड़े होते हैं।
  (*iv*) **सांस्कृतिक अंतर**–यदि कोई बच्चा भिन्न संस्कृति से आया है, तो दूसरी संस्कृति से संबंधित प्रश्नों को समझने में कठिनाई होती है तथा वह ठीक प्रकार से प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाता है, इसका प्रभाव प्राप्तांक पर भी पड़ता है।
  (*v*) **आर्थिक अंतर**–बहुत से बच्चे ऐसे परिवारों से आते हैं, जहाँ धन का अभाव होता है, वे ठीक प्रकार से फ़ीस नहीं भर पाते, किताबें तथा अन्य पठन सामग्री नहीं खरीद पाते, विविध स्थानों जैसे चिड़ियाघर, डॉल म्यूज़ियम या अन्य संग्रहालय नहीं आ पाते हैं, जिससे वे सामान्य ज्ञान तथा इनसे जुड़े सम्बंधित प्रश्नों में प्राय: भ्रमित हो जाते हैं।
  (*vi*) **अभिभावक प्रवणता**–कुछ लोगों के घरों में शिक्षा तथा ज्ञान को बहुत महत्व दिया जाता है, इस सब का बच्चों की शैक्षिक सफ़लता पर गहरा प्रभाव पड़ता है, शिक्षा से अति प्रेम करने वाले अभिभावक अपने बच्चे को घर में ऐसा वातावरण उपलब्ध कराते हैं जिससे बच्चा सहज रूप से किसी भी विषय को आसानी से समझ सकता है।

नोट

(*vii*) **कक्षा स्थिति**–यदि कक्षा में क्षमता से अधिक छात्रों की संख्या है, कक्षा में अध्यापकों की शिक्षण शैली ठीक नहीं है।

- इस अंत बिन्दु तक पहुँचने के बाद बौद्धिक लब्धि लगभग स्थिर हो जाती है।
- **आधुनिक मीडिया**–आधुनिक मीडिया के रूप जैसे टी. वी. फ़िल्म, कम्प्यूटर खेल, इलैक्ट्रॉनिक उपकरण तथा यंत्र, इंटरनेट आदि में बच्चे अधिक रूचि लेते हैं, जिसके कारण वे उसमें पूरी तरह से डूब जाते हैं, जिससे वे पढ़ाई की और उचित ध्यान नहीं देते जिससे परीक्षा में अच्छे प्राप्तांक प्राप्त नहीं कर पाते हैं।
- **गर्भावस्था परिस्थितियाँ**–जब कोई महिला गर्भावस्था में एल्कोहॉल अथवा मादक पदार्थों का सेवन करती है, तो गर्भस्थ शिशु पर बुरा प्रभाव पड़ता है, न केवल शारीरिक रूप से बल्कि वे बौद्धिक स्तर पर भी पीछे रह जाते हैं।
- **स्तनपान**–जो माँए जन्म के पश्चात् अपने बच्चों को दूध पिलाती हैं उनके बच्चे अन्य बच्चों (जिन्हें माँ का दूध प्राप्त नहीं हुआ है।) की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान होते हैं।
- **पोषण**–बच्चों में प्रमुख पोषक तत्वों की कमी के कारण भी मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है। जिंक, लौहतत्व, विटामिन B तथा प्रोटीन की कमी बुद्धि लब्धि में कमी लाती है।
- **प्रदूषण**–हानिकारक लैड का सीधा प्रभाव बच्चों के बुद्धि कौशल पर पड़ता है, जो लब्धि पर लैड उत्पादक उद्योगों के आसपास रहते हैं उनकी बुद्धि लब्धि पर दुष्प्रभाव पड़ता है।

15.6 शब्दकोश (Keywords)

- **ज्ञानार्जन**–ज्ञान की प्राप्ति।
- **जड़**–निर्जीववत् होना।
- **प्रभावशीलता आनुवांशिक**–पूर्वजों से प्राप्त।

15.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मानक परीक्षण प्राप्तांक से आप क्या समझते हैं? वर्णन कीजिए।
2. परीक्षण की प्रकृति का विवेचन कीजिए।
3. प्राप्तांक पर प्रभावी कारकों की व्याख्या कीजिए।
4. टिप्पणी लिखिए–

   (क) प्राप्तांक के मनोवैज्ञानिक कारक

   (ख) प्राप्तांक के पर्यावरणीय कारक

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. 16 वर्ष
2. संचार माध्यम
3. अनुशासनहीनता
4. पर्यावरणीय
5. अभिभावक

15.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–16: मूल्यांकन समेकित अधिगम की विधियाँ (Integrated Approach of Evaluation)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

16.1 समाकलित मूल्यांकन (Integrated Evaluation)

16.2 मूल्यांकन के चरण (Phases of Evaluation)

16.3 विभिन्न शैक्षिक अवस्थाओं में मूल्यांकन (Evaluation in different stages)

16.4 सारांश (Summary)

16.5 शब्दकोश (Keywords)

16.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

16.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- समाकलित मूल्यांकन को समझने में।
- मूल्यांकन के विभिन्न चरणों को विवेचित करने में।
- विभिन्न शैक्षिक अवस्थाओं में मूल्यांकन की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

समाकलित मूल्यांकन का समाकलित उपागम मूल्यांकन के लिए तीन पक्षों का मूल्यांकन किया जाता है। जिससे विद्यालयों की उपलब्धियों का शुद्ध आकलन करना सम्भव है।

(1) छात्रों की उपलब्धियों का मूल्यांकन (Pupil Evaluation)

(2) शिक्षकों के निष्पादन का मूल्यांकन (Teacher Performance Evaluation)

(3) संस्था की उपलब्धियों का मूल्यांकन (Evaluation of Institutional Performance)

विद्यालयों के इन प्रमुख पक्षों के मूल्यांकन का विवरण इस अध्याय में दिया गया है।

16.1 समाकलित मूल्यांकन (Integrated Evaluation)

समाकलित मूल्यांकन का अर्थ शिक्षा से संबंधित प्रत्येक घटक का समग्र रूप में मूल्यांकन करना है। इसके घटक निम्न हैं।

नोट

16.1.1 छात्रों की उपलब्धियों का मूल्यांकन (Pupil Evaluation)

छात्रों के निष्पादन में भी मापन एवं मूल्यांकन की प्रविधियों को ही प्रयुक्त किया जाता है। छात्रों के निष्पादन में साधारणत: तीन प्रकार के परीक्षण का उपयोग किया जाता है।

(1) मौखिक परीक्षा (Oral Examination),

(2) प्रयोगात्मक परीक्षा (Practical Examination) तथा

(3) लिखित परीक्षण (Written Examination)।

(1) मौखिक परीक्षा में साक्षात्कार प्रविधि का उपयोग किया जाता है। मौखिक परीक्षा व्यक्तिनिष्ठ होती है। छात्रों की अभिव्यक्ति के कौशल एवं क्षमताओं का आकलन किया जाता है। साक्षात्कार प्रविधि को प्रामाणिक बनाना कठिन है।

(2) प्रयोगात्मक परीक्षा का उपयोग विशिष्ट कौशल तथा कार्य क्षमताओं का आकलन किया जाता है। शिक्षण कौशलों के आकलन के लिए शिक्षण की प्रयोगात्मक परीक्षाओं, निरीक्षण प्रविधियों का उपयोग किया जाता है। निरीक्षण प्रविधि भी व्यक्तिनिष्ठ होती है। इन परीक्षाओं से क्रियात्मक पक्ष का आकलन किया जाता है।

(3) **लिखित परीक्षा (Written Examination)**-छात्रों के निष्पादन के मूल्यांकन तथा आकलन में लिखित परीक्षाओं को प्राथमिकता दी जाती है। इन परीक्षाओं से ज्ञानात्मक पक्ष का आकलन किया जाता है।

इन परीक्षाओं को प्रामाणिक बनाया जाता है। यह परीक्षण वस्तुनिष्ठ भी होते हैं। साधारणत: लिखित परीक्षाएँ तीन प्रकार की होती है।

(1) वस्तुनिष्ठ परीक्षा (Objective Type Examination)

(2) सूक्ष्म उत्तर परीक्षा (Short Answer Questions) तथा

(3) निबन्धात्मक परीक्षा (Essay Type Examination)।

छात्रों की उपलब्धियों के मूल्यांकन में वस्तुनिष्ठ तथा निबन्धात्मक परीक्षाओं का उपयोग अधिक किया जाता है। निबन्धात्मक परीक्षाएँ दोष-पूर्ण होते हुए छात्रों के मूल्यांकन में इनका विशेष उपयोग तथा महत्व है। छात्रों की अभिव्यक्ति सुलेख, पाठ्यवस्तु की व्यवस्था की क्षमता, भाषा की योग्यता आदि का भी आकलन निबन्धात्मक परीक्षाओं से ही सम्भव है। यह वस्तुनिष्ठ तथा विश्वसनीय नहीं होती है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का उपयोग निष्पादन तथा निदान दोनों में किया जाता है। यह वस्तुनिष्ठ तथा विश्वसनीय होती है उन्हें प्रामाणिक भी बनाया जाता है। अंकन में व्यक्तिनिष्ठ पक्ष प्रभावित नहीं करते हैं। वस्तुनिष्ठ परीक्षणों के निर्माण विधि कठिन तथा महंगी है। वस्तुनिष्ठ परीक्षणों के निर्माण विधि के प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। इस अध्याय में वस्तुनिष्ठ परीक्षणों के निर्माण विधि को उदाहरणों से समझाया गया है। वस्तुनिष्ठ तथा निबन्धात्मक परीक्षाओं की तुलना भी की गई है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षा की निर्माण विधि (Construction of Objective Type Test)

स्टेनले तथा **रॉस** के अनुसार परीक्षा के निर्माण में चार सोपानों का अनुसरण किया जाता है–(1) नियोजन (2) निर्माण (3) जाँच करना तथा (4) मूल्यांकन।

प्रथम सोपान–नियोजन (Planning)

1. उद्देश्यों को निर्धारण करना।
2. उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना।
3. पाठ्य-वस्तु का विश्लेषण करना।
4. प्रश्नों के रूप का निर्धारण करना तथा कुल प्रश्नों की संख्या का निर्धारण करना।
5. विशिष्टीकरण तालिका (Table of Specification) को बनाना जो द्वितीय सोपान के लिये निर्देशन दे सके।
6. परीक्षा आकृति, प्रशासन का समय, मुद्रण आदि के सम्बन्ध में निर्णय लेना।

नोट

द्वितीय सोपान-पदों की रचना करना (Preparing Test Items)

1. पदों की रचना करने में विशिष्टीकरण तालिका का अनुसरण किया जाता है।
2. दो प्रकार के पदों की रचना की जाती है–

(अ) प्रत्यास्मरण रूप (Recall Type)।

1. सामान्य प्रत्यास्मरण (Simple Recall)
2. रिक्त-स्थान की पूर्ति रूप (Completion Type)

(ब) अभिज्ञान रूप (Recognition type)।

1. एकान्तर-अनुक्रिया रूप (Alternative Response) अथवा सत्य/असत्य रूप (True/Flase Type)
2. बहु-विकल्पीय रूप (Multiple choice type)।
3. समानता रूप (Matching Type)।
4. वर्गीकरण रूप (Classification Type)।
5. सादृश-अनुभव रूप (Analogy Type)।

(3) प्रत्येक प्रकार के प्रश्नों का अध्ययन निम्न पक्षों में किया जाता है–

(अ) रूप का अर्थ एवं परिभाषा।

(ब) अनुमान से सही करने के अवसर।

(स) उपयोगिता तथा सीमायें।

(द) सावधानियाँ।

(4) नियम तथा सुझाव जिनको पदों के निर्माण मे ध्यान मे रखना चाहिये।

तृतीय सोपान–परीक्षा की जांच करना (Try out the Test)

(1) परीक्षा की पूर्व-जाँच करना (Pre-try out) यह छोटे समूह पर की जाती है।

(2) परीक्षा की सही जाँच करना (Proper Try out)

(*i*) पद-विश्लेषण (Item analysis)

(*ii*) पद-विश्वसनीयता तथा वैधता की गणना करना।

(*iii*) पदों के चयन के लिये मानदण्डों को निर्धारित करना।

(*iv*) परीक्षण का अन्तिम रूप तैयार करना।

(3) परीक्षण की अन्तिम जाँच के लिये बड़े समूह पर प्रयोग करना।

चतुर्थ सोपान-मूल्यांकन (Evaluation)

1. विशाल समूह पर परीक्षा का प्रशासन करना।
2. अंकन करना और प्राप्त प्रदत्तों की व्यवस्था करना।
3. विश्वसनीय गुणक की गणना करना।
4. वैधता गुणक की गणना करना।
5. मानकों (Norms) का विकास करना।
6. अनुसूची (Manual) तैयार करना।

मानदण्ड-परीक्षा विश्वसनीय तथा वैध होनी चाहिये, परन्तु यह आवश्यक नहीं कि उसे प्रामाणिक बनाया जाये। एक उत्तम मानदण्ड-परीक्षा के निर्माण में उपयुक्त चारों सोपानों का अनुसरण किया जाता है। इसमें अधिगम के उद्देश्यों, कार्य-विश्लेषण तथा अधिगम स्वरूपों को विशेष महत्व दिया जाता है। वस्तुनिष्ठ परीक्षा का रूप ही साधारणत: मानदण्ड-परीक्षाओं में प्रयुक्त किया जाता है। इसे ज्ञान, बोध तथा प्रयोग उद्देश्यों के मूल्यांकन के लिये सफलतापूर्वक प्रयोग किया जाता है।

नोट

> *नोट्स* अधिगम-उद्देश्यों के मूल्यांकन में मानदण्ड-परीक्षा प्रयुक्त की जाती है। इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि यह उद्देश्य-केन्द्रित होती है।

अधिगम उद्देश्यों के मूल्यांकन के लिये परीक्षा (Tests for Evaluating Learning Objectives)

उद्देश्यों के आधार पर व्यवस्था (Management by Objectives) प्रक्रिया को शिक्षण प्रक्रिया में सफलतापूर्वक प्रयुक्त किया जा सकता है। इसके लिये परीक्षा प्रश्नों के उदाहरण निम्नलिखित हैं–

शिक्षण तकनीकी की मानदण्ड परीक्षा

ज्ञान उद्देश्य–(1) छात्र में शिक्षण-स्तरों के अभिज्ञान की क्षमता है।

निर्देश–निम्नांकित कथन के चार सम्भावित उत्तर दिये गये हैं। इनमें से सही उत्तर को (✓) से चिन्हित कीजिये–

प्रश्न–शिक्षण के स्तर हैं

(अ) स्मरण स्तर (ब) बोध स्तर

(स) चिन्तन स्तर (द) उपरोक्त सभी

(स) सभी

(2) छात्रों में शिक्षण-अधिगम व्यवस्था के सोपानों में प्रत्यास्मरण करने की क्षमता है।

निर्देश–यहाँ एक अपूर्ण कथन दिया गया है। रिक्त स्थान की पूर्ति उपयुक्त शब्द द्वारा कीजिये–

प्रश्न–शिक्षण-अधिगम व्यवस्था प्रक्रिया में.........सोपानों का अनुसरण किया जाता है। (चार)

बोध उद्देश्य–(3) छात्रों में मापन की क्रियाओं के वर्गीकरण करने की योग्यता है।

निर्देश–इस कथन में पाँच शब्द लिये गये हैं। इनमें एक शब्द ऐसा है जो अन्य चारों की श्रेणी में नहीं आता है। उसे रेखांकित कीजिये।

साफल्य, निदान, विश्वसनीयता, शोध, पूर्व-कथन, मापन।

हिन्दी भाषा की मानदण्ड परीक्षा के लिये प्रश्न

ज्ञान-उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप–

(1) छात्र में समान शब्दों में अभिज्ञान करने की योग्यता है।

प्रश्न (1) प्रार्थना का समान शब्द है–

(अ) सम्मान (ब) दयालु

(स) विनती (द) आभूषण (स) विनती

प्रश्न (2) अलंकार का समान शब्द है–

(अ) समास (ब) सुन्दर

(स) उत्तम (द) आभूषण (द) आभूषण

बोध-उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप–

(2) छात्र में शब्दों के वर्गीकरण की क्षमता है।

प्रश्न (1) अंगूर, सेब, टमाटर, आम, केला। *(टमाटर)*

प्रश्न (2) कलम, कागज, पुस्तक, मोटर, दवात। *(मोटर)*

प्रश्न (3) जल, पानी, नीर, कमल, सलिल। *(कमल)*

नोट

(3) छात्र में शब्दों की वर्तनी के प्रत्यास्मरण करने की योग्यता है।

निर्देश–निम्नलिखित वाक्यों में एक शब्द छोड़ दिया गया है, उसकी पूर्ति कीजिए।

(1) रामचरित मानस के रचयिता..........हैं। (*तुलसीदास*)

(2) जयशंकर प्रसाद की प्रमुख कृति.........है। (*कामायनी*)

सामान्य विज्ञान की मानदण्ड परीक्षा के लिये प्रश्न

ज्ञान-उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप–

(1) छात्र में फूल के कार्यों के अभिज्ञान की योग्यता है।

प्रश्न– फूल का कार्य है–

(अ) वाष्पोत्सर्जन (ब) निषेचन

(स) श्वसन (द) प्रकाश संश्लेषण। (द) प्रकाश संश्लेषण

(2) छात्र में पौधे के भागों को प्रत्यास्मरण करने की क्षमता है।

निर्देश–पौधों के दो मुख्य भाग........तथा.........होते हैं। (प्रारोह, जड़)

बोध–उद्देश्य–

(3) छात्र में जानवरों के वर्गीकरण की योग्यता है।

निर्देश–यहाँ कुछ जानवरों के नाम दिये गये हैं। इनमें एक अन्य से मेल नहीं खाता है, उसे चिन्हित कीजिये।

प्रश्न– गाय, भैंस, मेंढक, बकरी, हाथी, ऊँट। (*मेंढक*)

ज्ञान-उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप–भूगोल विषय की मानदण्ड परीक्षा के प्रश्नों का रूप:

(1) छात्रों में उत्तर प्रदेश की राजधानी के अभिज्ञान की योग्यता है।

प्रश्न– उत्तर प्रदेश की राजधानी है–

(अ) कानपुर (ब) इलाहाबाद

(स) लखनऊ (द) बनारस (स) *लखनऊ*

(2) छात्रों में भारत की राजधानी के प्रत्यास्मरण की योग्यता है।

प्रश्न– भारत की राजधानी.........है। (*दिल्ली*)

प्रयोग–उद्देश्य का व्यावहारिक रूप–

प्रश्न– चन्द्रग्रहण पड़ता है क्योंकि–

(अ) पृथ्वी अपनी कीली पर परिभ्रमण करती है।

(ब) सूर्य के चारों ओर पृथ्वी तथा चन्द्रमा पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाता है।

(स) पृथ्वी का आकार चन्द्रमा से बड़ा है।

(द) पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है।

इतिहास विषय की मानदण्ड परीक्षा के प्रश्नों का रूप–

ज्ञान-उद्देश्य का व्यावहारिक रूप–

(1) छात्रों में स्वतन्त्रता तिथि को अभिज्ञान करने की योग्यता है।

प्रश्न– भारत की स्वतन्त्रता तिथि है–

(अ) 26 जनवरी 1950 (ब) 2 अक्टूबर 1947

(स) 15 अगस्त 1947 (द) 30 जनवरी 1948 (स) *15 अगस्त 1947*

नोट

(2) छात्रों में गणतन्त्र तिथि को अभिज्ञान करने की योग्यता है।

प्रश्न– भारत के गणतन्त्र दिवस की तिथि.........है। (*26 जनवरी*)

16.1.2 शिक्षकों के निष्पादन का मूल्यांकन (Teacher Performance Evaluation)

विद्यालय के निष्पादन में शिक्षकों की अहम् भूमिका होती है। जबकि कोठारी कमीशन ने यह कहा है कि राष्ट्र के भाग्य का निर्माण उसकी कक्षा में किया जाता है। समाज और राष्ट्र के विकास में शिक्षक का विशेष योगदान होता है। और किसी विद्यालय का स्तर उसके शिक्षकों पर निर्भर होता है छात्रों की उपलब्धियाँ शिक्षकों की कार्य प्रणाली पर ही निर्भर होती हैं। जैसे उन्हें पढ़ाया जायेगा वैसा ही छात्र सीखेंगे। इसलिए आज शिक्षकों के निष्पादन के मूल्यांकन को भी महत्व दिया जाने लगा है। साधारणत: शिक्षकों के निष्पादन के मूल्यांकन के लिए निम्नलिखित प्रविधियों द्वारा मूल्यांकन किया जाता है।

(1) प्राचार्य/साथियों/पर्यवेक्षक के द्वारा शिक्षक का मूल्यांकन

(2) छात्रों द्वारा शिक्षकों के निष्पादन का मूल्यांकन

(3) कक्षा निरीक्षण की शाब्दिक अन्त:प्रक्रिया प्रविधि द्वारा मूल्यांकन (फ्लैण्डर्स की प्रविधि)

(4) कक्षा की अशाब्दिक अन्त:प्रक्रिया का मूल्यांकन (ग्लोवे प्रविधि)

इन प्रविधियों का संक्षिप्त विवरण किया गया है।

शिक्षक निष्पादन का आकलन (Performance Assessment)

शिक्षक को दो अर्थों में प्रयोग किया जाता है

(1) शिक्षण एक व्यवसाय/वृत्ति (Profession)।

(2) शिक्षण के अन्तर्गत कक्षा के अन्तर्गत किये जाने वाला व्यवहार।

इस प्रकार एक निश्चित अवधि में इन दोनों ही दृष्टिकोणों से किसी पूर्व निर्धारित पैमाने पर आंकने को निष्पादन मूल्यांकन कहते हैं। इस अर्थ में दो तत्व दिखाई देते हैं।

(1) मूल्यांकन आकलन (Appraisal Assesment) तथा

(2) उत्तरदायित्व आकलन (Accountability Assessment)

उद्देश्य (Objectives)

शिक्षण तथा मूल्यांकन केवल निरूद्देश्य नहीं है वास्तव में यह शैक्षिक प्रशासकों एवं प्रबन्धकों के हित में ही है क्योंकि इसके आधार पर शिक्षकों की विशेष पदों पर नियुक्तियाँ कर सकते हैं और यह शिक्षक के हित में भी है क्योंकि इसके द्वारा वे अपनी प्रगति का सही मानदण्ड करके अपनी प्रगति के लिये कदम उठा सकते हैं।

प्रशासक मूल्यांकन निष्पादन के परिणामों को इस शिक्षक के प्रोन्नत हेतु प्रयोग कर सकते हैं–

(1) पदोन्नति (2) स्थायीकरण (3) पुरस्कार तथा वार्षिक प्रेरकों को निश्चित करने के लिये। शैक्षिक सन्दर्भ में निष्पादन के तीन उद्देश्य होते है–

(1) **उपचारात्मक** (Remedial)–जहाँ की उपेक्षा की जाती है।

(2) **विकासात्मक** (Development)–शिक्षकों से सुधारात्मक शिक्षण की सकारात्मक उपलब्धि व गुणों को बनाये रखने के लिए प्रेरित करना।

(3) **नवाचरात्मक उद्देश्य** (Innovative)–भावी चुनौतियों का सामना करने की लिये नये कौशल और स्थान प्राप्त करने के लिये उत्साहित करना।

आवश्यकता एवं महत्व (Need and Importance)

(1) प्रभावी शिक्षण में सहायक होना।

(2) सुविधा तथा पुरस्कार वितरण का आधार जैसे-पदोन्नति, स्थानान्तरण।

नोट

(3) उच्च गुण और क्षमता के व्यक्तियों की पहचान।

(4) नव शिक्षकों के कैरियर नियोजन का आधार।

(5) व्यक्तिगत तथा संस्थागत समस्याओं का निदान करना। सहयोगी शिक्षक से सूचनायें एकत्रित करना।

क्या आप जानते हैं निष्पादन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी एक शिक्षक की निश्चित अवधि के दौरान व्यवहार और उपलब्धियों का आकलन किया जाता है।

निष्पादन मूल्यांकन की विधि एवं प्रविधि (Techniques of Appraisal Asesssment)

एक प्रभावशाली अध्यापक के आकलन के लिये अनेक प्रविधियों को प्रयुक्त किया जाता है जैसे–प्रश्नावली, साक्षात्कार, निरीक्षण प्रविधि आदि ए. एस. बार तथा मिजल ने तीन प्रकार के मानदण्डों के प्रयोग सुझाव दिये है–

(1) योग्यता मानदण्ड (Presage Criteria)

(2) प्रक्रिया मानदण्ड (Process Criteria)

(3) उत्पादन मानदण्ड (Product Criteria)

(1) योग्यता मानदण्ड (Presage Criteria)–इस मानदण्ड के अन्तर्गत व्यक्तिगत योग्यता, व्यावसायिक प्रवणता, व्यावसायिक अभिवृत्ति एवं अभिरूचि विषय का स्वामित्व तथा शिक्षण के प्रति रूझान आदि को सम्मिलित किया जाता है। शिक्षक का मानसिक चिन्तन तथा उसकी सूझ-बूझ को इसी के अन्तर्गत रखते हैं।

(2) प्रक्रिया मानदण्ड (Process Criteria)–कक्षा में शिक्षक का शाब्दिक तथा अशाब्दिक व्यवहार, शिक्षण कौशल, अनुदेशनात्मक प्रक्रिया का स्वरूप पाठ्यवस्तु का प्रस्तुतीकरण कक्षा की सामाजिक प्रणाली, सहायक प्रणाली कक्षा का वातावरण तथा प्रबन्धन आदि को सम्मिलित करते हैं।

(3) उत्पादन मानदण्ड (Product Criteria)–छात्रों का निष्पादन स्तर उनका विकास, शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति, छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन आदि को सम्मलित किया जाता है।

लेविस इल्टन ने (1987) में एक अच्छे प्रवक्ता के गुणों का उल्लेख किया है। इन्होंने छः मानदण्ड दिये हैं–

1. सुव्यवस्थित शिक्षण (Well organized teaching)
2. भली भाँति शिक्षण की तैयारी (Well prepared)
3. व्यवहार में लचीलापन (Flexibility in behaviour)
4. मित्र के समान सहायता देना (Friendly help)
5. प्रभावशाली सम्प्रेषण (Effective communication)
6. निष्ठावान तथा लगन (Committed and devoted)

ब्राउन तथा एटकिन्स ने (1988) में महाविद्यालयों के प्रवक्ताओं के निष्पादन आकलन के लिये चार मानदण्डों को दिया। यह मानदण्ड इस प्रकार है।

1. शिक्षण की गुणवत्ता (Quality of Teaching)
2. विचार गोष्ठियों, कार्यशाला तथा अभिविन्यास पाठ्यक्रमों में भागीदारी (Participation in Seminar, workshop, refesher courses)
3. छात्रों की प्रोन्नति एवं विकास (Student Growth and Progress)
4. छात्रों को शैक्षिक निर्देशन (Educational Guidance) छात्रों की समस्या का समाधान करना।

नोट

(2) प्रवक्ता के शोध कार्यों के मूल्यांकन हेतु मानदण्ड

प्रमुख रूप से तीन मानदण्डों को प्रस्तावित किया है–

1. शोध कार्यों पर प्रपत्रों की संख्या उनका प्रकाशन भारतीय पत्रिकाओं तथा विदेशी शोध पत्रिकाओं में हुआ है।
2. शोध के लिये किसी प्रोजेक्ट पर कार्य किया है उसके लिये वित्तीय सहायता विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, राष्ट्रीय अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् से प्राप्त हुई अथवा नहीं।
3. प्रवक्ता के निर्देशन में कितने छात्रों ने पी-एच. डी. उपाधि प्राप्त की। शोध हेतु विशिष्टीकरण का क्षेत्र कौन सा रहा है?

(3) प्रसार-सेवा कार्यो के मूल्यांकन हेतु मानदण्ड

1. प्रसार सेवा में कुल कितने घण्टे कार्य किया?
2. विभिन्न संस्थाओं द्वारा आयोजित कितने कैम्पों में भाग लिया जैसे NCC तथा राष्ट्रीय समाज सेवा विभाग (NSS)।
3. प्रसार सेवा तथा समाज सेवा कार्यो में भागीदारी सम्बन्धी प्रमाण पत्र तथा प्रकार के प्रमाण पत्र।

(4) विभागीय कार्यों के मूल्यांकन हेतु मानदण्ड

1. शैक्षिक संस्थाओं की सदस्यता,
2. शैक्षिक तथा अनुसन्धान पत्रिकाओं की सदस्यता,
3. विश्वविद्यालय की विभिन्न समितियों की सदस्यता,
4. विभागीय कार्यो में सक्रिय भागीदारी जैसे शैक्षिक पर्यटन, स्काउट कैम्प, सास्कृतिक कार्यक्रम आदि।

16.1.3 संस्था की उपलब्धियों का मूल्यांकन (Evaluation of Institutional Performance)

किसी शिक्षा संस्था के मूल्यांकन के लिए छात्रों और शिक्षकों के निष्पादन को महत्व दिया जाता है। और उनके मूल्यांकन में विद्यालय के स्तर का पता चलता है। किसी विद्यालय का परीक्षाफल कितना रहता है और शिक्षक कितनी प्रतिबद्धता से शिक्षण करते हैं। इससे विद्यालय की ख्याति होती है। और इन्ही के मूल्यांकन से विद्यालय का मूल्यांकन किया जाता है, परन्तु प्रबन्धन की आधुनिक तकनीकी ने कुछ अभिकल्पों का विकास किया है जिनसे विद्यालय का सीधा मूल्यांकन भी किया जाने लगा है। उनमें से प्रचलित अभिकल्प प्रणाली विश्लेषण है। जिसका विवरण निम्नलिखित पंक्तियों में किया गया है।

प्रणाली विश्लेषण (System Analysis)

प्रबन्ध तकनीकी (Management Technology) का विकास द्वितीय विश्वयुद्ध के समय हुआ था। इस तकनीकी ने प्रबन्ध निर्णय लेने, व्यापार, उद्योग, शासन तथा सेना को अधिक प्रभावित किया है। इस तकनीकी को कई नामों से सम्बोधित किया जाता है, परन्तु यह प्रणाली-विश्लेषण (System Analysis) के नाम से अधिक विख्यात है।

अनुदेशनात्मक-प्रारूप (Instructional Designs) की यह तीसरी विचारधारा है। जिसे प्रणाली विश्लेषण कहते हैं। इसका प्रशिक्षण मनोविज्ञान से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

प्रणाली विश्लेषण का अर्थ (Meaning of System Analysis)

प्रणाली शब्द का तात्पर्य यहाँ विश्लेषण तथा विकास से है। इस प्रत्यय की धारणा है कि प्रत्येक मानव-व्यवहार संगठित प्रणाली के अंग के रूप में कार्य करता है। और कोई प्रणाली अपने में पूर्ण नहीं है। इसलिये विश्लेषण द्वारा उसकी समस्याओं का समाधान किया जा सकता है और प्रणाली को प्रभावशाली बनाया जा सकता है। इस आयाम के द्वारा शैक्षिक-प्रशासन को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है। इसके अन्तर्गत परिमाणात्मक-विश्लेषण किया जाता है जो प्रशासक को निर्णय लेने में सहायता प्रदान करता है।

नोट

प्रणाली प्रत्यय अभियंत्रण के क्षेत्र से लिया गया है। अभियंता का कार्य किसी प्रणाली के अन्तर्गत सभी पक्षों का निरीक्षण करके सुधार करना है। इस प्रकार एक प्रणाली से तात्पर्य उसके समस्त स्वतन्त्र तथा आश्रित चरों से है जो अपेक्षित उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं। प्रणाली विश्लेषण मौलिक रूप में गणित पर आधारित हैं।

"The System Analysis involves utilization of scientific mathematical techniques applied to organizational operations as a part of management decision making activities."

शैक्षिक प्रशासन के क्षेत्र में प्रणाली-विश्लेषण प्रशासक की समस्याओं के सम्बन्ध में निर्णय लेने के लिये वैज्ञानिक, परिमाणात्मक आधार प्रदान करती है। प्रणाली-विश्लेषण से तात्पर्य है कि समस्त प्रणाली के विश्लेषण के लिये, अनुसंधान के लिये परिमाणात्मक-वैज्ञानिक प्रविधि उपलब्ध है। यह प्रत्यय किसी व्यवस्था के सैद्धान्तिक पक्ष की अपेक्षा व्यावहारिक पक्ष को अधिक महत्व देता है। प्रणाली विश्लेषण से व्यवस्था/प्रबन्ध के दोषों का अध्ययन किया जाता है और निदान के आधार पर ही व्यवस्था में सुधार लाने का प्रयास किया जाता है।

प्रणाली विश्लेषण के सोपान (Steps of System Analysis)

प्रथम-सोपान–उद्देश्यों का प्रतिपादन करना।

प्रणाली विश्लेषण का यह कार्य सबसे अधिक कठिन समझा जाता है। इसके अन्तर्गत विशिष्ट उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। व्यय, अतिरिक्त क्रियायें तथा जन शक्ति का आलेख तैयार किया जाता है।

द्वितीय-सोपान–प्रणाली की सम्पादित क्रियाओं का अवलोकन करना।

इस सोपान में व्यवस्था की सभी क्रियाओं का व्यापक रूप में अवलोकन समस्या के चयन के लिये किया जाता है। इसके लिये व्यवस्था की क्रियाओं की भली प्रकार जानकारी होनी चाहिये।

तृतीय-सोपान–प्रदत्तों का संकलन करना।

समस्या को पहचानने के बाद उसके सम्बन्ध में प्रदत्तों का संकलन किया जाता है। प्रदत्तों के आधार पर समस्या की पुष्टि की जाती है, इसके लिये सांख्यिकी प्रविधियों को प्रयुक्त किया जाता है।

चतुर्थ-सोपान–प्रदत्तों का विश्लेषण करना।

समस्या की पुष्टि के लिये प्रदत्तों का विश्लेषण किया जाता है। इसके लिये सांख्यिकी प्रविधियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं। प्रशासक जिस समस्या की अनुभूति करता है वह सही नहीं होती है। इसलिये प्रदत्तों के विश्लेषण के आधार पर समस्या के सम्बन्ध में निर्णय लिया जाता है।

प्रणाली विश्लेषण का प्रारूप (Procedure of System Analysis)

पंचम-सोपान–समस्या को पहचानना।

प्रशासक समस्या के विशिष्ट रूप को नहीं पहचानता है। इसलिये व्यवस्था का अवलोकन, प्रदत्तों का संकलन तथा विश्लेषण किया जाता है। प्रदत्तों के विश्लेषण के आधार पर समस्या के विशिष्ट रूप को पहचाना जाता है तथा समस्या की परिभाषा दी जाती है।

षष्टम-सोपान–समस्या के क्षेत्र की व्यवस्था करना।

समस्या के चयन के बाद यह आवश्यक होता है कि उसका व्यापक रूप से अध्ययन किया जाये। अधिक व्यापक रूप में अध्ययन करने से उस व्यवस्था के स्वरूप की वास्तविक कठिनाइयों के सम्बन्ध में जानकारी हो जाती है।

सप्तम-सोपान रूपरेखा (Block Diagram)–समस्या के क्षेत्र का निर्धारण प्रणाली विश्लेषण का अन्तिम सोपान माना जाता है। क्योंकि समस्या समाधान हेतु व्यवस्था के लिये एक नई रूपरेखा तैयार की जाती है। व्यवस्था का यह स्वरूप पूर्व प्रतिमानों पर आधारित होता है।

(1) **प्रारूप** (Designs)–प्रणाली विश्लेषण के बाद समस्या के समाधान के लिये नये प्रारूप को प्रयुक्त किया जाता है। उस नये प्रारूप का मूल्यांकन किया जाता है कि वह कहाँ तक समस्या के समाधान में सफल हो सका है। इसमें पुनः सुधार करके प्रयुक्त किया जाता है जिससे समस्या का पूर्ण समाधान हो सके।

नोट

(2) **मूल्यांकन** (Evaluation)—नवीन प्रारूप का परीक्षण लघु स्तर पर किया जाता है। तत्पश्चात् उसे विशाल स्तर पर प्रयुक्त किया जाता है। इसके मूल्यांकन के लिये साक्षियाँ एकत्रित की जाती हैं। इस प्रत्यय को एक उदाहरण से अधिक स्पष्ट समझ सकते हैं। मेरठ विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति (प्रशासक) ने तात्कालिक उच्च शिक्षा की समस्या की अनुभूति की थी। वह समस्या के विशिष्ट रूप को पहचानने में भी समर्थ हो सके। 'परीक्षा प्रणाली' दोषपूर्ण थी। इसके लिये उन्होंने 'सत्र प्रणाली' के नवीन प्रारूप को लागू किया था। 'सत्र प्रणाली' का प्रारूप अधिकांश समस्याओं का समाधान करने में सफल रहा परन्तु पूर्ण समाधान नहीं दे सका। इस प्रारूप में पूर्ण रूप में प्रणाली-विश्लेषण का अनुसरण नहीं किया गया था।

(3) **मानदण्ड** (Criteria)—इस को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जाता है—

(*i*) **कार्य कुशलता**—किसी प्रणाली के मूल्यांकन में 'कार्य कुशलता' का एक महत्वपूर्ण मानदण्ड माना जाता है। 'कार्य कुशलता' व्यवस्था के स्तर की परिचायक होती है। व्यवस्था के द्वारा कार्य कुशलता का मापन किया जाता है।

(*ii*) **कार्य कुशलता**—प्रणाली विश्लेषण में व्यय एक महत्वपूर्ण मानदण्ड, 'कम व्यय पर अधिक उत्पादन किया जा सके' ऐसे प्रारूप को उत्तम माना जाता है। व्यय की गणना की जाती है।

(*iii*) **उपयोगिता**—अन्तिम मानदण्ड प्रारूप की उपयोगिता होती है। नया प्रारूप अपेक्षाकृत अधिक उपयोगी होना चाहिये।

(*iv*) **समय**—किसी व्यवस्था के प्रारूप में उपयोगी होने के साथ समय भी कम लगना चाहिये तभी उसे प्रभावशाली माना जा सकता है। किसी की व्यवस्था के लिए शक्ति, समय तथा व्यय महत्वपूर्ण होते हैं। इसमें बचत होना प्रारूप की प्रभावशीलता का सूचक होता है। कम समय में अधिक उत्पादन होने पर ही नये प्रारूप को प्रभावशाली समझा जा सकता है।

अनुदेशनात्मक-अभिकल्प प्रयोग का उदाहरण (Example for the Application of Instructional Design)

शिक्षा की अपनी प्रणाली है उसका प्रबन्धन है। शिक्षा की अनेक उप प्रणालियाँ हैं। यदि शिक्षा प्रणाली की कोई समस्या है तब उसके समाधान एवं सुधार हेतु अनुदेशनात्मक-अभिकल्प का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिये 'परीक्षा में नकल की प्रवृत्ति' बढ़ती जा रही है। नकल की प्रवृत्ति को कैसे रोका जाये? परीक्षा, शिक्षा की उपप्रणाली है। परीक्षा में नकल की प्रवृत्ति का अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाये जिससे कारणों की जानकारी हो सके। परीक्षा प्रश्नों का विश्लेषण करने पर विदित हुआ कि परीक्षा प्रश्नों का स्वरूप ऐसा होता है। जिनके उत्तर पुस्तकों, गाइड तथा सम्भावित प्रश्नों की पुस्तिकाओं में मिल जाते हैं छात्र उनकी सुगमता से नकल कर लेते हैं। इस विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि परीक्षा प्रश्नों का स्वरूप नकल की प्रवृत्ति को बढ़ावा देता है। इसके निराकरण के लिये सम्भावित समाधान ज्ञात करना होगा-जैसे—

(1) परीक्षा के प्रश्नों का स्वरूप ऐसा हो जिनका उत्तर पुस्तकों, गाइड आदि में न मिल सकें।

(2) परीक्षा के प्रश्नों का कठिनाई स्तर बढ़ा दिया जाये और परीक्षा में पुस्तकों की भी अनुमति दी जाये।

इन विकल्पों में द्वितीय विकल्प अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। इसलिये किसी विद्यालय में इसका प्रयोग किया जाये। परीक्षा प्रश्नों की कठिनाई स्तर बढ़ा दिया जाये उन्हें स्मृति स्तर तक सीमित न रखा जाये तथा छात्रों से यह कह दिया जाये कि तुम्हें परीक्षा में पुस्तकें ले जाने की भी अनुमति होगी। गत वर्षों में प्रयोग किया भी गया परन्तु सफल नहीं हुआ। प्रथम विकल्प अपेक्षाकृत अधिक प्रभावशाली सिद्ध हुआ। अतः अब परीक्षा प्रश्नों के स्वरूप में परिवर्तन किया जाने लगा है। परीक्षा के प्रश्न पत्रों में वस्तुनिष्ठ, सूक्ष्म-उत्तर तथा निबन्धात्मक प्रश्नों को सम्मिलित किया जाने लगा। इस अभिकल्प में समस्या का समाधान वैज्ञानिक ढंग से किया जाता है।

नोट

प्रणाली विश्लेषण का विद्यालय में प्रयोग (Applications of System Analysis in School)

प्रणाली विश्लेषण के प्रत्यय तथा सिद्धान्तों ने व्यवस्था, शासन, व्यापार, उद्योग कारखानों तथा सेना को अधिक प्रभावित किया है। इसका शिक्षा प्रणाली में भी अधिक प्रयोग किया जा सकता है। शैक्षिक-प्रशासन, शैक्षिक-व्यवस्था तथा शैक्षिक अनुदेशन को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है। शिक्षा एक प्रणाली है इसके अन्तर्गत अनेकों उपप्रणलियाँ सम्मिलित हैं। भारत में शिक्षा प्रणाली के सम्बन्ध में कई आयोग तथा समितियाँ बैठाई जाती रही हैं वे अपने सुझाव देती रही हैं। परन्तु शिक्षा प्रणाली को सार्थक, उपयोगी तथा प्रभावशाली बनाने में सफल नहीं हो सकी हैं। शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन तथा सुधार भी होते रहे हैं तथा नये प्रारूपों को प्रयुक्त भी किया गया है फिर भी शिक्षा की समस्याओं का समाधान सम्भव नहीं हो सका। इसका मूल कारण यह रहा है कि समस्या के विशिष्ट रूप को पहचानने का सही रूप में प्रयास नहीं किया गया है। शिक्षा-शास्त्रियों, महान् पुरूषों तथा प्रशासकों ने जैसा भी अनुभव किया अथवा सोचा, उसी के अनुसार शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन कर दिया और नये प्रारूप को लागू कर दिया। समस्या का विशिष्ट रूप उन्हें ज्ञात नहीं है। इसलिये प्रारूप से मूल्यांकन तक के लिये सन्दर्भ बिन्दु ही उपलब्ध नहीं है। अत: स्पष्ट है कि शैक्षिक व्यवस्था, शैक्षिक-प्रशासन तथा शैक्षिक-अनुदेशन की समस्याओं के समाधान के लिये प्रणाली विश्लेषण के सोपान ही पूर्ण समाधान निकाल सकते हैं। जोकि हमारी शिक्षा-प्रणाली के लिये अधिक उपयोगी हो सकता है और जिसमें समय, शक्ति तथा धन कम व्यय होगा। क्योंकि यह प्रयत्न समस्या समाधान के लिये परिमाणात्मक वैज्ञानिक प्रविधियों की सहायता लेता है।

प्रणाली विश्लेषण का प्रयोग शिक्षा के अधोलिखित क्षेत्रों में किया जा सकता है–

1. नवीन-शैक्षिक प्रशासन के प्रतिमान के निर्माण में।
2. शैक्षिक-व्यवस्था के प्रारूप के निर्माण में।
3. परीक्षा-प्रणाली के प्रारूप के निर्माण में।
4. निर्देशन-प्रणाली के प्रतिमान के निर्माण में।
5. अध्यापक-शिक्षा के प्रतिमान के निर्माण में।
6. अनुदेशन-प्रणाली के प्रारूप के निर्माण में।

इस प्रकार शिक्षा प्रणाली के विकास, सुधार तथा नये प्रारूप के निर्माण में परिणामात्मक-वैज्ञानिक प्रविधियों को प्रयुक्त किया जा सकता है।

टास्क प्रणाली विश्लेषण से आप क्या समझते हैं?

16.2 मूल्यांकन के चरण (Phases of Evaluation)

मूल्यांकन चाहे छात्र का हो, पाठ्यक्रम का हो अथवा कार्यक्रम का हो, प्रत्येक मूल्यांकन को तीन अवस्थाओं से गुज़रना होता है, रैशनल, रूपदेय तथा योगदेय मूल्यांकन

(1) पाठ्यक्रम मूल्यांकन

(*i*) रैशनल मूल्यांकन के आधार पर, पाठ्यक्रम उद्देश्य, पाठ्यक्रम प्रारूप पाठ्यक्रम की विधियाँ तथा संबंधित परिणाम पाठ्यक्रम निर्माण को द्वारा तैयार किये जाते हैं।

(*ii*) जब रैशनल मूल्यांकन हो जाता है, तो रूपदेय मूल्यांकन की प्रक्रिया आंरभ होती है, जिसमें पाठ्यक्रम की विषय वस्तु में परिवर्तन, सुधार तथा, तथ्यों का संकलन, जोड़ना, हटाना आदि सभी प्रक्रियाएँ की जाती हैं।

(*iii*) योगदेय मूल्यांकन तब किया जाता है, जब पाठ्यक्रम एक अथवा दो वर्ष के लिए बनाया जाता है। यह पाठ्यक्रम के चारों घटकों को वैध करने में सहायता करता है। पाठ्यक्रम के पुनर्नवीनीकरण करने से पाठ्यक्रम उद्देश्यों को और अधिक वास्तविक, संबंधित, पाठ्यक्रम को समझाने की विधियों को और प्रभावी बनाया जाता है, जिससे बेहतर तथा प्रभावी परिणाम सामने आ सकें।

नोट

(2) कार्यक्रम मूल्यांकन

(i) रैशनल मूल्यांकन के आधार पर शैक्षिक कार्यक्रम नियोजित तथा विकसित किये जाते हैं,। नियोजन के लिए कार्यक्रम का प्रारूप इनपुट, प्रक्रियाएँ उत्पादको का विश्लेषण किया जाता है।

(ii) रूप देय मूल्यांकन कार्यान्वयन अवस्था में उपयोग किया जाता है। यह कार्यक्रम के विभिन्न घटकों की प्रभावशीलता तथा कुशलता पर पृष्ठपोषण उपलब्ध कराता है।, सुधार, संकलन करना, पृथक करना आदि अनेक परिवर्तन करने में सहायता करता है।

(iii) योग देय मूल्यांकन कार्यक्रम की समाप्ति पर किया जाता है। यह सभी मूल तथा निरीक्षण किये गए तत्वों पर तुलनात्मक अध्ययन करने में सहायता करता है। फिर इसके अनुसार प्रारूप मूल्यांकन इनपुट मूल्यांकन, प्रक्रिया मूल्यांकन, उत्पादन मूल्यांकन किया जाता है।

छात्र मूल्यांकन–

(i) छात्र मूल्यांकन की प्रक्रिया में भी सबसे पहले रैशनल मूल्यांकन किया जाता है, जिसके अनुसार छात्रों की विभिन्न उपलब्धियों तथा बुद्धि कौशलों के मूल्यांकन हेतु विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का उपयोग किया जाता है।

(ii) दूसरे चरण, अर्थात् रूप देय मूल्यांकन में विषय, परीक्षा पत्र बनाने में विभिन्न कठिनाइयाँ तथा अन्य परीक्षण विषय वस्तु से जुड़ी विविध आवश्यकताओं पर विचार किया जाता है।

(iii) योगदेय मूल्यांकन पाठ्यवस्तु की सभी इकाइयों से संबंधित अभ्यास प्रश्नों द्वारा किया जाता है। परीक्षण का पद विश्लेषण किया जाता है। इस प्रकार तीनों मूल्यांकन द्वारा विभिन्न मूल्यांकनों प्रक्रियाओं में योगदान प्राप्त होता है।

16.3 विभिन्न शैक्षिक अवस्थाओं में मूल्यांकन (Integrated Evaluation in Different Stages)

विभिन्न शैक्षिक स्तरों पर समाकलित मूल्यांकन किया जाता है।

(i) प्रारंभिक शैशवावस्था अथवा अति प्राथमिक स्तर पर मूल्यांकन की आवश्यकता नहीं होती। शिक्षण–अधिगम प्रक्रियाओं को मूल्यांकन से मुक्त रखना चाहिए।

(ii) प्राथमिक स्तर पर योगदेय, सतत् तथा विस्तृत मूल्यांकन किया जाता है। कक्षा I तथा II में निरीक्षण तथा मौखिक परीक्षणों द्वारा छात्रों का मूल्यांकन किया जाता है। कक्षा III से IV में निरीक्षण तथा मौखिक परीक्षण के अतिरिक्त मानदण्ड संबंधित परीक्षण लिये जाते हैं, इससे छात्रों की विषय विशेष में रूचि, निपुणता तथा बुद्धि कौशल का मूल्यांकन होता है। यह 3 महीने में एक बार लिया जा सकता है।

(iii) उच्च प्राथमिक स्तर इसमें 3 प्वाइंट स्केल ग्रेडिंग प्रयोग की जाती है। मौखिक तथा लिखित परीक्षाओं द्वारा मूल्यांकन किया जाता है, इसके अतिरिक्त मानदण्ड सम्बंधित परीक्षा के रूप में एसाइनमेंट तथा प्रोजेक्ट कार्य भी दिये जाते हैं। इसमें 5 बिन्दु ग्रेडिंग की जाती है।

(iv) माध्यमिक अवस्था पर 5 बिन्दु ग्रेडिंग प्रयोग की जाती है इसमें प्राप्त आंकड़ें तथा कुमुलेटिव रिकॉर्ड कार्ड भी छात्रों के मूल्यांकन के लिए दिया जाता है।

(v) उच्चतर माध्यमिक स्तर पर छात्रों को थ्योरी के साथ-साथ प्रायोगिक परीक्षाओं का भी मूल्यांकन किया जाता है। इसके अतिरिक्त विशेष प्रॉजेक्टस, एसाइनमेंट तथा मॉडलों आदि का भी मूल्यांकन किया जाता है। बोर्ड द्वारा बिन्दु 5 बिन्दु ग्रेडिंग प्रयुक्त की जाती है।

(vi) महाविद्यालय स्तर पर पाठ्यक्रम सत्रों में बाँट दिया जाता है मानदण्ड परीक्षणों के साथ, 9 बिन्दु ग्रेडिंग का भी प्रयोग किया जाता है। छात्रों के स्तर को बनाये रखने के लिए, उपलब्धि सर्वेक्षण भी किये जाते हैं, जिससे छात्रों का संस्थान, क्षेत्रीय, राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर पर मूल्यांकन किया जा सके

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. पाठ्यक्रम उद्देश्य, पाठ्यक्रम प्रारूप पाठ्यक्रम की विधियाँ तथा सम्बंधित परिणाम ········· के आधार पर पाठ्यक्रम निर्माणकों द्वारा तैयार किये जाते हैं।
2. रैशनल मूल्यांकन होने के बाद ········· मूल्यांकन की प्रक्रिया आरंभ होती है।
3. ········· उस समय किया जाता है जब पाठ्यक्रम एक अथवा दो वर्ष के लिए बनाया जाता है।
4. ········· की प्रक्रिया में भी सबसे पहले रैशनल मूल्यांकन किया जाता है।
5. शैशवावस्था अथवा अति प्राथमिक स्तर पर मूल्यांकन की ········· नहीं होती।

16.4 सारांश (Summary)

- छात्रों के निष्पादन में भी मापन एवं मूल्यांकन की प्रविधियों को ही प्रयुक्त किया जाता है। छात्रों के निष्पादन में साधारणत: तीन प्रकार के परीक्षण का उपयोग किया जाता है।

  (1) मौखिक परीक्षा (Oral Examination),

  (2) प्रयोगात्मक परीक्षा (Practical Examination) तथा

  (3) लिखित परीक्षण (Written Examination)।
- **स्टेनले** तथा **रॉस** के अनुसार परीक्षा के निर्माण में चार सोपानों का अनुसरण किया जाता है–(1) नियोजन; (2) निर्माण; (3) जाँच करना तथा (4) मूल्यांकन।
- उद्देश्यों के आधार पर व्यवस्था (Management by Objectives) प्रक्रिया को शिक्षण प्रक्रिया में सफलतापूर्वक प्रयुक्त किया जा सकता है। इसके लिये परीक्षा प्रश्नों के उदाहरण निम्नलिखित हैं–**ज्ञान उद्देश्य**–(1) छात्र में शिक्षण-स्तरों के अभिज्ञान की क्षमता है।
- विद्यालय के निष्पादन में शिक्षकों की अहम् भूमिका होती है। जबकि कोठारी कमीशन ने यह कहा है कि राष्ट्र के भाग्य का निर्माण उसकी कक्षा में किया जाता है।
- शिक्षक को दो अर्थों में प्रयोग किया जाता हैं–

  (1) शिक्षण एक व्यवसाय/वृत्ति (Profession)।

  (2) शिक्षण के अन्तर्गत कक्षा के अन्तर्गत किये जाने वाला व्यवहार।
- इस प्रकार एक निश्चित अवधि में इन दोनों ही दृष्टिकोणों से किसी पूर्व निर्धारित पैमाने पर आंकने को निष्पादन मूल्यांकन कहते हैं। इस अर्थ में दो तत्व दिखाई देते हैं।

  (1) मूल्यांकन आकलन (Appraisal Assesment) तथा

  (2) उत्तरदायित्व आकलन (Accountability Assessment)
- शिक्षण तथा मूल्यांकन केवल निरूद्देश्य नहीं है वास्तव में यह शैक्षिक प्रशासकों एवं प्रबन्धकों के हित में ही है क्योंकि इसके आधार पर शिक्षकों को विशेष पदों पर नियुक्तियाँ कर सकते हैं और यह शिक्षक के हित में भी है क्योंकि इसके द्वारा वे अपनी प्रगति का सही मानदण्ड करके अपनी प्रगति के लिये कदम उठा सकते हैं।
- प्रशासक मूल्यांकन निष्पादन के परिणामों को इस शिक्षक के प्रोन्नत हेतु प्रयोग कर सकते हैं– (1) पदोन्नति (2) स्थायीकरण (3) पुरस्कार तथा वार्षिक प्रेरकों को निश्चित करने के लिये। शैक्षिक सन्दर्भ में निष्पादन के तीन उद्देश्य होते है–

  (1) उपचारात्मक (Remedial)–जहाँ की उपेक्षा की जाती है।

  (2) विकासात्मक (Development)–शिक्षकों से सुधारात्मक शिक्षण की सकारात्मक उपलब्धि व गुणों को बनाये रखने के लिए प्रेरित करना।

नोट

(3) नवाचरात्मक उद्देश्य (Innovative)—भावी चुनौतियों का सामना करने की लिये नये कौशल और स्थान प्राप्त करने के लिये उत्साहित करना।

- **निष्पादन मूल्यांकन की विधि एवं प्रविधि**—एक प्रभावशाली अध्यापक के आकलन के लिये अनेक प्रविधि यों को प्रयुक्त किया जाता है जैसे—प्रश्नावली, साक्षात्कार, निरीक्षण प्रविधि आदि ए. एस. बार तथा मिजल ने तीन प्रकार के मानदण्डों के प्रयोग सुझाव दिये है—

(1) योग्यता मानदण्ड (Presage Criteria)

(2) प्रक्रिया मानदण्ड (Process Criteria)

(3) उत्पादन मानदण्ड (Product Criteria)

- **संस्था की उपलब्धियों का मूल्यांकन**—किसी शिक्षा संस्था के मूल्यांकन के लिए छात्रों और शिक्षकों के निष्पादन को महत्व दिया जाता है। और उनके मूल्यांकन में विद्यालय के स्तर का पता चलता है। किसी विद्यालय का परीक्षाफल कितना रहता है और शिक्षक कितनी प्रतिबद्धता से शिक्षण करते हैं। इससे विद्यालय की ख्याति होती है। और इन्ही के मूल्यांकन से विद्यालय का मूल्यांकन किया जाता है परन्तु प्रबन्धन की आधुनिक तकनीकी ने कुछ अभिकल्पों का विकास किया है जिनसे विद्यालय का सीधा मूल्यांकन भी किया जाने लगा है। उनमें से प्रचलित अभिकल्प प्रणाली विश्लेषण है। जिसका विवरण निम्नलिखित पंक्तियों में किया गया है।
- **प्रणाली विश्लेषण**—प्रबन्ध तकनीकी (Management Technology) का विकास द्वितीय विश्वयुद्ध के समय हुआ था। इस तकनीकी ने प्रबन्ध निर्णय लेने, व्यापार, उद्योग, शासन तथा सेना को अधिक प्रभावित किया है। इस तकनीकी को कई नामों से सम्बोधित किया जाता है, परन्तु यह प्रणाली-विश्लेषण (System Analysis) के नाम से अधिक विख्यात है।
- **प्रणाली विश्लेषण का अर्थ**—प्रणाली शब्द का तात्पर्य यहाँ विश्लेषण तथा विकास से है। इस प्रत्यय की धारणा है कि प्रत्येक मानव-व्यवहार संगठित प्रणाली के अंग के रूप में कार्य करता है। और कोई प्रणाली अपने में पूर्ण नहीं है। इसलिये विश्लेषण द्वारा उसकी समस्याओं का समाधान किया जा सकता है और प्रणाली को प्रभावशाली बनाया जा सकता है। इस आयाम के द्वारा शैक्षिक-प्रशासन को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है। इसके अन्तर्गत परिमाणात्मक-विश्लेषण किया जाता है जो प्रशासक को निर्णय लेने में सहायता प्रदान करता है।
- **प्रणाली विश्लेषण के सोपान (Steps of System Analysis)**
- **प्रथम-सोपान**—उद्देश्यों का प्रतिपादन करना।
- **द्वितीय-सोपान**—प्रणाली की सम्पादित क्रियाओं का अवलोकन करना।
- **तृतीय-सोपान**—प्रदत्तों का संकलन करना।
- **चतुर्थ-सोपान**—प्रदत्तों का विश्लेषण करना।
- **पंचम-सोपान**—समस्या को पहचानना।
- **षष्टम-सोपान**—समस्या के क्षेत्र की व्यवस्था करना।
- **सप्तम-सोपान रूपरेखा** (Block Diagram)—समस्या के क्षेत्र का निर्धारण प्रणाली विश्लेषण का अन्तिम सोपान माना जाता है।
- प्रणाली विश्लेषण के प्रत्यय तथा सिद्धान्तों ने व्यवस्था, शासन, व्यापार, उद्योग कारखानों तथा सेना को अधिक प्रभावित किया है। इसका शिक्षा प्रणाली में भी अधिक प्रयोग किया जा सकता है। शैक्षिक-प्रशासन, शैक्षिक-व्यवस्था तथा शैक्षिक अनुदेशन को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है। शिक्षा एक प्रणाली है इसके अन्तर्गत अनेकों उपप्रणलियाँ सम्मिलित हैं। भारत में शिक्षा प्रणाली के सम्बन्ध में कई आयोग तथा समितियाँ बैठाई जाती रही हैं वे अपने सुझाव देती रही हैं।
- मूल्यांकन चाहे छात्र का हो, पाठ्यक्रम का हो अथवा कार्यक्रम का हो, प्रत्येक मूल्यांकन को तीन अवस्थाओं से गुज़रना होता है, रैशनल, रूपदेय तथा योगदेय मूल्यांकन। **मूल्यांकन**—रैशनल मूल्यांकन के आधार पर, पाठ्यक्रम उद्देश्य, पाठ्यक्रम प्रारूप पाठ्यक्रम की विधियाँ तथा संबंधित परिणाम पाठ्यक्रम निर्माण को द्वारा तैयार

नोट

किये जाते हैं। **कार्यक्रम मूल्यांकन**–रैशनल मूल्यांकन के आधार पर शैक्षिक कार्यक्रम नियोजित तथा विकसित किये जाते हैं,। नियोजन के लिए कार्यक्रम का प्रारूप इनपुट, प्रक्रियाएँ उत्पादको का विश्लेषण किया जाता है। **छात्र मूल्यांकन**– छात्र मूल्यांकन की प्रक्रिया में भी सबसे पहले रैशनल मूल्यांकन किया जाता है, जिसके अनुसार छात्रों की विभिन्न उपलब्धियों तथा बुद्धि कौशलों के मूल्यांकन हेतु विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का उपयोग किया जाता है।

- विभिन्न शैक्षिक स्तरों पर समाकलित मूल्यांकन किया जाता है।

(*i*) प्रारंभिक शैशवावस्था अथवा अति प्राथमिक स्तर पर मूल्यांकन की आवश्यकता नहीं होती। शिक्षण-अधिगम प्रक्रियाओं को मूल्यांकन से मुक्त रखना चाहिए।

(*ii*) प्राथमिक स्तर पर योगदेय, सतत् तथा विस्तृत मूल्यांकन किया जाता है। कक्षा I तथा II में निरीक्षण तथा मौखिक परीक्षणों द्वारा छात्रों का मूल्यांकन किया जाता है। कक्षा III से IV में निरीक्षण तथा मौखिक परीक्षण के अतिरिक्त मानदण्ड संबंधित परीक्षण लिये जाते हैं।

16.5 शब्दकोश (Keywords)

- **समाकलित**–समग्र योग।
- **निष्पादन**–समापन।

16.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. समेकित मूल्यांकन अधिगम की विधियों की व्याख्या कीजिए।
2. समाकलिक मूल्यांकन से आप क्या समझते हैं?
3. मूल्यांकन के कितने चरण होते हैं? विवेचन कीजिए।
4. विभिन्न शैक्षिक अवस्थाओं में मूल्यांकन की भूमिका की समीक्षा कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. रैशनल मूल्यांकन 2. रूपदेय 3. योगदेय मूल्यांकन 4. छात्र मूल्यांकन
5. आवश्यकता।

16.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—17: मार्किंग प्रणाली : आवश्यकता, समस्याएँ, घटक (Marking System: Need, Problems, Components)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

17.1 मार्किंग प्रणाली का अर्थ (Meaning of Marking System)

17.2 मार्किंग प्रणाली की आवश्यकता (Need of Marking System)

17.3 मार्किंग प्रणाली के घटक (components of Marking System)

17.4 मार्किंग प्रणाली में प्राप्तांकों का अनुमान (Measurement of Scores in Marking System)

17.5 मार्किंग प्रणाली के लाभ (Advantages of Marking System)

17.6 मार्किंग प्रणाली की समस्याएँ (Problems of Marking System)

17.7 सारांश (Summary)

17.8 शब्दकोश (Keywords)

17.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

17.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- मार्किंग के अर्थ आवश्यकता, घटक और लाभ को समझने एवं इसकी मार्किंग प्रणाली में प्राप्तांकों के अनुमापन का विवेचन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

अंक प्रणाली, शिक्षा प्रणाली का एक अभिन्न अंग है। अंक एक प्रकार के प्रदर्शक सूचक हैं, जो छात्रों के ज्ञान तथा विषय वस्तु की जानकारी को प्रदर्शित करते है। इस अध्याय में विद्यार्थी मार्किंग अथवा अंक प्रणाली के विषय में अध्ययन करेंगे।

17.1 मार्किंग प्रणाली का अर्थ (Meaning of Marking System)

मार्किंग प्रणाली मूलतः छात्रों के ज्ञान तथा बौद्धिक क्षमताओं का प्रदर्शन सूचक है। साधारण परीक्षा में पूर्णांक 100 आवंटित किये जाते हैं। इसकी अवधारणा यह है कि छात्रों की क्षमताओं को 0 से 100 के पैमाने पर शुद्ध रूप में प्रदर्शित किया जाता है। मानवीय क्षमताएँ तीन प्रकार की होती हैं—ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक। मानवीय योग्यताओं का मापन अधिक संवेदनशील है।

नोट

17.2 मार्किंग प्रणाली की आवश्यकता (Need of Marking System)

मार्किंग प्रत्येक परीक्षा में की जाती है जिससे छात्रों के अधिगम तथा ज्ञान कौशल की पूर्ण जानकारी प्राप्त की जा सके। इसकी आवश्यकता विभिन्न समूहों को विभिन्न उद्देश्यों के लिए है जो निम्नलिखित है–

(*i*) **छात्रों की आवश्यकता**–छात्रों को मार्किंग की आवश्यकता पड़ती है

(*ii*) अधिगम में अपने कमज़ोर तथा शक्तिशाली बिन्दुओं को समझने के लिए

(*iii*) अपने सहपाठियों से अपनी प्रदर्शन क्षमता की तुलना करने के लिए।

(*iv*) विविध विषयों में अपनी क्षमताएँ तथा सीमाएँ जानने के लिए।

17.2.1 अभिभावकों की आवश्यकताएँ

- अपने बच्चे की कक्षा में शैक्षिक स्थिति जानने के लिए।
- यदि बच्चे को किसी प्रकार की शैक्षिक समस्या है, तो उसे जानकर दूर करने के लिए।
- अपने बच्चे के भविष्य की योजना बनाने के लिए।
- बच्चे की विषय रूचि जानने के लिए, जिससे वह उसे उच्च शिक्षा में सही विषय चुनने में निर्देशित कर सकें।

17.2.2 अध्यापकों की आवश्यकता

- जो विषय वस्तु छात्र को पढ़ाई गई है, उसे मूल्यांकित करने के लिए।
- छात्र की कमज़ोरियाँ जानकर उसे उपचारात्मक शिक्षण प्रदान करने के लिए।
- अपनी शिक्षण पद्धतियों तथा विधियों के बारे में जानने के लिए, वे अपनी वर्तमान शिक्षण प्रणाली में परिवर्तन ला सकें।
- छात्रों के बौद्धिक स्तर को जानने के लिए।

17.2.3 प्रशासकों या प्रधानाध्यापकों की आवश्यकता

- अन्य विद्यालयों के छात्रों से शैक्षिक तुलना करने के लिए।
- अपने विद्यालय के छात्रों को मानक शैक्षिक लक्ष्यों तक पहुँचाने के लिए।
- अध्यापकों का विषय-विशेष पर अधिकार का मूल्यांकन करने के लिए।

17.2.4 पाठ्यक्रम निर्माण समिति के लिए

- निश्चित पाठ्यक्रम का उद्देश्यों के अनुसार समीक्षा करने के लिए।
- सिलेबस के आउटडेटेट होने पर उसका पुनर्निर्माण करने के लिए।
- परीक्षण की वैधता तथा विश्वसनीयता जाँचने के लिए।
- इस प्रकार अंक प्रणाली द्वारा विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है।

17.3 मार्किंग प्रणाली के घटक (Components of Marking System)

मार्किंग प्रणाली विभिन्न घटकों पर आधारित है। अंकों का प्रयोजन, विभिन्न रूप से देखने तथा समझने पर किया जाता है। परीक्षण में अंक, गृहकार्य प्रोजेक्ट, तथा कक्षा में योगदान दिया जाता है। प्रत्येक घटक का अधिभार, विभिन्न घटकों में प्राप्त अंकों के माध्य तथा मानक विचलन पर दिया जाता है।

17.4 मार्किंग प्रणाली में प्राप्तांकों का अनुमान (Measurement of Scores in Marking System)

शिक्षा तथा मनोविज्ञान में परिमापंकों के अनुमापन की बहुत सी स्थितियों में आवश्यकता पड़ती है। जब हमें विद्यार्थियों के दो ऐसे समूहों की किसी विषयगत योग्यता अथवा मानसिक योग्यता की परस्पर तुलना करनी होती है जिनकी दो

नोट

भिन्न परीक्षाओं अथवा दो भिन्न परीक्षकों द्वारा परीक्षा ली गई है तो हम उन परीक्षाओं के प्राप्तांकों के आधार पर ऐसा नहीं कर सकते। अत: हम प्रत्येक समूह के विद्यार्थी के प्राप्तांकों का अनुमापन करके पहले उसको एक समान पैमाने के माध्यम से व्यक्त करते हैं। दोनों समूहों के प्राप्तांकों का एक पैमाना हो जाने पर उनकी तुलना सम्भव हो जाती है। तब हम बता सकते हैं कि कौन विद्यार्थी समूह उस योग्यता के सम्बन्ध में श्रेष्ठतर है। भिन्न परीक्षाओं अथवा परीक्षकों के मूल्यांकन की मापक इकाइयां भी अलग-अलग होती हैं। अत: उनकी उन्हीं इकाइयों के आधार पर तुलना नहीं की जा सकती। उदाहरणार्थ, I.Q. तथा Exam marks को जोड़ा नहीं जा सकता। उदाहरण के तौर पर यदि हम हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, गणित, विज्ञान आदि पांचों विषयों में परीक्षाओं के प्राप्ताँकों के कुल योग के आधार पर यह जानना चाहते हैं कि कौन विद्यार्थी किससे श्रेष्ठ है तो विभिन्न परीक्षकों द्वारा दिये गये अंकों को सीधा जोड़कर ऐसा नहीं कर सकते क्योंकि प्रत्येक परीक्षा की मापक इकाइयाँ तथा प्रत्येक परीक्षा के मूल्यांकन का मानदंड भिन्न होगा। अत: उनको पहले हम किसी एक समान इकाइयों वाले अनुमाप (scale) में बदलेंगे। तब उनको जोड़ा जा सकता है। इंचों को इंचों में ही जोड़ा जा सकता है सेंटीमीटर में नहीं। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि परिमापाँकों (scores of measurement) को परस्पर जोड़ने तथा उनकी तुलना करने के लिये उनको किसी समरूप या उभयनिष्ठ अनुमाप (common scale) में बदलना पड़ता है। ये अनुमाप (scale) साँख्यिकी में कई प्रकार के होते हैं। इनके माध्यम से बदले गये परिमापाँकों को परिवर्तित परिमापाँक (transformed scores) अथवा व्युत्पन्न परिमापाँक (derived scores) कहते हैं। परीक्षण प्राप्तांकों को व्यक्त करने के दो मुख्य ढंग हैं–(1) मूल प्राप्तांक (2) मानकीय परीक्षण अथवा व्युत्पन्न परिमापाँक (derived scores) कहते हैं। परीक्षण प्राप्तांकों को व्यक्त करने के दो मुख्य ढंग हैं–(1) मूल प्राप्तांक (2) मानकीय परीक्षण अथवा व्युत्पन्न परिमापाँक।

क्या आप जानते हैं परिमापाँकों के अनुमापन से एक सुविधा और भी होती है वह यह कि भिन्न-भिन्न परीक्षाओं अथवा योग्यताओं के विभिन्न परिमापकों को अनुमापन द्वारा एक समान अनमाप (Scale) में परिवर्तित करके परस्पर जोड़ा भी जा सकता है।

मूल प्राप्ताँक तथा व्युत्पन्न प्राताँक (Raw scores and Derived Scores)—मूल प्राप्ताँक अपने में अर्थहीन होते हैं। उनकी कोई उपयोगिता नहीं होती। साधारणतया: एक परीक्षा द्वारा प्राप्त परिमापाँक की दूसरी परीक्षा द्वारा प्राप्त परिमापाँक से तुलना नहीं की जा सकती। उदाहरणार्थ, एक विद्यार्थी की स्टेनफोर्ड बिने परीक्षा द्वारा प्राप्त I.Q. 120 है और प्रोग्रेसिव मैट्रिस द्वारा प्राप्त परिमापाँक 85 है तो यह नहीं कहा जा सकता कि किसमें उसकी बुद्धि प्रखर है क्योंकि दोनों परीक्षाओं की मापक इकाइयाँ भिन्न हैं। इसी प्रकार हम उपरोक्त दोनों प्राप्त परिमापाँकों (obtained scores) को जोड़ भी नहीं सकते। यह समस्या ठीक वैसी ही है जैसी गणित में 3/4, 2/3, 1/5 को जोड़ने की जिनको बिना सबका हर समान किये सीधे नहीं जोड़ा जा सकता। सबका हर समान कर लेने पर उनको इन परिवर्तित अथवा व्युत्पन्न भिन्नों 45/60, 40/60, 12/60 के रूप में लिखा जा सकता है। ऐसा कर लेने पर फिर उनको सीधे जोड़ा भी जा सकता है और उनकी परस्पर तुलना भी की जा सकी है। ऐसे ही समान हर (common denominator) की आवश्यकता मानसिक परीक्षाओं के परिमापाँक किसी व्यक्ति के कार्य सम्पादन का संख्यात्मक विवरण है जो सामान्यक पर आधारित होता है। किसी समूह विशेष के कार्य सम्पादन का संख्यात्मक विवरण ही उसके सामान्य होते हैं जिनको कई ढंगों में व्यक्त किया जाता है। इस प्रकार व्युत्पन्न परिमापाँक इस बात की और संकेत करता है कि सम्पूर्ण समूह मे किसी व्यक्ति की क्या स्थिति (position) है।

व्युत्पन्न परिमापाँकों की क्रिया को साँख्यिकी में अनुमापन (scaling) अथवा परिमापाँकों का रूपान्तर (transformation of scores) भी कहा जाता है। **फर्गूसन** के अनुसार, "परिमापाँकों का रूपान्तरण संख्यात्मक निरीक्षण फलों की राशियों में ऐसा क्रमबद्ध परिवर्तन कर देना है कि जिससे उनकी कुछ विशेषताओं में परिवर्तन हो जाता है तथा कुछ

नोट

अपरिवर्तित रहती है।" इस सम्बन्ध अनुमापन (scaling) अथवा परिमापाँकों के रूपान्तरण को व्यक्त करने के मुख्यतया: निम्न प्रकार है–

1. सिग्मा या जैड प्राप्ताँक (Sigma or Z-scores)–परिमापाँक मौलिक परिमापाँकों (original scores) को सिग्मा अनुमाप (σ-scale) की इकाइयों में परिवर्तित कर दने पर प्राप्त होते हैं। सिग्मा स्केल का औसत (Mean) सदैव शून्य होता है तथा वह स्केल के ठीक बीच में स्थित रहता है। यह शून्य (zero) ही स्केल की इकाइयों का अभ्युद्देश्य बिन्दु (point of reference) होता है। इसके ऊपर-नीचे दोनों और σ इकाइयाँ रहती हैं जो नीचे ऋणात्मक (negative) तथा ऊपर धनात्मक (positive) चिन्हों द्वारा व्यक्त की जाती हैं। सम्पूर्ण स्केल की लम्बाई $\pm 3\sigma$ होती है जिससे σ सदैव समेक (unity) अर्थात् 1.0 रहता है। नीचे के चित्र से यह स्पष्ट हो जायेगा–

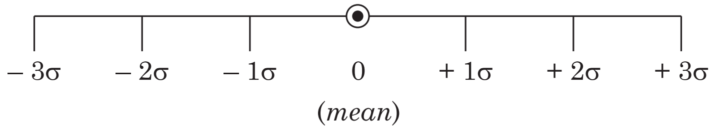

σ- परिमापाँकों (σ-scores) को Z-परिमापाँक (Z-scores) अथवा संक्षिप्त परिमापाँक (reduced scores) भी कहते हैं। Z-परिमापाँक वितरण के मानक विचलन (SD) के आधार पर मध्यमान से व्यक्ति के प्राप्ताँकों की दूरी व्यक्त करते हैं। दूसरे शब्दों में यह इंगित करते हैं कि प्राप्त किये मूल प्राप्ताँक किसी वितरण के मध्यमान से कितने मानक विचलन (SD) विचलित हैं। Z प्राप्ताँक ज्ञात करने के लिये निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$Z = \frac{X - M}{\sigma}$$

जहाँ, X = मूल प्राप्तांक

M = मूल प्राप्तांकों का मध्यमान

σ = मूल प्राप्ताँकों का मानक विचलन

उदाहरणार्थ, मान लीजिये मीनू को गणित की 8वीं कक्षा की परीक्षा में 55 अंक प्राप्त होते हैं और विद्यार्थियों के पूरे समूह अथवा कक्षा का मानक विचलन (SD) 10 है तथा औसत 40 है तो σ-स्केल के अनुसार स्केल पर उसकी स्थिति औसत से $\frac{X - M}{\sigma} = \frac{55 - 40}{10} = \frac{15}{10} = 1.5\sigma$ ऊपर होगी अर्थात् σ-स्केल में रूपान्तरण करने पर उसका प्राप्तांक $+1.5\sigma$ होगा। इसी प्रकार, मोहिनी को गणित की किसी दूसरे स्कूल की 8वीं कक्षा की परीक्षा में 65 अंक प्राप्त होते हैं जबकि उस स्कूल की पूरी कक्षा के प्राप्तांकों का औसत 50 तथा (SD) 15 है। देखने पर लगता है कि मोहिनी के प्राप्ताँक मीनू से अधिक हैं लेकिन σ-परिमापाँकों में रूपांतरण करने पर स्थिति बदल जायेगी। दूसरी स्थिति में मोहिनी का σ-परिमापाँक 65–50/15 = 1σ होगा अत: मीनू की गणितीय योग्यता मोहिनी से अधिक अच्छी है।

परिभाषा के रूप में, सिग्मा प्राप्तांक को **जेम्स ड्रेवर (james Drever)** के शब्दों मे इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है। "Z प्राप्तांक σ के रूप में व्यक्ति का वह प्राप्तांक है जहाँ मूल प्राप्ताँक में से मध्यमान प्राप्तांकों को घटाकर व्यक्ति का विचलन प्राप्तांक ज्ञात कर लिया जाता है। एवं फिर मानक विचलन (SD) से उस विचलन प्राप्तांक को भाग देकर Z- प्राप्तांक या σ-प्राप्तांक ज्ञात कर लिया जाता है। (Sigma score in terms of sigma is that deviation from the mean divided by σ with sign plus or minus according it is above or below the mean)

इन रूपान्तरित σ-परिमापाँकों के साथ एक असुविधा यह होती है कि वे धनात्मक तथा ऋणात्मक दोनों आते हैं जिसके फलस्वरूप उनके प्रयोग में कठिनाई उत्पन्न होती है तथा समझने में भी असुविधा होती है। साथ ही, इनके मान दशमलव भिन्नों में आते हैं जिससे उनके प्रयोग में और भी असुविधा होती है। फिर भी, इन प्राप्तांकों का अपना महत्व है। **हेण्डरसन** (Henderson) ने इस महत्व को स्वीकारते हुए लिखा है।

नोट

> नोट्स “Z-प्राप्तांक के साथ हम निश्चित रूप से यह कह सकते हैं कि किसी भी श्रृंखला में प्रत्येक वितरण का विचलन समरूप होगा एवं कोई भी प्राप्तांक अनावश्यक रूप से अभिनीत मुक्त होगा।”

(With Z-Scores we ensure that the deviation of each distribution in the series is uniform and no score is unduly biased) इसी तथ्य को **नुनली (Nunnally)** महोदय इस प्रकार व्यक्त करते हैं “व्यावहारिक उद्देश्यो के लिये यह बहुधा उपयोगी होता है कि परीक्षण प्राप्तांकों को Z-प्राप्तांकों में रूपान्तरित कर व्यक्त करें।” (For practical purposes it is usually advantageous that the test scores may be expressed in converting Z-Scores)

(2) प्रमाप अंक (Standard Scores)—σ-परिमापाँकों की उपरोक्त असुविधाओं को दूर करने के लिये उनको एक दूसरे स्केल के माध्यम से बदल कर लिखा जाता है। इन रूपान्तरित σ-परिमापाँकों को प्रमाप अंक (standard scores) कहते हैं। प्रमाप अंकों (standard scores) की स्थिति में σ-परिमापाँकों के *M* तथा *S.D.* जो क्रमशः *0* तथा *1* होते हैं को बदल कर उनके स्थान पर ऐसे *M* तथा *S.D.* रख लिये जाते हैं कि उनके द्वारा जो रूपान्तरित आते हैं वे सदा पूर्णांक होते हैं तथा सभी धनात्मक होते हैं। यही प्रमापाँक (Standard Scores) कहलाते हैं। प्रमापाँकों के *M* तथा *SD* कुछ भी हो सकते हैं। कभी M = 100, SD = 15 तो कभी M = 50, SD = 10 रख लिया जाता है। यह सुविधा सामग्री (data) पर निर्भर करती है। **आर्मी जनरल क्लासिफीकेशन टेस्ट** के परिमापाँक (scores) ऐसे प्रमापाँकों (standard scores) में व्यक्त किये जाते हैं जिनके वितरण का M = 100 तथा SD = 20 होता है। इसी प्रकार **वैच्सलर बैलुवी बुद्धि परीक्षा** के परिमापाँकों को भी प्रमाँकों में व्यक्त किया गया है। किन्तु इन परिमापाँकों के M तथा SD क्रमशः 10 व 3 होते हैं। **ग्रेजुएट रेकार्ड एक्जामीनेशन** के प्राप्तांकों को जिन प्रमापाँकों (standard scores) में बदला जाता है उनके M तथा SD क्रमशः 500 और 100 होते हैं।

प्राप्ताँकों को प्रमापाँकों (standard scores) में बदलने का सूत्र निम्नलिखित है–

$$X = \frac{\sigma_X}{\sigma_Y}(Y - M_Y) + M_X$$

जहाँ, X = प्रमापाँक (standard scores)

σ_X = मानक विचलन प्रमापाँक का

σ_Y = मानक विचलन (प्राप्त मूल अंकों का)

Y = प्राप्तांक (जिसे प्रमापाँक में रूपान्तरित करना है)

M_Y = औसत (प्राप्त मूल अंकों का)

M_X = औसत प्रमापाँकों का जिनमें प्राप्ताँकों को बदलना है)

उदहरणार्थ, मान लीजिए एक परीक्षा के प्राप्ताँकों के विवरण का M = 90, SD =15 तथा उसमें एक विद्यार्थी अनुभाव के प्राप्ताँक 66 हैं तथा अनुराग के 116 हैं तो अनुभाव तथा अनुराग दोनों के प्राप्ताँकों को ऐसे प्रमापाँकों में बदलों जिनका M = 100 तथा SD = 20 है।

ज्ञात है, $X = \frac{\sigma_x}{\sigma_y}(Y - M_y) + M_x$

अतः अनुभाव का प्राप्ताँक $= \frac{20}{15}(66 - 90) + 100$

नोट

$$= \frac{4}{3}(-24) + 100$$

$$= -32 + 100 = 68$$

इसी प्रकार अनुराग का प्रमापाँक $= \frac{20}{15}(116 - 90) + 100$

$$= \frac{4}{3}(26) + 100$$

$$= \frac{104}{3} + 100$$

$$= 34.6 + 100$$

$$= 134.6$$

(3) टी–परिमापाँक (T-Scores)— Z-परिमापाँकों की एक मुख्य सीमा यह होती है कि इनमें दशमलव चिन्हों तथा ऋणात्मक एवं धनात्मक चिन्हों की असुविधा के कारण तुलनात्मक अध्ययन करना कठिन हो जाता है। साथ ही σ-स्केल इस उपकल्पना (Hypothesis) पर आधारित है कि जिस अंक वितरण को s-स्केल में परिवर्तित किया गया है वह सम–वितरित (normally distributed) है। परन्तु बहुत बार ऐसा नहीं होता। अतः उस सामग्री में जिसका वितरण सम (*normal*) नहीं है, σ-स्केल यथार्थ नहीं होता। इन सीमाओं के कारण ऐसी स्थिति में टी–परिमापाँक का प्रयोग अधिक उपयोगी रहता है। टी–स्केल में इस दोष को दूर करने के लिये पहले आवृत्ति वितरण (frequency *distribution*) को समनिष्ठ (normalized) कर लिया जाता है फिर उनका अनुमापन (scaling) किया जाता है। इसीलिये टी–परिमापाँकों को प्रसामान्यीकृत प्रमापाँक (normalized standard scores) कहते हैं जिनका मापनी पर औसत (Mean) = 50 तथा मानक विचलन (SD) = 10 होता है। टी–स्केल की खोज **मैककाल (*Mc call*)** ने की थी। उन्होंने प्रारम्भिक (elementary) कक्षाओं के लिये पढ़ने की मनोवैज्ञानिक परीक्षाओं के बनाने में सबसे पहले टी–स्केल का प्रयोग किया था। प्रथम टी–स्केल का आधार 12 वर्षीय 500 विद्यार्थियों के अर्जित पठन–परिमापाँक (reading scores) थे। उसके पश्चात् टी–स्केल का प्रयोग भिन्न–भिन्न प्राप्ताँकों कक्षाओं तथा अवस्थाओं को लेकर किया गया है।

टी–स्केल का प्रयोग सामान्यतः तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से किया जाता है जिसका सम्बन्धित सूत्र निम्न है—

$$T = 50 + 10\,\frac{(X - M)}{\sigma}$$

or, $T = 50 + 10\,Z$

जहाँ, X = व्यक्ति का मूल प्राप्ताँक

M = समूह का औसत प्राप्ताँक

s = प्राप्ताँक के वितरण का मानक विचलन

उदाहरणार्थ, मान लीजिये किन्हीं दो परीक्षणों के मध्यमान तथा मानक विचलन इस प्रकार हैं—

	Test A	Test B
मध्यमान	65	50
मानक विचलन	15	10

अब, मान लीजिये मीनाक्षी को परीक्षण 'A' में 70 अंक तथा परीक्षण 'B' में 60 अंक मिलते हैं तो उसके टी–प्राप्ताँक निम्न होंगे—

नोट

Test A	Test B
$T = 50 + 10 \frac{(70-65)}{15}$	$T = 50 + 60 \frac{(60-50)}{10}$
$= 50 + 10 \times .3$	$= 50 + 10 \times 1$
$= 50 + 3$	$= 50 + 10$
$= 53$	$= 60$

उपरोक्त दोनों T-Scores की तुलना के आधार पर हम कह सकते हैं कि मीनाक्षी की योग्यता परीक्षण 'B' में अधिक है।

टी-परिमापाँकों की शैक्षिक परिमाप के क्षेत्र में बड़ी उपयोगिता है। वास्तव में टी-परिमापाँक प्राप्ताँकों (raw scores) के शताँशीय मान (percentiles) ही हैं। यदि 75 प्राप्ताँक का टी-परिमापाँक 60 है तो इसका अर्थ होगा कि 60% विद्यार्थी 75 से कम 40% विद्यार्थी 75 से अधिक अंक प्राप्त करते हैं।

टी-परिमापाँकों का प्रयोग बहुत-सी परिस्थितियों में किया जा सकता है। टी-परिमाप मापन (measurement) की एक अत्यन्त सुविधाजनक एवं उपयुक्त इकाई है। उसके द्वारा योग्यता अथवा क्षमता के बहुत बड़े विस्तार (wide range of talent) का परिमापन किया जा सकता है क्योंकि उसकी इकाइयों का विस्तार 0 से 100 तक रहता है।

विभिन्न परीक्षाओं के प्राप्ताँकों को टी-परिमापाँकों में बदल देने पर वे एक ही स्केल तथा समान इकाइयों में बदल जाते हैं। अत: उनकी परस्पर तुलना की जा सकती है और उनको जोड़ा भी जा सकता है।

टी-परिमापाँकों के महत्व को स्वीकारते हुए **गैरिट (Garrett)** महोदय लिखते हैं–"T-Scores have general applicability, a convenient unit and they cover a wide range of talent. Besides these advantages, T-Scores form different tests of comparability and have the same meaning since reference is always to a standard of 100 units based upon N.P.C."

उपरोक्त विशेषताओं के बावजूद टी-परिमापाँकों में एक दोष भी होता है और वह यह है कि एक अंक-वितरण जो सम-वितरित (normally distributed) नहीं है उसे भी झूठ-मूठ सम-वितरित मान लिया जाता है।

(4) H-प्राप्ताँक (Hull Scores)–H-प्राप्ताँक T-प्राप्ताँक के ही समान है। अन्तर केवल यह है कि T-प्राप्ताँक में जहाँ Z-प्राप्ताँकों को 10 से गुणा किया जाता है वहाँ H-प्राप्ताँक के लिये Z-प्राप्ताँक में 14 से गुणा की जाती है। इस प्रकार H-प्राप्ताँक ज्ञात करने का रूपान्तरित सूत्र निम्न हो जाता है–

$$H = 50 + 14 Z$$

जहाँ, $Z = \frac{X - M}{\sigma}$

(5) C-प्राप्ताँक (C-Scores)–C-परिमापाँक भी T-परिमापाँक की भाँति सामान्यीकृत मानक प्राप्ताँक (standard normalised scores) है। इनका प्रतिपादन **जे.पी. गिलफर्ड (J.P. Guilford)** ने किया। इस C-स्केल के अन्तर्गत मापनी के प्राप्तांकों का प्रसार 0 से 10 तक होता है। कहने का तात्पर्य है कि मूल परिमापाँकों का प्रसार (range) कुल 11 इकाइयों में विभक्त होता है जिसका औसत (M) = 5 तथा मानक विचलन (SD) = 2 होता है।

C तथा T-परिमापाँक निम्न समीकरण के रूप में एक दूसरे से सम्बन्धित रहते हैं–

$$T = 5C + 25$$

or, $$C = .2\,T - 5$$

C-परिमापाँकों की मुख्य सीमा यह है कि इन्हें दो अंकों 0–1, 1–2 में लिखा जाता है अत: कम्प्यूटर से गणना करते समय पंच कार्ड में दो कॉलमों (column) की जरूरत पड़ती है जिससे इनका प्रयोग अधिक खर्चीला हो जाता है।

(6) स्टेन प्राप्ताँक (Sten-Score)– आर. बी. कैटिल को जाता है। इस स्टेन-मापनी पर व्यक्ति 1 से 10 तक अंक प्राप्त कर सकता है जिसका औसत प्राप्ताँक 5.5 होता है। परिभाषा के रूप में हम कह सकते हैं कि "ये वे प्रतिमान सामान्यीकृत प्राप्ताँक हैं जिनका मध्यमान 5.5 तथा मानक विचलन 2 होता है।" (Sten scores are standard normalized score with a mean S.D. equal to 2)

नोट

सूत्र रूप में स्टेन-परिमापाँक निम्न प्रकार व्यक्त किये जा सकते हैं—

$$\text{स्टेन प्राप्ताँक} = 5\cdot5 + 2\,\frac{(X - M)}{\sigma}$$

or $$= 5\cdot5 + 2Z$$

स्टेन-परिमापाँकों को शतांशीय (percentiles) में भी रूपान्तरित किया जा सकता है जिससे यह ज्ञात हो सके कि अमुक व्यक्ति का 100 व्यक्तियों में क्या स्थान है?

(7) स्टेनाइन-प्राप्ताँक (Stanine Scores)—स्टेनाइन परिमापाँक स्टेनाइन स्केल द्वारा प्राप्त होते हैं। स्टेनाइन स्टेन्डर्ड नाइन STANDARD NINE का ही संक्षिप्त शब्द है। टी-स्केल की इकाइयाँ 0 से 100 तक होती हैं, स्टेनाइन में 1 से 9 तक। अत: स्टेनाइन एक प्रकार से टी-स्केल का ही संक्षिप्त रूप है। दोनों के निर्माण का आधार सम-सम्भावना वक्र (NPC) है। स्टेनाइन स्केल में एक इकाई .5σ होती है। स्टेनाइन अनुमाप में समवक्र (normal curve) के क्षेत्रफल को 9 श्रेणियों में बाँट देते हैं। प्रत्येक श्रेणी में क्षेत्रफल के भिन्न-भिन्न प्रतिशत आँकड़े आते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि स्टेनाइन का प्रसार 1 (निम्नतम) से 9 (उच्चतम) तक होता है तथा इस स्केल का औसत (*M*) सदैव 5 होता है। न्यूनतम स्टेनाइन का अर्थ है वे व्यक्ति जो इस स्टेनाइन में सम्मिलित हैं समूह में निम्नतम अंक पाने वाले व्यक्ति हैं। इसी प्रकार उच्चतम स्टेनाइन का अर्थ है वे व्यक्ति जो इस स्टेनाइन में सम्मिलित हैं समूह में उच्चतम अंक पाने वाले व्यक्ति हैं। यह मापनी सम-इकाइयों (*equal units*) को व्यक्त करती है, उदाहरणार्थ-स्टेनाइन 6 एवं 7 में वही अन्तर होगा जो कि 3 व 4 में हैं।

सूत्र रूप में स्टेनाइन प्राप्ताँक को निम्न प्रकार व्यक्त किया जा सकता है—

$$\text{स्टेनाइन प्राप्ताँक} = 5 + 2\,\frac{(X - M)}{\sigma} \text{ or, } 5 + 2Z$$

स्टेनाइन 9 एवं स्टेनाइन 1 को छोड़कर सभी स्टेनाइन .50 s के बराबर होते हैं जैसे स्टेनाइन 5 में वे व्यक्ति आयेंगे जो *M* व ± 25σ के बीच आते हैं। यही बात **सीशोर** ***(Seashore)*** ने अपने लेख '*Recent Trends in Psychology*' में इस प्रकार व्यक्त की है—"Except for stanine 9, the top and stanine 1, the bottom these groups are spaced in half-sigma units. Thus, Stanine 5 is defined as including the people who are within + .25σ of mean. Stanine of 6 is the group defined by the half-σ distance on the baseline between + .25σ and + .75σ. Stanines 1 and 9 include all persons who are below -1.7σ and above + 1.75σ respectively."

मूल प्राप्ताँकों को स्टेनाइन में रूपान्तरित करने की सरल विधि यह है कि प्राप्ताँकों को उनके विस्तार के अनुसार व्यवस्थित किया जाता है तथा NPC में निम्न प्रतिशत के आधार पर उन्हें स्टेनाइन प्रदान किया जाता है।

तालिका

प्रतिशत	4	7	12	17	20	17	12	7	4
स्टेनाइन	1	2	3	4	5	6	7	8	9

अब, मान लीजिये किसी समूह में 100 व्यक्ति हैं तो उसमें से निम्नतम अंक पाने वाले 4 व्यक्तियों को 1 स्टेनाइन प्राप्त होगा, उससे ऊपर के 7 व्यक्तियों को 2, उससे ऊपर 12 व्यक्तियों को 3, उससे ऊपर 17 व्यक्तियों को 4 आदि-आदि।

स्टेनाइन स्केल की मुख्य विशेषताएँ निम्न हैं—

1. स्टेनाइन स्केल का निर्माण आसान होता है तथा उसमें अधिक समय भी नहीं लगता।
2. स्टेनाइन को समझना तथा उनकी व्याख्या करना सरल होता है।
3. स्टेनाइन योग्यता अथवा क्षमता की समान इकाइयों का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनका पारस्परिक अन्तर आरम्भ से अन्त तक बराबर रहता है अर्थात्, 9-8 = 8-7 = 7-6 = 6-5 = 5-4 = 4-3 = 3-2 = 2-1। अत: उनको जोड़ा जा सकता है और भिन्न-भिन्न परीक्षाओं के स्टेनाइन की परस्पर तुलना भी की जा सकती है।

नोट

4. स्टेनाइन अधिक विश्वसनीय (reliable) होते हैं।
5. टी-स्केल की अपेक्षा स्टेनाइन स्केल काफी संक्षिप्त होता है।

उपरोक्त विशेषताओं की निश्चित शब्दों में **ऐडम्स (Adams)** ने इस प्रकार व्यक्त किया है "परीक्षण प्रदत्त के विवेचन में स्टेनाइन के प्रयोग को बहुधा प्राथमिकता दी जाती है। इस विधि का प्रयोग व्यक्तिगत चयन तथा शैक्षिक निर्देशन में भी उपयोगी होता है।"

(8) शताँशीय परिमापाँक (Percentiles)—शतांशीय, मापनी पर एक ऐसा बिन्दु है जिसके नीचे वितरण का एक निश्चित प्रतिशत आता है। उदाहरणार्थ, यदि किसी व्यक्ति को एक परीक्षण पर 35वां शतांशीय क्रम (percentile rank) प्राप्त होता है तो इसका अर्थ है कि वह व्यक्ति समूह में 35% व्यक्तियों से ऊपर है। दूसरे शब्दों में, शतांशीय क्रम वितरण में किसी विशेष प्राप्ताँक की शतांशीय स्थिति को दर्शाता है। इसी प्रकार यदि 60% विद्यार्थी 33 से कम अंक प्राप्त करते हैं तो 33 मूल प्राप्ताँक को 60वां शतांश (P_{60}) के रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है। **एनेस्टेसी (Anastasi)** के शब्दों में, "Not only do percentiles show where the individual stands in the normative sample but they are also useful in comparing the individual's own performance on different tests."

शतांशीय क्रम ज्ञात करने के लिये निम्न सूत्र प्रयोग में लाया जाता है—

$$X_p = L + \frac{i}{f}\left(\frac{PN}{100} - T\right)$$

जहाँ, X_p = शतांशीय क्रम के समान परीक्षण-प्राप्ताँक

L = X_p पड़ने वाले वर्गान्तर की निम्न सीमा

i = आवृत्ति वितरण में वर्गान्तर का आकार

f = X_p पड़ने वाले वर्गान्तर में आवृत्तियाँ

N = प्राप्ताँक योग

T = निम्न सीमा तक आवृत्तियों का योग

सामान्य सम्भावना वक्र (NPC) की सहायता से भी शतांश बिन्दु (Percentile point) में प्रतिशत दिया होता है तथा यह ज्ञात किया जाता है कि निम्नतम अमुक प्रतिशत किस बिन्दु या प्राप्तांक पर आता है। उदाहरणार्थ, यदि किसी NPC में $M = 100$ तथा $\sigma = 10$ हो तो इस स्थिति में P_{70} की गणना का मान निम्न होगा—

$$\begin{aligned} P_{70} &= M + .52s \\ &= 100 + .52 \times 10 \\ &= 100 + 5.20 \\ &= 105.20 \end{aligned}$$

अतः हम कह सकते हैं कि 105.20 वह प्राप्तांक है, जिसके नीचे विवरण के 70 प्रतिशत विद्यार्थी आते हैं। इसी प्रकार P_{40}, P_{60}, P_{80} आदि की गणना भी इसी आधार पर की जा सकती है।

शताँश बिन्दु की भाँति शताँशीय क्रम में भी अंक दिया होता है तथा यह ज्ञात करना होता है कि उस अंक के नीचे कितने प्रतिशत व्यक्ति आते हैं। उदाहरणार्थ, यदि किसी NPC में $M = 65$ तथा $SD = 10$ हो तो इस स्थिति में PR 75 की गणना निम्न प्रकार की जायेगी—

$$\begin{aligned} Z &= \frac{X - M}{\sigma} \\ &= \frac{75 - 65}{10} \\ &= \frac{10}{10} \\ &= 1\sigma = 34.13\% \end{aligned}$$

अर्थात्, 50 + 34.13% = 84.13%

अतः हम कह सकते हैं कि वह व्यक्ति जो 75 अंक प्राप्त करता है अपने समूह में 84.34% अर्थात्, लगभग 84% विद्यार्थियों से ऊपर है।

संक्षेप में, शतांशीय स्केल की प्रमुख विशेषताएँ निम्न हैं—

(1) शतांशीय स्केल की गणना सरलता से की जा सकती है।

(2) इन्हें समझने के लिये किसी विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं पड़ती।

(3) ये प्राप्तांक बच्चों एवं वयस्कों दोनों के लिये समान रूप से उपयोगी है।

(4) ये प्राप्ताँक अन्य प्राप्ताँकों की तुलना में परीक्षण के क्षेत्र में बहुलता से प्रयोग किये जाते हैं।

(5) इन प्राप्ताँकों का प्रयोग विद्यार्थी की उसके समूह में सापेक्षिक स्थिति ज्ञात करने में किया जाता है।

टास्क C-प्राप्तांक क्या होते हैं?

17.5 मार्किंग प्रणाली के लाभ (Advantages of Marking System)

(*i*) परीक्षा में प्राप्त किये गये अंकों द्वारा ग्रेड बिन्दु औसत आसानी से निकाला जा सकता है, जिससे अंकों का मापन सरलता से किया जा सकता है।

(*ii*) अंकों का बाध्य, मानक विचलन, तथा प्राप्तांकों का विभिन्न पैमानों पर परिवर्तन किया जा सकता है।

17.6 मार्किंग प्रणाली की समस्याएँ (Problems of Marking System)

मार्किंग प्रणाली में व्यावहारिक रूप से दो प्रकार की त्रुटियाँ होती हैं।

(*i*) अंकन कर्त्ताओं की विषमता—निबन्धात्मक परीक्षा में अंकनकर्त्ता की त्रुटि सबसे अधिक होती है। एक ही उत्तर पर एक परीक्षण प्रथम श्रेणी के अंक देता है और दूसरा परीक्षक तृतीय श्रेणी के अंक देता है तथा अन्य अनुत्तीर्ण के अंक देता है। इस सन्दर्भ में हारपर की 'नब्बे में दस का शोध कार्य अधिक प्रसिद्ध है। एक उत्तर पुस्तिका को नब्बे परीक्षकों से अंकन करके विश्लेषण किया था, जिसमें भारी विषमता प्राप्त हुई थी।

अन्य त्रुटि यह होती है कि 29 अंक में फेल होता है और 30 अंक में पास हो जाता है। इसी प्रकार 59 में द्वितीय श्रेणी और 60 में प्रथम श्रेणी दी जाती है। इसी प्रकार 59 में द्वितीय श्रेणी और 60 में प्रथम श्रेणी दी जाती है। एक अंक तथा आधे अंक को कम या अधिक देने का क्या आधार हैं? इसका उत्तर परीक्षक नहीं दे सकता है। इसलिए वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं से इन त्रुटियों को दूर कर दिया जाता है, परन्तु निबन्धात्मक परीक्षाओं से इन त्रुटियों को दूर कर दिया जाता है, परन्तु निबन्धात्मक परीक्षाओं को समाप्त नहीं कर सकते हैं। इनकी अपनी विशेषताएं तथा उपयोगिताएँ हैं।

(*ii*) शिक्षण विषयों की विविधता—परीक्षकों की त्रुटि के अतिरिक्त विषयों की विविधा का भी अंकन पर प्रभाव रहता है। गणित तथा विज्ञान विषयों के मूल्यांकन में अपेक्षाकृत शुद्धता होती है। सामाजिक विषयों, भाषाओं के उत्तरों के अंकन में शुद्धता कम होती है, जबकि सभी विषयों में 0 से 100 तक का पैमाना ही प्रयुक्त किया जाता है। गणित में 90 से अधिक अंक भी दिये जाते हैं, जबकि अन्य विषयों में 90 अंक आना बहुत विशिष्ट स्थिति में होता है। 10-100 के पैमाने पर प्रत्येक विषय में छात्रों के अंक वितरित होने चाहिए, परन्तु ऐसा नहीं होता है। विज्ञान के विषयों में 50 अधिकतर 60 से 80 अंक दिये जाते हैं। सामाजिक विषयों में 40 से 60 अंक दिये जाते है। इस प्रकार 0 से 100 पैमाने की सार्थकता विषयों में अलग होती है। सामाजिक विषयों में तथा भाषाओं में 50 से 60 अंक प्राप्त करने वाले छात्रों को बहुत अच्छा माना जाता है, जबकि विज्ञान विषयों में

नोट

50 से 60 अंक प्राप्त करने वालों को सामान्य स्तर का माना जाता है। अत: 0 से 100 पैमाने की अवधारणा सही प्रतीत नहीं होती है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. मूल प्राप्तांक अपने आप में .... होते हैं और इनकी उपयोगिता शून्य होती है।
2. व्युत्पन्न परिमापाँकों की क्रिया को सांख्यिकी में .... भी कहा जाता है।
3. सिग्मा स्केल का औसत (Mean) सदैव .... होता है।
4. टी-स्केल की खोज .... ने की थी।
5. मौलिक परिमापाँकों को स्टेन परिमापाँकों में रूपांतरित करने का श्रेय .... को जाता है।

17.7 सारांश (Summary)

- मार्किंग प्रणाली मूलत: छात्रों के ज्ञान तथा बौद्धिक क्षमताओं का प्रदर्शन सूचक है। साधारण परीक्षा में पूर्णांक 100 आवंटित किये जाते हैं। इसकी अवधारणा यह है कि छात्रों की क्षमताओं को 0 से 100 के पैमाने पर शुद्ध रूप में प्रदर्शित किया जाता है। मानवीय क्षमताएँ तीन प्रकार की होती हैं–ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक। मानवीय योग्यताओं का मापन अधिक संवेदनशील है।
- मार्किंग प्रत्येक परीक्षा में की जाती है जिससे छात्रों के अधिगम तथा ज्ञान कौशल की पूर्ण जानकारी प्राप्त की जा सके। इसकी आवश्यकता विभिन्न समूहों को विभिन्न उद्देश्यों के लिए है जो निम्नलिखित है–
  - (*i*) **छात्रों की आवश्यकता**–छात्रों को मार्किंग की आवश्यकता पड़ती है
  - (*ii*) अधिगम में अपने कमज़ोर तथा शक्तिशाली बिन्दुओं को समझने के लिए
- अभिभावकों की आवश्यकताएँ
- यदि बच्चे को किसी प्रकार की शैक्षिक समस्या है, तो उसे जानकर दूर करने के लिए।
- अपने बच्चे के भविष्य की योजना बनाने के लिए।
- अध्यापकों की आवश्यकता
- जो विषय वस्तु छात्र को पढ़ाई गई है, उसे मूल्यांकित करने के लिए।
- छात्र की कमज़ोरियाँ जानकर उसे उपचारात्मक शिक्षण प्रदान करने के लिए।
- प्रशासकों या प्रधानाध्यापकों की आवश्यकता
- अन्य विद्यालयों के छात्रों से शैक्षिक तुलना करने के लिए।
- अपने विद्यालय के छात्रों को मानक शैक्षिक लक्ष्यों तक पहुँचाने के लिए।
- पाठ्यक्रम निर्माण समिति के लिए
- निश्चित पाठ्यक्रम का उद्देश्यों के अनुसार समीक्षा करने के लिए।
- सिलेबस के आउटडेटेट होने पर उसका पुनर्निर्माण करने के लिए।
- मार्किंग प्रणाली विभिन्न घटकों पर आधारित है। अंकों का प्रयोजन, विभिन्न रूप से देखने तथा समझने पर किया जाता है। परीक्षण में अंक, गृहकार्य प्रोजेक्ट, तथा कक्षा में योगदान दिया जाता है। प्रत्येक घटक का अधिभार, विभिन्न घटकों में प्राप्त अंकों के माध्य तथा मानक विचलन पर दिया जाता है।
- मूल प्राप्ताँक अपने में अर्थहीन होते हैं। उनकी कोई उपयोगिता नहीं होती। साधारणतया: एक परीक्षा द्वारा प्राप्त परिमापाँक की दूसरी परीक्षा द्वारा प्राप्त परिमापाँक से तुलना नहीं की जा सकती। उदाहरणार्थ, एक विद्यार्थी की स्टेनफोर्ड बिने परीक्षा द्वारा प्राप्त I.Q. 120 है और प्रोग्रेसिव मैट्रिस द्वारा प्राप्त परिमापाँक 85 है तो यह नहीं कहा जा सकता कि किसमें उसकी बुद्धि प्रखर है क्योंकि दोनों परीक्षाओं की मापक इकाइयाँ भिन्न हैं। इसी प्रकार हम उपरोक्त दोनों प्राप्त परिमापाँकों (obtained scores) को जोड़ भी नहीं सकते।

नोट

- व्युत्पन्न परिमापाँकों की क्रिया को साँख्यिकी में अनुमापन (scaling) अथवा परिमापाँकों का रूपान्तर (transformation of scores) भी कहा जाता है। **फर्गूसन** के अनुसार, "परिमापाँकों का रूपान्तरण संख्यात्मक निरीक्षण फलों की राशियों में ऐसा क्रमबद्ध परिवर्तन कर देना है कि जिससे उनकी कुछ विशेषताओं में परिवर्तन हो जाता है तथा कुछ अपरिवर्तित रहती है।"
- **सिग्मा या जैड प्राप्तांक (Sigma or Z-scores)**—परिमापाँक मौलिक परिमापाँकों (original scores) को सिग्मा अनुमाप (σ-scale) की इकाइयों में परिवर्तित कर दने पर प्राप्त होते हैं। सिग्मा स्केल का औसत (Mean) सदैव शून्य होता है तथा वह स्केल के ठीक बीच में स्थित रहता है। यह शून्य (zero) ही स्केल की इकाइयों का अभ्युद्देश्य बिन्दु (point of reference) होता है।
- σ-परिमापाँकों की उपरोक्त असुविधाओं को दूर करने के लिये उनको एक दूसरे स्केल के माध्यम से बदल कर लिखा जाता है। इन रूपान्तरित σ-परिमापाँकों को प्रमाप अंक (standard scores) कहते हैं। प्रमाप अंकों (standard scores) की स्थिति में σ-परिमापाँकों के M तथा $S.D.$ जो क्रमश: 0 तथा 1 होते हैं को बदल कर उनके स्थान पर ऐसे M तथा $S.D.$ रख लिये जाते हैं कि उनके द्वारा जो रूपान्तरित आते हैं वे सदा पूर्णांक होते हैं तथा सभी धनात्मक होते हैं।
- Z-परिमापाँकों की एक मुख्य सीमा यह होती है कि इनमें दशमलव चिन्हों तथा ऋणात्मक एवं धनात्मक चिन्हों की असुविधा के कारण तुलनात्मक अध्ययन करना कठिन हो जाता है। साथ ही σ-स्केल इस उपकल्पना (Hypothesis) पर आधारित है कि जिस अंक वितरण को s-स्केल में परिवर्तित किया गया है वह सम-वितरित (normally distributed) है।
- H-प्राप्ताँक T-प्राप्ताँक के ही समान है। अन्तर केवल यह है कि T-प्राप्ताँक में जहाँ Z-प्राप्ताँकों को 10 से गुणा किया जाता है वहाँ H-प्राप्ताँक के लिये Z-प्राप्ताँक में 14 से गुणा की जाती है। इस प्रकार H-प्राप्ताँक ज्ञात करने का रूपान्तरित सूत्र निम्न हो जाता है।
- C-परिमापाँक भी T-परिमापाँक की भाँति सामान्यीकृत मानक प्राप्ताँक (standard normalised scores) है। इनका प्रतिपादन **जे.पी. गिलफर्ड (J.P. Guilford)** ने किया। इस C-स्केल के अन्तर्गत मापनी के प्राप्तांकों का प्रसार 0 से 10 तक होता है। कहने का तात्पर्य है कि मूल परिमापाँकों का प्रसार (range) कुल 11 इकाइयों में विभक्त होता है जिसका औसत (M) = 5 तथा मानक विचलन (SD) = 2 होता है।
- स्टेन-मापनी पर व्यक्ति 1 से 10 तक अंक प्राप्त कर सकता है जिसका औसत प्राप्ताँक 5.5 होता है। परिभाषा के रूप में हम कह सकते हैं कि "ये वे प्रतिमान सामान्यीकृत प्राप्ताँक हैं जिनका मध्यमान 5.5 तथा मानक विचलन 2 होता है।" (Sten scores are standard normalized score with a mean S.D. equal to 2)
- स्टेनाइन परिमापाँक स्टेनाइन स्केल द्वारा प्राप्त होते हैं। स्टेनाइन स्टेन्डर्ड नाइन STANDARD NINE का ही संक्षिप्त शब्द है। टी-स्केल की इकाइयाँ 0 से 100 तक होती हैं, स्टेनाइन में 1 से 9 तक। अत: स्टेनाइन एक प्रकार से टी-स्केल का ही संक्षिप्त रूप है। दोनों के निर्माण का आधार सम-सम्भावना वक्र (NPC) है।
- शतांशीय, मापनी पर एक ऐसा बिन्दु है जिसके नीचे वितरण का एक निश्चित प्रतिशत आता है। उदाहरणार्थ, यदि किसी व्यक्ति को एक परीक्षण पर 35वां शतांशीय क्रम (percentile rank) प्राप्त होता है तो इसका अर्थ है कि वह व्यक्ति समूह में 35% व्यक्तियों से ऊपर है।
- शतांशीय क्रम ज्ञात करने के लिये निम्न सूत्र प्रयोग में लाया जाता है–

$$X_p = L + \frac{i}{f}\left(\frac{PN}{100} - T\right)$$

- परीक्षा में प्राप्त किये गये अंकों द्वारा ग्रेड बिन्दु औसत आसानी से निकाला जा सकता है, जिससे अंकों का मापन सरलता से किया जा सकता है।
- मार्किंग प्रणाली में व्यवहारिक रूप से दो प्रकार की त्रुटियाँ होती हैं।

नोट

(*i*) अंकन कर्त्ताओं की विषमता—निबन्धात्मक परीक्षा में अंकनकर्त्ता की त्रुटि सबसे अधिक होती है। एक ही उत्तर पर एक परीक्षण प्रथम श्रेणी के अंक देता है और दूसरा परीक्षक तृतीय श्रेणी के अंक देता है तथा अन्य अनुत्तीर्ण के अंक देता है।

(*ii*) शिक्षण विषयों की विविधता—परीक्षकों की त्रुटि के अतिरिक्त विषयों की विविधा का भी अंकन पर प्रभाव रहता है। गणित तथा विज्ञान विषयों के मूल्यांकन में अपेक्षाकृत शुद्धता होती है। सामाजिक विषयों, भाषाओं के उत्तरों के अंकन में शुद्धता कम होती है, जबकि सभी विषयों में 0 से 100 तक का पैमाना ही प्रयुक्त किया जाता है। गणित में 90 से अधिक अंक भी दिये जाते हैं, जबकि अन्य विषयों में 90 अंक आना बहुत विशिष्ट स्थिति में होता है।

17.8 शब्दकोश (Keywords)

- **प्राप्तांक**—प्राप्त हुए अंक।
- **शतांशीय**—एक सौ में।
- **व्युत्पन्न**—रूपान्तर।

17.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मार्किंग प्रणाली का क्या अर्थ है? संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
2. मार्किंग प्रणाली की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
3. मार्किंग प्रणाली में प्राप्तांकों का अनुमापन किस प्रकार किया जाता है। संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।
4. मार्किंग प्रणाली के घटकों का विवेचन कीजिए।
5. मार्किंग प्रणाली के क्या लाभ हैं? इस प्रणाली की समस्याओं पर प्रकाश डालिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. अर्थहीन   2. अनुमापन   3. शून्य
4. मैक काल (Mc Call)   5. आर. बी. कैटिल

17.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—18: ग्रेडिंग—आवश्यकता, समस्याएँ, घटक तथा विधियाँ (Grading—Need, Problems, Components and Methods)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

18.1 ग्रेडिंग का अर्थ (Meaning of Grading)

18.2 ग्रेडिंग की अवश्यकता (Need of Grading)

18.3 ग्रेडिंग की समस्याएँ (Problems of Grading)

18.4 ग्रेडिंग के घटक (Components of Grading)

18.5 ग्रेडिंग की विधियाँ (Methods of Grading)

18.6 सारांश (Summary)

18.7 शब्दकोश (Keywords)

18.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

18.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगें—

- ग्रेडिंग का अर्थ, आवश्यकता और उसकी समस्याओं को समझने एवं विश्लेषण करने में।
- ग्रेडिंग के घटकों एवं विधियों की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

विद्यार्थी के व्यवहार में होने वाले सभी प्रकार के परिवर्तनों की जाँच करने हेतु उसके द्वारा प्राप्त ज्ञान, कुशलताओं, रूचि, अभिरूचि, अभिवृत्ति, आदतें तथा व्यक्तित्व सम्बन्धी अन्य गुणों के विकास आदि से सम्बन्धित सभी बातों की जाँच और व्याख्या करने का प्रयत्न किया जाता है अतः इस कार्य हेतु आज मूल्यांकन के साधनों और प्रविधियों का क्षेत्र भी काफी व्यापक और विस्तृत हो गया है। मौखिक, प्रयोगात्मक तथा लिखित परीक्षाओं के साथ-साथ विभिन्न प्रकार के परीक्षणों जैसे परिस्थिति परीक्षण, बुद्धि, रुचि, अभिरुचि, अभिवृत्ति तथा व्यक्तित्व परीक्षणों की सहायता लेना इसी परिवर्तन का प्रभाव है।

व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु ही शिक्षा प्रदान की जाती है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया इस कार्य में किस तरह सहयोग कर रही है, इसके मूल्यांकन हेतु बालक की सब प्रकार की उपलब्धियों, व्यवहार परिवर्तन तथा विकास का उचित मूल्यांकन करना ही आज के मूल्यांकन का उद्देश्य होता है। अतः उपलब्धि परीक्षणों के साथ-साथ शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, सौन्दर्यात्मक तथा नैतिक में होने वाले विकास का विश्वसनीय एवं वस्तुगत मूल्यांकन किया जा सके।

नोट

मूल्यांकन प्रक्रिया में मौखिक, लिखित, तथा प्रयोगात्मक परीक्षण और परीक्षाओं को इस प्रकार स्थान देने का प्रयत्न किया जाता है कि विषयगत विशेषताओं तथा परिस्थितिगत बातों को ध्यान में रखते हुये ठीक प्रकार मूल्यांकन किया जा सके।

लिखित परीक्षा के लिये प्रश्न पत्र तैयार करने की प्रक्रिया में भी काफी सुधार हुए हैं। निबन्धात्मक, लघु उत्तरात्मक तथा वस्तुनिष्ठ सभी प्रकार की प्रश्न शैलियों को विषय तथा उद्देश्य गत लक्ष्यों को ध्यान में रखकर उचित प्रतिनिधित्व देने का प्रचलन जड़ पकड़ चुका है।

विषयानुकूलता, विश्वसनीयता, वस्तुनिष्ठता आदि के उचित संरक्षण हेतु परीक्षा प्रश्न-पत्रों परीक्षण तथा साधनों को प्रयोग तथा अनुभव द्वारा परख करके प्रमाणीकृत (standardised) करने के प्रयत्न किये जाने लगे हैं। इन परीक्षा परिणामों की अंकों के आधार पर व्याख्या न करके ग्रेड प्रणाली (Grade System) अपनाई जाये तथा अंक देने के स्थान पर A, B, C, D, E आदि ग्रेड प्रदान किये जायें। इस इकाई में हम ग्रेडिंग प्रणाली के विषय में अध्ययन करेंगे।

मूल्यांकन पद्धति में अपेक्षित सुधार लाने हेतु ये सभी उपरोक्त विचार अपने आप में काफी वजनदार हैं और इन्हें अमल में लाने के सभी संभव प्रयत्न किये जाने चाहियें। इन सभी पर यहाँ और अधिक विस्तार से चर्चा करना संभव नहीं है। फिर भी हम अंतिम सुझावों को क्रियान्वित करने ही दृष्टि से इनके ऊपर अवश्य ही चर्चा करना चाहेंगे।

18.1 ग्रेडिंग का अर्थ (Meaning of Grading)

ग्रेडिंग प्रणाली का अभिप्राय ऐसी प्रणाली से है जिसमें छात्रों के मूल्यांकन करते समय अंकों का प्रयोग न करके अक्षरों का प्रयोग किया जाता है। यह मूल्यांकन छात्रों के परीक्षणों में प्राप्तांकों के आधार पर किया जाता है। जैसे 90 से 100 के बीच आने वाले सभी प्राप्तांकों पर A ग्रेड दिया जाता है। परम्परागत प्रणाली में शैक्षिक उपलब्धि के मापन हेतु अंक पद्धति का सहारा लिया जाता रहा है। किसी भी विषय का जब प्रश्न पत्र बनाया जाता है तो उसमें पूर्णांक दिये होते हैं तथा प्रत्येक प्रश्न के आगे भी अंक दिए जाते हैं। परीक्षक इन अंको को ध्यान में रखते हुये ही उत्तर पुस्तिकाओं की जाँच करके विद्यार्थियों को अंक प्रदान करने जाते हैं और इन अंको के आधार पर ही उन्हें पास-फेल घोषित किया जाता है तथा डिवीजन प्रथम, द्वितीय, तृतीय आदि दिये जाते हैं। इस प्रकार की अंक प्रणाली के कई कारणों से आलोचना का शिकार बने रहने के कारण आज इसके स्थान पर ग्रेडिंग प्रणाली (Grading system) यानी अंको के स्थान पर अक्षर ग्रेड जैसे O; A, B, C, D आदि देने का चलन प्रारम्भ हुआ है।

18.2 ग्रेडिंग की आवश्यकता (Need of Grading)

(*i*) परीक्षकों के लिये निर्धारित अंकों में से किसी प्रश्न या परीक्षार्थी विशेष को बिल्कुल ठीक-ठीक अंक प्रदान करने में काफी असुविधा होती थी। इतना संयत, वस्तुगत और वैद्य मापन संभव नहीं था। ग्रेडिंग देना, अंक प्रदान करने से ज्यादा सुविधाजनक तथा आसान है। ग्रेडिंग में श्रेणीगण विभाजनों की संख्या काफी कम अधिक से अधिक पाँच तक ही सीमित रहती है जबकि परम्परागत अंक प्रणाली में प्रतिशत प्रणाली पर आधारित होने के कारण इस प्रकार की विभाजन श्रेणियाँ 100 तक पहुँच सकती थी।

(*ii*) अंक लगाने में आत्मनिष्ठा (Subjectivity) का आना नितान्त स्वाभाविक है। सभी परीक्षकों का अपना एक स्तर है और परख दृष्टि है उस आधार पर एक ही पुस्तिका का मूल्यांकन करते समय विभिन्न परीक्षकों में अंकों में बहुत अधिक अंतर देखने को मिलता है। ग्रेड प्रणाली में इस प्रकार की वस्तुगत तथा अविश्वसनीयता पर काफी कुछ अंकुश लगने की संभावना रहती है।

(*iii*) परम्परागत अंक प्रणाली में परिणाम के तौर पर परीक्षार्थी को पास फेल घोषित कर मात्र दो वर्गों में विभाजित करने या प्रथम, द्वितीय, तृतीय डिवीजन देकर तीन वर्गों में ही विभाजित करने का प्रयत्न किया जाता था। दूसरे 59 अंक वाले को द्वितीय डिवीजन तथा उसके कुछ एक अधिक अंक पाने पर दूसरे को प्रथम डिवीजन देना,

नोट

या इसी तरह 32 की जगह 33 अंक मिलने से ही विद्यार्थी का फेल से पास हो जाना। ऐसी कुछ विसंगतियाँ और असमंजसतायें विद्यमान थी जिनका अंक पद्धति के पास कोई इलाज नहीं था। ग्रेडिंग प्रणाली में श्रेणी विभाजन को विस्तृतता प्रदान करके इन दोनों को दूर करने का प्रयत्न किया गया है।

(iv) किसी एक कक्षा के विभिन्न प्रश्न पत्रों के पूर्णांकों में विभिन्नता हो सकती है परन्तु पास-फेल घोषित करने या डिवीजन देने में ऐसे सभी प्राप्तांकों को जोड़कर कुल अंक बना लिये जाते हैं। सांख्यिकी या गणितीय विशुद्धता की दृष्टि से ऐसा करना उचित नहीं है। योग तो समान आधार विस्तार या श्रेणी वाली चीजों का ही हो सकता है 2 गायों तथा 3 भैसों को मिलाकर 5 का योग न तो गायों के लिये लागू हो सकता है और न भैसों के लिये । परन्तु 25 पूर्णांक वाले चित्रकला के प्राप्तांको को 50 पूर्णांक वाले अंग्रेजी भाषा के प्राप्तांकों में डिवीजन तथा पास फेल घोषित करने के लिये किया जाता रहा है। ग्रेडिंग प्रणाली में इस प्रकार की विसंगतता तथा दोषों को काफी हद तक दूर किया जा सकता है।

(v) ग्रेड पाने वाले विद्यार्थियों को एक दूसरे से अच्छी तरह अलग करके देखा जा सकता है जबकि परम्परागत प्रणाली में 30 और 40 अंकों वाले तथा 60 अंको वाले बालकों में इस प्रकार की विभिन्नता तथा भेद कर पाना मुश्किल हो जाता था।

> नोट्स ग्रेडिंग प्रणाली में परीक्षार्थियों को अधिक अक्षर श्रेणियों O, A, B, C, D में विभाजित करने का प्रावधान है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)—

1. .... में परीक्षार्थियों को अधिक अक्षर श्रेणियों O, A, B, C, D में विभाजित करने का प्रावधान है।
2. ग्रेडिंग प्रणाली में .... को विस्तृतता प्रदान करके अंक प्रणाली के दोषों को दूर करने का प्रयत्न किया है।
3. ग्रेडिंग प्रणाली परीक्षार्थियों उपलब्धि स्तर की सापेक्षिक तुलना में .... से ज्यादा तर्क सम्मत, यथार्थ, तथा विश्वसनीय नज़र आती है।

18.3 ग्रेडिंग की समस्याएँ (Problems of Grading)

ग्रेडिंग प्रणाली में छात्रों से संबंधित कई समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

1. ग्रेडिंग प्रणाली परीक्षा में 99 प्रतिशत तथा 90 प्रतिशत अंक लाने वाले छात्रों को एक ही ग्रेड दिया जाता, जिससे अपेक्षाकृत अधिक प्रयत्न तथा परिश्रम करने वाले छात्रों में असंतोष की भावना उत्पन्न हो जाती है, उन्हें लगता है कि साल भर परिश्रम करने तथा परीक्षा की दृष्टि से कम समय में परीक्षोपयोगी प्रश्न रटकर प्रश्न करने तथा परीक्षा देने में कोई अंतर नहीं है, ग्रेडिंग प्रणाली में इस विषय में सुधार करने की आवश्यकता है।
2. ग्रेडिंग वर्षभर किये जाने वाले विभिन्न प्रोजेक्ट्स, तथा अन्य क्रियाओं पर दिए जाते हैं। जिससे छात्रों को पढ़ाई करने का उचित समय नहीं मिलता है तथा वे वर्ष भर विभिन्न प्रकार के प्रोजेक्ट्स में व्यस्त रहते है।
3. ग्रेडिंग में केवल शैक्षिक उपलब्धि संबंधी ग्रेड दिये जाते हैं। इससे छात्रों का सम्पूर्ण मूल्यांकन नहीं हो पाता है, यह उपलब्धि छात्र प्रश्नों को रटकर भी प्राप्त कर सकते हैं। कुछ छात्र परीक्षा में बेईमानी करके भी अच्छे ग्रेड्स प्राप्त कर लेते हैं, जिससे छात्र में धोखा देने की भावना भी जागृत होती है।

   अतः छात्र के सम्पूर्ण योग्यता को जाँचने के लिए वर्तमान ग्रेडिंग प्रणाली पूर्ण रूप से सार्थक नहीं है।

नोट

18.4 ग्रेडिंग के घटक (Components of Grading)

ग्रेडिंग कई प्रकार के घटकों पर आधारित है। वार्षिक बोर्ड परीक्षा में शिक्षण उपलब्धियों के अतिरिक्त, प्रोजेक्ट्स, प्रायोगिक परीक्षा तथा स्कूल संबंधी अन्य गतिविधियों पर ग्रेड दिये जाते हैं। प्रत्येक विषय से संबंधित प्रायोगिक फाइलें बनाना, अभ्यास प्रश्न, एसाइनमेंट्स आदि बनाने का कार्यभार छात्रों पर होता है। परीक्षा परिणाम में इन सब पर संबंधित ग्रेड दिये जाते हैं।

क्या आप जानते हैं ग्रेडिंग प्रणाली परीक्षार्थियों उपलब्धि स्तर की सापेक्षिक तुलना करने में अंक प्रणाली से कहीं ज्यादा तर्क सम्मत, यथार्थ, तथा विश्वसनीय नजर आती है। O, A, B, C, D में सम्मत, यथार्थ, तथा विश्वसनीय नजर आती है।

18.5 ग्रेडिंग की विधियाँ (Methods of Grading)

ग्रेडिंग पद्धति में विद्यार्थियों को उनकी उपलब्धि तथा निष्पादन (performance) के आधार पर प्राय: 5 श्रेणियों में विभाजित करके अक्षर ग्रेड प्रदान किये जाते हैं। इसके लिये दो प्रकार के अक्षर ग्रेड प्रचलित हैं। एक में इन अक्षर श्रेणियों के नाम हैं A, B, C, D और E तथा दूसरे में है O, A, B, C, तथा D अक्षर समूह इनमें से कोई भी चुना जाये परन्तु ये क्रमश: जिस प्रभावी उपलब्धि और निष्पादन स्तर का प्रतिनिधित्व करते हैं वह है उत्कृष्ट (Out Standing) बहुत अच्छा (Very Good), अच्छा (Good), कमजोर (Poor) तथा बहुत कमजोर (Very Poor) इस प्रकार की पाँच अक्षरगत श्रेणियों में विद्यार्थियों की उपलब्धि या निष्पादन को बाँटने हेतु प्राय: दो प्रकार की विधियों निरपेक्ष ग्रेडिंग विधि (Absolute Grading Method) तथा सापेक्ष ग्रेडिंग विधि (Relative Grading Method) का सहारा लिया जाता है। ये विधियाँ निम्नलिखित हैं–

निरपेक्ष ग्रेडिंग विधि (Absolute Grading System)

इस प्रकार की ग्रेडिंग विधि के अक्षर ग्रेड देने हेतु पहले ही यह तय कर लिया जाता है कि किस स्तर की उपलब्धि या निष्पादन को कौन सा अक्षर ग्रेड दिया जायेगा। इसका निर्धारण दो प्रकार से हो सकता है।

(*i*) यह तय कर लिया जाये कि कौन से अक्षर ग्रेड कितने प्रतिशत अंक सीमाओं के दायरे युक्त उपलब्धि पर प्रदान किये जायेंगे। इस विधि का अनुसरण करते हुये हम निम्न प्रकार ग्रेडिंग कर सकते हैं।

ग्रेड (Grade)	प्राप्तांक प्रतिशत (Scores Percentage)
O	80% और उससे अधिक
A	70%-79%
B	60%-69%
C	50%-59%
D	50 प्रतिशत से कम

(*ii*) निरपेक्ष ग्रेडिंग विधि में ग्रेडिंग के लिये अपनायी जाने वाली दूसरी तकनीक मानदन्ड या कसौटी–संदर्भित ग्रेडिंग (Criterion referenced grading) कहलाती है। इसमें परीक्षा लेने से पूर्व ही यह निर्णय ले लिया जाता है कि परीक्षण के कठिनाई स्तर (difficulty level) को ध्यान में रखते हुये किस प्रकार की उपलब्धि या निष्पादन स्तर को कौन सा अक्षर ग्रेड दिया जायेगा।

नोट

ग्रेड	निष्पादन स्तर (पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के संदर्भ में)
O	उत्कृष्ट (Outstanding)
A	औसत से अधिक या बहुत अच्छा (Very Good)
B	औसत या अच्छा (Good)
C	औसत से कम या कमजोर (Poor)
D	औसत से बहुत कम या बहुत कमजोर (Very Poor)

सापेक्ष ग्रेडिंग विधि (Relative Grading System)

इस विधि में किसी एक विद्यार्थी को उसकी दूसरे विद्यार्थियों के उपलब्धि स्तर से तुलना करते हुये कक्षा या समूह विशेष में उसकी जो सापेक्षिक स्थिति (Rank Position) बनती है उसके संदर्भ में अक्षर ग्रेड प्रदान करने का प्रयत्न किया जाता है। अपने सामान्य क्रियान्वयन में यह विधि ग्रेड प्रदान करने हेतु सामान्य वक्र वितरण (Normal curve distribution) पद्धति का अनुसरण करती है। इस पद्धति के मूल में यही मान्यता रहती है कि सामान्यत: विद्यार्थियों का निष्पादन या उपलब्धि वितरण सामान्य वक्र प्रारूप के हिसाब से ही चलता है। इस दृष्टि से ग्रेडिंग करते समय ग्रेडिंग का प्रारूप हमारे सामने आता है।

ग्रेड	विद्यार्थियों का प्रतिशत जिन्हें ग्रेड प्रदान किया जाना है
O	कक्षा या समूह के शीर्ष 7 प्रतिशत
A	कक्षा या समूह के शीर्ष और मध्य में स्थित 24 प्रतिशत
B	कक्षा या समूह के मध्य के 38 प्रतिशत
C	कक्षा या समूह के सबसे नीचे तथा मध्य में स्थित 24 प्रतिशत
D	कक्षा या समूह में सबसे नीचे स्थित 7 प्रतिशत

शीर्ष के 7% तथा आगे के 24% और बीच के 38% का निर्णय कक्षा या समूह विशेष के कुल विद्यार्थियों द्वारा अर्जित प्राप्तांको के आधार पर किया जाता है। इसके लिये प्राप्तांकों को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित कर लिया जाता है। और शीर्ष के 7 प्रतिशत को O ग्रेड, आगे के 24 प्रतिशत को A ग्रेड तथा बीच के 38 प्रतिशत को B ग्रेड तथा फिर उनसे नीचे वाले 24 प्रतिशत को C तथा सबसे नीचे के 7 प्रतिशत को D ग्रेड प्रदान कर दिया जाता है।

टास्क निरपेक्ष ग्रेडिंग विधि क्या है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. निम्नलिखित कथनों में 'सत्य' अथवा 'असत्य' लिखिए—

1. ग्रेडिंग पद्धति में विद्यार्थियों को उनकी उपलब्धि तथा निष्पादन के आधार पर 5 श्रेणियों में विभाजित करके अक्षर ग्रेड प्रदान किये जाते हैं।
2. निरपेक्ष ग्रेडिंग विधि में ग्रेडिंग के लिए अपनायी जाने वाली दूसरी तकनीक मानदण्ड या कसौटी संदर्भित ग्रेडिंग कहलाती है।
3. सापेक्ष ग्रेडिंग विधि सामान्य क्रियान्वयन में सामान्य वक्र वितरण पद्धति का अनुसरण करती है।
4. निरपेक्ष ग्रेडिंग विधि में परीक्षण के कठिनाई स्तर पर ध्यान नहीं दिया जाता है।

नोट

18.6 सारांश (Summary)

- ग्रेडिंग प्रणाली का अभिप्राय ऐसी प्रणाली से है जिसमें छात्रों के मूल्यांकन करते समय अंकों का प्रयोग न करके 'लैटर्स' का प्रयोग किया जाता है। यह मूल्यांकन छात्रों के परीक्षणों में प्राप्तांकों के आधार पर किया जाता है। जैसे 90 से 100 के बीच आने वाले सभी प्राप्तांकों पर A ग्रेड दिया जाता है।
- इस प्रकार की अंक प्रणाली के कई कारणों से आलोचना का शिकार बने रहने के कारण आज इसके स्थान पर ग्रेडिंग प्रणाली (Grading system) यानी अंको के स्थान पर अक्षर ग्रेड जैसे O; A, B, C, D आदि देने का चलन प्रारम्भ हुआ है।
- ग्रेडिंग प्रणाली में छात्रों से संबंधित कई समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।
    1. ग्रेडिंग प्रणाली परीक्षा में 99 प्रतिशत तथा 90 प्रतिशत अंक लाने वाले छात्रों को एक ही ग्रेड दिया जाता, जिससे अपेक्षाकृत अधिक प्रयत्न तथा परिश्रम करने वाले छात्रों में असंतोष की भावना उत्पन्न हो जाती है।
    2. ग्रेडिंग वर्षभर किये जाने वाले विभिन्न प्रोजेक्ट्स, तथा अन्य क्रियाओं पर दिए जाते हैं।
    3. ग्रेडिंग में केवल शैक्षिक उपलब्धि संबंधी ग्रेड दिये जाते हैं। इससे छात्रों का सम्पूर्ण मूल्यांकन नहीं हो पाता है, यह उपलब्धि छात्र प्रश्नों को रटकर भी प्राप्त कर सकते हैं।
- ग्रेडिंग कई प्रकार के घटकों पर आधारित है। वार्षिक बोर्ड परीक्षा में शिक्षण उपलब्धियों के अतिरिक्त, प्रोजेक्ट्स, प्रायोगिक परीक्षा तथा स्कूल संबंधी अन्य गतिविधियों पर ग्रेड दिये जाते हैं।
- ग्रेडिंग पद्धति में विद्यार्थियों को उनकी उपलब्धि तथा निष्पादन (performance) के आधार पर प्राय: 5 श्रेणियों में विभाजित करके अक्षर ग्रेड प्रदान किये जाते हैं। इसके लिये दो प्रकार के अक्षर ग्रेड प्रचलित हैं। एक में इन अक्षर श्रेणियों के नाम हैं A, B, C, D और E तथा दूसरे में है O, A, B, C, तथा D अक्षर समूह इनमें से कोई भी चुना जाये परन्तु ये क्रमश: जिस प्रभावी उपलब्धि और निष्पादन स्तर का प्रतिनिधित्व करते हैं
- इस प्रकार की ग्रेडिंग विधि के अक्षर ग्रेड देने हेतु पहले ही यह तय कर लिया जाता है कि किस स्तर की उपलब्धि या निष्पादन को कौन सा अक्षर ग्रेड दिया जायेगा।
- इस विधि में किसी एक विद्यार्थी को उसकी दूसरे विद्यार्थियों के उपलब्धि स्तर से तुलना करते हुये कक्षा या समूह विशेष में उसकी जो सापेक्षिक स्थिति (Rank Position) बनती है उसके संदर्भ में अक्षर ग्रेड प्रदान करने का प्रयत्न किया जाता है।

18.7 शब्दकोश (Keywords)

- **परम्परागत**—सदियों से आ रही प्रथा।
- **आत्मनिष्ठा**—निष्ठावान होना।

18.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. ग्रेडिंग प्रणाली का क्या अर्थ है। स्पष्ट कीजिए।
2. ग्रेडिंग प्रणाली घटक तथा समस्याओं का उल्लेख कीजिए।
3. ग्रेडिंग प्रणाली कितने प्रकार की होती है? वर्णन कीजिए।
4. ग्रेडिंग की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1.	1. ग्रेडिंग प्रणाली	2. श्रेणी विभाजन	3. अंक प्रणाली	
2.	2. सत्य	2. सत्य	3. सत्य	4. असत्य

18.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

नोट

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–19: छात्रों के लिए पृष्ठपोषण की विधियाँ (Methods of Feedback for Students)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

19.1 पृष्ठपोषण का अर्थ (Meaning of Feedback)

19.2 पृष्ठपोषण के उद्देश्य (Objectives of Feedback)

19.3 पृष्ठपोषण प्रक्रिया (Process of Feedback)

19.4 छात्रों के लिए पृष्ठपोषण की विधियाँ (Methods of Feedback for Students)

19.5 पृष्ठपोषण का महत्त्व (Importance of Feedback)

19.6 सारांश (Summary)

19.7 शब्दकोश (Keywords)

19.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

19.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- पृष्ठपोषण के अर्थ, उद्देश्य, प्रक्रिया और पृष्ठपोषण की विधियों की व्याख्या एवं विवेचन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

पृष्ठपोषण शैक्षिक प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग है। मूल्यांकन न केवल शैक्षिक प्रक्रिया का ही वरन् जीवन की प्रत्येक प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में किसी न किसी रूप में मूल्यांकन की अपेक्षा की जाती है। जिस प्रकार एक डाक्टर अपनी औषधि की प्रभावशीलता का मूल्यांकन रोगी के स्वास्थ्य में सुधार के आधार पर करता है, वकील अपनी बहस का मूल्यांकन जज महोदय द्वारा दिये गये निर्णय के आधार पर, बाग का माली अपने कोमल पौधों का मूल्यांकन उनकी सुन्दरता के आधार पर करता है। ठीक उसी प्रकार शिक्षक अपने प्रभावी शिक्षण का मूल्यांकन विद्यार्थियों में हुए अपेक्षित व्यावहारिक परिवर्तन (Desired behavioural change) के आधार पर करता है। मूल्यांकन के अभाव में हमारे समस्त प्रयास विफल हो सकते हैं। छात्रों की ओर से मिलने वाले पृष्ठपोषण का उच्च शिक्षा में गुणवत्ता तथा मानक को बनाये रखने के लिए विशेष महत्त्व है।

19.1 पृष्ठपोषण का अर्थ (Meaning of Feedback)

छात्रों के पृष्ठपोषण का अर्थ अध्यापकों द्वारा लिये गये परीक्षण पर छात्रों के प्रदर्शन पर उनके मूल्यांकन के बारे में जानकारी देना है। पृष्ठपोषण का कार्य व्यवहार परिवर्तन करना है। पृष्ठपोषण का प्रत्यय मशीन के सिद्धांत पर आधारित है। मोटर

नोट

से चलने वाली नाव में पानी को पीछे काटने से नाव आगे जाती है तथा रेलवे इंजन में भाप को पीछे से निकालने से इंजन आगे को बढ़ता है। इसी प्रकार अभिक्रमित अनुदेशन सामग्री में आवश्यक सूचनाओं को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करने से पिछले पद की सही सूचना आगे के पद की ओर अग्रसर करती है। इसलिए परीक्षण में छात्र अपनी कमजोरियों को दूर करे। ऐसी प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है और अनुक्रियाओं को ही महत्त्व दिया जाता है। सही अनुक्रियाओं की पुष्टि छात्रों की सही अनुक्रियाओं की सम्भावना में वृद्धि करती है। धनात्मक पुनर्बलन का सम्बन्ध पृष्ठपोषण से होता है। पृष्ठपोषण प्रविधियाँ व्यवहार में सुधार तथा विकास करती हैं।

19.2 पृष्ठपोषण के उद्देश्य (Objectives of Feedback)

पृष्ठपोषण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें छात्र तथा शिक्षक दोनों सम्मिलित होते हैं, इसके प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. पृष्ठपोषण प्रमुख उद्देश्य छात्रों का वर्गीकरण करना है।
2. पृष्ठपोषण के द्वारा छात्रों को उचित शैक्षिक एवं व्यावसायिक मार्ग निर्देशन प्रदान किया जाता है।
3. पृष्ठपोषण के द्वारा पाठ्यक्रम में उचित संशोधन किया जा सकता है।
4. पृष्ठपोषण का प्रयोग छात्रों में अधिगम (Learning) की मात्रा ज्ञात करने में भी किया जाता है।
5. पृष्ठपोषण के द्वारा शिक्षकों की कुशलता एवं सफलता का मापन किया जाता है।
6. पृष्ठपोषण के द्वारा छात्रों की दुर्बलताओं एवं योग्यताओं की जानकारी प्राप्त करने में सहायता मिलती है।
7. पृष्ठपोषण शिक्षण विधियों की उपयुक्तता की भी जाँच करता है।
8. पृष्ठपोषण का प्रयोग अनुदेशन (Instructions) की प्रभावशीलता ज्ञात करने एवं उसके अनुरूप अपनी क्रियाओं (activities) के नियोजन (Planning) करने में किया जाता है।
9. पृष्ठपोषण का एक उद्देश्य छात्रों को अपनी समस्याएँ समझने एवं उनकी प्रगति के सम्बन्ध में जानकारी प्रदान करना भी है।
10. पृष्ठपोषण का एक उद्देश्य इस बात की जानकारी प्रदान करना है कि छात्रों की विभिन्न व्यक्तिगत एवं सामाजिक आवश्यकतओं की पूर्ति किस प्रकार की जा सकती है।

19.3 पृष्ठपोषण मूल्यांकन प्रक्रिया (Process of Feedback)

"Evaluation includes measurement but it extends far beyond the areas to which objective measurements have been applied". — *E.B. WESLEY*

आधुनिक काल में शिक्षा के क्षेत्र में वर्तमान परीक्षा प्रणाली की अत्यधिक आलोचना की जा रही है और उस पर कीचड़ उछालने जैसी स्थिति पैदा हो गई है तथा शिक्षा-स्तर के पतन के कारणों में सबसे अधिक दोष परीक्षा प्रणाली को ही दिया जाता है। अध्यापक और अभिभावक दोनों ही कभी-कभी इस प्रचलित परीक्षा को समूल नष्ट करने का प्रस्ताव उपस्थित करते हैं, परन्तु वस्तुत: परीक्षा प्रणाली इतनी अनावश्यक नहीं है। इस दृष्टि से कुछ विद्वान परीक्षा प्रणाली को नष्ट न कर उसमें सुधार के पक्ष में है।

छात्र प्रगति के मापन हेतु हम मूल्यांकन शब्द का प्रयोग करते हैं। कहीं-कहीं मूल्यांकन शब्द के स्थान पर परीक्षा, परीक्षण एवं जाँच शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। आधुनिक युग में मूल्यांकन को शिक्षण प्रक्रिया का अविछिन्न अंग (Integral part) माना जाता है। मूल्यांकन एक ऐसी वस्तु नहीं है जिसे हम पदार्थों का संग्रह कह सकें। इसके द्वारा हम एक निष्कर्ष अथवा निर्णय पर पहुँचते हैं। इस प्रकार, मूल्यांकन केवल एक प्रक्रिया है जो हमें कतिपय निश्चित निष्कर्षों की प्राप्ति में सहायक होती है। मूल्यांकन की अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं। परीक्षा हम एक निश्चित अवधि के उपरान्त आयोजित करते हैं जैसे—त्रैमासिक, अर्द्ध-वार्षिक एवं वार्षिक परीक्षायें। इन परीक्षाओं में हम कतिपय परीक्षण अथवा परिस्थितियाँ छात्रों को प्रदान करते हैं तथा उनके आधार पर अंक प्रदान करके उसका वर्गीकरण किया जाता

नोट

है। मूल्यांकन करते समय अध्यापक विद्यार्थी तथा समाज जिसका कि वह अंग है दोनों पर ध्यान देता है। शिक्षा में बालक के व्यक्तित्व का विकास केवल उसके हित में ही नहीं होता अपितु जिस समाज में वह रहता है उसके लिए भी आवश्यक होता है। जहाँ बालक के व्यक्तित्व के समुचित विकास की दृष्टि से हम उसके शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, सांवेगिक तथा नैतिक पक्ष की ओर ध्यान देते हैं वहीं इस बात पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है कि शिक्षण प्रक्रिया समाज के आदर्शों एवं मानदण्डों के अनुकूल चल रही है अथवा नहीं। शिक्षण प्रक्रिया के अन्तर्गत शिक्षक, शिक्षार्थी एवं पाठ्यक्रम का पारस्परिक सम्बन्ध दर्शाया जाता है। चूँकि, शिक्षण प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु बालक होता है इस दृष्टि से बालक की आवश्यकताओं, रुचियों, रुझानों एवं क्षमताओं को ध्यान में रखकर ही शिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिये। साथ ही, पाठ्य-वस्तु विश्लेषण एवं उसका प्रस्तुतीकरण भी बालक को केन्द्र मानकर किया जाना चाहिये। वास्तव में शिक्षा ऐसी प्रक्रिया है जो हमारे जीवन और व्यवहार में नवीन परिवर्तन लाती है। यह परिवर्तन हम छात्र के विचार, कार्य, अनुभूति अर्थात् हृदय की भावनाओं में लाना चाहते हैं। बालक विद्यालय में शिक्षा अर्जित करने के लिए आता है। अपने विद्यालय जीवन में वह अनेक प्रकार के अनुभव हासिल करता है जिनसे उसके ज्ञान में वृद्धि होती है, उसके तर्क-वितर्क करने के ढंग में परिवर्तन आता है, उसकी कार्य शैली में विशिष्टता आती है एवं उसकी संवेदनशीलता तथा अभिवृत्ति में विकास होता है। विकास की इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को अपेक्षित व्यावहारिक परिवर्तन (Desired behavioural changes) के नाम से जाना जाता है। इन व्यावहारिक परिवर्तनों का समय-समय पर मूल्यांकन होता रहता है और इस दृष्टि से शिक्षा के उद्देश्य एवं गुण निर्धारित किये जाते हैं। मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा यह ज्ञात करने की चेष्टा की जाती है कि बालक के व्यवहार में अपेक्षित व्यवहारीय परिवर्तन किस सीमा तक हो सके हैं। इस प्रकार, मूल्यांकन ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से अध्यापक को शिक्षा के उद्देश्यों की सफलता का आभास एवं ज्ञान प्राप्त होता है तथा हमें बालक की स्थिति अथवा स्तर का ज्ञान भी होता है। मूल्यांकन का सम्बन्ध बालक की प्रगति के स्वभाव और प्रक्रिया से है न कि उसकी स्थिति से।

शिक्षा के समान मूल्यांकन भी निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। बालक नित्य प्रति नवीन बातों का ज्ञान प्राप्त करते हुए शनैः शनैः विकसित होता है। व्यवहार परिवर्तन की प्रक्रिया अत्यन्त विस्तृत होती है। किसी विषय विशेष को पढ़ाने के बाद जो व्यवहार में परिवर्तन आता है वह सम्पूर्ण व्यवहार परिवर्तन का अंश मात्र होता है। यही कारण है कि हमें शिक्षण के तात्कालिक उद्देश्यों (Immediate goals) तथा अन्तिम उद्देश्यों (Final goals) के बीच विभेद (Discriminate) करना होता है। वस्तुतः व्यवहार परिवर्तन की क्रिया अत्यन्त धीरे-धीरे होती है और शिक्षण में जो मूल्यांकन होता है वह इसी के अनुसार चलता है। इसीलिए कहा जाता है कि, 'अच्छा शिक्षण वह है जिसमें परीक्षण भी साथ-साथ होता है।' (A good teaching is invariably followed by testing students' behavioural changes.) शिक्षा में मूल्यांकन का यही वास्तविक अभिप्राय है।

नोट्स शिक्षा निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। जब हम विगत परिस्थिति का अनुमान लगाना चाहते हैं तो हमें अपने प्रयासों को सफल बनाने के लिये एक प्रक्रिया अपनानी पड़ती है जो पूर्व ज्ञान पर आधारित होती है। परिणामतः प्रत्येक कक्षा-कक्ष की परिस्थिति में बालक एक नवीन विचार प्राप्त करता है जो मूल्यांकन का एक अंग होता है।

19.4 छात्रों के लिए पृष्ठपोषण की विधियाँ (Methods of Feedback for Students)

अधिकांश विधियों के उपयोग से शिक्षण स्मृति स्तर तक ही सीमित रहता है। इनके प्रयोग से ज्ञान तथा बोध उद्देश्यों को ही प्राप्त किया जा सकता है। इनके प्रयोग से चिन्तन स्तर के शिक्षण की व्यवस्था नहीं की जा सकती है। उच्च स्तर के शिक्षण से संश्लेषण, विश्लेषण तथा मूल्यांकन उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है तथा समस्या समाधान की क्षमताओं का विकास किया जाता है। शिक्षण की व्यवस्था चिन्तन स्तर की होनी चाहिए। चिन्तन स्तर पर छात्रों को अधिक

क्रियाशील होना पड़ता है। शिक्षक केवल निरीक्षक व सहायक की भूमिका निर्वाह करता है। उच्च शिक्षण में ऐसी प्रविधियों का उपयोग किया जाता है, जिनमें छात्रों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। छात्रों को अधिक चिन्तन करना होता है तथा समस्याओं का समाधान भी करना होता है। इसे सर्जनात्मक शिक्षण भी कहा जाता है।

अधिकांश शिक्षण विधियाँ माध्यमिक कक्षाओं के शिक्षण हेतु विकसित की गई हैं। महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालय स्तर के शिक्षण के लिये व्याख्यान विधि का ही प्रयोग किया जाता है, जिससे उच्च अधिगम को प्रोत्साहन नहीं मिलता है। उच्च स्तर पर छात्रों में आलोचना सौन्दर्यानुभूति, दूसरों के विचारों के सम्मान की भावना, अपने विचारों के प्रस्तुतीकरण, प्रश्न पूछने की क्षमताओं का विकास होना चाहिए। किसी प्रकरण के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण तथा अनुभवों को प्रस्तुत करने की योग्यता का विकास किया जाना चाहिए। क्षमताओं एवं योग्यताओं के विकास के लिये विशिष्ट अनुदेशन प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। इनमें से कुछ प्रमुख पृष्ठपोषण प्रविधियों का उल्लेख इस अध्याय में किया गया है–

(1) सामूहिक वाद-विवाद (Panel Discussion)

(2) सम्मेलन प्रविधि (Conference Device/Technique)

(3) कार्यशाला प्रविधि (Workshop Device/Technique)

(4) विचार गोष्ठी प्रविधि (Seminar-Device/Technique)

(5) विचार समिति प्रविधि (Symposium Device/Technique)।

उच्च अधिगम हेतु इन शिक्षण-प्रविधियों के उद्देश्य, स्वरूप, उपयोग तथा विशेषताओं का वर्णन किया गया है।

1. सामूहिक वाद-विवाद (Panel Discussion)—उच्च अधिगम की जितनी भी विधियाँ हैं; जैसे—सम्मेलन, विचार गोष्ठी, विचार समिति तथा कार्यशाला आदि इन सभी प्रविधियों का सम्पादन वाद-विवाद (Discussion) की सहायता से ही किया जा सकता है, क्योंकि इस प्रकार के आयोजन में सभी छात्रों तथा अध्यापकों को समान अवसर दिये जाते हैं।

वाद-विवाद प्रविधि आधुनिक व्यवस्था सिद्धान्त (Modern Theory of Organization) पर आधारित है। इसकी यह धारणा है कि व्यवस्था के सदस्य में अपनी अभिवृत्तियाँ, अभिरुचियाँ, मूल्य तथा अपने-अपने लक्ष्य होते हैं। इसके अतिरिक्त उनमें निर्णय लेने और समस्या-समाधान की क्षमता होती है। अत: इस धारणा की दृष्टि से प्रजातन्त्र शासन तथा जीवन ढंग के लिये वाद-विवाद प्रविधि को प्रोत्साहन दिया गया है।

सामूहिक वाद-विवाद का विकास (Origin of Panel Discussion)

सर्वप्रथम सन् (1929) में **हेरी ए. आवर स्ट्रीट** ने सामूहिक वाद-विवाद पर प्रयोग किया था। इन्होंने एक छोटे समूह के रूप में एक निश्चित समय के लिये श्रोताओं के समक्ष वाद-विवाद का आयोजन किया था। अन्त में, इस वाद-विवाद में श्रोताओं ने भी भाग लिया था। उस प्रकरण पर महत्वपूर्ण प्रश्न पूछे गये, जिनका उत्तर विशेषज्ञों ने दिया था, जिससे प्रकरण के सम्बन्ध में श्रोताओं को अधिक जानकारी हुई थी। श्रोताओं ने उन बिन्दुओं का स्पष्टीकरण माँगा था, जिनको वाद-विवाद में सम्मिलित नहीं किया था। **हेरी** के अतिरिक्त अनेकों अन्य व्यक्तियों ने सन् (1929) में वाद-विवाद प्रविधि की खोज की थी।

आज इस प्रकार के आयोजन सार्वजनिक रूप में टेलीविजन तथा रेडियो पर किये जाते हैं। कुछ तात्कालिक समस्या पर इस प्रकार के सामूहिक वाद-विवादों की व्यवस्था की जाती है।

सामूहिक वाद-विवाद के उद्देश्य (Objectives of Panel Discussion)

सामूहिक वाद-विवाद को आयोजित करने के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं–

1. सूचनाओं तथा तथ्यों को प्रदान करना।
2. किसी समस्या का विश्लेषण करना।
3. मूल्यों का निर्धारण करना।
4. मनोरंजन के लिये आयोजन करना।

नोट

वाद-विवाद के प्रकार (Types of Panel Discussion)

सामूहिक वाद-विवाद का वर्गीकरण कई प्रकार से किया जाता है। प्रथम वर्गीकरण अवस्था के आधार पर किया जाता है, इसके प्रमुख दो प्रकार होते हैं–

(1) सार्वजनिक वाद-विवाद (Public Discussion)

(2) शैक्षिक वाद-विवाद (Educational Discussion)।

(1) सार्वजनिक वाद–विवाद-जन-साधारण को प्रभावित करने वाली समस्याओं तथा सूचनाओं को देने के लिये किया जाता है। इस प्रकार के वाद-विवादों का आयोजन तीन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये किया जाता है–

(अ) सूचनाओं तथा तथ्यों को प्रदान करना।

(ब) सामाजिक मूल्यों का निर्धारण करना।

(स) जन-साधारण का मनोरंजन कराना।

इस प्रकार के वाद-विवाद आजकल दूरदर्शन (Television) पर अक्सर आते हैं। इसके अतिरिक्त समस्याओं पर वाद-विवादों का आयोजन किया जाता है; जैसे–बेरोजगारी की समस्या, महंगाई की समस्या, वार्षिक बजट से चीजों की कीमतें बढ़ने का प्रभाव आदि।

(2) शैक्षिक वाद-विवाद–छात्रों को सूचनाओं तथा तथ्यों को बोधगम्य करने के लिये, सिद्धान्तों व प्रत्ययों के स्पष्टीकरण करने के लिये और समस्याओं के समाधान के लिये सामूहिक वाद-विवादों का नियोजन किया जाता है। इस प्रकार वाद-विवादों के आयोजन से तीन प्रकार के उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है–

(अ) सूचनाओं तथा तथ्यों को प्रदान करना।

(ब) सिद्धान्तों और प्रत्ययों को बोधगम्य करना।

(स) समस्या का समाधान ज्ञात करना।

इस प्रकार के वाद-विवाद का आयोजन हमारी शिक्षा संस्थाओं में शून्य के बराबर होता है। परन्तु अन्य प्रविधियों जैसे–सम्मेलन, विचार गोष्ठी, विचार समिति, कार्यक्षमताओं में इस प्रविधि का प्रयोग किया जाता है, परन्तु स्वरूप भिन्न होता है। छात्रों द्वारा जिन सामूहिक वाद-विवादों का आयोजन किया जाता है, उनकी परिस्थिति पूर्ण रूप से प्रजातांत्रिक होती है।

सामूहिक वाद-विवाद का सैद्धान्तिक आधार (Theoretical Basis of Panel Discussion)

यह अनुदेशन की प्रविधि निम्नांकित सिद्धान्तों पर आधारित है–

(1) प्रजातांत्रिक मूल्यों एवं सिद्धान्तों का अनुसरण करती है। सभी सदस्यों को स्पष्टीकरण का अवसर दिया जाता है।

(2) मौलिकता तथा सक्रियता के विकास को अवसर देती है।

(3) सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों को महत्व दिया जाता है।

(4) आधुनिक-व्यवस्था सिद्धान्त को महत्व दिया जाता है।

इस सामूहिक वाद-विवाद अधिगम प्रविधि में चिन्तन स्तर के शिक्षण का सम्पादन किया जाता है। छात्रों को मौलिक ढंग से चिन्तन तथा आलोचना करने का अवसर दिया जाता है।

क्या आप जानते हैं सामूहिक वाद-विवाद के प्रारम्भ में समूह प्रकरण के सम्बन्ध में मूल्यवान तथा महत्त्वपूर्ण समस्याओं व कठिनाइयों की खोज करता है, जिससे श्रोतागणों को प्रकरण को स्पष्ट रूप में समझने में सहायता मिलती है। इस प्रकार सामूहिक वाद-विवाद अधिगम के लिये प्रभावशाली प्रविधि अथवा यन्त्र है।

नोट

सामूहिक वाद-विवाद का स्वरूप (Structure of Panel Discussion)

सामूहिक वाद-विवाद में चार प्रकार की भूमिकायें (Roles) निभानी होती हैं अथवा चार प्रकार के व्यक्ति विभिन्न प्रकार की भूमिकायें निभाते हैं–

(1) अनुदेशक (Instructor) (2) अध्यक्ष (Moderator) (3) समूह के सदस्य (Panelists) तथा (4) श्रोतागण (Audience)।

अनुदेशक (Instructor) का कार्य अधिक महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि उसे वाद-विवाद की सम्पूर्ण व्यवस्था करनी होती है; जैसे–वाद-विवाद प्रकरण, समय, स्थान, समूह सदस्य कौन तथा कितने होंगे एवं अध्यक्ष कौन होगा? इसके अतिरिक्त वाद-विवाद का पूर्व आभास (Rehearsal) भी कराता है। सम्पूर्ण कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार की जाती है।

अध्यक्ष (Moderator) की भूमिका वाद-विवाद के समय अधिक महत्त्वपूर्ण होती है, क्योंकि समूह के वाद-विवाद का अध्यक्ष ही संचालन करता है और बीच-बीच में उनकी अन्त:प्रक्रिया व तर्कों का संक्षेपीकरण एवं सुधार करता है। इसलिये प्रकरण में सम्बन्ध में अध्यक्ष को स्वामित्व या विशेषज्ञ होना आवश्यक होता है।

समूह के सदस्य (Panelists) की संख्या 4 से 10 तक होती है। समूह के सदस्य एक अर्द्धवृत्त में श्रोताओं के समक्ष बैठते हैं तथा इसके मध्य में अध्यक्ष (Moderator) बैठता है। समूह के सदस्यों को प्रकरण पर स्वामित्व होना चाहिए, यदि पूर्ण अधिकार नहीं है तब उन्हें प्रकरण के सम्बन्ध में यही बोध होना आवश्यक होता है।

वाद-विवाद प्रारम्भ करने में अध्यक्ष प्रकरण समस्या के सम्बन्ध में ऐसे बिन्दुओं की ओर संकेत करता है, जिससे सदस्यगण तथा श्रोतागण उसके स्वरूप को जान सकें। एक-एक बिन्दु पर सदस्यगण प्रतिक्रिया करते हैं, तर्क देते हैं। अध्यक्ष अन्त में उसमें सुधार करके निष्कर्ष का संक्षेपीकरण करता है। साधारणत: आयोजन 30 मिनट से 1 घण्टे तक किया जाता है।

श्रोतागण (Audience) जब वाद-विवाद समाप्त हो जाता है, उसके अन्त में श्रोतागण प्रश्न पूछते हैं। श्रोतागण अपना दृष्टिकोण तथा अनुभवों को भी प्रस्तुत करते हैं। कुछ बिन्दुओं का स्पष्टीकरण चाहते हैं, जिन्हें वाद-विवाद में सम्मिलित नहीं किया गया था। श्रोतागणों के प्रश्नों का उत्तर तथा उनकी शंकाओं का समाधान पहले समूह के सदस्य देने का प्रयास करते हैं। यदि सदस्यगण उत्तर देने में असमर्थ होते हैं, ऐसी परिस्थिति में अध्यक्ष अपनी प्रतिक्रिया तथा समाधान प्रस्तुत करता है।

अन्त में, अध्यक्ष वाद-विवाद के निष्कर्षों का संक्षेपीकरण करता है तथा अपने दृष्टिकोण को रखता है। समूह के सदस्यों के प्रति आभार प्रदर्शित करता है और श्रोतागणों को धन्यवाद देता है।

उपयोग (Uses)

इस शिक्षण प्रविधि की निम्नलिखित उपयोगिता है–

(1) इसमें सामाजिक अधिगम (Social Learning) को अधिक प्रोत्साहन मिलता है।

(2) इस प्रविधि से ज्ञानात्मक तथा भावात्मक पक्षों के उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। निम्न उद्देश्यों के लिये इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता।

(3) छात्रों में ज्ञान वृद्धि के साथ समस्या, समाधान, तर्कशक्ति, आलोचना करने की क्षमताओं का विकास होता है।

(4) छात्रों में अभिरुचि तथा अभिवृत्तियों का विकास होता है तथा दूसरों के विचारों के प्रति सम्मान की प्रवृत्ति का विकास होता है।

(5) पाठ्यवस्तु तथा प्रकरण के बोधगम्य के साथ परिपाक (Assimilation) को भी प्रोत्साहन मिलता है। प्रकरणों के उदाहरण–

(अ) "शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक यन्त्र है।"

(ब) "अध्यापक शिक्षा में छात्र-शिक्षण।"

(स) "जनसंख्या की शिक्षा।"

नोट

(द) "राष्ट्रीय भावना तथा अन्तर्राष्ट्रीय भावना।"

(य) "शैक्षिक तकनीकी का भारतीय शिक्षा में क्षेत्र।"

(र) "निबन्धात्मक परीक्षाओं का उपयोग।"

(ल) "प्रौढ़ शिक्षा की उपादेयता।"

विशेषताएँ (Characteristics)

सामूहिक वाद-विवाद की प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार हैं—

(1) विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों के लिये इस प्रविधि द्वारा चिन्तन स्तर पर शिक्षण व्यवस्था की जाती है।

(2) इससे समस्या-समाधान की क्षमताओं एवं प्रवृत्ति का विकास होता है।

(3) समस्या तथा प्रकरण का सही रूप समझने के लिये छात्रों को अवसर मिलता है।

(4) समूह के सदस्यों के रूप में छात्रों को भी सम्मिलित किया जा सकता है। उसके लिये वाद-विवाद का पूर्व अभ्यास आवश्यक होता है, जिसके तर्क करने से अपने विचारों एवं दृष्टिकोण के प्रस्तुतीकरण की क्षमताओं का विकास होता है।

(5) छात्रों में सही दृष्टिकोण एवं अभिवृत्तियों का विकास होता है तथा दूसरों के विरोधी विचारों के प्रति सम्मान की भावना का विकास होता है।

(6) छात्रों में सृजनात्मक तथा आलोचनात्मक विश्लेषण एवं विवेचन की क्षमताओं एवं योग्यताओं का विकास होता है।

(7) शैक्षिक वाद-विवाद में भाग लेने के तरीकों (Mannerism) को सीखने तथा अनुकरण करने का अवसर मिलता है।

सीमाएँ (Limitations)

सामूहिक वाद-विवाद प्रविधि की निम्नलिखित सीमायें भी हैं—

(1) सामूहिक वाद-विवाद में सदस्यगण विषयान्तर बातें करने से छात्रों में भ्रम उत्पन्न होता है।

(2) समूह के कुछ सदस्य ही वाद-विवाद में अधिक बोलते हैं।

(3) समूह के सदस्यों में दो समूहों में बँटने की सम्भावना अधिक रहती है। ऐसी स्थिति में वाद-विवाद अधिक उपयोगी नहीं रहता है।

(4) समूह के सदस्यों के पूर्व स्पर्धा के कारण भी आलोचना रचनात्मक नहीं होती है।

सुझाव (Suggestion)

सामूहिक वाद-विवाद प्रविधि के सम्पादन में निम्नलिखित सावधानियाँ रखनी चाहिए—

(1) अनुदेशक को समूह के सदस्यों के चयन करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उनमें आपस में किसी प्रकार का मनमुटाव न हो।

(2) अध्यक्ष की प्रमुख भूमिका तथा उत्तरदायित्व यह होता है कि सभी सदस्यों को वाद-विवाद में भाग लेने का अवसर दें। यह उसके संचालन की क्षमता पर भी निर्भर करता है। अध्यक्ष का समूह पर नियन्त्रण होना आवश्यक है। विषय में पारंगत तथा वरिष्ठ व्यक्ति ही अध्यक्ष चुना जाना चाहिए।

(3) सदस्यों के बैठने की व्यवस्था इस प्रकार की हो कि वे एक-दूसरे के सम्मुख हों, अध्यक्ष से समान दूरी रहे और श्रोतागण भी सभी को देख सकें।

(4) अध्यक्ष को उन्हीं बिन्दुओं पर आलोचना के लिये प्रोत्साहित करना चाहिए, जिन पर रचनात्मक सुझाव तथा आलोचना की जा सके। सदस्यों के सार्थक तथा रचनात्मक सुझावों को बढ़ावा देना चाहिए।

(2) सम्मेलन प्रविधि (Conference Technique)

शिक्षा के क्षेत्र में उच्च अधिगम के लिये यह एक महत्त्वपूर्ण प्रविधि है। इस प्रविधि का उपयोग अनुदेशन एवं अधिगम परिस्थितियों को उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। शिक्षा के ज्ञानात्मक एवं भावात्मक उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। एक बड़े समूह की सभा का आयोजन होता है। इसके अन्तर्गत तात्कालिक गम्भीर समस्याओं पर विचार किया जाता है। उदाहरणस्वरूप निर्गुट देशों का सम्मेलन (NAM) मार्च 1993 में हुआ था। इनका मुख्य लक्ष्य 'अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति' रखना है। इससे सम्बन्धित विविध समस्याओं पर विचार किया गया था।

सन् 1920 से सम्मेलन प्रविधि को अधिक बढ़ावा दिया गया है। इसमें सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, मानवशास्त्र की व्यापक समस्याओं पर विचार किया गया।

सन् 1930 में अन्त:विषयक (Interdisciplinary) सम्बन्धी समस्याओं के सम्मेलनों का आयोजन किया गया। शोध कार्यों में अन्त:विषय समस्याओं को बढ़ावा मिला।

सन् 1940 में तात्कालिक उपयोग एवं समस्याओं के समाधान पर सम्मेलनों का आयोजन हुआ। इसके परिणामस्वरूप शोध कार्यों को भी नयी दिशा मिली। इस समय में प्रगति की योजनाओं के मूल्यांकन, शोध के परिणामों के मूल्यांकन तथा नवीन प्रत्ययों के प्रयोग के सम्बन्ध में निर्णय लेने हेतु सम्मेलनों का आयोजन हुआ। सन् 1950 में शैक्षिक विषयों पर सम्मेलनों के आयोजनों को प्राथमिकता दी गई। आधुनिक समय में सम्मेलन प्रविधि का महत्त्व प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त है। सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षिक आदि क्षेत्रों में सम्मेलन प्रविधि का उपयोग किया जाता है। प्रजातन्त्र के मूल्यों तथा लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये सम्मेलन प्रविधि का विशेष महत्व है। अंग्रेजी में सम्मेलन को कई शब्दों से सम्बोधित किया जाता है, जैसे—कॉन्फ्रेंस (Conference), कन्वेन्शन (Convention) तथा सम्मेलन आदि।

सम्मेलन प्रविधि का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Conference)

शिक्षकों, अनुदेशकों तथा निर्देशकों की एक सभा होती है, जिसमें कक्षा, अनुदेशन एवं विद्यालय सम्बन्धी समस्याओं पर वाद-विवाद किया जाता है और वे किसी निर्णय पर पहुँचते हैं।

"A Conference is a meeting of individuals called together to engage a discussion with the aim of accomplishing a limited task with in restricted."

"सम्मेलन व्यक्तियों की एक सभा होती है, जिसमें उन्हें एक साथ किसी विशिष्ट कार्य या समस्या पर चिन्तन तथा वाद-विवाद एक निश्चित समय में करना होता है।" "साधारणत: सम्मेलन किसी संगठन द्वारा आयोजित किया जाता है।" संगठन के स्थायी सदस्य होते हैं। संगठन की कार्यकारिणी होती है, जिसमें अध्यक्ष, मन्त्री, कोषाध्यक्ष तथा अन्य सदस्य होते हैं। यह संगठन प्रतिवर्ष किसी प्रकरण एवं समस्या पर सम्मेलन का आयोजन करता है। इसमें सदस्यों को आमन्त्रित किया जाता है। प्रत्येक संगठन का अपना एक व्यापक लक्ष्य होता है। उसी दिशा में सम्मेलन के प्रकरण या समस्या का चयन किया जाता है। सम्मेलन की अध्यक्षता संगठन का अध्यक्ष करता है और मन्त्री सम्मेलन की व्यवस्था करता है। विशेषज्ञों को भी अतिथि के रूप में आमन्त्रित किया जाता है।

सम्मेलन का आयोजन विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, दार्शनिक, राजनैतिक संगठनों द्वारा किया जाता है। शैक्षिक क्षेत्र में विभिन्न विषयों के संगठनों द्वारा सम्मेलनों का आयोजन किया जाता है। विशेष रूप में आज शोध के क्षेत्र में सम्मेलनों के आयोजनों को प्राथमिकता दी जाती है। सम्मेलन का आयोजन तीन स्तरों पर किया जाता है। **क्षेत्रीय स्तर** के सम्मेलन वे हैं जिसमें क्षेत्र की समस्याओं को प्राथमिकता दी जाती है। **राष्ट्रीय स्तर** के सम्मेलन वे हैं, जिसमें राष्ट्र सम्बन्धी शैक्षिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक समस्याओं को महत्त्व दिया जाता है। **अन्तर्राष्ट्रीय स्तर** के सम्मेलन में मानवीय समस्याओं, वैज्ञानिक आविष्कारों, नवीन आयामों सम्बन्धी समस्याओं पर चिन्तन एवं विवेचन किया जाता है।

सम्मेलन प्रविधि के उद्देश्य (Objectives of Conference)

राष्ट्र, समाज, धर्म एवं शिक्षा व विज्ञान की विशिष्ट एवं तात्कालिक समस्याओं के अध्ययन एवं विवेचन का सम्मेलन एक प्रमुख प्रविधि है। सम्मेलन का उद्देश्य अधिक व्यापक होता है, जिसको ज्ञानात्मक तथा भावात्मक पक्षों के विकास

नोट

के लिये किया जाता है। सम्मेलन का लक्ष्य संगठन द्वारा निर्धारित किया जाता है; जैसे–**'निर्गुट देश'** संगठन का लक्ष्य **'अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति स्थापित करना'** इस प्रकार **'अध्यापक शिक्षा संघ'** का लक्ष्य **'अध्यापक शिक्षा में विकास एवं प्रगति करना'** भारतीय शैक्षिक तकनीकी संघ (AETA) का लक्ष्य **'शैक्षिक तकनीकी का प्रयोग एवं विकास करना।'** इस प्रकार सम्मेलन के उद्देश्य संगठन द्वारा निर्धारित किये जाते हैं। परन्तु सामान्य उद्देश्य इस प्रकार हैं–

(अ) **ज्ञानात्मक उद्देश्य** (Cognitive Objective)–सम्मेलन प्रविधि के ज्ञानात्मक उद्देश्य निम्नलिखित है–

1. विश्लेषण, संश्लेषण एवं मूल्यांकन की क्षमताओं का विकास करना।
2. आलोचनात्मक दृष्टिकोण का विकास करना, तर्कशक्ति का विकास करना।
3. निरीक्षणों एवं अनुभवों की अभिव्यक्ति की क्षमताओं का विकास करना। तथ्यों को गहनता से अध्ययन की क्षमताओं का विकास करना।
4. सम्बन्धित विषय एवं समस्या के प्रति संवेदनशीलता का विकास करना।

(ब) **भावात्मक उद्देश्य** (Affective Objectives)–इस प्रविधि से निम्नलिखित भावात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति होती है–

1. किसी प्रत्यय एवं तथ्य को व्यापक रूप में बोधगम्य करने की प्रवृत्ति का विकास करना।
2. भावात्मक सन्तुलन की प्रवृत्ति का विकास करना।
3. विरोधी विचारों के प्रति सम्मान एवं सहनशीलता का विकास करना।
4. सहयोग की भावना एवं विचारों की स्वच्छन्दता का विकास करना।

सम्मेलन में भाग लेने से व्यावहारिक कौशलों एवं अच्छी संस्कृति का विकास होता है। इस बात का प्रशिक्षण होता है कि किस प्रकार अपने विचारों को प्रस्तुत किया जाये और किस प्रकार प्रश्न पूछकर अपनी शंकाओं का स्पष्टीकरण किया जाये।

(3) कार्यशाला प्रविधि (Workshop Technique)

शिक्षा-प्रक्रिया के प्रमुख दो पक्ष माने जाते हैं–सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक। अनुदेशन प्रविधियों द्वारा सैद्धान्तिक पक्ष का विकास किया जाता है। उच्च ज्ञानात्मक तथा भावात्मक पक्षों के विकास के लिये विचार-गोष्ठी तथा सम्मेलन का आयोजन किया जाता है। क्रियात्मक पक्ष के विकास के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षण, शिक्षण प्रक्रिया के सतत् क्षेत्र का एक पक्ष है। छात्रों को नवीन प्रकार की परीक्षाओं के विषय में जानकारी देना, अनुदेशन के निर्माण, नवीन प्रकार की पाठ योजनाओं की रचना, अनुदेशन के निर्माण, नवीन प्रकार की पाठ योजनाओं की रचना तथा शिक्षण-अधिगम उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिये प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, इसके लिये कार्यशाला प्रविधि का प्रयोग किया जाता है। कार्यशाला प्रविधि का प्रयोग क्रियात्मक पक्ष (Psychomotor Domain) के विकास के लिये किया जाता है। कार्यशाला प्रविधि के प्रयोग से कुछ कार्य हाथ से करने के लिये प्रशिक्षण तथा अवसर दिया जाता है।

'कार्यशाला' का स्रोत (Source of Workshop)–यह शब्द इन्जीनियरिंग से लिया गया है। अभियान्त्रिकी में अक्सर कार्यशाला (Workshop) होती है, जिनमें व्यक्तियों को हाथ से कुछ न कुछ कार्य करना होता है। जिससे कुछ उत्पादन होता है; जैसे–रोडवेज वर्कशाप, रेलवे वर्कशाप आदि। इनके अन्तर्गत इन्जनों को सुधार किया जाता है या नया इन्जन तैयार किया जाता है। इसी प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में परीक्षाओं के निर्माण के लिये 'प्रश्न बैंक वर्कशाप' (Question Bank Workshop) का आयोजन किया जाता है। इसमें भाग लेने वाले अपनी विषय से सम्बन्धित पाठ्य-वस्तु पर प्रश्नों की रचना करते हैं। इनके बनाने की विधि की जानकारी तथा प्रशिक्षण कार्यशाला में दिया जाता है। इस शब्द को तकनीकी से लिया गया है।

कार्यशाला के उद्देश्य (Objective of Workshop)

इस प्रविधि का प्रयोग ज्ञानात्मक तथा क्रियात्मक उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये किया जाता है। कार्य-क्षमता के उद्देश्यों को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है।

नोट

(अ) ज्ञानात्मक उद्देश्य—इस अनुदेशन प्रविधि के प्रयोग से निम्नलिखित ज्ञानात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है—

(1) शिक्षण व्यवसाय सम्बन्धी समस्याओं का समाधान ढूँढ निकालना।

(2) अनुदेशन तथा शिक्षा-सम्बन्धी परिस्थितियों के सामाजिक अथवा दार्शनिक पक्ष का विस्तार में विवेचन करना।

(3) शिक्षा एवं व्यवसाय सम्बन्धी उद्देश्यों एवं विधियों का सामूहिक रूप में निर्धारण करना।

(4) किसी प्रकरण सम्बन्धी स्पष्टीकरण करने तथा उसके व्यावहारिक पक्ष के महत्व को समझना।

(ब) क्रियात्मक उद्देश्य—इस प्रविधि के उपयोग करने से निम्नांकित क्रियात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है—

(1) शिक्षण की विशिष्ट व्यावसायिक क्षमताओं का विकास करना।

(2) व्यक्तिगत रूप में भाग लेने तथा कार्य करने की योग्यताओं का विकास करना।

(3) शिक्षण की प्रभावशाली प्रविधियो एवं विधियों का निर्धारण करना।

(4) शिक्षण तथा शिक्षा सम्बन्धी नये आयामों का प्रशिक्षण देना।

कार्यशाला प्रविधि का प्रमुख उद्देश्य यह है कि नवीन प्रविधि विधियों एवं आयामों से सेवारत शिक्षकों को अवगत कराना एवं उनका प्रशिक्षण देना, जिसे वह अपने कक्षा शिक्षण में उपयोग कर सकें तथा अपने शिक्षण की प्रभावशीलता में वृद्धि कर सकें। कार्यशालाओं में भाग लेने वाले शिक्षकों को कुछ न कुछ करने का अवसर दिया जाता है; जैसे—नवीन प्रकार की परीक्षाओं के लिये प्रश्नों की रचना करना, उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना, किसी प्रकरण पर अनुदेशन तैयार करना, नवीन प्रकार की पाठ-योजना के प्रतिमान तैयार करना आदि।

कार्यशाला की भूमिकाएँ (Role in Workshop)

कार्यशाला के आयोजन एवं व्यवस्था के लिये चार प्रकार की भूमिकायें निभानी होती हैं—

(1) अनुदेशक/व्यवस्थापक (Instructor/Organizer)

(2) अध्यक्ष/संचालक (President or Convener or Chairman)

(3) विशेषज्ञ/स्रोत व्यक्ति (Resource Persons of Experts)

(4) भागीदार/प्रशिक्षणार्थी (Participants or Trainees)

(1) **अनुदेशक** कार्यशाला की योजना तैयार करके व्यवस्था करता है। कार्यशाला का प्रकरण तथा स्रोत-व्यक्तियों का निर्धारण करके उनसे सम्पर्क स्थापित करता है और कार्यशाला का स्थान, तिथियाँ, कार्यक्रम के सम्बन्ध में निर्णय लेकर उनकी व्यवस्था करता है। इन सभी कार्यों का उत्तरदायित्व अनुदेशक या व्यवस्थापक का होता है।

(2) **अध्यक्ष** का चयन अनुदेशक करता है। अध्यक्ष ऐसा व्यक्ति होना चाहिए, जिसे कार्यशाला के प्रकरण तथा उसकी व्यावहारिक उपयोगिता का पूर्ण बोध हो। कार्यशाला के आरम्भिक अवस्था में अध्यक्ष की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

(3) **विशेषज्ञों** या स्रोत व्यक्तियों की भूमिका ऐसे आयोजन पर अधिक महत्वपूर्ण होती है। इनका उत्तरदायित्व होता है कि वे प्रशिक्षणार्थियों को नवीन आयाम के सम्बन्ध में जानकारी प्रदान करें। तत्पश्चात् उसके प्रयोग के लिये प्रशिक्षण भी दें, जिससे वे अपने शिक्षण या शिक्षा संस्थाओं में उपयोग कर सकें। स्रोत व्यक्ति के ज्ञानात्मक तथा क्रियात्मक पक्ष का विकास करते हैं।

(4) **प्रशिक्षार्थियों** की नवीन आयामों में रुचि होना आवश्यक होता है। प्रकरण का उनसे प्रत्यक्ष सम्बन्ध होना चाहिए। कार्यशाला की प्रथम अवस्था में आयाम को बोधगम्य करने के लिये स्पष्टीकरण करना नितान्त आवश्यक होता है। द्वितीय अवस्था में जब उस समय जो उन्हें कठिनाइयाँ आती हैं, स्रोत व्यक्ति उनकी सहायता करता है। तृतीय अवस्था में जब वह अपने विद्यालय में जाता है तब उनका प्रयोग अपने छात्रों पर करता है और उनकी जाँच करता है और प्रभावशीलता का मूल्यांकन करता है।

नोट

कार्यशाला प्रविधि की प्रक्रिया (Procedure of Workshop)

साधारणत: कार्यशाला प्रविधि का कार्यकाल 3 दिन से 10 दिन तक रखा जाता है, परन्तु इससे अधिक भी हो सकता है। कार्यशाला की तीन अवस्थायें होती हैं–

प्रथम अवस्था–प्रकरण सम्बन्धी प्रस्तुतीकरण।

द्वितीय अवस्था–आयाम का प्रयोग करने का अभ्यास करना।

तृतीय अवस्था–तैयार की गई सामग्री की जाँच तथा मूल्यांकन करना, जिसे अनुसरण प्रविधि (Follow-up) कहते हैं।

प्रथम अवस्था–कार्यशाला की इस अवस्था में स्रोत व्यक्ति प्रकरण सम्बन्धी पाठ्य-वस्तु को प्रपत्र के रूप में प्रस्तुत करते हैं। अक्सर वे प्रकरण को तैयार करके लाते हैं एवं उसको परीक्षार्थियों में वितरित कर देते हैं। इन्हें यह अवसर दिया जाता है कि प्रकरण या समस्या पर बहुत अध्ययन कर सकें। कार्यशाला की व्यवस्था उनकी समस्याओं, आवश्यकताओं तथा अभिरुचियों को ध्यान में रखकर की जाती है। प्रशिक्षणार्थियों को स्पष्टीकरण के लिए अवसर दिया जाता है। स्रोत-व्यक्ति प्रकरण या आयाम के प्रयोग के सोपानों का विस्तार में उदाहरणों सहित विवेचन करता है।

द्वितीय अवस्था–कार्यशाला की प्रथम अवस्था एक या दो दिन तक चल सकती है। यह प्रकरण की प्रकृति तथा समस्या के स्वरूप पर निर्भर करती है। इसके बाद अनुदेशक परीक्षार्थियों को छोटे-छोटे समूह में विभाजित करता है; जैसे–कार्यशाला का आयोजन 'पाठ योजना' या प्रश्नों के बैंकों पर किया है तब छोटे-छोटे शिक्षण विषयों (हिन्दी, विज्ञान, सामाजिक विषय, गणित) के आधार पर किया जा सकता है। प्रत्येक समूह का नेतृत्व एक स्रोत-व्यक्ति करता है। कार्यशाला की यह अवस्था प्रकरण के स्वरूप पर निर्भर करती है। यह तीन दिन से एक सप्ताह तक चलती है। स्रोत-व्यक्ति के निर्देशन में प्रत्येक समूह अपने कार्य का नियोजन करके करना आरम्भ करते हैं। प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी को अपने कार्य निर्धारण की स्वतन्त्रता दी जाती है। कार्य करने के बाद अपने-अपने समूह में उसके सुधार के लिये समूह प्रयास करता है। प्रत्येक समूह का एक व्यक्ति उसकी व्याख्या तैयार करता है। द्वितीय अवस्था के अन्तिम चरण में सभी समूह एक साथ मिलते हैं और अपने कार्यों की आख्या प्रस्तुत करते हैं, जिसकी रिपोर्ट तैयार की जा सकती है।

तृतीय अवस्था (Follow-up)–कार्यशाला की औपचारिक व्यवस्था द्वितीय अवस्था के अन्तिम चरण पर समाप्त हो जाती है। परन्तु तृतीय अवस्था अनौपचारिक होती है, जिसमें शिक्षणार्थी अपने-अपने विद्यालयों एवं कार्यक्षेत्र में जाकर उस शिक्षण-सामग्री की जाँच करके सुधार करते हैं और मूल्यांकन करते हैं। इस अवस्था के अन्त में अनुदेशक सभी शिक्षणार्थियों को एक या दो दिन के लिये एकत्रित कर सकता है या उनकी आख्या भी मांग सकता है। यह अवस्था कार्यशाला की व्यवस्था तथा उसकी प्रभावशीलता का महत्वपूर्ण पक्ष माना जाता है, जिसे अनुकरण-प्रविधि (Follow-up) कहते हैं। तृतीय अवस्था के बाद ही कार्यशाला का समापन होता है। इसमें निर्देशन की व्यवस्था की जाती है। कार्यशाला में सदस्यों के कार्यों का मूल्यांकन नहीं किया जाता है, अपितु आयाम की व्यावहारिकता की जाँच की जाती है। सदस्यों में आयाम के प्रयोग की दक्षता का विकास किया जाता है।

कार्यशाला की आख्या भी तैयार की जाती है। तैयार की गई सामग्री को भी आख्या के अन्त में सम्मिलित किया जाता है।

कार्यशाला का क्षेत्र (Scope of Workshop)

कार्यशाला प्रविधि का उपयोग शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक रूप में किया जाता है। प्रमुख क्षेत्र इस प्रकार हैं–

(1) पाठ-योजना के नवीन प्रारूप के लिये–अध्यापक शिक्षा में नवीन पाठ-योजना के प्रयोग हेतु प्रवक्ताओं के लिये किया जाता है।

(2) पाठ-योजना अथवा परीक्षा के निर्माण के लिये 'उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में' लिखने हेतु।

(3) नवीन प्रकार की परीक्षाओं के प्रश्न-पत्रों के निर्माण हेतु।

(4) अनुदेशन सामग्री; जैसे–'अभिक्रमित अनुदेशन' के निर्माण हेतु।

(5) कक्षा-अन्त:प्रक्रिया को समझने तथा निरीक्षण एवं अर्थापन हेतु।
(6) सूक्ष्म-शिक्षण, अनुकरणीय शिक्षण तथा टोली-शिक्षण के प्रयोग करने हेतु।
(7) क्रियात्मक अनुसन्धान के प्रयोग करने हेतु कार्यशालाओं का आयोजन होता है।

कार्यशाला की विशेषताएँ (Advantages of Workshop)

कार्यशाला अनुदेशन एवं अधिगम परिस्थितियों को उत्पन्न करने की एक प्रभावशाली प्रविधि है। इस प्रविधि की निम्नलिखित विशेषतायें हैं–

(1) शिक्षा के ज्ञानात्मक एवं क्रियात्मक उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है।
(2) शिक्षा के नवीन आयामों के सैद्धान्तिक तथा क्रियात्मक पक्षों का बोध कराया जाता है।
(3) इस विधि के उपयोग से व्यावसायिक क्षमताओं का विकास किया जाता है।
(4) शिक्षण कौशलों का विकास एवं सुधार किया जाता है।
(5) उच्च स्तरीय व्यक्तिगत क्रियाओं को प्रोत्साहित किया जाता है तथा उनके अभ्यास को अवसर दिया जाता है।
(6) समूह में कार्य करने तथा सहयोग की भावना का विकास होता है।
(7) इसमें व्यावसायिक समस्याओं के गहन अध्ययन का अवसर मिलता है।
(8) समस्याओं के समाधान एवं व्यावसायिक कौशलों के विकास के लिये सुझाव तथा निर्देशन भी दिया जाता है।
(9) कार्यशाला द्वारा नवीन प्रत्ययों एवं आयामों से अवगत कराया जाता है तथा उनकी प्रभावशीलता के मूल्यांकन का अवसर मिलता है।
(10) इस प्रविधि के प्रयोग से व्यावसायिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण व्यापक होता है।

कार्यशाला की सीमाएँ (Limitations of Workshop)

कार्यशाला की निम्नांकित सीमायें हैं

(1) इस प्रविधि में शिक्षणार्थियों को अधिक समय तक कार्य करना होता है, इसलिए वह रुचि नहीं लेते हैं। अक्सर व्यवस्था ज्ञान स्तर पर ही होती है।
(2) अधिक सदस्यों के कार्य के लिये व्यवस्था करना कठिन होता है, क्योंकि विशिष्ट प्रकार की सामग्री की व्यवस्था करनी होती है।
(3) सेवारत शिक्षक नवीन प्रत्ययों एवं आयामों में रुचि नहीं लेते हैं, क्योंकि उनकी अभिवृत्ति उनके पक्ष में नहीं होती है।
(4) शिक्षकों में सहयोग की भावना का अभाव होता है।
(5) कार्यशालाओं में अनुकरण अवस्था (Follow-up) का अभाव रहता है, जिससे सदस्यों को उसकी प्रभावशीलता का बोध नहीं होता है।

(4) विचार गोष्ठी प्रविधि (Seminar Technique)

शिक्षण का एक सतत् क्षेत्र-स्मृति (Memory) से चिन्तन (Reflection) तक कार्य करती है। विद्यालय एवं महाविद्यालयों का शिक्षण तथा अनुदेशन स्मृति स्तर तक ही सीमित रहता है। अधिक से अधिक बोधस्तर पर सम्भव हो पाता है, जबकि महाविद्यालयों तथा शोध संस्थाओं में अनुदेशनात्मक परिस्थितियाँ ऐसी होनी चाहिए, जो चिन्तन स्तर की अधिगम परिस्थितियों को प्रोत्साहित कर सके। ऐसी परिस्थितियों में मानवी अन्त:प्रक्रिया से उच्च ज्ञानात्मक योग्यताओं एवं क्षमताओं को विकसित किया जाता है। इस प्रकार की अधिगम परिस्थितियों को उत्पन्न करने के लिये अनेक प्रकार के शिक्षण एवं अनुदेशन प्रतिमानों तथा प्रविधियों का विकास किया गया है, जो शिक्षण-अधिगम के सिद्धान्तों पर आधारित है; जैसे–वाद-विवाद, सेमीनार, सम्मेलन, सभाओं का आयोजन, अनुकरणीय शिक्षण आव्यूह, वर्कशाप, सामूहिक वाद-विवाद प्रतियोगिता आदि हैं। यहाँ पर विचार गोष्ठी प्रविधि का विवेचन किया गया है।

नोट

विचार गोष्ठी प्रविधि (Seminar Technique)

विचार गोष्ठी अनुदेशन की ऐसी प्रविधि है, जिससे चिन्तन स्तर के अधिगम के लिये अन्त:-प्रक्रिया की परिस्थिति उत्पन्न की जाती है। इस प्रविधि को विभिन्न स्तरों पर अनुदेशन-परिस्थितियों के लिये प्रयुक्त किया जाता है।

विचार गोष्ठी प्रविधि के उद्देश्य (Objective of Seminar Technique)

प्रजातान्त्रिक राष्ट्र एवं समाज के लिये सेमीनार प्रविधि अधिक उपयोगी है। इस प्रविधि के प्रयोग से ज्ञानात्मक तथा भावात्मक उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। सेमीनार के उद्देश्यों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है–

(अ) ज्ञानात्मक उद्देश्य (Cognitive Objectives)–इस प्रविधि के उपयोग से अधिगम की ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न की जाती हैं, जिससे ज्ञानात्मक पक्ष के उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है–

(1) विश्लेषण तथा आलोचनात्मक क्षमताओं का विकास करना।

(2) संश्लेषण तथा मूल्यांकन की योग्यता का विकास करना।

(3) निरीक्षण तथा अनुभवों के प्रस्तुतीकरण की क्षमताओं का विकास करना।

(4) किसी प्रकरण सम्बन्धी स्पष्टीकरण करने तथा उससे सम्बन्धित समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता का विकास करना।

(ब) भावात्मक उद्देश्य (Affective Objectives)–सेमीनार में भाग लेने से उच्च भावात्मक पक्षों का विकास भी होता है।

(1) अन्य व्यक्तियों के विरोधी विचार तथा दृष्टिकोण की सहनशीलता का विकास होता है।

(2) विचारों की स्वच्छन्दता तथा दूसरों से सहयोग की भावना का विकास होता है।

(3) भावात्मक स्थिरता का विकास होता है।

(4) दूसरों की भावनाओं के प्रति सम्मान की भावना का विकास होता है।

ज्ञानात्मक तथा भावात्मक उद्देश्यों के अतिरिक्त सेमीनार से अपना दृष्टिकोण रखने का स्पष्टीकरण करने तथा माँगने के व्यवहारों का विकास होता है। प्रश्नों के पूछने तथा प्रश्नों के उत्तर देने के कौशल का विकास होता है। अपने विरोधी दृष्टिकोण को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने का तर्क करने के संतुलित ढंग का विकास होता है। सेमीनार के मानक व्यवहारों के आचरण के कौशल का विकास होता है।

विचार गोष्ठी की भूमिकाएँ (Roles in Seminar)

विचार गोष्ठी के आयोजन में चार भूमिकाएँ निभानी होती हैं–

(1) अनुदेशन/व्यवस्थापक (Instructor/Organizer)

(2) अध्यक्ष (President or Chairman)

(3) वक्तागण (Speakers) तथा

(4) भागीदार (Participants)।

(1) अनुदेशक या व्यवस्थापक की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विचार गोष्ठी आयोजन का पूर्ण उत्तरदायित्व भी इसी का होता है। अनुदेशक निर्णय लेता है, विचार गोष्ठी का प्रकरण, वक्तागण कौन होंगे तथा प्रकरण के किस पक्ष को तैयार करेंगे तथा किस क्रम में प्रस्तुतीकरण करेंगे? विचार गोष्ठी की तिथियों एवं समय, कार्य की रूपरेखा तैयार करता है। अधिकांश परिस्थितियों में अध्यक्ष का भी चयन करता है। विचार गोष्ठी की योजना तथा व्यवस्था का उत्तरदायित्व अनुदेशक का ही होता है।

(2) अध्यक्ष या संचालक का चयन विचार गोष्ठी के भागीदार (Participants) द्वारा किया जाता है। अनुदेशक पहले भी निर्णय ले लेता है। अध्यक्ष के लिये ऐसे व्यक्ति का चयन करना चाहिए जो प्रकरण को समझता हो एवं संचालन की क्षमता के साथ अध्यक्ष अपने अधिकार और कर्तव्यों को समझता भी हो, भागीदारों को प्रश्न पूछने को प्रोत्साहित भी कर सकें। वाद-विवाद के प्रकरण पर ही नियन्त्रित रख सके।

(3) वक्तागण (Speakers) अनुदेशक प्रकरण को तैयार करते और प्रस्तुतीकरण के लिये वक्ताओं का निर्धारण करता है। वक्ता प्रकरण को गहन रूप में तैयार करता है और उसकी प्रतिलिपि तैयार करके विचार गोष्ठी के पूर्व उनका वितरण कर देता है। एक अच्छा वक्ता वह माना जाता है जो वाद-विवाद को उत्साहित कर सके और प्रकरण पर वाद-विवाद अधिक समय तक चल सके। वक्ता में प्रश्नों तथा स्पष्टीकरण की क्षमता होनी चाहिए, विरोधी विचार के प्रति सम्मान तथा सहनशीलता होनी चाहिए।

(4) भागीदार या श्रोतागण (Participants) श्रोतागणों को भी प्रकरण का बोध होना चाहिए। उन्हें वक्तागणों के प्रस्तुतीकरण की प्रशंसा करनी चाहिए। वक्तागण स्पष्टीकरण माँग सकते हैं। प्रकरण सम्बन्धी समस्याओं को रख सकते हैं। प्रकरण सम्बन्धी अपने विचार तथा अनुभवों को रख सकते हैं। उन्हें अपने प्रश्नों को अध्यक्ष द्वारा वक्ता तक पहुँचाना चाहिए। प्रत्यक्ष रूप में आदान-प्रदान नहीं करना चाहिए। उनके व्यवहार में शिष्टता होनी चाहिए। विचार गोष्ठी में 25 से 40 भागीदारों (Participants) को सम्मिलित किया जाता है।

विचार गोष्ठी प्रविधि की प्रक्रिया (Procedure of Seminar)

विचार गोष्ठी प्रविधि के प्रयोग करने में किसी प्रकरण का चयन किया जाता है। जो व्यक्ति उस प्रकरण पर प्रपत्र तैयार करते हैं, उन्हें वक्ता (Speaker) कहते हैं। प्रकरण के विभिन्न पक्षों पर एक से अधिक व्यक्ति अलग-अलग प्रपत्र तैयार कर सकते हैं। अक्सर सेमीनार की व्यवस्था एक कक्षा तथा विभाग द्वारा महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों तथा शोध संस्थाओं के स्तर पर की जाती है। किन्हीं संस्थाओं में सेमीनार की व्यवस्था प्रति सप्ताह नियमित रूप से की जाती है। इसके अतिरिक्त किन्हीं 'प्रकरणों' पर सेमीनार के लिये कुछ संगठन प्रोत्साहित करते हैं; जैसे—राष्ट्रीय शिक्षा अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग आदि। इस प्रकार की सेमीनार राष्ट्रीय स्तर पर की जाती है। विभिन्न संस्थाओं से व्यक्तियों (Participants) को आमंत्रित किया जाता है। उनके लिये यह संगठन आर्थिक सहायता देता है।

विचार गोष्ठी का प्रकरण पूर्व नियोजित होता है। वक्ता अपने प्रपत्र की प्रतिलिपियाँ भी तैयार करा लेते हैं और सेमीनार के आरम्भ में उनका वितरण कर देता है। सेमीनार के कार्य संचालन के लिये सेमीनार के भागीदारों (Participants) में से ही अध्यक्ष का चयन उसी समय किया जाता है। सेमीनार के लिये अध्यक्ष का प्रतिदिन चयन किया जाता है। सेमीनार के संचालन का उत्तरदायित्व अध्यक्ष का होता है। संचालन प्रक्रिया (Mode of Operations) अध्यक्ष निर्धारित करता है।

प्रवक्ता सेमीनार के प्रकरण को गहनता से तैयार करके प्रस्तुत करता है तथा उसके प्रमुख विषय वस्तु प्रपत्र के रूप में सभी को पहले ही बंटवा देता है, जिससे सम्प्रेषण तथा विषय वस्तु के स्वरूप को समझने में सुगमता हो जाती है। एक ही प्रकरण के विभिन्न पक्षों को एक से अधिक व्यक्ति प्रस्तुत कर सकते हैं—

विचार गोष्ठी का अध्यक्ष यह निर्धारित करता है कि प्रत्येक व्यक्ति के प्रस्तुतीकरण के अन्त में वाद-विवाद किया जायेगा अथवा सभी वक्ताओं के द्वारा प्रकरण प्रस्तुत करने के उपरान्त उस पर वाद-विवाद का अवसर दिया जायेगा। तद्नुसार सेमीनार का संचालन किया जाता है।

प्रकरण के प्रस्तुत करने के उपरान्त अध्यक्ष वाद-विवाद के लिये अवसर देता है। सेमीनार में 'प्रकरण' पर जो वाद-विवाद किया जाता है, उसके प्रमुख तीन उद्देश्य होते हैं—

(1) 'प्रकरण' सम्बन्धी स्पष्टीकरण के लिये।

(2) 'प्रकरण' के सम्बन्ध में भागीदार (Participant) द्वारा अपने अनुभवों तथा निरीक्षणों को भी प्रस्तुत करना।

(3) 'प्रकरण' (Theme) सम्बन्धी समस्याओं के विश्लेषण तथा मूल्यांकन के लिये प्रश्नों को उठाया जाता है।

अध्यक्ष का कर्त्तव्य यह होता है, वाद-विवाद 'प्रकरण' से सम्बन्धित तथा परिचित हो। भागीदारों (Participants) को अधिक से अधिक वाद-विवाद में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित भी करता है। उपयुक्त अवस्थाओं पर अध्यक्ष को सभी विचारों को संगठित करके अपने विचारों की अभिव्यक्ति भी करनी होती है। उसे ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करनी होती है, जिससे अधिक से अधिक व्यक्ति आपस में 'प्रकरण' के संदर्भ में अन्त:प्रक्रिया कर सकें। अध्यक्ष को प्रपत्र प्रस्तुत

नोट

करने के समय की अपेक्षा वाद-विवाद के लिये पर्याप्त समय देना चाहिए। सेमीनार में प्रपत्र प्रस्तुत करने का मुख्य उद्देश्य होता है कि 'प्रकरण' पर समूह को वाद-विवाद के लिए उद्धेलित (Initiate) करना। 'प्रकरण' का वह प्रस्तुतीकरण उत्तम माना जाता है, जिस पर वाद-विवाद अधिक समय तक चल सके। वाद-विवाद के समय जो विरोधी अथवा विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोण रखे जाते हैं, वे प्रकरण पर चिन्तन के लिये शक्ति एवं दिशा प्रदान करते हैं। विरोधी दृष्टिकोण तथा विचारधारा भागीदारों (Participants) को एक नये ढंग से सोचने के लिए दिशा देते हैं। यह सेमीनार प्रविधि के प्रयोग का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष माना जाता है। विचारधाराओं की समानता से 'प्रकरण' की वैधता सिद्ध होती है और उनके विचारों एवं दृष्टिकोण में दृढ़ता आती है।

वाद-विवाद के समापन पर अध्यक्ष अपने विचार प्रस्तुत करता है। इसमें वह निम्नलिखित पक्षों पर बल देता है–

(1) सर्वप्रथम 'प्रकरण' सम्बन्धी वाद-विवाद के निष्कर्ष का संक्षेपीकरण करता है।

(2) इसके बाद वह 'प्रकरण' के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण भी प्रस्तुत करता है।

(3) अन्त में वक्ताओं की सराहना करता है और सभी भागीदारों के सहयोग के लिये धन्यवाद देता है।

विचार गोष्ठी की कार्य-प्रणाली तथा वाद-विवाद के प्रमुख पक्षों का आलेख भी तैयार किया जाता है। उपयोगी प्रकरण तथा वाद-विवाद के निष्कर्षों को प्रकाशित भी किया जाता है।

विचार गोष्ठी के प्रकार (Types of Seminar)

विचार गोष्ठी प्रविधि के प्रयोग में उक्त सोपानों का अनुसरण किया जाता है। परन्तु सेमीनार की व्यवस्था विभिन्न स्तरों पर की जाती है। इस विचार से सेमीनार को चार वर्गों में विभाजित कर सकते हैं–

(1) **लघु विचार गोष्ठी** (Mini Seminar)–जब सेमीनार का उपयोग छात्र किसी 'प्रकरण' पर कक्षा स्तर पर स्वयं व्यवस्था करते हैं, तब उसे लघु सेमीनार कहते हैं। इसका प्रमुख उद्देश्य छात्रों की विचार गोष्ठी का प्रशिक्षण देना होता है। छात्रों को सेमीनार प्रविधि का अनुकरण (Simulation) करने का अवसर दिया जाता है। आरम्भिक अवस्था में इस प्रकार की विचार गोष्ठी का विशेष महत्व होता है। मुख्य सेमीनार से पूर्व इस प्रकार के सेमीनार की व्यवस्था करनी चाहिए।

(2) **मुख्य विचार गोष्ठी** (Main Seminar)–किसी विभाग या संस्था द्वारा सेमीनार का आयोजन किया जाता है, जिसमें विभाग या संस्था के सभी छात्र और अध्यापक उसमें भाग लेते हैं। ऐसी सेमीनार का आयोजन प्रति सप्ताह या माह में एक बार नियमित रूप से किया जाता है। किसी विशिष्ट प्रकरण पर भी सेमीनार का आयोजन किया जाता है।

(3) **राष्ट्रीय विचार गोष्ठी** (National Seminar)–किसी संगठन द्वारा ऐसी सेमीनार का आयोजन किया जाता है और 'प्रकरण' सम्बन्धी विशेषज्ञों को आमंत्रित किया जाता है। भागीदारों (Participants) के व्यय का वहन संगठन करता है। विचार गोष्ठी स्थल तथा तिथियों को पूर्व निर्धारित कर लिया जाता है और सभी से 'प्रकरण' पर प्रपत्र भेजने के लिए आग्रह किया जाता है। इस प्रकार के सेमीनार राष्ट्रीय अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्रस्तावित किये जाते हैं। इनका प्रकरण अधिक व्यापक होता है; जैसे–शैक्षिक तकनीक, जनसंख्या की शिक्षा, पत्राचार पाठ्यक्रम, सत्र प्रणाली आदि।

(4) **अन्तर्राष्ट्रीय विचार गोष्ठी** (International Seminar)–ऐसी सेमीनार की व्यवस्था किसी राष्ट्र के संगठन द्वारा की जाती है। भारतवर्ष में शिक्षा के अन्तर्गत राष्ट्रीय अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् द्वारा की जाती है। अधिकतर ऐसे सेमीनार का आयोजन यूनेस्को (UNESCO) द्वारा किया जाता है। इसका प्रकरण अधिक व्यापक तथा मौलिक होता है।

विचार गोष्ठी प्रविधि की उपयोगिता (Uses of Seminars)

विचार गोष्ठी अनुदेशन परिस्थितियाँ उत्पन्न करने की एक प्रभावशाली प्रविधि है। इसके निम्नलिखित उपयोग हैं–

(1) शिक्षा के ज्ञानात्मक तथा भावात्मक उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है।

(2) प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास होता है।

नोट

(3) प्रस्तुतीकरण करने की क्षमताओं का विकास होता है।

(4) सेमीनार के उपयोग से उत्तम प्रकार की अधिगम आदतों का विकास होता है। शिक्षार्थी की अधिगम में तन्मयता होने लगती है।

(5) सेमीनार प्रविधि शिक्षार्थी-केन्द्रित होती है।

(6) स्वतन्त्र अध्ययन (Independent Study) को प्रोत्साहित करती है।

(7) वाद-विवाद में भाग लेने तथा बोलने के कौशल का विकास होता है।

(8) सेमीनार में शिक्षार्थी स्वाभाविक ढंग से सीखता है।

(9) आलोचनात्मक चिन्तन का विकास होता है।

(10) शिक्षार्थी में सामाजिक तथा भावात्मक गुणों का विकास होता है।

(11) प्रकरण सम्बन्धी निरीक्षण तथा अनुभवों के प्रस्तुत करने का भी अवसर मिलता है।

विचार गोष्ठी प्रविधि की सीमाएँ (Limitations of Seminar Technique)

सेमीनार प्रविधि की निम्नलिखित सीमाएँ हैं—

(1) किसी विषय के सभी प्रकरणों के लिये सेमीनार का आयोजन नहीं किया जा सकता है क्योंकि कुछ प्रकरणों का स्वरूप सुनिश्चित होता है; जैसे—विश्वसनीयता व वैधता। उन्हीं प्रकरणों का चयन किया जाता है, जिन पर वाद-विवाद हो सके।

(2) इस प्रविधि को सभी शिक्षा के स्तरों पर प्रयोग नहीं कर सकते हैं, क्योंकि सेमीनार के लिये भाषा, सामाजिक एवं भावात्मक परिपक्वता होनी चाहिए। अत: निम्न स्तर पर इसका प्रयोग सम्भव नहीं है। अमूर्त प्रकरण पर वाद-विवाद किया जाता है।

(3) सेमीनार के वाद-विवाद काल में ऐसा देखा गया है कि कुछ व्यक्ति भाग लेते हैं और अपना अधिकार स्थापित कर लेते हैं। कुछ व्यक्ति बिल्कुल नहीं बोलते अथवा उन्हें बोलने का अवसर नहीं मिलता है; अत: अन्त:प्रक्रिया सम्पूर्ण समूह में नहीं होती है।

(4) सेमीनार के वाद-विवाद काल में समूह बनने की सम्भावना रहती है। विरोधी विचारों के व्यक्ति एक समूह में तथा अन्य विचारों के दूसरे समूह में बँट जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि भागीदार उसे विजय या पराजय के रूप में लेते हैं। ऐसी परिस्थिति में सेमीनार का उद्देश्य प्राप्त नहीं होता है।

(5) विचार समिति प्रविधि (Symposium Technique)

शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना है, जिसमें बौद्धिक, सामाजिक, व्यावसायिक, भावात्मक एवं व्यक्तिगत गुणों का विकास करना होता है, जिससे वह जीवन में सफल हो सके। परन्तु आधुनिक शिक्षण एवं अधिगम प्रक्रिया केवल ज्ञानात्मक पक्षों का विकास करती है। बालकों में समस्या-समाधान, विश्लेषण, संश्लेषण तथा आलोचनात्मक व सृजनात्मक चिन्तन का विकास नहीं होता है। सामाजिक गुणों, समायोजन, सहयोग, सहनशीलता आदि गुणों का विकास नहीं हो पाता है। इन गुणों के विकास तथा शिक्षा के उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये सामूहिक क्रियायें (Group activities and discussion) एवं वाद-विवाद अधिक उपयोगी होते हैं। इस प्रकार उद्देश्यों को अन्य अनुदेशन की प्रविधियों से प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

सामूहिक क्रियाओं एवं वाद-विवाद के लिये अनेकों प्रविधियाँ हैं, जैसे—सम्मेलन, विचार गोष्ठी, कार्यशाला तथा सामूहिक वाद-विवाद आदि प्रत्येक प्रविधि की अपनी विशेषता एवं उपयोगिता होती है। सम्मेलन, विचार गोष्ठी तथा कार्यशाला प्रविधियों का विवेचन किया जा चुका है। यहाँ पर विचार समिति (Symposium) की विशेषताओं, स्वरूप एवं उपयोगिता का वर्णन किया गया है।

विचार-समिति का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Defintion of Symposium)

इन कोषों में इस शब्द सिम्पोजियम (Symposium) के अनेक अर्थ दिये गये हैं। परन्तु सर्वप्रथम **प्लेटो** ने एक सुन्दर

नोट

आदान-प्रदान (dialogue) को सिम्पोजियम से सम्बोधित किया था, जिसमें ईश्वर के प्रति विचार प्रस्तुत किये गये थे। अन्य शब्दकोषों में इसका अर्थ उस सभा से है, जिसमें बौद्धिक मनोरंजन किया जाता है। आधुनिक अर्थ यह है कि वह सभा जिसमें प्रकरण पर वक्तागण अपने विचार प्रस्तुत करते हैं। इसके अन्तर्गत एक क्रम में प्रकरण से सम्बन्धी विचारों को प्रस्तुत करने का आयोजन किया जाता है। किसी विशिष्ट प्रकरण पर कोई भी व्यक्ति अपने विचारों को प्रस्तुत करता है।

विचार-समिति की परिभाषा इस प्रकार है–

"The Symposium form serves as an excellent device for informing an audience, crystallizing opinion, and general preparing the listeners for arriving at decision, policies, value judgement or understanding."

"विचार-समिति एक ऐसा समूह है, जिसमें श्रोताओं को उत्तम प्रकार के विचारों से अवगत कराया जाता है। श्रोतागण प्रकरण सम्बन्धी सामान्य तैयारी के अपने मंझे हुए विचारों को सम्मिलित करते हैं और नीति, मूल्यों, बोधगम्यता के सम्बन्ध में निर्णय लेते हैं।"

विचार समिति की प्रक्रिया का लक्ष्य किसी समस्या के विभिन्न पक्षों को समझना होता है। विचार-समिति किसी निर्णय पर नहीं पहुँचती है। श्रोतागण अपने निर्णय ले सकने में स्वतंत्र होते हैं। विचार-समिति के अन्त में भी प्रकरण सम्बन्धी वाद-विवाद खुला रहता है। वक्ताओं एवं श्रोताओं में विचार गोष्ठी की भाँति प्रत्यक्ष रूप में अन्त:प्रक्रिया नहीं होती है। इसमें अप्रत्यक्ष रूप में अन्त:प्रक्रिया होती है।

विचार-समिति के उद्देश्य (Objectives of Symposium)

विचार गोष्ठी का आयोजन अग्रलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये किया जाता है–

(1) किसी तात्कालिक समस्या के विभिन्न पक्षों की जानकारी तथा उन्हें पहचानने की क्षमताओं का विकास करना।

(2) किसी प्रकरण के विभिन्न पहलुओं को पहचानना और उन्हें बोधगम्य करना।

(3) प्रकरण एवं समस्या सम्बन्धी निर्णय लेने की क्षमताओं का विकास करना।

(4) छात्रों एवं भागीदारों (Participants) में व्यापक दृष्टिकोण का विकास करना।

(5) प्रकरण एवं समस्या सम्बन्धी शंकाओं एवं कठिनाइयों के समाधान एवं स्पष्टीकरण का अवसर देना।

(6) विचार-समिति का प्रमुख उद्देश्य ज्ञानात्मक पक्ष के उच्च पक्षों का विकास करना होता है।

विचार-समिति प्रविधि की प्रक्रिया (Procedure of Symposium)

विचार-समिति की व्यवस्था किसी विभाग, संस्था या संगठन द्वारा की जाती है। अनुदेशक या व्यवस्थापक विचार-समिति, प्रकरण या समस्या का निर्धारण करना, वक्ताओं को आमन्त्रित करने का आयोजन करता है। विचार-समिति के स्थान एवं तिथियों व समय का निर्धारण करता है। समस्या के विभिन्न पक्षों की पहचान करके, वक्तागण उन पर प्रपत्र तैयार करते हैं। प्रत्येक वक्ता के लिये समय भी निश्चित कर दिया जाता है। विचार-समिति कार्यवाही आरम्भ करने से पूर्व उन्हें समय के बारे में अवगत करा दिया जाता है। वक्ताओं के भाषणों को एक क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। अनुदेशक विचार-समिति की कार्यवाही के संचालन के अध्यक्ष एवं संचालक का चयन करता है। अध्यक्ष वक्ताओं को प्रस्तुतीकरण के लिए निर्देश देता है और निर्धारित समय में अपना भाषण समाप्त करने का आग्रह करता है, यदि कोई वक्ता अधिक समय लेता है, तब अध्यक्ष उससे संक्षेपीकरण के लिये आग्रह करता है। भाषण के अन्त में श्रोताओं को प्रश्न करने या वाद-विवाद करने या अपना विचार प्रस्तुत करने का अवसर नहीं दिया जाता है। विचार-समिति में प्रत्यक्ष रूप से अन्त:प्रक्रिया (Direct Interaction), का अवसर नहीं दिया जाता है। वक्तागण अपने प्रवचन में पूर्व वक्ता के विचारों की पुष्टि या आलोचना करता है। उसके विचारों की पुनरावृत्ति नहीं की जाती है। वक्तागण अपने प्रवचन में सुधार या परिवर्तन कर लेते हैं। इस प्रकार वक्ताओं में अप्रत्यक्ष रूप में अन्त:प्रक्रिया होती है।

अध्यक्ष का कर्त्तव्य यह होता है कि वह वक्ताओं के प्रवचनों को इस प्रकार व्यवस्थित करे, जिससे समस्या का प्रकरण के व्यापक स्वरूप का श्रोताओं को बोध हो सके। प्रस्तुतीकरण में क्रमिक सम्बन्ध स्थापित करता है। एक-एक करके

सभी वक्ता अपने-अपने विचार को निर्धारित समय में प्रस्तुत करते हैं। प्रत्येक वक्ता के प्रवचन के अन्त में अध्यक्ष उसकी समीक्षा करता है, तदोपरान्त अन्य वक्ता को प्रवचन देने के लिए आग्रह करता है तथा उनके प्रस्तुतीकरण सम्बन्ध स्थापित करता है। अपने विचारों को भी सम्मिलित करता है।

सभी वक्ताओं के प्रस्तुतीकरण के बाद अध्यक्ष एक समीक्षा प्रस्तुत करता है। समस्त प्रस्तुतीकरण का आलेख भी तैयार किया जाता है। लिखित रूप में भी आख्या प्रस्तुत की जाती है। प्रपत्र के रूप में सभी श्रोताओं एवं वक्ताओं को वितरित कर दी जाती हैं। विचार-समिति में अन्तःप्रक्रिया का अवसर नहीं होता है, अपितु वक्ताओं के प्रवचनों एवं विचारों को ध्यानपूर्वक सुनते हैं। जो वक्ता प्रकरण एवं समस्या के पक्ष में बोलता है वह अध्यक्ष के एक ओर तथा विरोधी विचार वाला दूसरी ओर खड़ा होता है।

विचार-समिति के लिए सावधानियाँ (Precautions for Symposium)

विचार-समिति की व्यवस्था में तीन प्रकार की सावधानियाँ रखनी चाहिएं—

प्रथम सावधानी यह अनुदेशक/व्यवस्थापक को रखनी चाहिए कि वक्ताओं ने अपने प्रवचनों को अच्छी प्रकार तैयार कर लिया है। वे विचार-समिति की प्रक्रिया व प्रस्तुतीकरण के नियमों से भी भली-भाँति परिचित हैं। अन्य वक्ताओं के विचारों की उन्हें पुनरावृत्ति नहीं करनी चाहिए।

द्वितीय सावधानी यह रखनी चाहिए कि अध्यक्ष या अनुदेशक कार्य की एक रूपरेखा तैयार कर लें। वक्ताओं के प्रवचनों को एक क्रम में व्यवस्थित करना होता है। प्रकरण सम्बन्धी किसी महत्वपूर्ण विरोधी विचार को छोड़ना नहीं चाहिए।

तृतीय सावधानी प्रश्नों की परिस्थितियों की अवस्था का सावधानी से आयोजन करना चाहिए। साधारणतः सभी वक्ताओं के अन्त में प्रश्नों एवं स्पष्टीकरण के लिए अवसर देना चाहिए। कभी-कभी वातावरण में परिवर्तन लाने के लिए भी प्रश्नों के लिए अध्यक्ष अवसर देता है।

विचार-समिति का आयोजन विचार गोष्ठी से निम्न प्रकार से भिन्न होता है। विचार गोष्ठी में प्रत्यक्ष रूप में अन्तःप्रक्रिया होती है, जबकि विचार-समिति में अप्रत्यक्ष रूप में हो पाती है। विचारगोष्ठी के प्रकरण के अन्त में किसी निर्णय पर पहुँचते हैं, जबकि विचार-समिति में किसी निर्णय पर नहीं पहुँचते हैं, अपितु वक्तागण और श्रोतागण अपने-अपने ढंग से कुछ निर्णय ले लेते हैं। उनके निर्णयों में भिन्नता अधिक होती है, क्योंकि सभी का कोई एक मत या निष्कर्ष नहीं होता है।

विचार-समिति के उपयोग का क्षेत्र (Scope for the Use of Symposium)

विचार-समिति का उपयोग शिक्षा के क्षेत्र में उच्च कक्षा के शिक्षण तथा अनुदेशन के लिये किया जा सकता है। कुछ प्रमुख प्रकरण इस प्रकार हैं—

(1) परीक्षा में वस्तुनिष्ठ एवं निबन्धात्मक प्रश्नों का उपयोग।
(2) शिक्षा में सत्र प्रणाली एवं वार्षिक प्रणाली।
(3) छात्रों में अनुशासनहीनता के कारण।
(4) शोध कार्यों में गुणात्मक विकास।
(5) अध्यापक शिक्षा में छात्र शिक्षण की उपादेयता।
(6) कक्षा-शिक्षण एवं अनुदेशन में शैक्षिक तकनीकी का प्रयोग।
(7) छात्रों के लिए दूरदर्शन की उपादेयता।
(8) कक्षा-शिक्षण में क्रियात्मक अनुसन्धान का उपयोग।
(9) सूक्ष्म-शिक्षण का प्रशिक्षण-संस्थानों में प्रयोग।
(10) टोली-शिक्षण का विद्यालयों में उपयोग।

विचार-समिति का प्रकरण ऐसा होना चाहिए, जिसमें श्रोतागणों की अधिक रुचि हो और उनसे प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध हो।

नोट

(6) सामूहिक वार्तालाप (Group Discussion)

सामूहिक वार्तालाप की कोई सामान्य परिभाषा नहीं है। इसको प्रजातान्त्रिक विधि माना जाता है, क्योंकि इसमें छात्रों को ही अधिक क्रियाशील रहना पड़ता है। शिक्षक केवल निरीक्षक तथा निर्देशक का कार्य करता है। यह सदैव छात्र-केन्द्रित होती है। इसकी व्यवस्था साधारणत: दो प्रकार से की जाती है।

(1) शिक्षा द्वारा—इस परिस्थिति में वातावरण कुछ प्रभुत्ववादी होता है।

(2) छात्रों द्वारा—इसमें परिस्थिति पूर्णरूप से प्रजातांत्रिक होती है।

स्वरूप—इस प्रकार हैं—

(1) सामूहिक वार्तालाप के दो रूप होते हैं—औपचारिक तथा अनौपचारिक। औपचारिक कार्यक्रम को पहले से बनाया जाता है। इसमें विशिष्ट नियमों का अनुसरण किया जाता है।

(2) सामूहिक वार्तालाप किसी शैक्षिक समस्या तथा पाठ्यक्रम सम्बन्धी समस्या पर आयोजित किया जाता है।

(3) छात्रों द्वारा व्यवस्था करने पर उन्हें नेता का चयन करना पड़ता है, जो उसका कार्यक्रम बनाता है।

(4) इसमें छात्रों के प्रश्नों तथा उत्तरों को ही महत्व दिया जाता है।

अधिनियम—यह विधि निम्नलिखित अधिनियमों पर आधारित है—

1. यह विधि सक्रियता तथा मौलिकता के विकास को अवसर देती है।
2. प्रत्येक छात्र को प्रश्न पूछने तथा उत्तर देने का समान अधिकार होता है।
3. प्रजातान्त्रिक अधिनियमों का अनुसरण किया जाता है।
4. सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक अधिनियमों को महत्व दिया जाता है।

विशेषताएँ—सामूहिक वार्तालाप की प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार हैं—

1. इसमें आलोचना के लिये अधिक अवसर होता है। त्रुटिपूर्ण आयामों (Incorrect approaches) का खण्डन किया जाता है। समस्या समाधान के लिये व्यापक आयामों के प्रयोग का अवसर दिया जाता है।
2. जो छात्र समस्या समाधान तथा अपने निर्णय लेने में कमजोर होते हैं, उनके लिये यह विधि अधिक उपयोगी होती है।
3. सामूहिक वार्तालाप छात्रों की अभिवृत्तियों के विकास के लिये अधिक उपयोगी होता है।
4. इस विधि की सहायता से छात्रों की सृजनात्मक क्षमताओं का विकास किया जाता है। समस्याओं के लिये समाधान खोजने में वे अपनी निर्णय-शक्ति का प्रयोग करते हैं। निर्णय लेने में वे विभिन्न आयामों का प्रयोग करते हैं।

उपयोग—इसमें सामाजिक अधिगम को अधिक अवसर मिलता है। सामूहिक वार्तालाप विधि से ज्ञानात्मक तथा भावात्मक पक्षों के उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। निम्न स्तर के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये इसको प्रयुक्त नहीं किया जा सकता है। छात्रों से ज्ञान वृद्धि के साथ अभिरुचियों तथा अभिवृत्तियों का विकास होता है। इसमें परिपाक के लिये अवसर मिलता है।

सीमाएँ—इसकी सीमायें निम्न प्रकार हैं—

1. छात्र विषयान्तर बातें अधिक करने लगते हैं।
2. कुछ ही छात्र अधिक बोलते रहते हैं।
3. छात्रों में दो समूह बन जाते हैं, जिससे उनमें स्पर्धा तथा ईर्ष्या हो जाती है। परस्पर आलोचना की प्रवृत्ति हो जाती है।
4. पूर्व-स्पर्धा के कारण वे आलोचना अधिक करते हैं।

सुझाव—इसके प्रयोग में निम्नलिखित सावधानियाँ रखनी चाहिए—

नोट

1. सभी छात्रों को बोलने का अवसर दिया जाना चाहिए। कम बोलने वाले छात्रों को प्रेरित करना चाहिए। इसके लिये अंक भी निर्धारित किये जा सकते हैं।
2. उन्हीं आलोचनाओं को अवसर दिया जाये, तो रचनात्मक तथा सार्थक हों।

(7) स्व:अधिगम या अध्ययन (Self-learning or Study)

कक्षा शिक्षण में शिक्षक सभी छात्रों की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रस्तुतीकरण नहीं कर पाता है। सामान्य छात्रों को ध्यान में रखकर पाठ्यवस्तु का प्रस्तुतीकरण करता है और अपेक्षित दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री का उपयोग करता है। सामान्य कक्षा शिक्षण में दो प्रकार की समस्यायें रहती हैं—

1. छात्रों को पाठ्यवस्तु के कुछ बिन्दुओं को समझने की कठिनाई रहती है।
2. अधिकांश छात्रों को पाठ्यवस्तु को बोधगम्य करने हेतु परिपाक (Assimilation) की आवश्यकता होती है। पाठ्यवस्तु की गहनता के लिए व्यक्तिगत अध्ययन की आवश्यकता होती है।

(1) सामान्य कक्षा शिक्षण की इन समस्याओं के लिए अनेक प्रकार की प्रविधियों का उपयोग किया जाता है। प्रथम प्रकार की समस्या जिसमें छात्रों की पाठ्यवस्तु सम्बन्धी कठिनाइयाँ रहती हैं, उनके लिए सुधारात्मक शिक्षण (Remedial teaching) तथा अनुदेशन आव्यूहों का उपयोग किया जाता है। इसमें अनुवर्ग शिक्षण (Tutorial teaching), शाखीय अनुदेशन (Branching programming) तथा सहपाठी अनुवर्ग अधिगम (Peer's Tutorial Learning) का उपयोग किया जाता है। इन प्रविधियों के उपयोग से छात्रों की समस्याओं का समाधान किया जाता है। शिक्षकों द्वारा छात्रों को पाठ्यवस्तु का सरल रूप में स्पष्टीकरण किया जाता है।

(2) कक्षा शिक्षण में पाठ्यवस्तु का परिपाक (Assimilation) नहीं हो पाता है, क्योंकि परिपाक में छात्रों को अधिक क्रियाशील होना पड़ता है और पाठ्यवस्तु को प्रत्येक छात्र अपने ढंग से परिपाक करता है। कक्षा में प्रस्तुतीकरण एक ही ढंग से किया जाता है। बोध स्तर के लिए परिपाक की अधिक आवश्यकता होती है। इसलिए छात्रों को **स्व:अध्ययन** का अवसर दिया जाता है। इसके लिए अनेक प्रविधियों का उपयोग किया जाता है; जैसे—अभिक्रमित अनुदेशन, कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन तथा सहकारी सामूहिक अधिगम (Co-operative group learning)। यहाँ पर दो प्रविधियों का विवरण दिया गया है—

(अ) सहपाठी अनुवर्ग अधिगम (Peers Tutorial Learning) तथा

(ब) सहकारी सामूहिक अधिगम (Co-operative Group Learning)।

(अ) सहपाठी अनुवर्ग अधिगम (Peers Tutorial Learning)

छात्रों की पाठ्यवस्तु सम्बन्धी कठिनाइयों के सुधार हेतु अनुवर्ग प्रणाली का उपयोग किया जाता है। इसका उपयोग दो रूपों में किया जाता है—अनुवर्ग शिक्षण तथा अनुवर्ग अधिगम। शिक्षक कठिनाइयों के आधार पर छात्रों को छोटे-छोटे वर्गों में विभाजित कर लिया जाता है और शिक्षक द्वारा ही छात्रों की कठिनाइयों का समाधान किया जाता है। सहपाठी-अनुवर्ग अधिगम में छात्र समूह में बैठकर अपनी-अपनी कठिनाइयों को रखते हैं। इन कठिनाइयों के लिए, उपलब्ध पाठ्य-सामग्री का उपयोग करके समझने का प्रयास करते हैं। जो छात्र पाठ्यवस्तु को बोधगम्य कर लेता है, वह अपने सहपाठियों को भी समझाता है।

सहपाठी अनुवर्ग अधिगम के नियम—इसके प्रमुख नियम इस प्रकार हैं—

1. इसमें छात्रों को स्व:अध्ययन का अवसर दिया जाता है।
2. छात्रों को सामूहिक रूप में अधिगम का अवसर मिलता है।
3. छात्रों को पाठ्यवस्तु की अभिव्यक्ति का अवसर मिलता है।
4. छात्र उपचारात्मक अधिगम प्रक्रिया को अपनाते हैं।
5. छात्रों को स्वाभाविक रूप में कठिनाइयों का समाधान प्राप्त होता है।

नोट

सहपाठी अनुवर्ग अधिगम के प्रकार—सामान्यत: तीन प्रकार से व्यवस्था की जाती है—1.पर्यवेक्षित सहपाठी अनुवर्ग अधिगम 2. अपर्यवेक्षित सहपाठी अनुवर्ग अधिगम तथा 3. प्रयोगात्मक सहपाठी अनुवर्ग अधिगम।

1. **पर्यवेक्षित सहपाठी अनुवर्ग अधिगम** की व्यवस्था औपचारिक रूप में शैक्षिक द्वारा की जाती है। कक्षा को छोटे समूहों में विभाजित कर दिया जाता है। छात्र समूह में अपनी कठिनाइयों की चर्चा करते हैं। उपलब्ध पाठ्य-सामग्री का अवलोकन करते हैं। शिक्षक समूहों का पर्यवेक्षण करता है, जिससे अनुशासन बना रहे और इस प्रकार वह छात्रों की सहायता भी करता है।
2. **अपर्यवेक्षित सहपाठी अनुवर्ग अधिगम**—इस प्रकार की व्यवस्था अनौपचारिक रूप में छात्रावास में तथा छात्र अपने निवास पर करते हैं। पाठ्य-पुस्तकों का अध्ययन करते हैं और समूह में कठिनाइयों का समाधान ज्ञात करते हैं। परस्पर एक-दूसरे की सहायता करते हैं। इसमें छात्रों को अधिक स्वतन्त्रता होती है। कभी-कभी सामूहिक वाद-विवाद उग्र रूप भी धारण कर लेता है।
3. **प्रायोगिक सहपाठी अनुवर्ग अधिगम**—शिक्षक तथा शोधकर्त्ता भी इन अनुवर्गों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करने हेतु प्रयोग का आयोजन करते हैं, क्योंकि दोनों की परिस्थितियाँ भिन्न होती हैं। इस प्रविधि का उपयोग छात्र क्रियात्मक अनुसंधान में भी करता है, क्योंकि इस प्रकार के अनुवर्ग से छात्रों के अधिगम में सुधार तथा प्रोन्नत होता है।

सहपाठी अनुवर्ग अधिगम के उपयोग—इस प्रविधि की सीमाओं के साथ निम्नलिखित उपयोग हैं—

1. छात्रों को स्व:अधिगम का अवसर मिलता है।
2. छात्रों को अधिगम कठिनाइयों के समाधान का स्वयं अवसर मिलता है।
3. छात्रों के अधिगम की वृद्धि होती है तथा पाठ्यवस्तु का सही बोध होता है।
4. छात्रों के अधिगम की कठिनाइयों का उपचार भी स्वयं होता है।
5. छात्रों में स्वाध्याय की आदत का विकास होता है।

(ब) सहकारी सामूहिक अधिगम (Co-operative Group Learning)

सामूहिक वाद-विवाद (group discussion) का उपयोग एक विधि तथा प्रविधि के रूप में किया जाता है। इसका उपयोग शिक्षण-अधिगम में किया जाता है। इसमें अन्त:प्रक्रिया को अधिक अवसर मिलता है। यह प्रजातान्त्रिक विधि है। इसके उपयोग से पाठ्यवस्तु का स्वामित्व तथा मौलिकता का विकास किया जाता है। इस सहकारी सामूहिक अधिगम प्रविधि का उपयोग पाठ्यवस्तु के परिपाक के लिए किया जाता है। पाठ्यवस्तु के स्वामित्व के लिए परिपाक पूर्व आवश्यकता है। बोध स्तर के शिक्षण में प्रस्तुतीकरण के बाद परिपाक (Assimilation) कराया जाता है, जिसमें छात्र पाठ्यवस्तु को अपने ढंग से समझने तथा बोधगम्य का प्रयास करते हैं। इसलिए इसे स्व:अधिगम (Self-learning) भी कहते हैं। प्रस्तुतीकरण में स्व:अधिगम का अवसर नहीं दिया जाता है। शिक्षक का प्रस्तुतीकरण सभी के लिए एक-सा होता है। छात्र को अपने ढंग से सीखने का अवसर नहीं मिलता है। इस प्रविधि के अन्तर्गत छात्र समूह में बैठकर उपलब्ध अध्ययन सामग्री का उपयोग करते हैं और सीखने में एक-दूसरे का सहयोग तथा सहायता करते हैं, जिससे प्रत्येक छात्र पाठ्यवस्तु का परिपाक अपने ढंग से करता है।

सहकारी सामूहिक अधिगम के प्रकार—इस प्रविधि के दो रूप होते हैं—(अ) औपचारिक तथा (ब) अनौपचारिक। यह वर्गीकरण उपयोग पर आधारित है। इसमें शिक्षक द्वारा व्यवस्था की जाती है, तब इसे औपचारिक प्रविधि कहते हैं। इसमें शिक्षक का नियन्त्रण तथा पर्यवेक्षण भी रहता है। शिक्षक निर्देशन भी देता है। अनौपचारिक प्रविधि की व्यवस्था छात्रों द्वारा की जाती है। औपचारिक रूप से प्रयुक्त करने पर यह अधिक प्रभावशाली होती है।

सहकारी अधिगम के उद्देश्य—इस प्रविधि के उद्देश्य इस प्रकार हैं—

1. शिक्षण की सहायक प्रविधि है, इसमें परिपाक के लिए अवसर दिया जाता है अथवा पाठ्यवस्तु का परिपाक किया जाता है।
2. बोध स्तर पर शिक्षण व्यवस्था में प्रस्तुतीकरण के बाद प्रयुक्त की जाती है। छात्र अपने ढंग से सीखते हैं।

सहकारी अधिगम के नियम—इस प्रविधि के नियम इस प्रकार हैं—

1. उपलब्ध पाठ्य-सामग्री को छात्रों द्वारा उपयोग करना।
2. छात्रों को अधिगम प्रक्रिया में सहयोग भावना का विकास करना।
3. छात्रों को अधिगम हेतु अधिक क्रियाशील रखना।
4. छात्रों को अपने-अपने ढंग से सीखने तथा समझने का अवसर दिया जाना।

सहकारी अधिगम विधि का उपयोग—प्रमुख उपयोग इस प्रकार हैं—

1. बोध स्तर शिक्षण में सहायक प्रविधि का कार्य करती है।
2. पाठ्यवस्तु को बोधगम्य करने का अवसर दिया जाता है।
3. इस प्रविधि का उपयोग विशेष रूप से परिपाक के लिए किया जाता है।
4. इस प्रविधि में स्व:अधिगम का अवसर मिलता है।
5. यह प्रविधि छात्र-केन्द्रित होती है छात्र अधिक क्रियाशील रहता है।
6. पाठ्यवस्तु सामग्री तथा सहायक सामग्री का उपयोग भी छात्र स्वयं करते हैं।

टास्क सामूहिक वार्तालाप द्वारा पृष्ठपोषण में किस प्रकार सहायता मिलती है?

स्व—मूल्यांकन (Self Assessment)

1. निम्नलिखित कथनों में 'सत्य/असत्य' पर चिन्ह लगाइये—

1. पृष्ठपोषण का प्रयोग अनुदेशन की प्रभावशीलता ज्ञात करने एवं उसके अनुरूप अपनी क्रियाओं के नियोजन करने में किया जाता है।
2. सर्वप्रथम सन् 1929 में हैरी ए. ओवर स्ट्रीट ने सामूहिक वाद-विवाद पर प्रयोग किया था।
3. कार्यशाला का प्रयोग विभिन्न स्तरों पर अनुदेशन परिस्थितियों के लिए किया जाता है।
4. विचार गोष्ठी प्रकरण का विषय पूर्व नियोजित नहीं होता है।

19.5 पृष्ठपोषण का महत्त्व (Importance of Feedback)

1. परीक्षा सुधार हेतु मूल्यांकन की भूमिका (Role of Evaluation in improving the Examination System)—मापन का उद्देश्य विद्यार्थियों के अर्जित ज्ञान का मूल्यांकन करना ही नहीं है वरन् इसका लक्ष्य परीक्षा प्रणाली में सुधार करना भी है। इन दोनों लक्ष्यों की पूर्ति तभी हो सकती है जब हम उस सारे ज्ञान की जाँच कर लें जो छात्रों को पढ़ाया गया है तथा जो ज्ञान जाँचना होता है उसे भी भली प्रकार पढ़ाना अध्यापक का कर्त्तव्य होता है। दूसरे शब्दों में, परीक्षा लेने से पूर्व हमें यह स्पष्ट ज्ञात होना चाहिये कि हमें परीक्षा का क्षेत्र कहाँ तक सीमित रखना है, बालकों को कितना ज्ञान दिया जा चुका है तथा किस रूप में दिया गया है, बालकों में कौन-कौन से व्यावहारिक परिवर्तन किये जा चुके हैं जो उनकी प्रगति के सूचक हैं आदि। परीक्षा के माध्यम से यह सुनिश्चित किया जाता है कि बालकों में अपेक्षित व्यवहारीय परिवर्तन (Desired behavioural changes) हुए भी हैं अथवा नहीं। यदि हुए हैं तो किसी सीमा तक और अगर नहीं हो पाये हैं तो क्यूँ? चूँकि, शिक्षा का एक मात्र उद्देश्य बालक के व्यवहार में परिवर्तन लाना होता है उस दृष्टि से उसके व्यवहार में ऐसे परिवर्तन लाये जायें जो उसके स्वयं की तथा समाज की दृष्टि से उपयोगी हों, साथ ही, उसे सीखने के अनुभव भी व्यवस्थित क्रम में प्रदान किये जायें। इसके विपरीत यदि उन्हें उचित अनुभव समुचित ढंग से प्रदान नहीं किये जाते तब हमारी परीक्षा का औचित्य ही समाप्त हो जाता है।

नोट

किसी भी विषय के शिक्षण से पूर्व अध्यापक को यह देखना चाहिये कि उसके देश में कौन-कौन से आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक परिवर्तन हो रहे हैं तथा ये परिवर्तन उनके भावी नागरिकों को किस प्रकार प्रभावित कर सकते हैं। इस दृष्टि से उसका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह यह देखे कि बालकों के व्यवहार में किस प्रकार के परिवर्तन उन्हें आगे आने वाली कठिनाइयों को हल करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। अध्यापक यह भी देखने का प्रयास करे कि समाज की आवश्यकताएँ क्या हैं तथा इन आवश्यकताओं की पूर्ति भारतीय युवक किस प्रकार कर सकता है? इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए उसे अपने विशिष्ट उद्देश्यों का निर्माण करना चाहिये। दूसरा आधार जिस पर हमें शिक्षण के उद्देश्यों को निश्चित करना होता है वे बालक की आवश्यकताएँ हैं। हमें देखना चाहिये कि बालक की क्या रुचियाँ हैं, अभिरुचियाँ हैं, क्षमताएँ हैं, आवश्यकताएँ हैं। तथा विद्यालय में प्रवेश के समय उनके बौद्धिक विकास का स्तर क्या था? इन सभी बातों का समावेश करते हुए शिक्षक को बालक के व्यक्तित्व का समुचित विकास करना चाहिये जो स्वयं उसके लिये तथा समाज के लिये हितकारी हो। बालकों की आवश्यकताओं के अतिरिक्त तीसरी बात जो उद्देश्यों के निर्धारण में सहायक सिद्ध हो सकती है राष्ट्र की दार्शनिक नीति होती है।

शैक्षणिक उद्देश्यों को स्थिर करने के लिये अध्यापक को शिक्षा मनोविज्ञान का ज्ञान होना भी नितान्त आवश्यक है। निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये किसी पाठ्य-वस्तु को बालक अपनी शारीरिक एवं मानसिक विकास की प्रक्रिया हेतु किस स्तर पर सीख सकता है, उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु किस प्रकार की सामग्री एवं सुविधाएँ चाहिये अथवा कौन-कौन सी शैक्षणिक प्रविधियाँ आवश्यक हैं, इन सभी का उत्तर शैक्षिक मनोविज्ञान ही दे सकता है।

2. पाठ्यक्रम सुधार हेतु पृष्ठपोषण की भूमिका (Role of Evaluation in improving Curriculum)—पृष्ठपोषण का महत्त्व पाठ्यक्रम के विकास एवं सुधार की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि सीखने का मापन बारीकी के साथ नहीं किया जा सकता, फिर पृष्ठपोषण को पाठ्यक्रम विकास के लिये एक महत्त्वपूर्ण उपकरण (Important tool) मानते हैं। इस सन्दर्भ में मूल्यांकन के दो कार्य (functions) हो सकते हैं।

1. शिक्षण प्रक्रिया में सुधार (Improvement in the teaching process)
2. छात्र अधिगम में सुधार (Improvement in student's learning)

दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि मूल्यांकन प्रक्रिया के द्वारा हम इस बात को जानने की कोशिश करते हैं कि हमने अपने शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति में कहाँ तक सफलता प्राप्त की है। **डेविस (Davis)** के अनुसार छात्र के व्यवहार में जो प्रभावी परिवर्तन किये जा सकते हैं वे निम्न हैं–

1. मूल्यांकन प्रक्रिया के द्वारा छात्रों की क्षमता का मापन करके यह पता लगाना कि निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हुई है अथवा नहीं।
2. यह पता लगाना कि कौन-सा विशिष्ट उद्देश्य हम प्राप्त नहीं कर सके हैं।
3. शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति को वरीयता क्रम देना।
4. सर्वोत्तम शिक्षण विधि का चयन करना।
5. पाठ्यक्रम की उपयुक्तता की जाँच करना तथा सहायक सामग्री के महत्व को भी समझना।

इस प्रकार मूल्यांकन प्रक्रिया के माध्यम से छात्रों के चयन (Selection), स्थिति विशेष (Rating), अधिगम (Learning), उपलब्धि (Achievement), कौशल (Skill) आदि से सम्बन्धित सूचनाएँ एकत्रित करके तथा अभिभावकों, छात्रों एवं अधिकारियों को आवश्यक निर्देश देकर पाठ्यक्रम सुधार हेतु एक विस्तृत भूमिका तैयार की जा सकती है। मूल्यांकन प्रक्रिया की उपरोक्त विशेषताओं का उपयोग करके आधुनिक शिक्षा विद् पाठ्यक्रम की समस्त गतिविधियों को नियन्त्रित करते हैं।

मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा अपने शैक्षणिक उद्देश्यों की प्राप्ति करते समय हमें इस बात का सहज अनुभव हो जाता है कि जिन उद्देश्यों की प्राप्ति में हमें बार-बार असफलता मिल रही है उसका कारण क्या है? इस क्यूँ का एक ही उत्तर है और वह यह है कि जो पाठ्यक्रम हमने किसी कक्षा विशेष के लिये बनाया है या जो व्यावहारिक परिवर्तन उनसे अपेक्षित

नोट

हैं वे उनके मानसिक स्तर (Mental level) अथवा आयु वर्ग (Age group) की दृष्टि से अनुपयुक्त हैं। इस प्रकार मूल्यांकन प्रक्रिया के द्वारा हमें यह पता चलता है कि हम उसी स्तर का पाठ्यक्रम बनायें जो उनके लिये सहज ग्रहण करने योग्य हो। यह प्रक्रिया छात्र एवं अध्यापक दोनों की दृष्टि से ही सुविधाजनक होगी।

3. शिक्षण प्रक्रिया में सुधार हेतु मूल्यांकन की भूमिका (Role of Evaluation in improving Teaching-Process)—"Teaching is a skilled activity" और किसी भी कौशल को प्राप्त करने के लिये हमें शिक्षण सामग्री, छात्र एवं शिक्षक इन तीनों के पारस्परिक सम्बन्ध को बनाये रखते हुए कार्य करना होता है। पृष्ठपोषण प्रक्रिया में किसी भी कौशल को प्राप्त करने में तीनों की एक सी ही भूमिका रहती है। अगर हमारे पास शिक्षण सामग्री अच्छी नहीं है तब हम चाहे कितने ही अच्छे ढंग से क्यों न पढ़ाएँ हमारा शिक्षण प्रभावशाली नहीं बन सकता। इसके विपरीत यदि हमारे पास शिक्षण सामग्री तो अच्छी है लेकिन हम उसका ठीक प्रकार से उपयोग नहीं कर पाते अर्थात्, शिक्षण सामग्री का प्रयोग कर हम अपनी पाठ्य-वस्तु को आकर्षक ढंग से छात्रों के सम्मुख नहीं रख पाते तो यह अध्यापक की अक्षमता का परिचायक है। अत: इस स्तर पर मूल्यांकन प्रक्रिया अध्यापक को यह निर्देश देगी कि उसे अपने शिक्षण को प्रभावी एवं सरल बनाने के लिये किन शिक्षण प्रतिमानों (Teaching Models), शिक्षण युक्तियों (Teaching Strategies) अथवा शिक्षण प्रविधियों (Teaching Techniques) का प्रयोग करना चाहिये। शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावी अथवा अप्रभावी बनाने में छात्र का भी व्यक्तिगत तौर पर विशेष योगदान रहता है। उदाहरणार्थ, यदि छात्र पढ़ने में बिल्कुल भी रुचि नहीं ले रहा है तो चाहे हमारी शिक्षण सामग्री कितनी ही अच्छी क्यों न हो तथा अध्यापक कितने ही परिश्रम से क्यों न पढ़ायें हमारे शिक्षण का कोई अर्थ नहीं होगा। इसका एकमात्र हल यह है कि छात्रों में पढ़ने के प्रति रुचि जाग्रत की जाये तथा उन्हें विभिन्न तरीकों से सीखने के लिये प्रेरित (Motivate) किया जाय। पृष्ठपोषण प्रक्रिया के माध्यम से जहाँ अध्यापक एक ओर अपने शिक्षण का मूल्यांकन करता है वहीं दूसरी ओर वह छात्रों की उपलब्धि का भी मापन करता है तथा इस प्रक्रिया के दौरान यदि वह यह अनुभव करता है कि छात्रों की उपलब्धि संतोषजनक नहीं है तो वह ऐसी परीक्षा प्रणाली को प्रयोग में लायेगा जो पुरानी पद्धति से भिन्न हो तथा छात्र के व्यक्तित्व सम्बन्धी विभिन्न आयामों एवं विषयगत उपलब्धि का मापन वस्तुनिष्ठ तरीके से कर सके। यदि वह अपनी शिक्षण विधि से संतुष्ट नहीं है तो वह इसके स्थान पर किसी प्रभावशाली शिक्षण विधि का चयन करेगा अथवा दूसरे तरीके प्रयोग में लायेगा। शिक्षण का भी एकमात्र उद्देश्य अपेक्षित विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करना ही है। जहाँ पाठ्यक्रम यह संकेत देता है कि कितने शिक्षण उद्देश्य प्राप्त करने हैं तथा किन-किन स्थलों पर प्राप्त करने हैं वहीं यह सारा कार्य हमें शिक्षण के माध्यम से ही पूरा करना पड़ता है। उदाहरणार्थ, मान लीजिये हमने गणित में किसी प्रत्यय (Concept) को समझाने की छात्रों को पूरी-पूरी कोशिश की है लेकिन हम छात्रों के उपलब्धि स्तर से सन्तुष्ट नहीं हैं तो इसके लिये मूल्यांकन प्रक्रिया हमें यह निर्देश देती है कि हम उस कक्षा विशेष के लिये तथा उस प्रकरण विशेष पर एक नैदानिक परीक्षा (Diagnostic Test) का निर्माण करें। नैदानिक परीक्षा का अर्थ होता है किसी समस्या विशेष के कारणों को ढूँढना तथा उसके समाधान हेतु उपचार की व्यवस्था करना। इसके लिये उपचारात्मक शिक्षण (Remedial Teaching) की व्यवस्था करनी पड़ती है। मान लीजिये, हम कक्षा 7 के विद्यार्थियों को दशमलव की भाग समझा रहे हैं तो हमारे सामने इस प्रत्यय को समझाने में कई समस्याएँ आती हैं जैसे—दशमलव का न हटा पाना, अंश और हर को न समझ पाना, दशमलव ठीक प्रकार से न लगा पाना व अन्य प्रकार की त्रुटियाँ आदि। नैदानिक परीक्षा के माध्यम से हम इस समस्या को आसानी से सुलझा लेते हैं साथ ही, शिक्षण से सम्बन्धित अन्य प्रकार की जटिल समस्यायें भी आसानी से हल हो जाती हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)—

1. प्रश्नावली का प्रयोग .... के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है।
2. प्रश्नों का बनाना और पूछना .... है।
3. .... विधि से छात्रों के पृष्ठपोषण में सहायता मिलती है।
4. .... विधि से छात्र की भाषा तथा वक्ता रूपी गुण सामने आते हैं जिससे छात्र की प्रतिभा का सही-सही मूल्यांकन किया जा सकता है।

नोट

19.6 सारांश (Summary)

- छात्रों के पृष्ठपोषण का अर्थ अध्यापकों द्वारा लिये गये परीक्षण पर छात्रों के प्रदर्शन पर उनके मूल्यांकन के बारे में जानकारी देना है। पृष्ठपोषण का कार्य व्यवहार परिवर्तन करना है। पृष्ठपोषण का प्रत्यय मशीन के सिद्धांत पर आधारित है। मोटर से चलने वाली नाव में पानी को पीछे काटने से नाव आगे जाती है तथा रेलवे इंजन में भाप को पीछे से निकालने से इंजन आगे को बढ़ता है। इसी प्रकार अभिक्रमित अनुदेशन सामग्री में आवश्यक सूचनाओं को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करने से पिछले पद की सही सूचना आगे के पद की ओर अग्रसर करती है। इसलिए परीक्षण में छात्र अपनी कमजोरियों को दूर करे। ऐसी प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है और अनुक्रियाओं को ही महत्त्व दिया जाता है।
- पृष्ठपोषण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें छात्र तथा शिक्षक दोनों सम्मिलित होते हैं, इसके प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–
  1. पृष्ठपोषण प्रमुख उद्देश्य छात्रों का वर्गीकरण करना है।
  2. पृष्ठपोषण के द्वारा छात्रों को उचित शैक्षिक एवं व्यावसायिक मार्ग निर्देशन प्रदान किया जाता है।
  3. पृष्ठपोषण के द्वारा पाठ्यक्रम में उचित संशोधन किया जा सकता है।
  4. पृष्ठपोषण का प्रयोग छात्रों में अधिगम (Learning) की मात्रा ज्ञात करने में भी किया जाता है।
  5. पृष्ठपोषण के द्वारा शिक्षकों की कुशलता एवं सफलता का मापन किया जाता है।
  6. पृष्ठपोषण के द्वारा छात्रों की दुर्बलताओं एवं योग्यताओं की जानकारी प्राप्त करने में सहायता मिलती है।
  7. पृष्ठपोषण शिक्षण विधियों की उपयुक्तता की भी जाँच करता है।
- छात्र प्रगति के मापन हेतु हम मूल्यांकन शब्द का प्रयोग करते हैं। कहीं-कहीं मूल्यांकन शब्द के स्थान पर परीक्षा, परीक्षण एवं जाँच शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। आधुनिक युग में मूल्यांकन को शिक्षण प्रक्रिया का अविछिन्न अंग (Integral part) माना जाता है। मूल्यांकन एक ऐसी वस्तु नहीं है जिसे हम पदार्थों का संग्रह कह सकें।
- अधिकांश विधियों के उपयोग से शिक्षण स्मृति स्तर तक ही सीमित रहता है। इनके प्रयोग से ज्ञान तथा बोध उद्देश्यों को ही प्राप्त किया जा सकता है। इनके प्रयोग से चिन्तन स्तर के शिक्षण की व्यवस्था नहीं की जा सकती है। उच्च स्तर के शिक्षण से संश्लेषण, विश्लेषण तथा मूल्यांकन उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है तथा समस्या समाधान की क्षमताओं का विकास किया जाता है।
- क्षमताओं एवं योग्यताओं के विकास के लिये विशिष्ट अनुदेशन प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। इनमें से कुछ प्रमुख पृष्ठपोषण प्रविधियों का उल्लेख इस अध्याय में किया गया है–
  (1) सामूहिक वाद-विवाद (Panel Discussion)
  (2) सम्मेलन प्रविधि (Conference Device/Technique)
  (3) कार्यशाला प्रविधि (Workshop Device/Technique)
  (4) विचार गोष्ठी प्रविधि (Seminar-Device/Technique)
  (5) विचार समिति प्रविधि (Symposium Device/Technique)।
- **सामूहिक वाद-विवाद** (Panel Discussion)–उच्च अधिगम की जितनी भी विधियाँ हैं; जैसे–सम्मेलन, विचार गोष्ठी, विचार समिति तथा कार्यशाला आदि इन सभी प्रविधियों का सम्पादन वाद-विवाद (Discussion) की सहायता से ही किया जा सकता है, क्योंकि इस प्रकार के आयोजन में सभी छात्रों तथा अध्यापकों को समान अवसर दिये जाते हैं।

वाद-विवाद प्रविधि आधुनिक व्यवस्था सिद्धान्त (Modern Theory of Organization) पर आधारित है। इसकी यह धारणा है कि व्यवस्था के सदस्य में अपनी अभिवृत्तियाँ, अभिरुचियाँ, मूल्य तथा अपने-अपने लक्ष्य होते हैं। इसके अतिरिक्त उनमें निर्णय लेने और समस्या-समाधान की क्षमता होती है। अत: इस धारणा की दृष्टि से प्रजातन्त्र शासन तथा जीवन ढंग के लिये वाद-विवाद प्रविधि को प्रोत्साहन दिया गया है।

नोट

- **सम्मेलन प्रविधि**—शिक्षा के क्षेत्र में उच्च अधिगम के लिये यह एक महत्त्वपूर्ण प्रविधि है। इस प्रविधि का उपयोग अनुदेशन एवं अधिगम परिस्थितियों को उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। शिक्षा के ज्ञानात्मक एवं भावात्मक उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। एक बड़े समूह की सभा का आयोजन होता है। इसके अन्तर्गत तात्कालिक गम्भीर समस्याओं पर विचार किया जाता है।
- "सम्मेलन व्यक्तियों की एक सभा होती है, जिसमें उन्हें एक साथ किसी विशिष्ट कार्य या समस्या पर चिन्तन तथा वाद-विवाद एक निश्चित समय में करना होता है।" "साधारणत: सम्मेलन किसी संगठन द्वारा आयोजित किया जाता है।" संगठन के स्थायी सदस्य होते हैं। संगठन की कार्यकारिणी होती है, जिसमें अध्यक्ष, मन्त्री, कोषाध्यक्ष तथा अन्य सदस्य होते हैं। यह संगठन प्रतिवर्ष किसी प्रकरण एवं समस्या पर सम्मेलन का आयोजन करता है। इसमें सदस्यों को आमन्त्रित किया जाता है।
- राष्ट्र, समाज, धर्म एवं शिक्षा व विज्ञान की विशिष्ट एवं तात्कालिक समस्याओं के अध्ययन एवं विवेचन का सम्मेलन एक प्रमुख प्रविधि है। सम्मेलन का उद्देश्य अधिक व्यापक होता है, जिसको ज्ञानात्मक तथा भावात्मक पक्षों के विकास के लिये किया जाता है।
- शिक्षा-प्रक्रिया के प्रमुख दो पक्ष माने जाते हैं—सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक। अनुदेशन प्रविधियों द्वारा सैद्धान्तिक पक्ष का विकास किया जाता है। उच्च ज्ञानात्मक तथा भावात्मक पक्षों के विकास के लिये विचार-गोष्ठी तथा सम्मेलन का आयोजन किया जाता है। क्रियात्मक पक्ष के विकास के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षण, शिक्षण प्रक्रिया के सतत् क्षेत्र का एक पक्ष है। छात्रों को नवीन प्रकार की परीक्षाओं के विषय में जानकारी देना, अनुदेशन के निर्माण, नवीन प्रकार की पाठ योजनाओं की रचना, अनुदेशन के निर्माण, नवीन प्रकार की पाठ योजनाओं की रचना तथा शिक्षण-अधिगम उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिये प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है
- विचार गोष्ठी अनुदेशन की ऐसी प्रविधि है, जिससे चिन्तन स्तर के अधिगम के लिये अन्त:-प्रक्रिया की परिस्थिति उत्पन्न की जाती है। इस प्रविधि को विभिन्न स्तरों पर अनुदेशन-परिस्थितियों के लिये प्रयुक्त किया जाता है।
- **विचार गोष्ठी प्रविधि के उद्देश्य**—प्रजातान्त्रिक राष्ट्र एवं समाज के लिये सेमीनार प्रविधि अधिक उपयोगी है। इस प्रविधि के प्रयोग से ज्ञानात्मक तथा भावात्मक उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति की प्राप्ति की जाती है। सेमीनार के उद्देश्यों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है।
- शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना है, जिसमें बौद्धिक, सामाजिक, व्यावसायिक, भावात्मक एवं व्यक्तिगत गुणों का विकास करना होता है, जिससे वह जीवन में सफल हो सके। परन्तु आधुनिक शिक्षण एवं अधिगम प्रक्रिया केवल ज्ञानात्मक पक्षों का विकास करती है। बालकों में समस्या-समाधान, विश्लेषण, संश्लेषण तथा आलोचनात्मक व सर्जनात्मक चिन्तन का विकास नहीं होता है।
- सामूहिक वार्तालाप की कोई सामान्य परिभाषा नहीं है। इसको प्रजातान्त्रिक विधि माना जाता है, क्योंकि इसमें छात्रों को ही अधिक क्रियाशील रहना पड़ता है। शिक्षक केवल निरीक्षक तथा निर्देशक का कार्य करता है। यह सदैव छात्र-केन्द्रित होती है। इसकी व्यवस्था साधारणत: दो प्रकार से की जाती है।
  (1) शिक्षा द्वारा—इस परिस्थिति में वातावरण कुछ प्रभुत्ववादी होता है।
  (2) छात्रों द्वारा—इसमें परिस्थिति पूर्णरूप से प्रजातांत्रिक होती है।
- कक्षा शिक्षण में शिक्षक सभी छात्रों की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रस्तुतीकरण नहीं कर पाता है। सामान्य छात्रों को ध्यान में रखकर पाठ्यवस्तु का प्रस्तुतीकरण करता है और अपेक्षित दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री का उपयोग करता है। सामान्य कक्षा शिक्षण में दो प्रकार की समस्यायें रहती हैं—
  1. छात्रों को पाठ्यवस्तु के कुछ बिन्दुओं को समझने की कठिनाई रहती है।
  2. अधिकांश छात्रों को पाठ्यवस्तु को बोधगम्य करने हेतु परिपाक (Assimilation) की आवश्यकता होती है। पाठ्यवस्तु की गहनता के लिए व्यक्तिगत अध्ययन की आवश्यकता होती है।

नोट

- **सहपाठी अनुवर्ग अधिगम**—छात्रों की पाठ्यवस्तु सम्बन्धी कठिनाइयों के सुधार हेतु अनुवर्ग प्रणाली का उपयोग किया जाता है। इसका उपयोग दो रूपों में किया जाता है—अनुवर्ग शिक्षण तथा अनुवर्ग अधिगम। शिक्षक कठिनाइयों के आधार पर छात्रों को छोटे-छोटे वर्गों में विभाजित कर लिया जाता है और शिक्षक द्वारा ही छात्रों की कठिनाइयों का समाधान किया जाता है।
- **सहकारी सामूहिक अधिगम**—सामूहिक वाद-विवाद (group discussion) का उपयोग एक विधि तथा प्रविधि के रूप में किया जाता है। इसका उपयोग शिक्षण-अधिगम में किया जाता है। इसमें अन्त:प्रक्रिया को अधिक अवसर मिलता है। यह प्रजातान्त्रिक विधि है। इसके उपयोग से पाठ्यवस्तु का स्वामित्व तथा मौलिकता का विकास किया जाता है।
- **परीक्षा सुधार हेतु मूल्यांकन की भूमिका** (Role of Evaluation in improving the Examination System)—मापन का उद्देश्य विद्यार्थियों के अर्जित ज्ञान का मूल्यांकन करना ही नहीं है वरन् इसका लक्ष्य परीक्षा प्रणाली में सुधार करना भी है। इन दोनों लक्ष्यों की पूर्ति तभी हो सकती है जब हम उस सारे ज्ञान की जाँच कर लें जो छात्रों को पढ़ाया गया है तथा जो ज्ञान जाँचना होता है उसे भी भली प्रकार पढ़ाना अध्यापक का कर्त्तव्य होता है। दूसरे शब्दों में, परीक्षा लेने से पूर्व हमें यह स्पष्ट ज्ञात होना चाहिये कि हमें परीक्षा का क्षेत्र कहाँ तक सीमित रखना है, बालकों को कितना ज्ञान दिया जा चुका है तथा किस रूप में दिया गया है, बालकों में कौन-कौन से व्यावहारिक परिवर्तन किये जा चुके हैं जो उनकी प्रगति के सूचक हैं आदि।
- **पाठ्यक्रम सुधार हेतु पृष्ठपोषण की भूमिका** (Role of Evaluation in improving Curriculum)—पृष्ठपोषण का महत्त्व पाठ्यक्रम के विकास एवं सुधार की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि सीखने का मापन बारीकी के साथ नहीं किया जा सकता, फिर पृष्ठपोषण को पाठ्यक्रम विकास के लिये एक महत्त्वपूर्ण उपकरण (Important tool) मानते हैं। इस सन्दर्भ में मूल्यांकन के दो कार्य (functions) हो सकते हैं।
  1. शिक्षण प्रक्रिया में सुधार (Improvement in the teaching process)
  2. छात्र अधिगम में सुधार (Improvement in student's learning)
- किसी भी कौशल को प्राप्त करने के लिये हमें शिक्षण सामग्री, छात्र एवं शिक्षक इन तीनों के पारस्परिक सम्बन्ध को बनाये रखते हुए कार्य करना होता है। पृष्ठपोषण प्रक्रिया में किसी भी कौशल को प्राप्त करने में तीनों की एक सी ही भूमिका रहती है। अगर हमारे पास शिक्षण सामग्री अच्छी नहीं है तब हम चाहे कितने ही अच्छे ढंग से क्यों न पढ़ाएँ हमारा शिक्षण प्रभावशाली नहीं बन सकता।
- पृष्ठपोषण प्रक्रिया के माध्यम से जहाँ अध्यापक एक ओर अपने शिक्षण का मूल्यांकन करता है वहीं दूसरी ओर वह छात्रों की उपलब्धि का भी मापन करता है तथा इस प्रक्रिया के दौरान यदि वह यह अनुभव करता है कि छात्रों की उपलब्धि संतोषजनक नहीं है तो वह ऐसी परीक्षा प्रणाली को प्रयोग में लायेगा जो पुरानी पद्धति से भिन्न हो तथा छात्र के व्यक्तित्व सम्बन्धी विभिन्न आयामों एवं विषयगत उपलब्धि का मापन वस्तुनिष्ठ तरीके से कर सके।

19.7 शब्दकोश (Keywords)

- **पृष्ठपोषण**—कमियों का मूल्यांकन।
- **विचारगोष्ठी**—विचारों का आदान-प्रदान।
- **शनै: शनै**—धीरे-धीरे।

19.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. पृष्ठपोषण के अर्थ और उद्देश्य की व्याख्या कीजिए।
2. पृष्ठपोषण की प्रक्रिया का विवेचन कीजिए।

नोट

3. छात्रों के लिए पृष्ठपोषण की विधियों का उल्लेख कीजिए।
4. पृष्ठपोषण के महत्त्व को रेखांकित कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. 1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. असत्य

2. 1. पृष्ठपोषण 2. एक कला 3. छात्र प्रस्तुतीकरण 4. सेमिनार।

19.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–20: सत्र प्रणाली बनाम वार्षिक प्रणाली (Semester System vs Annual System)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
20.1 वार्षिक परीक्षा प्रणाली का अर्थ (Meaning of Annual System of Examination)
20.2 वार्षिक परीक्षा प्रणाली के लाभ (Advantages of Annual System of Examination)
20.3 वार्षिक परीक्षा प्रणाली में सुधार (Improvement in Annual System of Examination)
20.4 सत्र परीक्षा प्रणाली का अर्थ (Meaning of Semester System of Examination)
20.5 सत्र परीक्षा प्रणाली के लाभ (Advantages of Semester Examination)
20.6 सत्र परीक्षा प्रणाली की सीमाएँ (Disadvantages of Semester Examination)
20.7 सारांश (Summary)
20.8 शब्दकोश (Keywords)
20.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
20.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- वार्षिक परीक्षा प्रणाली के अर्थ, लाभ और उसमें सुधार को समझने एवं व्याख्या करने में।
- सत्र परीक्षा प्रणाली के अर्थ, लाभ और उसकी सीमाओं की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

परीक्षा का मूल उद्देश्य छात्र की बौद्धिक क्षमता तथा योग्यता का आकलन तथा मूल्यांकन करना है। यह परीक्षण मौखिक अथवा लिखित, सैद्धांतिक अथवा प्रायोगिक हो सकता है। इसलिए परीक्षाओं का आयोजन इस प्रकार से होना चाहिए। जिससे छात्र अपने विचारों की मौलिकता को आसानी से अभिव्यक्त कर सके। वर्तमान में भारतवर्ष में दो प्रकार की परीक्षाएँ प्रचलित हैं, एक आन्तरिक परीक्षाएँ तथा दूसरी बाह्य परीक्षाएँ। आन्तरिक परीक्षाएँ भी दो प्रकार से आयोजित की जाती हैं–वार्षिक परीक्षा तथा सत्र परीक्षा दोनों प्रकार की परीक्षा के अपने लाभ तथा सीमाएँ हैं, किन्तु दोनों ही परीक्षा प्रणालियों का एक ही उद्देश्य है कि छात्रों का परीक्षण की सहायता से मूल्यांकन करना तथा अगली कक्षा में प्रोन्नत करके उन्हें उस कक्षा की सफ़लता का डिप्लोमा, प्रमाण पत्र आदि प्रदान करना। इस अध्याय में हम सत्र परीक्षा तथा वार्षिक परीक्षा के विषय में अध्ययन करेंगे।

20.1 वार्षिक परीक्षा प्रणाली का अर्थ (Meaning of Annual System of Examination)

वार्षिक प्रणाली में वर्ष में एक बार संबंधित पाठ्यक्रम तथा विषयवस्तु पर शिक्षण संस्थान द्वारा प्रश्न पत्र तैयार करके, अंकों का निर्धारण तथा परीक्षा का आयोजन किया जाता है। इस प्रकार की शिक्षण प्रणाली में विद्यार्थियों को वर्ष में एक बार परीक्षा देनी होती है, जिससे बार-बार परीक्षा देने का तनाव नहीं रहता, किन्तु सम्पूर्ण पाठ्यक्रम की एक बार परीक्षा लेने से छात्रों पर कार्यभार बहुत बढ़ जाता है।

20.2 वार्षिक परीक्षा प्रणाली के लाभ (Advantages of Annual System of Examination)

(*i*) वार्षिक प्रणाली में छात्रों पर परीक्षा का भार नहीं होता क्योंकि परीक्षाएँ वर्ष में एक बार आयोजित की जाती हैं।

(*ii*) छात्र के पास वर्ष भर का समय होता है, जिसमें वह विषयों का अधिक तथा विस्तृत अध्ययन कर लेता है, तथा उसमें कुशलता प्राप्त कर लेता है।

20.3 वार्षिक परीक्षा प्रणाली में सुधार (Improvement in Annual System of Examination)

राधाकृष्णन कमीशन (1948-49) ने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में परीक्षा संबंधी सुधारों को सबसे अधिक महत्व तथा प्राथमिकता दी है। कमीशन के अनुसार—यदि उच्च शिक्षा में हीं सुधार की आवश्यकता है, तो वह है परीक्षा प्रणाली में सुधार। यदि हमारी परीक्षा प्रणाली में सुधार हो जायें तो शिक्षा के सभी क्षेत्र तथा स्तरों पर स्वयं सुधार हो सकेगा। कमीशन ने विश्वविद्यालय परीक्षा के संबंध में विभिन्न सुझाव दिये। इसके बाद मुदलियार आयोग (1952-53) ने भी सेकेण्डरी स्तर पर होने वाली परीक्षाओं के संबंध में सुधार की सिफ़ारिशें की। कोठारी कमीशन ने भी परीक्षा संबंधी कई सुझाव दिये। शिक्षा की राष्ट्रीय नीति में भी परीक्षा प्रणाली के सुधारों पर ज़ोर दिया गया। इसके अतिरिक्त माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद् विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा विश्वविद्यालय स्तरीय अनेक समितियों ने भी शैक्षिक परीक्षा संबंधी सुधारों की विवेचना की है तथा कई संस्तुतियाँ लागू भी की गई हैं।

नोट्स तीन प्रकार की परीक्षा प्रणाली का आयोजन—मौखिक, लिखित तथा प्रायोगिक, तीन प्रकार की लिखित परीक्षाएँ—निबन्धात्मक, लघु उत्तरीय तथा बहुविकल्पीय, प्रश्न पत्रों के निर्माण संबंधी सावधानी तथा परीक्षा में नकल करने को न्यायिक अपराध मानने जैसी कई सिफ़ारिशों का प्रभावी ढंग से पालन किया गया है।

20.4 सत्र परीक्षा प्रणाली का अर्थ (Meaning of Semester System of Examination)

सामान्यत: हमारे देश में कक्षीय सत्र एक वर्ष का होता है, तथा वर्ष के अन्त में परीक्षा ली जाती है। कुछ विश्वविद्यालय सत्र को 6 माह के दो भागों में विभाजित कर देते हैं, तथा वर्ष में दो बार परीक्षाएँ आयोजित करते हैं, इस प्रकार तीन वर्षीय स्नातक कार्यक्रम 6 सत्रों में तथा द्विवर्षीय स्नातकोत्तर कार्यक्रम चार सत्रों में बँट जाता है। इस प्रकार की प्रणाली को सत्र परीक्षा प्रणाली कहते हैं। इस प्रणाली में यदि छात्र के पास होने के लिए पर्याप्त अंक नहीं मिलते हैं, तो उसे फ़ेल नहीं माना जाता है बल्कि उसे अगले सत्र में प्रोन्नत कर दिया जाता है, तथा संबंधित विषय में पुन: परीक्षा देकर छात्र पर्याप्त अंक प्राप्त कर सकता है।

नोट

20.5 सत्र परीक्षा प्रणाली के लाभ (Advantages of Semester Examination)

सत्र परीक्षा प्रणाली के लाभ निम्नलिखित हैं–

(*i*) इस परीक्षा प्रणाली का सबसे प्रमुख लाभ यह है कि इसमें पर्याप्त अंक न मिलने पर भी छात्र को फ़ेल घोषित नहीं किया जाता। फ़ेल हो जाने के कारण पूरा वर्ष खराब नहीं होता। छात्र अगले सत्र की पढ़ाई जारी रख सकता है और साथ ही पिछली परीक्षा भी दे सकता है।

(*ii*) इस प्रणाली का दूसरा प्रमुख लाभ यह है कि जो छात्र एक सत्र में फ़ेल हो जाते हैं, उनकी पढ़ाई ग्रीष्म अवकाश में भी जारी रहती है, जिससे कि फ़ेल होने वाले छात्र अपने पूर्व सेमेस्टर में जिस विषय में फ़ेल हुए है, उस विषय की पढ़ाई कर सकते हैं।

(*iii*) छात्र को एक सत्र में सीमित तथा अपेक्षाकृत कम पाठ्यक्रम का अध्ययन करना पड़ता है, जिससे कि छात्र उस पाठ्यक्रम को बेहतर ढंग से अध्ययन करते हैं।

(*iv*) अध्यापकों को भी वर्ष भर कठिन परिश्रम तथा नियमित रूप से छात्रों को अध्यापन व निर्देशन देना होता है, जिससे वे सीमित समय पूर्ण रूप से पाठ्यक्रम को पढ़ाने के लिए बाध्य रहते हैं।

क्या आप जानते हैं सत्र प्रणाली में छात्र नियमित रूप से कक्षा ग्रहण करते हैं, अध्ययन करते हैं, जिससे अनुशासनहीनता की समस्या पर काफ़ी हद तक नियंत्रण हो जाता है।

20.6 सत्र परीक्षा प्रणाली की सीमाएँ (Disadvantages of Semester Examination)

सत्र परीक्षण की कुछ सीमाएँ भी हैं जो निम्नलिखित हैं–

(*i*) सत्र परीक्षा केवल उच्च शिक्षा के क्षेत्र में प्रयुक्त की जा सकती हैं जहाँ पर छात्रों की संख्या कम होती है, प्राथमिक तथा माध्यमिक विद्यालयों में सत्र परीक्षा प्रयुक्त नहीं की जा सकती है।

(*ii*) प्रति छः माह बाद प्रश्न पत्रों का निर्माण, अंकों का निर्धारण तथा परीक्षाओं का आयोजन करने में काफ़ी कठिनाई होती है।

(*iii*) इस प्रणाली में छात्र अपनी इच्छानुसार, फ़ेल होने वाली परीक्षा को पास करने के लिए तथा अपेक्षाकृत अधिक अंक लाने के लिए परीक्षा देते हैं। इन अलग-अलग उद्देश्यों के लिए परीक्षा तथा परिणामों का आयोजन तथा प्रबंधन बहुत जटिल प्रक्रिया है।

(*iv*) इस प्रकार की परीक्षा प्रणाली से छात्रों पर सदैव परीक्षा का भार तथा तनाव बना रहता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. सत्र प्रणाली में पर्याप्त ········ मिलने पर भी छात्र को फ़ेल घोषित नहीं किया जाता।
2. छात्र को एक सत्र के दौरान ········ तथा अपेक्षाकृत कम पाठ्यक्रम का अध्ययन करना पड़ता है।
3. सत्र प्रणाली में ········ पर काफी हद तक नियंत्रण किया जा सकता है।
4. अध्यापक सीमित समय में पूरे पाठ्यक्रम को पढ़ाने के लिए ········ होते हैं।

नोट

20.7 सारांश (Summary)

- वार्षिक प्रणाली में वर्ष में एक बार संबंधित पाठ्यक्रम तथा विषयवस्तु पर शिक्षण संस्थान द्वारा प्रश्न पत्र तैयार करके, अंकों का निर्धारण तथा परीक्षा का आयोजन किया जाता है।
- वार्षिक प्रणाली में छात्रों पर परीक्षा का भार नहीं होता क्योंकि परीक्षाएँ वर्ष में एक बार आयोजित की जाती हैं।
- छात्र के पास वर्ष भर का समय होता है, जिसमें वह विषयों का अधिक तथा विस्तृत अध्ययन कर लेता है, तथा उसमें कुशलता प्राप्त कर लेता है।
- राधाकृष्णन कमीशन (1948-49) ने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में परीक्षा संबंधी सुधारों को सबसे अधिक महत्व तथा प्राथमिकता दी है। कमीशन के अनुसार—यदि उच्च शिक्षा में हीं सुधार की आवश्यकता है, तो वह है परीक्षा प्रणाली में सुधार। यदि हमारी परीक्षा प्रणाली में सुधार हो जायें तो शिक्षा के सभी क्षेत्र तथा स्तरों पर स्वयं सुधार हो सकेगा। कमीशन ने विश्वविद्यालय परीक्षा के संबंध में विभिन्न सुझाव दिये।
- सामान्यत: हमारे देश में कक्षीय सत्र एक वर्ष का होता है, तथा वर्ष के अन्त में परीक्षा ली जाती है। कुछ विश्वविद्यालय सत्र को 6 माह के दो भागों में विभाजित कर देते हैं, तथा वर्ष में दो बार परीक्षाएँ आयोजित करते हैं, इस प्रकार तीन वर्षीय स्नातक कार्यक्रम 6 सत्रों में तथा द्विवर्षीय स्नातकोत्तर आदि है।
- सत्र परीक्षा प्रणाली के लाभ निम्नलिखित हैं—
  - *(i)* इस परीक्षा प्रणाली का सबसे प्रमुख लाभ यह है कि इसमें पर्याप्त अंक न मिलने पर भी छात्र को फ़ेल घोषित नहीं किया जाता। फ़ेल हो जाने के कारण पूरा वर्ष खराब नहीं होता। छात्र अगले सत्र की पढ़ाई जारी रख सकता है और साथ ही पिछली परीक्षा भी दे सकता है।
  - *(ii)* इस प्रणाली का दूसरा प्रमुख लाभ यह है कि जो छात्र एक सत्र में फ़ेल हो जाते हैं, उनकी पढ़ाई ग्रीष्म अवकाश में भी जारी रहती है, जिससे कि फ़ेल होने वाले छात्र अपने पूर्व सेमेस्टर में जिस विषय में फ़ेल हुए है, उस विषय की पढ़ाई कर सकते हैं।
  - *(iii)* छात्र को एक सत्र में सीमित तथा अपेक्षाकृत कम पाठ्यक्रम का अध्ययन करना पड़ता है, जिससे कि छात्र उस पाठ्यक्रम को बेहतर ढंग से अध्ययन करते हैं।
- सत्र परीक्षण की कुछ सीमाएँ भी हैं जो निम्नलिखित हैं—
  - *(i)* सत्र परीक्षा केवल उच्च शिक्षा के क्षेत्र में प्रयुक्त की जा सकती हैं जहाँ पर छात्रों की संख्या कम होती है, प्राथमिक तथा माध्यमिक विद्यालयों में सत्र परीक्षा प्रयुक्त नहीं की जा सकती है।
  - *(ii)* प्रति छ: माह बाद प्रश्न पत्रों का निर्माण, अंकों का निर्धारण तथा परीक्षाओं का आयोजन करने में काफ़ी कठिनाई होती है।

20.8 शब्दकोश (Keywords)

- **सत्र**—निश्चित समयान्तराल में विभक्त करना।
- **प्रणाली**—विधि।

20.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. वार्षिक परीक्षा प्रणाली का क्या अर्थ है? वर्णन कीजिए।
2. वार्षिक परीक्षा प्रणाली के क्या लाभ हैं? इस प्रणाली में होने वाले सुधारों का वर्णन कीजिए।
3. सत्र परीक्षा प्रणाली से आप क्या समझते हैं? इससे होने वाले लाभों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
4. सत्र परीक्षा प्रणाली की सीमाओं का विवेचन कीजिए।

नोट

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. अंक नहीं 2. सीमित 3. अनुशासनहीनता 4. बाध्य।

20.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—21: सतत् परीक्षण (Continuous Assessment)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
21.1 सतत् परीक्षण का अर्थ (Meaning of Continuous Assessment)
21.2 सतत् परीक्षण की आवश्यकता (Need of Continuous Assessment)
21.3 सतत् परीक्षण का उद्देश्य (Objectives of Continuous Assessment)
21.4 सतत् परीक्षण के प्रकार (Types of Continuous Assessment)
21.5 सतत् परीक्षण के सिद्धांत (Process of Continuous Assessment)
21.6 सतत् परीक्षण के लाभ (Advantages of Continuous Assessment)
21.7 सारांश (Summary)
21.8 शब्दकोश (Keywords)
21.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
21.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- सतत् परीक्षण का अर्थ, आवश्यकता, उद्देश्य एवं प्रकार का विवेचन करने में।
- सतत् परीक्षण के सिद्धांत प्रक्रिया और उपयोग का विश्लेषण करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

परीक्षण किसी भी शिक्षा की सफलता का द्योतक है। प्राचीन काल से वर्तमान युग तक परीक्षण की स्थिति में बहुत परिवर्तन आया है। सतत् परीक्षण छात्र की बौद्धिक क्षमता तथा शैक्षिक उपलब्धि का मूल्यांकन करने का एक प्रभावी तरीका है। यह परीक्षण न केवल छात्रों को बल्कि अध्यापकों को भी अपने शिक्षण प्रक्रिया तथा पद्धतियों का आकलन करने का अवसर देता है। इस इकाई में हम सतत् परीक्षण के विषय में विस्तृत अध्ययन करेंगे।

21.1 सतत् परीक्षण का अर्थ (Meaning of Continuous Assessment)

सतत् परीक्षण कक्षा में अध्यापकों द्वारा प्रयुक्त की गई युक्ति है, जिससे छात्रों के ज्ञान, बुद्धि कौशल तथा योग्यता का मूल्यांकन किया जाता है। अध्यापक, छात्रों की बुद्धिकौशल को ज्ञात करने के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षण आयोजित करते हैं तथा प्राप्त जानकारी एकत्र करते हैं। ये परीक्षण कक्षा में पढ़ाये गए पाठ्यक्रम पर आधारित होते हैं। सतत् परीक्षण छात्रों की निरन्तर प्रगति व शैक्षिक उपलब्धि को जानने के लिए आयोजित किये जाते हैं, इससे छात्र तथा

अध्यापक के बीच एक ज्ञानात्मक संबंध स्थापित हो जाता है, तथा अध्यापक को छात्र के ज्ञान स्तर का पता रहता है। जो कुछ अध्यापक ने कक्षा में पढ़ाया उसमें से छात्र ने क्या और कितना सीखा, यह सब जानकारी सतत् परीक्षण से प्राप्त होती है।, जब अध्यापक छात्र को उसके उपलब्धि प्रदर्शन के बारे में बताता है, तो छात्र को अपनी कमज़ोरियों अथवा कमियों का पता चलता है, और वह उन पर ध्यान देकर उन्हें दूर करने का प्रयास करता है।

21.2 सतत् परीक्षण की आवश्यकता (Need of Continuous Assessment)

सतत् परीक्षण प्रक्रिया छात्र उपलब्धि के परीक्षण से कहीं अधिक उपयोगी होता है। इस परीक्षण की सहायता से छात्र अपने कमज़ोर पक्षों तथा विषय की कठिनाइयों को दूर करने के लिए प्रयास करते हैं, तथा कठिन विषय पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। इस प्रकार सतत् परीक्षण द्वारा छात्र, तथा अध्यापक दोनों का स्वमूल्यांकन हो जाता है।

जब अध्यापक छात्र का निरन्तर परीक्षण लेते रहते हैं, तो वे अपने छात्रों के कमज़ोर तथा मज़बूत पक्षों को जान लेते हैं, उदाहरण के लिए कोई बच्चा गणित के सवाल बहुत सरलता से हल कर लेता है, किन्तु लिखने में बहुत कठिनाई होती है, या लेख बहुत ख़राब है, तो अध्यापक यह जान लेते हैं कि भाषा तथा व्याकरण में कमज़ोर है, तो वे उसके भाषायी पक्ष को सुधारने के लिए उसे कई प्रकार के अभ्यास करने को देंगे। जैसे रोज़ एक पेज लेख लिखना, कठिन शब्दों को लिखना आदि। छात्र को यह अनुभूति होती है कि अध्यापक छात्रों की उपलब्धि यों को मूल्यांकित करते हैं। किसी विषय में अधिक या कम अंक लाने से छात्र के पाठ्यवस्तु को समझने में सरलता या कठिनाई का द्योतक है।, अध्यापक इसे जान लेने के बाद अपनी शिक्षण शैली में बदलाव ला कर उसे प्रभावपूर्ण तथा छात्र के लिए आसान बना सकते हैं।

नोट्स सतत् परीक्षण द्वारा अध्यापक जाँच सकते हैं कि उनके अध्यापन द्वारा छात्रों की कितनी ज्ञान वृद्धि हुई है, यदि उसमें कोई कमी है तो वे अपने पढ़ाने की शिक्षण प्रक्रियाओं में परिवर्तन लाकर उन्हें और प्रभावशाली बना सकते हैं।

21.3 सतत् परीक्षण का उद्देश्य (Objectives of Continuous Assessment)

सतत् परीक्षण के दो प्रमुख उद्देश्य हैं–(*i*) छात्रों के शैक्षिक परिणाम की वैधता तथा विश्वसनीयता में सुधार लाना, (*ii*) छात्रों को प्रभावी अधिगम को विकसित करने में सहायता करना। वर्तमान परीक्षण प्रणाली भले ही निरन्तर परीक्षण पर आधारित हो किन्तु यह उपरोक्त दोनों उद्देश्यों की पूर्ति नहीं करती है। कक्षा में लिये जाने वाले परीक्षण पर आधारित होते हैं। ये परीक्षण निम्नस्तरीय कौशल जैसे, "ज्ञान", तथा "विस्तृतता" को जानने के लिए बनाये जाते हैं। सतत् परीक्षण का केन्द्रीय तथा मूल उद्देश्य यही है कि विभिन्न निरन्तर लिये जाने वाले परीक्षणों, प्रोजेक्ट्स द्वारा छात्रों के ज्ञान कौशल तथा शैक्षिक उपलब्धि में सुधार करना है।

सतत् परीक्षण के उद्देश्यों को निम्नलिखित तरीकों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

(*i*) **मूल्यांकन संबंधी जानकारी को एकत्र करने के लिए अधिक समय की आवश्यकता**–किसी भी छात्र की शैक्षिक उपलब्धि के वैध तथा विश्वसनीय आँकड़ों को प्राप्त करने में बहुत कुशलता तथा मेहनत से कार्य करना पड़ता है। इसमें बहुत अधिक समय लगता है। एक ही पाठ्यक्रम की विभिन्न इकाइयों का अलग-अलग परीक्षण करना, एक साथ पूरे पाठ्यक्रम का परीक्षण करने से बेहतर होता है, तथा यह छात्र के बेहतर प्रदर्शन को प्रदर्शित करता है।

(*ii*) **विभिन्न परीक्षणों तथा परीक्षणों की स्थितियों का प्रयोग**–पूरे पाठ्यक्रम का मूल्यांकन करने के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षण तथा गतिविधियाँ आयोजित की जाती हैं। प्रायोगिक कौशल जैसे विज्ञान संबंधी

प्रयोगात्मक परीक्षाएँ, साक्षात्कार रिपोर्ट तथा प्रोजेक्ट तैयार कराना तथा अन्य प्रज़ेन्टेशन्स और ग्राफीय प्रोजेक्ट तथा रिपोर्ट आदि आयोजित करना इस परीक्षणों का एक प्रमुख अंग हैं। इन सब परीक्षणों से छात्रों की योग्यता तथा कुशलता का अच्छी तरह से मूल्यांकन किया जाता है।

(*iii*) **अध्यापक का सहयोग तथा उपचारात्मक शिक्षा**—सतत् परीक्षण का एक प्रमुख उद्देश्य छात्र तथा शिक्षक के बीच आपसी सहयोग का संबंध स्थापित करना भी है, इन परीक्षणों में प्रोजेक्ट्स, तथा प्रायोगिक परीक्षाओं में अध्यापक द्वारा छात्रों को समय-समय पर आवश्यक निर्देश तथा परामर्श देना, छात्रों को शैक्षिक स्तर पर सरलता का बोध कराता है, उन्हें लगता है कि अध्यापक द्वारा छात्र की उपलब्धियों को ठीक प्रकार से जाँचा जा रहा है, तथा अध्यापक उन्हें रूचिपूर्वक कोई चीज़ समझा रहा है, जिससे छात्र भी प्रतिक्रिया स्वरूप बेहतर प्रदर्शन करने का प्रयत्न करते हैं।

21.4 सतत् परीक्षण के प्रकार (Types of Continuous Assessment)

सतत् परीक्षण कई प्रकार हैं। इनका विस्तृत विवरण निम्न प्रकार से है।

दैनिक कार्य—दैनिक रूप से लिये गए परीक्षण सबसे अधिक उपयुक्त होते हैं। इनसे दिन भर में 'पढ़ाये गए पठन सामग्री का पुनराभ्यास हो जाता है तथा अपनी गल्तियों तथा कमजोरियों को साथ-साथ दूर करके उसे अधिक निपुणता के साथ सीख सकता है। घर के लिए दिये जाने वाले कार्य निबन्धात्मक तथा वस्तुनिष्ठ दोनों प्रकार के हो सकते हैं अत: छात्र हर प्रकार से अपने आपको तैयार कर सकता है। यह कार्य बहुत अधिक परिश्रम का होता है, अत: छात्र इसको एक भार के रूप में मानते हैं, बहुत अधिक अभ्यास प्रश्न इतने कम समय में कर पाना उनके लिए बहुत अधिक कठिन हो जाता है।, इसलिए आवश्यक है, निरन्तर किन्तु छोटे अभ्यास तथा पुनरावृत्ति प्रश्न दिये जायें। इन अभ्यासों की तथा परीक्षणों को करने के लिए पूर्ण रूप से निगरानी की आवश्यकता होती है। ताकि छात्र नकल करके इनको पूरा न करें।

प्रोजेक्ट्स—यह छात्र की उपलब्धि को जाँचने, संबंधित जानकारी प्राप्त करने तथा आँकड़े बनाने के लिए एक मापक की भूमिका निभाते हैं। विषय को प्रायोगिक रूप से समझने, तथा एक टीम की तरह कार्य करने का कार्य करते हैं। किन्तु इनको समझने के लिए एक अध्यापक को एक पर्यवेक्षक के रूप में हर समय छात्रों को समझाना पड़ता है। ये अधिक खर्चीला तरीका है, तथा बहुत ध्यान देने की आवश्यकता है। इसमें एक से अधिक छात्रों का योगदान होता है, इसलिए प्रत्येक छात्र का मूल्यांकन करना बहुत कठिन हो जाता है। तथा उनकी ज्ञानलब्धि तथा उसके योगदान का अनुमान लगाना एक कठिन कार्य है।

प्रायोगिक कार्य—प्रायोगिक कार्यों से छात्र की प्रायोगिक बुद्धि तथा ज्ञान कौशल का पता चलता है, छात्रों को थ्योरी के साथ-साथ उसके प्रायोगात्मक रूप को भी सीखना चाहिए।

> *क्या आप जानते हैं* विद्यालय में प्रभावी तथा उचित शिक्षा भविष्य में झूठ बोलने, चोरी करने, कार्य के प्रति निष्क्रियता तथा धोखेबाज़ी जैसे दुर्गुणों को दूर किया जा सकता है।

21.5 सतत् परीक्षण के सिद्धांत (Process of Continuous Assessment)

सतत् परीक्षण निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित हैं—

(1) **सराहनात्मक पूछताछ**—सतत् परीक्षण में छात्र को उसकी योग्यता के लिए सराहना करनी चाहिए। परीक्षण में उसकी बुद्धिकौशल तथा प्राप्तांकों की सराहना करनी चाहिए जिससे वह भविष्य में और बेहतर प्रदर्शन कर सके। उसे दैनिक कार्यों जैसे गृहकार्य, प्रोजेक्ट्स आदि पर विशेष ग्रेड अथवा सराहना द्वारा अध्यापक को

नोट

अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति करना चाहिए। इसी प्रकार घर पर भी अभिभावकों द्वारा छात्र के कार्यों की प्रशंसा करना चाहिए, जिससे उसे प्रोत्साहन मिले।

(2) **प्रौढ़ अधिगम**–प्राय: पाठ्य पुस्तकों में प्रत्येक इकाई में गतिविधियों पर बहुत ज़ोर दिया जाता है। ये सभी गतिविधियाँ अपने अध्यापक गण तथा सहयोगियों के साथ मिलकर करने की होती हैं। इस प्रक्रिया में अध्यापक अपने शिक्षण प्रक्रिया को बेहतर ढंग से करने का प्रयास करते हैं। शिक्षक, प्राध्यापक, पर्यवेक्षक, तथा अभिभावकों के पास अनुभव होता है, जो उन्होंने अपने जीवन की कठिनाइयों तथा समस्याओं से सीखा होता है। उनके पास बहुमूल्य अनुभव तथा ज्ञानकौशल होता है, जिसकी सहायता से वे छात्रों को अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से शिक्षा के विभिन्न परिप्रेक्ष्य समझा सकते हैं।

(3) **अनुभव अधिगम**–प्रौढ़ अपने अनुभव से बहुत कुछ सीखते हैं और अध्यापक अपने इस अनुभव का उपयोग कक्षा में करते हैं, वे प्रभावशाली शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्राप्त करने के लिए, अपने अनुभवों का प्रयोग करते हैं। ऐसी कई प्रयोगात्मक गतिविधियाँ जो अध्यापक के द्वारा की जाती हैं, इससे अध्यापक को छात्रों को पाठ्य विषय वस्तु समझाने में सहायता मिलती है।

(4) **परिवर्तन के कारण को समझना**–व्यस्कों, अध्यापकों के पास परिवर्तन का विश्लेषण करने का अवसर होता है। बहुत से अध्यापकों को ज्ञात ही नहीं होता कि उन्हें कौन-सी विषय वस्तु किस प्रकार पढ़ानी है, परीक्षणों द्वारा इस बात का पता चलता है कि किस प्रकार की तकनीक से कौन-सा विषय, तथा विषय वस्तु कैसे समझानी है, अत: वे अपनी पुरानी तकनीकों से हटकर नई तकनीकें अपनाते हैं, जिससे समय के साथ छात्र को विभिन्न नित नये तरीकों से समझाया जा सके।

अंतत: अध्यापक यह निर्णय ले लेते हैं कि उनको किस विषय पर कौन-सी विधि अथवा पद्धति अपनाना है।

21.6 सतत् परीक्षण के लाभ (Advantages of Continuous Assessment)

सतत् परीक्षण के निम्नलिखित लाभ हैं–

(1) सतत् परीक्षण का सबसे बड़ा लाभ यह है कि बहुत परिश्रम तथा कठिनाई से एकत्रित किये गए आँकड़ों द्वारा विद्यार्थी के शिक्षण अधिगम की विभिन्न विषयों तथा स्तरों पर सूक्ष्म जाँच हो जाती है, तथा जो कमियाँ उभर कर आती हैं, उन पर कक्षाध्यापक ध्यान देते हैं, जिससे छात्र भी अपनी पूर्ण शक्ति तथा साहस से अच्छा प्रदर्शन करते हैं तथा अच्छे अंक लाने का प्रयास करेंगे।

(2) सतत् परीक्षण का एक लाभ यह भी है कि इसमें अध्यापक का सभी गतिविधियों में पूरा सहयोग होता है, वह हर गतिविधि में विद्यार्थियों को निर्देशित करता है, तथा पूर्णत: सहभागी होता है।

(3) सतत् परीक्षणों को बनाने में अधिक परिश्रम लगता है, इनको बनाने के लिए अध्यापकों को निपुण तथा योग्य होना चाहिए, इस प्रकार के परीक्षणों द्वारा न केवल छात्र की शैक्षिक उपलब्धियों बल्कि उसकी प्रवणता, अभिव्यक्ति, रूचि, मूल्य तथा अन्य व्यक्तिगत विशेषताओं का ज्ञान भी हो जाता है।

(4) सतत् परीक्षण जितने अधिक होंगे उतना ही अध्यापक को रिकार्ड रखना होगा, इससे अध्यापकों में छात्रों के मूल्यांकन तथा प्रदर्शन के प्रति उत्तरदायित्व की भावना जागृत होगी।

टास्क अनुभव अधिगम क्या है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)—

1. सतत् परीक्षण का सबसे बड़ा लाभ विद्यार्थी के शिक्षण अधिगम एवं विभिन्न विषयों की ········· हो जाती है।
2. सतत् परीक्षण में अध्यापक विद्यार्थियों की प्रत्येक गतिविधि पर नजर रखता है और पूर्णत: ········· होता है।
3. सतत् परीक्षणों को बनाने अथवा तैयार करने के लिए अध्यापकों को ········· होना चाहिए।
4. सतत् परीक्षण से अध्यापकों में छात्रों के प्रदर्शन के प्रति ········· की भावना जागृत होती है।
5. छात्र की उपलब्धि को जाँचने, संबंधित जानकारी प्राप्त करने एवं आंकड़े बनाने के लिए ········· एक मापक की भूमिका निभाते हैं।

21.7 सारांश (Summary)

- सतत् परीक्षण कक्षा में अध्यापकों द्वारा प्रयुक्त की गई युक्ति है, जिससे छात्रों के ज्ञान, बुद्धि कौशल तथा योग्यता का मूल्यांकन किया जाता है। अध्यापक, छात्रों की बुद्धिकौशल को ज्ञात करने के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षण आयोजित करते हैं तथा प्राप्त जानकारी एकत्र करते हैं। ये परीक्षण कक्षा में पढ़ाये गए पाठ्यक्रम पर आधारित होते हैं। सतत् परीक्षण छात्रों की निरन्तर प्रगति व शैक्षिक उपलब्धि को जानने के लिए आयोजित किये जाते हैं।
- सतत् परीक्षण प्रक्रिया छात्र उपलब्धि के परीक्षण से कहीं अधिक उपयोगी होता है। इस परीक्षण की सहायता से छात्र अपने कमज़ोर पक्षों तथा विषय की कठिनाइयों को दूर करने के लिए प्रयास करते हैं, तथा कठिन विषय पर ध्यान केन्द्रित करते हैं।
- सतत् परीक्षण के दो प्रमुख उद्देश्य हैं—(*i*) छात्रों के शैक्षिक परिणाम की वैधता तथा विश्वसनीयता में सुधार लाना, (*ii*) छात्रों को प्रभावी अधिगम को विकसित करने में सहायता करना।
- सतत् परीक्षण के उद्देश्यों को निम्नलिखित तरीकों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।
  (*i*) **मूल्यांकन संबंधी जानकारी को एकत्र करने के लिए अधिक समय की आवश्यकता**—किसी भी छात्र की शैक्षिक उपलब्धि के वैध तथा विश्वसनीय आँकड़ों को प्राप्त करने में बहुत कुशलता तथा मेहनत से कार्य करना पड़ता है।
  (*ii*) **विभिन्न परीक्षणों तथा परीक्षणों की स्थितियों का प्रयोग**—पूरे पाठ्यक्रम का मूल्यांकन करने के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षण तथा गतिविधियाँ आयोजित की जाती हैं।
  (*iii*) **अध्यापक का सहयोग तथा उपचारात्मक शिक्षा**—सतत् परीक्षण का एक प्रमुख उद्देश्य छात्र तथा शिक्षक के बीच आपसी सहयोग का संबंध स्थापित करना भी है, इन परीक्षणों में प्रोजेक्ट्स, तथा प्रायोगिक परीक्षाओं में अध्यापक द्वारा छात्रों को समय-समय पर आवश्यक निर्देश तथा परामर्श देना, छात्रों को शैक्षिक स्तर पर सरलता का बोध कराता है,
- **दैनिक कार्य**—दैनिक रूप से लिये गए परीक्षण सबसे अधिक उपयुक्त होते हैं। इनसे दिन भर में 'पढ़ाये गए पठन सामग्री का पुनराभ्यास हो जाता है तथा अपनी गल्तियों तथा कमजोरियों को साथ-साथ दूर करके उसे अधिक निपुणता के साथ सीख सकता है।
- यह छात्र की उपलब्धि को जाँचने, संबंधित जानकारी प्राप्त करने तथा आँकड़े बनाने के लिए एक मापक की भूमिका निभाते हैं। विषय को प्रायोगिक रूप से समझने, तथा एक टीम की तरह कार्य करने का कार्य करते हैं। किन्तु इनको समझने के लिए एक अध्यापक को एक पर्यवेक्षक के रूप में हर समय छात्रों को समझाना पड़ता है।
- प्रायोगिक कार्यों से छात्र की प्रायोगिक बुद्धि तथा ज्ञान कौशल का पता चलता है, छात्रों को थ्योरी के साथ-साथ उसके प्रायोगात्मक रूप को भी सीखना चाहिए।

नोट

- सतत् परीक्षण निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित हैं–
  - **(1) सराहनात्मक पूछताछ**–सतत् परीक्षण में छात्र को उसकी योग्यता के लिए सराहना करनी चाहिए। परीक्षण में उसकी बुद्धिकौशल तथा प्राप्तांकों की सराहना करनी चाहिए जिससे वह भविष्य में और बेहतर प्रदर्शन कर सके।
  - **(2) प्रौढ़ अधिगम**–प्राय: पाठ्य पुस्तकों में प्रत्येक इकाई में गतिविधियों पर बहुत ज़ोर दिया जाता है। ये सभी गतिविधियाँ अपने अध्यापक गण तथा सहयोगियों के साथ मिलकर करने की होती हैं।
  - **(3) अनुभव अधिगम**–प्रौढ़ अपने अनुभव से बहुत कुछ सीखते हैं और अध्यापक अपने इस अनुभव का उपयोग कक्षा में करते हैं, वे प्रभावशाली शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्राप्त करने के लिए, अपने अनुभवों का प्रयोग करते हैं।
  - **(4) परिवर्तन के कारण को समझना**–व्यस्कों, अध्यापकों के पास परिवर्तन का विश्लेषण करने का अवसर होता है।
- सतत् परीक्षण के निम्नलिखित लाभ हैं–
  - (1) सतत् परीक्षण का सबसे बड़ा लाभ यह है कि बहुत परिश्रम तथा कठिनाई से एकत्रित किये गए आँकड़ों द्वारा विद्यार्थी के शिक्षण अधिगम की विभिन्न विषयों तथा स्तरों पर सूक्ष्म जाँच हो जाती है, तथा जो कमियाँ उभर कर आती हैं, उन पर कक्षाध्यापक ध्यान देते हैं, जिससे छात्र भी अपनी पूर्ण शक्ति तथा साहस से अच्छा प्रदर्शन करते हैं तथा अच्छे अंक लाने का प्रयास करेंगे।
  - (2) सतत् परीक्षण का एक लाभ यह भी है कि इसमें अध्यापक का सभी गतिविधियों में पूरा सहयोग होता है, वह हर गतिविधि में विद्यार्थियों को निर्देशित करता है, तथा पूर्णत: सहभागी होता है।

21.8 शब्दकोश (Keywords)

- **सतत्**–लगातार, हमेशा।
- **अधिगम**–सीखना, जानना।

21.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. सतत् परीक्षण का क्या अर्थ है? इसकी आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
2. सतत् परीक्षण के उद्देश्य एवं प्रकारों की व्याख्या कीजिए।
3. सतत् परीक्षण की प्रक्रिया एवं उपयोग का विश्लेषणात्मक विवेचन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सूक्ष्म जाँच 2. सहभागी 3. निपुण तथा योग्य
4. उत्तरदायित्व 5. प्रोजेक्ट्स।

21.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—22: पोर्टफोलियो मूल्यांकन (Portfolio Assessment)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

22.1 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Portfolio Assessment)

22.2 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन की आवश्यकता (Need of Portfolio Assessment)

22.3 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के उद्देश्य (Aims of Portfolio Assessment)

22.4 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के प्रकार (Types of Portfolio Assessment)

22.5 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन की प्रक्रिया (Process of Portfolio Assessment)

22.6 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के लाभ (Advantages of Portfolio Assessment)

22.7 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन की सीमाएँ (Limitations of Portfolio Assessment)

22.8 सारांश (Summary)

22.9 शब्दकोश (Keywords)

22.10 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

22.11 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन का अर्थ, आवश्यकता, उद्देश्य एवं प्रकारों की व्याख्या करने में।
- पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन की प्रक्रिया, लाभ और सीमाओं का विश्लेषण करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

छात्र पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन को परिभाषित करना सरल नहीं है। पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन केवल छात्र द्वारा की गई शैक्षिक गतिविधियों का लेखा-जोखा नहीं है बल्कि यह छात्र का उद्देश्यपूर्ण मूल्यांकन है। 'उद्देश्यपूर्ण' का अर्थ यह है कि छात्र को पोर्टफ़ोलियो के विषय में यह जानकारी हो कि वह यह पोर्टफ़ोलियो किस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कर रहा है, अथवा इस पोर्टफ़ोलियो के विषयवस्तु का चयन क्यों किया गया है। अध्यापक द्वारा छात्र की बौद्धिक क्षमताओं तथा योग्यताओं का सूक्ष्म मूल्यांकन किया जा सकता है। इस अध्याय में पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के विषय में विस्तृत अध्ययन करेंगे।

नोट

22.1 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Portfolio Assessment)

पोर्टफ़ोलियो, विद्यार्थी की शैक्षिक गतिविधियों तथा विषयों से संबंधित उपलब्धियों तथा कार्यों का एक संग्रह है। इसकी सहायता से छात्र का शैक्षिक तथा स्वमूल्यांकन हो जाता है, तथा उसकी योग्यताओं एवं उपलब्धियों की गुणवत्ता का ज्ञान हो जाता है। जब इससे छात्र का मूल्यांकन होता है, तो उसकी कमियों का भी ज्ञान हो जाता है, और वे इन कमियों को दूर करने का प्रयास करते हैं।

22.2 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन की आवश्यकता (Need of Portfolio Assessment)

पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन, मूल्यांकन प्रक्रिया में सहायक होते हैं, इनसे छात्र के बुद्धिकौशल तथा पाठ्यक्रम का मूल्यांकन करने में सहायता मिलती है। अध्यापक इनका उपयोग निम्नलिखित आवश्यकताओं के कारण करते हैं–

(*i*) स्वनिर्देशित अधिगम को प्रोत्साहित करने के लिए

(*ii*) जो कुछ सीखा है, उसका मूल्यांकन करने के लिए

(*iii*) परिणामों के आधार पर छात्र के बुद्धिलब्धि की पहचान करने के लिए

(*iv*) छात्रों को स्वमूल्यांकन करने के लिए।

पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन करने के लिए सबसे पहले विशिष्ट लक्ष्यों की पहचान करना एक महत्वपूर्ण तथा कठिन कार्य है। एक बार पोर्टफ़ोलियो के लिए लक्ष्यों की पहचान हो जाती है, तो अन्य सभी चरण सरलता से तैयार किये जा सकते हैं, अत: विद्यार्थी के स्वमूल्यांकन के लिए पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन एक विशिष्ट भूमिका निभाते हैं।

22.3 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के उद्देश्य (Aims of Portfolio Assessment)

पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के तीन मुख्य उद्देश्य हैं, जिनका विवरण निम्नलिखित है–

(*i*) शैक्षिक वृद्धि तथा विकास

(*ii*) बौद्धिक उपलब्धियों तथा योग्यता का प्रदर्शन

(*iii*) स्वमूल्यांकन तथा उपलब्धि का प्रदर्शन

(*i*) **वृद्धि पोर्टफ़ोलियो**–वृद्धि पोर्टफ़ोलियो छात्र की शैक्षिक वृद्धि तथा विकास को प्रदर्शित करते हैं, ये लक्ष्य निर्धारण तथा स्वमूल्यांकन जैसी प्रक्रियाओं को विकसित करने में, छात्र की शक्तियों तथा कमज़ोरियों को पहचानने में, प्रदर्शन का विकास करने में प्रयुक्त किया जाता है।

(*ii*) **शोकेस पोर्टफ़ोलियो**–वर्ष अथवा सत्र के अंत में छात्र द्वारा प्राप्त की गई उपलब्धियों का प्रदर्शन, छात्र की रूचियों तथा योग्यताओं का प्रदर्शन,

(*iii*) **मूल्यांकन पोर्टफ़ोलियो**–छात्रों की योग्यताओं तथा बौद्धिक विकास का स्वमूल्यांकन इनके द्वारा किया जाता है।

22.4 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के प्रकार (Types of Portfolio Assessment)

पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन दो प्रकार के होते हैं–

(*i*) प्रक्रियात्मक पोर्टफ़ोलियो (Process Portfolio)

(*ii*) उत्पादक पोर्टफ़ोलियो (Product Portfolio)

(*i*) **प्रक्रियात्मक पोर्टफ़ोलियो**–छात्र की शैक्षिक अधिगम की अवस्थाओं तथा छात्र विकास के प्रगतिपूर्ण रिकॉर्ड को प्रदर्शित करता है। अध्यापकगण छात्रों का मूल्यांकन करने के लिए इसी प्रकार के पोर्टफ़ोलियों का प्रयोग करते हैं। प्रक्रियात्मक पोर्टफ़ोलियो द्वारा अध्यापक छात्रों के अधिगम तथा विकास का धीरे-धीरे व सतत् रूप से मूल्यांकन कर पाते हैं। अध्यापकों द्वारा छात्र की प्रगति का पूर्ण रिकॉर्ड रखा जाता है।

(*ii*) **उत्पादक पोर्टफ़ोलियो**—उत्पादक पोर्टफ़ोलियो में छात्र के द्वारा किये गए सबसे अच्छे कार्य, अधिगम तथा सीखे हुए पाठ्यक्रम पर अत्यधिक निपुणता व कुशलता का मूल्यांकन किया जाता है। इस प्रकार के मूल्यांकन में छात्र, सदैव अच्छा प्रदर्शन नहीं कर पाते, अत: वे असफल हो जाते हैं। इस प्रकार छात्रों का मूल्यांकन करना कठिन होता है, तथा विद्यालयों में यह पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन प्रयुक्त नहीं होता है।

क्या आप जानते हैं पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन में कान्फ्रेन्सेज़ का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

22.5 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन की प्रक्रिया (Process of Portfolio Assessment)

पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन प्रक्रिया के तीन चरण हैं। पहले चरण में पोर्टफ़ोलियो विषयवस्तु को पहचानना, चयन करना जो कि छात्र कार्य, परावर्तन, अध्यापक निरीक्षण द्वारा संभव है। दूसरे चरण में छात्र द्वारा दिये गए पोर्टफ़ोलियो विषयवस्तु पर किये गय कार्य पर अध्यापकों द्वारा ग्रेड या मानक दिया जाना जिससे सम्पूर्ण विषयवस्तु का मूल्यांकन करना तथा तीसरे चरण में अध्यापक द्वारा फान्फ्रेंस आयोजित करने का नियोजन करना, जिसमें छात्र द्वारा किये गये कार्य को प्रोत्साहित करना तथा छात्र द्वारा अपने कार्य का फ़ीडबैक लेकर अपनी कमियों को दूर करने का प्रयास करना।

प्रक्रिया के चरण

- पोर्टफ़ोलियो की विषयवस्तु का चयन
- कार्य तथा प्रक्रिया के सैम्पल का परावर्तन
- विषयवस्तु तथा प्रक्रिया का मूल्यांकन

विषयवस्तु का चयन—पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया विषयवस्तु का चयन है। विभिन्न उद्देश्यों के लिए विभिन्न सैम्पल का चयन किया जाता है। उदाहरण के तौर पर मूल्यांकन पोर्टफ़ोलियो के लिए अध्यापक को निर्णय लेना होगा कि वह किस विषय और किस प्रकार के पोर्टफ़ोलियो का चयन करे, जिससे विद्यार्थी का मूल्यांकन किया जा सके, इसी प्रकार वृद्धि तथा विकास पोर्टफ़ोलियो के लिए विषय का चयन करना एक कठिन कार्य है विषय वस्तु का चयन करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए।

- विषयवस्तु कब चयन करनी चाहिए—
  (*i*) जब कोई सैम्पल कार्य पूरा हो जाए, तथा अध्यापक द्वारा जाँच लिया जाए, तथा अध्यापक को लगता है कि उस विषय या इकाई से सम्बंधित कार्य पोर्टफ़ोलियो के योग्य है, तथा छात्र का मूल्यांकन कर सकता है।
  (*ii*) अध्यापकों द्वारा एक निश्चित समयान्तराल पर (जैसे प्रति, तीन, छ और नौ) सप्ताह बाद या प्रत्येक सेमेस्टर में दो या तीन बार पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के लिए विषय का चयन करना चाहिए।
  (*iii*) एक इकाई, सत्र अथवा वर्ष पूर्ण होने पर भी विषय का चयन किया जाता है।
- विषयवस्तु किसके द्वारा चयन की जाये—

अध्यापक द्वारा—अध्यापक भी चयनकर्ता हो सकते है, विशेषत: जब वे छात्र की शक्तियों तथा योग्यताओं का प्रदर्शन देखना चाहते हैं।

छात्र तथा अध्यापकों द्वारा—कभी-कभी छात्र तथा अध्यापकों द्वारा मिलकर तथा विचार विमर्श करके भी इसका चयन किया जाता है।

अभिभावकों द्वारा—अभिभावक भी अपने बच्चे की प्रगति तथा सुधार देखने व जाँचने के लिए विषयवस्तु का चयन कर सकते हैं।

नोट

विषयवस्तु का मानदण्ड

विषयवस्तु के सैम्पल का चयन करने के लिए, कई निर्धारकों के बारे में विचार किया जाता है, जैसे जिस विषय वस्तु में छात्र अत्यधिक कुशल है, या मानक निर्धारण के अनुसार विषय हो, या छात्र की बौद्धिक कुशलता तथा उपलब्धि की जाँच करने के लिए हो। विषयवस्तु का निर्धारण एक से अधिक लक्ष्यों द्वारा किया जा सकता है।

2. कार्य सैम्पल की पारदर्शिता—बहुत से शिक्षाविद् मानते हैं कि सैम्पल की पारदर्शिता, किसी भी पोर्टफ़ोलियो के लिए सबसे आवश्यक है। पोर्टफ़ोलियो बनाने की प्रक्रिया में छात्र को उसके प्रत्येक चरण में शामिल होना चाहिए। छात्र को देखना चाहिए कि चयन किये गए सैम्पल की क्या उपयोगिता है, और इस को पूर्ण करने में कौन-सी विशिष्ट योग्यताओं तथा बुद्धि कौशल का उपयोग करना होगा। सैम्पल के शक्तिशाली तथा कमज़ोर बिन्दुओं की पहचान करनी चाहिए। जो लक्ष्य निर्धारित किये गए हैं, क्या ये सैम्पल उन्हें पूर्ण कर पाँएंगे, उन सभी बिन्दुओं का ध्यान रखना होता है।

परावर्तन पत्र—परावर्तन पत्र एक प्रकार की संलग्न पुस्तिका होती है, जिसमें पोर्टफ़ोलियो से संबंधित प्रश्न तथा उनके उत्तर के लिए स्थान बना होता है। इन प्रश्नों का प्रारूप निम्नलिखित है—

चयन प्रश्न

(*i*) आपने यह विषयवस्तु क्यों चुनी?

(*ii*) आपके पोर्टफ़ोलियो में यह विषयवस्तु क्यों सम्मिलित की गई है?

(*iii*) मैंने यह विषयवस्तु चुनी क्योंकि ....

वृद्धि/विकास प्रश्न

(*i*) इस कार्य के शक्तिशाली तथा कमज़ोर बिन्दु कौन-कौन से हैं?

(*ii*) आपका कार्य पिछले कार्य से अपेक्षाकृत कठिन है, अथवा सरल है।

(*iii*) इसमें सुधार किस प्रकार से लाया जा सकता है?

लक्ष्य निर्धारण प्रश्न

- आप इस कार्य में सुधार के लिए क्या एक कार्य करना चाहेंगे?
- वर्ष या सत्र के अन्त में वास्तविक लक्ष्य क्या है?

मूल्यांकन संबंधी प्रश्न—

- यदि आप एक अध्यापक हैं तो इस कार्य पर ग्रेड किस प्रकार देंगे।
- आपको इस कार्य में किस चीज़ ने प्रभावित किया?
- आपको इस कार्य में क्या चीज़ अच्छी नहीं लगी।
- मैं इस कार्य को पसंद करता हूँ क्योंकि ....

अभ्यास-प्रश्न—

- इस कार्य को पूर्ण करने में आपने कितना समय लिया?
- इस पोर्टफ़ोलियो का एक विशिष्ट फीचर बहुत अच्छा है क्योंकि ....
- मैं इस पोर्टफ़ोलियो में अपना प्रयास करके बहुत प्रसन्न हूँ क्योंकि ....

सम्पूर्ण पोर्टफ़ोलियो संबंधी प्रश्न

- आपके अभिभावक आपके पोर्टफ़ोलियो में क्या देखना चाहते हैं?
- आपके अभिभावक इस पोर्टफ़ोलियो द्वारा आपकी प्रगति का किस प्रकार मूल्यांकन करते हैं।

इस प्रकार पोर्टफ़ोलियो का परावर्तन चरण पूरी प्रक्रिया में चलता रहता है। छात्र विविध परावर्तन प्रक्रियाओं में संलग्न रहते हैं। समस्त प्रक्रिया में छात्र के शक्तिशाली तथा कमज़ोर बिन्दुओं को पहचान कर उनमें सुधार किया जाता है।

नोट

नोट्स छात्र सबसे अच्छे चयनकर्ता होते हैं, छात्र अपनी रूचि तथा सक्षमता के अनुरूप विषयवस्तु का चयन करते हैं।

22.6 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के लाभ (Advantages of Portfolio Assessment)

पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के निम्नलिखित लाभ हैं–

(*i*) छात्र स्वमूल्यांकन द्वारा, परावर्तन तथा क्रान्तिक सोच को उन्नत किया जा सकता है।

(*ii*) छात्र के कार्य पर आधारित प्रदर्शन का मापन किया जा सकता है।

(*iii*) छात्रों द्वारा लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कार्य में लचीलापन दिया जा सकता है।

(*iv*) अधिगम प्रक्रिया में बेहतर से बेहतर प्रदर्शन करके छात्र द्वारा स्वमूल्यांकन किया जा सकता है।

(*v*) छात्र तथा अध्यापक द्वारा साझा उत्तरदायित्व लेकर छात्र की बौद्धिक उपलब्धियों तथा योग्यताओं का मूल्यांकन किया जा सकता है।

(*vi*) छात्रों, अध्यापकों के अतिरिक्त अभिभावकों तथा अन्य समूहों द्वारा छात्र मूल्यांकन को बेहतर ढंग से प्रतिपादित किया जा सकता है।

22.7 पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन की सीमाएँ (Limitations of Portfolio Assessment)

पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन की निम्नलिखित सीमाएँ हैं–

(*i*) मूल्यांकन प्रणाली तथा मूल्यांकन का संचालन करने में अत्यधिक अतिरिक्त समय लगता है।

(*ii*) अधिक आँकड़े तथा सैम्पल वर्क रखने के कारण यह अत्यधिक भारयुक्त तथा रखने में कठिन होता है।

(*iii*) पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन में कान्फ्रेंस का होना बहुत महत्त्वपूर्ण है, अत: पोर्टफ़ोलियो के लिए हर समय कान्फ्रेंस के कारण अधिक समय लेता है, तथा अन्य निदेशित शैक्षिक कार्यों में बाधा उत्पन्न करता है।

टास्क उत्पादक पोर्टफ़ोलियो किसे कहते हैं?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

1. पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन से छात्रों की .... को उन्नत किया जा सकता है।
2. इसके द्वारा छात्र के कार्य पर आधारित प्रदर्शन का .... किया जाता है।
3. .... में बेहतर से बेहतर प्रदर्शन करके छात्र द्वारा स्वमूल्यांकन किया जा सकता है।
4. पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन में छात्र-शिक्षक साझा उत्तरदायित्व द्वारा .... किया जाता है।
5. पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के द्वारा अन्य .... भी छात्र मूल्यांकन को बेहतर ढंग से प्रतिपादित कर सकते हैं।

नोट

22.8 सारांश (Summary)

- पोर्टफ़ोलियो, विद्यार्थी के शैक्षिक गतिविधियों तथा विषयों से संबंधित उपलब्धियों तथा कार्यों का एक संग्रह है। इसकी सहायता से छात्र का शैक्षिक तथा स्वमूल्यांकन हो जाता है, तथा उसकी योग्यताओं एवं उपलब्धियों की गुणवत्ता का ज्ञान हो जाता है।
- पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन, मूल्यांकन प्रक्रिया में सहायक होते हैं, इनसे छात्र के बुद्धिकौशल तथा पाठ्यक्रम का मूल्यांकन करने में सहायता मिलती है। अध्यापक इनका उपयोग निम्नलिखित आवश्यकताओं के कारण करते हैं–
  (*i*) स्वनिर्देशित अधिगम को प्रोत्साहित करने के लिए
  (*ii*) जो कुछ सीखा है, उसका मूल्यांकन करने के लिए
  (*iii*) परिणामों के आधार पर छात्र के बुद्धिलब्धि की पहचान करने के लिए
  (*iv*) छात्रों को स्वमूल्यांकन करने के लिए।
- पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के तीन मुख्य उद्देश्य हैं, जिसका विवरण निम्नलिखित हैं–
  (*i*) शैक्षिक वृद्धि तथा विकास
  (*ii*) बौद्धिक उपलब्धियों तथा योग्यता का प्रदर्शन
  (*iii*) स्वमूल्यांकन तथा उपलब्धि का प्रदर्शन
- पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन दो प्रकार के होते हैं– (*i*) प्रक्रियात्मक पोर्टफ़ोलियो (Process Portfolio); (*ii*) उत्पादक पोर्टफ़ोलियो (Product Portfolio)
  (*i*) **प्रक्रियात्मक पोर्टफ़ोलियो**–छात्र की शैक्षिक अधिगम की अवस्थाओं तथा छात्र विकास के प्रगतिपूर्ण रिकॉर्ड को प्रदर्शित करता है। अध्यापकगण छात्रों का मूल्यांकन करने के लिए इसी प्रकार के पोर्टफ़ोलियों का प्रयोग करते हैं। प्रक्रियात्मक पोर्टफ़ोलियो द्वारा अध्यापक छात्रों के अधिगम तथा विकास का धीरे-धीरे व सतत् रूप से मूल्यांकन कर पाते हैं।
  (*ii*) **उत्पादक पोर्टफ़ोलियो**–उत्पादक पोर्टफ़ोलियो में छात्र के द्वारा किये गए सबसे अच्छे कार्य, अधिगम तथा सीखे हुए पाठ्यक्रम पर अत्यधिक निपुणता व कुशलता का मूल्यांकन किया जाता है। इस प्रकार के मूल्यांकन में छात्र, सदैव अच्छा प्रदर्शन नहीं कर पाते, अत: वे असफल हो जाते हैं।
- पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन प्रक्रिया के तीन चरण हैं। पहले चरण में पोर्टफ़ोलियो विषयवस्तु को पहचानना, चयन करना जो कि छात्र कार्य, परावर्तन, अध्यापक निरीक्षण द्वारा संभव है। दूसरे चरण में छात्र द्वारा दिये गए पोर्टफ़ोलियो विषयवस्तु पर किये गय कार्य पर अध्यापकों द्वारा ग्रेड या मानक दिया जाना जिससे सम्पूर्ण विषयवस्तु का मूल्यांकन करना तथा तीसरे चरण में अध्यापक द्वारा फान्फ्रेंस आयोजित करने का नियोजन करना, जिसमें छात्र द्वारा किये गये कार्य को प्रोत्साहित करना तथा छात्र द्वारा अपने कार्य का फ़ीडबैक लेकर अपनी कमियों को दूर करने का प्रयास करना।
- पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के निम्नलिखित लाभ हैं–
  (*i*) छात्र स्वमूल्यांकन द्वारा, परावर्तन तथा क्रान्तिक सोच को उन्नत किया जा सकता है।
  (*ii*) छात्र के कार्य पर आधारित प्रदर्शन का मापन किया जा सकता है।
  (*iii*) छात्रों द्वारा लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कार्य में लचीलापन दिया जा सकता है।
- पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन की निम्नलिखित सीमाएँ हैं–
  (*i*) मूल्यांकन प्रणाली तथा मूल्यांकन का संचालन करने में अत्यधिक अतिरिक्त समय लगता है।
  (*ii*) अधिक आँकड़े तथा सैम्पल वर्क रखने के कारण यह अत्यधिक भारयुक्त तथा रखने में कठिन होता है।

नोट

22.9 शब्दकोश (Keywords)

- **उन्नत**—बढ़ना, वृद्धि करना, बढ़ाना
- **सेमेस्टर**—सत्र।

22.10 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन का क्या अर्थ है? इसकी आवश्यकता की व्याख्या कीजिए।
2. पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन कितने प्रकार का होता है? वर्णन कीजिए।
3. पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन की प्रक्रिया को समझाते हुए इसके उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।
4. पोर्टफ़ोलियो मूल्यांकन के क्या लाभ हैं? इसकी सीमाओं का विवेचन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. क्रान्तिक सोच 2. मापन 3. अधिगम प्रक्रिया
4. छात्रों का मूल्यांकन 5. समूह।

22.11 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–23: प्रश्न बैंक (Question Bank)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
23.1 प्रश्न बैंक का अर्थ (Meaning of Question Bank)
23.2 प्रश्न बैंक की निर्माण प्रक्रिया (Construction Process of Question Bank)
23.3 कम्प्यूटरीकृत प्रश्न बैंक (Computerised Question Bank)
23.4 प्रश्न बैंक के गुण (Merits of Question Bank)
23.5 प्रश्न बैंक के दोष (Demerits of Question Bank)
23.6 सारांश (Summary)
23.7 शब्दकोश (Keywords)
23.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
23.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- प्रश्न बैंक के अर्थ, प्रक्रिया, गुण-दोष और कम्प्यूटरीकृत प्रश्न बैंक का विवेचन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

प्रश्न बैंक प्रश्नों का संग्रहित रूप है प्रश्न बैंकों से प्राप्त प्रश्न शिक्षक, छात्र तथा शिक्षण अधिगम से जुड़े हुए सभी व्यक्तियों को उनके अपने उत्तरदायित्व ठीक तरह निभाने में **यथेष्ट** सहयोगी सिद्ध हो सकते है कि जहाँ तक विषय सम्बंधी ज्ञान की जाँच तथा संपूर्ण व्यवहारगत मूल्यांकन का प्रश्न है इनके उपयुक्त प्रामाणिक, विश्वसनीय तथा यथार्थ संसाधन शिक्षक और शिक्षार्थियों को इतनी अधिक आसानी से उपलब्ध नहीं हो पाता। बाज़ार में आसानी से उपलब्ध होने के साथ-साथ इन्हें वे एन.सी.ई.आर.टी., विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, राज्य पुस्तकालय, सार्वजनिक परीक्षाओं से जुड़े हुए संस्थान, महाविद्यालय की पुस्तकालय सेवाओं द्वारा प्राप्त कर सकते हैं, अथवा सूचना एवं विस्तार सेवाओं द्वारा अपने कम्प्यूटरों पर लोड कर सकते हैं।

23.1 प्रश्न बैंक का अर्थ (Meaning of Question Bank)

प्रश्न बैंक जैसा कि नाम से ही स्पष्ट हो सकता है इस प्रकार के बैंक या कोषागार हैं, जहाँ विभिन्न विषयों के मूल्यांकन संबंधी विविध प्रश्नों का अमूल्य संग्रह होता है। इस प्रकार के प्रश्नों का संग्रह हमें उचित मुद्रित तथा सजिल्द रूप में अपने विद्यार्थियों का मूल्यांकन करने हेतु प्राप्त हो सकता है। कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर रूप में भी यह

नोट

उपलब्ध रह सकता है। शिक्षक ही नहीं स्वयं विद्यार्थी भी इन्हें स्वमूल्यांकन हेतु उपयोग कर सकते हैं, प्रश्न पत्र बनाने वालों को तो इस प्रकार के बैंक बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं। इस अध्याय में हम प्रश्न बैंक के विषय में अध्ययन करेंगे।

23.2 प्रश्न बैंक की निर्माण प्रक्रिया (Construction Process of Question Bank)

प्रश्न बैंक बनाने की प्रक्रिया में बहुत से अनुभवी तथा कुशल लोगों का सहयोग होता है।, इस कार्य के लिए कम्प्यूटर में कुशलता तथा निपुणता एक आवश्यक योग्यता है। प्रश्न बैंक की योजना बनाते समय बहुत सी बातों का ध्यान रखना पड़ता है, जैसे—पाठ्यक्रम की विषय वस्तु, मूल्यांकन का उद्देश्य, आन्तरिक तथा बाहय मूल्यांकन के भारांक आदि। परीक्षा की दृष्टि से प्रश्न पत्र के नीलपत्र (Blue print) तीन मूख्य पहलू होते हैं—(*i*) प्रश्नों के प्रकार (*ii*) विषयवस्तु ब्लॉक्स या इकाइयाँ (*iii*) सीखने वाले परीक्षार्थी की योग्यता। प्रश्न बैंक के निर्माण में एक टीम की तरह सहयोगी व सहभागिता से पूर्ण कार्य होता है। विभिन्न शिक्षण संस्थानों (विश्वविद्यालय के अंदर अथवा बाहर) से अनुभवी तथा कुशल अध्यापकों को एकत्रित किया जाता है, अनुभव तथा विषय में निपुणता के अतिरिक्त उनमें मूल्यांकन तथा प्रश्नों के अधिभार संबंधी समझ होना भी आवश्यक है, जो व्यक्ति प्रश्न बैंक सैट करते हैं उन्हें आधुनिक मूल्यांकन पद्धति की भी विशिष्ट जानकारी होनी चाहिए। ऐसे योग्य व्यक्तियों का चयन करने के बाद प्रश्न बैंक बनाने का कार्य आरंभ किया जाता है, तथा प्रश्न बैंक के विभिन्न टास्कों के लिए अलग-अलग समूह बनाये जाते हैं प्रत्येक समूह में 4-6 सदस्य होते हैं जोकि, कोर्स राइटर, अध्यापक परामर्शदाता तथा अनुभवी आइटम राइटर, होते हैं। प्रत्येक समूह को विद्यालय के विभिन्न विभागों से संबंधित लोग निर्देशित करते हैं।

(*ii*) प्रश्नों की समीक्षा, सम्पादन तथा पुन:वैधता, आइटम राइटरों द्वारा की जाती है। प्रश्न बैंक में सामान्य रूप से प्रत्येक विषय के प्रत्येक प्रश्न बैंक में प्रश्न पत्र से 10 गुना अधिक प्रश्न रखे जाते हैं। प्रश्न बैंक का कोई निशचित आकर नहीं होता है। प्रत्येक विषय से सम्बंधित प्रत्येक प्रश्न को बनाते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक होता है।

(*i*) पुस्तक का ब्लॉक/ सैक्शन/ पाठ तथा इकाई संख्या।

(*ii*) प्रश्न का प्रकार

(*iii*) औसत बुद्धि के परीक्षार्थियों के कठिनाई स्तर को जानना

(*iv*) अधिकतम अंक

(*v*) प्रश्न को हल करने में लगने वाला समय

आइटम राइटर सम्पादन प्रक्रिया में होने वाले विभिन्न प्वाइंट तथ्यों को आइटमपत्र पर लिख लेता है। पेपर सेट करने से पहले प्रत्येक विषय के प्रत्येक प्रश्न को विषय वस्तु के सम्पादन तथा मूल्यांकन की विभिन्न प्रक्रियाओं से गुजारा जाता है।

इसके बाद इन्हें शिक्षण मापन के विभिन्न चरणों जैसे, माध्य, मानक विचलन, अंक वितरण अंकों के मापन की मानक त्रुटियों आदि से मूल्यांकित किया जाता है।

पद विश्लेषण के प्रक्रिया प्रश्न बैंक के निर्माण में बहुत सहायक होती है, इसके द्वारा निम्न स्तर की गुणवत्ता वाले प्रश्नों को हटाकर अधिक बेहतर प्रश्नों का समावेश किया जाता है।

नोट्स एक प्रश्न बैंक में कितने भी प्रश्न डाले जा सकते हैं प्रश्न बैंक विद्यार्थियों के समय तथा ऊर्जा की बचत करते हैं, जिससे के परीक्षा को उचित प्रकार से पूर्ण किया जा सके।

नोट

23.3 कम्प्यूटरीकृत प्रश्न बैंक (Computerised Question Bank)

प्रश्न बैंक कम्प्यूटरीकृत हो गए हैं। निम्न तालिका में शिक्षण उद्देश्य तथा उससे सम्बंधित प्रश्नों के प्रकार दिये गए हैं। कम्प्यूटरीकृत प्रश्न बैंक का प्रारूप नीचे दिया गया है।

शिक्षण उद्देश्य	प्रश्न का प्रकार
(अ) ज्ञानात्मक	
(*i*) ज्ञान	सत्य असत्य, बहुविकल्पीय प्रश्न
(*ii*) विस्तृतता	मिलान करो, लद्युउत्तरात्मक प्रश्न
(*iii*) उपयोगिता	
(*iv*) विश्लेषण	निबन्धात्मक पश्न
(*v*) मूल्यांकन	
(ब) प्रभावी	
(*i*) रुचि	
(*ii*) मूल्य	निबन्धात्मक प्रश्न
(*iii*) अभिवृत्ति	

इस प्रकार प्रश्न पत्र तीन भागों में विभाजित हो गया है, अतिलघु उत्तरात्मक प्रश्न, लघुउत्तरात्मक प्रश्न तथा दीर्घउत्तरात्मक प्रश्न।

अतिलघु उत्तरात्मक → सत्य, असत्य, बहुविकल्पीय प्रश्न, मिलान संबंधी

लघु उत्तरात्मक प्रश्न → लघुप्रश्न

दीर्घ उत्तरात्मक प्रश्न → निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न बैंक बनाते समय प्रश्न उपरोक्त तीन वर्गों में विभाजित होते हैं। एक आदर्श प्रश्न बैंक में तीन प्रकार के प्रश्न होते हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–**
   1. प्रश्न बैंक विभिन्न विषयों के मूल्यांकन संबंधी विविध प्रश्नों का .... हैं।
   2. प्रश्नों के प्रकार, विषयवस्तु इकाई तथा .... प्रश्न बैंक के नीलपत्र के प्रमुख अंग हैं।
   3. प्रश्न बैंक बनाने के लिए बहुत से अनुभवी कुशल, तथा आधुनिक .... जानकार लोगों की सहभागिता आवश्यक है।

23.4 प्रश्न बैंक के गुण (Merits of Question Bank)

प्रश्न बैंकों में उपलब्ध ये प्रश्न गुणवत्ता की दृष्टि से बहुत श्रेष्ठ होते हैं, क्योंकि इनकी रचना विषय के अच्छे जानकार, अनुभवी तथा शिक्षा विशेषज्ञों की देखरेख में इस तरह से की जाती है कि विभिन्न कक्षाओं के विषय विशेष के शिक्षण अधिगम सम्बंधी उद्देश्यों की पूर्ति अर्थात् विद्यार्थियों के व्यवहार में होने वाले सभी प्रकार के ज्ञानात्मक, क्रियात्मक एवं भावात्मक परिवर्तनों की जाँच भली भाँति हो जाये। इस प्रकार के प्रश्न बैंकों से होने वाले मूल्यांकन संबंधी लाभों का उल्लेख निम्नलिखित हैं–

नोट

(*i*) अध्यापक को विद्यार्थियों के निदानात्मक कार्य में सहायता पहुँचा सकते हैं।

(*ii*) अध्यापक को अपने पाठ पढ़ाने के दौरान प्रस्तावना, प्रस्तुतीकरण तथा समापन स्तरों पर प्रयोग में लाने हेतु उचित प्रश्नों की प्राप्ति हो सकती है।

(*iii*) इन प्रश्नों की सहायता से अध्यापक को कक्षा में अभ्यास कार्य (Drill work) एवं पुनरावृत्ति कार्य (Rocapitulation work) तथा गृहकार्य (Home work) को देने में बडी सुविधा हो सकती है। सभी तरह के प्रश्नों की उपलब्धि होने से व्यक्तिगत अन्तरों को ध्यान में रखते हुए सभी विद्यार्थियों की योग्यता के अनुरूप प्रश्न प्राप्त हो सकते हैं।

(*iv*) प्रश्न बैंकों में उपलब्ध प्रश्न अध्यापक और सम्बन्धित प्रशासकों को अनुदेशन कार्यक्रमों, पाठ्यक्रम तथा अनुदेशन कार्यक्रमों पाठ्यक्रम तथा अनुदेशन प्रविधियों में समुचित सुधार लाने को प्रेरित कर सकते हैं।

(*v*) व्यवहार के सभी स्तरों और अनुक्षेत्रों को ध्यान में रखते हुए अपेक्षित अनुदेशात्मक उद्‌देश्यों के निर्माण में इनसे पर्याप्त सहायता मिल सकती है।

(*vi*) दिये हुए उत्तरों एवं हल संकेतों के माध्यम से विद्यार्थियों के उत्तरों की जाँच करने तथा अंक प्रदान करने में आसानी हो सकती है।

(*vii*) परीक्षकों तथा परीक्षार्थियों को उचित दिशा निर्देश देने में सहायता मिल सकती है।

(*viii*) शिक्षण अधिगम को उसके तीनों स्तरों स्मृति, बोध तथा चिन्तन पर आयोजन करने हेतु आवश्यक प्रेरणा तथा सहायता मिल सकती है।

(*ix*) विद्यार्थियों को विषय विशेष या प्रकरण विशेष में क्या पढ़ना है, तथा किस प्रकार के अधिगम उद्‌देश्य अपने सामने रखते हैं इसका निर्धारण कर उन्हें शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के बराबर प्रोत्साहित रहने तथा स्वाध्याय एवं स्वयं के प्रयत्नों द्वारा सीखने में प्रश्न बैंकों से उचित सहायता मिलती है।

23.5 प्रश्न बैंक के दोष (Demerits of Question Bank)

जहाँ प्रश्न बैंक के गुण हैं, तो वहीं प्रश्न बैंक के कुछ दोष भी हैं–

(*i*) प्रश्न बैंक बनाने वाले बुद्धिजीवियों की राय अलग-अलग होती हैं, आवश्यक नहीं कि प्रत्येक प्रश्न बैंक विद्यार्थियों तथा अध्यापकों के मूल्य निर्धारण के अनुरूप हैं।

(*ii*) प्रश्न बैंक का एक अन्य दोष यह भी है इन प्रश्नों के निर्माण में कोई नवीनता नहीं होती, बार बार हर वर्ष वही प्रश्न दोहराये जाते हैं अत: नई परिस्थितियों में विद्यार्थी को समस्या को हल करने में सफलता नहीं मिलती।

(*iii*) इसके निर्माण में विद्यार्थियों की कोई सहभागिता नहीं होती। अत: विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से न बन पाने के कारण विद्यार्थी अपने अध्ययन के दौरान कठिनाई का अनुभव करते हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. निम्नलिखित कथनों में 'सत्य' तथा 'असत्य' लिखिए:-

1. प्रश्न बैंक में सम्मिलित किये गए प्रश्न गुणवत्ता की दृष्टि से श्रेष्ठ होते हैं।
2. प्रश्न बैंक के निर्माण के लिए किसी निपुणता अथवा अनुभव की कोई आवश्यकता नहीं है।
3. शिक्षण अधिगम के तीन स्तर स्मृति, बोध तथा चिन्तन हैं।
4. प्रश्न बैंकों में प्रतिवर्ष नवीनता लाई जाती है।

नोट

23.6 सारांश (Summary)

- प्रश्न बैंक जैसा कि नाम से ही स्पष्ट हो सकता है इस प्रकार के बैंक या कोषागार हैं, जहाँ विभिन्न विषयों के मूल्यांकन संबंधी विविध प्रश्नों का अमूल्य संग्रह होता है। इस प्रकार के प्रश्नों का संग्रह हमें उचित मुद्रित तथा सजिल्द रूप में अपने विद्यार्थियों का मूल्यांकन करने हेतु प्राप्त हो सकता है।
- प्रश्न बैंक बनाने की प्रक्रिया में बहुत से अनुभवी तथा कुशल लोगों का सहयोग होता है।, इस कार्य के लिए कम्प्यूटर में कुशलता तथा निपुणता एक आवश्यक योग्यता है। प्रश्न बैंक की योजना बनाते समय बहुत सी बातों का ध्यान रखना पड़ता है, जैसे–पाठ्यक्रम की विषय वस्तु, मूल्यांकन का उद्देश्य, आन्तरिक तथा बाहय मूल्यांकन के भारांक आदि। परीक्षा की दृष्टि से प्रश्न पत्र के नीलपत्र (Blue print) तीन मूख्य पहलू होते हैं–(*i*) प्रश्नों के प्रकार (*ii*) विषयवस्तु ब्लॉक्स या इकाइयाँ (*iii*) सीखने वाले परीक्षार्थी की योग्यता।
- प्रत्येक विषय से सम्बंधित प्रत्येक प्रश्न को बनाते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक होता है।
  - (*i*) पुस्तक का ब्लॉक/ सैक्शन/ पाठ तथा इकाई संख्या।
  - (*ii*) प्रश्न का प्रकार
  - (*iii*) औसत बुद्धि के परीक्षार्थियों के कठिनाई स्तर को जानना
  - (*iv*) अधिकतम अंक
  - (*v*) प्रश्न को हल करने में लगने वाला समय
- प्रश्न बैंकों में उपलब्ध ये प्रश्न गुणवत्ता की दृष्टि से बहुत श्रेष्ठ होते हैं, क्योंकि इनकी रचना विषय के अच्छे जानकार, अनुभवी तथा शिक्षा विशेषज्ञों की देखरेख में इस तरह से की जाती है कि विभिन्न कक्षाओं के विषय विशेष के शिक्षण अधिगम सम्बंधी उद्देश्यों की पूर्ति अर्थात् विद्यार्थियों के व्यवहार में होने वाले सभी प्रकार के ज्ञानात्मक, क्रियात्मक एवं भावात्मक परिवर्तनों की जाँच भली भाँति हो जाये।
  - (*i*) अध्यापक को विद्यार्थियों के निदानात्मक कार्य में सहायता पहुँचा सकते हैं।
  - (*ii*) अध्यापक को अपने पाठ पढ़ाने के दौरान प्रस्तावना, प्रस्तुतीकरण तथा समापन स्तरों पर प्रयोग में लाने हेतु उचित प्रश्नों की प्राप्ति हो सकती है।
- जहाँ प्रश्न बैंक के गुण हैं, तो वहीं प्रश्न बैंक के कुछ दोष भी हैं–
  - (*i*) प्रश्न बैंक बनाने वाले बुद्धिजीवियों की राय अलग-अलग होती हैं, आवश्यक नहीं कि प्रत्येक प्रश्न बैंक विद्यार्थियों तथा अध्यापकों के मूल्य निर्धारण के अनुरूप हैं।
  - (*ii*) प्रश्न बैंक का एक अन्य दोष यह भी है इन प्रश्नों के निर्माण में कोई नवीनता नहीं होती, बार बार हर वर्ष वही प्रश्न दोहराये जाते हैं अत: नई परिस्थितियों में विद्यार्थी को समस्या को हल करने में सफलता नहीं मिलती।

23.7 शब्दकोश (Keywords)

- **प्रवीणता**–किसी क्षेत्र में विशेषज्ञता।
- **सोद्देश्य**–किसी कार्य को उद्देश्य सहित करना।

23.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. प्रश्न बैंक का अर्थ बताइये।
2. प्रश्न बैंक की निर्माण प्रक्रिया समझाइये।

नोट

3. प्रश्न बैंक के लाभ लिखिए।
4. प्रश्न बैंक की क्या उपयोगिता है।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. 1. संग्रह 2. परीक्षार्थी की योग्यता 3. मूल्यांकन पद्धति

2. 1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. असत्य

23.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–24: मूल्यांकन में कम्प्यूटर का उपयोग (Use of Computer in Evaluation)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

24.1 कम्प्यूटर की परिभाषा तथा अर्थ (Definition and Meaning of Computer)

24.2 कम्प्यूटर की विशेषताएँ (Characteristics of Computer)

24.3 शिक्षण मूल्यांकन में कम्प्यूटर का उपयोग (Applications of Computer in Educational Evaluation)

24.4 कम्प्यूटर के लाभ तथा सीमाएँ (Advantages and Limitations of Computer)

24.5 सारांश (Summary)

24.6 शब्दकोश (Keywords)

24.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

24.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- कम्प्यूटर की परिभाषा तथा अर्थ को समझने में;
- कम्प्यूटर की विशेषताओं का मूल्यांकन करने में;
- कम्प्यूटर के उपयोग, उसके लाभ और उसकी सीमाओं का विवेचन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

आज का युग कम्प्यूटर का युग कहा जाता है। आज हमारे जीवन में कम्प्यूटर का महत्वपूर्ण योगदान है। कम्प्यूटर के आ जाने से बड़े से बड़े काम कम समय में हो जाते हैं। इससे समय की बचत होती है। कम लागत में अधिक काम हो जाने से धन की बचत होती है। कम्प्यूटर के द्वारा आज हम ई-मेल के जरिए अपने संदेश को दुनिया के किसी भी कोने में कम से कम समय में पहुँचा सकते हैं, बल्कि इस प्रकारं कहा जाये कि कुछ सैकेण्डों में पहुँचा सकते हैं तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। इस इकाई में हम कम्प्यूटर तथा उसके शिक्षा में उपयोग का अध्ययन करेंगे।

24.1 कम्प्यूटर की परिभाषा तथा अर्थ (Definition and Meaning of computer)

कम्प्यूटर शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द Compu से हुई हैं, इसका अर्थ है, गणना करना अथवा गिनती करना। अत: तार्किक दृष्टिकोण से किसी भी गणन युक्ति (Calculating Device) को कम्प्यूटर कहा जा सकता है।

नोट

अत: कम्प्यूटर एक ऐसी इलैक्ट्रोनिक युक्ति है, जो किसी भी प्रकार से आंकड़ों को व्यवस्थित व नियन्त्रित तो करता ही है साथ ही उक्त समय में पूर्ण शुद्धता के साथ गणना भी करता है।

सन् 1946 के बाद से आज तक कम्प्यूटर के विकास की प्रक्रिया निरन्तर चल रही है। इलैक्ट्रोनिक्स पुर्जो के विकास ने कम्प्यूटर के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। कम्प्यूटर में प्रयोग किए गए मुख्य इलैक्ट्रोनिक पुर्जो के आधार पर कम्प्यूटर के विकास को पाँच पीढ़ियों में बांटा गया है।

प्रथम पीढ़ी के कम्प्यूटर (First Generation Computer)

द्वितीय पीढ़ी के कम्प्यूटर (Second Generation Computer)

तृतीय पीढ़ी के कम्प्यूटर (Third Generation Computer)

चतुर्थ पीढ़ी के कम्प्यूटर (Fourth Generation Computer)

पंचम पीढ़ी के कम्प्यूटर (Fifth Generation Computer)

24.2 कम्प्यूटर की विशेषताएँ (Characteristics of Computer)

कम्प्यूटर की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं–

1. **गति** (Speed)–कम्प्यूटर द्वारा कम समय में तीव्र गति से गणनाएँ की जा सकती हैं। कम्प्यूटर द्वारा किये जाने वाले सभी कार्य गणनाओं पर ही आधारित होते हैं। आधुनिक कम्प्यूटर नैनो सेकेण्ड (10^{-9} सेकेण्ड) से पीको सेकेण्ड (10^{-12} सेकेण्ड) तक में कार्य करते हैं।
2. **संग्रहण क्षमता** (Storing Capacity)–कम्प्यूटर की संग्रहण क्षमता की न्यूनतम इकाई बाइट है। एक किलो बाइट का तात्पर्य 1024 बाइट्स से हैं, अर्थात् 1 किलो बाइट्स में 1024 Characters को संग्रहित किया जा सकता है।
3. **शुद्धता** (Accuracy)–कम्प्यूटर द्वारा उपलब्ध कराये गये आँकड़े पूर्णत: शुद्ध होते हैं। यदि कम्प्यूटर आँकड़े प्रदर्शित करता है तो उसमें कम्प्यूटर की कोई गलती नहीं है बल्कि उसमें आँकड़े फीड करने वाले की गलती होती है।
4. **स्वचालन** (Automation)–कम्प्यूटर स्वत: समस्त कार्य स्वचालित रूप से करता है। एक बार आँकड़े कम्प्यूटर में प्रविष्ट करने के पश्चात् उन्हें प्रोग्राम के निश्चित क्रम में दिए गए निर्देश के अनुरूप भिन्न-भिन्न कार्यों हेतु भिन्न-भिन्न रूप से विश्लेषण कर शुद्ध परिणाम किए जा सकते हैं।
5. **सक्षमता** (Efficiency)–कम्प्यूटर एक इलैक्ट्रॉनिक युक्ति होने के कारण अधिक कार्यभार होने पर भी थकावट का कोई नामो-निशान परिलक्षित नहीं होता। किसी यांत्रिक मशीन अथवा मानव से भी अधिक कार्य कराया जाये तो उसमें थकावट के लक्षण दिखाई देने लगते हैं, परन्तु कम्प्यूटर से कितनी भी देर तक कार्य कराया जाये तो भी वह अन्तिम क्षण तक उसी दक्षता से कार्य करेगा जिस दक्षता से उसने कार्य शुरु किया था।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **निम्नलिखित कथनों पर ‘सत्य’ तथा ‘असत्य’ लिखिए (State Whether the following statements are ‘True’ or ‘False’)–**
   1. गति, शुद्धता एवं स्वचालन कम्प्यूटर की प्रमुख विशेषतायें हैं।
   2. शिक्षण-अधिगम में कम्प्यूटर सहायता अनुदेशन व्यक्तिगत भिन्नता के लिये सुविधा प्रदान करता है।
   3. कम्प्यूटर का कार्य छात्र को भागीदारी के लिये प्रोत्साहित करना, स्वत: दिशा नियंत्रित करना और पृष्ठपोषण देना है।

नोट

4. कम्प्यूटर शिक्षा प्रक्रिया का मुद्रित तथा अमुद्रित माध्यम है।
5. कम्प्यूटर की व्यवस्थित अनुदेशन, व्यक्तिगत भिन्नता हेतु अवसर नहीं देता।

24.3 शिक्षण मूल्यांकन में कम्प्यूटर का उपयोग (Applications of Computer in Educational Evaluation)

परीक्षण मूल्यांकन में कम्प्यूटर का विशेष महत्व है। कम्प्यूटर के उपयोग ने परीक्षा प्रणाली के मूल्यांकन को न केवल सुगम बना दिया है बल्कि वैध तथा विश्वसनीय भी बना दिया है।

ऑप्टिकल मार्क रीडर (OMR)—ऑप्टिकल मार्क रीडर एक ऐसी युक्ति है, जिसके द्वारा उत्तर पुस्तिकाओं पर लगे पैन्सिल मार्क अथवा चिन्हों को पढ़ा जाता है, दूसरे शब्दों में इस युक्ति द्वारा कम्प्यूटरीकृत बहुविकल्पीय परीक्षण का मूल्यांकन किया जाता है। OMR तकनीक द्वारा मूल्यांकन के लिए जिन उत्तर पत्रिकाओं का उपयोग किया जाता है, उन्हें NCS (कम्पेटिबल स्कैन फॉर्म्स) कहते हैं। परीक्षण का इस प्रकार की पत्रिकाओं पर स्कैनर की सहायता से पढ़ा जाता है, जाँचा जाता है तथा एक फाइल में सुरक्षित कर दिया जाता है। इस फाइल में उपस्थित आँकड़ों, अपनी आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रकार की आउटपुट फाइल के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है।

प्रतियोगी अथवा कक्षा परीक्षण में छात्रों को जो उत्तरपुस्तिकाएँ दी जाती हैं, उसमें प्रत्येक प्रश्न के चार अथवा पाँच उत्तर दिए जाते हैं। जब छात्र ये फॉर्म भरते हैं, तो यह आवश्यक होता है नाम का रिक्त स्थान उचित अक्षरों द्वारा भरा जाए नहीं तो स्कैनर एक त्रुटि प्रदर्शित करता है। यह भी सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि स्कैन फॉर्म कटा फटा न हो, नहीं तो यह फॉर्म जाँचा नहीं जाता। इस फॉर्म में दो प्रकार के प्रीप्रिन्टेड निशान होते हैं जो स्कैनर को परीक्षण के मूल्यांकन करने में सहायता करता है। इन्हें "स्कंक मार्क" तथा "टाइमिंग मार्क" कहते हैं।

जब एक बार स्केन फॉर्म सही उत्तरों द्वारा भर दिया जाता है तो इसके मूल्यांकन की प्रक्रिया आरंभ होती है। सबसे पहले कवर स्कैन फॉर्म को पूर्ण किया जाता है। परीक्षण मूल्यांकन के लिए यह उत्तर कुँजी के रूप में अध्यापकों की सहायता करती है। इसके बाद कम्प्यूटर को प्रोसेसिंग के लिए आदेश दिया जाता है, तथा स्कैनर की इनपुट ट्रे में कई OMR शीटों को एक साथ रख दिया जाता है।

जिस फॉर्म को स्कैन करना होता है, वह इनपुट होल्डर द्वारा पकड़ा हुआ होता है। शीट गाइड फॉर्म को एलाइन किया जाता है। यह ट्राँसपोर्ट बेंड में स्कैन होता है। एक बार जब फॉर्म स्कैन कर दिया जाता है तो आउटपुट स्टैकर में आ जाता है। ऑपरेटर पैनल स्कैनर स्टेटस को तथा त्रुटियों को प्रदर्शित करता है। कभी 300 फॉर्म से अधिक हॉपर में एक ही समय पर नही रखना चाहिए अन्यथा पेपर जाम हो जाता है।

इस प्रकार भारतवर्ष में परीक्षण तथा शोध के विश्लेषण में कम्प्यूटर का प्रयोग किया जाने लगा है। शिक्षण तथा निर्देशन में इसका प्रयोग अभी पश्चिमी देशों तक ही सीमित है। इसके अतिरिक्त भारतवर्ष में कम्प्यूटर की सेवाओं का उपयोग अन्य उद्योग, व्यापार, प्रशासन तथा सेवा आदि में भी किया जाने लगा है।

कम्प्यूटर के विभिन्न स्वरूप विभिन्न प्रकार के उपकरणों की सहायता से चलाये जाते हैं। अनेक प्रकार की तकनीकें इस प्रकार से अपने उपकरणों को सुसज्जित करती हैं। उनके स्वरूप में विभिन्नता पाई जाती है। कम्प्यूटर के प्रारूप के वास्तविक यन्त्र को हार्डवेयर के नाम से जानते हैं। जबकि साफ्टवेयर कार्यक्रम को अनुदेशनात्मक कार्यक्रम से जानते हैं।

केन्द्रीय प्रक्रिया की इकाई को ही रखाव की प्रक्रिया कहते हैं। इसके अंतर्गत सभी प्रकार के कार्यक्रमों को व्यवस्थित किया जाता है। प्रदा (Output) के भाग द्वारा आँकड़ों के मध्य हुई प्रक्रिया को सम्पादित किया जाता है। सामान्य रूप से दूरदर्शन के द्वारा कम्प्यूटर के कार्यक्रम को ही दिखाया जाता है।

24.3.1 कम्प्यूटर का प्रयोग (Application of Computer)

कम्प्यूटर की चुनौतीपूर्ण कार्यक्रमों के द्वारा छात्रों के मध्य प्रेरणा पैदा की जाती है। कुछ उदाहरणों के द्वारा इसके गुणों को प्रदर्शित किया जा सकता है। कोडब्रेकर एक इस प्रकार का कार्यक्रम है जिसके द्वारा पूछे गये प्रश्नों का

नोट

उत्तर दिया जा सकता है। सैद्धान्तिक रूप में प्रश्नोत्तर के क्रम के द्वारा छात्रों को मिल जाता है जिसके द्वारा छात्रों को सफलतापूर्वक सीखने का अवसर मिल जाता है।

समस्या समाधान की क्रिया के कार्यक्रम को येलोरीवर किंगडम के नाम से जानते हैं। कम्प्यूटर तक विशाल किंगडम को सम्मिलित करता है जिसमें विभिन्न प्रकार के स्रोत दिये रहते हैं। बिना कम्प्यूटर की सहायता से क्या कोई इस प्रकार की कठिन परिस्थिति को पैदा कर सकता है, जिसके द्वारा कक्षा में अधिगम का कार्य प्रभावित किया जा सके। इसके द्वारा कठिन परिस्थितियों के द्वारा भी कार्यक्रम को सुगम बनाया जा सकता है।

वेरीटेक्सट नामक एक कार्यक्रम है जिसके द्वारा कार्यक्रम के कुछ रिक्त स्थानों को छात्रों द्वारा पूर्ण कराया जाता है। इन रिक्त स्थानों की पूर्ति के लिये छात्र को चार प्रकार के विकल्प दिये रहते हैं, जिसके द्वारा छात्रों को रिक्त स्थान की पूर्ति करनी होती है। यदि आवश्यक हो तो छात्र कम्प्यूटर के द्वारा सही शब्द का पता भी कर सकता है। कम्प्यूटर ही किसी कार्यक्रम को तैयार करने के लिए निश्चित प्रकार की तकनीकी है। इसके विकल्प के रूप में अभी अन्य किसी प्रकार की तकनीकी का विकास नहीं हो सका है।

इस तकनीकी के विकास के युग में कम्प्यूटर का प्रयोग अधिकांश रूप में दूर नहीं रखा जा सकता है। विश्व के अनेक देशों में कम्प्यूटर का प्रयोग दूरवर्ती-शिक्षा संस्थानों में काफी सफलता के साथ प्रयोग में लाया जा रहा है।

दूरवर्ती शिक्षा में कम्प्यूटर के उपयोग की कुछ परिस्थितियाँ निम्नलिखित हैं—

1. दूरवर्ती छात्र के एकांकी स्वभाव को कम करता है।
2. कम्प्यूटर के द्वारा अध्ययन की प्रक्रिया में वैयक्तिक विभिन्नता को ध्यान में रखा जाता है।
3. कम्प्यूटर के द्वारा छात्र की अध्ययन गति का अनुसरण किया जाता है और उनके द्वारा समस्या का समाधान किया जाता है।
4. कम्प्यूटर पर आधारित सामग्री मितव्ययी होती है जब इसको विशाल स्तर पर तैयार किया जाता है।

दूरवर्ती अधिगम में कम्प्यूटर का बहुत ही अधिक महत्व है। इसको शिक्षण के कार्यक्रम में उपयोग, सीखने के यन्त्र आदि के रूप में प्रयोग करते हैं। कम्प्यूटर के विविध उपयोग हैं।

नोट्स कम्प्यूटर एक ऐसी युक्ति है जिसके द्वारा किसी कार्यक्रम से प्राप्त आँकड़ों से अपनी संक्रियाओं द्वारा परिणाम में बदल देता है।

कम्प्यूटर की साक्षरता एवं विद्यालय में अध्ययन (The Computer Literary and Studies in School)

इस प्रकार की योजना सन् 1983-84 में मानव संसाधन विकास मन्त्रालय द्वारा आरम्भ की गयी थी। इसका मुख्य उद्देश्य छात्रों एवं शिक्षकों को कम्प्यूटर की प्रणाली से परिचित कराना तथा इसके माध्यम से अधिगम की प्रक्रिया को सम्पादित करना था।

इस कार्यक्रम को चुने हुए माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों में प्रयोग किया गया। प्राथमिक रूप से इसको राजकीय विद्यालयों के लिए प्रयोग किया गया, जिसमें सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से गरीब छात्रों को सम्मिलित किया गया। ऐसे संस्थान सीमित साधनों से युक्त थे।

इस परियोजना के लिए हार्डवेयर एवं साफ्टवेयर आयामों को ब्रिटेन से प्राप्त किया गया है। अहमदाबाद के स्पेस एप्लीकेशन केन्द्र ने 300 विद्यालयों में एक अध्ययन किया जिसके द्वारा इन कार्यक्रमों में प्रभावशीलता के लिये नये वातावरण की तैयारी की गई। राष्ट्रीय शिक्षा परिषद् ने भी यह पाया कि इस प्रकार का कार्यक्रम छात्रों एवं शिक्षकों में अधिक उत्सुकता उत्पन्न करता है, तथा उन्हें उत्साहित करता है।

नोट

24.3.2 कम्प्यूटर का प्रशासनिक उपयोग (Administrative Applications of Computers)

शिक्षण अधिगम तथा अनुदेशन के उपयोग के अतिरिक्त कम्प्यूटर का उपयोग प्रशासनिक तथा प्रबन्ध कार्यों में भी किया जाता है।

1. वित्तीय व्यवस्था के लिए
2. छात्र के अभिलेख को रखने के लिए
3. सांख्यिकी को स्थिर करने के लिए
4. छात्रों को बिलों के भुगतान के लिए
5. विभिन्न प्रकार के ऋण एवं अन्य प्रकार के अभिलेखों के लिए।

24.3.3 कम्प्यूटर के प्रयोग की अनुदेशनात्मक परिस्थितियाँ (Instructional Situations of Computer Application)

कम्प्यूटर के उपयोग की अनुदेशनात्मक परिस्थितियाँ निम्नलिखित होती हैं–

1. छात्र के पंजीकरण के लिए पूर्व परीक्षण की व्यवस्था करना
2. छात्रों के विकास के लिए निर्देशन करना
3. प्राप्तांकों एवं परीक्षणों को प्रयोग में लाना।

इस प्रकार अनेक आलेख की फाइलों को कम्प्यूटर में सुरक्षित किया जा सकता है। शाब्दिक प्रक्रिया के पाठ्यक्रम का विकास करना एवं आँकड़ों के प्रशासन की सहायता करना। कम्प्यूटर के अन्य कार्य अध्ययन सामग्री के आदान-प्रदान के लिए, किसी विषय विशेष पर कम्प्यूटर के लिए अन्य प्रकार के कार्यों के विचार आदान-प्रदान भी कर सकते हैं।

24.3.4 रेखीय एवं अरेखीय कम्प्यूटर ('On-line' and 'Off-line' Computers)

दूरवर्ती अधिगम में कम्प्यूटर का प्रयोग दो प्रकार से कर सकते हैं–स्थानीय प्रयोग एवं प्रसारण का प्रयोग। स्थानीय प्रयोग या अरेखीय कम्प्यूटर एक स्वतन्त्र प्रारूप के रूप में अपने शिक्षार्थी को अपने ढंग से कार्य करने के लिए प्रेरित करता है। रेखीय कम्प्यूटर प्रणाली में एक कम्प्यूटर को दूसरे कम्प्यूटर से तथा दूसरे को तीसरे से सम्बन्धित किया जाता है और फिर इन युक्तियों के मध्य क्रियाओं का संचालन किया जाता है जिसके द्वारा दूरवर्ती-शिक्षार्थी को सम्बन्धित किया जाता है तथा उसका सम्बन्ध केन्द्रीय संस्था व शिक्षक से रखा जाता है।

24.3.5 कम्प्यूटर प्रबन्धीय अनुदेशन एवं कम्प्यूटर सहायित अनुदेशन (Computer Managed Instruction and Computer Assisted Instruction)

अनुदेशन के सम्बन्ध में कम्प्यूटर के दो महत्वपूर्ण उपयोग हैं–

1. कम्प्यूटर प्रबन्धीय अनुदेश (सी.एम.आई.)
2. कम्प्यूटर आधारित या सहायित अनुदेशन (सी.ए.आई.)

प्रबन्धीय कम्प्यूटर में सूचनाओं का संग्रह किया जाता है, और उनके द्वारा व्यक्तिगत रूप से सीखने के लिए अनुभवों को अनुदेशित किया जाता है।

इसमें छात्र विभिन्न बिन्दुओं से होकर गुजरता है तथा पूरी शैक्षिक प्रक्रिया में विभिन्न पदों से होकर जाना पड़ता है तथा अपनी व्यक्तिगत योग्यता के द्वारा ही क्षमता का प्रदर्शन होता है। इस प्रकार का व्यक्तिगत अनुदेशन कई प्रकार की श्रृंखलाओं की क्रियाओं से होकर अग्रसर होता है। इस प्रक्रिया में निदानात्मक परीक्षणों को प्रशासित करने के लिये, उनको अंकन करने के लिए एवं विकास के सभी स्वरूपों को पूरे पथ के दौरान करने के लिए किया जाता है। कम्प्यूटर अनुदेशन के द्वारा छात्रों से सीधा अन्त: प्रक्रिया से सम्बन्ध रखा जाता है तथा पाठ को प्रस्तुत किया जाता है। इसके द्वारा विभिन्न प्रकार की विधियों में सुविधा प्रदान की जाती है। कुछ विधियों का विवरण निम्नलिखित है–

नोट

(1) **अनुवर्ग प्रविधि** (Tutorial Mode)—शिक्षण विधियों में प्रश्नों पर आधारित अनुदेशन के कार्यक्रम के अनुसार सूचनाओं को विभिन्न प्रकार के खण्डों में प्रस्तुत किया जाता है। छात्रों के व्यवहार का विश्लेषण किया जाता है तथा उनको उचित पृष्ठ पोषण प्रदान किया जाता है। विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को शिक्षण के लिए प्रदर्शित किया जाता है एवं उसके द्वारा छात्रों को अपने अनुसार कार्य करने के लिए अनुमति प्रदान की जाती है। विभिन्न प्रकार के वैकल्पिक कार्यक्रम कम्प्यूटर पर उपलब्ध होते हैं, छात्र उनको अपने व्यक्तिगत आधार पर चयनित करते हैं।

(2) **अभ्यास प्रविधि** (Practice Mode)—इस प्रकार के कार्यक्रम के द्वारा यह सुनिश्चित किया जाता है, कि विभिन्न प्रकार के प्रत्यय, नियम एवं साधन द्वारा सीख लिए गए हैं कि नहीं। यह कार्यक्रम विभिन्न उदाहरणों के द्वारा यह सुनिश्चित करता है कि विद्यार्थी में कौशल का विकास हुआ अथवा नहीं। कम्प्यूटर तभी आगे के लिए अपने कार्यक्रमों को प्रस्तुत करेगा, जब शिक्षार्थी को उस विषय में निपुणता आ जायेगी।

(3) **अन्वेषणात्मक प्रविधि** (Discovery Mode)—इस प्रकार के कार्यक्रमों में आगमन विधि प्रयोग में लाई जाती है। इसमें शिक्षार्थी के सम्मुख समस्या रखी जाती है तथा छात्र उसकी त्रुटि एवं सुधार के द्वारा हल करने का प्रयास करता है। इसके द्वारा प्रयोगशाला-अधिगम कक्षा के बाहर वास्तविक अधिगम को बल प्रदान किया जाता है। इस प्रकार के उपागम का मुख्य उद्देश्य यह है कि समस्या को हल करने के लिए वास्तविक एवं अधिक जानकारी होती है।

(4) **खेल-कूद प्रविधि** (Gaming Mode)—खेल-कूद की विधि अनुदेशनात्मक विधि हो सकती है, अथवा नहीं भी हो सकती है। इसका उद्देश्य मनोरंजनात्मक होता है, इसे खेल-कूद के द्वारा शिक्षा प्रदान की जाती है। इस प्रकार का कार्यक्रम युवक बालकों के लिए अधिक प्रभावशाली होता है।

क्या आप जानते हैं कम्प्यूटर का अदा (Input) भाग जिसको साधारण रूप से की-बोर्ड भी कहते हैं जो कि आँकड़ों का अनुदेशन कम्प्यूटर के प्रक्रिया भाग में भेजता है। कम्प्यूटर का मध्य भाग या प्रक्रिया का भाग अनुदेशन के अनुसार आँकड़ों की गणना करता है तथा उसके मध्य क्रियाशील रहता है जिसके द्वारा आँकड़ों के मध्य प्रक्रिया की जाती है।

24.4 कम्प्यूटर के लाभ तथा सीमाएँ (Advantages and Limitations of Computer)

यहाँ पर दिये गये विवरण में कम्प्यूटर के कुछ लाभ पारस्परिक मुद्रित अनुदेशनात्मक माध्यम के हैं। इन लाभों का यहाँ पर उल्लेख किया गया है—

(1) नवीन कम्प्यूटर के साथ काम करने के कुछ उपयोग प्रेरणा प्रदान करते हैं।

(2) उच्च कोटि की व्यक्तित्व की क्रियायें छात्रों की प्रतिक्रियाओं को उच्च कोटि का पुनर्बलन प्रदान करती हैं।

(3) निम्न कोटि के शिक्षार्थी को व्यक्तिगत प्रकार के अनुदेशनात्मक कार्यक्रम द्वारा धनात्मक एवं प्रभावी वातावरण तैयार किया जाता है। उसके लिए इसको विभिन्न पदों में व्यक्त किया जाता है।

(4) अभिलेखों को सुरक्षित रखने की क्षमता कम्प्यूटर के द्वारा सरल बनाई जा सकती है। इसके द्वारा छात्रों को दिशा निर्देशित किया जा सकता है एवं उनके द्वारा व्यक्तिगत प्रकार के अनुदेशन भी दिए जा सकते हैं।

(5) शिक्षक के नियन्त्रण क्षेत्र को बढ़ाया जा सकता है और अधिक सूचनाप्रद बनाया जा सकता है। इससे शिक्षक की व्यवस्था के अनुसार छात्रों के मध्य सीधा सम्पर्क बनाया जा सकता है।

कम्प्यूटर प्रणाली के लाभों एवं निश्चित प्रकार के कार्यक्रमों के साथ-साथ कुछ सीमायें भी हैं। मुख्य सीमायें निम्नलिखित हैं—

नोट

(1) व्यय या मूल्यों में कमी होने पर भी और कम्प्यूटर की कमी होने पर भी इसके द्वारा निर्देशित अनुदेशन अपेक्षाकृत अधिक महँगा होता है। विचारात्मक प्रकार का संज्ञान कम्प्यूटर का व्यय एवं लाभ पर दिया जाना आवश्यक है।

(2) अनुदेशनात्मक उद्देश्यों के लिए कम्प्यूटर की रूपरेखा तैयार करना अन्य उद्देश्यों की प्राप्ति में अपेक्षाकृत कम रहता है।

(3) कम्प्यूटर के प्रयोग के लिए उच्चकोटि के सीधे अनुदेशनात्मक सामग्री का अभाव है। ऐसा अनुभव किया गया है कि किसी एक कम्प्यूटर के लिए तैयार किया गया साफ्टवेयर कार्यक्रम दूसरे प्रकार के कार्यक्रम के लिए उपयोग में नहीं लाया जा सकता है।

(4) भारतीय परिस्थितियों में यह नगरों में सुविधा उपलब्ध है, परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में दूरदर्शन की सुविधा सभी जगह नहीं है।

टास्क अनुवर्ग प्रविधि क्या है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. आधुनिकतम कम्प्यूटर का प्रतिमान ········· कम्प्यूटर है।
2. कम्प्यूटर के विकास को ········· पीढ़ियों में किया है।
3. कम्प्यूटर की एक विद्युत ········· है।
4. कम्प्यूटर मुख्य विशेषतायें गति, शुद्धता एवं ········· है।
5. व्यक्तिगत मित्रता के लिये ········· में अवसर दिया जाता है।

24.5 सारांश (Summary)

- कम्प्यूटर शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द Compu से हुई हैं, इसका अर्थ है, गणना करना अथवा गिनती करना। अत: तार्किक दृष्टिकोण से किसी भी गणन युक्ति (Calculating Device) को कम्प्यूटर कहा जा सकता है।
- कम्प्यूटर एक ऐसी इलैक्ट्रोनिक युक्ति है, जो किसी भी प्रकार से आंकड़ों को व्यवस्थित व नियन्त्रित तो करता ही है साथ ही उक्त समय में पूर्ण शुद्धता के साथ गणना भी करता है।
- कम्प्यूटर की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं– गति (Speed); संग्रहण क्षमता (Storing Capacity); शुद्धता (Accuracy); स्वचालन (Automation); सक्षमता (Efficiency)।
- दूरवर्ती शिक्षा में कम्प्यूटर के उपयोग की कुछ परिस्थितियाँ निम्नलिखित हैं–
  1. दूरवर्ती छात्र के एकांकी स्वभाव को कम करता है।
  2. कम्प्यूटर के द्वारा अध्ययन की प्रक्रिया में वैयक्तिक विभिन्नता को ध्यान में रखा जाता है।
  3. कम्प्यूटर के द्वारा छात्र की अध्ययन गति का अनुसरण किया जाता है और उनके द्वारा समस्या का समाधान किया जाता है।
  4. कम्प्यूटर पर आधारित सामग्री मितव्ययी होती है जब इसको विशाल स्तर पर तैयार किया जाता है।
- इस प्रकार की योजना सन् 1983–84 में मानव संसाधन विकास मन्त्रालय द्वारा आरम्भ की गयी थी। इसका मुख्य उद्देश्य छात्रों एवं शिक्षकों को कम्प्यूटर की प्रणाली से परिचित कराना तथा इसके माध्यम से अधिगम की प्रक्रिया को सम्पादित करना था।

नोट

- इस कार्यक्रम को चुने हुए माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों में प्रयोग किया गया। प्राथमिक रूप से इसको राजकीय विद्यालयों के लिए प्रयोग किया गया, जिसमें सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से गरीब छात्रों को सम्मिलित किया गया। ऐसे संस्थान सीमित साधनों से युक्त थे।
- शिक्षण अधिगम तथा अनुदेशन के उपयोग के अतिरिक्त कम्प्यूटर का उपयोग प्रशासनिक तथा प्रबन्ध कार्यों में भी किया जाता है।
  1. वित्तीय व्यवस्था के लिए; 2. छात्र के अभिलेख को रखने के लिए; 3. सांख्यिकी को स्थिर करने के लिए; 4. छात्रों को बिलों के भुगतान के लिए; 5. विभिन्न प्रकार के ऋण एवं अन्य प्रकार के अभिलेखों के लिए।
- कम्प्यूटर के उपयोग की अनुदेशनात्मक परिस्थितियाँ निम्नलिखित होती हैं–
  1. छात्र के पंजीकरण के लिए पूर्व परीक्षण की व्यवस्था करना; 2. छात्रों के विकास के लिए निर्देशन करना; 3. प्राप्तांकों एवं परीक्षणों को प्रयोग में लाना।
- अनुदेशन के सम्बन्ध में कम्प्यूटर के दो महत्वपूर्ण उपयोग हैं–
  1. कम्प्यूटर प्रबन्धीय अनुदेश (सी.एम.आई.); 2.कम्प्यूटर आधारित या सहायित अनुदेशन (सी.ए.आई.)
- प्रबन्धीय कम्प्यूटर में सूचनाओं का संग्रह किया जाता है, और उनके द्वारा व्यक्तिगत रूप से सीखने के लिए अनुभवों को अनुदेशित किया जाता है।
- विभिन्न प्रकार की विधियों में सुविधा प्रदान की जाती है। कुछ विधियों का विवरण निम्नलिखित है–**अनुवर्ग प्रविधि** (Tutorial Mode)–शिक्षण विधियों में प्रश्नों पर आधारित अनुदेशन के कार्यक्रम के अनुसार सूचनाओं को विभिन्न प्रकार के खण्डों में प्रस्तुत किया जाता है। **अभ्यास प्रविधि** (Practice Mode)–इस प्रकार के कार्यक्रम के द्वारा यह सुनिश्चित किया जाता है, कि विभिन्न प्रकार के प्रत्यय, नियम एवं साधन द्वारा सीख लिए गए हैं कि नहीं। यह कार्यक्रम विभिन्न उदाहरणों के द्वारा यह सुनिश्चित करता है कि विद्यार्थी में कौशल का विकास हुआ अथवा नहीं। **अन्वेषणात्मक प्रविधि** (Discovery Mode)–इस प्रकार के कार्यक्रमों में आगमन विधि प्रयोग में लाई जाती है। इसमें शिक्षार्थी के सम्मुख समस्या रखी जाती है तथा छात्र उसकी त्रुटि एवं सुधार के द्वारा हल करने का प्रयास करता है। **खेल-कूद प्रविधि** (Gaming Mode)–खेल-कूद की विधि अनुदेशनात्मक विधि हो सकती है, अथवा नहीं भी हो सकती है। इसका उद्देश्य मनोरंजनात्मक होता है।
- यहाँ पर दिये गये विवरण में कम्प्यूटर के कुछ लाभ पारस्परिक मुद्रित अनुदेशनात्मक माध्यम के हैं। इन लाभों का यहाँ पर उल्लेख किया गया है–

(1) नवीन कम्प्यूटर के साथ काम करने के कुछ उपयोग प्रेरणा प्रदान करते हैं।

(2) उच्च कोटि की व्यक्तित्व की क्रियायें छात्रों की प्रतिक्रियाओं को उच्च कोटि का पुनर्बलन प्रदान करती हैं।

(3) निम्न कोटि के शिक्षार्थी को व्यक्तिगत प्रकार के अनुदेशनात्मक कार्यक्रम द्वारा धनात्मक एवं प्रभावी वातावरण तैयार किया जाता है। उसके लिए इसको विभिन्न पदों में व्यक्त किया जाता है।

24.6 शब्दकोश (Keywords)

- **प्रतिमान**–मॉडल, प्रतिरूप।
- **अन्वेषणात्मक**–खोजपरक।

24.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. कम्प्यूटर की परिभाषा दीजिए तथा इसकी विशेषताओं को भी बताइए।
2. कम्प्यूटर के प्रकार बताइए और उसके उपयोग भी बताइए।
3. कम्प्यूटर के तकनीकी पक्षों का उल्लेख कीजिए तथा दूरवर्ती शिक्षा में इसका उपयोग बताइए।

नोट

4. कम्प्यूटर एक मुद्रित तथा अमुद्रित माध्यम है। शिक्षा में इसकी उपयोगिता बताइए।
5. वीडियोडिस्क तथा वीडियोटेक्स का शिक्षा प्रणाली में उपयोग बताइए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. 1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. सत्य 5. असत्य।

2. 1. माइक्रो 2. पाँच 3. मस्तिष्क या युक्ति 4. स्वचालन 5. कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन।

24.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—25: निष्पत्ति परीक्षण: अवधारणा, प्रकार तथा निर्माण (Achievement Test: Concept, Types and Construction)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

25.1 निष्पत्ति परीक्षण की अवधारणा (Concept of Achievement Test)

25.2 निष्पत्ति परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Achievement Test)

25.3 परीक्षण निर्माण के सामान्य सिद्धांत (General Principles of Test Construction)

25.4 निष्पत्ति परीक्षण के प्रकार (Types of Achievement Test)

25.5 परीक्षण निर्माण (Test Construction)

25.6 उपलब्धि परीक्षण का महत्व तथा सीमाएँ (Importance and Limitations of Achievement Test)

25.7 निष्पत्ति परीक्षण का उपयोग (Use of Achievement Test)

25.8 सारांश (Summary)

25.9 शब्दकोश (Keywords)

25.10 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

25.11 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- निष्पत्ति परीक्षण की अवधारणा, सिद्धांत एवं विशेषताओं को समझने और इसके प्रकार, उपयोग व महत्त्व की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

शैक्षिक मापन में निष्पत्ति परीक्षण का विशेष महत्व है, निष्पत्ति परीक्षणों का प्रयोग सभी प्रकार की शैक्षिक संस्थाओं में किया जाता है। निष्पत्ति परीक्षणों के द्वारा यह मापन किया जाता है। कि छात्रों ने कक्षा में पढ़ाये गये विषयों की पाठ्यवस्तु के सम्बन्ध में कितना सीखा है। इस प्रकार के परीक्षणों में सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु पर प्रश्न पूछे जाते हैं। और सही उत्तरों के लिए अंक देकर उनका योग कर लिया जाता है, जिसे प्राप्तांक कहते हैं,

इस इकाई में हम निष्पत्ति परीक्षण परिप्रेक्ष्य, निर्माण विधि तथा उपयोग आदि के विषय में अध्ययन करेंगे।

नोट

25.1 निष्पत्ति परीक्षण की अवधारणा (Concept of Achievement Test)

उपलब्धि परीक्षण (Achievement Test)

"The educational tests seek to measure the products of training and indirectly to determine the efficiency of the training which the individual has received." *–Freeman*

"Achievement testing has been deterimental when it forced schools into training rather than educating pupils." *–Cronbach*

व्यक्ति आने वाली तरुण पीढ़ी के समक्ष अपने अनुभव एवं मूल्य इस उद्देश्य से रखता है ताकि वे सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा कर सकें एवं उनके व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन हो। बालक विद्यालय में रहकर जो कुछ सीखता है उसे हम उपलब्धि (achievement) कहते हैं तथा इस उपलब्धि की जाँच के लिए जो परीक्षाएं ली जाती हैं उन्हें उपलब्धि परीक्षण (achievement test) कहते हैं।

अध्यापक अपने छात्रों की उन्नति का ज्ञान प्राप्त करने के लिए समय समय पर उनकी परीक्षाएँ लेता रहता है। उपलब्धि परीक्षा द्वारा बालकों की योग्यता की तुलना की जाती है। इस परीक्षा में हम सापेक्षिक सफलता (relative achievement) पर बल देते हैं न कि पूर्ण सफलता (absolute achievement) पर। यदि एक विद्यार्थी किसी विषय में 30 अंक प्राप्त करता है तथा दूसरा विद्यार्थी 55 अंक प्राप्त करता है तो हम कहेंगे कि पहला विद्यार्थी दूसरे विद्यार्थी से योग्यता में 25 अंक कम है। यहाँ हम Pass grade को महत्व नहीं देते जैसे कि Essay Type Test में देते हैं। यह भी हो सकता है कि हमारी परीक्षा बहुत ही कठिन हो और कोई भी विद्यार्थी 36% (Pass marks) न ला पाये तो ऐसी स्थिति में यह तो नहीं कहा जा सकता कि कोई भी विद्यार्थी योग्य नहीं है। अत: हमें यह करना चाहिये कि विद्यार्थियों को अंक देने के पश्चात् वर्गीकरण करें तथा मध्यांक ज्ञात करें, फिर यह देखें कि विद्यार्थी के अंक मध्यांक से कितने कम हों कि उसकी योग्यता का सफल कहा जाये। आजकल प्रतियोगी परीक्षाओं में यही नीति प्रयोग में लायी जाती है। कुछ परिभाषाएँ निम्न हैं–

सुपर (Super) के शब्दों में–"एक उपलब्धि या क्षमता परीक्षण यह ज्ञात करने के लिए प्रयोग किया जाता है कि व्यक्ति ने क्या और कितना सीखा तथा वह कोई कार्य कितनी भलीभाँति कर लेता है।"

(An achievement or proficiency test is used to ascertain what and how much has been learnt or how well a task has been performed.)

फ्रीमैन (Freeman) के अनुसार–"उपलब्धि परीक्षण वह अभिकल्प है जो एक विशेष विषय या पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों के ज्ञान, समझ एवं कौशल का मापन करता है।"

(A test of educational achievement is one designed to measure knowledge, understanding or skills in a specified subject or a group of subjects.)

इबेल (Ebel) के शब्दों में–"उपलब्धि परीक्षण वह अभिकल्प है जो विद्यार्थी के द्वारा ग्रहण किये गये ज्ञान, कुशलता या क्षमता का मापन करता है।"

(An achievement test is one designed to measure a student's grasp of some knowledge or his proficiency in certain skills.)

लिंडक्विस्ट एवं मन के अनुसार (Lindquist and Munn)–"एक सामान्य निष्पत्ति परीक्षण वह है जो एक फलांक द्वारा निष्पत्ति के किसी दिये हुए क्षेत्र में विद्यार्थी के सापेक्षिक ज्ञान का बोध कराए।"

(A general achievement test is one designed to express in terms of a single score a pupil's relative achievement in a given field of achievement.)

क्या आप जानते हैं प्राचीन काल में भी शिक्षक एवं शिक्षालय का प्रथम दायित्व अपने शिष्यों की उपलब्धि का मूल्यांकन रहा है। शिक्षा के उद्देश्यों में संशोधन एवं परिवर्तन के साथ-साथ हमारी मूल्यांकन एवं मापन की प्रक्रिया भी बदलती रहती है।

नोट

25.2 निष्पत्ति परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Achievement Test)

1. इन परीक्षाओं का उद्देश्य पूर्व निर्धारित होता है।
2. ये परीक्षाएं विभिन्न कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए अलग-अलग बनायी जाती हैं।
3. इन परीक्षणों की पाठ्य-वस्तु छात्रों के स्तर, योग्यताओं, रुचियों एवं क्षमताओं के अनुकूल होती हैं।
4. ये परीक्षण व्यावहारिक दृष्टिकोण से उपयोगी होते हैं।
5. इन परीक्षणों का प्रशासन, अंकन, समय सीमा आदि पहले से ही निश्चित कर ली जाती है।
6. इन परीक्षणों के प्रश्न वस्तुनिष्ठ होते हैं अत: आंशिक रूप में अंक प्रदान करने का प्रश्न ही नहीं उठता।
7. इन परीक्षणों में प्रश्नों की संख्या बहुत अधिक होती है अत: अवसर या भाग्य का प्रश्न ही नहीं उठता।
8. इन परीक्षणों की विषय-सामग्री व्यापक होती है।
9. ये परीक्षण विभेदकारी (Discriminating) होते हैं। साथ ही, विश्वसनीय तथा वैध भी होते हैं।
10. इन परीक्षणों में प्रमापीकृत परीक्षाओं की सभी विशेषताएँ विद्यमान होती हैं जैसे—अंकन कुँजी (Scoring Key), निर्देश पुस्तिका (Manual of instructions), मानक (Norms) आदि। ये सभी पहले से ही तैयार कर लिये जाते हैं तथा इन्हें पुस्तिका के रूप में छपवा दिया जाता है।

25.3 परीक्षण निर्माण के सामान्य सिद्धांत (General Principles of Test Construction)

परीक्षण निर्माण के मुख्य सिद्धान्त निम्न हैं—

1. किसी भी प्रकार के परीक्षण से विषय विशेष के सभी उद्देश्यों की परीक्षा नहीं ली जा सकती।
2. परीक्षा का प्रारूप अत्यन्त व्यापक (Comprehensive) होना चाहिये।
3. द्वि-अर्थी एवं भ्रामक प्रश्नों को परीक्षा में स्थान नहीं देना चाहिये।
4. परीक्षण में प्रश्नों की संख्या पर्याप्त होनी चाहिये। प्रथम प्रशासन (First Try-out) में प्रश्नों की संख्या परीक्षा के वास्तविक प्रश्नों से लगभग दुगुनी होनी चाहिये।
5. ऐसे प्रश्न बनाये जायें जिनसे छात्रों के ज्ञान की व्यावहारिक क्षमता का मूल्यांकन किया जा सके।
6. प्रत्येक प्रश्न स्वतन्त्र होना चाहिये, प्रश्न में प्रश्न का उत्तर देने का प्रयास नहीं करना चाहिये। ऐसी स्थिति परीक्षार्थी को दुविधा में डाल सकती है।
7. प्रश्नों की भाषा सरल, सुबोध, संक्षिप्त एवं स्पष्ट होनी चाहिये।
8. परीक्षा का उचित नामकरण करना चाहिये।
9. परीक्षा सम्बन्धी सामान्य निर्देश प्रारम्भ में ही दे दिये जाने चाहिए।
10. परीक्षा सम्बन्धी विशिष्ट उदाहरण समझा दिया जाना चाहिये।
11. परीक्षार्थियों को उत्तर लिखने के लिए पर्याप्त स्थान दिया जाना चाहिये।
12. यह उचित रहेगा यदि एक जैसे प्रश्नों को एक ही पृष्ठ पर रखा जाये।
13. प्रश्नों को उचित क्रमांक पर व्यवस्थित किया जाना चाहिये।
14. परीक्षा सम्बन्धी विवरण पुस्तिका (Manual) सावधानीपूर्वक तैयार की जानी चाहिये।
15. परीक्षा की विश्वसनीयता एवं वैधता को बनाये रखने का प्रयास करना चाहिये।

नोट्स उपलब्धि परीक्षाएं धन, समय एवं शक्ति की दृष्टि से मितव्ययी (Economical) हैं। उपलब्धि परीक्षाओं परीक्षाफलों से अध्यापक को ऐसी सामग्री मिल जाती है जिसके आधार पर वह समस्त शिक्षण योजना का निर्माण कर सकता है।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)–

1. निष्पत्ति परीक्षण में ········· उत्तरों को महत्व दिया जाता है।
2. निष्पत्ति परीक्षण में ········· पर बल दिया जाता है।
3. निष्पत्ति परीक्षण की ········· व्यापक होती है।
4. निष्पत्ति परीक्षण में ऐसे प्रश्नों का निर्माण करना चाहिए जिससे छात्रों के ज्ञान की ········ का मूल्यांकन किया जा सके।
5. परीक्षा सम्बन्धी ········· सावधानीपूर्वक तैयार की जानी चाहिए।

25.4 निष्पत्ति परीक्षण के प्रकार (Types of Achievement Test)

निष्पत्ति परीक्षण तीन प्रकार के होते हैं–

1. लिखित परीक्षण (Written Test),
2. मौखिक परीक्षण (Oral Tests) तथा
3. प्रयोगात्मक परीक्षण (Experimental Test)।

1. लिखित परीक्षण (Written Test)

निष्पत्ति परीक्षणों में लिखित परीक्षणों का विशेष महत्व है, क्योंकि इनका प्रयोग सभी प्रकार के पाठ्यक्रमों के निष्पत्ति परीक्षणों में किया जाता है। जिन पाठ्यक्रमों में प्रयोगात्मक परीक्षण प्रयोग किया जाता है, उनमें लिखित परीक्षण भी दिया जाता है और दोनों के आधार पर छात्र की उपलब्धि या प्राप्तांक का बोध होता है। लिखित परीक्षण तीन प्रकार का होता है–

(1) निबन्धात्मक परीक्षण (Essay Type Tests)
(2) वस्तुनिष्ठ परीक्षण (Objective Type Tests) तथा
(3) सूक्ष्म उत्तर परीक्षण (Short Answer Type Tests)

यह तीनों प्रकार के परीक्षण शैक्षिक निष्पत्तियों के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं, परन्तु विश्वविद्यालय परीक्षण तथा बोर्ड की परीक्षाओं में आज भी निबन्धात्मक परीक्षाएँ ही प्रयुक्त की जाती है, जबकि यह परम्परागत एवं दोषपूर्ण परीक्षण माने जाते हैं। इस प्रकार के परीक्षण दोषपूर्ण होने के साथ-साथ ऐसे व्यवहार परिवर्तन को मापन करते हैं, जिन्हें किसी अन्य परीक्षण द्वारा मापन नहीं किया जा सकता है जैसे–अभ्यर्थी का लेख, पाठ्यवस्तु की व्यवस्था, विषय की गहनता एवं बोधगम्यता के साथ-साथ सौन्दर्यानुभूति एवं आलोचनात्मक क्षमताओं का मापन किया जाता है, इससे स्पष्ट है कि शिक्षा के उच्च उद्देश्यों का मापन निबन्धात्मक परीक्षणों द्वारा ही सम्भव है। अन्य दोष इनका यह है कि निबन्धात्मक को प्रमाणिक परीक्षण नहीं बनाया जा सकता है, अपितु उनमें सुधार किया जा सकता है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की कई विशेषताएँ हैं, और इन्हें प्रामाणिक भी बनाया जा सकता है, परन्तु शिक्षा उच्च उद्देश्यों का मापन नहीं किया जा सकता है वस्तुनिष्ठ परीक्षा में प्रश्नों को अनुमान से सही करने का भी अवसर होता है इसलिए सूक्ष्म उत्तर परीक्षणों का प्रयोग में लाते हैं। निबन्धात्मक परीक्षाओं को विस्तार में विवेचन अधोलिखित पंक्तियों में किया गया है–

25.5 परीक्षण निर्माण (Test Construction)

परीक्षण निर्माण के मुख्य सोपान निम्न है–

(*a*) परीक्षण की योजना बनाना (Planning)

नोट

(*b*) तैयारी (Preparation)

(*c*) परीक्षण का अन्तिम प्रारूप (Final Try-out)

(*d*) परीक्षण का मूल्यांकन (Evaluation)

(*a*) परीक्षण की योजना बनाना (Planning)—जिस प्रकार जीवन में किसी कार्य को करने से पूर्व उसकी एक सुनिश्चित योजना बनानी पड़ती है। उसी प्रकार परीक्षण निर्माण (Test construction) की वास्तविक प्रक्रिया से पूर्व भी एक निश्चित योजना की आवश्यकता होती है अर्थात्, परीक्षण निर्माता का सर्वप्रथम कार्य परीक्षण योजना की रुपरेखा प्रस्तुत करना है।

(*b*) तैयारी (Preparation)—परीक्षण की निश्चित एवं व्यवस्थित योजना बनाने के पश्चात ही परीक्षण निर्माता परीक्षण के प्रारम्भिक रूप की तैयारी करने लगता है, सर्वप्रथम, उद्देश्यों एवं विषय-वस्तु के अनुसार वह विभिन्न पदों (items) का अन्य स्त्रोतों से चयन एवं स्वयं निर्माण करता है। वह पदों को अपने अनुभवों के आधार पर उपलब्ध मानकों (standards), निर्मित परीक्षणों में से छाँटकर अथवा अन्य स्त्रोतों से रचना कर एकत्रित कर लेता है जो कि परीक्षण की विषय वस्तु का प्रतिनिधित्व कर सके। परीक्षण में जितने प्रकार के पदों की आवश्यकता होती है उन्हें इस प्रारम्भिक रूप में ही निर्मित कर लिया जाता है। परीक्षण के पदों को एकत्रित करने तथा उनके पद रूप को निश्चित करने के पश्चात् परीक्षण निर्माता के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि वह पदों को विषय वस्तु, उपयुक्तता तथा गुणों की दृष्टि से अवलोकित करे जिससे कि उसका यह प्रारम्भिक रूप अधिक सुधरे। परीक्षण पदों को तीन विषय विशेषज्ञों (Experts) के पास भेजकर उनके विचार जानने चाहिये व उनके सुझावों के आधार पर संशोधन भी करना चाहिये। परीक्षण के प्रारम्भिक रूप में प्राय: अन्तिम रूप की अपेक्षाकृत दुगुने पद सम्मिलित रहते हैं। इस सोपान के अन्तर्गत परीक्षण निर्माता को निम्न बातें ध्यान में रखनी चाहिये।

1. विभिन्न स्त्रोतों से परीक्षण पदों (Test items) का एकत्रित करना।
2. पदों के विभिन्न रूपों को सम्मिलित करना।
3. पदों का स्वयं तथा विशेषज्ञों की सहायता से अवलोकन एवं सम्पादन करना।
4. परीक्षार्थी एवं परीक्षण निर्माता के लिए अलग-अलग निर्देश लिख देना।
5. अंकन विधि (Scoring) का निश्चय करना।

(*c*) परीक्षण का अन्तिम प्रारूप (Final Try-out)—परीक्षण की योजना एवं उसके प्रारम्भिक रूप की रचना के बाद यह जानने का प्रयास होता है कि परीक्षण कितना श्रेष्ठ, वैध एवं विश्वसनीय है। परीक्षण की वास्तविक रचना से पूर्व उसके प्रारम्भिक रूप की जाँच कर लेनी चाहिये। इस प्रारम्भिक जाँच को Pilot study कहते हैं। इसके निम्न उद्देश्य होते हैं–

1. इस जाँच के द्वारा कमजोर एवं बेकार के पदों को परीक्षण से निकाल दिया जाता है।
2. परीक्षण के अन्तिम रूप में पदों की वास्तविक संख्या इंगित करना।
3. परीक्षार्थी एवं परीक्षक के उत्तरों में रुचि को व्यक्त करना।
4. विभिन्न पदों के मध्य अन्तर-सहसम्बन्ध (Inter Item correlations) ज्ञात करना।
5. समस्त पदों के उप-भागों में व्यवस्थित करना।
6. अन्तिम रूप की वास्तविक समय सीमा ज्ञात करना।
7. अंकन विधि का निश्चय करना।

प्रस्तुत सोपान के अन्तर्गत परीक्षण की जाँच दो भागों में की जाती है। प्रथम जाँच (Pre Try-out) कहलाती है तथा दूसरी जाँच (Actual Try-out) कहलाती है।

नोट

प्रथम जाँच (Pre Try-out)—प्रारम्भिक जाँच के लिए परीक्षण का प्रशासन प्रायः मूल जनसंख्या (Total populaton) के 15 या 20 लोगों पर इस उद्देश्य से किया जाता है जिससे उसकी मुख्य कमियों को पाकर दूर किया जा सके।

द्वितीय जाँच (Acual Try-out)—परीक्षण की वास्तविक जाँच के अन्तर्गत पद विश्लेषण (Item Analysis) की तकनीकी प्रक्रिया का प्रयोग किया जाता है। पद विश्लेषण एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सोपान है इसके बिना कोई भी परीक्षण पूरा नहीं होता। पद विश्लेषण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से परीक्षण निर्माता यह निश्चय करता है कि उसे परीक्षण के किन पदों (Items) को सम्मिलित करना है और किन पदों को छोड़ना है। अर्थात्, इस प्रक्रिया के मुख्य उद्देश्य निम्न दो हैं–

(*a*) To select good items to be included in the final test.

(*b*) To reject the invalid or less valid items.

चूँकि, परीक्षण निर्माता अपने परीक्षण में उन्हीं प्रश्नों को सम्मिलित करना चाहता है जो उसके उद्देश्य प्राप्ति में सहायक होते हैं, इस दृष्टि से परीक्षण को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए परीक्षण निर्माता का उसमें सम्मिलित किये जाने वाले पदों का अलग-अलग अध्ययन करना ही पद विश्लेषण कहलाता है। इस प्रक्रिया की कसौटी (criteria) के रूप में हमें प्रश्नों की विभेदीकारिता क्षमता (Item Validity Index or V.I.) तथा प्रश्नों का कठिनाई स्तर (Item Difficulty Index or D.I.) की गणना करनी होती है तथा केवल उन्ही पदों का चयन किया जाता है जो इन दोनों कसौटियों पर सही उतरते हैं।

निष्पत्ति परीक्षणों की प्रयोग विधि (Procedure of Achievement Tests)

परीक्षण के लिये विषय-वस्तु, विशिष्ट उद्देश्यों, प्रश्नों की संख्या एवं उनके विभिन्न प्रकारों का निर्धारण करने के पश्चात विषय-वस्तु की विभिन्न इकाइयों, विशिष्ट उद्देश्यों व प्रश्नों के प्रकारों को उनकी महत्ता एवं वांछनीयता (desired outcomes) के अनुसार भार (weightage) दिया जाता है। विशिष्टीकरण तालिका में विभिन्न प्रकरणों व विशिष्ट उद्देश्यों के लिए विभिन्न प्रकार के प्रश्नों की संख्या निहित रहती है। इस तालिका में बायीं और विशिष्ट उद्देश्यों एवं प्रकरणों से उनके उचित भारों के अनुरूप व्यवस्थित कर लिया जाता है तथा दायीं और प्रश्नों के विभिन्न प्रकारों के अन्तर्गत किसी विशिष्ट उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए प्रश्नों की संख्या निर्धारित की जाती है। अन्त में, उद्देश्यों एवं प्रकरणों को दिये गये भारों का योग लिख दिया जाता है। प्रश्नों के विभिन्न रूपों, जैसे—साधारण प्रत्यास्मरण रूप, स्थान पूरक परीक्षाएं, एकान्तर प्रत्युत्तर रूप, बहुनिर्वाचन रूप, मिलान परीक्षा, तर्क युक्त चयन अथवा वर्गीकरण रूप में से मुख्यतः तीन या चार रूपों का चयन करके वस्तुनिष्ठ, लघु उत्तर एवं दीर्घ उत्तर प्रश्नों को परीक्षण में एक निश्चित क्रम में रखा जाता है। समान प्रारूप के प्रश्नों को एक साथ रखना चाहिये।

इसके अतिरिक्त परीक्षण की फलांकन प्रक्रिया (scoring procedure) का निश्चय करना भी परीक्षण योजना का एक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक अंग है। अंकन विधि सरल होनी चाहिये। वस्तुनिष्ठ प्रश्नों में सामान्यतः सही उत्तर पर 1 अंक तथा गलत उत्तर पर 0 (शून्य) अंक प्रदान किया जाता है। लेकिन कभी-कभी परीक्षार्थी मात्र अनुमान से ही इन प्रश्नों का उत्तर दे देते हैं तथा फलांकन विधि अधिक प्रभावी सिद्ध नहीं हो पाती। इस दृष्टि से विभिन्न प्रकार के वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का अंकन करते समय सम्भावित त्रुटि (Probable error) को दूर करने की दृष्टि से संशोधन सूत्रों (Correction formulae) का प्रयोग करना चहिये।

नोट

विशिष्टीकरण तालिका : गणित उपलब्धि परीक्षण
(Specification Table : Maths Achievement Table)

क्रम संख्या	विशिष्ट उद्देश्य		ज्ञान (K)			अवबोध (U)			कौशल (S)			अनुप्रयोग (A)			योग
		भार	25%			35%			20%			20%			100%
	प्रकरण (Topic)	(Weightage)	प्रत्यास्मरण	सत्यासत्य	बहुविकल्प	प्रत्यास्मरण	सत्यासत्य	बहुविकल्प	प्रत्यास्मरण	सत्यासत्य	बहुविकल्प	प्रत्यास्मरण	सत्यासत्य	बहुविकल्प	
1.	प्रतिशत	15%	2	1	1	2	1	2	1	1	1	1	–	2	15
2.	लाभ और हानि	20%	2	2	1	2	2	3	2	1	1	2	1	1	20
3.	अनुपात समानुपात	20%	2	2	2	3	2	2	1	1	1	2	1	1	20
4.	साझा	10%	1	–	1	2	–	2	1	–	1	1	–	1	10
5.	चक्रवृद्धि ब्याज	20%	2	2	2	3	3	2	1	1	1	1	1	1	20
6.	वृत्त का क्षेत्रफल	15%	1	–	1	2	1	1	2	1	2	2	–	2	15
	योग	100%	10	7	8	14	9	12	8	5	7	9	3	8	100

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की भाँति निबन्धात्मक प्रश्नों का अंकन भी चार प्रकार से किया जाता है, जैसे—प्रतिशत अंकन, अक्षर विन्यास अंकन, शब्द वर्णन अंकन तथा बिन्दु अंकन। प्रतिशत अंकन में छात्रों को प्रत्येक प्रश्न पर 100 में से अंक प्रदान किये जाते हैं। अक्षर विन्यास अंकन में छात्रों को प्रत्येक प्रश्न पर A, B, C, D आदि अक्षर प्रदान किये जाते हैं। शब्द वर्णन अंकन में छात्र को प्रत्येक प्रश्न पर श्रेष्ठ, सामान्य, निकृष्ट आदि शब्द प्रदान करते हैं जबकि बिन्दु अंकन में छात्रों को विभिन्न प्रश्नों पर 0, 1, 2, 3 आदि अंक प्रदान किये जाते हैं। इन चारों अंकन विधियों से प्राप्त अंकों को एक दूसरे में परिवर्तित किया जा सकता है। निम्न तालिका इस प्रकार के परिवर्तन को स्पष्ट करती है। सुविधा की दृष्टि से विभिन्न प्रकार के अंकनों में कितने ही वर्ग रखे जा सकते हैं।

प्रतिशत अंकन	0–20	21–40	41–70	71–90	91–100
अक्षर विन्यास अंकन	E	D	C	B	A
शब्द वर्णन अंकन	अत्यन्त निष्कृष्ट	निष्कृष्ट	सामान्य	श्रेष्ठ	अत्यन्त श्रेष्ठ
बिन्दु अंकन	0	1	2	3	4

(*d*) **परीक्षण का मूल्यांकन (Evaluation)**—परीक्षण का मूल्यांकन निम्न दो बातों को ध्यान में रखकर किया जाता है—

1. परीक्षा कितनी वैध, विश्वसनीय, विभेदीकारी या वस्तुनिष्ठ है अर्थात्, परीक्षण में आदर्श मापन यंत्र की विशेषताएँ किस सीमा तक उपस्थित हैं।

नोट

2. परीक्षा देने वालों के उत्तरों का स्वरूप कैसा है अर्थात्, विद्यालयों में विषय का शिक्षण किस प्रकार चल रहा है। उत्तम प्रकार के परीक्षण ही यह सूचना विश्वस्त रूप से दे सकते हैं। अत: परीक्षण का मूल्यांकन उत्तम मापन की भावी कसौटियों को ध्यान में रखकर ही किया जाता है।

परीक्षण की विश्वसनीयता परीक्षण—पुनर्परीक्षण विधि, समानान्तर प्रारूप विधि, अर्द्ध-विटापन विधि तथा कूडर रिचर्डसन फार्मूला में से किसी भी एक विधि का प्रयोग करके ज्ञात की जा सकती है। साधारणत: .80 या उससे अधिक विश्वसनीयता वाला परीक्षण अच्छा परीक्षण माना जाता है। इसी प्रकार परीक्षण की वैधता बाह्य वैधता, विषय वस्तु वैधता, विशेषज्ञ वैधता, कारक वैधता या पूर्वकथन वैधता आदि विधियों में से किसी एक विधि से ज्ञात की जा सकती है। साधारणत: .60 या उससे अधिक वैधता वाला परीक्षण अच्छा परीक्षण माना जाता है। मानकों की दृष्टि से आयु मानक, ग्रेड मानक, शतांशीय मानक तथा टी-मानक आदि स्थापित किये जाते हैं। सबसे अन्त में परीक्षण निर्देशिका तैयार की जाती है। इसमें परीक्षण से सम्बन्धित समस्त जानकारी विस्तार से दी जाती है अर्थात्, परीक्षण निर्देशिका में परीक्षण का उद्देश्य, विश्वसनीयता, वैधता का मानक आदि का वर्णन प्रस्तुत रहता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. सही विकल्प चुनिए (Choose the correct Option)—

1. .... परीक्षा निष्पत्ति परीक्षण का रूप नहीं है—

   (अ) निबन्धात्मक परीक्षण (ब) वस्तुनिष्ठ परीक्षण

   (स) प्रयोगात्मक परीक्षण (द) मनोवैज्ञानिक परीक्षण

2. विश्वविद्यालय परीक्षण तथा बोर्ड की परीक्षाओं में आज भी .... ही प्रयुक्त की जाती है।

   (अ) निबन्धात्मक परीक्षा (ब) वस्तुनिष्ठ परीक्षा

   (स) मनोवैज्ञानिक परीक्षा (द) निदानात्मक परीक्षा

3. .... निष्पत्ति परीक्षण के अंतिम प्रारूप का उद्देश्य नहीं है—

   (अ) कमजोर एवं बेकार के पदों को परीक्षण से निकाल देना।

   (ब) परीक्षण के अंतिम रूप में पदों की वास्तविक संख्या इंगित करना।

   (स) विभिन्न स्त्रोतों से परीक्षण को एकत्रित करना।

   (द) अंकन विधि का निश्चय करना।

4. निष्पत्ति परीक्षण के निर्माण प्रक्रिया के दौरान प्रारंभिक जाँच के लिए परीक्षण का प्रशासन प्राय: मूल जनसंख्या के .... लोगों पर इस उद्देश्य से किया जाता है, जिससे उसकी मुख्य कमियों को दूर किया जा सके।

   (अ) 10 से 15 (ब) 15 से 20

   (स) 20 से 25 (द) 25 से 30

25.6 उपलब्धि परीक्षण का महत्त्व तथा सीमाएँ (Importance and Limitations of Achievement Test)

1. निष्पत्ति परीक्षण व्यक्ति की अमुक कार्य में निम्नतम योग्यताओं के मापन में सहायक होते हैं।
2. उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में व्यक्तियों के चयन एवं विद्यालय में छात्रों के प्रवेश हेतु किया जाता है।
3. निष्पत्ति परीक्षणों का उपयोग विभिन्न प्रकार के वर्गीकरण एवं नियुक्ति करने में विस्तृत रूप से किया जाता है।
4. ये परीक्षण वर्ग निर्धारण एवं पदोन्नति में प्रयोग की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

नोट

5. ये परीक्षण बालकों को शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करने में भी सहायक होते हैं।
6. चिकित्सा एवं संदर्शन (Counseling) के क्षेत्र में उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता है। शैक्षिक उपलब्धियों में विशेष रूप से पिछड़े हुए विद्यार्थियों की पहचान, निदान एवं उपचारात्मक शिक्षण (Remedial Teaching) की दृष्टि से ये परीक्षाएं अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। विभिन्न चिकित्सक कार्यों में इन परीक्षणों का महत्व दर्शाते हुए **एनेस्टेसी (Anastasi)** लिखते हैं—

"In cases of truancy, behaviour problems and delinquency, for example, educational failures and maladjustment to the school situations may be contributing factors, Similarly, emotional maladjustments among intellectually gifted children are sometimes found to be associated with improper educational placements."

7. इन परीक्षणों द्वारा सीखने में सुविधा प्रदान की जाती है। छात्र को यह भली भाँति ज्ञात रहता है कि उसने कितना पढ़ना शेष है। भविष्य में सीखने हेतु प्रेरणा भी मिलती है।
8. इन परीक्षणों की सहायता से अध्यापक की कुशलताओं एवं प्रभावशीलता का मूल्यांकन किया जाता है।
9. ये परीक्षण विभिन्न विधियों की प्रभावात्मकता का भी मूल्यांकन करते हैं तथा श्रेष्ठ विधि के चयन में अध्यापक की सहायता करते हैं।
10. इन परीक्षणों के आधार पर विभिन्न विद्यालयों के शैक्षिक स्तरों का भी तुलनात्मक अध्ययन सम्भव है।
11. इन परीक्षणों का प्रयोग पाठ्य-वस्तु के संशोधन में भी सहायक होता है।
12. इन परीक्षणों से विद्यार्थी में धैर्य, विनय, श्रम की प्रवृत्ति आदि गुणों का विकास होता है।
13. ये परीक्षण विद्यार्थी की सर्वतोन्मुखी मानसिक योग्यता का ज्ञान कराते हैं।
14. इसके निर्माण करने तथा सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन से शिक्षकों में अपनी व्यावसायिक वृत्ति का विकास होता है।
15. अभिभावकों को रिपोर्ट देना तथा विद्यार्थियों को प्रमाण पत्र प्रदान करना।

उपलब्धि परीक्षणों की परिसीमाएँ (Limitations of Achievement Tests)

उपरोक्त विशेषताओं के होते हुए भी उपलब्धि परीक्षणों की अपनी कुछ परिसीमाएँ भी हैं, जो निम्न हैं—

1. ये परीक्षाएं स्थानीय प्रयोग की दृष्टि से अनुपयुक्त हैं।
2. इन परीक्षाओं में प्राय: समरूप परीक्षाओं (Parallel form of tests) का अभाव रहता है।
3. उपलब्धि परीक्षाएं विद्यालय में पढ़ाये जाने वाले केवल कुछ ही विषयों के लिए प्राप्य हैं। कुछ विषय ऐसे भी होते हैं जिनमें इन परीक्षणों का निर्माण कार्य सरल नहीं।
4. इन परीक्षाओं का निर्माण, मूल्यांकन एवं व्याख्या कठिन कार्य है। साथ ही, इन परीक्षणों के निर्माण में समय एवं शक्ति भी अधिक व्यय होती है।
5. इन परीक्षाओं के निर्माण, प्रमापीकरण, छपाई, कुन्जी, सामान्यक, निर्देश पुस्तिका आदि तैयार करने में बहुत व्यय होता है।

25.7 निष्पत्ति परीक्षण का उपयोग (Use of Achievement Test)

निष्पत्ति परीक्षण का उपयोग साधारणत: शिक्षा, उद्योग, सार्वजनिक सेवाओं, सेना, निर्देशन तथा परामर्श आदि क्षेत्रों में किया जाता है। इन परीक्षणों का उपयोग प्रमुख रूप से अधोलिखित कार्यों में किया जाता है—

(1) अनुपस्थितियाँ अथवा श्रेणी प्रदान करना,

(2) अगली कक्षा में पदोन्नति,

(3) विभिन्न सेवाओं में चयन,

नोट

(4) सेवाओं में पदोन्नति के लिए,

(5) छात्रों का वर्गीकरण।

(1) अनुस्थितियाँ अथवा श्रेणी प्रदान करना (Assigning Grades or Division)—निष्पत्ति परीक्षण का प्रमुख कार्य यह है कि छात्रों को पास और फेल दो वर्गों में विभाजित करना, और पास हुए छात्रों को श्रेणी प्रदान करना। छात्रों को प्राप्तांकों या प्रतिशत के आधार पर उन्हें श्रेणियाँ प्रदान करना। संयुक्त राज्य अमेरिका में श्रेणी के स्थान पर अनुस्थितियाँ प्रदान की जाती हैं। अनुस्थितियों के लिए प्रमाणिक परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। इन अनुस्थितियों के लिए परीक्षण का प्रयोग किया जाता है। इन अनुस्थितियों एवं श्रेणी के आधार पर छात्रों की शैक्षिक योग्यता का बोध होता है।

(2) अगली कक्षा में पदोन्नति (Promotion to Next Class)—जो छात्र परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाते हैं, वो अगली कक्षा के लिए अहं समझे जाते हैं, और अगली कक्षा में प्रवेश शैक्षिक वरीयता के आधार पर दिया जाता है और जो अनुत्तीर्ण होते हैं उन्हें अगली कक्षा में प्रवेश नहीं दिया जाता है।

(3) विभिन्न सेवाओं में चयन (Selection for Different Services)—विभिन्न सेवाओं के चयन में इन्हीं शैक्षिक योग्यताओं को महत्व दिया जाता है और अच्छी योग्यता वाले अभ्यर्थियों को साक्षात्कार के लिए बुलाया जाता है। अनेक संस्थाओं ने चयन परीक्षण का प्रयोग करना आरम्भ कर दिया है। चयन परीक्षण में जो अधिक अंक प्राप्त करते हैं, उन्हीं का चयन साक्षात्कार के लिए किया जाता है।

(4) सेवाओं में पदोन्नति के लिए (Promotion in Services)—अनेक संस्थाओं में पदोन्नति के लिए निष्पत्ति परीक्षाओं का प्रयोग करते हैं, जो अभ्यर्थी इन परीक्षणों में अधिक अंक प्राप्त करते हैं, उनकी पदोन्नति की जाती है, विशेषकर बैंक की सेवाओं में इस प्रकार के परीक्षणों का अधिक उपयोग किया जाता है।

(5) छात्रों का वर्गीकरण (Classification of Students)—निष्पत्ति परीक्षणों का प्रयोग विभिन्न पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए वर्गीकरण किया जाता है जैसे—विज्ञान के पाठ्यक्रम, कृषि के पाठ्यक्रम एवं कला आदि के पाठ्यक्रम। व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में भी निष्पत्ति परीक्षण के आधार पर ही वर्गीकरण करके विभिन्न पाठ्यक्रमों में प्रवेश दिया जाता है।

टास्क निष्पत्ति परीक्षण की प्रथम जाँच किस प्रकार की जाती है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

3. निम्नलिखित कथनों में 'सही' अथवा 'असत्य' लिखिए—

1. निष्पत्ति परीक्षण का उपयोग साधारणत: शिक्षा, उद्योग, सार्वजनिक सेवाओं, निर्देशन तथा परामर्श आदि क्षेत्रों में किया जाता है।
2. विभिन्न सेवाओं में शैक्षिक योग्यताओं को महत्व नहीं दिया जाता है।
3. निष्पत्ति परीक्षणों की सहायता से अध्यापक की कुशलताओं तथा प्रभावशीलता का मूल्यांकन किया जाता है।
4. निष्पत्ति परीक्षण स्थानीय प्रयोग की दृष्टि से उपयुक्त हैं।

25.8 सारांश (Summary)

- बालक विद्यालय में रहकर जो कुछ सीखता है उसे हम उपलब्धि (achievement) कहते हैं तथा इस उपलब्धि की जाँच के लिए जो परीक्षाएं ली जाती हैं उन्हें उपलब्धि परीक्षण (achievement test) कहते हैं।

नोट

- उपलब्धि परीक्षा द्वारा बालकों की योग्यता की तुलना की जाती है। इस परीक्षा में हम सापेक्षिक सफलता (relative achievement) पर बल देते हैं न कि पूर्ण सफलता (absolute achievement) पर।
- 1. इन परीक्षाओं का उद्देश्य पूर्व निर्धारित होता है।

  2. ये परीक्षाएं विभिन्न कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए अलग-अलग बनायी जाती हैं।

  3. इन परीक्षणों की पाठ्य-वस्तु छात्रों के स्तर, योग्यताओं, रुचियों एवं क्षमताओं के अनुकूल होती हैं।

  4. ये परीक्षण व्यावहारिक दृष्टिकोण से उपयोगी होते हैं।

  5. इन परीक्षणों का प्रशासन, अंकन, समय सीमा आदि पहले से ही निश्चित कर ली जाती है।
- परीक्षण निर्माण के मुख्य सिद्धान्त निम्न हैं—
  1. किसी भी प्रकार के परीक्षण से विषय विशेष के सभी उद्देश्यों की परीक्षा नहीं ली जा सकती।
  2. परीक्षा का प्रारूप अत्यन्त व्यापक (Comprehensive) होना चाहिये।
  3. द्वि-अर्थी एवं भ्रामक प्रश्नों को परीक्षा में स्थान नहीं देना चाहिये।
  4. परीक्षण में प्रश्नों की संख्या पर्याप्त होनी चाहिये। प्रथम प्रशासन (First Try-out) में प्रश्नों की संख्या परीक्षा के वास्तविक प्रश्नों से लगभग दुगुनी होनी चाहिये।
  5. ऐसे प्रश्न बनाये जायें जिनसे छात्रों के ज्ञान की व्यावहारिक क्षमता का मूल्यांकन किया जा सके।
- निष्पत्ति परीक्षण तीन प्रकार के होते हैं—
  1. लिखित परीक्षण (Written Test),
  2. मौखिक परीक्षण (Oral Tests) तथा
  3. प्रयोगात्मक परीक्षण (Experimental Test)।
- **लिखित परीक्षण**—निष्पत्ति परीक्षणों में लिखित परीक्षणों का विशेष महत्व है क्योंकि इनका प्रयोग सभी प्रकार के पाठ्यक्रमों के निष्पत्ति परीक्षणों में किया जाता है।
- निबन्धात्मक परीक्षण (Essay Type Tests)

  वस्तुनिष्ठ परीक्षण (Objective Type Tests) तथा

  सूक्ष्म उत्तर परीक्षण (Short Answer Type Tests)

  यह तीनों प्रकार के परीक्षण शैक्षिक निष्पत्तियों के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं, परन्तु विश्वविद्यालय परीक्षण तथा बोर्ड की परीक्षाओं में आज भी निबन्धात्मक परीक्षाएँ ही प्रयुक्त की जाती है
- वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की कई विशेषताएँ हैं, और इन्हें प्रामाणिक भी बनाया जा सकता है, परन्तु शिक्षा उच्च उद्देश्यों का मापन नहीं किया जास सकता है वस्तुनिष्ठ परीक्षा में प्रश्नों को अनुमान से सही करने का भी अवसर होता है इसलिए सूक्ष्म उत्तर परीक्षणों का प्रयोग में लाते हैं।
- परीक्षण निर्माण के मुख्य सोपान निम्न हैं:

  (*a*) परीक्षण की योजना बनाना (Planning)

  (*b*) तैयारी (Preparation)

  (*c*) परीक्षण का अन्तिम प्रारूप (Final Try-out)

  (*d*) परीक्षण का मूल्यांकन (Evaluation)

  (*a*) परीक्षण की योजना बनाना (Planning)—जिस प्रकार जीवन में किसी कार्य को करने से पूर्व उसकी एक सुनिश्चित योजना बनानी पड़ती है।

  (*b*) तैयारी (Preparation)—परीक्षण की निश्चित एवं व्यवस्थित योजना बनाने के पश्चात ही परीक्षण निर्माता परीक्षण निर्माता परीक्षण के प्रारम्भिक रूप की तैयारी करने लगता हैं। सर्वप्रथम, उद्देश्यों एवं विषय-वस्तु के अनुसार वह विभिन्न पदों (items) का अन्य स्रोतों से चयन एवं स्वयं निर्माण करता है।

नोट

(*c*) **परीक्षण का अन्तिम प्रारूप (Final Try-out)**—परीक्षण की योजना एवं उसके प्रारम्भिक रूप की रचना के बाद यह जानने का प्रयास होता है कि परीक्षण कितना श्रेष्ठ, वैध एवं विश्वसनीय है। परीक्षण की वास्तविक रचना से पूर्व उसके प्रारम्भिक रूप की जाँच कर लेनी चाहिये।

इसके निम्न उद्देश्य हैं—

1. इस जाँच के द्वारा कमजोर एवं बेकार के पदों को परीक्षण से निकाल दिया जाता है।
2. परीक्षण के अन्तिम रूप में पदों की वास्तविक संख्या इंगित करना।

- **प्रथम जाँच** (Pre Try-out)—प्रारम्भिक जाँच के लिए परीक्षण का प्रशासन प्रायः मूल जनसंख्या (Total populaton) के 15 या 20 लोगों पर इस उद्देश्य से किया जाता है जिससे उसकी मुख्य कमियों को पाकर दूर किया जा सके।
- **द्वितीय जाँच** (Acual Try-out)—परीक्षण की वास्तविक जाँच के अन्तर्गत पद विश्लेषण (Item Analysis) की तकनीकी प्रक्रिया का प्रयोग किया जाता है। पद विश्लेषण एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सोपान है इसके बिना कोई भी परीक्षण पूरा नहीं होता। पद विश्लेषण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से परीक्षण निर्माता यह निश्चय करता है कि उसे परीक्षण के किन पदों (Items) को सम्मिलित करना है और किन पदों को छोड़ना है।
- **उपलब्धि परीक्षणों की परिसीमाएँ (Limitations of Achievement Tests)**—उपरोक्त विशेषताओं के होते हुए भी उपलब्धि परीक्षणों की अपनी कुछ परिसीमाएँ भी है, जो निम्न हैं—
  1. ये परीक्षाएं स्थानीय प्रयोग की दृष्टि से अनुपयुक्त हैं।
  2. इन परीक्षाओं में प्रायः समरूप परीक्षाओं (Parallel forms of tests) का अभाव रहता है।
  3. उपलब्धि परीक्षाएं विद्यालय में पढ़ाये जाने वाले केवल कुछ ही विषयों के लिए प्राप्य हैं। कुछ विषय ऐसे भी होते हैं जिनमें इन परीक्षणों का निर्माण कार्य सरल नहीं।
  4. इन परीक्षाओं का निर्माण, मूल्यांकन एवं व्याख्या कठिन कार्य है। साथ ही, इन परीक्षणों के निर्माण में समय एवं शक्ति भी अधिक व्यय होती है।
- निष्पत्ति परीक्षण का उपयोग साधारणतः शिक्षा, उद्योग, सार्वजनिक सेवाओं, सेना, निर्देशन तथा परामर्श आदि क्षेत्रों में किया जाता है। इन परीक्षणों का उपयोग प्रमुख रूप से अधोलिखित कार्यो में किया जाता है—

  (1) अनुपस्थितियाँ अथवा श्रेणी प्रदान करना,

  (2) अगली कक्षा में पदोन्नति,

  (3) विभिन्न सेवाओं में चयन,

  (4) सेवाओं में पदोन्नति के लिए,

  (5) छात्रों का वर्गीकरण।

25.9 शब्दकोश (Keywords)

- **निष्पत्ति**—निश्चित नियम के अंतर्गत तुलना।
- **परीक्षण**—जाँच।
- **सापेक्षिक**—किसी व्यक्ति या वस्तु के सापेक्ष दूसरे की तुलना।
- **व्यापक**—विस्तारित।

25.10 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

नोट

1. निष्पति परीक्षण की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।
2. निष्पत्ति परीक्षण की निर्माण प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।
3. निष्पत्ति परीक्षण के महत्व तथा सीमाओं को समझाइये
4. निष्पत्ति परीक्षण की मुख्य विशेषताएँ क्या हैं?
5. निष्पत्ति परीक्षण के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1.	1. सही	2. सापेक्षिक सफलता	3. विषय सामग्री	4. व्यावहारिक क्षमता
	5. विवरण पुस्तिका।			
2.	1. (घ)	2. (क)	3. (क)	4. (ख)
3.	1. सत्य	2. असत्य	3. सत्य	4. असत्य

25.11 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*— डा. आर. ए. शर्मा, आर. लाल बुक डिपो।
2. *शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का विकास*— सुरेश भटनागर, आर. लाल बुक डिपो।
2. *मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन*— भटनागर और भटना, आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–26: निदानात्मक परीक्षण: अवधारणा, प्रकार तथा उपचारात्मक शिक्षण (Diagnostic Test : Concept, Types and Remedial Teaching)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

26.1 निदानात्मक परीक्षण की अवधारणा (Concept of Diagnostic Test)

26.2 निदानात्मक परीक्षण का उद्देश्य (Aim of Diagnostic Test)

26.3 निदानात्मक परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Diagnostic Test)

26.4 निदानात्मक परीक्षण के प्रकार (Types of Diagnostic Test)

26.5 निदानात्मक परीक्षण का निर्माण एवं मानकीकरण (Construction and Standardization of Diagnostic Test)

26.6 निदान की प्रक्रिया (Process of Diagnosis)

26.7 उपचारात्मक शिक्षण (Remedial Teaching)

26.8 सारांश (Summary)

26.9 शब्दकोश (Keywords)

26.10 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

26.11 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- निदानात्मक परीक्षण की अवधारणा, प्रकार, उद्देश्य एवं विशेषताओं की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

निदानात्मक परीक्षाएँ कमज़ोर छात्रों के कारणों का पता लगाने के लिए ली जाती हैं। अत: इन परीक्षाओं को लेने से पूर्व यह ज्ञात करना नितान्त आवश्यक है कि कमज़ोर छात्र कौन कौन से हैं। इसके लिए पहले योग्यता की परीक्षाएँ (Attaintment Test) लेनी आवश्यक हैं।

योग्यता संबंधी परीक्षा लेने में कई शैक्षणिक विषयों की सहायता ली जा सकती है, क्योंकि कक्षा में जो विषय जाते हैं उनसे यह समझा जाता है कि इनसे छात्र की योग्यता में वृद्धि होती है। यदि सम्भव हो तो अध्यापक स्वयं भी इसका

नोट

निर्माण कर सकता है। योग्यता की परीक्षा लेने के बाद अध्यापक के समक्ष कक्षा का स्पष्ट चित्र आ जाता है तथा जान जाता है कि कक्षा में कितने छात्र योग्य, कितने औसत तथा कितने कमज़ोर हैं, और वे छात्र कौन-कौन से हैं। निदान शब्द का प्रयोग साधारणतया डाक्टरी विद्या में किया जाता है, जब भी कोई मरीज़ डाक्टर के पास चिकित्सा के लिए आता है तो वह रोग का निदान (Diagnose) करने के उपरान्त ही उसकी उपयुक्त चिकित्सा करता है। यदि डाक्टरों की निदान प्रणाली में किसी प्रकार की त्रुटि रह जाती है तो उस रोगी का स्वास्थ्य भी शीघ्रता से ठीक नहीं होता, इसी प्रकार अध्यापक भी यदि किसी विद्यार्थी की कमज़ोरियों के कारणों का पता लगाने में भूल कर जाये तो उसके निर्देश भी उतने सफ़ल नहीं होंगे।

26.1 निदानात्मक परीक्षण की अवधारणा (Concept of Diagnostic Test)

निदानात्मक परीक्षाएं उपलब्धि परीक्षण का ही एक रूप है जिसके अन्तर्गत विशिष्ट वस्तु अथवा अधिगम अनुभव के अर्जित ज्ञान की विशिष्टताओं एवं कमियों का मूल्यांकन किया जाता है। शैक्षणिक निदान का सम्बन्ध विद्यार्थियों की व्यक्तिगत योग्यताओं एवं क्षमताओं की जाँच से ही नहीं वरन् उनकी क्षमताओं, कमजोरियों एवं कठिनाइयों के उपचार से भी है। विशिष्ट बालकगत कमजोरी एवं कठिनाई को दूर करने हेतु अध्यापक को अपनी अध्यापन विधि में आवश्यक परिवर्तन लाना पड़ता है ताकि बालक अपनी योग्यतानुसार अधिकतम अधिगम अनुभव प्राप्त कर सके। इस अध्यापक प्रक्रिया को उपचारात्मक अध्यापन (Remedial Teaching) कहते हैं। जिस प्रकार एक सफल चिकित्सक किसी रोगी की चिकित्सा करने से पूर्व उसके रोग का निरीक्षण करता है, रोग का कारण जानने के लिए यन्त्रों का सहारा लेता है तथा रोगी का पूरा इतिहास तैयार करके रोगियों से उस रोग के लक्षणों की तुलना करके चिकित्सा प्रारम्भ करता है ठीक उसी प्रकार एक सफल अध्यापक भी सर्वप्रथम यह ज्ञात करता है कि बालक किन कारणों से विषय को समझने में कठिनाई अनुभव कर रहा है? उसके कठिनाई के स्थल कौन-कौन से हैं? तथा ऐसे और कितने विद्यार्थी हैं जो उस छात्र की श्रेणी में आते हैं? इन कठिनाइयों अथवा अयोग्यताओं के स्वभाव को समझने के बाद वह उन कारणों को जानने के लिए उन बालकों का अध्ययन करता है जो ऐसी कठिनाइयां अनुभव कर रहें हैं। वह इन कठिनाइयों के कारण शारीरिक दोषों में, हीन भावनाओं में, संवेगों में, बुरी आदतों में, रुचि की न्यूनता में, दोष पूर्ण अध्यापन विधि में तथा घरेलू दूषित वातावरण में ढूँढने का प्रयास करता है। नि:सन्देह अध्यापक का यह कार्य चिकित्सक के कार्य से अत्यन्त जटिल है, क्योंकि किसी रोग का कारण जीवाणु (Virus) हो सकता है लेकिन शिक्षा सम्बन्धी कारण इतने जटिल होते हैं कि उनका विश्लेषण करना कठिन हो जाता है जिसके लिए अध्यापक विभिन्न प्रकार की विधियों, परीक्षणों एवं उपकरणों का सहारा लेता है। बालक की कमजोरी का इस प्रकार निदान कर चुकने के पश्चात् वह फिर विविध उपचारिक विधियों (Remedial methods) की सहायता से उपचार करता है और बालक की कमजोरी को दूर करने का प्रयास करता है। इस पूरी क्रिया को शैक्षणिक निदान कहते हैं। कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार हैं—

1. "निदानात्मक परीक्षण व्यक्ति की जाँच करने के पश्चात् किसी एक या अधिक क्षेत्रों में उसकी विशेषताओं एवं कमियों को व्यक्त करता है।"

(A diagnostic test is one designed to reveal a person's strength and weakness in one or more areas of the field being tested.)

> *नोट्स* इन परीक्षाओं से विद्यार्थियों के स्तर का पता नहीं लगाया जाता बल्कि विद्यार्थी किसी विषय को समझने में क्या कठिनाई अनुभव कर रहा है। इस कठिनाई का क्या कारण हो सकता है? तथा यह कठिनाई किस प्रकार दूर की जा सकती है? आदि प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए अध्यापक को निदान (Diagnosis) की आवश्यकता पड़ती है।

नोट

26.2 निदानात्मक परीक्षण का उद्देश्य (Aim of Diagnostic Test)

निदानात्मक परीक्षाओं के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार हैं–

1. अध्यापक को अपनी अध्यापन प्रक्रिया में समुचित सुधार हेतु परामर्श प्रदान करना।
2. विशिष्ट विषय-वस्तुगत अधिगम इकाई में प्राप्त गुणों के आधार पर विद्यार्थी एवं अभिभावक को शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करना।
3. छात्र की विषय सम्बन्धी कमियों (weaknesses), हीनताओं (deficiencies) तथा कठिनाइयों (difficulties) की जानकारी प्राप्त करना।
4. शिक्षण-अधिगम (Teaching-Learning) की परिस्थितियों को प्रभावशाली बनाना।
5. विभिन्न विषय सम्बन्धी विशिष्टताओं एवं कमियों के आधार पर पाठ्यपुस्तकों अथवा पाठ्यक्रम में परिवर्तन लाना तथा उन्हें छात्रों की दृष्टि से अधिक उपयोगी बनाना।
6. साफल्य परीक्षा (Achievement Test) के निर्माण हेतु विभिन्न प्रकार के प्रश्नों के चयन में सहायता करना।
7. मूल्यांकन प्रक्रिया को और अधिक सार्थक एवं प्रभावशाली बनाने में सहायता करना।
8. समस्याओं के निदान सम्बन्धी कारणों की जानकारी प्राप्त करने हेतु विभिन्न प्रकार के परीक्षणों, प्रविधियों एवं उपकरणों के चयन में सहायता प्रदान करना।
9. उपचारात्मक शिक्षण (Remedial Teaching) की व्यवस्था करना।

26.3 निदानात्मक परीक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Diagnostic Test)

किसी निदानात्मक परीक्षा को अध्यापक एवं छात्रों की दृष्टि से उपयोगी होने के लिए उसमें निम्न गुणों का होना अपेक्षित है–

1. ये परीक्षाएं पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग होती हैं।
2. ये परीक्षाएं प्रमापीकृत होती हैं परन्तु कुछ विशेषज्ञों का विचार है कि निदानात्मक परीक्षाओं को प्रमापीकृत नहीं किया जाता है।
3. ये परीक्षाएं विशिष्ट उद्देश्यों (specific objectives) के अनुरूप होती हैं।
4. ये परीक्षाएं बालक की योग्यता का मापन नहीं करतीं बल्कि विषय सम्बन्धी कमजोरी का निदान करके उसके उपचार की व्यवस्था करती हैं।
5. इन परीक्षाओं में समय सीमा निर्धारित नहीं की जाती।
6. ये परीक्षाएं विश्लेषणात्मक होती हैं तथा किसी भी प्रक्रिया के अंशों का पूर्ण विश्लेषण करती हैं।
7. इन परीक्षाओं का आधार ऐसे तथ्य या मानक होते हैं जिन्हें प्रयोगों के आधार पर स्थापित किया जाता है।
8. इन परीक्षाओं में विद्यार्थी द्वारा प्राप्त अंकों को कोई महत्व नहीं दिया जाता। इसमें तो केवल यह देखा जाता है कि विद्यार्थी किस स्तर की कठिनाई वाले प्रश्नों को हल कर लेता है।
9. ये परीक्षाएँ सीखने वाले (Learner) की मानसिक प्रक्रिया के स्वरूप को बिल्कुल स्पष्ट कर देती हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)–

1. .... का सम्बन्ध विद्यार्थियों की व्यक्तिगत योग्यताओं एवं क्षमताओं की जाँच से ही नहीं वरन् उनकी क्षमताओं, कमज़ोरियों एवं कठिनाइयों के उपचार से भी है।
2. निदानात्मक परीक्षाएँ .... होती है।
3. .... निदानात्मक परीक्षाओं का अभिन्न अंग है।
4. निदानात्मक परीक्षाएँ सीखने वाले की .... के स्वरूप को बिल्कुल स्पष्ट कर देती हैं।

नोट

26.4 निदानात्मक परीक्षण के प्रकार (Types of Diagnostic Test)

निदान की परीक्षण विधि भी दो प्रकार की होती है–

(1) निरीक्षण विधि (Observational Technique) तथा

(2) निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Test)।

(1) निरीक्षण विधि (Observational Method)–सामान्य अर्थो में यह परीक्षण नहीं है अपितु निरीक्षण विधि है, जिसमें साक्षात्कार भी किया जाता है। छात्रों से व्यक्तिगत सम्पर्क करके उनकी परिस्थितियों के बारे में जानकारी की जाती है, अनौपचारिक ढंग से भी निरीक्षण करते हैं। इस प्रकार के निरीक्षणों के द्वारा उनकी कमजोरियों को जानने का प्रयास करते हैं, जिसके लिए शैक्षिक निर्देशन तथा व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुसार सहायता दी जाती है। यह विधि अधिक विश्वसनीय नहीं है, इसलिए इसका प्रयोग नहीं होता है। इसमें व्यक्तिगत समावेश अधिक होता है।

(2) आधुनिक निदान के अन्तर्गत छात्र के व्यवहार के सभी क्षेत्रों को सम्मिलित किया जाता है, उसे एक क्षेत्र तक संकुचित रूप में सीमित नहीं रखते हैं। इस निदान के प्रारूप में सामान्य क्षेत्रों की अयोग्यताएं उद्देश्यों एवं विधियों का विभिन्न व्यक्ति पर प्रभाव का अध्ययन किया जाता है, इसके अन्तर्गत सामूहिक निदान किया जाता है। केवल एक व्यक्ति के निदान तक सीमित नहीं रखा जाता है।

(3) आधुनिक निदान की प्रक्रिया के अन्तर्गत संचयी आलेखों या सतत् परीक्षणों का प्रयोग होता है। इस प्रकार के निदान अधिक शुद्ध एवं विश्वसनीय होते हैं।

26.5 निदानात्मक परीक्षण का निर्माण एवं मानकीकरण (Construction and Standardization of Diagnostic Test)

जिस विषय की नैदानिक परीक्षा का हमें निर्माण करना होता है सर्वप्रथम उस विषय का सूक्ष्म विश्लेषण किया जाता है तथा यह निश्चय किया जाता है कि उस विषय में योग्यता मापन के लिये हमें उस विषय के किन मूल प्रत्ययों, सिद्धान्तों, नियमों, तथ्यों, सूत्रों अथवा मूल प्रक्रियाओं पर विशेष महत्व (weightage) देना है। इसके अतिरिक्त विद्यार्थी की उन मानसिक योग्यताओं जैसे–तर्क शक्ति, विचार शक्ति, निरीक्षण शक्ति आदि का भी विश्लेषण करना है जो उपरोक्त ज्ञान से सीधी जुड़ी हैं। उदाहरणार्थ–गणित में योग्यता प्राप्त करने के लिए बहुत से मूलभूत सिद्धान्तों, नियमों, सूत्रों जैसे–गुणा, भाग, जोड़, घटाना आदि बहुत सी मूलभूत क्रियाओं का ज्ञान होना आवश्यक है। साथ ही, विषय सम्बन्धी विभिन्न मानसिक योग्यताओं जैसे–तर्क, विचार एवं निरीक्षण आदि शक्तियों का उपयोग भी महत्वपूर्ण है। इसके पश्चात् जब उस विषय तथा उस विषय में प्रयोग होने वाली विभिन्न मानसिक क्रियाओं का विश्लेषण कर लिया जाता है तो फिर प्रत्येक मूल प्रत्यय, सिद्धान्त, नियम, सूत्र, प्रक्रियाओं तथा मानसिक क्रियाओं पर आधारित बहुत से प्रश्न बनाये जाते हैं। ये प्रश्न अत्यन्त ही सरल होते हैं तथा 'सरल से कठिन की ओर' क्रम में लिख लिये जाते हैं। विद्यार्थी के कठिनाई स्थलों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए किसी क्रिया या सिद्धान्त विशेष पर आधारित जिन प्रश्नों से आगे परीक्षार्थी प्रश्न हल नहीं कर पाता उससे यह अनुमान लगा लिया जाता है कि विद्यार्थी इससे अधिक कठिनता स्तर के प्रश्न करने में असमर्थ है। उदाहरणार्थ-बीजगणित की निदानात्मक परीक्षा में सरल समीकरण पर आधारित प्रश्न कुछ इस प्रकार हैं–

(*a*) य + 4 = 27

(*b*) 6 य + 7 = 25

(*c*) 5 य + .6 = 5.8

(*d*) .27 य – .19 य = 42

(*e*) 4 य + 2 = .9 य + 1

अब मान लीजिए परीक्षार्थी इन प्रश्नों को हल करते समय प्रथम दो प्रश्न तो सही हल कर लेता है लेकिन उससे आगे के दशमलव सम्बन्धी या अन्य प्रकार के प्रश्न हल नहीं कर पाता तो हम यह निष्कर्ष निकाल लेते हैं कि विद्यार्थी सरल समीकरण सम्बन्धी सरल प्रश्नों को तो हल कर सकता है लेकिन दशमलव सम्बन्धी प्रश्नों को हल नहीं कर सकता। अत: विषय अध्यापक अपना ध्यान इस ओर केन्द्रित कर देता है तथा उन कारणों का निदान करता है कि जिनकी वजह से विद्यार्थी दशमलव सम्बन्धी सरल समीकरण पर आधारित प्रश्नों को हल नहीं कर पाता। यूँ तो निदानात्मक परीक्षणों का निर्माण एवं मानकीकरण प्रक्रिया उपलब्धि परीक्षणों के ही समान है, फिर भी ये दोनों परीक्षण कुछ सीमा में भिन्न हैं। निदानात्मक परीक्षण व्यक्ति केन्द्रित तथा समूह केन्द्रित दो प्रकार का होता है। व्यक्ति केन्द्रित में विद्यार्थी विशेष की कमजोरियों तथा योग्यताओं को ध्यान में रखकर परीक्षण पदों का निर्माण किया जाता है जबकि समूह केन्द्रित परीक्षण में समूह की सामूहिक विशिष्ट त्रुटियों (Specific group errors) अथवा कमजोरियों को ध्यान में रखकर परीक्षण पदों का निर्माण किया जाता है। परीक्षण पदों के निर्माण हेतु छात्रों द्वारा की जाने वाली सामान्य एवं विशिष्ट त्रुटियों को एकत्रित किया जाता है। इन त्रुटियों के प्रकार एवं दिशा के आधार पर परीक्षण पदों के Stems तथा Distractors निर्धारित किये जाते हैं। Distractors जितनी सूक्ष्मता से एकत्रित किये जायेंगे कौशल की कसौटी में उतनी ही विविधता आयेगी। अत: छात्रों की व्यक्तिगत एवं सामूहिक त्रुटियों का बारीकी से अध्ययन करने के पश्चात् ही उन्हें पद रूप में प्रस्तुत करना चाहिये। इन परीक्षाओं में अंकों का विश्लेषण भी 'व्यक्तिगत' एवं 'सामूहिक' त्रुटियों के शीर्षक के अन्तर्गत किया जाता है तथा दोनों प्रकार की त्रुटियों के निवारण हेतु भी अलग-अलग उपचारात्मक अध्यापन प्रणाली (Remedial Teaching Method) प्रयोग में लायी जाती हैं।

क्या आप जानते हैं निदानात्मक परीक्षण मौलिक कौशल परीक्षण है जबकि उपलब्धि परीक्षण का निर्माण विशिष्ट कौशल की प्राप्ति में उसकी योग्यता या अयोग्यता से सम्बन्धित नहीं होता वरन् वह सामान्य उपलब्धि का परिचायक होता है।

26.6 निदान की प्रक्रिया (Process of Diagnosis)

शैक्षणिक निदान की प्रक्रिया के महत्वपूर्ण पद निम्न पाँच हैं–

(*a*) निदान के लिए उपयुक्त छात्रों का चयन (Selection of students who need diagnosis)–सर्वप्रथम उन छात्रों की खोज की जाती है जो विद्यालय में समायोजन कर पाने में कठिनाई का अनुभव कर रहे होते हैं। ये वे छात्र हैं जो किसी एक अथवा अधिक विषयों में कमजोर होते हैं तथा स्कूल की कुछ अन्य क्रियाओं में ठीक से समायोजन नहीं कर पाते हैं। ऐसे बालकों का पता लगाने के लिए निम्न विधियों का प्रयोग किया जा सकता है–

1. प्रत्येक छात्र को अपनी कमजोरी एवं प्राय: उसके कारण भी ज्ञात होते हैं। अत: ऐसे बालकों को जिन्हें निदान की आवश्यकता हो स्वयं ही अध्यापक के सम्मुख आना चाहिये।
2. जिन छात्रों की उपलब्धि (Achievement) असन्तोषजनक हो उन्हें साफल्य परीक्षा (Achievement Test) तथा बुद्धि परीक्षाएं (Inteligence Test) लेकर छाँट लिया जाये।
3. जिन बालकों को निदान की आवश्यकता है उनका चयन अध्यापक वर्ग अपने अनुभव के आधार पर भी कर सकता है।
4. विद्यालय में हुई विभिन्न परीक्षाओं के परीक्षाफलों के आधार पर भी ऐसे छात्रों का चयन किया जा सकता है।
5. ऐसे छात्रों के चयन में साक्षात्कार (Interview) प्रविधि काफी हद तक सहायक सिद्ध हो सकती है।
6. ऐसे छात्र भी होते हैं जिनकी बुद्धि लब्धि (I.Q.) काफी ऊंची होने पर भी निष्पादन (Achievement) बहुत ही निम्न स्तर का होता है तथा ऐसे छात्र भी मिलते हैं जो कक्षा में तो प्रथम आते हैं लेकिन समाज में समायोजन स्थापित नहीं कर पाते अत: ऐसे Low achievers तथा Misfits का बड़ा सावधानी से चयन करना चाहिये।

नोट

(*b*) **छात्रों के कठिनाई स्थलों की खोज करना (Identifying difficulty points)**—इस तथ्य की जानकारी प्राप्त करने के लिए कि किसी विषय को सीखने में बालक किस प्रकार की कठिनाइयों का अनुभव कर रहा है नैदानिक (Diagnostic) तथा निष्पादन (Achievement) (अध्यापक निर्मित अथवा प्रमापीकृत) परीक्षाओं में सहायता ली जा सकती है। लेकिन इस कार्य के लिये सबसे उत्तम यन्त्र नैदानिक परीक्षाएं ही हैं जो बालक की कमजोरियों एवं क्षमताओं का सही चित्र हमारे सम्मुख प्रस्तुत करती हैं। यद्यपि प्रत्येक नैदानिक परीक्षा का क्षेत्र संकुचित और सीमित होता है, फिर भी, जिस ढंग के सीमित तथा संकुचित क्षेत्र का परीक्षण ये परीक्षाएं करती हैं वह ढंग विलक्षण है। परीक्षा का नैदानिक महत्व उसको प्रयोग करने वाले अध्यापक पर अधिक निर्भर करता है परीक्षा के स्वरूप पर कम। कभी-कभी तो अनौपचारिक परीक्षाएं भी इस क्षेत्र में अधिक सहायक सिद्ध होती हैं।

("Such informal and observation charts usually indicate the correct level on which to start remedial instruction." *–Durrel*

संक्षेप में, नैदानिक परीक्षाओं द्वारा यह देखा जाता है कि बालक विषय विशेष के मूल प्रत्ययों, प्रक्रियाओं, सिद्धान्तों, नियमों आदि पर आधारित कितनी कठिनता स्तर के प्रश्न सही हल कर सकता है और उसको किन स्थलों पर आकर कठिनाई का सामना करना पड़ता है।

(*c*) **कठिनाई कारणों का विश्लेषण (Analysis of Difficults Points)**—कोई बालक एक विशेष प्रकार की गलती क्यों लगातार कर रहा है यह जानना बड़ा कठिन है, क्योंकि प्रत्येक बच्चे का मस्तिष्क विलक्षण ढंग से कार्य करता है। बालक की विषयगत कमजोरी एवं कठिनाई की प्रकृति या कठिनाई स्थलों का पता चल जाने पर उस कमजोरी तथा कठिनाई के कारणों का पता लगाया जाता है। अध्यापक इन कारणों को शारीरिक दोषों, संवेगों की अस्थिरता, अरुचि, बुरी आदतों, सामान्य एवं विशिष्ट बुद्धि का अभाव, विद्यालयी कारणों (उचित शिक्षण का अभाव, अध्यापक एवं सहपाठियों का दुर्व्यवहार, परीक्षा में बार-बार विफलता, अध्यापक द्वारा छात्र में व्यक्तिगत रूचि न लेना, पक्षपातपूर्ण रवैया, कठोर अनुशासन आदि), घरेलू कारणों (माँ, बाप एवं सम्बन्धियों का दुर्व्यवहार, पढ़ाई के लिए उचित साधनों एवं वातावरण का अभाव, निर्धनता, घरेलू कार्यों में व्यस्तता आदि) आदि में ढूँढने का प्रयास करता है। कभी-कभी वह इन कारणों का अन्दाजा अपने अनुमान या अनुभव के आधार पर या समक्ष भेंट (Interview) के आधार पर लगाता है।

26.7 उपचारात्मक शिक्षण (Remedial Teaching)

बालक की कमजोरी का निदान हो चुकने पर उन कमजोरियों को दूर करने के उपाय किये जाते हैं। बालक की कमजोरियों एवं त्रुटियों को दूर करने के लिए उपयुक्त कार्यक्रम की योजना बनाई जाती है जिसमें उसकी कमजोरियों एवं कारणों का ब्यौरा रहता है तथा उन कारणों को दूर करने के उपायों का भी विवरण रहता है। यदि कई बालकों ने एक सी ही गलती की है तो समूह में उनका उपचार किया जा सकता है और यदि गलती व्यक्तिगत है तो उसका उपचार भी व्यक्तिगत रूप से ही किया जाना चाहिये। उपचारात्मक विधियों का प्रयोग करते समय अध्यापक को निम्न बातें ध्यान में रखनी चाहिये।

(*a*) अधिक प्रतिभाशाली छात्र के साथ ये परीक्षाएं इतनी सफल नहीं हो पातीं जितनी कि मन्द बुद्धि बालकों के साथ होती हैं।

(*b*) बुद्धिहीन छात्रों (Idiots) की त्रुटियों को दूर करने में हमें इन विधियों के प्रयोग से पूर्ण सफलता नहीं मिल पाती।

(*c*) बुद्धिमान बालकों की गलत आदतों को छुड़ाने में समय लग सकता है अत: अध्यापक धैर्य से काम लें।

(*d*) यदि उपचारात्मक कार्य में सफलता प्राप्त न हो तो कार्यक्रम का स्वरूप ही बदल देना चाहिये।

(*e*) प्रत्येक छात्र की प्रगति का भिन्न ग्राफ एवं चार्ट होना चाहिये।

(*f*) जो बालक प्रगति कर रहे हों उनकी प्रशंसा करके उन्हें प्रोत्साहन देना चाहिये।

नोट

(g) कार्य में सजीवता लाने की दृष्टि से आकर्षक सहायक सामग्री एवं प्रभावी शिक्षण विधि का प्रयोग करना चाहिए।

(h) छात्र जिस विषय में कमजोर हैं उससे सम्बन्धित साहित्य, पत्र, पत्रिकाएँ आदि उन्हें पढ़ने के लिए दी जानी चाहिये।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. निम्नलिखित कथनों में 'सत्य' अथवा 'असत्य' लिखिए–

1. निदानात्मक परीक्षण एक प्रकार की निरीक्षण विधि, जिसमें साक्षात्कार भी किया जाता है।
2. जिस विषय की नैदानिक परीक्षा का निर्माण करना होता है
3. निदानात्मक परीक्षा मौलिक कौशल नहीं है।
4. बुद्धिहीन छात्रों की त्रुटियों को दूर करने में उपचारात्मक परीक्षण के प्रयोग से पूर्ण सफलता नहीं मिल पाती है।

त्रुटियों की रोकथाम के उपाय (Preventive Measures)–यदि हम यह चाहते हैं कि छात्र विषय को सीखने में भविष्य में बिल्कुल ही गलती न करे तो हमें उसके स्कूली तथा घरेलू वातावरण में ऐसे परिवर्तन करने हैं ताकि उसकी समायोजन (Adjustment) की समस्या का स्थायी हल निकाल सके। इसके लिए हमें अतिरिक्त बहुमुखी योजना भी तैयार करनी पड़ती है जिससे बालक को अपेक्षित अच्छा वातावरण मिल सके, जैसे–विद्यालय परिस्थितियों में सुधार, पाठ्यक्रम संशोधन, परीक्षा पद्धति में सुधार, अभियोग्यता परीक्षाओं का उचित निर्माण, व्यवहार परिवेश (Treatment environment) में सुधार आदि। Prognostic tests प्रशासित करके यह देखना होता है कि बालक अधिक सूक्ष्म (abstract) विषयों को सीखने के लिए तैयार है अथवा नहीं। Prognostic निदान का अन्त है। जब कोई बालक अंकगणित सीखने में कमजोर होने के साथ-साथ बुद्धि में भी क्षीण हो तो क्या उसे अधिक सामान्यीकृत गणित का अध्ययन कराना उचित रहेगा? इस प्रकार का उत्तर देने के लिए Prognostic Test का निर्माण किया जाता है। ये परीक्षाएं बालक की सीखने में standing की भविष्यवाणी करती हैं। बीजगणित में Lee तथा Orleans के 'Prognostic Test of Algebraic Ability' उपलब्ध हैं।

उदाहरण–बीजगणित में निदानात्मक परीक्षा का निर्माण (Construction of Diagnostic Test in Algebra)

विद्यार्थी का नाम: X Y Z — कक्षा व वर्ग: 7 'अ'

विद्यालय का नाम: A B C — दिनांक: अक्टूबर 2012

निर्देश

1. नीचे कुछ सरल समीकरण पर आधारित प्रश्न दिये गये हैं इनमें अज्ञात राशि 'य' का मान ज्ञात कीजिए।
2. प्रश्न का उत्तर प्रश्न पत्र में दिये निर्धारित स्थान पर ही लिखिए।
3. स्वच्छता का विशेष ध्यान रखें। यदि गणना करने के लिए निर्धारित स्थान कम लगे तो रफ कार्य के लिए अलग से पत्र लें।
4. प्रश्न पत्र की कोई समय सीमा नहीं है, फिर भी, समस्त प्रश्नों को शीघ्रता से कीजिए।

	प्रश्न	उत्तर	गणना के लिए स्थान
1.	य + 4 = 27 य =	(1)	
2.	6 य + 7 = 25 य =	(2)	
3.	2 य + 23/5 = 74/9 य =	(3)	

नोट

4. 5 य + .6 = 5.8 (4)
   य =
5. .05 य + 7 = 4.3 (5)
   य =
6. 7 य – 12 = 9 (6)
   य =
7. 7 य – 13 य = 42 (7)
   य =
8. .023 य – 7 = 9 य – 3 (8)
   य =
9. 14 य + 6 = 4 – 5 य (9)
   य =
10. 5 य + 2 = .9 य + 1 (10)
    य =
11. य/4 – 3 य/5 = 6 (11)
    य =
12. 2 य + 3/9 य = 8 (12)
    य =
13. य + 2 य/3 = 15 (13)
    य =
14. य + 7 = + 12 (14)
    य =
15. 5 य = 20 (15)
    य =
16. 4 य = 1/9 (16)
    य =
17. 2 य – 7 = य + 7 (17)
    य =
18. 5 य + 6 य = 33 (18)
    य =
19. य/2 + 1/2 = 5/2 (19)
    य =
20. 4 (य + 3) = 16 (20)
    य =

उपरोक्त प्रश्नों में सरल समीकरण पर आधारित प्रश्नों के विभिन्न रूपों को सम्मिलित किया गया है। सभी प्रश्न 'सरल से कठिन की ओर' सूत्र के अनुसार क्रम में लिखे गये हैं। इस परीक्षा का एक मात्र उद्देश्य यह ज्ञात करने से है कि

नोट

कक्षा सात के विद्यार्थी सरल समीकरण सम्बन्धी कठिनाई स्तर तक के प्रश्नों को आसानी से हल कर सकते हैं और अगर वे हल नहीं कर सकते तो उनकी कठिनाइयाँ कहाँ और किस प्रकार की आती हैं। परीक्षा का उपरोक्त प्रारूप केवल सरल समीकरण में बालकों को जो कठिनाइयाँ हो सकती हैं उनकी खोज में सहायक सिद्ध हो सकता है।

> *टास्क* उपचारात्मक प्रक्रियाएँ क्या हैं?

26.8 सारांश (Summary)

- निदानात्मक परीक्षाएं उपलब्धि परीक्षण का ही एक रूप है जिसके अन्तर्गत विशिष्ट वस्तु अथवा अधिगम अनुभव के अर्जित ज्ञान की विशिष्टताओं एवं कमियों का मूल्यांकन किया जाता है। इन परीक्षाओं से विद्यार्थियों के स्तर का पता नहीं लगाया जाता बल्कि विद्यार्थी किसी विषय को समझने में क्या कठिनाई अनुभव कर रहा है।
- विशिष्ट बालकगत कमजोरी एवं कठिनाई को दूर करने हेतु अध्यापक को अपनी अध्यापन विधि में आवश्यक परिवर्तन लाना पड़ता है ताकि बालक अपनी योग्यतानुसार अधिकतम अधिगम अनुभव प्राप्त कर सके। इस अध्यापक प्रक्रिया को उपचारात्मक अध्यापन (Remedial Teaching) कहते हैं।
- "निदानात्मक परीक्षण व्यक्ति की जाँच करने के पश्चात् किसी एक या अधिक क्षेत्रों में उसकी विशेषताओं एवं कमियों को व्यक्त करता है।"
- निदानात्मक परीक्षाओं के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार हैं–
    1. अध्यापक को अपनी अध्यापन प्रक्रिया में समुचित सुधार हेतु परामर्श प्रदान करना।
    2. विशिष्ट विषय-वस्तुगत अधिगम इकाई में प्राप्त गुणों के आधार पर विद्यार्थी एवं अभिभावक को शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करना।
    3. छात्र की विषय सम्बन्धी कमियों (weaknessess), हीनताओं (deficiencies) तथा कठिनाइयों (difficulties) की जानकारी प्राप्त करना।
    4. शिक्षण-अधिगम (Teaching-Learning) की परिस्थितियों को प्रभावशाली बनाना।
    5. विभिन्न विषय सम्बन्धी विशिष्टताओं एवं कमियों के आधार पर पाठ्यपुस्तकों अथवा पाठ्यक्रम में परिवर्तन लाना तथा उन्हें छात्रों की दृष्टि से अधिक उपयोगी बनाना।
- निदानात्मक परीक्षाओं की विशेषताएं (Characteristics of Diagnostic Tests)

  किसी निदानात्मक परीक्षा को अध्यापक एवं छात्रों की दृष्टि से उपयोगी होने के लिए उसमें निम्न गुणों का होना अपेक्षित है–
    1. ये परीक्षाएं पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग होती हैं।
    2. ये परीक्षाएं प्रमापीकृत होती हैं परन्तु कुछ विशेषज्ञों का विचार है कि निदानात्मक परीक्षाओं को प्रमापीकृत नहीं किया जाता है।
    3. ये परीक्षाएं विशिष्ट उद्देश्यों (specific objectives) के अनुरूप होती हैं।
    4. ये परीक्षाएं बालक की योग्यता का मापन नहीं करतीं बल्कि विषय सम्बन्धी कमजोरी का निदान करके उसके उपचार की व्यवस्था करती हैं।
- निदान की परीक्षण विधि भी दो प्रकार की जाती है–(1) निरीक्षण विधि (Observational Technique) तथा (2) निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Test)।

नोट

1. **लिखित परीक्षण (Written Test)**—सामान्य अर्थो में यह परीक्षण नहीं है अपितु निरीक्षण विधि है, जिसमें साक्षात्कार भी किया जाता है। छात्रों से व्यक्तिगत सम्पर्क करके उनकी परिस्थितियों के बारे में जानकारी की जाती है, अनौपचारिक ढंग से भी निरीक्षण करते हैं।

- आधुनिक निदान के अन्तर्गत छात्र के व्यवहार के सभी क्षेत्रों को सम्मिलित किया जाता है, उसे एक क्षेत्र तक संकुचित रूप में सीमित नहीं रखते हैं। इस निदान के प्रारूप में सामान्य क्षेत्रों की अयोग्यताएं उद्देश्यों एवं विधि यों का विभिन्न व्यक्ति पर प्रभाव का अध्ययन किया जाता है।
- निदानात्मक परीक्षाओं का निर्माण एवं मानकीकरण (Construction and Standardization of Diagnostic Tests)—जिस विषय की नैदानिक परीक्षा का हमें निर्माण करना होता है सर्वप्रथम उस विषय का सूक्ष्म विश्लेषण किया जाता है तथा यह निश्चय किया जाता है कि उस विषय में योग्यता मापन के लिये हमें उस विषय के किन मूल प्रत्ययों, सिद्धान्तों, नियमों, तथ्यों, सूत्रों अथवा मूल प्रक्रियाओं पर विशेष महत्व (weightage) देना है। इसके अतिरिक्त विद्यार्थी की उन मानसिक योग्यताओं जैसे—तर्क शक्ति, विचार शक्ति, निरीक्षण शक्ति आदि का भी विश्लेषण करना है जो उपरोक्त ज्ञान से सीधी जुड़ी हैं।
- (*a*) **निदान के लिए उपयुक्त छात्रों का चयन (Selection of students who need diagnosis)**—सर्वप्रथम उन छात्रों की खोज की जाती है जो विद्यालय में समायोजन कर पाने में कठिनाई का अनुभव कर रहे होते हैं।
- (*b*) **छात्रों के कठिनाई स्थलों की खोज करना (Identifying difficulty points)**—इस तथ्य की जानकारी प्राप्त करने के लिए कि किसी विषय को सीखने में बालक किस प्रकार की कठिनाइयों का अनुभव कर रहा है नैदानिक (Diagnostic) तथा निष्पादन (Achievement)
- (*c*) **कठिनाई कारणों का विश्लेषण (Analysis of Difficults Points)**—कोई बालक एक विशेष प्रकार की गलती क्यों लगातार कर रहा है यह जानना बड़ा कठिन है, क्योंकि प्रत्येक बच्चे का मस्तिष्क विलक्षण ढंग से कार्य करता है। बालक की विषयगत कमजोरी एवं कठिनाई की प्रकृति या कठिनाई स्थलों का पता चल जाने पर उस कमजोरी तथा कठिनाई के कारणों का पता लगाया जाता है।
- (*d*) **उपचारात्मक प्रक्रियाएँ (Remedial Procedures)**—बालक की कमजोरी का निदान हो चुकने पर उन कमजोरियों को दूर करने के उपाय किये जाते हैं। बालक की कमजोरियों एवं त्रुटियों को दूर करने के लिए उपयुक्त कार्यक्रम की योजना बनाई जाती है जिसमें उसकी कमजोरियों एवं कारणों का ब्यौरा रहता है तथा उन कारणों को दूर करने के उपायों का भी विवरण रहता है।
- (*e*) **त्रुटियों की रोकथाम के उपाय (Preventive Measures)**—यदि हम यह चाहते हैं कि छात्र विषय को सीखने में भविष्य में बिल्कुल ही गलती न करे तो हमें उसके स्कूली तथा घरेलू वातावरण में ऐसे परिवर्तन करने हैं ताकि उसकी समायोजन (Adjustment) की समस्या का स्थायी हल निकाल सके। इसके लिए हमें अतिरिक्त बहुमुखी योजना भी तैयार करनी पड़ती है जिससे बालक को अपेक्षित अच्छा वातावरण मिल सके

26.9 शब्दकोश (Keywords)

- **निदान**—हल।
- **उपचार**—इलाज।
- **मानकीकरण**—मानक को निश्चित करना।

नोट

26.10 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. 'निदानात्मक परीक्षण' क्या है? समझाइये।
2. निदानात्मक परीक्षण की विशेषताएँ तथा उद्देश्य लिखिए।
3. निदानात्मक परीक्षणों के प्रकार बताइये।
4. निदानात्मक परीक्षणों के निर्माण की प्रक्रिया समझाइये।
5. उपचारात्मक शिक्षण से क्या आशय है? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. 1. निदानात्मक परीक्षाओं 2. प्रमापीकृत 3. उपचारात्मक शिक्षण
4. मानसिक प्रक्रिया

2. 1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य
4. सत्य

26.11 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–27: वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ : लाभ तथा सीमाएँ (Objective Type Test : Advantages and Limitations)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

27.1 वस्तुनिष्ठ परीक्षा की अवधारणा (Concept of Objective Type Test)

27.2 वस्तुनिष्ठ परीक्षण के प्रकार (Types of Objective Type Test)

27.3 वस्तुनिष्ठ परीक्षा के निर्माण चरण (Steps in Construction of Objective Type Test)

27.4 वस्तुनिष्ठ परीक्षण निर्माण की कठिनाइयाँ (Problems in Constructing the Objective Type Test)

27.5 वस्तुनिष्ठ परीक्षण के लाभ (Advantages of Objective Type Test)

27.6 वस्तुनिष्ठ परीक्षण की सीमाएं (Limitations of Objective Type Test)

27.7 सारांश (Summary)

27.8 शब्दकोश (Keywords)

27.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

27.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- वस्तुनिष्ठ परीक्षा की अवधारणा, प्रकार और निर्माण के चरण का विवेचन करने में।
- वस्तुनिष्ठ परीक्षा के लाभ को समझने में।

प्रस्तावना (Introduction)

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में जो प्रश्न पत्र बनाया जाता है, उसका आकार तथा लम्बाई निबन्धात्मक परीक्षा या लघु उत्तरात्मक परीक्षाओं के लिए बनाये गए प्रश्न-पत्र से काफ़ी अधिक होती है। प्रश्नों की रचना इस प्रकार की जाती हैं कि उनके द्वारा बहुत ही सीमित शब्दों जैसे 'हाँ या 'ना', रिक्त स्थान पूर्ति या किसी एक दो शब्दों, अक्षरों या क्रम संख्या आदि के लिखने से ही अपेक्षित उत्तर दिया जा सके, अब क्योंकि प्रश्न बहुत छोटे छोटे होते हैं और उनके उत्तर देने में कुछ भी अधिक लिखना नहीं पड़ता अत: निबन्धात्मक या लघु उत्तरात्मक परीक्षाओं के लिए निर्धारित उतने ही समय में उनके बहुत अधिक प्रश्नों के उत्तर दे पाना विद्यार्थियों के लिए अच्छी तरह से सम्भव हो जाता है, इस अध्याय में हम वस्तुनिष्ठ परीक्षा से संबंधित विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करेंगे।

नोट

27.1 वस्तुनिष्ठ परीक्षा की अवधारणा (Concept of Objective Type Test)

निबन्धात्मक परीक्षाओं के दोषों को दूर करने के लिए सबसे पहले अमेरिका में नवीन प्रकार की परीक्षाओं का प्रचलन हुआ। **बैलार्ड (Ballard)** महोदय के प्रयत्नों के फलस्वरूप यूरोप में भी लोगों का ध्यान नई प्रकार की परीक्षाओं की ओर गया। हमारे देश में शिक्षा विशेषज्ञों ने कहा कि परीक्षा प्रणाली को समाप्त करना तो असम्भव है लेकिन परीक्षा प्रणाली ऐसी हो जो प्रश्न पत्रों की रचना, प्रशासन एवं अंकन की दृष्टि से उत्तम हो। प्रश्न पत्रों में प्रश्नों की संख्या अधिक होनी चाहिये ऐसा करने से बालक के सम्पूर्ण पाठ्यक्रम की जाँच हो सकेगी। इसके अतिरिक्त रटने को भी प्रोत्साहन नहीं मिलेगा और नकल करने की भी गुंजाइश न रहेगी। इन विशेषताओं से पूर्ण यह नवीन परीक्षा प्रणाली विदेशों में प्रयोग में लायी जाती है। हमारे यहाँ भी अब इस प्रकार के प्रश्न, प्रश्न-पत्रों में आने लगे हैं।

वस्तुनिष्ठ परीक्षा से तात्पर्य ऐसे परीक्षणों से है जिनकी रचना अध्यापक अपने अनुभवों के आधार पर शिक्षण उद्देश्यों, अपेक्षित व्यावहारिक परिवर्तनों एवं आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु करता है। इस प्रणाली के अनुसार प्रश्न-पत्र में प्रश्न तो पर्याप्त संख्या में होते हैं लेकिन उनका उत्तर एक या दो शब्दों में ही देना होता है या मात्र निशान लगाना होता है। इन परीक्षाओं का बढ़ता हुआ महत्व प्रवेश परीक्षाओं एवं अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं में देखा जा सकता है। शोध कार्यों ने भी कि निबन्धात्मक परीक्षाओं एवं वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में विरोध (anti-thesis) है। लेकिन यहाँ यह स्मरण कराना आवश्यक है।

नोट्स आधुनिकतम अनुसंधान परिणामों के आधार पर यह कहना अधिक उचित होगा कि एक अच्छे प्रश्न-पत्र में दोनों ही प्रकार की परीक्षाओं के प्रश्नों को स्थान दिया जाना चाहिये।

27.2 वस्तुनिष्ठ परीक्षण के प्रकार (Types of Objective Type Test)

(*i*) **सत्य व असत्य की परीक्षा**–इस प्रकार की परीक्षा में कुछ वाक्य लिख दिये जाते हैं और उनके आगे जगह रहती है जिस पर विद्यार्थी को 'स' या 'अ' लिखना पड़ता है। इसमें ऐसा भी किया जा सकता है कि अध्यापक प्रश्नों को पढ़ता जाये और विद्यार्थी क्रमानुसार उसका उत्तर कागज पर लिखते जायें। इस तरह समय भी कम लगता है और विद्यार्थी को पढ़ने की समस्या भी नहीं रहती है। नीचे इस प्रकार के प्रश्नों के कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं–

निर्देश–नीचे कुछ वाक्य लिखे हुए हैं जिन्हें तुम सही समझते हो उनके आगे स्थान पर 'स' और जिन्हें गलत समझते हो उसके आगे 'अ' लिख दो–

(1) अकबर तैमूर का उत्तराधिकारी था।

(2) अकबर ने बैरमखाँ के साथ दयालुता का बर्ताव किया था।

(3) गाँधीजी की आयु मृत्यु के समय 70 वर्ष की थी।

(4) मुगल काल में सात बादशाह हुए हैं।

(5) राजा राममोहन राय ने सती प्रथा को रोकने का प्रयत्न किया था।

(6) स्वामी विवेकानन्द ने विधवा विवाह पर जोर दिया।

सत्य और असत्य की परीक्षा बनाना बहुत आसान है। इसमें कुछ विद्यार्थी अनुमान से भी उत्तर लिखने का प्रयत्न करते हैं। इसके लिए उन्हें पहले ही सामान्य निर्देश दे देना चाहिए कि जिनका उत्तर वे नहीं जानते हों उसे छोड़ दें। इसके साथ ही विद्यार्थियों को यह भी बता देना चाहिए कि गलत उत्तर के अंक काट लिये जायेंगे।

इस प्रकार की परीक्षा बनाते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है–

(1) लगभग आधे प्रश्न सत्य और आधे असत्य होने चाहिए।

(2) सत्य और असत्य प्रश्नों का निश्चित क्रम नहीं होना चाहिए।

(3) विद्यार्थियों की उत्तर देने की विधि सरलतम होनी चाहिए।

(4) जहाँ तक सम्भव हो सके प्रश्नों में अर्जित ज्ञान का व्यावहारिक रूप होना चाहिए।

(5) प्रश्नों के वाक्य ज्यों के त्यों पुस्तकों में से नहीं लेने चाहिए।

(6) सत्य प्रश्नों को लम्बे और असत्य प्रश्नों को छोटे नहीं बनाना चाहिए।

(7) जहाँ तक सम्भव हो सके नकारात्मक प्रश्न (Nagative Items) न बनाए जाऐं।

(8) प्रश्न को सोच-समझ कर लिखना चाहिए अर्थात् प्रश्न ऐसा न हो, "राम की स्त्री का नाम वैजयन्ती माला था।"

(*ii*) बहु निर्वाचन परीक्षा (Multiple Choice Test)—इस प्रकार की परीक्षा में एक प्रश्न होता है और उसके कई सम्भावित उत्तर दिये रहते हैं, जिनमें से जो सही उत्तर होता है विद्यार्थी को उनमें से छाँटकर उसके सामने निर्देशानुसार लिखना पड़ता है। बहु निर्वाचन परीक्षा के कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

निर्देश—नीचे एक प्रश्न के चार सम्भावित उत्तर दिए गये हैं, उनमें से जो तुम्हें सही लगे उसका अंक रिक्त स्थान में लिख दो—

1. अकबर बहुत प्रसिद्ध बादशाह हुआ क्योंकि,
   (*i*) वह एक अच्छा लड़ाकू था। (*ii*) वह न्यायप्रिय था।
   (*iii*) उसने बहुत अच्छी इमारत बनवाई। (*iv*) वह सभी लोगों को सन्तुष्ट करने में सफल हुआ।
2. अकबर के समय भारत की राजधानी
   (*i*) दिल्ली (*ii*) दौलताबाद
   (*iii*) फतेहपुर सीकरी (*iv*) आगरा थी।
3. कौरवों के गुरु
   (*i*) भीष्म पितामह, (*ii*) द्रोणाचार्य,
   (*iii*) कृपाचार्य, (*iv*) दुर्योधन, थे।
4. वर्तमान समय में हिन्दी के राष्ट्रकवि
   (*i*) रामधारी सिंह दिनकर, (*ii*) मेघराज मुकुल,
   (*iii*) मैथिलीशरण गुप्त (*iv*) हरिवंश राय बच्चन।
5. निम्नलिखित द्रवों में से कौन सा नीले लिटमस को लाल करता है
   (*i*) नीबू का रस (*ii*) अल्कोहल
   (*iii*) कास्टिक सोडा का घोल, (*iv*) सोडियम हाइड्रोऑक्साइड का घोल।
6. अधिकांश मनोवैज्ञानिकों का मत है कि बुद्धि का विकास
   (*i*) 30 वर्ष की अवस्था तक होता है। (*ii*) 16 वर्ष की अवस्था तक होता है।
   (*iii*) 35 वर्ष की अवस्था तक होता है। (*iv*) 12 वर्ष की अवस्था तक होता है।

इस प्रकार की परीक्षा से विद्यार्थी के अर्जित ज्ञान का पता लग जाता है। इससे उसकी तर्क तथा सोचने की शक्तियों का भी ज्ञान हो जाता है। ये परीक्षाएँ बहुत लाभदायक होती हैं। इन्हें बनाते समय कुछ आवश्यक बातें जो ध्यान में रखनी चाहिए वे निम्नलिखित हैं—

(*i*) प्रश्न बिल्कुल सरल, विशिष्ट और सूक्ष्म होने चाहिए।

(*ii*) कम से कम 4 या 5 सम्भावित उत्तर लेने चाहिए।

नोट

(iii) कोई भी ऐसा सम्भावित उत्तर नहीं होना चाहिए जो देखने में ही गलत प्रतीत हो।

(iv) सम्भावित उत्तर प्रश्न के बाद में लिखे जाने चाहिए।

(v) सही सम्भावित उत्तरों का कोई निश्चित क्रम नहीं होना चाहिए।

(vi) प्रत्येक सम्भावित उत्तर की लम्बाई समान होनी चाहिए।

***(iii)* प्रश्न-उत्तर मिलाने वाली परीक्षा** (Matching Test Items)—इस प्रकार की परीक्षा को दो भागों में बाँट दिया जाता है। एक भाग में प्रश्न होता है और दूसरे भाग में उत्तर जोकि अनिश्चित क्रम में होते हैं। छात्र को प्रश्न का सही उत्तर छाँट कर उसे मिलाना पड़ता है। इस प्रकार की परीक्षा कुछ कठिन होती है। इसके निर्देश भी और परीक्षाओं की तुलना में कुछ कठिन होते हैं, इसलिए इस प्रकार की परीक्षाएँ यदि आठवीं कक्षा तक के छात्रों को न दी जाएँ तो अच्छा रहता है। यदि निर्देश को आसान करके अध्यापक चाहे तो कक्षा 8 के लिए भी परीक्षा बना सकता है, परन्तु अधिकांशतः ऐसा देखा गया है कि छोटी कक्षा के छात्र इस प्रकार के प्रश्नों में गलती करते हैं। इसका कारण उनका अनुभवी न होना भी हो सकता है। परीक्षाओं के उदाहरण निम्नलिखित हैं–

निर्देश—नीचे दो खण्ड दिए हुए हैं। पहले खण्ड में प्रश्न हैं और दूसरे खण्ड में उनसे सम्बन्धित उत्तर दिए गए हैं। पहले खण्ड का उत्तर दूसरे खण्ड में जहाँ मिलता हो उसके आगे रिक्त स्थानों में पहले खण्ड का नम्बर लिख दो।

1.	खण्ड (1)	खंड (2)	
(1)	अशोक के पिता	दशरत थे	[3]
(2)	अकबर के पिता	शुद्धोधन थे	[ ]
(3)	राम के पिता	हुमायूँ थे	[ ]
(4)	राष्ट्र के पिता	बिन्दुसार थे	[ ]
		गाँधी जी थे	[ ]
		रवीन्द्रनाथ ठाकुर थे	[ ]

2.	खण्ड (1)	खंड (2)	
(1)	शून्य तापमान से	कटाव होने लगता है।	[4]
(2)	बिजली चमकने से	पानी के ऊपर बर्फ जमने लगती है।	[ ]
(3)	शुष्क हवा से	ठण्डी आब-हवा हो जाती है।	[ ]
(4)	बाढ़ से	भूचाल आते हैं।	[ ]
(5)	उच्च अक्षांशों से	दिन गर्म और रातें ठंडी हो जाती है।	[ ]
	(High latitude)	गरजना होती है।	[ ]
		तूफान आने लगते हैं।	[ ]

3.	खण्ड (1)	खंड (2)	
(1)	सौर परिवार का सबसे बड़ा ग्रह कौन-सा है	29 1/2 दिन	[ ]
(2)	पृथ्वी से सूर्य की दूरी कितनी है	100 मील	[ ]
(3)	हमारे ऊपर वायुमण्डल कितने मील तक विद्यमान है।	93 करोड़ मील बृहस्पति	[ ]
(4)	चन्द्रमा को पृथ्वी को चक्कर लगाने में कितना समय लगता है	मंगल	[ ]
		212	[ ]

नोट

इस प्रकार की परीक्षा में प्रश्नों और उत्तरों को ढूँढकर मिलाना पड़ता है, इससे स्मृति की माप अच्छी तरह से की जा सकती है। इस प्रकार की परीक्षा बनाते समय निम्न बातों का ध्यान रखना अति आवश्यक है–

(1) प्रत्येक परीक्षा में कम से कम 5 और अधिक से अधिक 12 प्रश्न होने चाहिए।

(2) उत्तर कम से कम 2 या 3 अधिक होने चाहिए जिससे अनुमान के आधार पर उत्तर न दिया जा सके।

(3) एक प्रश्नावाली में एक ही तरह के प्रश्न हों तो अच्छा रहता है।

(4) प्रश्न और उत्तर में जो अधिक लम्बे हो उन्हें कापी के बाईं ओर रखना चाहिए।

(5) उदाहरण प्रत्येक में दे दिया जाये तो अच्छा रहता है।

(6) छात्रों के स्तर के अनुसार ही प्रश्न होने चाहिए।

(7) निर्देश सरल, सूक्ष्म तथा विशिष्ट होने चाहिए।

(*iv*) वर्गीकरण परीक्षा (Classification Test)–इस परीक्षा में कुछ शब्द एक समूह के रूप में दिए जाते हैं। इन शब्दों में एक को छोड़कर अन्य शब्दों में आपस में एक सम्बन्ध होता है। परीक्षार्थी को उस असम्बन्धित शब्द को छाँटना और उसे रेखांकित करना पड़ता है। नीचे उदाहरण प्रस्तुत हैं–

निर्देश–नीचे प्रत्येक पंक्ति में पाँच शब्द दिए गए हैं। प्रत्येक पंक्ति में एक शब्द ऐसा है जो उस श्रेणी में नहीं आता उसे छाँटकर उसके नीचे एक लकीर खींच दो।

1. चाकू, कैंची, ताला, उस्तरा, तलवार।
2. सेब, आम, केला, संतरा, काजू।
3. झील, पानी, नदी, कुँआ, तालाब।
4. जोधपुर, जयपुर, बम्बई, नागपुर, कानपुर।
5. अकबर, बाबर, हुमायूँ, अलाउद्दीन, शाहजहाँ।
6. तुलसीदास, रामकृष्ण परमहंस, सूरदास, कबीर, मीरा।

(*v*) साधारण प्रत्यास्मरण परीक्षाएँ (Simple Recall Test)–इन परीक्षाओं में छात्र को अपना उत्तर देना पड़ता है। प्रश्न पूछे जाते हैं और उनका उत्तर निश्चित स्थान पर लिखना होता है। साधारण प्रत्यास्मरण में परीक्षार्थी को केवल एक शब्द, दिनांक अथवा घटना का नाम लिखना पड़ता है। उदाहरण नीचे दिये जाते हैं–

निर्देश–नीचे कुछ प्रश्न दिये गये हैं उनके सामने उत्तर लिख दीजिए।

(*i*) किस भारतीय ने हिमालय पर विजय प्राप्त की? तेनसिंह, हिलेरी।

(*ii*) सबसे पहले उत्तरी ध्रुव की खोज किसने की थी?

(*iii*) वायु में स्वर की गति क्या है?

(*iv*) हवा की गति किससे मापी जाती है?

(*v*) शुद्ध हीरे का रंग क्या होता है।

(*vi*) लोक सभा का अध्यक्ष कौन है?

(*vii*) भारतीय क्रिकेट टीम का कप्तान वेस्ट इंडीज में कौन था?

(*viii*) शरीर में रक्त का संचार किन नलियों द्वारा होता है?

(*ix*) जिंक और अम्ल की क्रिया से कौन सी गैस बनती है?

इन परीक्षाओं से छात्रों की **धारणा शक्ति का माप** अच्छी प्रकार से किया जा सकता है। इस प्रकार की परीक्षाओं का बनाना आसान होता है, इसलिए उनका प्रयोग भी औरों की अपेक्षा अधिक होता है।

इस परीक्षा को बनाते समय हमें निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए–

1. पहले हमें उद्देश्य निर्धारित करना पड़ता है जिसका मापन करना है।

नोट

2. प्रश्न विशिष्ट हों तो अच्छा रहता है।
3. जहाँ तक सम्भव हो अप्रत्यक्ष (Direct) प्रश्न ही करने चाहिए।
4. प्रश्नों की भाषा सरल और सुन्दर होनी चाहिए।
5. प्रत्येक प्रश्न का एक ही सही उत्तर आना चाहिए।
6. यदि छात्र से कोई सूची क्रमानुसार पूछनी है तो उसको अंकित करने के नियम को पहले से ही निर्धारित करना पड़ेगा।

(*vi*) स्थान पूरक परीक्षाएँ (Completion Test)—इस प्रकार की परीक्षाओं में प्रश्न में एक स्थान खाली छोड़ दिया जाता है और परीक्षार्थी को सोच कर रिक्त स्थान की पूर्ति करनी पड़ती है। छोटी कक्षाओं में कुछ शब्द प्रश्नों के नीचे भी दे दिये जाते हैं जिसमें से वे उपयुक्त शब्द छाँट कर रिक्त स्थान की पूर्ति करते हैं। इस तरह उनके पहचानने (Recognition) की शक्ति परीक्षा भी हो जाती है। उनके उदाहरण निम्नलिखित हैं—

निर्देश—निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति करो:

1. क्षार अम्ल के साथ मिलकर लवण और जल बनाता है।
2. वायु में _ की मात्रा 21% होती है।
3. ऑक्सीजन गैस, पोटेशियम क्लोरेट और _ को गर्म करने पर प्राप्त होती है।
4. .... को आकाश का हीरा कहते हैं।
5. मोहम्मद तुगलक ने राजधानी दिल्ली से _ बदली थी।
6. राजस्थान के मुख्य मन्त्री _ हैं।
7. अशोक की मुख्य विजय _ विजय के नाम से प्रसिद्ध है।
8. .... बौद्ध धर्म के प्रवर्तक थे।
9. संसार की सबसे लम्बी नदी _ है।
10. .... हाकी के जादूगर के नाम से प्रसिद्ध है।

इस प्रकार की परीक्षायें बनाने में कुछ बातों का ध्यान रखना चाहिए जो निम्नलिखित हैं—

1. रिक्त स्थानों में कोई मुख्य बात ही होनी चाहिए।
2. हमेशा रिक्त स्थान बीच, प्रारम्भ तथा अन्त में नहीं होने चाहिए।
3. रिक्त स्थान विशिष्ट होना चाहिए; उसमें कोई दूसरा शब्द ठीक नहीं आना चाहिए।
4. प्रश्न प्रत्यक्ष होने चाहिए।
5. भाषा सरल और सुन्दर होनी चाहिए।
6. यदि किसी वाक्य में एक से अधिक रिक्त स्थान है तो उसके अंक को पहले ही निर्धारित कर लेना चाहिए।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)—

1. निबन्धात्मक परीक्षाओं के दोषों को दूर करने के लिए सबसे पहले .... में वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का प्रचलन प्रारंभ हुआ।
2. .... के प्रयत्नों के फलस्वरूप यूरोप में भी लोगों का ध्यान नई अथवा वस्तुनिष्ठ परीक्षा की ओर गया।
3. .... में एक प्रश्न होता है, और उसके कई सम्भावित उत्तर दिये रहते हैं, जिनमें से जो सही उत्तर होता है विद्यार्थी को उनमें से छाँटकर उसके सामने निर्देशानुसार लिखना पड़ता है।
4. .... में प्रश्न में एक स्थान खाली छोड़ दिया जाता है, और परीक्षार्थी को सोचकर रिक्त स्थान की पूर्ति करनी पड़ती है।

27.3 वस्तुनिष्ठ परीक्षा के निर्माण चरण (Steps in Construction of Objective Type Test)

इन्हें नयी प्रकार के निष्पत्ति परीक्षण माना जाता है, इसमें कई प्रकार के प्रश्नों की रचना की जाती है। इसमें प्रश्न तथा उसके साथ ही उत्तर के लिए विकल्प भी दिए रहते हैं। उनमें से सही प्रश्न का चयन करना होता है। यही प्रश्न के लिए एक अंक और गलत के लिए शून्य अंक दिया जाता है।

वस्तुनिष्ठ निष्पत्ति परीक्षण की रचना में निम्नांकित सोपानों का अनुसरण किया जाता है। मुख्य चार सोपान–नियोजन, निर्माण, जाँच तथा मूल्यांकन।

प्रथम सोपान	–	उद्देश्य का निर्धारण।
द्वितीय सोपान	–	पाठ्यवस्तु विश्लेषण।
तृतीय सोपान	–	उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना।
चतुर्थ सोपान	–	विभिन्न पाठ्यवस्तु के महत्व का निर्धारण।
पंचम सोपान	–	वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के स्वरूप का निर्धारण।
षष्ठम सोपान	–	विशिष्टीकरण तालिका का निर्माण।
सप्तम सोपान	–	वस्तुनिष्ठ पदों की रचना।
अष्टम सोपान	–	पद विश्लेषण करना।
नवम् सोपान	–	प्रश्न पत्र की विश्वसनीयता एवं वैधता की गणना करना।
दसवाँ सोपान	–	परीक्षण के मानक का विकास करना।
ग्यारहवाँ सोपान	–	प्रश्न पत्र की अनुसूची (निर्देशिका) तैयार करना।

27.4 वस्तुनिष्ठ परीक्षण निर्माण की कठिनाइयाँ (Problems in Constructing the Objective Type Test)

इस प्रकार के परीक्षण की रचना में उपरोक्त सभी सोपानों का अनुसरण किया जाता है फिर भी निष्पत्ति परीक्षण के निर्माण में कई प्रकार की समस्याएं आती हैं। इनका उल्लेख इस प्रकार है–

(1) विशिष्टीकरण तालिका के निर्माण की समस्या–निष्पत्ति परीक्षण के निर्माण में वर्गीकरण तालिका निर्देशन का कार्य करती है, परन्तु इसके निर्माण में प्रमुख समस्या यह आती है कि किस पाठ्यवस्तु पर कितने प्रकार के कितने प्रश्नों की रचना की जाए। यह कार्य तार्किक ढंग से किया जाता है। इससे व्यक्तिनिष्ठता (Subjectivity) आती है। इस समस्या का हल यह है कि शिक्षण में उस पाठ्यवस्तु को कितना महत्व दिया गया था, उसी अनुपात में प्रश्नों की संख्या निर्धारित की जाए और बहुविकल्पीय प्रकार के प्रश्नों की रचना की जाए। क्योंकि इन्हें सबसे उत्तम प्रकार का प्रश्न माना जाता है।

(2) वैधता की समस्या (Problem of Validity)–निष्पत्ति परीक्षण की वैधता की गणना वर्गीकरण तालिका की सहायता से की जाती है। परीक्षा प्रश्नों को वर्गीकरण तालिका से सम्बन्ध देखा जाता है कि सभी पाठ्यवस्तु से प्रश्न सम्मिलित किए गए हैं। इस प्रकार तार्किक ढंग से पाठ्यवस्तु वैधता (Content Validity) ज्ञात की जाती है।

निष्पत्ति परीक्षण में पाठ्यवस्तु को सम्मिलित करने से ही वैध नहीं समझना चाहिए। क्योंकि पाठ्यवस्तु तो एक साधन है उसके द्वारा विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। इस प्रकार निष्पत्ति परीक्षण का निर्माण विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है न कि पाठ्यवस्तु के शिक्षण के लिए।

(3) मानक का विकास (Development of Norms)–निष्पत्ति परीक्षण में साधारणतया दो प्रकार के मानकों को विकसित किया जाता है। ग्रेड मानक और शतांश मानक। *कैली* ने सबसे पहले ग्रेड मानक का प्रयोग किया। ग्रेट मानक की कठिनाई यह है कि पाठ्यवस्तु के विभिन्न पक्षों के लिए मानक विकसित किए गए हैं। जैसे–भाषा के अन्तर्गत पढ़ने

नोट

का, लिखने का, तथा बोलने का ग्रेट। जैसे–भारत में छात्र अंग्रेजी में एम.ए. परीक्षा पास कर लेते हैं। परन्तु अंग्रेजी माध्यम के दसवीं कक्षा के छात्र के बराबर बोल नहीं पाता है।

शतांश मानक के अन्तर्गत मध्यवर्ग के छात्र अपेक्षाकृत अधिक लाभ में रहते हैं, जो छात्र कम अंक और अधिक अंक प्राप्त करते हैं। इसके लिए शैक्षिक लब्धि (E.Q.) का प्रयोग करना चाहिए।

क्या आप जानते हैं वैधता के लिए उद्देश्यों को महत्व दिया जाए, और उद्देश्यों वैधता (Objective Validity) की गणना की जानी चाहिए इस प्रकार की वैधता की गणना करना एक समस्या है। इसके लिए कारक विश्लेषण वैधता की गणना की जाती है। इसके अन्तर्गत मानदण्ड वैधता को भी महत्व दिया जाना चाहिए।

27.5 वस्तुनिष्ठ परीक्षण के लाभ (Advantages of Objective Type Test)

1. नवीन प्रकार की परीक्षा प्रणाली की अंकन प्रक्रिया वस्तुनिष्ठ होती है। परीक्षक की मन: स्थिति (mood) एवं विचारों का अंकन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
2. पाठ्यक्रम की दृष्टि से ये परीक्षाएं अत्यन्त व्यापक होती हैं।
3. अंकन में समय कम लगता है।
4. ये परीक्षाएं अध्यापक को किसी छात्र-विशेष के साथ पक्षपात करने का अवसर प्रदान नहीं करतीं।
5. इन परीक्षाओं के माध्यम से अधिगम सम्बन्धी कमजोरियों का निदान आसानी से लगाया जा सकता है।
6. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी ऊबता नहीं बल्कि परीक्षा एक दिलचस्प पहेली बन कर रह जाती है।
7. वस्तुनिष्ठ परीक्षाएं पूर्णतया वैध होती हैं।
8. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी को अंकन की वस्तुनिष्ठता की जाँच कर लेने के अवसर मिलते हैं। वह दूसरे परीक्षार्थी की उत्तर पुस्तिका से मिलान करके अपने अंकों की सन्तुष्टि कर लेता है।
9. इन परीक्षाओं से शिक्षण के उच्च स्तरीय उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव है।
10. ये परीक्षाएँ प्रमापीकृत (standardized) की जा सकती है।
11. ये परीक्षाएँ विद्यार्थियों की अमनौवैज्ञानिक रटन विद्या को बढ़ावा नहीं देती।
12. इन परीक्षाओं की विभेदीकारिता क्षमता (discriminating power) उच्च स्तर की होती है।
13. ये परीक्षाएँ अटकल से काम लेने वाली प्रवृत्ति को बढ़ाता नहीं देतीं।
14. इन परीक्षाओं में प्रश्न-पत्रों को हल करने में परीक्षार्थी को अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता।
15. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी केवल सुन्दर लेख एवं भाषा शैली के आधार पर ही अधिक अंक प्राप्त नहीं कर सकता।
16. इन परीक्षाओं से समय की पर्याप्त बचत होती है।

27.6 वस्तुनिष्ठ परीक्षण की सीमाएँ (Limitations of Objective Type Test)

1. ये परीक्षाएँ छात्र उपलब्धि के विभिन्न पहलुओं, जैसे–सौन्दर्यात्मक पक्ष, रचनात्मक कल्पना, साहित्यिक शैली, विचारों की अभिव्यक्ति आदि का मापन नहीं कर सकतीं।
2. एक ही प्रश्न के कई भ्रामक उत्तर देना छात्रों के अपरिपक्व मस्तिष्क पर अनुकूल प्रभाव नहीं डालते। यह शैक्षिक दृष्टि से पूर्णतया अमनोवैज्ञानिक है।

नोट

3. निबन्धात्मक परीक्षाओं की तुलना में इन परीक्षाओं पर अधिक व्यय आता है।
4. इन परीक्षाओं के एक बार प्रमापीकृत हो जाने से सब लोगों को इनका ज्ञान हो जाता है, परिणामस्वरूप भविष्य में इनका प्रयोग अधिक वैध नहीं रह पाता।
5. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी बहुत से प्रश्नों का उत्तर मात्र अनुमान से ही दे देता है जिससे छात्रों में धोखा देने की प्रवृत्ति (cheating) का विकास होता है।
6. वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के निर्माण के लिए निर्माता को विशेष प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।
7. इन परीक्षाओं के माध्यम से विचारों की मौलिक अभिव्यक्ति सम्भव नहीं।
8. इन परीक्षाओं से विद्यार्थियों के उथले ज्ञान का मूल्यांकन होता है।
9. ये परीक्षाएँ शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में एकरूपता लाने का प्रयास करती हैं।
10. निबन्धात्मक परीक्षाओं की भाँति इन परीक्षाओं में भी प्रश्न-पत्रों की रचना करते समय परीक्षक की मनोवृत्ति, विचार एवं भावनाओं का प्रभाव पड़ता है।
11. इस परीक्षा से परीक्षार्थी के व्यक्तित्व पर प्रकाश नहीं पड़ता।
12. इन परीक्षाओं ने साँख्यिकी के प्रयोग पर अनावश्यक रूप से बल दिया है।

वर्तमान परीक्षा प्रणाली पर **डॉ. बी. एस. ब्लूम (B.S. Bloom)** ने भी बड़े तीखे प्रहार किये हैं। उनके अनुसार मुख्य दोष निम्न हैं–

1. कक्षा में जो कुछ भी कार्य किया जाता है वह विषय के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर नहीं किया जाता है।
2. बहुत से अनावश्यक तथ्य केवल परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए ही रट लिये जाते हैं।
3. प्रश्न पत्रों में मौलिकता (originality) का पूर्ण अभाव रहता है।
4. उत्तर पुस्तिकाओं का अंकन करने में परीक्षक की आत्मनिष्ठता (subjectivity) हावी रहती है।
5. बाह्य परीक्षाएँ छात्र उपलब्धि का असन्तोषप्रद एवं अपर्याप्त मापक हैं।
6. विभिन्न विषयों के परिणामों के आधार पर निष्कर्ष निकालने की परम्परा अत्यन्त दूषित है। इससे असफल छात्रों का प्रतिशत बहुत ऊँचा हो जाता है।
7. पाठ्यक्रम दूषित है। इसमें केवल विषय के कुछ शीर्षकों का उल्लेख मात्र होता है साथ ही, निर्दिष्ट उद्देश्यों का भी अभाव रहता है। फलत: परीक्षा उद्देश्य आधारित (objective based) नहीं हो पाती।
8. प्रश्न पत्रों में कुछ महत्वपूर्ण तथा प्रिय (favourite) प्रश्नों को अनावश्यक रूप में दोहराया जाता है। इससे छात्र हर वर्ष अपना अध्ययन इन्हीं प्रश्नों तक केन्द्रित रखते हैं।
9. प्रश्न पत्रों में कठिनाई स्तर (Difficulty Index) का कोई ध्यान नहीं रहता।
10. गणित जैसे विषय की उपलब्धियों का मूल्यांकन वर्ष में गिनी-चुनी परीक्षाओं से सम्भव नहीं है।
11. परीक्षाओं में औपचारिकता का पुट नहीं होना चाहिए। विषय सम्बन्धी अध्यापक को ही सम्बन्धित प्रश्न-पत्र का निर्माण करने को कहा जाय।
12. मूल्यांकन की वर्तमान प्रणाली बालक के पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कार्यों एवं सफलताओं की पूर्ण रूप से अपेक्षा करती है।

टास्क साधारण प्रत्यास्मरण परीक्षाएँ क्या हैं? समझाइये।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. निम्नलिखित कथनों में 'सही' अथवा 'असत्य' लिखिए–

1. 'कैली' ने सबसे पहले ग्रेड मानक का प्रयोग किया।
2. पाठ्यक्रम की दृष्टि से वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ व्यापक तथा वैध होती हैं।
3. वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की सहायता से अधिगम सम्बन्धी कमज़ोरियो का निदान संभव नहीं है।
4. वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ विद्यार्थियों की अमनोवैज्ञानिक रटन विद्या को बढ़ावा देती हैं।

27.7 सारांश (Summary)

- निबन्धात्मक परीक्षाओं के दोषों को दूर करने के लिए सबसे पहले अमेरिका में नवीन प्रकार की परीक्षाओं का प्रचलन हुआ। **बैलार्ड (Ballard)** महोदय के प्रयत्नों के फलस्वरूप यूरोप में भी लोगों का ध्यान नई प्रकार की परीक्षाओं की ओर गया। हमारे देश में शिक्षा विशेषज्ञों ने कहा कि परीक्षा प्रणाली को समाप्त करना तो असम्भव है लेकिन परीक्षा प्रणाली ऐसी हो जो प्रश्न पत्रों की रचना, प्रशासन एवं अंकन की दृष्टि से उत्तम हो।
- वस्तुनिष्ठ परीक्षा से तात्पर्य ऐसे परीक्षणों से है जिनकी रचना अध्यापक अपने अनुभवों के आधार पर शिक्षण उद्देश्यों, अपेक्षित व्यावहारिक परिवर्तनों एवं आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु करता है। इस प्रणाली के अनुसार प्रश्न-पत्र में प्रश्न तो पर्याप्त संख्या में होते हैं लेकिन उनका उत्तर एक या दो शब्दों में ही देना होता है या मात्र निशान लगाना होता है।
- (*i*) **सत्य व असत्य की परीक्षा**–इस प्रकार की परीक्षा में कुछ वाक्य लिख दिये जाते हैं और उनके आगे जगह रहती है जिस पर विद्यार्थी को 'स' या 'अ' लिखना पड़ता है। इसमें ऐसा भी किया जा सकता है कि अध्यापक प्रश्नों को पढ़ता जाये और विद्यार्थी क्रमानुसार उसका उत्तर कागज पर लिखते जायें।
- (*ii*) **बहु निर्वाचन परीक्षा** (Multiple Choice Test)–इस प्रकार की परीक्षा में एक प्रश्न होता है और उसके कई सम्भावित उत्तर दिये रहते हैं, जिनमें से जो सही उत्तर होता है विद्यार्थी को उनमें से छाँटकर उसके सामने निर्देशानुसार लिखना पड़ता है।
- (*iii*) **प्रश्न-उत्तर मिलाने वाली परीक्षा** (Matching Test Items)–इस प्रकार की परीक्षा को दो भागों में बाँट दिया जाता है। एक भाग में प्रश्न होता है और दूसरे भाग में उत्तर जोकि अनिश्चित क्रम में होते हैं। छात्र को प्रश्न का सही उत्तर छाँट कर उसे मिलाना पड़ता है।
- (*iv*) **वर्गीकरण परीक्षा** (Classification Test)–इस परीक्षा में कुछ शब्द एक समूह के रूप में दिए जाते हैं। इन शब्दों में एक को छोड़कर अन्य शब्दों में आपस में एक सम्बन्ध होता है।
- (*v*) **साधारण प्रत्यास्मरण परीक्षाएँ** (Simple Recall Test)–इन परीक्षाओं में छात्र को अपना उत्तर देना पड़ता है। प्रश्न पूछे जाते हैं और उनका उत्तर निश्चित स्थान पर लिखना होता है। साधारण प्रत्यास्मरण में परीक्षार्थी को केवल एक शब्द, दिनांक अथवा घटना का नाम लिखना पड़ता है।
- (*vi*) **स्थान पूरक परीक्षाएँ** (Completion Test)–इस प्रकार की परीक्षाओं में प्रश्न में एक स्थान खाली छोड़ दिया जाता है और परीक्षार्थी को सोच कर रिक्त स्थान की पूर्ति करनी पड़ती है।
- इस प्रकार के परीक्षण की रचना में उपरोक्त सभी सोपानों का अनुसरण किया जाता है फिर भी निष्पत्ति परीक्षण के निर्माण में कई प्रकार की समस्याएं आती हैं। इनका उल्लेख इस प्रकार है–

  (1) विशिष्टीकरण तालिका के निर्माण की समस्या–निष्पत्ति परीक्षण के निर्माण में वर्गीकरण तालिका निर्देशन का कार्य करती है, परन्तु इसके निर्माण में प्रमुख समस्या यह आती है कि किस पाठ्यवस्तु पर कितने प्रकार के कितने प्रश्नों की रचना की जाए। यह कार्य तार्किक ढंग से किया जाता है।

नोट

(2) वैधता की समस्या (Problem of Validity)—निष्पत्ति परीक्षण की वैधता की गणना वर्गीकरण तालिका की सहायता से की जाती है।

- निष्पत्ति परीक्षण में पाठ्यवस्तु को सम्मिलित करने से ही वैध नहीं समझना चाहिए।
- **(3) मानक का विकास (Development of Norms)**
- नवीन प्रकार की परीक्षा प्रणाली की अंकन प्रक्रिया वस्तुनिष्ठ होती है। परीक्षक की मन: स्थिति (mood) एवं विचारों का अंकन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
- पाठ्यक्रम की दृष्टि से ये परीक्षाएं अत्यन्त व्यापक होती हैं।
- अंकन में समय कम लगता है।
- ये परीक्षाएं अध्यापक को किसी छात्र-विशेष के साथ पक्षपात करने का अवसर प्रदान नहीं करतीं।
- इन परीक्षाओं के माध्यम से अधिगम सम्बन्धी कमजोरियों का निदान आसानी से लगाया जा सकता है।
- वस्तुनिष्ठ परीक्षाएं पूर्णतया वैध होती हैं।
- इन परीक्षाओं से शिक्षण के उच्चस्तरीय उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव है।
- ये परीक्षाएँ छात्र उपलब्धि के विभिन्न पहलुओं, जैसे—सौन्दर्यात्मक पक्ष, रचनात्मक कल्पना, साहित्यिक शैली, विचारों की अभिव्यक्ति आदि का मापन नहीं कर सकतीं।
- एक ही प्रश्न के कई भ्रामक उत्तर देना छात्रों के अपरिपक्व मस्तिष्क पर अनुकूल प्रभाव नहीं डालते। यह शैक्षिक दृष्टि से पूर्णतया अमनोवैज्ञानिक है।
- निबन्धात्मक परीक्षाओं की तुलना में इन परीक्षाओं पर अधिक व्यय आता है।
- इन परीक्षाओं के एक बार प्रमापीकृत हो जाने से सब लोगों को इनका ज्ञान हो जाता है, परिणामस्वरूप भविष्य में इनका प्रयोग अधिक वैध नहीं रह पाता।
- इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी बहुत से प्रश्नों का उत्तर मात्र अनुमान से ही दे देता है
- वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के निर्माण के लिए निर्माता को विशेष प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।
- इन परीक्षाओं के माध्यम से विचारों की मौलिक अभिव्यक्ति सम्भव नहीं।

27.8 शब्दकोश (Keywords)

- **वस्तुनिष्ठ**—निशान के रूप में प्रश्नोत्तर।
- **विभेदकारिता**—विभेद करने वाला।
- **अधिगम**—सीखना।

27.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. वस्तुनिष्ठ परीक्षा का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
2. वस्तुनिष्ठ परीक्षण के विभिन्न प्रकारों को उदाहरण सहित समझाइये
3. वस्तुनिष्ठ परीक्षण के निर्माण की कठिनाइयों का उल्लेख कीजिए।
4. वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के गुणों का वर्णन कीजिए।
5. वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की सीमाएँ लिखिए।

नोट

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. 1. बैलार्ड 2. अमरीका 3. बहु निर्वाचन परीक्षा

4. स्थानपूरक परीक्षाओं

2. 1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य

4. असत्य

27.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. शैक्षिक एवं मानसिक मापन (डा. आर. ए. शर्मा आर. लाल बुक डिपो)
2. शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का विकास सुरेश भटनागर (आर. लाल बुक डिपो)
2. मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन (भटनागर और भटना. आर. लाल. बुक डिपो)।

नोट

इकाई—28: लघु उत्तरीय प्रश्न परीक्षण : लाभ तथा सीमाएँ (Short Answer Type Test : Advantages and Limitations)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

28.1 लघु उत्तरीय परीक्षण का अर्थ (Meaning of Short Answer Type Test)

28.2 लघु उत्तरीय परीक्षण का प्रारूप (Structure of Short Answer Type Test)

28.3 लघु उत्तरीय प्रश्न परीक्षा के निर्माण के सिद्धांत (Principles of Construction of Short Answer Type Questions)

28.4 लघु उत्तरीय प्रश्न का संपादन तथा समीक्षा (Editing and Reviewing of Short Answer Type Questions)

28.5 लघु उत्तरात्मक प्रश्न के लाभ (Avantage of Short Answer Type Questions)

28.6 लघु उत्तरात्मक परीक्षाओं की सीमाएँ (Limitations of Short Answer Type Questions)

28.7 सारांश (Summary)

28.8 शब्दकोश (Keywords)

28.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

28.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- लघु उत्तरीय परीक्षण के अर्थ, प्रारूप और सिद्धांत की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

लघुउत्तरात्मक परीक्षण, निबन्धात्मक, परीक्षा की तुलना में अधिक संक्षिप्त होता है, इसमें ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं, जिनका उत्तर एक पंक्ति अथवा कुछ सीमित शब्दों में हो, इस प्रकार के प्रश्नों को हल करने में विद्यार्थी विशेष रुचि दिखाते हैं तथा कम समय में अधिक प्रश्न हल करके कठिन परीक्षण में सहजता का अनुभव करते हैं, इस इकाई में हम इस परीक्षण का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

28.1 लघु उत्तरीय परीक्षण का अर्थ (Meaning of Short Answer Type Test)

ऐसे प्रश्न जिनके उत्तर निबन्धात्मक परीक्षाओं की तुलना में काफी लघु यानी छोटे होते हैं, इन्हें लघु उत्तरीय प्रश्न कहते हैं। तथा ऐसी परीक्षा को लघु उत्तरात्मक परीक्षा कहते हैं। तथा ऐसी परीक्षा को लघु उत्तरात्मक परीक्षा कहते हैं।

नोट

उत्तर कितने छोटे लिखे जाये इसके लिए प्रश्न में ही निर्देश दे दिये जाते हैं, जैसे इसके लिए प्रश्न में ही निर्देश दे दिये जाते हैं, जैसे ध्यान रहे, आपका उत्तर 100-150 शब्दों में या 15-20 पंक्तियों से अधिक न हो। सकारात्मक शब्दावली में जैसे–"निम्न प्रश्नों के संक्षिप्त में उत्तर दीजिए। इस प्रकार का निर्देश दिया जाना उचित रहता है। इस प्रकार के प्रश्न सभी विषयों से सम्बन्धित उपलब्धि की जाँच हेतु प्रयोग में लाये जा सकते हैं। नमूने के तौर की जाँच हेतु प्रयोग में लाये जा सकते हैं। नमूने के तौर पर निम्न प्रश्नों को देखिए जिनके उत्तर 100-150 शब्दों में देने का निर्देश दिया गया है।

(*i*) सूर्य ग्रहण कैसे और क्यों होता है?

(*ii*) मैथिली शरण गुप्त की रचना शैली के बारे में अपने विचार प्रकट कीजिए।

(*iii*) सूक्ष्म शिक्षण का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

स्पष्ट है कि इस प्रकार के प्रश्नों द्वारा छात्रों से तर्क सम्मत, सटीक एवं संक्षिप्त उत्तरों की अपेक्षा की जाती है। उनके उत्तर निबन्धात्मक प्रश्नों के उत्तरों की तरह, अनियन्त्रित एवं स्वच्छन्द नहीं होते, बल्कि काफ़ी सीमाबद्ध एवं लक्ष्य बद्ध होते हैं दूसरी और वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में जो दोष पाये जाते हैं जैसे निर्माण में कठिनाई, ज्ञान की विस्तृत तथा गहन जाँच करने में असमर्थता आदि उसका इस प्रकार की परीक्षाओं में निर्मूलन कर दिया जाता है। निबन्धात्मक परीक्षाओं की तुलना में इन परीक्षाओं में अधिक विश्वसनीयता, वैधता तथा वस्तुनिष्ठता पाई जाती है।

इस प्रकार यदि लघु उत्तरात्मक परीक्षाओं की सापेक्षता निबन्धात्मक और वस्तुनिष्ठता परीक्षाओं के संदर्भ में परखी जाये तो इनका स्थान बीच में ही पड़ेगा। दूसरे शब्दों में उपयोगिता और समर्थता की दृष्टि से जहाँ हम इन्हें निबन्ध ात्मक से कुछ अधिक और वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं से कुछ कम आँकने का साहस कर सकते हैं, तो कुछ बातों में हम इस निष्कर्ष पर भी पहुँच सकते हैं, कि लघु उत्तरात्मक परीक्षाओं से अन्य दोनों की तुलना में कहीं अधिक अच्छा, विश्वसनीय और व्यावहारिक मूल्यांकन किया जा सकता है, अतः इस दृष्टि से इन्हें मूल्यांकन का प्रमुख अंग अवश्य ही बनाया जाना चाहिए।

नोट्स निदात्मकता की दृष्टि से भी लघु उत्तरात्मक परीक्षाएँ निबन्धात्मक परीक्षाओं से काफ़ी सही सिद्ध होती हैं और इनमें काफ़ी सीमा तक व्यापकता या समुचित वरणता का गुण भी पाया जाता है।

28.2 लघु उत्तरीय परीक्षण का प्रारूप (Structure of Short Answer Type Test)

लघु उत्तरात्मक प्रश्नों को कई प्रकार से लिखा जाता है, विभिन्न प्रारूपों के अनुसार प्रश्न की भाषा तथा शब्दों का चयन भी अलग अलग होती है। लघु उत्तरात्मक परीक्षा के विभिन्न प्रारूप निम्नलिखित हैं–

(*i*) **प्रश्नात्मक प्रारूप**–इस प्रकार के प्रश्न के अन्त में प्रश्नवाचक चिन्ह लगाया जाता है, तथा क्या, क्यों, कैसे, कब, कहाँ आदि प्रश्नवाचक शब्दों वाक्य के बीच में आते हैं।

प्रश्न–(*a*) आकाश का रंग नीला क्यों दिखाई देता है?

(*b*) पहाड़ पर चढ़ते समय साँस लेने में कठिनाई क्यों होती है?

(*ii*) **कथनात्मक प्रारूप**–इसमें प्रश्न एक कथन के रूप में दिया जाता है, तथा आगे एक निर्देशित शब्द दिया होता है जिसमें पता चलता है कि प्रश्न का उत्तर का प्रारूप क्या है?

उदाहरण–औरंगजेब की धार्मिक नीति मुग़ल साम्राज्य के पतन के मुख्य कारण थी। अपने उत्तर के समर्थन में दो कारण दीजिए।

(*iii*) **गणनात्मक प्रारूप**–गणित, भौतिकी तथा रसायन विज्ञान की अनेक समस्याओं में इस तरह का प्रारूप प्रयोग किया जाता है। इसमें अंक तथा कोई प्रतीक चिह्न अवश्य लिखा जाता है।

उदाहरण—किसी पदार्थ जिसका द्रव्यमान 40 तथा आयतन 10 cc. है उस के घनत्व की गणना कीजिए—

(iv) **तालिकात्मक प्रारूप**—कुछ विषय क्षेत्र तालिकात्मक प्रारूप के द्वारा बेहतर ढंग से मूल्यांकित किये जा सकते हैं, इसमें समय की भी बचत होती है।

उदाहरण—

एन्ज़ाइम	*पर क्रिया करते हैं*	*उत्पन्न करने के लिए*
1.	शर्करा	....
2.	वसा	....

(v) **ग्राफ़ीय प्रारूप**—विभिन्न प्रकार के ग्राफ़ जैसे लाइन ग्राफ़, पाई ग्राफ़, बार ग्राफ़ आदि देकर प्रश्न पूछे जाते हैं, जैसे—

उदाहरण—जनसंख्या घनत्व के विषय में ग्राफ़ क्या प्रदर्शित करता है? (ग्राफ़ दिया होता है।)

(vi) **चित्रात्मक प्रारूप**—इस प्रकार के प्रश्न में उत्तर को चित्र की सहायता से समझाने के लिए कहा जाता है, या चित्र देकर उससे सम्बंधित प्रश्न पूछे जाते हैं।

प्रश्न—'पम्प' की कार्यविधि के तीन चरणों को समझाने के लिए एक नामांकित चित्र बनाइये।

प्रश्न—त्रिफली प्रयोग का चित्र बनाकर समझाइये कि बीज A तथा बीज C का उपयोग क्यों करते हैं?

नील पत्र (Blue Print) के अनुसार, लघुउत्तरात्मक प्रश्नों की संख्या तथा प्रकार तैयार किये जाते हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. निम्नलिखित कथनों में 'सत्य' अथवा 'असत्य' लिखिए—

1. जिन प्रश्नों में निबन्धात्मक प्रश्नों से अपेक्षाकृत कम समय तथा कम शब्दों में उत्तर पूछा जाता है, उन्हें लघु उत्तरात्मक प्रश्न कहते हैं।
2. $(a + b)^2$ = ... एक पूरक अतिलघु प्रश्न है।
3.

एन्ज़ाइम	प्रतिक्रिया करते हैं	उत्पन्न करते हैं
1.	शर्करा	....
2.	वसा	....

   उपरोक्त प्रश्न आंकिक प्रारूप का लघु उत्तरात्मक प्रश्न है।

4. प्रश्नवाचक कथनों में, प्रश्न चिन्ह नहीं लगाया जाता है बल्कि अल्पविराम लगाया जाता है।

28.3 लघु उत्तरीय प्रश्न परीक्षा के निर्माण के सिद्धांत (Principles of Construction of Short Answer Type Questions)

लघु उत्तरात्मक परीक्षण के निर्माण में बहुत सी बातों का ध्यान रखना अति आवश्यक है, जिससे लघुउत्तरात्मक प्रश्न की उद्देश्यता, वैधता तथा विश्वसनीयता बनी रहे। ये सिद्धांत निम्नलिखित हैं—

2. अधिकाधिक विषय वस्तु के तत्वों को कवर करता हुआ होना चाहिए।

(i) पौधों का एक लक्षण दीजिए। (कम विषय वस्तु)

(ii) जलीय पौधों का एक लक्षण दीजिए। (अधिक विषय वस्तु)

(iii) मरूस्थलीय पौधों से भिन्न जलीय पौधों का एक लक्षण दीजिए। (अत्यधिक विषय वस्तु)

सभी प्रश्नों के लिए 'एक अंक' ही दिया गया है, परन्तु विषय वस्तु को सबसे अधिक प्रश्न (3) में लिया गया है।

नोट

2. उचित शब्दों का प्रयोग–

(*i*) कार्बन डाईऑक्साइड की तीन विशेषताओं का वर्णन कीजिए। (गलत दिशाा)

(*ii*) कार्बन डाईऑक्साइड की किन्हीं तीन रासायनिक विशेषताओं का उल्लेख कीजिए। (सही दिशा)

3. प्रश्न के सामने उसके मूल्यांकित अंक लिखना–

(*i*) किसी स्थान की जलवायु को प्रभावित करने वाले तीन कारकों के नाम लिखिए। – 2 अंक (दोषयुक्त)

(*ii*) किसी स्थान की जलवायु को प्रभावित करने वाले दो कारकों के नाम लिखिए। – 2 अंक (दोषयुक्त)

4. सरल तथा संक्षिप्त भाषा का प्रयोग–

(*i*) अपने पालतू कुत्ते का संक्षिप्त विवरण दीजिए। (कठिन)

(*ii*) अपने पालतू कुत्ते शीर्षक पर चार पंक्तियाँ लिखिए। (सरल बेहतर)

28.4 लघु उत्तरीय प्रश्न का संपादन तथा समीक्षा (Editing and Reviewing of Short Answer Type Questions)

यदि लघु उत्तरात्मक परीक्षा के निर्माण सिद्धांतों का भली भाँति ज्ञान हो तो, इसके सम्पादन तथा समीक्षा सरलता से की जा सकती है तथा त्रुटि सामने आने पर इसमें आवश्यकतानुसार सुधार भी किया जा सकता है।

नीचे तालिका में लघुउत्तरात्मक प्रश्न बनाते समय कुछ त्रुटियाँ तथा उनका संशोधन करके उन्हें बेहतर ढंग से नियोजित करके बताया गया है।

तालिका 1–प्रश्न संबंधी सामान्य त्रुटियाँ

मूल प्रश्न	संशोधित रूप	संशोधन की प्रकृति
(*a*) ऑक्सीजन का एक रासायनिक अभिलक्षण लिखिए।	(*a*) ऑक्सीजन का कॉर्बन डाई ऑक्साइड से भिन्न एक रासायनिक अभिलक्षण दीजिए।	(*a*) विषय वस्तु का विस्तार क्षेत्र दोगुना है तथा मूल जानकारी से अधिक के बारे में जानने का प्रयत्न किया गया है।
(*b*) 10 C.m आधार का एक समकोण त्रिभुज बनाइये।	(*b*) 'D' की सहायता के बिना 10 c.m के आधार का एक समकोण त्रिभुज बनाइये।	(*b*) इस प्रश्न में मूल्यांकन के उच्च स्तर का आकंलन किया जा रहा है।
(*c*) समझाइये कि लोहे की कील पानी में क्यों डूब जाती है।	(*c*) पानी में लोहे की कील क्यों डूब जाती है?	(*c*) अधिक विस्तृत तथा वृहद शब्दों को हटाकर प्रश्न की भाषा को सरल रूप दिया गया है।
(*d*) प्राकृतिक चयन के सिद्धांत के मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए।	(*d*) प्राकृतिक चयन के तीन सिद्धांतों का उल्लेख कीजिए।	(*d*) संबंधित तथा कम समय में होने वाला प्रश्न।

क्या आप जानते हैं एक अच्छे परीक्षण में कुछ विशेषताएँ अवश्य पाई जाती हैं–वैधता, विश्वसनीयता, उद्देश्यता, संक्षिप्तता, प्रायोगिकता।

नोट

28.5 लघु उत्तरात्मक प्रश्न के लाभ (Avantages of Short Answer Type Questions)

लघु उत्तरात्मक प्रश्न निबन्धात्मक प्रश्नों से कई प्रकार से बेहतर होते हैं, इनके कुछ लाभ निम्नलिखित हैं—

1. **सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को कवर करते हुए प्रश्न बनाना**—लघु उत्तरीय प्रश्न, निबन्धात्मक प्रश्नों की तुलना में बहुत छोटे होते हैं। जितने समय में एक निबन्धात्मक प्रश्न हल किया जाता है, उतने ही समय में 4 से 6 लघु उत्तरात्मक प्रश्न हल किये जा सकते हैं। इस प्रकार से ये प्रश्न सम्पूर्ण सिलेबस को कवर कर लेते हैं।
2. **लघु उत्तरात्मक प्रश्न अधिक वैध होते हैं**—लघु उत्तरात्मक प्रश्नों में किसी विषय से सम्बन्धित एक लाइन अथवा कुछ शब्दों में उत्तर देना होता है, इसलिए इसमें प्रश्न का उत्तर घुमाफिरा कर या अनियंत्रित और बेकार की सामग्री नहीं लिखी जा सकती है, अत: दो ट्रक उत्तर दिया जाता है, वह या तो सही होगा या गलत, इस प्रकार बच्चे या परीक्षार्थी के सही ज्ञान अर्जन का पता चल जाता है, अत: यह परीक्षा अधिक वैध होती है।
3. **लघु उत्तरात्मक प्रश्न अधिक विश्वसनीय**—ये प्रश्न सामान्य होते हैं। इनके उत्तर का मूल्यांकन व मापन विषय की गहनता से संबंधित होता है, इसलिए ये प्रश्न अधिक विश्वसनीय होते हैं।
4. **सरल प्रशासन**—इन परीक्षणों का निर्माण करना अपेक्षाकृत अधिक सरल है तथा इन परीक्षाओं का संचालन करना भी अधिक आसान है।

28.6 लघु उत्तरात्मक परीक्षाओं की सीमाएँ (Limitations of Short Answer Type Questions)

लघु उत्तरात्मक परीक्षाओं की सीमाएँ निम्नलिखित हैं—

1. लघु उत्तरात्मक परीक्षाएँ प्राय: पूर्ण जानकारी देती हैं, किन्तु इनमें कौशल तथा प्रवणता का अभाव होता है। परीक्षार्थी इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर देने में पूर्णरूप से स्वतंत्र नहीं होते, अत: उनकी प्रवणता का अनुमान लगाना कठिन है।
2. इस प्रकार के परीक्षणों में उत्तर संक्षेप में देना होता है, अत: विद्यार्थी के भाषायी कौशल तथा उसकी तार्किक शक्ति का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है, अत: उसकी ये प्रतिभाएँ इस परीक्षा द्वारा नहीं उभर पातीं हैं।
3. इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर बहुत कम शब्दों में देना होता है अत: विद्यार्थी की गहन सोच तथा अन्तप्रतिभा का मूल्यांकन नहीं हो पाता।
4. इस प्रकार के प्रश्न का उत्तर देते समय विद्यार्थी को सीमित शब्दों में उत्तर देना होता है, वह अपने विचारा, सुझाव इत्यादि उसमें नहीं जोड़ सकता है, अत: उसके व्यक्तित्व की पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं हो पाती है।
5. लघु उत्तरात्मक प्रश्नों में केवल प्रश्न से संबंधित बात का ही उत्तर देना होता है, अत: विद्यार्थी उस प्रश्न का उत्तर रट लेते हैं, किन्तु उसकी विस्तृतता पर ध्यान नहीं देता, इस प्रकार इन प्रश्नों से विद्यार्थी की विस्तृता का पता नहीं चलता।

टास्क लघु उत्तरात्मक प्रश्नों के प्रारूप लिखिए।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए** (Fill in the blanks)—
   1. लघु उत्तरात्मक प्रश्न अधिक ········· तथा ········· होते हैं।

नोट

2. लघु उत्तरात्मक प्रश्न निर्माण की दृष्टि से अत्यधिक ········ होते हैं।
3. लघु उत्तरात्मक परीक्षण में ········ तथा ········ का अभाव होता है।
4. लघु उत्तरात्मक परीक्षण में विद्यार्थी के ········ की पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं हो पाती।

28.7 सारांश (Summary)

- ऐसे प्रश्न जिनके उत्तर निबन्धात्मक परीक्षाओं की तुलना में काफी लघु यानी छोटे होते हैं, इन्हें लघु उत्तरीय प्रश्न कहते हैं। तथा ऐसी परीक्षा को लघु उत्तरात्मक परीक्षा कहते हैं। तथा ऐसी परीक्षा को लघु उत्तरात्मक परीक्षा कहते हैं। उत्तर कितने छोटे लिखे जायें इसके लिए प्रश्न में ही निर्देश दे दिये जाते हैं, जैसे इसके लिए प्रश्न में ही निर्देश दे दिये जाते हैं
- इस प्रकार के प्रश्न सभी विषयों से सम्बन्धित उपलब्धि की जाँच हेतु प्रयोग में लाये जा सकते हैं।
- इस प्रकार यदि लघु उत्तरात्मक परीक्षाओं की सापेक्षता निबन्धात्मक और वस्तुनिष्ठता परीक्षाओं के संदर्भ में परखी जाये तो इनका स्थान बीच में ही पड़ेगा। दूसरे शब्दों में उपयोगिता और समर्थता की दृष्टि से जहाँ हम इन्हें निबन्धात्मक से कुछ अधिक और वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं से कुछ कम आँकने का साहस कर सकते हैं।
- लघु उत्तरात्मक प्रश्नों को कई प्रकार से लिखा जाता है, विभिन्न प्रारूपों के अनुसार प्रश्न की भाषा तथा शब्दों का चयन भी अलग अलग होती है।
- लघु उत्तरात्मक परीक्षण के निर्माण में बहुत सी बातों का ध्यान रखना अति आवश्यक है, जिससे लघुउत्तरात्मक प्रश्न की उद्देश्यता, वैधता तथा विश्वसनीयता बनी रहे।
- अधिकाधिक विषय वस्तु के तत्वों को कवर करता हुआ होना चाहिए।
- यदि लघु उत्तरात्मक परीक्षा के निर्माण सिद्धांतों का भली भाँति ज्ञान हो तो, इसके सम्पादन तथा समीक्षा सरलता से की जा सकती है
- **सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को कवर करते हुए प्रश्न बनाना**—लघु उत्तरीय प्रश्न, निबन्धात्मक प्रश्नों की तुलना में बहुत छोटे होते हैं, जितने समय में एक निबन्धात्मक प्रश्न हल किया जाता है, उतने ही समय में 4 से 6 लघु उत्तरात्मक प्रश्न हल किये जा सकते हैं।
- लघु उत्तरात्मक परीक्षाएँ प्राय–पूर्ण जानकारी देती हैं, किन्तु इनमें कौशल तथा प्रवणता का अभाव होता है।
- इस प्रकार के परीक्षणों में उत्तर संक्षेप में देना होता है, अतः विद्यार्थी के भाषायी कौशल तथा उसकी तार्किक शक्ति का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है।

28.8 शब्दकोश (Keywords)

- **लघुउत्तरात्मक**—उत्तर एक पंक्ति में या शब्दों में।
- **सीमित**—निश्चित।

28.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. लघु उत्तरात्मक परीक्षण का क्या अर्थ है?
2. लघु उत्तरात्मक परीक्षण के सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए।
3. लघु उत्तरात्मक परीक्षण के लाभ तथा सीमाएँ लिखिए।

नोट

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. 1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. असत्य।

2. 1. वैध, विश्वसनीय 2. सरल 3. प्रवणता, भाषायी कौशल
4. व्यक्तित्व।

28.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*– डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई–29: निबंधात्मक परीक्षण: लाभ तथा सीमाएँ (Essay Type Test : Advantages and Limitations)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

29.1 निबंधात्मक परीक्षण का अर्थ (Meaning of Essay Type Test)

29.2 निबंधात्मक परीक्षण के लाभ (Advantages of Essay Type Test)

29.3 निबंधात्मक परीक्षण की सीमाएँ (Limitations of Essay Type Test)

29.4 निबंधात्मक परीक्षा में सुधार (Reforms in Essay Type Test)

29.5 सारांश (Summary)

29.6 शब्दकोश (Keywords)

29.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

29.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- निबंधात्मक परीक्षा के अर्थ, लाभ और इसकी सीमाओं की व्याख्या करने में;
- निबंधात्मक परीक्षा प्रणाली सुधार का विश्लेषण करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

निबंधात्मक परीक्षाओं से हम सभी भली-भाँति परिचित हैं क्योंकि प्राय: सभी स्कूल एवं कॉलेजों में इनका प्रयोग होता है। इन परीक्षाओं की नींव अत्यंत गहरी है इसीलिए इन परीक्षाओं को रूढ़िवादी परीक्षाओं के नाम से भी पुकारा जाता है। निबंधात्मक परीक्षाओं में परीक्षार्थी किसी भी प्रश्न का उत्तर विस्तार से देता है, उत्तर की कोई सीमा निध ारित नहीं की जाती तथा परीक्षार्थी अपने मौलिक विचारों को अभिव्यक्त करने में पूर्ण स्वतंत्र होता है। यद्यपि इन परीक्षाओं के माध्यम से परीक्षार्थी की विभिन्न मानसिक योग्यताओं, जैसे–रुचियों, क्षमताओं, अभिव्यक्तियों, कौशलों आदि का सही मूल्यांकन सम्भव है, फिर भी, ये परीक्षायें मूलत: इस बात पर विशेष महत्व देती हैं कि परीक्षार्थी सुन्दर लेख एवं भाषा शैली के आधार पर तथ्यों को फिर से किस कुशलता के साथ प्रस्तुत कर पाता है।

29.1 निबंधात्मक परीक्षण का अर्थ (Meaning of Essay Type Test)

निबंधात्मक परीक्षाओं का प्रचलन भारत में काफी समय से है जो अब भी चला आ रहा है, इस प्रकार की परीक्षाएँ लिखित परीक्षाओं के पुराने तथा परम्परागत रूप को प्रदर्शित करती हैं। इस प्रकार की परीक्षाओं के प्रश्न पत्रों में प्रश्नों की रचना इस प्रकार से की जाती है कि छात्र उनके विस्तृत रूप से इस प्रकार लिख सकें जैसे कि वे कोई

निबंध लिख रहे हों। निबंध में किसी एक विषय से सम्बन्धित काफी नियंत्रित तथा स्वतंत्र सामग्री रह सकती है जो जैसा चाहे अपना उत्तर दे सकता है, इसी आधार पर इन्हें निबंधात्मक शैली की परीक्षाएँ कहा जाता है, प्रश्नों के उत्तरों में पूर्ण स्वच्छंदता, विस्तृत तथा गहनता होने के कारण इनमें विविधताओं का होना स्वाभाविक हो जाता है और इस प्रकार के उत्तरों से संबंधित विविधताओं का मूल्यांकन करके बालकों की उपलब्धियों की तुलना करने का कार्य परीक्षण द्वारा किया जाता है।

29.2 निबंधात्मक परीक्षण के लाभ (Advantages of Essay Type Test)

निबंधात्मक परीक्षाओं की सामान्य आलोचना के संदर्भ में यद्यपि यह कहना कोई महत्व नहीं रखता कि यदि इन परीक्षाओं को सावधानीपूर्वक पूर्व नियोजित ढंग से प्रयोग में लाया जाय तो प्रभावी परिणाम प्राप्त हो सकता है, फिर भी, इन परीक्षाओं में कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ अवश्य हैं जो निम्न हैं—

1. अधिगम के बहुत से पहलू ऐसे हैं जिनका मूल्यांकन केवल निबंधात्मक परीक्षाएँ ही कर सकती हैं, अन्य परीक्षाएँ नहीं।
2. ये परीक्षाएँ उच्च मानसिक प्रक्रियाओं के मापन का एक सशक्त साधन है।
3. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी को विचारों की अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता होती है।
4. इन परीक्षाओं से ज्ञान के गुणात्मक पक्षों, जैसे—शाब्दिक अभिव्यक्ति, भाषा पर अधिकार, साहित्यिक शैली, विचारों का प्रस्तुतिकरण आदि का उचित मूल्यांकन सम्भव है।
5. इन परीक्षाओं के प्रश्नों की रचना करना सरल कार्य है।
6. इन परीक्षाओं से अपेक्षित अध्ययन विधियों को विकसित करने में सहायता मिलती है।
7. ये परीक्षायें मितव्ययी (economical) हैं।
8. इन परीक्षाओं में नकल (cheating) की सम्भावना कम रहती है।
9. यह परीक्षा प्रणाली सभी विषयों के लिये उपयुक्त है।
10. ये परीक्षाएं विषय सम्बन्धी तथ्यों की ही जाँच नहीं करतीं वरन् तथ्यों को अनेक दूसरी परिस्थितियों में प्रयोग करने की क्षमता की भी जाँच करती हैं।
11. इन परीक्षाओं की सहायता से परीक्षार्थी के व्यक्तित्व सम्बन्धी विभिन्न पहलुओं का महत्वपूर्ण ज्ञान प्राप्त हो सकता है।
12. ये परीक्षाएँ अध्ययन की आदत (study habits) का विकास करती हैं।
13. परीक्षार्थियों की एक बहुत बड़ी संख्या की परीक्षा एक साथ ले सकने के कारण समय और शक्ति दोनों की ही बचत हो जाती है।
14. यदि इन परीक्षाओं की रचना, प्रशासन एवं फलाँकन प्रक्रिया में सुधार हो जाय तो ये परीक्षाएँ उतनी ही विश्वसनीय एवं वैध हो सकती हैं जितनी कि वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ।

- निबंधात्मक प्रश्न-पत्रों की रचना का कार्य बहुत ही सरल है।
- इस प्रकार की परीक्षाओं को लेने में काफी सुविधा रहती है। एक बार प्रश्न-पत्र बाँट कर निरीक्षक का कार्य काफी सरल रहता है। अत: प्रशासनिक (Administrative) दृष्टिकोण से निबंधात्मक परीक्षायें ठीक मानी जाती हैं।
- उत्तर विस्तृत होते हैं जिनसे पता चलता है कि बालक को विषय की कितनी समझ है, कितनी गहराई में जाकर उसने उसका अध्ययन किया है तथा किस ढंग से वह अपने विचारों को अच्छी प्रकार अभिव्यक्त कर रहा है। चिन्तन मन, विचारशीलता, कल्पना, तर्क वितर्क, निर्णयक्षमता, आलोचना तथा समालोच योग्यता आदि का जितना परिचय निबंधात्मक परीक्षाओं के द्वारा मिल सकता है उतना लघु उत्तरात्मक तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के माध्यम से नहीं। इसके अतिरिक्त इस प्रकार की परीक्षायें बालकों की अभिव्यक्ति, अभिव्यंजना, सृजनशीलता तथा

नोट

रचनात्मकता के प्रकाशन में अत्यधिक सहयोगी सिद्ध होती हैं और यही कारण है कि विषय चाहे कोई भी क्यों न हो उससे सम्बन्धित ज्ञान एवं कुशलताओं की उपलब्धि की जाँच लिखित रूप में करने के लिये निबंधात्मक प्रश्नों की अनिवार्यता को कभी नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता।

नोट्स निबन्धात्मक प्रश्नों की सहायता से बालक द्वारा अर्जित विषय सम्बन्धी ज्ञान एवं कुशलताओं आदि की विस्तृत एवं गहन रूप में जाँच की जा सकती है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)–

1. निबन्धात्मक परीक्षा ……… के परम्परागत रूप को प्रदर्शित करती है।
2. निबन्धात्मक परीक्षा में प्रश्नों के उत्तरों में पूर्ण स्वच्छंदता, विस्तृतता तथा गहनता होने के कारण इनमें ……… का होना स्वाभाविक हो जाता है।
3. निबन्धात्मक परीक्षाएँ उच्च ……… के मापन का एक सशक्त साधन है।
4. ……… से निबन्धात्मक परीक्षाएँ ठीक मानी जाती हैं।

29.3 निबंधात्मक परीक्षण के दोष (Limitations of Essay Type Test)

(1) निबंधात्मक परीक्षाओं और उनके परिणामों में पूरी तरह से अविश्वसनीयता (Un-reliability) का गुण पाया जाता है। विश्वसनीयता तभी होती है जबकि परीक्षा के परिणामों में एकरूप (Consistency) बनी रहे। परन्तु इन परीक्षाओं में ऐसा नहीं होता एक ही निबंधात्मक प्रश्न पत्र को एक बालक द्वारा भिन्न-भिन्न समय या परिस्थितियों में हल किया जाये तो उसके उत्तरों और प्राप्तांकों में कुछ अन्तर मिल जायेगा। इसी प्रकार अगर एक विद्यार्थी की उत्तर पुस्तिका को अलग-अलग परीक्षा अथवा एक ही परीक्षक से भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में मूल्यांकन कराया जाये तो प्राप्तांकों में काफी अन्तर देखने को मिल जाता है। इस प्रकार से किया हुआ मापन और मापन का साधन जिसमें कोई अपने मापन कभी बहुत कम या बहुत अधिक घोषित कर दिया जाये, विश्वसनीय कैसे ठहराया जा सकता है?

(2) निबंधात्मक परीक्षायें और उनके परिणाम वैध या यथार्थ (Valid) नहीं होते। वैध से अथवा व्यवहार या कार्य की यथार्थता से होता है। जिस उद्देश्य से परीक्षा ली जा रही हो अथवा प्रश्न पूछा जा रहा हो, और इस उद्देश्य को अगर कोई परीक्षा पूरी करती है तो उसे वैध माना जाता है। निबंधात्मक परीक्षाओं में देखा यह जाता है कि प्रश्न पत्र तो इतिहास या भूगोल का है परन्तु उसमें ऐसी भाषा का प्रयोग किया जाता है कि ऐसा लगता है कि परीक्षा इतिहास के ज्ञान की न लेकर भाषा-हिन्दी या अंग्रेजी की ली जा रही है क्योंकि बालक के समझ में प्रश्न ही नहीं आता फिर वह विषय के ज्ञान की जाँच कैसे करवायेगा? इस तरह निबंधात्मक परीक्षाओं में विषयानुकूलता की कमी के कारण उन्हें यथार्थ तथा वैध नहीं ठहराया जा सकता।

(3) निबन्धात्मक परीक्षाओं में तीसरी बड़ी कमी वस्तुनिष्ठता या वस्तुगतता (Objectivity) के अभाव को लेकर है। इनमें हर दृष्टि से आत्मगतता (Subjectivity) का बोल-बाला रहता है। "मुगल साम्राज्य के पतन के लिए कौन जिम्मेदार था, कारण सहित विस्तार से लिखिये।" इसी निबन्धात्मक शैली के प्रश्न पर अगर विचार किया जाये तो इसमें परीक्षा देने वाले और परीक्षक दोनों के लिए वस्तुगत (Objective) दृष्टि बनाये रखना असम्भव ही हो जाता है। अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, औरंगजेब तथा बाद में किसी भी मुगल शासक को इसके लिये उत्तरदायी ठहराने की बात विद्यार्थियों द्वारा अपने-अपने मतानुसार सोची जा सकती है। अब परीक्षक कहाँ तक

नोट

किस प्रकार के उत्तर को अपनी दृष्टि से उचित समझकर किसको कितने अंक प्रदान करता है यह उसकी अपनी रुचि, योग्यता तथा अन्य बहुत-सी बातों पर निर्भर करता है। यही कारण है कि सभी परीक्षक एक ही उत्तर पर एक जैसे अंक प्रदान नहीं कर सकते।

(4) निबंधात्मक परीक्षाओं तथा प्रश्नों में बालकों की कठिनाइयों तथा कमजोरियों को ठीक ढंग से पकड़ कर निदान करने की क्षमता (Diagnosticity) का भी अभाव पाया जाता है और इसी कारण इनके परिणाम उपचारात्मक या सुधारात्मक शिक्षा (Remedial Education) के लिए प्रयोग में नहीं लाये जा सकते।

(5) निबंधात्मक परीक्षा तथा प्रश्न पत्रों की संख्या काफी सीमित होती है। एक प्रश्न पत्र में कुल 9-10 प्रश्न पूछे जाते हैं और उनमें से भी छात्रों को 4 या 5 प्रश्न करने को कहा जाता है। इन 4-5 प्रश्नों के द्वारा वर्ष में पढ़ाये गये सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु के ज्ञान तथा कुशलताओं आदि की जाँच करना कठिन ही नहीं असम्भव भी है। यह तो तभी हो सकता है जबकि प्रश्न-पत्र इतना बड़ा हो और उसमें सभी पाठों, इकाइयों तथा अधिगम अनुभवों की उपलब्धि को आधार बनाते हुए ज्यादा से ज्यादा प्रश्न पूछने की गुंजाइश हो। यह कार्य निबंधात्मक परीक्षाओं के द्वारा न होने के कारण यही कहा जाता है कि उनमें समुचित व्यापकता (Comperhensiveness) नहीं पाई जाती और इसकी पूर्ति वस्तुनिष्ठ शैली के प्रश्नों (Objective Type Questions) के द्वारा ही सम्भव है।

(6) निबन्धात्मक परीक्षाओं में उत्तर पुस्तिकाओं के मूल्यांकन का कार्य भी परीक्षकों के लिए बड़ी टेढ़ी खीर सिद्ध होता है। लम्बे-लम्बे उत्तरों को अच्छी तरह पढ़कर और उत्तरों की गुणवत्ता (Quality) को अच्छी तरह परखकर सही-सही अंक प्रदान करना कोई सरल बात नहीं। यह तय करना कि इस प्रकार के उत्तर में 10 या 20 में से कितने अंक दिये जायें, ताकि सभी बालकों का न्याय संगत मूल्यांकन किया जा सके अर्थात् किसी को भी कम या अधिक अंक न मिलें। इस तरह की न्याय संगत तराजू का इस्तेमाल परीक्षक द्वारा कर पाना मुश्किल ही है।

निबंधात्मक परीक्षाओं के इस प्रकार के दोषों को देखते हुए अब प्रश्न-पत्रों में दूसरी शैली के प्रश्नों—लघु उत्तरात्मक तथा वस्तुनिष्ठ का प्रचलन काफी बढ़ रहा है। परन्तु साथ ही निबंधात्मक परीक्षाओं तथा प्रश्नों को भी बिल्कुल त्यागा नहीं जा रहा है।

(7) ये परीक्षाएँ अधिक समय लेती हैं। परीक्षार्थी लिखते-लिखते थक जाता है, साथ ही, सभी स्थानों पर निरीक्षण (supervision) भी एक-सा नहीं होता।

(8) इन परीक्षाओं का निदानात्मक महत्व नहीं है। प्रश्नों का उत्तर विस्तृत होने से परीक्षार्थी की कमजोरियों का पता लगाना आसान कार्य नहीं है। अनेक परीक्षार्थी प्रश्न का उत्तर न जानते हुए भी इधर-उधर की गप्पें लड़ाकर कुछ-न-कुछ लिख ही देते हैं इससे पूरी परीक्षा का उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है।

(9) परीक्षकों के व्यक्तिगत मूल्यांकन (standard) के कारण परीक्षार्थी के एक विषय के अंक दूसरे विषय के प्राप्तांकों से काफी भिन्न होते हैं।

(10) परीक्षक प्रश्न का अच्छा उत्तर प्राप्त होने पर अच्छे अंक देता है लेकिन यदि उससे अगले प्रश्न का उत्तर अत्यंत असंतोषजनक पाता है तो इस प्रश्न पर अंक तो कम देता ही है साथ ही पूर्व प्रश्न पर दिये गये अंकों को भी कम करने की सोचता है।

(11) प्रश्नों को ठीक क्रम से उत्तर न देने पर भी उसे कुछ झुँझलाहट महसूस होती है।

(12) यदि किसी प्रश्न के तीन खण्ड हैं और परीक्षार्थी ने उन्हें एक ही स्थान पर क्रम से उत्तर न देकर अलग-अलग पृष्ठों पर अनुचित क्रम से लिखा है तब भी परीक्षक का मूड खराब हो जाता है।

(13) परीक्षक एक ऐसे उत्तर पर जो संक्षिप्त भले ही हो लेकिन स्पष्ट, सुन्दर व क्रमबद्ध तरीके से लिखा गया है अच्छे अंक देता है अपेक्षाकृत एक अधिक व्यापक उत्तर के जो स्पष्ट व स्वच्छ क्रमबद्ध तरीके से न लिखा गया हो।

नोट

(14) दीर्घ उत्तर वाले प्रश्नों के मध्य वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर में यदि परीक्षार्थी काँट-छाँट करता है तो परीक्षक ऐसे प्रश्न पर अंक तो पूरे दे देता है लेकिन काँट-छाँट के सन्देह को दूर करने के लिये दूसरे दीर्घ उत्तरीय प्रश्नों पर कम अंक देता है।

(15) कुछ परीक्षक तो उत्तरपुस्तिका के कवर पेज की रिक्तियों व हस्तलेख से ही परीक्षार्थी की योग्यता का अनुमान लगा लेते हैं व इस पूर्वाग्रह का प्रभाव उनकी अंकन प्रक्रिया पर पड़ता है।

(16) कुछ परीक्षक उत्तर पुस्तिका की आन्तरिक साज सज्जा से प्रभावित हुये बिना भी नहीं रह पाते।

(17) कुछ परीक्षक प्रश्नों का मूल्यांकन पेज संख्या गिनकर करते हैं चाहे उत्तर वैध भले ही न हो।

(18) परीक्षार्थी द्वारा व्यर्थ में ही पेज छोड़ देने व उत्तर पुस्तिका का ठीक से प्रयोग न करने पर भी कुछ परीक्षकों का मूड खराब हो जाता है।

(19) इस परीक्षा प्रणाली का एक प्रमुख दोष यह भी है कि इसमें परीक्षक अंकन का आधार दूसरे अच्छे परीक्षार्थियों के द्वारा प्राप्त अंकों को मानकर चलता है।

क्या आप जानते हैं समयावधि कम हो और उत्तर पुस्तिकायें बहुत हों तो भी परीक्षक लापरवाही के साथ मूल्यांकन करता है। कुछ परीक्षक तो अपने पूर्व विद्यार्थियों तक से यह कार्य सम्पन्न करा लेते हैं। प्रश्न पत्रों का प्रारूप भी प्रतिवर्ष समान नहीं रह पाता। कुछ परीक्षक जान-बूझ कर अत्यन्त कठिन प्रश्न पत्र बनाते हैं तो दूसरे परीक्षक अत्यन्त सरल। प्रश्न पत्रों का कठिनाई स्तर विश्वविद्यालय स्तर पर ही भिन्न नहीं होता वरन् प्रतिवर्ष बदलता रहता है।

29.4 निबन्धात्मक परीक्षा में सुधार (Reforms in Essay Type Test)

निबंधात्मक परीक्षायें विश्वसनीय तथा वैध नहीं होती हैं फिर भी शिक्षा के क्षेत्र में इनका अधिक प्रयोग होता है। उच्च अधिगम-उद्देश्यों के मापन के लिये निबंधात्मक परीक्षायें ही सफलतापूर्वक प्रयुक्त की जा सकती हैं। निबंध त्मक परीक्षाओं की सीमायें होते हुए भी इनको हटाया नहीं जा सकता है, अपितु इनके सुधार की आवश्यकता है। निबंधात्मक परीक्षाओं में तीन प्रकार के सुधारों की आवश्यकता है–

1. प्रश्नों में सुधार,
2. प्रश्न-पत्रों में सुधार तथा
3. उत्तर-पुस्तकों के मूल्यांकन में सुधार।

(1) प्रश्नों में सुधार–निबंधात्मक प्रश्नों के सुधार के लिये निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

प्रत्येक प्रश्न को किसी अधिगम के विशेष उद्देश्य का मापन करना चाहिए। प्रश्नों की रचना में पाठ्यवस्तु के साथ उद्देश्य को भी महत्व देना चाहिए। प्रश्नों में सम्मिलित की गई पाठ्यवस्तु शुद्ध तथा वास्तविक होनी चाहिए। प्रश्नों की भाषा स्पष्ट तथा सरल होनी चाहिये। प्रश्नों का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिसके लिये निश्चित उत्तर हों। प्रश्नों का कठिनाई स्तर छात्रों के अनुकूल होना चाहिए। प्रश्नों का स्वरूप भी विविध प्रकार का होना चाहिये।

(2) प्रश्न-पत्रों में सुधार–प्रश्न-पत्र ऐसे होने चाहिये जिनके द्वारा सभी अधिगम उद्देश्यों का मूल्यांकन किया जा सके। पाठ्य-वस्तु के साथ उद्देश्यों को विशेष महत्व दिया जाना चाहिए। एक ही पाठ्य-वस्तु विभिन्न उद्देश्यों के लिये प्रयुक्त की जा सकती है। प्रश्न-पत्र में अधिक विकल्प न दिये जाएँ अपितु प्रश्नों के अन्दर ही विकल्प देने चाहिए। प्रश्न-पत्र के निर्देश स्पष्ट तथा सरल भाषा में होने चाहिए। प्रश्न-पत्र का कठिनाई स्तर छात्रों के अनुरूप ही होना चाहिए। अंकों का वितरण प्रश्न के साथ ही देना चाहिए। मूल्यांकन के हेतु उत्तरों के नमूने भी देने चाहिए।

नोट

(3) उत्तर-पुस्तकों के मूल्यांकन में सुधार—निबन्धात्मक परीक्षा में उत्तर-पुस्तकों के मूल्यांकन में सुधार करना चाहिए। मूल्यांकन के लिये योग्य व्यक्तियों को परीक्षक नियुक्त करना चाहिए। मूल्यांकन निर्देश सरल तथा स्पष्ट भाषा में होने चाहिए। उत्तरों के नमूने परीक्षकों को भेजने चाहिए। प्रश्न के प्रत्येक खण्ड के अलग-अलग अंक देने चाहिए। अंकों के स्थान पर रेंक (Rank) अथवा ग्रेड (Grade) दिये जाने चाहिए। केन्द्रित मूल्यांकन की व्यवस्था होनी चाहिये और परीक्षकों को उत्तर पुस्तक बांटने के बजाय प्रश्न बांटने चाहिए। एक ही परीक्षक द्वारा सभी उत्तर-पुस्तकों के एक प्रश्न का अंकन करना चाहिए।

अधिगम के उच्च उद्देश्यों के मूल्यांकन में निबन्धात्मक प्रश्न सफलतापूर्वक प्रयुक्त किये जाते हैं।

टास्क निबन्धात्मक परीक्षा में सुधार कैसे लाया जा सकता है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. निम्नलिखित कथनों में 'सत्य' तथा 'असत्य' लिखिए—

1. निबन्धात्मक परीक्षाएँ विश्वसनीय तथा वैध नहीं होती हैं।
2. निबन्धात्मक परीक्षाओं तथा प्रश्नों में बालकों की कठिनाइयों तथा कमजोरियों को ठीक ढंग से पकड़कर निदान करने की क्षमता का अभाव पाया जाता है।
3. निबन्धात्मक परीक्षाओं में किसी प्रकार के सुधार की कोई आवश्यकता नहीं है।
4. प्रश्न पत्रों में सुधार हेतु केवल पाठ्य वस्तु को महत्व देना चाहिए।

29.5 सारांश (Summary)

- इस प्रकार की परीक्षाएँ लिखित परीक्षाओं के पुराने तथा परम्परागत रूप को प्रदर्शित करती हैं। इस प्रकार की परीक्षाओं के प्रश्न पत्रों में प्रश्नों की रचना इस प्रकार से की जाती है कि छात्र उनके विस्तृत रूप से इस प्रकार लिख सकें जैसे कि वे कोई निबंध लिख रहे हों। निबंध में किसी एक विषय से सम्बन्धित काफी नियंत्रित तथा स्वतंत्र सामग्री रह सकती है जो जैसा चाहे अपना उत्तर दे सकता है, इसी आधार पर इन्हें निबंधात्मक शैली की परीक्षाएँ कहा जाता है।
- निबंधात्मक परीक्षाओं की सामान्य आलोचना के संदर्भ में यद्यपि यह कहना कोई महत्व नहीं रखता कि यदि इन परीक्षाओं को सावधानीपूर्वक पूर्व नियोजित ढंग से प्रयोग में लाया जाय तो प्रभावी परिणाम प्राप्त हो सकता है, फिर भी, इन परीक्षाओं में कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ अवश्य हैं जो निम्न हैं—
  1. अधिगम के बहुत से पहलू ऐसे हैं जिनका मूल्यांकन केवल निबंधात्मक परीक्षाएँ ही कर सकती हैं, अन्य परीक्षाएँ नहीं।
  2. ये परीक्षाएँ उच्च मानसिक प्रक्रियाओं के मापन का एक सशक्त साधन हैं।
  3. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी को विचारों की अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता होती है।
  4. इन परीक्षाओं से ज्ञान के गुणात्मक पक्षों, जैसे—शाब्दिक अभिव्यक्ति, भाषा पर अधिकार, साहित्यिक शैली, विचारों का प्रस्तुतिकरण आदि का उचित मूल्यांकन सम्भव है।
  5. इन परीक्षाओं के प्रश्नों की रचना करना सरल कार्य है।
  6. इन परीक्षाओं से अपेक्षित अध्ययन विधियों को विकसित करने में सहायता मिलती है।
  7. ये परीक्षायें मितव्ययी (economical) हैं।

नोट

- निबंधात्मक परीक्षाओं और उनके परिणामों में पूरी तरह से अविश्वसनीयता (Un-reliability) का गुण पाया जाता है। विश्वसनीयता तभी होती है जबकि परीक्षा के परिणामों में एकरूप (Consistency) बनी रहे। परन्तु इन परीक्षाओं में ऐसा नहीं होता एक ही निबंधात्मक प्रश्न पत्र को एक बालक द्वारा भिन्न-भिन्न समय या परिस्थितियों में हल किया जाये तो उसके उत्तरों और प्राप्तांकों में कुछ अन्तर मिल जायेगा।
- निबंधात्मक परीक्षायें और उनके परिणाम वैध या यथार्थ (Valid) नहीं होते। वैध से अथवा व्यवहार या कार्य की यथार्थता से होता है। जिस उद्देश्य से परीक्षा ली जा रही हो अथवा प्रश्न पूछा जा रहा हो इस उद्देश्य को अगर कोई परीक्षा पूरी करती है तो उसे वैध माना जाता है।
- निबन्धात्मक परीक्षाओं में तीसरी बड़ी कमी वस्तुनिष्ठता या वस्तुगतता (Objectivity) के अभाव को लेकर है।
- निबंधात्मक परीक्षाओं तथा प्रश्नों में बालकों की कठिनाइयों तथा कमजोरियों को ठीक ढंग से पकड़ कर निदान करने की क्षमता (Diagnosticity) का भी अभाव पाया जाता है।
- निबंधात्मक परीक्षा तथा प्रश्न पत्रों की संख्या काफी सीमित होती है।
- निबंधात्मक परीक्षाओं में तीन प्रकार के सुधारों की आवश्यकता है—
  1. प्रश्नों में सुधार,
  2. प्रश्न-पत्रों में सुधार तथा
  3. उत्तर-पुस्तकों के मूल्यांकन में सुधार।

29.6 शब्दकोश (Keywords)

- **निबन्ध**—विस्तृत, विस्तार से।
- **मूल्यांकन**—आकलन।
- **विश्वसनीय**—विश्वास के योग्य।

29.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. निबन्धात्मक परीक्षा का क्या अर्थ है?
2. निबन्धात्मक परीक्षा के गुणों का उल्लेख कीजिए।
3. निबन्धात्मक परीक्षा की सीमाएँ क्या हैं?
4. निबन्धात्मक परीक्षा में सुधार किस प्रकार लाया जा सकता है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1.	1. लिखित परीक्षा	2. विविधताओं	3. मानसिक प्रक्रियाओं	4. प्रशासनिक दृष्टिकोण।
2.	1. सत्य	2. सत्य	3. असत्य	4. असत्य।

29.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
2. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।
3. *मानसिक मापन एवं मूल्यांकन*— डॉ. आर. ए. शर्मा; आर. लाल. बुक डिपो।

नोट

इकाई—30: अभिवृत्ति प्रवणता, व्यक्तित्व तथा बुद्धि का मापन (Measurement of Attitude, Aptitude, Personality and Intelligence)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
30.1 अभिवृत्ति का मापन (Measurement of Attitude)
30.2 प्रवणता का मापन (Measurement of Aptitude)
30.3 व्यक्तित्व का मापन (Measurement of Personality)
30.4 बुद्धि का मापन (Intelligence of Measurement)
30.5 सारांश (Summary)
30.6 शब्दकोश (Keywords)
30.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
30.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- अभिवृत्ति, प्रवणता, व्यक्तित्व एवं बुद्धि मापन को समझने और इनकी व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

अभिवृत्ति, प्रवणता, व्यक्तित्व तथा बुद्धि का मापन व्यक्ति की सम्पूर्णता को समझने के लिए नितान्त आवश्यक है। इन चारों का विश्लेषण करना बहुत आवश्यक है। बुद्धि एक ऐसा मानसिक तत्व है, जिसके कारण दो बालकों को एक ही ढंग से पढ़ाये जाने पर उनके समझने के स्तर में अन्तर आ जाता है, जिसके कारण ही दो व्यक्तियों की स्मरण शक्ति में भिन्नता दिखाई देती है, जिसके ही कारण दो व्यक्ति एक ही समस्या को हल करने में अलग-अलग योग्यता का प्रदर्शन करते हैं। संक्षेप में, बुद्धि एक अर्थ (explanation) है, जिसे अंग्रेजी में construct के नाम से पुकारा जाता है।

शिक्षा के विस्तार के साथ-साथ व्यक्तित्व मापन की आवश्यकता में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। समस्या चाहे शिक्षा, व्यवसाय, मानसिक स्वास्थ्य और अपराध किसी भी क्षेत्र की हो, उसके निदान (Diagnosis) और उपचार के लिये, पहले व्यक्तित्व के विषय में पूर्ण जानकारी होना आवश्यक है। व्यक्तित्व की जानकारी से ही समस्या का उद्भव और विकास जाना जा सकता है और फिर उसके निराकरण का उपाय किया जा सकता है। व्यक्तित्व मापन के लिये विभिन्न प्रविधियों का प्रयोग किया जा सकता है।

नोट

अभियोग्यता परीक्षण में ऐसे कथनों का एक ऐसा न्यादर्श प्रस्तुत किया जाता है जो व्यक्ति की वर्तमान विशेषताओं का मापन करे। इन कथनों के प्रति व्यक्ति जैसी अनुक्रियाएँ करता है, उनके आधार पर ही यह निष्कर्ष निकाला जाता कि भावी योग्यताएँ क्या हो सकती हैं और किन-किन स्थलों पर भविष्य मे वह सफलता प्राप्त कर सकता है।

अभियोग्यता परीक्षण व्यक्ति की वर्तमान अवस्था की जाँच करता है और भविष्य के लिये अनुमान लगाता है। व्यक्ति की भावी शक्तियों का आकलन (Estimate) उकी वर्तमान शक्तियों के आधार पर किया जाता है। अत: अभियोग्यता परीक्षण में अभियोग्यता का प्रत्यक्ष मापन नहीं होता, उसका आकलन मात्र किया जाता है।

अभिव्यक्ति, व्यक्ति के उस दृष्टिकोण की ओर संकेत करती है जिसके कारण वह किसी वस्तु, परिस्थिति, संस्था या व्यक्ति के प्रति किसी विशिष्ट प्रकार का व्यवहार करता है। विषयों, पदार्थों, व्यक्तियों, पशुओं, पक्षियों, संस्थाओं, जातियों, धर्मों एवं प्रथाओं के प्रति वह प्रवृत्ति अथवा पूर्ण प्रवृत्ति जो हमें विशिष्ट प्रकार से उनके साथ अनुक्रिया करने के लिये बाध्य करती है, अभिवृत्ति कहलाती है।

30.1 अभिवृत्ति का मापन (Measurement of Attitude)

मानव व्यवहार का अध्ययन करने के लिए उसकी अभिवृत्तियों का पता लगाना नितान्त आवश्यक है। अभिवृत्तिया ही व्यक्ति के मानसिक व सामाजिक व्यवहारों को दिशा प्रदान करती है। किसी विचार, वस्तु, प्रणाली या घटना के प्रति जैसी अभिवृत्तियों होगी व्यक्ति उसके प्रति वैसा ही व्यवहार करेगा। वास्तव में अभिवृत्ति ऐसी मानसिक प्रक्रिया है जिसका सम्बन्ध सामाजिक परिस्थितियों से होता है। इस प्रकार से अभिवृत्ति के मानसिक तथा सामाजिक दोनों ही पक्ष होते हैं। इसलिए, शिक्षा-मनोविज्ञान में अभिवृत्ति के अध्ययन का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

30.1.1 अभिवृत्ति का अर्थ (Meaning of Attitude)

साधारण भाषा में अभिवृत्ति से तात्पर्य किसी व्यक्ति के किसी घटना, प्रणाली, विचार या वस्तु के प्रति दृष्टिकोण से है। यह दृष्टिकोण ही उन विचारों प्रणाली, घटनाओं तथा वस्तुओं के प्रति हमारे व्यवहारों को एक निश्चित दिशा प्रदान करता है। अभिवृत्ति की परिभाषा देते हुए *थर्स्टन* कहते हैं—"किसी मनोविज्ञान वस्तु या पदार्थ से सम्बन्धित ऋणात्मक या धनात्मक प्रभावों की मात्रा ही अभिवृत्ति है।"

जैम्स ड्रेवर ने इस सम्बन्ध में कहा—"अभिवृत्ति किसी अनुभव या प्रतिक्रिया करने की तत्परता से सम्बन्धित किसी राय, रूचि या उपदेश का कम या अधिक स्थायी संगठन हैं।"

फ्रीमैन ने अभिवृत्ति की परिभाषा लिखी है—"अभिवृत्ति किन्हीं निश्चित परिस्थितियों, व्यक्तियों एवं वस्तुओं के प्रति संगत रूप में प्रतिक्रिया करने की वह स्वाभाविक तत्परता है जिसे अर्जित किया जाता है।"

रेमर्स, रूमेल तथा गेज के अनुसार—"अभिवृत्ति अनुभवों के माध्यम से व्यवस्थित एवं संवेगात्मक प्रवृत्ति है जो नकारात्मक या सकारात्मक रूप से किसी मनोवैज्ञानिक पदार्थ के प्रति प्रतिक्रिया करती है।"

30.1.2 अभिवृत्ति की विशेषताएँ (Characteristics of Attitude)

इन परिभाषाओं का अध्ययन करने पर अभिवृत्ति की निम्नांकित विशेषताएं होती हैं—

(1) अभिवृत्ति किसी व्यक्ति, घटना, विचार या वस्तु के प्रति-अनुकूल अथवा प्रतिकूल भावना का प्रदर्शन करती है।

(2) अभिवृत्तियों से व्यक्ति के संवेग जुड़े रहते हैं।

(3) अभिवृत्तियाँ अर्जित तथा जन्मजात दोनों ही हैं।

(4) अभिवृत्ति के लिए मनोवैज्ञानिक पदार्थ बड़ा आवश्यक है। पदार्थ से हमारा तात्पर्य किसी वस्तु, स्थान, वाक्य, संस्था, विचार, जाति, धर्म, मूल्य, आदर्श, व्यवसाय आदि सभी से है। व्यक्ति की इनके प्रति धारणा संवेगात्मक होती है। अभिवृत्ति भावनाओं की गहराई का स्वरूप होता है।

(5) इनका स्वरूप लगभग स्थायी होता है। किन्तु ये अपना रूप बदल भी देते हैं। अभिवृत्ति को अधिक समय में बदला जा सकता है।

नोट

(6) अभिवृत्ति सामूहिक तथा व्यक्तिगत दोनों ही प्रकार की होती है।

(7) यह व्यक्ति की स्वाभाविक प्रतिक्रिया है।

(8) इनके मानसिक व सामाजिक दोनों ही पक्ष होते हैं।

(9) अभिवृत्तियों का विकास बहुत कुछ सामाजिक सम्बन्धों के कारण होता है।

30.1.3 अभिवृत्ति का स्वरूप (Dimensions of Attitudes)

अभिवृत्ति के निम्नलिखित आयाम होते हैं—

1. **दिशा** (Direction)—प्रत्येक अभिवृत्ति की कोई न कोई एक दिशा होती है। अभिवृत्तियाँ नकारात्मक दिशा में होती है या सकारात्मक दिशा में होती है। अभिवृत्तियाँ ऋणात्मक अथवा धनात्मक दिशा में या पक्ष में अथवा विपक्ष में हो सकती है।
2. **स्थिरता** (Stability)—अभिवृत्ति कितनी स्थायी है? यह निर्भर करता है कि साथ जुड़े संवेगों पर। यदि अभिवृत्ति के साथ तीव्र संवेग जुड़े हैं, तो अभिवृत्ति अधिक स्थायी होगी।
3. **गहनता** (Intensity)—अभिवृत्ति की गहनता होती है जो बहुत कुछ मात्रा में उसके साथ संवेगों तथा भावों पर निर्भर होती है। यदि भाव या संवेग गहन हैं तो अभिवृत्ति भी गहन होगी।

30.1.4 अभिवृत्ति के प्रकार (Types of Attitudes)

1. (अ) **विशिष्ट अभिवृत्ति** (Specific Attidude)—जो अभिवृत्ति किसी व्यक्ति, वस्तु, घटना, विचार, तथा संस्था-विशेष के प्रति व्यक्त की जाती है, व विशिष्ट अभिवृत्ति कहलाती है।

   (ब) **सामान्य अभिवृत्ति** (General Attitude)—जो अभिवृत्ति व्यक्ति, वस्तु, घटना, या विचार आदि के बारे में सामान्य या सामूहिक रूप से व्यक्त की जाती है, जैसे—घड़ियों के विषय में अभिवृत्ति, राजनैतिक दलों के बारे में दृष्टिकोण या रेल दुर्घटनाओं के प्रति अभिवृत्ति आदि।
2. (अ) **नकारात्मक अभिवृत्ति** (Negative Attitude)—जब हमारा दृष्टिकोण किसी वस्तु, व्यक्ति घटना या विचार के प्रति सुखद नहीं होता या हम उसे पसन्द नहीं करते हैं। या उसके प्रति उत्तेजनात्मक प्रतिक्रिया करते हैं। तो वह नकारात्मक अभिवृत्ति होती हैं।

   (ब) **सकारात्मक अभिवृत्ति** (Positive Attitude)—जब किसी व्यक्ति, विचार, या घटना, या संस्था आदि की उपस्थिति हमे सुखद लगती है, जब उसके प्रति हमारी अनुकूल प्रतिक्रिया होती है तथा जब हम उसके पक्ष में बोलते हैं तब हमारी सकारात्मक अभिवृत्ति होती है।
3. **मानसिक अभिवृत्तियाँ** (Mental Attitude)—मानसिक रूप से जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के सम्बन्ध में पृथक-पृथक् अभिवृत्ति होती है। इन्हें अनेक क्षेत्र के नाम से ही पुकारते हैं; जैसे—सौन्दर्यानुभूति अभिवृत्ति, सामाजिक अभिवृत्ति, धार्मिक अभिवृत्ति। इसी प्रकार प्रत्येक क्षेत्र से सम्बन्धित अभिवृत्ति हो सकती है।

30.1.5 अभिवृत्ति का मापन (Measurement of Attitudes)

अभिवृत्ति मापन का इतिहास अधिक पुराना नहीं है। आज से ठीक छियासी वर्ष पूर्व सन् (1927 ई.) में अभिवृत्ति मापने का कार्य सर्वप्रथम *थर्स्टन* ने प्रारम्भ किया। इसके बाद इन छियासी वर्षो में अभिवृत्ति मापने के लिए अनेक विधियों तथा तकनीकों का विकास हो चुका है। इन विधियों को सामान्यत: दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—

(अ) व्यावहारिक विधियाँ (Behavioural Techniques)

(1) प्रत्यक्ष प्रश्न विधि, तथा

(2) प्रत्यक्ष व्यवहार निरीक्षण-विधि।

(ब) मनोवैज्ञानिक विधियाँ (Psychological Techniques)

(1) युग्म तुलनात्मक प्रविधि,

नोट

(2) समान उपस्थिति अन्तराल प्रविधि
(3) योग-निर्धारण अन्तराल प्रविधि,
(4) स्केलोग्राम प्रविधि,
(5) क्रमबद्ध अन्तर प्रविधि,
(6) विभेदकारिता प्रविधि, तथा
(7) सिमेन्टिक-डिफरेंशियल प्रविधि।

नीचे इन विधियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है—

(अ) व्यावहारिक प्रविधियाँ (Behavioural Techniques)

व्यावहारिक विधियों को प्रत्यक्ष प्रश्न विधि तथा प्रत्यक्ष व्यवहार निरीक्षण का निम्नलिखित संक्षिप्त वर्णन किया गया है—

(1) **प्रत्यक्ष प्रश्न प्रविधि** (Direct Questioning Technique)—इस प्रविधि के अन्तर्गत किसी व्यक्ति से किसी अन्य व्यक्ति, विचार, घटना, वस्तु, मूल्य आदि के बारे में प्रत्यक्ष प्रश्न पूछकर उसकी अभिवृत्ति ज्ञात कर ली जाती है। इन प्रश्नों के माध्यम से व्यक्ति का उस वस्तु के प्रति ऋणात्मक, धनात्मक या उदासीन दृष्टिकोण का पता लगाया जाता है।

(2) **प्रत्यक्ष व्यवहार निरीक्षण प्रविधि** (Direct Observation of Behaviour)—इस प्रविधि के अन्तर्गत व्यक्ति के प्रत्यक्ष व्यवहारों का निरीक्षण किया जाता है और यह पता लगाया जाता है कि वह विभिन्न मनोवैज्ञानिक पदार्थो के प्रति किस प्रकार का व्यवहार करता है। इन व्यवहारों का निरीक्षण करके ही उसकी अभिवृत्तियों का पता लगाया जाता है।

इन दोनों की विधियाँ व्यक्तिनिष्ठ हैं और इनमें व्यक्ति की अभिवृत्तियों के विषय में सही जानकारी नहीं मिल सकती है क्योंकि व्यक्ति प्रश्नों का या तो सही उत्तर नहीं देता है या उत्तरों को छिपा जाता है अथवा जब वह जानता है कि कि उसे व्यवहारों का कोई निरीक्षण कर रहा है तो वह वास्तविक व्यवहार नहीं करता है। उन्नत समाज में जहाँ दुहरे व्यक्तित्व (Dual Personality) होते हैं, ये विधियाँ पूरी तरह असफल रहती हैं।

(ब) मनोवैज्ञानिक प्रविधियाँ (Psychological Techniques)

मनोवैज्ञानिक विधियों का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है—

(1) **युग्म तुलनात्मक प्रविधि** (Paired Comparison Technique)—इस विधि का विकास सन् (1927) ई. में *थर्स्टन* ने युग्म रूप से कुछ कथनों की सूची बनाई परीक्षार्थी से यह कहा जाता है कि वह यह बताये कि प्रत्येक जोड़ में दिए गये कथनों में से उसकी सहमति किसके साथ है तथा किस कथन के साथ जोड़ा बनाया जाता है और जोड़े के सम्बन्ध में उसकी सहमति-असहमति पूछी जाती है। इस प्रकार यदि किसी परीक्षा में 10 कथन हैं तो उसके कुछ 45 जोड़ें बनेगे, 20 कथन हैं तो 190, 30 कथन हैं तो 435, 40 कथन हैं तो 780 तथा 50 कथन हैं तो 1225 जोड़े बनेंगे और छात्र से 1225 ही जोड़ों (Pairs) के बारे में पूछा जायेगा।

(2) **समान-उपस्थिति अन्तराल प्रविधि** (Equal Appearing Interval Technique)—इस प्रविधि का निर्माण एवं प्रतिपादन *थर्स्टन तथा चेव* (Chave) ने किया। इस प्रविधि में भी कुछ कथन होते हैं। किन्तु उनकी संख्या अधिक होती है। कथन जोड़ों में न होकर स्वतन्त्र रूप से होते हैं। प्रत्येक कथन पर व्यक्ति की प्रतिकूल, अनुकूल तथा तटस्थ स्थिति की सहमति पूछी जाती है। यह सहमति या असहमति 11 बिन्दुओं वाले निर्धारण मान (Rating Scale) पर ज्ञात की जाती है। मध्य का बिन्दु तटस्थ का मान होता है। इसमें प्रयुक्त बिन्दु निम्न प्रकार हैं—

नोट

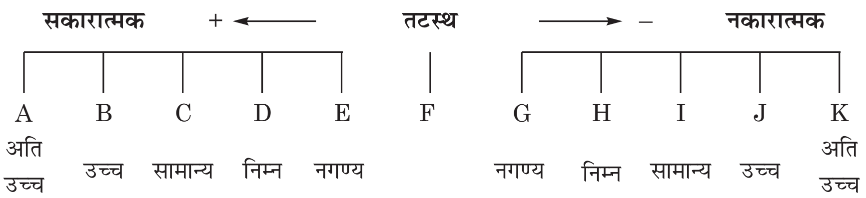

यदि बालक D को चिन्हित करता है तो इसका तात्पर्य है कि उसकी अभिवृत्ति कथन के लिए बहुत कम मात्रा में सकारात्मक है और यदि J पर चिन्ह लगाता है तो इसका तात्पर्य है उसकी अभिवृत्ति कथन के प्रति पर्याप्त मात्रा में सकारात्मक है।

(3) **योग निर्धारण प्रविधि** (Summated Rating Technique)—इस विधि का *लिकर्ट* (Likert) ने प्रतिपादन किया। उसने देखा कि *थर्स्टन* एवं *चेव* की समान-उपस्थिति अन्तराल प्रविधि में समय व श्रम बहुत अधिक लगता है। उसके लिए पूर्ण प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता होती है तथा यह पद्धति अधिक कठिन है तो *लिकर्ट* ने उसी के समान एक सरल विधि का निर्माण किया। इस विधि में निर्धारण मान का प्रयोग किया जाता है किन्तु इसमें निर्धारण स्तर के ग्यारह बिन्दुओं के स्थान पर केवल पाँच बिन्दु रखे गये हैं

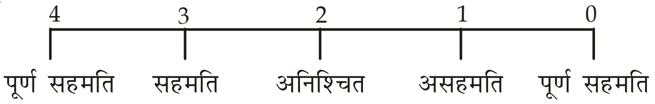

लिकर्ट ने प्रत्येक बिन्दु को भार प्रदान किया। भार (Weight) देन का क्रम 4, 3, 2, 1, तथा 0 रखा गया। पूर्ण सहमति को 4 तथा पूर्ण असहमति को 0 भार दिया जाता है। अन्त में सभी भारों का योग ज्ञात करके व्यक्ति की पूर्ण अभिवृत्ति का योग ज्ञात कर लिया जाता है।

(4) **स्केलोग्राम प्रविधि** (Scalogram Technique)—**गटमेन** ने **सर्वथा** एक नई विधि का प्रतिपादन किया। इस प्रविधि में भी कथनों को जोड़ों में दिया जाता है। सहमति की मात्रा जितनी अधिक होगी, अभिवृत्ति अंक उतने ही अधिक होंगे। इस विधि में व्यक्ति के कथन के सम्बन्ध में केवल सहमति या असहमति ही पूछी जाती है सहमति की स्थिति में 1 अंक तथा सहमति या असहमति की स्थिति में 0 अंक प्रदान करके सम्पूर्ण का योग करके कुल अभिवृत्ति अंक प्राप्त कर लेते हैं।

(5) **क्रमबद्ध अन्तराल प्रविधि** (Successive Interval Technique)—इस प्रविधि का विकास सन् (1937) में *थर्स्टन* ने किया इसका व्यापक प्रयोग तथा प्रचार *सफीर* ने किया। इसलिए यह प्रविधि सामान्यत: *सफीर* के नाम से ही जानी जाती है। इस विधि को कई नामों से पुकारा जाता है, जैसे-हेक इसे 'समान-विभेदक शक्ति मापनी कहते हैं, तो *गिलफोर्ड* इसे 'निरपेक्ष मापनी' (Abolute Scale) कहते हैं। यदि इस विधि को देखें तो पाते हैं कि यह प्रविधि *थर्स्टन* एवं *चेव* की विधि का ही एक संशोधन है। इस विधि में कथन बहुत अधिक मात्रा में होते हैं तथा कथनों को क्रमबद्ध अन्तराल में मापा जाता है। प्रत्येक कथन का आवृत्ति विवरण यह बताता है कि कथनों की कितनी पुनरावृत्ति ज्ञात करते हैं और निर्णायकों की संख्या से भाग देकर संचयी अनुपात मालूम कर लेते हैं।

(6) **विभेदीकरण मापनी** (Discrimination Scale)—इस विधि का सन् (1948) में एडवर्ड्स तथा किपैट्रिक ने प्रतिपादन किया। यह विधि कोई मौलिक विधि नहीं है वरन् इसमें उपलब्ध समान विधियों को मिलाकर एक नया रूप प्रस्तुत कर दिया है। इस विधि में प्रमुख रूप से समान उपस्थिति विधि तथा क्रमबद्ध अन्तराल विधि को मिलाया गया है।

(7) **सिमेन्टिक विभेदीकृत मापनी** (Semiantic Differential Scale)—इस विधि का (1952) में *ओसगुड* ने सर्वप्रथम प्रयोग किया। यह मापनी यह स्वीकार करके चलता है कि एक ही मनोवैज्ञानिक पदार्थ के प्रति विभिन्न व्यक्तियों की विभिन्न धारणा होती है। धारणा में विभिन्नता व्यक्तिगत विभिन्नता के कारण होती है। इस मान्यता

नोट

को ही लेकर *ओसगुड* ने अनेक कथन बनाये जिसमें वर्णन तथा निर्णय को एक निर्धारण-मान पर प्रदर्शित किया गया था। इस निर्धारण-मान के साथ स्थान होते हैं। प्रत्येक व्यक्तिगत पद दो विपरीत शब्दों में व्यक्त किया होता है, जैसे–

विद्यालय (School)

पंक्ति 1. अच्छा .... बुरा

पंक्ति 2. पास .... दूर

पंक्ति 3. उपयोग .... अनुपयोग

इसी प्रकार 80 शब्दों के साथ भी इस तरह के दो विपरीत भाव-बोधक शब्द दिए होते हैं। ये 80 शब्द सभी संज्ञाएँ थी। जिनके लिए प्राय: सभी प्रकार के विश्लेषण प्रयोग किए गए हैं। प्रत्येक पंक्ति 7 खण्डों मे विभक्त है और प्रत्येक खण्ड को या तो 1, 2, 3, 4, 5, 6, तथा 7 या + 3, + 2, + 1, + 0, – 1, – 2, – 3 भारत में दिया जाता है। फिर समस्त अंकों को जोड़कर अभिवृत्ति अंक ज्ञात कर देते हैं। अभिवृत्ति अंक ज्ञात करने के लिए भी एक निश्चित विधि अपनानी पड़ती हैं पैमाने को 'K' कहा जाता है तथा समस्त प्रत्ययों को 'M' कहा गया है प्रत्येक पैमाने को प्रत्येक प्रत्यय का आव्यूह ज्ञात करने के लिए $K \times M$ ज्ञात करते हैं। कई व्यक्तियों की अभिवृत्ति को जब ज्ञात करते हैं तो व्यक्तियों की संख्या को 'N' मानते हैं तथा $N \times K \times M$ ज्ञात करके सामूहिक आवृत्ति ज्ञात कर लेते हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)–

1. अभिवृत्ति के लिए ········· बड़ा आवश्यक है।
2. अभिवृत्ति ········· पर निर्भर करती है।
3. अभिवृत्ति मापन का कार्य सर्वप्रथम ········· ने 1927 में किया।
4. अभिवृत्ति व्यक्ति की ········ प्रतिक्रिया है।
5. अभिवृत्ति ········ गुण होता है।
6. व्यक्ति के गुण ········ प्रकार के होते हैं।
7. गुण जन्मजात होते हैं तथा ········ भी किए जाते हैं।
8. व्यक्ति के आचरण से ········ प्रदर्शित होते हैं।

30.2 प्रवणता का मापन (Measurement of Aptitude)

व्यक्तिगत विभिन्नताओं का एक प्रमुख कारण प्रवणता में अन्तर होना भी है प्रवणता में विभिन्नता होने के कारण ही कोई व्यक्ति शिक्षण की योग्यता रखता है। कोई डाक्टर बनने के लिए अधिक योग्य होता है, तो कोई प्राध्यापक या इन्जीनियर या नेता या अभिनेता या टाइपिस्ट बनने की अधिक योग्यता रखता है। यह सब प्रकृति-प्रदत्त जन्म जात योग्यता होती है। मनोविज्ञान मे इसी जन्म जात मानसिक विशिष्ट योग्यता को प्रवणता के नाम से सम्बोधित किया है।

फ्रीमेन के अनुसार–"प्रवणता एक स्थिति या विशेषताओं का समूह है, जो यह संकेत करता है कि व्यक्ति किसी विशेष ज्ञान, योग्यता या प्रतिक्रियाओं के समूह जैसे–भाषा बोलने की योग्यता, संगीत्गय, यांत्रिक कार्य करने की योग्यता का विकास करना है।"

"An Aptitude is a condition or set of characteristics indicative of an individual's ability to acquire with some specific knowledge skill or set of responses such as the ability to speak a language to become a musician, to do mechanical work etc."

बिंघम के शब्दों में, "प्रवणता किसी एक व्यक्ति के प्रशिक्षण के उपरान्त उसके ज्ञान, दक्षता या प्रतिक्रियाओं को सीखने की योग्यता है।

नोट

"An aptitude is a characteristics or set of conditions, that are symptomatic to the individual's ability to acquire with sum specified training some knowledge or skill or set of responses in a given field."

–Bingham

इन दोनों ही परिभाषाओं में केवल भाषागत अन्तर है, यदि विषय वस्तु देखें तो दोनों ही परिभाषाओं में कोई अन्तर नहीं है। *वारेन* ने भी जो परिभाषा दी है, उसमें भी केवल भाषा का ही अन्तर है। *वारेन* की परिभाषा यहाँ दी गयी है।

वारेन ने अपने शब्द कोष में अभियोग्यता के सम्बन्ध में कहा है—"अभियोग्यता वह दशा या गुणों का रूप है जो व्यक्ति को उस योग्यता की और संकेत करती है, जो प्रशिक्षण के बाद ज्ञान, दक्षता या प्रतिक्रियाओं को सीखता है; जैसे—भाषा बोलने या संगीतोत्पादन की योग्यता।"

"A condition of set of characteristics regarded as symptomatic of a individual's ability to acquire with training some knowledge, skill, or set or responses such as the ability to speak a language to produce music etc."

–Warren

प्रवणता एक वर्तमान स्थिति है जो भविष्य की ओर संकेत करती है। अध्यापकों व माता-पिता को यह कहते सुना जाता है कि वह जन्मजात कवि है या उसमें चित्रांकन की प्रतिभा है। कथन से स्पष्ट है कि ये व्यक्ति कोई विशेष गुण या प्रतिभा रखते हैं, जो अन्य में नहीं, यही गुण या योग्यता 'अभियोग्यता' के नाम से जाने जाते हैं। *वारेन* द्वारा दी गयी परिभाषा इस बात पर संकेत नहीं करती कि वह अभियोग्यता जन्मजात है या अर्जित।

ट्रेक्सलर—"प्रवणता व्यक्ति की दशा या गुणों का संग्रह है जो सम्भावित विस्तार की ओर संकेत करती है जोकि व्यक्ति कुछ ज्ञान, दक्षता या ज्ञान और क्षमताओं का मिश्रण, प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त करेगा; जैसे—कला या संगीत में योगदान करने की योग्यता, यान्त्रिक या विदेशी भाषा या पढ़ने की योग्यता।"

ट्रेक्सलर ने अपनी संक्षिप्त परिभाषा में स्पष्ट किया है कि "प्रवणता वर्तमान दशा है, जो व्यक्ति के भविष्य की क्षमताओं की ओर संकेत करती है।"

"Aptitude is a present condition which is indicative of an individual's potentialities for the future."

ट्रेक्सलर ने प्रवणता को केवल जन्मजात नहीं माना है। उसने स्पष्ट किया है कि अभियोग्यता परीक्षण स्वाभाविक प्रवृत्तियों (Innate Tendencies) और प्रशिक्षण के प्रभाव का परीक्षण करती है। अतः परीक्षाफलों में वंशानुक्रम एवं परिवेश के प्रभाव को पृथक नहीं किया जा सकता है।

30.2.1 प्रवणता की विशेषताएँ (Characteristics of Aptitude)

सुपर के अनुसार प्रवणता की चार विशेषताएँ होती हैं—

(1) विशिष्टता (Specificity),

(2) एकात्मक संरचना (Unitary Composition),

(3) सीखने की सुगमता (Facilitation of Learning) तथा

(4) स्थिरता (Constancy)।

बिंघम ने प्रवणता की निम्नलिखित विशेषताएँ बतायी हैं—

(1) किसी व्यक्ति की अभियोग्यता दशा या गुणों का सम्मिश्रण है जो उसकी क्षमताओं की ओर संकेत करती हैं यह क्षमता जन्मजात तथा वातावरण जन्य दोनों ही परिस्थितियों की उस व्यवसाय में उसकी अभियोग्यता नहीं है।

(2) प्रवणता किसी कार्य में सम्भाव्य योग्यता से भी अधिक है। इसमें किसी क्रिया को पूर्ण करने में उपयुक्तता का भाव भी निहित है। एक व्यक्ति किसी व्यवसाय को यदि पसन्द नहीं करता है और उसमें प्रवीणता ही पायी जाती है तो कहा जा सकता है कि उस व्यवसाय में उसकी अभियोग्यता नहीं है।

(3) प्रवणता किसी वस्तु का नाम नहीं है। यह एक अमूर्त प्रत्यय है। यह व्यक्ति के गुणों की ओर संकेत करती है। अभियोग्यता व्यक्तित्व का अंग है।

नोट

(4) प्रवणता वर्तमान वस्तुस्थिति होने पर भी भविष्य की ओर निर्देशन करती है। यह गुणों का एकीकरण है जो क्षमताओं की ओर संकेत करते हैं। ये परीक्षाएं सीधे भविष्य की सफलता का मापन नहीं करती हैं। इन परीक्षाओं के आँकड़ें इन क्षमताओं के पूर्वानुमान करने का साधन प्रस्तुत करते हैं।

(5) किसी व्यवसाय में प्रवणता प्राप्त करने की तत्परता से ही प्रवणता के साथ उस व्यक्ति की रूचि भी होनी चाहिए। *जोन्स* ने प्रवणता के सम्बन्ध में निम्न विचार प्रकट किए हैं–

"प्रवणता एक योग्यता नहीं है परन्तु निश्चित योग्यताओं को सम्भावित विकास की पूर्वानुमान करने में सहायता करते हैं। प्रवणता परीक्षा योग्यताओं एवं दक्षताओं को प्रकट कर सकती है परन्तु योग्यताओं एवं दक्षताओं को प्रकट करने में परीक्षा का महत्व है।"

(क) **निष्पत्ति** (Achievement)–यह *अतीत* का वर्णन करता है। जो कुछ किया जा चुका है, उसका वर्णन करता है। कितना सीखा जा चुका है।

(ख) **योग्यता** (Ability)–इसका सम्बन्ध *वर्तमान* से होता है। यह दक्षताओं, आदतों, शक्तियों जो कि व्यक्ति में अभी हैं, जो व्यक्ति को कुछ करने योग्य बनाती हैं, उसकी ओर संकेत करती हैं।

(ग) **प्रवणता** (Aptitude)–यह *भविष्य* की ओर संकेत करती है। जो व्यक्ति के वर्तमान स्वभावों, दक्षताओं और योग्यताओं के आधार पर भविष्यवाणी करती है कि वह व्यक्ति प्रशिक्षण द्वारा व्यवसाय में सफलता प्राप्त करेगा।

प्रवणता व अन्य समान प्रत्यय (Other Terms of Concepts)

(1) **सामर्थ्य (Capacity)**–एक सम्भावित योग्यता होती है।

(2) **प्रवीणता (Aptitude)**–अर्जित योग्यता की मात्रा की ओर संकेत करती है। कार्य कुशलता को बोध होता है।

(3) **क्षमता (Efficiency)**–विशेष प्रशिक्षण से प्राप्त होने वाली अधिक से अधिक योग्यता। इसे कार्यक्षमता भी कहते हैं।

(4) **दक्षता (Excellency)**–सुनियोजित कार्यों की विशेषता जो जटिलता, समन्वय और परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप बदलने की योग्यता आदि विशेषताओं से ओत-प्रोत होती है।

(5) **प्रभावशीलता** (Effectiveness)–यह एक सर्वोत्तम योग्यता है, जो आविष्कार करती है तथा जिससे व्यक्ति प्रभावित होते हैं।

30.2.2 प्रवणता की प्रकृति (Nature of Aptitude)

प्रवणता की प्रकृति निम्नांकित तीन मान्याताओं पर निर्भर करती हैं–

(1) किसी व्यक्ति के प्रत्येक कार्य के लिए क्षमता समान रूप से अवरोध नहीं हो सकती है। एक कार्य को अन्य कार्यो की अपेक्षा कुशलता एवं सरलता से कर लेता है। उसे कुछ एक कार्य करने में रूचि होती है, सन्तोष प्राप्त होता है। जबकि अन्य कार्य में रूचि व सन्तोष प्राप्त नहीं कर सकता है और उदाहरण के लिए–यदि एक व्यक्ति कुशल वकील है तो आवश्यक नहीं कि वह एक कुशल चिकित्सक भी बन सकता है। व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए भिन्न-भिन्न मात्रा में क्षमता होती है।

(2) एक ही कार्य के लिए व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न मात्रा में क्षमता होती है कहने का तात्पर्य यह है कि एक कार्य करने के लिए दो व्यक्तियों में समान रूप से कुशलता की मात्रा नहीं होती है। यहाँ पर व्यक्तिगत विभिन्नताओं का सिद्धान्त लागू नहीं होता है। इसका प्रमुख कारण है कि व्यक्ति में जन्मजात गुण समान रूप से नहीं पाये जाते हैं; उदाहरण के लिए–यदि एक व्यक्ति में कुशल अध्यापक बनने की योग्यता है, तो दूसरे व्यक्ति में इसी क्षमता का अभाव हो सकता है।

(3) किसी व्यक्ति की क्षमताएँ सापेक्ष रूप से स्थायी होती हैं। इन क्षमताओं में शीघ्रता से परिवर्तन नहीं होता है; उदाहरण के लिए–यदि एक व्यक्ति में अध्ययन के लिए अभिरूचि हो तथा चिकित्सा में अभिरूचि का अभाव हो तो सम्भव नहीं कि कुछ दिनों बाद वह एक कुशल चिकित्सक बन जाए।

नोट

30.2.3 प्रवणता का मापन (Measurement of Aptitude)

विद्वानों ने विभिन्न प्रकार की प्रवणता परीक्षाओं का निर्माण किया है। इन अभियोग्यता परीक्षणों का प्रयोग अधिकांशत: भिन्न-भिन्न व्यवसायों के सम्बन्ध में किया गया है। कुछ प्रवणता परीक्षाओं का उपयोग विद्यालय में किया जाता है। *डी. एस. रावत* ने अपनी पुस्तक विद्यालय में मापन तथा मूल्यांकन में कहा है कि "भिन्न-भिन्न प्रकार की अभिरूचि परीक्षायें विशिष्ट योग्यताओं के रूप में व्यक्ति की उन क्षमताओं की जाँच करती हैं जो उसे पैतृक सम्पत्ति और सर्वसाधारण अनुभवों से प्राप्त होती है। जिनको प्रशिक्षण अथवा शिक्षा द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता है।" यह कथन स्पष्ट करता है कि कुछ सीमा तक अभियोग्यता परीक्षाएं बुद्धि-परीक्षण के समान होती हैं। अब यहाँ पर विभिन्न" अभियोग्यता परीक्षाओं का वर्णन किया जायेगा।

प्रवणता के मापन के लिए प्रवणता परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। **फ्रीमैन** के अनुसार—"प्रवणता परीक्षण वह है जिसकी रचना किसी विशेष प्रकार की तथा सीमित क्षेत्र की क्रिया करने की मूलभूत योग्यता को मापने के लिए की जाती है।

"An aptitude test is one designed to measure a person's potential ability in an activity of a specialized kind and within a restricted range.¸ *–F.S. Freeman*

प्रवणता परीक्षण के निर्माण की विधि लगभग वही है जो किसी बुद्धि परीक्षण के निर्माण में प्रयुक्त की जाती है। दोनों प्रकार के परीक्षणों में मुख्य अन्तर उन कार्यों व क्रियाओं अर्थात् विषय वस्तु का भिन्न-भिन्न होना है। जिनकों दोनों परीक्षणों में प्रयुक्त किया जाता है। प्रवणता परीक्षणों को उनकी प्रकृति के आधार पर तीन भागों में बाँटा जा सकता है। इनकी रचना के लिए रोजगार-विश्लेषण किया जाता है—

(1) सामान्य प्रवणता परीक्षण (General Aptitude Tests),

(2) विभेदी प्रवणता परीक्षण (Differential Aptitude Tests) तथा

(3) विशिष्ट प्रवणता परीक्षण (Specified Aptitude Tests)।

(1) सामान्य प्रवणता परीक्षण (General Aptitude Tests)

सामान्य प्रवणता परीक्षण वह है जो किसी की सामान्य कार्य दक्षता का मापन करते हैं। यह परीक्षण प्राय: व्यक्ति की सामान्य बुद्धि, मानसिक योग्यता अथवा सीखने की योग्यता का मापन करते हैं। इस प्रकार के परीक्षण व्यक्ति की सामान्य भावी सफलता को संकेत करते हैं।

(2) विभेदी प्रवणता परीक्षण (Differential Aptitude Tests {DAT})

इस प्रकार के प्रवणता परीक्षण प्राय: *बैटरी प्रारूप* के परीक्षण होते हैं। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि इस प्रकार प्रवणता परीक्षण या तो अनेक परीक्षण का समूह या बैटरी होती है अथवा इस प्रकार के परीक्षणों में अनेक उप-परीक्षण होते हैं। यह विभिन्न परीक्षण या उप-परीक्षण व्यक्ति की भिन्न-भिन्न क्षेत्रों की प्रवणताओं का मापन करते हैं तथा जिन पर व्यक्ति द्वारा प्राप्त अंकों को तुलनात्मक विवेचन करने व्यक्ति की अधिक अभिक्षमता वाले क्षेत्रों को ज्ञात कर लिया जाता है। क्योंकि ये परीक्षण व्यक्ति की विभिन्न प्रवणताओं में विभेद को प्रगट करते हैं इसलिए इन्हें विभेदी प्रवणता परीक्षण (D.A.T.) कहा जाता है। इस प्रकार के परीक्षण में प्राय: शाब्दिक बोध, आंकिक बोध, स्थानागत बोध, यान्त्रिक बोध, लिपिकीय क्षमता, स्वभावगत प्रवृत्ति आदि से सम्बन्धित उप-परीक्षण होते हैं। विभेदक प्रवणता परीक्षण (DAT), सामान्य प्रवणता परीक्षण बैटरी (GATB), अभिक्षमता सर्वेक्षण तथा प्रवणता वर्गीकरण परीक्षण (ACT) कुछ प्रमुख विदेशी प्रवणता परीक्षण हैं। इनमें से कुछ का भारतीय अनुशीलन भी किया जा चुका है जो भारत में अधिक प्रयुक्त किए जाते हैं। विभेदी प्रवणता एक प्रकार के किसी मौलिक व सफल परीक्षण का निर्माण भारत में अभी तक नहीं हो सका है। विभेदी परीक्षण की प्रकृति से पाठकों को अवगत कराने की दृष्टि से अमेरिका की मनोवैज्ञानिक कारपोरेशन के द्वारा प्रकाशित विभेदी प्रवणता परीक्षण का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है।

नोट

विभेदी प्रवणता परीक्षण (DAT)—अमेरिका को मनोवैज्ञानिक कारपोरेशन के द्वारा प्रकाशित तथा *बैनेट* (Bennett) *सीशोर तथा बेजमेन* के द्वारा तैयार किया गया विभेदी प्रवणता परीक्षण, जिसे संक्षेप में (D.A.T.) कहते हैं, एक अत्यधिक प्रसिद्ध तथा बहुतायत से प्रयुक्त किया जाने वाला परीक्षण है। यह परीक्षण कक्षा 8 से 12 तक के लिए है तथा इसके दो प्रारूप उपलब्ध हैं प्रत्येक खण्ड में आठ-आठ उप-परीक्षण हैं। इन्हें दो पुस्तिकाओं में रखा गया है।

प्रथम परीक्षण पुस्तिका में—चार परीक्षण होते हैं—

(1) शब्दिक तार्किक योग्यता (Verbal Ability = VA) – 30 मिनट

(2) संख्यात्मक योग्यता (Numerical Ability = NA)– 30 मिनट

(3) अमूर्त तार्किक योग्यता (Abstract Reasoning = AR)– 25 मिनट

(4) लिपिकीय गति तथा शुद्धता (Clerical Speed and Accuracy = CSA)– 6 मिनट अवधि

यह चार उप-परीक्षण होते हैं। प्रशासन का कुल समय 91 मिनट दिया जाता है।

द्वितीय परीक्षण पुस्तिका में—भी चार परीक्षण होते हैं।

(1) यान्त्रिक तार्किक योग्यता (Mechanical Reasoning = MR)– 30 मिनट

(2) स्थानागत सम्बन्ध (Space Relation = SR)– 25 मिनट

(3) वर्तनी की क्षमता (Spelling Proficiency = SP)– 10 मिनट

(4) भाषा का उपयोग (Language Usage = LU)– 20 मिनट अवधि।

यह चार उप परीक्षण होते हैं। प्रशासन का कुल समय 90 मिनट होता है। लिपिक परीक्षण की प्रकृति गति परीक्षण (Speed Test) की होती है। और सभी परीक्षण की प्रकृति शक्ति परीक्षण (Power Test) की होती है। परन्तु इन्हें गत्यात्मक परीक्षण (Speeded Test) के रूप में प्रयुक्त किया जाता है क्योंकि प्रशासन का समय निर्धारित होता है। इन सभी परीक्षणों के अंक अलग-अलग प्राप्त किए जाते हैं।

शब्दिक तथा संख्यात्मक परीक्षणों को सामान्य प्रवणता परीक्षण कहते हैं। शताश तथा नव स्तर मानक (Stanine) को प्रयुक्त किए जाते हैं। इन उप-परीक्षणों की विश्वसनीयता गुणांक .79 से .97 तक पाया। लड़कियों के समूह की विश्वसनीयता की गणना की गई। उप-परीक्षण में आन्तरिक सह सम्बन्ध .40 से .60 तक पाया गया है। शब्दिक तथा संख्यात्मक परीक्षणों का सामान्य बुद्धि परीक्षणों से सह-सम्बन्ध .70 से .85 तक पाया गया है। विभेदी प्रवणता परीक्षण का अनुशीलन *ओझा* ने किया है।

(3) विशिष्ट प्रवणता परीक्षा (Specific Aptitude Test)

इस प्रकार के परीक्षण विशिष्ट रोजगार की क्षमताओं का परीक्षण करते हैं। छात्र में वह विशिष्ट प्रवणता है अथवा नहीं इसका आकलन किया जाता है। इनके कुछ प्रमुख परीक्षण इस प्रकार है—

(अ) लिपिक व्यवसाय प्रवणता परीक्षण,

(ब) यान्त्रिक प्रवणता परीक्षण, तथा

(स) संगीत प्रवणता परीक्षण।

इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार दिया गया है—

(अ) लिपिक व्यवसाय प्रवणता परीक्षण (Clerical Aptitude Tests)

राजकीय तथा सार्वजनिक कार्यालयों में कार्य सुचारू रूप से चलाने के लिए कुशलतापूर्व लिपिक कार्य करने वाले व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। लिपिक अभियोग्यता में अनेक गुणों का संग्रह होना है, यथा-बिल के अनुसार—"लिपिक के कार्य के अन्तर्गत सभी प्रकार के आँकड़े को एकत्रित करना, वर्गीकरण करना एवं प्रस्तुत करना तथा किसी कार्य की योजना बनाने और आरम्भ करने में इन आँकड़ों का उपयोग करना।"

सुपर ने लिपिक के लिए दो मुख्य गुणों का वर्णन किया है—(1) गति, और (2) शुद्धता। कार्यालय में जो व्यक्ति सांख्यिकीय और शाब्दिक चिन्हों की गणना तीव्र गति तथा शुद्धता के साथ कर सकता है, वही एक दक्ष लिपिक बनने की अभियोग्यता रखता है। इसमें गति परीक्षण का उपयोग किया जाता है।

नोट

बिंघम के अनुसार, चार विभिन्न प्रकार की योग्यताओं द्वारा लिपिक कार्य की अभियोग्यता प्रकट होती है।

(1) **प्रत्यक्षीकरण** (Preception)—कागज पर लिखे शब्दों एवं संख्याओं को शीघ्रता एवं शुद्धता से देखने की योग्यता।

(2) **बौद्धिक** (Intellectual)—शब्दों एवं चिन्हों के अर्थ को समझने की योग्यता।

(3) **मानसिक कौशल** (Mental Alertness)—संख्याओं को शीघ्रता एवं शुद्धता-पूर्वक जोड़ने तथा गुणा करने की दक्षता।

(4) **यांत्रिक योग्यता** (Mechanical Ability)—अंगुलियों तथा हाथों द्वारा कागज, पेन्सिल, टाइपराइटर आदि को सम्भालना।

लिपिक कार्य की अभियोग्यता का मापन करने के लिए अनेक परीक्षायें उपलब्ध हैं। इनमे कुछ का वर्णन यहाँ किया गया है।

(1) मिनीसोटा व्यावसायिक परीक्षण हेतु लिपिक कार्य (Minnesota Vocational Test for Clerical Work)—इस परीक्षा का प्रयोग व्यक्तिगत एवं सामूहिक, दोनों ही रूपों में किया जाता है। इसके प्रयोग में 35 से 40 मिनट तक लगते हैं। इस परीक्षा द्वारा टाइपिंग, पत्रों का छाँटना, फाइलों का कार्य, बुककीपिंग आदि अभियोग्यता का मापन किया जाता है।

(2) राष्ट्रीय संस्थान औद्योगिक मनोविज्ञान लिपिक परीक्षण (National Institute of Industrial Psychological Clerical Test)—इस परीक्षा का निर्माण 'ब्रिटिश राष्ट्रीय संस्थान औद्योगिक मनोविज्ञान लिपिक परीक्षण' ने किया है इस परीक्षण को सात भागों में विभाजित किया गया है, जिसमें लिपिक व्यवसाय सम्बन्धी सात प्रकार की योग्यताओं को ज्ञात करता है।

(3) थर्स्टन लिपिक परीक्षण (Thurston Examination in Clerical Work),

(4) डेट्रोइट लिपिक परीक्षण (Detroit Clerical Aptitute Examination)।

(ब) यान्त्रिक प्रवणता परीक्षण (Mechanical Aptitude Test)

विभिन्न योग्यताओं का मिश्रण ही यान्त्रिक अभियोग्यता है। इसके अन्तर्गत, मुख्यत तीन योग्यताएँ आती हैं—

(1) स्थान सम्बन्धी बोध व कल्पना,

(2) हस्त निपुणता, जिसमें सभी अंगों का शुद्ध एकीकरण, तथा।

(3) शक्ति, गति, धैर्य आदि की यान्त्रिक योग्यताएँ।

इन तीनों ही गुण यान्त्रिक व्यवसायों में चाहिए, लेकिन यह गुण समान भाग में नहीं होने चाहिए। उदाहरण के लिए' एक इन्जीनीयर के लिए प्रथम गुण अधिक आवश्यक है। इसी प्रकार श्रमिक के लिए तीसरा गुण अधिक होना चाहिए। एक निर्देशन देने वाला व्यक्ति इन गुणों का मापन करता है और उसके आधार पर व्यक्ति को उचित जीविका में प्रवेश का परामर्श देता है। अनेक यान्त्रिक अभियोग्यता, परीक्षाओं का निर्माण किया गया है।

(1) मिनीसोटा यान्त्रिक प्रवणता परीक्षण (The Minnesota Mechanical Aptitude Test)—इस परीक्षण का सर्वप्रथम निर्माण जूनियर हाई स्कूल के छात्रों के लिए हुआ है। इसमें 33 यान्त्रिक वस्तुएँ होती हैं जो तीन बक्सों में रखी जाती हैं। प्रथम में 9, दूसरे में 8 व तीसरे में 16 वस्तुएँ रहती हैं। इसमें छात्रों को विभिन्न भागों में जोड़ने के लिए कहा जाता है। प्रथम बाक्स के लिए 18 मिनट, दूसरे के लिए 21 मिनट 5 सैकंड तथा तीसरे को 16 मिनट का समय दिया जाता है।

(2) लिण्डक्वाइट यान्त्रिक प्रवणता परीक्षण (Lindquist Test for Mechanical Aptitude)—इस परीक्षा का निर्माण लिण्डविस्ट ने किया था। इस परीक्षण में भी निश्चित समय से निश्चित यान्त्रिक विधियों द्वारा कुछ हिस्सों को जोड़ने के लिए कहा जाता है। इन हिस्सों को जोड़ने की गति उस जीविका के लिए उपयुक्तता निश्चित करती है। इसमें कुछ मशीनों के चित्र भी होते हैं। जिन्हें पहचानने के लिए कहा जाता है।

नोट

(3) जॉनसन तथा अन्य ब्लाक परीक्षण (Johanson's O'Conner's Wiggby Block Tests)—इस परीक्षा का उपयोग इंजीनियर, ड्राफ्टसमैन, उच्च तकनीकी व्यवसायों का प्रशिक्षण देने के लिए व्यक्तियों का चयन करने से होता है।

(4) रूरके मिकैनीकल प्रवणता परीक्षण (Rourke Mechanical Aptitude Test)—यह परीक्षा इस सिद्धान्त पर आधारित है कि जो व्यक्ति यान्त्रिक अभियोग्यता रखे हैं वे उन व्यक्तियों की अपेक्षा मशीन सम्बन्धी ज्ञान शीघ्र सीख लेते हैं जिनमें इस योग्यता का अभाव रहता है। परीक्षण के प्रथम भाग में चित्र तथा दूसरे भाग में शब्दिक प्रश्न हैं।

30.2.4 प्रवणता का महत्व (Importance of Aptitude)

निर्देशन के क्षेत्र में अभियोग्यता का आर्थिक महत्व है। किसी छात्र को व्यवसाय निर्देशन देते समय अभियोग्यता अपना विशेष महत्व रखती है। परामर्शदाता इसी ज्ञान के आधार पर उचित परामर्श देते हैं। छात्रों को किन-किन व्यवसायों में प्रवेश करना चाहिए। यह परामर्श तभी दिया जा सकता है जबकि छात्रों की क्षमताओं एवं योग्यताओं का ज्ञान हो। विशेष अभियोग्यता परीक्षाओं की सहायता से जीविका के लिए व्यक्तियों का चयन करने की सुविधा रहती है। इस प्रकार प्रवणता परीक्षाएँ नियुक्ति कर्त्ताओं की सहायक भी होते हैं। इन परीक्षाओं द्वारा असफल कर्मचारियों की संख्या कम की जा सकती है। हमारे देश में व्यक्ति किसी रूचि तथा प्रवणता पर ध्यान दिए बिना ही रोजगारों में प्रवेश करते हैं। इसका दुष्परिणाम यह होता है कि इनमें से अधिकांश विभिन्न रोजगारों को बदलते पाये जाते हैं। यह किसी एक जीविका में कुशलता प्राप्त नहीं कर सकते हैं। शक्ति व समय का अपव्यय होता है। इस अपव्यय को दूर करने के लिए आवश्यक है कि भारत में प्रवणता परीक्षाओं का उपयोग सर्वप्रिय बनाया जाये।

क्या आप जानते हैं सामान्य बुद्धि परीक्षणें के द्वारा छात्रों की विद्यालयी सफलता का सफलतापूर्वक पूर्वकथन किया जा सकता है इसलिए कुछ विद्वान इन्हें शैक्षिक प्रवणता परीक्षण के नाम से कहना अधिक उपयुक्त समझते हैं। स्पष्ट है कि सामान्य प्रवणता परीक्षण वर्ग में सामान्य बुद्धि परीक्षण अथवा सामान्य मानसिक योग्यता परीक्षण रखे जाते हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. निम्नलिखित कथनों के सामने 'सत्य' अथवा 'असत्य' लिखिए—

1. प्रवणता एवं बुद्धि में कोई अन्तर नहीं होता है।
2. *पी. ई. वर्नन* ने बुद्धि को शैक्षिक एवं क्रिया दो पक्षों में बाँटा है।
3. प्रवणता का सम्बन्ध भावी क्षमताओं एवं सफलता से होता है।
4. प्रवणता की चार प्रमुख विशेषताएं या पक्ष होता है।
5. विभेदी प्रवणता परीक्षण का अधिक उपयोग किया जाता है।
6. निरीक्षण प्रविधि एक सहायक प्रविधि है।

30.3 व्यक्तित्व का मापन (Measurement of Personality)

सभी शिक्षा-आयोगों में एवं सभी शिक्षा-विद्ों ने परोक्ष तथा अपरोक्ष रूप से बालक के व्यक्तित्व के बहुमुखी विकास पर बल दिया है। अतएव यह स्वाभाविक ही है कि शिक्षा के क्षेत्र में प्रत्येक गतिविधि उपरोक्त लक्ष्य को प्राप्त करने

नोट

की ओर ही केन्द्रित रहती है। स्पष्ट है कि मूल्यांकन के कार्य को सार्थक बनाने के लिए ऐसी प्रविधियों का विकास किया गया जिनके माध्यम से छात्रों के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों के विषय में सूचनायें प्राप्त हो सकें। इन प्रविधियों का उपयोग परिस्थितियों तथा आवश्यकताओं के अनुसार किया जाता है।

नोट्स प्राय: शिक्षक अपने छात्रों के व्यक्तित्व का मूल्यांकन अनौपचारिक रूप से करते रहते हैं। जो बालक पढ़ने-लिखने में दूसरे बालकों की अपेक्षा मेघावी होता है वही अच्छा समझा जाता है, अध्यापक उसी को कक्षा-मानीटर बनाते हैं, उसी को सर्वश्रेष्ठ-छात्र का पुरस्कार दिया जाता है, और उसी को अन्य प्रकार के प्रोत्साहन दिए जाते हैं। इस प्रकार के किसी विशेष छात्र के विषय में पक्षपातपूर्ण रवैया दृष्टिगत होता है और अन्य छात्रों में असंतोष। अतएव यह आवश्क है कि ऐसी प्रविधियों के बारे में जानकारी प्राप्त की जाये। जिनके माध्यम से बालक के व्यक्तित्व का एक वस्तुनिष्ठ चित्र उभर कर सामने आ सके।

30.3.1 व्यक्तित्व मापन की प्रविधियों का वर्गीकरण (Classification of Techniques of Personality Measurement)

शोध कार्य में प्रयुक्त प्रक्रिया के आधार पर व्यक्तित्व मूल्यांकन की प्रविधियों को मुख्यत: दो भागों में बाँटा जाता है—

(1) तार्किक-प्रविधियाँ (Logical Techniques) तथा

(2) अनुभव-जन्य प्रविधियाँ (Empirical Techniques)।

(अ) अनुभव-जन्य प्रविधियाँ (Statistical), तथा

(ब) निरपेक्ष (Absolute)।

इसी प्रकार प्रविधियों की प्रकृति के आधार पर इन्हें अग्रलिखित प्रकार से वर्गीकृत किया गया है—

व्यक्तित्व-मापन की प्रविधियाँ

(Techniques of Personality Measurement)

(क) आत्मनिष्ठ	(ख) प्रक्षेपी	(ग) वस्तुनिष्ठ
1. निरीक्षण (Observation)	1. शब्द सहचार्य परीक्षण (Word Association Test)	1. रक्तचाप (Blood Pressure)
2. निर्धारण-मापनी (Rating Scale)	2. चित्र साहचर्य परीक्षण (Picture Association Test)	2. विभेद रेखा (Differential Line)
3. प्रश्नावली (Questionnaire)	3. वाक्य-पूर्ति परीक्षण (Sentence Completion Tests)	3. ह्दय विद्युत-आलेख (Cordiogram)
4. साक्षात्कार (Interview)	4. मनो-नाटकीय विधि (Psychodrama-Method)	4. प्रमस्तिष्क विद्युत आलेख (Elector-encephalo gram)
5. परख सूची (Check-list)	5. खेल प्रविधि (Play Technique)	भौतिक मापन या मैडिकल परीक्षण
	6. मौखिक प्रक्षेपण परीक्षण (Verbal Projection Tests)	
	7. स्याही-धब्बा परीक्षण (Ink Blot-Tests)	
	8. समकल्पना परीक्षण (Apperception Tests)	

नोट

आत्मनिष्ठ-प्रविधियों में व्यक्तित्व का मापन व्यक्ति को देखकर, उससे पूछकर अथवा उसके बारे में अन्य व्यक्तियों के विचार जानकर किया जाता है। प्रक्षेपी-विधियों में व्यक्ति के सामने अस्पष्ट उद्दीपक स्थिति प्रस्तुत की जाती है। जिसके फलस्वरूप वह अपनी कल्पना शक्ति के माध्यम से क्रियाशील हो जाता है और इस प्रकार परोक्ष रूप से अपने व्यक्तिगत जीवन के विषय में जानकारी देता है, इस प्रकार प्राप्त सूचनाओं के आधार पर उसके व्यक्तित्व का आकलन किया जाता है। वस्तुनिष्ठ-प्रविधियों में शारीरिक क्रियाओं (Physiological Reactions) की सहायता से व्यक्तित्व के मापन का प्रयास किया जाता है।

(1) निरीक्षण प्रविधि (Observation Technique)

यह बहुत ही पुरातन प्रविधि है। यद्यपि व्यक्तित्व-आकलन के दृष्टिकोण से यह वस्तुनिष्ठ नहीं मानी जाती किन्तु विज्ञान के क्षेत्र में प्रयोगात्मक कार्य इसी प्रविधि का उपयोग करके आरम्भ किया जाता है और वहाँ इसे यथेष्ठ रूप से वस्तुनिष्ठ भी बनाया जा चुका है।

शिक्षा एवं मनोविज्ञान के क्षेत्र में इस प्रविधि का उपयोग मुख्यत: सर्वेक्षण और नियन्त्रित प्रयोगों में किया जाता है। इसकी उपयोगिता को देखते हुए अब इसे यथाशक्ति वस्तुनिष्ठ बनाने की चेष्टा की जा रही है। अतएव प्रेक्षपण को एक वैज्ञानिक आधार प्रदान करने के लिए विशेषज्ञों ने इस प्रविधि में निम्नलिखित गुणों का समावेश करने का सुझाव दिया है–

1. **सुव्यवस्थति निरीक्षण** (Systematic)–निरीक्षण अवसरवादिता एवं जटिल व्यवस्था से मुक्त होने चाहिए। अर्थात् प्रेक्षपण पूर्व-योजना के अनुसार किसी व्यक्ति अथवा घटना के सही एवं महत्वपूर्ण पक्ष के सन्दर्भ में किए जायें, एक स्पष्ट रूप से लक्ष्य-आधारित हों।
2. **वस्तुनिष्ठ एवं पक्षपात रहित निरीक्षण** (Objective and Unbiased)–निरीक्षण कुछ परिकल्पनाओं (Hypotheses) पर आधारित होने चाहिए। तभी इनके द्वारा परिकल्पनाओं की परख पक्षपात रहित ढंग से की जा सकेगी।
3. **परिमाणात्मक निरीक्षण** (Quantitative)–यथा सम्भव निरीक्षण अंकों में प्राप्त होने चाहिए। ये अंक अथवा इनसे सम्बन्धित तकनीकी शब्द किसी घटना अथवा व्यक्ति के विषय में स्पष्ट परिमाणात्मक सूचना देने में संक्षेप होने चाहिए।
4. **विश्वसनीयता, वैधता एवं उपयोगिता** (Reliability, Validity and Usability)–निरीक्षण का स्वरूप ऐसा होना चाहिए कि किसी घटना अथवा व्यक्ति के विषय में इनकी पुनरावृत्ति कई बार हो सके। इस प्रकार प्रेक्षपणों के माध्यम से प्राप्त परिणाम अधिक विश्वसनीय होगा।
5. **मौलिकता, नमनीयता एवं कल्पनाशीलता** (Originality, Flexibility and Imagination)–वस्तुत: यह गुण परीक्षण से कम अपितु निरीक्षक से अधिक सम्बन्धित है। मनोविज्ञान एवं शिक्षा के बारे में निरीक्षण मानव प्रकृति से सम्बन्धित होता है। मानव-व्यवहार और उससे जुड़ी हुई घटनायें बिना चेतावनी दिए ही परिवर्तनशील, अतएव निरीक्षण प्रविधि का उपयोग करते समय परिस्थितिनुसार निरीक्षक को अपनी कार्य विधि को तत्परता के साथ नियोजित करना पड़ता है। ऐसा तभी सम्भव है जब वह मौलिक, नमनीय एवं कल्पनाशील हो।

मानव-गतिविधि के विषय में सूचनायें कई प्रकार से प्राप्त की जा सकती हैं जैसे–स्वयं देखकर, उस व्यक्ति से पूछकर अथवा किसी तीसरे व्यक्ति से उसके बारे में पूछकर। इन प्रत्यक्ष एवं परोक्ष विधियों के आधार पर व्यक्तित्व मापन प्रविधि के स्वरूप में भी अन्तर आ जाता है। इस प्रकार रूपान्तरित प्रविधियों को विभिन्न नामों से पुकारा जाता है। निरीक्षण-प्रविधि के द्वारा किसी मनुष्य के विषय में निरीक्षक स्वयं देकर धारणा बनाता है। इस प्रविधि को अधोलिखित प्रकार से वर्गीकृत किया गया है–

(1) परिस्थिति-परीक्षण (Situational Tests),

(2) औपचारिक-निरीक्षण (Formal Observation),

(3) अनौपचारिक-निरीक्षण (Informal Observation)

(4) विविध-आलेख (Ancedotal Records)।

नोट

(1) परिस्थिति-परीक्षण (Situational Test)—इस प्रकार के निरीक्षण को सम्पन्न करने के लिए व्यक्ति को जीवन की वास्तविक परिस्थितियों का प्रतिनिधित्व करने वाली परिस्थिति में रखा जाता है। ये परिस्थितियाँ कृत्रिम होती हैं। और इनसे अन्त:क्रिया करके व्यक्ति व्यवहार प्रदर्शन करता है। इस व्यवहार को प्रेक्षपण ही व्यक्तित्व के मापन का आधार बनता है। सेना के अफसरों के चुनाव के समय सर्विसेज सलेक्शन बोर्ड में 'समूह कार्य' परिस्थिति परीक्षण का एक उदाहरण है। **मेय** और **हार्टशोर्न** (1925) ने इसी प्रकार के अनेक परीक्षणों का निर्माण किया है। इन परीक्षणों की विशेषताएँ अधोलिखित हैं—

(1) यह व्यक्तित्व मापन की एक रोचक प्रविधि है।

(2) क्योंकि ये जीवन परिस्थिति (Life-Situation) नहीं है अतएव इन परिस्थितियों में व्यवहार का वास्तविक स्वरूप नहीं देखा जा सकता है। तब भी इस प्रविधि के द्वारा नेतृत्व कठिनाइयों से जूझने की क्षमता कर्मठता आदि गुणों का मापन सन्तोषप्रद रूप से हो सकता है।

(3) इस प्रकार के परीक्षण की विश्वसनीयता एवं वैधता के विषय में सन्तोषजनक आँकड़े अभी तक उपलब्ध नहीं हैं।

(4) यह अभी तक एक मूल प्रविधि के रूप में शोध क्षेत्र में मान्यता प्राप्त नहीं कर सकी है।

(5) इसके द्वारा दो व्यक्तियों के व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन सही-सही किया जा सकता है।

(2) औपचारिक-निरीक्षण (Formal Observation)—इस प्रविधि में निरीक्षणकर्त्ता बालक के व्यवहार का अवलोकन औपचारिक रूप से करता है। बालक अपनी दिनचर्या में व्यस्त रहता है और निरीक्षक अपने निरीक्षणों को लिपिबद्ध करता जाता है। स्पष्ट है कि नवागन्तुक की उपस्थिति में बालक का व्यवहार-अस्वाभाविक हो जाता है। परिणाम स्वरूप व्यवहार निरीक्षण शुद्ध नहीं रह पाते। उपरोक्त कमी के होने पर भी औपचारिक-निरीक्षण प्रविधि के द्वारा शिशुओं (Young Children) के व्यवहारों के विषय में आसानी से सही-सही जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

(1) बालक अपने व्यवहार को कृत्रिम बनाने की चेष्ठा नहीं करते हैं, अतएव किसी अजनबी की उपस्थिति में अधिक देर तक अपनी प्रकृति को नहीं छिपाते हैं।

(2) शिशुओं में भाषा का विकास बहुत सीमित होता है, अतएव जो प्रविधियाँ—मौखिक अथवा लिखित सम्प्रेषण पर आधारित है उनका उपयोग नहीं किया जा सका है। ऐसी दशा में औपचारिक निरीक्षण-प्रविधि ही उपयोगी सिद्ध होती है।

यदि इस निरीक्षण-प्रविधि में आवश्यक परिवर्तन कर लिए जायें तब इसका उपयोग किशोरों एवं प्रौढ़ों के अवलोकन में भी किया जा सकता है।

(3) अनौपचारिक-निरीक्षण (Informal Observation)—यह प्रविधि औपचारिक निरीक्षण-प्रविधि को समाजशास्त्र के क्षेत्र में शोध कार्य के लिए बहुत उपयोगी पाया जाता है। आदिवासियों की जीवनशैली का विश्वसनीय परिचय इसी प्रकार की निरीक्षण-प्रविधि के माध्यम से समाजशास्त्र से शोधकर्त्ताओं ने प्रस्तुत किया है। इस निरीक्षण-प्रविधि को सुचारू रूप से सम्पन्न करने के लिए निम्नलिखित बातों को ध्यान रखना चाहिए—

(1) सर्वप्रथम, व्यवहार-प्रारूप (Behaviour Pattern) के विषय में निर्णय ले लेना चाहिए। अर्थात् यह भली भाँति सोच लिया जाये कि व्यवहार का कौन से पक्ष का अवलोकन करना है। इस प्रकार व्यवहार-निरीक्षण की परिसीमायें निर्धारित की जाती है।

(2) तत्पश्चात, चयन किए गये व्यवहार के पक्षों को इस प्रकार परिभाषित करना चाहिए कि वह बालक की उस क्रिया के बारे में सूचना दे सकें जो प्रकट रूप से देखी जा सके। इस प्रकार के निरीक्षक अपने कार्य के लिए संक्रियात्मक परिभाषाओं का निर्माण करता है।

(3) व्यवहार-अवलोकन के अभिलेखन के लिए सहायक विधियों का चयन किया जाता है जैसे—अल्पकालिक-लिपि, टेप, रिकार्ड, कैमरा आदि।

नोट

(4) यथा सम्भव, निरीक्षण को अंकों को बदल लेना चाहिए। इस कार्य में पंच बिन्दुमापनी (Five Point Scale) अधिक उपयुक्त रहता है।

(5) निरीक्षण प्रविधि का उपयोग करने वाले निरीक्षकों को उपयुक्त प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इस प्रशिक्षण के दौरान उल्लेखित कौशलों के अतिरिक्त उसे इस प्रकार की कला में भी दक्षता प्राप्त कराने का प्रावधान हो जिसके द्वारा वह अपनी उपस्थिति के वास्तविक उद्देश्य को प्रकट किए बिना ही व्यक्ति के स्वाभाविक व्यवहार का अध्ययन कर सके निरीक्षण को वैध एवं विश्वसनीय बनाने के लिए इस प्रकार का प्रशिक्षण नितांत आवश्यक है। आदिवासियों के जीवन-यापन के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ मापनकर्त्ताओं ने कबीले के सदस्य के रूप में उन्हीं लोगों के साथ रहना आरम्भ कर दिया था। इसी प्रकार वे कबीलों की गतिविधियों के बारे में वास्तविक चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ हुए हैं।

अनौपचारिक निरीक्षण के लाभ

(1) इसका उपयोग बालकों एवं प्रौढ़ों दोनों के अवलोकन के लिए किया जा सकता है।

(2) इसका उपयोग गूंगे, बहरे एवं अन्य अपंगों के व्यवहार-आकलन के लिए भी किया जा सकता है।

(3) इस प्रकार के निरीक्षण के द्वारा व्यक्ति के व्यवहार का प्राकृतिक परिस्थितियों में अध्ययन किया जाता है। यह व्यवहार वास्तविकता के निकट होता है अतएव इन निरीक्षणों के आधार पर व्यक्तित्व मापन अधिक विश्वसनीय एवं वैध होता है।

अनौपचारिक निरीक्षण सीमाएँ

(1) यह प्रविधि समय और मानव-श्रम के दृष्टिकोण से महंगी है।

(2) व्यक्ति के सहज व्यवहार पर निरीक्षक की उपस्थिति का प्रभाव पड़ता है, अतएव भरसक चेष्टा करने पर भी बालक के मनोवैज्ञानिक वातावरण को सामान्य नहीं बनाया जा सकता है।

(3) एक अप्रशिक्षित निरीक्षक के द्वारा यह प्रविधि आत्मनिष्ठता (Subjectivity) एवं पक्षपात से परिपूर्ण होती है, जिसके कारण व्यक्तित्व-मूल्यांकन की विश्वसनीय एवं वैधता पर प्रभाव पड़ता है।

(4) इस प्रविधि में परिवेश प्रभाव (Holo-effect) की सम्भावनायें भी अधिक है।

(5) इस प्रविधि का उपयोग करते समय इस बात का निर्णय करना कठिन हो जाता है कि किस व्यवहार पक्ष का अवलोकन किया जाये और जिसका नहीं किया जाये?

(4) विविध-आलेख (Anecdotal Records)—किसी व्यक्ति के व्यवहार से सम्बन्धित किसी महत्वपूर्ण घटना अथवा उसके आचरण के किसी महत्वपूर्ण पक्ष को प्रगट करने वाली किसी उपाख्यान आलेख को ही विविध-आलेख कहते हैं। वास्तव में यह व्यक्ति की क्रियाओं का एक शब्दिक स्वरूप प्रस्तुत करता है। विद्यालय के सन्दर्भ में इसके तीन पक्ष हैं—

(1) यह छात्रों के व्यवहार का आलेख है।

(2) वह अध्यापकों के द्वारा लिखा जाता है।

(3) इसके द्वारा छात्र के व्यक्तित्व के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है।

स्पष्ट है कि इस प्रकार के आलेख को तैयार करने में निरीक्षक को अधिक परिश्रम करना पड़ेगा। इतना ही नहीं इस कार्य में अधिक समय के व्यय होने की सम्भावना रहती है। अतएव, उपाख्यान-आलेख का कार्य सुचारू रूप से सम्पन्न करने के लिए निम्नलिखित सुझावों को ध्यान में रखना चाहिए।

(1) इस प्रविधि का उपयोग विशेषकर अन्तर्मुखी छात्रों के व्यक्तित्व मूल्यांकन के लिए करना चाहिए। इस प्रकार के बालक कक्षा में चुप-चाप बैठे रहते हैं और इसलिए शिक्षक का ध्यान उनकी ओर नहीं जाता है। ऐसी दशा में यह आवश्यक हो जाता है कि इन बालकों की गतिविधियों का आलेख अवश्य तैयार किया जाये, यही घटनायें उसके व्यक्तित्व के विषय में जानकारी दे सकेंगी।

(2) विविध-आलेख को तैयार करते समय एक बहुत महत्व का प्रश्न निरीक्षक के सामने आता है—क्या छात्र सम्बन्धित सभी घटनाओं का विवरण आवश्यक है? स्पष्ट है कि इस प्रकार के विवरण जहाँ एक ओर अधिक समय लेते हैं वहीं दूसरी ओर व्यक्तित्व के मापन में वे समान रूप से सहायक नहीं होंगे। अतएव शोधकर्त्ताओं को यह सुझाव दिया गया है कि वो बालक के व्यक्तित्व के मापन के लिए असाधारण व्यवहारों का उपाख्यान-आलेख तैयार करें।

(3) किन्तु, यदि बालक का विकासात्मक अध्ययन करना है तो साधारण एवं असाधारण दोनों प्रकार के व्यवहारों का उपाख्यान-आलेख तैयार करना अत्यन्त आवश्यक है।

(4) जिन छात्रों के विषय में उपाख्यान-आलेख तैयार करने हों या उन्हें या तो निरीक्षक स्वयं पढ़ता हो, अन्यथा उपाख्यान-आलेख का कार्य उसे छात्रों का कार्य उसे छात्रों के शिक्षकों को ही सौंप देना चाहिए।

(5) ऐसी दशा में उन शिक्षकों को आलेख तैयार करने के विषय में यथेष्ठ प्रशिक्षण देना चाहिए।

(6) इसके अतिरिक्त उन्हें इस बात की स्वतन्त्रता देनी चाहिए कि वे परिस्थितिनुसार जितने आलेख उचित समझ कर तैयार कर लें। इस सम्बन्ध में किसी विशेष प्रकार का प्रतिबन्ध लगाना हितकर नहीं होगा।

(7) उपाख्यान-आलेख को कुछ शीर्षकों में बाँट लेना चाहिए, जैसे—

(अ) परिचय सामग्री (Identification Data,)

(ब) जन्म तिथि (Date of Birth),

(स) निवास (Place),

(द) विद्यालय (School),

(य) टिप्पणी (Comments),

(र) संस्तुति (Recommendations) तथा

(ल) निरीक्षक का नाम (Name of Observer)।

(8) उपाख्यानक-आलेख की घटना के तुरन्त बाद अथवा जितनी शीघ्रता से सम्भव हो तैयार कर लेना चाहिए।

मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक कार्य में उपाख्यान-आलेख का उपयोग निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है—

(1) बालक के विकासात्मक अध्ययन के लिए।

(2) व्यक्तित्व के स्वरूप के अध्ययन के लिए।

(3) बालकों, अभिभावकों एवं अधिकारियों के मार्ग निर्देशन के लिए।

(4) निर्धारण मापनी के द्वारा परिणामात्मक प्रदत्तों की व्याख्या के लिए।

(5) अन्य-व्यक्ति-मूल्यांकन प्रविधियों की वैधता ज्ञात करने के लिए।

(6) नैदानिक-मनोविज्ञान में शोध कार्य करने के लिए।

(2) अनुस्थित मापनी (Rating Scale)

इस प्रविधि में किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का मापन किसी ऐसे व्यक्ति के विचारों के आधार पर किया जाता है जो पहले व्यक्ति को भली-भाँति जानता हो। प्रशंसा-पत्र, चरित्र प्रमाण पत्र, गोपनीय आलेख (Confidential Reports) आदि, निर्धारण-मापनी के कुछ उदाहरण है। किन्तु विश्वसनीयता एवं वैधता के दृष्टिकोण से ये मापनियाँ महत्वहीन हैं। अतएव शोध कार्य के लिए इनका प्रयोग बहुत ही कम किया जाता है।

अनुस्थिति-मापन एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि किसी व्यक्ति ने कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के सन्दर्भ में अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के ऊपर क्या छाप छोड़ी हैं।

(1) शिक्षक (Teachers),

नोट

(2) माता-पिता अथवा अभिभावक (Parents or Guardians),

(3) भाई-बहन अथवा सहोदर (Siblings),

(4) मित्र (Friends), तथा साथी,

(5) पड़ोसी (Neighbours),

(6) नियोजक (Employer), तथा

(7) परामर्शदाता (Counselor)।

अनुस्थिति मापनियों में कुछ गुणों की सूची होती है जिनमें प्रत्येक के सामने कुछ विवरण अथवा अंक तथा विश्लेषण लिखे होते हैं। निर्धारक को अपने ज्ञात के आधार पर अपेक्षित व्यक्ति के विषय में उल्लेखित निर्धारण अनुस्थित (Rating Responses) में से एक को चिन्हित करना होता है।

अनुस्थिति अनुक्रिया की प्रकृति के आधार पर निर्धारण मापनियों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है।

(1) महत्व-निर्धारण-मापनी (Weightage-Rating-Scale),

(2) अंक-प्राप्ति-निर्धारण-मापनी (Scoring-Rating-Scale),

(3) आलेखनीय-निर्धारण-मापनी (Graphic-Rating-Scale),

(4) सांख्यिक-निर्धारण-मापनी (Numerical-Rating-Scale),

(5) अनुस्थिति-निर्धारण-मापनी (Ranking-Rating-Scale), तथा

(6) शतांँश एवं दशाँक-निर्धारण-मापनी (Percentile and Decile Rating Scale)।

यद्यपि विभिन्न प्रकार के परिणात्मक मापकों को निर्माण करके निर्धारण मापनी को वस्तुनिष्ठ बनाने का प्रयत्न किया जाता है तब भी अनेक कारणों से इसके द्वारा परिणाम अधिक वैध एवं विश्वसनीय नहीं होते हैं। इनमें से कुछ प्रमुख कारक नीचे सूचीबद्ध किए गए हैं–

(1) यह देखा गया है कि निर्धारक स्वेच्छा से इस कार्य को करने के लिए तत्पर नहीं होते। अतएव अनमने भाव से भरी गई निर्धारण मापनी विश्वसनीय नहीं बन पाती है।

(2) क्योंकि निर्धारक का सम्बन्ध शोधकर्त्ता की अपेक्षा उस व्यक्ति से अधिक निकट का होता है जिसके विषय में सूचनायें उपलब्ध की जाती हैं अतएव वह अनुक्रिया-मापक पर कमियों को कम करके एवं अच्छाइयों को बढ़ाकर चिन्हित करता है।

(3) निर्धारक अधिकतर अनुस्थिति-मापनी में लिए गये व्यक्ति सम्बन्धी वाक्यों को ठीक से न समझने के कारण केवल अटकलों द्वारा उत्तर देने की चेष्टा करते हैं।

(4) निर्धारक अपनी रूचि एवं अरूचि के सन्दर्भ में अन्य व्यक्ति का मूल्यांकन करता है, जिसके कारण मापन अधिकतर तर्क-संगत नहीं हो पाता।

(5) निर्धारक को व्यक्ति-विशेष के व्यक्तित्व के हर पक्ष को देखने का अवसर नहीं मिल पाता है अतएव निर्धारण-मापनी में लिखे बहुत से कथनों के विषय में वह अपनी राय केवल अनुमान से ही देता है।

निर्धारक मापनी की विश्वसनीयता अधिक करने के लिए दो मुख्य सुझाव दिए जाते हैं–

(1) मापनी में केवल बाह्य व्यवहारों का उल्लेख होना चाहिए। इस प्रकार व्यवहारों का अवलोकन किया जा सकता है अतएव निर्धारक को अपना सुझाव देने में कम कठिनाई होगी।

(2) किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व के विषय में कई निर्धारकों से मापनी भरवानी चाहिए। शोध के द्वारा देखा गया है कि मापनी की विश्वसनीयता निर्धारकों की संख्या पर निर्भर होती हैं।

(3) प्रश्नावली एवं अनुसूची अथवा परख-सूची (Questionnaire and Inventory of Check-List)

इस प्रविधि में व्यक्तित्व-गुणों के विषय में स्वयं उस व्यक्ति से पूछकर ही सूचनायें एकत्रित की जाती हैं। प्रश्न-समूह

एक प्रकार की स्वनिर्धारण मापनी ही है। व्यक्ति विभिन्न प्रश्नों के माध्यम से यह निर्धारण करता है कि जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में वह किस प्रकार का व्यवहार करेगा। व्यक्तित्व एवं अभिरुचि प्रश्नावली को अनुसूची अथवा परख-सूची कहकर भी पुकारा जाता है। ये अनुसूची एवं चिह्नांकन सूची या तो व्यक्तित्व गुणों के सन्दर्भ में किसी व्यक्ति का स्वरूप बतलाती है अथवा विभिन्न क्रियाओं के सन्दर्भ में उसकी अभिरुचि के स्वरूप का आकलन करती है।

इस प्रविधि की विशेषताओं का विश्लेषण *शईयर* ने इस प्रकार से किया है—

(1) व्यक्ति अपनी अनुक्रियाओं को नियन्त्रित कर गलत सूचनायें दे सकता है।

(2) यह भी सम्भव है कि वह पूछे गए प्रश्नों को सही-सही न समझ पाने के कारण ठीक सूचना ने दे पाये।

(3) यह हो सकता है जिन घटनाओं का उल्लेख प्रश्नों के रूप में किया गया हो उसके जीवन में न घटी हों अथवा वैसी परिस्थितियों को भूल चुका हो। ऐसी दशा में उत्तर यथार्थ न होकर काल्पनिक हो जाते हैं।

(4) व्यक्ति, इस प्रविधि में प्रयुक्त प्रश्नों के निदानात्मक महत्व को न समझने के कारण उत्तरों को ध्यान से न दे।

(5) एक बार अंक-प्राप्ति के आधार के बारे में निर्णय लेने के बाद यह देखा गया है कि विभिन्न निरीक्षकों के द्वारा दिए गये अंकों में समानता रही है।

प्रश्न समूहों एवं चिन्हांकन सूचियों को मुख्यत: निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है—

(1) अभिरुचि अनुसूची (Interest Inventories),

(2) मनोप्रवृत्ति एवं समायोजन अनुसूची (Temperament and Adjustment)

(3) अभिवृत्ति मापनी (Attitude Scales), तथा

(4) व्यक्तित्व प्रारूप की मापनी।

सभी प्रश्न समूहों और अनूसूचियों को वांछनीय स्तर का बनाने के लिए इनमें प्रयुक्त कथनों को यथा सम्भव सावधानीपूर्वक लिखा जाना चाहिए। इस सन्दर्भ में विशेषज्ञों ने निम्नलिखित सुझाव दिए हैं—

(1) ऐसे कथनों का प्रयोग करना चाहिए जोकि व्यक्तियों के पिछले जीवन की अपेक्षा उनके वर्तमान जीवन से अधिक सम्बन्धित हों।

(2) ऐसे कथन नहीं लिखने चाहिए जो तथ्यात्मक हों, जैसे—"मेरा विश्वास है कि मनुष्य अमर नहीं होता है।"

(3) बहुअर्थी कथनों को नहीं लिखना चाहिए।

(4) ऐसे कथनों को नहीं लिखना चाहिए जो सभी के लिए लागू हो सकें, जैसे—"क्या तुम चिन्तित रहते हो?"

(5) कथनों की भाषा साधारण, स्पष्ट एवं सीधी होनी चाहिए।

(6) कथन संक्षिप्त नहीं होने चाहिए, अधिक से अधिक बीस शब्दों के हों।

(7) एक कथन में केवल एक ही विचार प्रकट किया जाना चाहिए।

(8) कथन लिखने में जटिल वाक्यों के स्थान पर सरल वाक्यों का प्रयोग करना चाहिए।

(9) ऐसे शब्दों का प्रयोग ही नहीं करना चाहिए जो परीक्षार्थी की समझ में न आयें।

(10) वाक्यों में द्वि-नकारात्मक (Double Negatives) का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(11) वाक्यों में यथा सम्भव 'सदैव', 'कभी नहीं', 'सभी', कोई नहीं' जैसे शब्द का प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि इनके द्वारा कथनों का स्वरूप अनेकार्थ (Ambiguous) हो जाता है।

4. साक्षात्कार प्रविधि (Interview Technique)

मौखिक-प्रश्नावली (Oral-Questionnaire) को ही साक्षात्कार कहा जाता है। स्पष्ट है कि साक्षात्कार दो प्रकार के हो सकते हैं—

(1) निर्देशित साक्षात्कार (Directed or Structured Interview or Schedule),

नोट

(2) अनिर्देशित साक्षात्कार (Undirected of Unstructured Interview),

(1) निर्देशित साक्षात्कार–यह एक प्रश्न का अमुक्त प्रश्न समूह (Close Questionnaire) ही है। इस प्रकार के साक्षात्कार में विधि, प्रश्न, उनकी भाषा एवं क्रम तथा समय पूर्व-निश्चित होते हैं। इस प्रकार के साक्षात्कार से कई व्यक्तियों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।

(2) अनिर्देशित साक्षात्कार–यह एक प्रकार का मुक्तोत्तर प्रश्न समूह (Opened Questionnaire) है इसको निदानात्मक साक्षात्कार, केन्द्रीकृत साक्षात्कार कहकर भी पुकारते हैं। इसका उपयोग मनोवैज्ञानिक अधिकतर प्रत्यक्षीकरण, प्रेरणा, अभिवृत्ति आदि के अध्ययन के लिए करते हैं। अब तो इस प्रविधि का प्रयोग समाचार सम्पादकों के द्वारा अधिक किया जाने लगा है।

साक्षात्कार प्रविधि के प्रश्न समूह की अपेक्षा **अनेक लाभ** हैं जिन्हें यहाँ क्रमश: दिया गया है–

(1) इसकी प्रवृत्ति लचीली होती है अतएव किसी महत्वपूर्ण बात को पकड़ कर आगे बढ़ा जा सकता है। इस प्रकार के वार्तालाप के द्वारा व्यक्तित्व के किसी ऐसे विशिष्ट पक्ष के विषय में विस्तृत जानकारी प्राप्त की जा सकती है जो अन्तत: व्यक्तित्व को समझने में सूझ प्रदान करता है।

(2) इस प्रविधि के अन्तर्गत ऐसे प्रश्नों का स्पष्टीकरण किया जा सकता है जो व्यक्ति की समझ में न आये हों।

(3) इसी प्रकार ऐसे उत्तरों के विषय में भी स्पष्टीकरण प्राप्त किया जा सकता है जो साक्षात्कारकर्त्ता न समझ पाया हो।

(4) इसके द्वारा साक्षात्कारकर्त्ता को व्यक्ति से निकट सम्पर्क या आत्मीयता (Rapport) स्थापित करने का अवसर प्राप्त होता है।

(5) इसके द्वारा ऐसे व्यक्तियों से सूचनायें प्राप्त की जा सकती हैं जो तथ्यों को लिखित में देने से संकोच करते हों।

समाज में और विशेषकर विद्यालयों में बालकों के मानसिक विकास पर अधिक बल दिया जाता है। यहाँ तक कि स्कूल में अधिकांश समय बालकों के ज्ञान को ही बढ़ाने में लगाया जाता है। एक प्रकार से विद्यालय की सभी गतिविधियाँ ज्ञान-वर्धन पर ही केन्द्रित होती हैं। यही कारण है कि बालक के व्यक्तित्व के बारे में सामान्यत: उसके ज्ञान के स्तर से ही अनुमान लगाया जाता है।

30.3.2 व्यक्तित्व मापन की प्रमुख प्रविधियाँ (Personality Measurement Techniques)

व्यक्तित्व के गुणों का मापन आज मनोवैज्ञानिकों ने सम्भव कर दिया है। व्यक्ति परीक्षणों के द्वारा व्यक्ति के जीवन की योजना बनाई जा सकती है।

व्यक्तित्व मापन की विधियाँ इस प्रकार हैं–

(1) मौखिक प्रतिवेदन प्रविधि
(2) व्यवहार परीक्षण प्रविधि,
(3) प्रक्षेपण प्रविधि,
(4) बाह्य शारीरिक प्रविधियाँ,
(5) निरीक्षण प्रविधि,
(6) समाजमिति प्रविधि,
(6) साक्षात्कार प्रविधि,
(8) व्यक्तित्व की नैदानिक सूची,
(9) क्रम निर्धारित मान,
(10) व्यक्तिगत एकल प्रविधि,
(11) शारीरिक प्रविधियाँ, तथा
(12) मनोविश्लेषण प्रविधि।

(1) मौखिक प्रतिवेदन प्रविधि (Verbal Report Technique): इस प्रविधि के अन्तर्गत मौखिक प्रतिवेदन द्वारा व्यक्तित्व का मापन होता है। साक्षात्कार, प्रश्नावली, क्रमनिर्धारण आदि के माध्यम से व्यक्तित्व के मापन का प्रयत्न किया जाता है; जैसे–ईमानदारी, सज्जनता या हटी; उसकी क्रम-निर्धारण प्रविधि से तुलना की जाती है।"

Estimating and recording the degree to which the processes certain traits, like-honesty or generosity or obstinacy and comparing him with other in respect to each trait the rating method. –Gardner Murphy

नोट

(2) व्यवहार परीक्षण (Behaviour Test): व्यक्तित्व मापन की दूसरी प्रविधि व्यवहार परीक्षण है। इसके माध्यम से व्यवहार और वैयक्तिक भेद, मुसीबत में दूसरों की सहायता करना, शीघ्र अनुभवों में उद्दीपन अनुक्रिया आदि का अध्ययन कर व्यक्तित्व का अध्ययन किया जाता है।

(3) प्रक्षेपण परीक्षण (Projective Test): यह विधि व्यक्तित्व मापन की विश्वसनीयता तथा वैध प्रविधि समझी जाती है। आजकल इस विधि का प्रयोग किया जाता है। प्रक्षेपण शब्द का पहला प्रयोग *एल. फ्रैंक* ने किया था। *फ्रैंक* के अनुसार–"प्रक्षेपण परीक्षा से इस बात का ज्ञान होता है कि व्यक्ति किसी कार्य को कैसे समझता और करता है। उनके व्यक्तियों की आन्तरिक या निजी दुनिया का पता चलता है।"

"Projective test reveals the way in which the individual apprehends, understands and takes hold of task, they reveal his inner or private world." *–L. Frank*

व्यक्ति की अनेक इच्छायें ऐसी है जो किन्हीं कारणों से पूर्ण नहीं होती। वे दमन इच्छायें अचेतन में चली जाती हैं। प्रक्षेपण के माध्यम से बाहर आ जाती हैं। इस प्रकार अचेतन में व्याप्त व्यवहार का अध्ययन हो जाता है। *मरफी* के अनुसार–"व्यक्तित्व परीक्षण जो विधिपूर्वक किए जाते हैं वे व्यक्तित्व को समग्र रूप से ग्रहण करते हैं। इससे विशिष्ट व्यवहार या प्रतिमान नहीं होता, इसे प्रक्षेपण कहते हैं क्योंकि व्यक्ति जो कार्य करता है वह स्वयं को क्रिया में प्रक्षेपित करता है, यही उसके व्यक्तित्व में प्रकट होती है।"

"Personality test which systematically undertake to get at the personality as a whole, rather than at specific traits of specific behaviour are usually called projective tests, because the individual is carrying outtask, project himself into activity and thus reveals the kind of person he is." *–G. Murphy*

प्रक्षेपण प्रविधि का अर्थ (Meaning of Projective Test): प्रक्षेपण का अर्थ प्रत्यक्षीकरण (Perceiving) भावनाओं तथा क्रियाओं के गतिशीलता, ये सभी एक-दूसरे से गूँथे हुए उस समय प्रकट होते हैं जब हम परीक्षण लेते हैं। *गुडएनफ* के अनुसार–"प्रक्षेपण विधि निदानात्मक विधि है जो न्यादर्श की अपेक्षा विज्ञान पर आधारित हैं।"

प्रक्षेपण विधि की विशेषताएँ (Characteristics of Projective Test): प्रक्षेपण विधि की कुछ प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(1) **स्वरूप हीन सामग्री** (Uncostructed Material)–प्रक्षेपण विधि में प्रयुक्त की जाने वाली सामग्री स्वरूपहीन होती हैं। इसमें विषयी को अवबोध तथा विशेषण की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। इस विधि में कम से कम सूचनायें दी जाती हैं।

(2) **अचेतन का अध्ययन** (Unconscious)–मनोविश्लेषणवादियों के अनुसार दमन इच्छायें अचेतन में पहुँच जाती हैं और मनुष्य के दैनिक व्यवहार को प्रभावित करती हैं। व्यक्ति के बाह्य व्यवहार से उसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है। अचेतन मन का अध्ययन आवश्यक हो जाता है। *वारेन* के अनुसार–"प्रक्षेपण विधि मानव की दमित इच्छाओं को बाह्य जगत पर आरोपित करने की एक विधि है।"

(3) **सम्पूर्ण व्यक्तित्व का अध्ययन**–व्यक्तित्व के गत्यात्मक संगठन होने के कारण उसका अंशों में अध्ययन नहीं किया जाता सकता है। अधिकांश विधियाँ व्यक्तित्व के गुणों के अलग-अलग अध्ययन पर बल देती हैं। इससे भूत, वर्तमान तथा भविष्य की मानसिक अवस्थाओं को अध्ययन कर सकते हैं।

प्रक्षेपण विधि की उपयोगिता (Advantages of Projectives Tests): प्रक्षेपण विधि की उपयोगिता निम्न प्रकार से प्रस्तुत की जा सकती हैं–

1. **अचेतन मन का अध्ययन**–प्रक्षेपण विधि के द्वारा हम व्यक्ति के अचेतन मन से संघर्षों, आवश्यकताओं तथा इच्छाओं का अध्ययन कर सकते हैं। इस विधि में व्यक्ति को यह ज्ञान नहीं होने पाता कि उसके अचेतन का अध्ययन किया जा रहा है।
2. **मानसिक रोगों का अध्ययन**–प्रक्षेपण प्रविधि के द्वारा मानसिक रोगों का अध्ययन तथा उनका वर्गीकरण किया जा सकता है तथा भविष्य में होने वाली मानसिक अवस्था की भविष्यवाणी भी इस विधि के द्वारा की जा सकती है।

नोट

3. **मार्ग प्रदर्शन**–इस विधि से व्यक्तित्व का मूल्यांकन करके हम भविष्य के लिए उनको परामर्श तथा निर्देशन दे सकते हैं। व्यक्ति की रूचि, अभिवृत्ति तथा अभियोग्यता का ज्ञान इसके द्वारा हो सकता है।
4. **बुद्धि का मापन**–कुछ प्रक्षेपण परीक्षण इस प्रकार के हैं जिनके द्वारा हम व्यक्ति की बुद्धि के बारे में पता चला सकते हैं।
5. **मानसिक चिकित्सा में लाभ**–प्रक्षेपण विधि के द्वारा दमित इच्छाओं को सरलता से निकाला जा सकता है तथा छोटे बच्चों की व्यवहार सम्बन्धी बहुत सी समस्याओं को इसके आधार पर उपचार किया जा सकता है

(4) बाह्य शारीरिक प्रविधियाँ (Morphological Technique): इन विधियों के स्वरूप से व्यक्तित्व मापन किया जाता था। इसमें मस्तिष्क की रचना, शरीर की रचना, हस्तरेखा तथा ज्योतिष आदि का सहारा लेकर व्यक्तित्व का मापन किया जाता था। जिस व्यक्ति का कपाल जितना बड़ा होता है, वह उतना ही बुद्धि मान समझा जाता था। जिस व्यक्ति की नाक तोते जैसी हो तो उसको चालाक समझा जाता था। इसी प्रकार हस्तरेखाओं के अध्ययन से व्यक्ति के सम्बन्ध में पूर्वानुमान कर उसके व्यक्तित्व के प्रति धारणा का निर्माण किया जाता था।

(5) निरीक्षण प्रविधि (Observation Technique): इस विधि में निरीक्षण के आधार पर व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। छोटे बच्चों हेतु यह विधि अपनाई जाती है। प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष, स्वाभाविक तथा प्रमापीकृत, नियन्त्रित तथा अनियन्त्रित निरीक्षण के माध्यम से अध्ययन किया जाता है।

1. **कौशल निरीक्षक**–यदि निरीक्षक कुशल एवं प्रशिक्षित है, उस पर बाह्य तथा आन्तरिक परिस्थितियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता तो नि:सन्देह उनके द्वारा किए गये निरीक्षण के परिणाम अच्छे होंगे।
2. **तात्कालिक लेखा**–परीक्षण के समय प्राप्त सूचनाओं को तुरन्त ही लिख लेना चाहिए।
3. **वैज्ञानिक यन्त्रों का प्रयोग**–वस्तुनिष्ठ निरीक्षण के लिए टेपरिकार्डर, एक पक्ष परदा, कैमरा आदि का प्रयोग किया जाए।
4. निश्चित समय-निरीक्षण का समय निश्चित हो ताकि प्रतिदिन कुछ समय के लिए निरीक्षण किया जाए।
5. **निरीक्षण व्यवस्थित हो**–निरीक्षण में एक समय में व्यवहार के एक ही पक्ष का अध्ययन किया जाए। कई गुणों का अध्ययन एक साथ करने से गलतियों की सम्भावनायें अधिक रहती हैं।

निरीक्षण प्रविधि के दोष–निरीक्षण विधि में दोष भी पाये जाते हैं, यह दोष निम्नलिखित प्रकार से हो सकते हैं–

(अ) परिणामों में समानता न होना–दो निरीक्षकों के निरीक्षण में समानता का अभाव पाया जाता है।

(ब) निरीक्षक के मस्तिष्क पर बालकों के गुण–अवगुणों का प्रभाव पड़ता है यह प्रभाव दूसरे व्यक्ति के गुणों को भी प्रभावित करता है।

(6) समाजमिति प्रविधि (Sociometry Technique): अध्यापक इस प्रविधि का प्रयोग छात्रों के विभिन्न सामाजिक गुणों के मापन के लिए कर सकता है। इस प्रविधि का विकास सर्वप्रथम *मुरेनों* ने किया था।

कक्षा में बालक किस छात्र को अधिक पसन्द करते हैं और किसको कम; इसके लिए उनसे ये प्रश्न कर सकते है–

(1) तुम्हें कक्षा में अपने पास बैठने वाला चुनता है। किन्ही दो छात्रों के नाम लिखो।

(2) तुम्हें एक दावत देनी है। उन दो छात्रों के नाम लिखों, जिन्हें दावत में बुलाओगे।

(3) तुम छात्रावास में अपना साथी किसको बनाना पसन्द करोगे?

इस विधि का प्रयोग विद्यालय, कक्षा तथा समाज के संगठन (Organization) के अध्ययन के लिए किया जाता है।

(7) साक्षात्कार प्रविधि (Interview Technique): व्यक्तित्व के मापन में साक्षात्कार का सर्वाधिक महत्व है। शारीरिक तथा मानसिक अवस्थाओं का इस विधि से अध्ययन किया जाता है। आत्मनिष्ठ साक्षात्कार कई प्रकार का होता है–

1. **व्यक्तिगत तथा सामूहिक**–व्यक्तिगत साक्षात्कार में एक समय में एक ही व्यक्ति से सूचना प्राप्त की जाती है, जबकि सामूहिक साक्षात्कार में एक या दो से अधिक व्यक्तियों से सूचना प्राप्त की जाती है।

2. **परिचयात्मक**—परिचयात्मक साक्षात्कार में मनोवैज्ञानिक प्रयोज्य से आत्मीयता स्थापित करता है, जिससे भविष्य में विभिन्न सूचनायें सरलता से प्राप्त हो सकें और प्रयोज्य सूचना देते हुए किसी प्रकार का भय न अनुभव करें।
3. **अपरिमापित साक्षात्कार**—अधिकांश लोग अपरिमापित साक्षात्कार विधि का प्रयोग करते हैं। इस विधि में पहले से प्रश्नों का कोई प्रमापीकरण नहीं होता है। व्यक्ति से उसकी योग्यता के आधार पर प्रश्न पूछे जाते हैं।
4. **निदानात्मक साक्षात्कार**—इस प्रकार के साक्षात्कार में व्यक्ति की बातों का ध्यान रखना चाहिए—
   (1) साक्षात्कार लेने से पूर्व छात्र से ऐसे सम्बन्ध स्थापित कर लिए जायें कि वह सूचना देते हुए किसी प्रकार का भय अनुभव न करे और सब प्रकार की सूचनायें ठीक-ठीक दे।
   (2) साक्षात्कार करने वाले को प्रसन्न मुद्रा में प्रश्न पूछने चाहिए।
   (3) साक्षात्कार की त्रुटियों को दूर करने के लिए साक्षात्कार दो या दो से अधिक अनुभवी व्यक्तियों द्वारा होने चाहिए। साक्षात्कार में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसमें कहीं भी पक्षपात न आये।

(8) व्यक्तित्व की नैदानिक अनुसूची (Inventory of Personality Diagnosis): साक्षात्कार में व्यक्ति से उसके जीवन की सूचनायें प्राप्त करना कठिन हो जाता है। संवेगात्मक अस्थिरता से भी बहुत से कारणों का पता नहीं चलता। *वुडवर्थ* ने इसलिए नैदानिक अनुसूची का निर्माण किया। आज भी अनेक नैदानिक सूचियाँ प्रचलित हैं। इनमें प्रमुख यह हैं—

1. **बैल की समायोजन नैदानिक अनुसूची** (Bell's Adjustment Inventory)—इस सूची में 140 पद हैं इसका एक भाग बालक के लिए और दूसरा प्रौढ़ों के लिए। प्रश्नों को जीवन से सम्बन्धित पाँच भागों तथा घर, स्वास्थ्य, विद्यालय आदि में बाँटा गया है। इसकी वैधता 0.66, 0.58, 0.79 तक प्राप्त हुई है।
2. **मिनीसोटा बहु-आयामी व्यक्तित्व अनुसूची** (Minnesota Multidimensional Personality {MMPI})—मिनीसोटा बहु-आयामी व्यक्तित्व अनुसूची' व्यक्तित्व मापन की सबसे महत्वपूर्ण अनुसूची है। इस मापनी में कुल 550 कथन हैं, जो शारीरिक अवस्था से लेकर सामाजिक अभिवृत्तियों तक व्यक्तित्व सम्बन्धी समस्त पहलुओं का मापन करते हैं। प्रत्येक कथन का उत्तर 'सत्य', 'असत्य' या 'कह नहीं सकता' में देना होता है। परीक्षण प्रारूप में ये कथन अलग-अलग कार्डों पर छपे रहते हैं, जिन्हें अभ्यर्थी तीन वर्गों में बाँटता है। बाद में इसका एक समूह प्रारूप तैयार किया गया, जिससे कथन एक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किए गए तथा जिसमें उत्तरों को उत्तर-पत्रक पर लिख लिया गया। परीक्षण के दो प्रारूपों को 16 वर्ष और उससे अधिक आयु वर्ग के युवक के लिए तैयार किया गया, पर इनका प्रयोग इससे कम आयु के लोगों पर भी सफलतापूर्वक किया गया है। यद्यपि, परीक्षण की समय-सीमा निर्धारित नहीं है, फिर भी, इसे पूरा करने में लगभग 90 मिनट का समय दिया जाता है। परीक्षण के समस्त कथनों को 30 शीर्षकों में बाँटा गया है। 500 सामान्य वयस्कों एवं 800 विभिन्न प्रकार के मानसिक रोगियों के आधार पर कई अंकन कुंजियों की रचना की गई। इस सूची के दो प्रतिरूप-व्यक्तिगत कार्ड प्रतिरूप (Individual Card Form) तथा सामूहिक पुस्तिका प्रतिरूप (Group Booklet Form) उपलब्ध हैं। इस परीक्षण में मूल प्राप्तांकों को 'टी'-प्राप्तांक में परिवर्तित कर लेते हैं, तदुपरान्त, उसके आधार पर जीवन-वृत बना लेते हैं। फिर भी पार्श्व-चित्र के आधार पर विभिन्न शीलगुणों का मापन किया जाता है, चाहे वे मनोविकारों से सम्बन्धित हों या सामान्य समायोजन से। इस प्रकार इस सूची का उपयोग चिकित्सकों द्वारा व्यक्तित्व असमायोजन के मनोवैज्ञानिक विकारों का अध्ययन करने के लिए होता है। इस परीक्षण का मुख्य उद्देश्य व्यक्तित्व के समस्त महत्वपूर्ण पक्षों का अध्ययन करना है। पुन: परीक्षण विधि से सामान्य विषयों पर विश्वसनीयता गुणांक .50 से .90 तथा मानसिक रोगियों पर .52 से .89 तक पाया गया। अर्द्ध-विभाजन विधि से इसकी विश्वसनीयता, .90 पाई गयी। निदानात्मक निष्कर्षो तथा अन्य परीक्षणों का मानदण्ड मानकर इसकी वैधता उच्च पायी गयी है।

नोट

3. **एडवर्ड्स व्यक्तिगत अभिरुचियाँ अनुसूची** (Edward's Personal Preference Schedule {EPPS})—'एडवर्ड्स व्यक्तिगत प्राथमिकता अनुसूची' उन व्यक्तिगत, अनुसूची उन व्यक्तिगत सूचियों में सर्वप्रथम है, जिसमें व्यक्तित्व सिद्धान्तों को महत्व दिया गया। इस अनुसूची की आधार-शिक्षा *मरे* का व्यक्तित्व सिद्धान्त है, इसलिए, *एडवर्ड्स* ने इसमें *मरे* की आवश्यकता पद्धति को स्थान दिया है। *मरे* के आवश्यकताओं के मापन एवं मूल्यांकन की यह अत्यन्त ही व्यापक अनुसूची है। इस अनुसूची में शक्ति चयन विधि द्वारा 210 पद युग्म सम्मिलित हैं, जो दो-दो के जोड़े में व्यवस्थित हैं। 15 आवश्यकताओं में से कोई से भी दो अभावों से सम्बन्धित पदों को युग्म के रूप में रखा गया है। इस प्रकार, प्रत्युत्तर पाने के उद्देश्य से 15 युग्मों की समान रूप से पुनरावृत्ति की गयी है। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि परीक्षण पदों की रचना में एडवर्ड्स ने *मरे* की सूची में से 15 आवश्यकताओं (Needs) को लिया तथा उन्हीं पदों का चयन किया, जिनकी विषयवस्तु इनमें से किसी भी अभाव में निहित हो सके। इस परीक्षण में व्यक्तित्व चित्रण करने वाला एक पार्श्व चित्र होता है, जो विभिन्न अभावों से सम्बन्धित शक्ति को प्रदर्शित करता है। अतः मानकों की सहायता से हम व्यक्ति के लिए *मरे* द्वारा प्रतिपादित पन्द्रह अभावों का मापन करना इस परीक्षण का मुख्य उद्देश्य है। पुनः परीक्षण विधि से इसकी 15 मापनियों की विश्वसनीयता .74 से .88 तथा अर्द्ध-विभाजन विधि से .60 से .87 ज्ञात की गयी। चूँकि यह परीक्षण अपने मौलिक स्वरूप को रखता है इसलिए इसकी वैधता को कम पाया गया। इसके अंकों की अन्य व्यक्तियों के मतों से तुलना करने पर इनमें कोई सह-सम्बन्ध नहीं पाया गया। अन्य अनुसूचियों के अंकों से सह-सम्बन्धित करने पर भी सह-सम्बन्ध बहुत कम पाया गया। इन अभावों की विचलन मापनी 50 से .80 तक सह-सम्बन्ध गुणांक पाया गया है।

   यह परीक्षण व्यावहारिक जीवन, निर्देशन एवं संदर्शन तथा चयन के क्षेत्रों में अत्यन्त उपयोगी है। भारतीय परिवेश में इसका अनुकूलन *आर. पी. भटनागर* ने हाई स्कूल के बच्चों के लिए किया है।

4. **आइजिंग मोडसले व्यक्ति अनुसूची** (Eysenck Maudsley Personality Inventory {EMPI})—यह सूची व्यक्तित्व के दो पक्षों-स्नायुदौर्बल्य (Neuroticism) तथा अन्तर्मुखी-बहिर्मुखी (Introversion-Extroversion)—का मापन करती है। यह सामान्य और असमान्य दोनों ही प्रकार के व्यक्तियों के लिए उपयुक्त है। यद्यपि, परीक्षण प्रशासन की कोई निश्चित समय-सीमा नहीं है फिर भी, लघु, प्रारूप को पूरा करने में 3 से 5 मिनट तक का समय लगता है। लम्बी मापनी के लिए 15 से 20 मिनट तक का समय लगता है। लघु मापनी में 12 पद है और लम्बी मापनी में 48 पद। उत्तर के लिए तीन विकल्प हैं—'हाँ', '?', 'नहीं'। परीक्षण का मूल रूप *आइजिंक* ने तैयार किया था। *न्यूरो* (Neuro) आयाम पर अधिकतम अंक 48 हो सकते हैं। और एक्सट्रो (Extro) पर 48। लघु प्रारूप में दोनों आयामों पर अधिकतम अंक 12, 12 हैं। अर्द्ध-विभाजन (Split-half) विश्वसनीयता गुणांक *न्यूरो और एक्सट्रो* पर प्राप्त समस्त अंकों को जोड़ लिया जाता है। उन समस्त पदों को जिनका उत्तर हाँ में हो, 2 अंक दिए जाते हैं। इसके अतिरिक्त 14, 16, 18, 22, 24, 30, 36 और 40 आदि आठ पदों के लिए जो *एक्सट्रो आयाम* से सम्बन्धित हैं और जिनके उत्तर नहीं में हों, 2 अंक दिए जाते हैं। '2' के उत्तर के लिए 1 अंक दिया जाता है। इस प्रकार प्राप्त आँकड़ों का मानक अंकों में परिवर्तित कर लिया जाता है, जिससे *न्यूरो और एक्सट्रो* की तुलना, मानकों से की जा सके। इस परीक्षण पर 50 मानक अंक हैं। औसत से धनात्मक/ऋणात्मक महत्वपूर्ण नहीं है, लेकिन, 70 से अधिक और 30 से कम के अंक, औसत से महत्वपूर्ण रूप से विचलित हैं। भारतीय परिवेश में इसका अनुकूलन सन् (1965) में जलोटा तथा कपूर द्वारा किया गया।

5. **कैटिल सोलह व्यक्तित्व कारक प्रश्नावली** (Cattell 16 Personal Factors Questionnaire)—*आर. बी. कैटिल तथा इवरी* द्वारा निर्मित सोलह व्यक्तित्व कारक प्रश्नावली का भारतीय अनुकूलन *एस. डी. कपूर* द्वारा किया गया व्यक्तित्व का कम समय में विस्तार से मापन करने के लिए यह प्रश्नावली सर्वाधिक उपयुक्त है। इसके अनेक प्रारूप उपलब्ध हैं, जिनके द्वारा 17 वर्ष से अधिक आयु वाले व्यक्तियों के व्यक्तित्व के गुणों

को जाना जाता है। इसका प्रारूप **'अ'** तथा **'ब'** कॉलिज स्तर पर पढ़ने वाले छात्रों के लिए उपयुक्त है तथा प्रत्येक प्रारूप में (187-187) पर चक्रीय (Cyclic) क्रम में होते हैं तथा प्रश्नों के उत्तर तीन विकल्पों में देने होते हैं। परीक्षण का प्रारूप में (128-128) प्रश्न होते हैं जिनका उत्तर दो विकल्पों में देना होता है। परीक्षण का प्रत्येक प्रारूप व्यक्तित्व की 16 पक्षों (Dimensions) में अर्थापन करता है, जो कारक-विश्लेषण विधि पर आधारित होने के कारण एक दूसरे से पूर्णतया स्वतन्त्र हैं। 16 कारक हैं—

Reserved-outgoing (A), Less intelligent-more intelligent (B), Affected by feelings-Emotionally stable (C), Humble-assertive (E), Sober-happy go lucky (F), Expedient-concientious (G), Shy-Venturesome (H) Tough minded-tender minded (I), Trusting-Suspicious (L), Practical-imaginative M, Forthright-shrewed (N), Placid-Apprehensive (O), Conservation-Experimenting (Q_1), Group dependent-self sufficient (Q_2), Undisciplined-controlled (Q_3), Relaxed-Tense (Q_4)A

इन प्राथमिक 16 कारकों के अतिरिक्त इन्हीं पर आधारित दस अन्य द्वितीयक्रम कारकों (Second-order factors) को भी ज्ञात किया गया। परीक्षण की पुन: परीक्षण विश्वसनीयता, आन्तरिक विश्वसनीयता तथा समान प्रारूप विश्वसनीयता गुणांक भी निकाले गये, जिनका मान क्रमश: .62, .93, .70, .85, .69, .78 मक्र, .34 से .76 तक पाया गया। साथ ही, परीक्षण की प्रत्यय वैधता, प्रत्यक्ष वैधता तथा परिस्थितिजनय वैधता का आकलन भी किया गया, जो क्रमश: . 85, .74 से .86, .58 से .77 तथा .42 से .99 प्राप्त हुए। अंकन की दृष्टि से विभिन्न प्रारूपों के लिए विभिन्न कुँजियों (Scoring Key) का निर्माण किया गया तथा प्राप्त मूल अंकों को स्टेन अंकों में परिवर्तित कर व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों का अर्थापन अंकात्मक रूप से की जाती है।

(9) अनुस्थिति मापनी प्रविधि (Rating Scale Technique): इस मान की प्रक्रिया का प्रारंभ इन्डियाना की न्यू होम कालोनी में हुआ था। इस पर लोग व्यक्तित्व में संशोधन के लिए इस प्रकार के मानों का प्रयोग हैं। *गाल्टन* ने इसका प्रयोग व्यक्तिक विशेषताओं एवं मानसिक प्रतिमाओं के मापन के लिए किया था।

क्रम निर्धारण मान दो प्रकार के होते हैं—

(अ) **संख्यात्मक अनुस्थिति मापनी—**इसमें गुणों की तीव्रता के आधार पर अंक दिए जाते हैं। इन अंकों के क्रम आधार पर निर्धारण किया जाता है।

(ब) **परिस्थिति परीक्षण—**इस विधि में परिस्थिति उत्पन्न करके समस्या के प्रति प्रतिक्रिया का अध्ययन किया जाता है। क्रमविधि की विशेषता इस प्रकार हैं—

(1) लगभग सभी विधियों में प्रयोज्य को कुछ न कुछ विवरण देना पड़ता है। इस विधि में प्रयोज्य के सामने एक निश्चित कार्य होता है।

(2) परीक्षण के उद्देश्य का प्रयोज्य को पता नहीं रहता है। इससे परीक्षण की वैधता बढ़ जाती है।

इस विधि में कार्य संचारित होता है तथा कार्य को ठीक हल भी दिया जाता है। इस प्रकार के परीक्षणों का विकास द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् हुआ। इसमें धोखा देना सम्भव है तथा इनकी वैधता बहुत अधिक है, किन्तु इनकी विश्वसनीयता कम है।

(10) एकल अध्ययन प्रविधि (Case Study Technique): यह विधि प्राचीन काल से प्रयुक्त की जा रही है इसका प्रयोग बालापराधियों के निदान के लिए किया जाता है। सम्बन्धित सूचनायें एकत्रित करके व्यक्तित्व विश्लेषण किया जाता है इसमें सूचनायें इन विषयों पर एकत्रित की जाती है—(1) समस्या, (2) शिक्षा, (3) शारीरिक स्वास्थ्य, (4) परिपक्वता, (5) सामाजिक सम्बन्ध, (6) बुद्धि, (7) पारिवारिक सम्बन्ध, (8) व्यक्तित्व तथा (9) व्यवसाय।

इस विधि में परिवार की सभी सूचनायें एकत्रित हो जाती हैं। इसके पश्चात् उपयुक्त सूचनाओं को एकत्र किया जाता है। इस विधि में सबसे बड़ा दोष यह है कि माता-पिता अपने बालक के सम्बन्ध में अवगुणों की सूचनायें छिपा लेते हैं।

नोट

(11) शारीरिक प्रविधियाँ (Physiological Technique): कुछ मनोवैज्ञानिकों ने शरीर की अन्तः क्रियाओं के द्वारा व्यक्तित्व मापन का प्रयत्न किया है। इसमें शरीर की विभिन्न क्रियाओं को यन्त्रों द्वारा मापा जाता है। ये यन्त्र इस प्रकार हैं–

(1) विद्युत यन्त्रों द्वारा हृदय की क्रिया को नापना (Electro-Cardiograph),

(2) मस्तिष्क की क्रिया को अंकित करने वाला यन्त्र (Electro-Encephaulogram)।

(3) श्वास क्रिया के मापने वाला यन्त्र (Penumograph),

(4) रक्त चाप के मापने वाला यन्त्र (Plenthymograph),

(5) नाड़ी की चाल को मापने वाला यन्त्र (Shygmograph),

(6) त्वचा के रासायनिक परिवर्तन को मापने वाला यन्त्र (Psycho Galvanometer),

(7) मांसपेशियों की क्रिया को मापने वाला यन्त्र (Electromyogram), तथा

(8) इस विधि में व्यक्ति के हस्तलेख द्वारा उसके व्यक्तित्व का पता लगाया जाता है, जैसे–यदि कोई व्यक्ति बार-बार लिख कर काटता है तो इसका अर्थ है कि वह चिंता तथा मानसिक अस्वस्थता से पीड़ित है। इसको ग्रफाइलोजी (Graphyology) यन्त्र से मापन किया जाता है।

(12) मनोविश्लेषण विधि (Psychoanalytic Method): मनोविश्लेषण विधि का निर्माण *फ्रायड* ने किया था। उसके अनुसार व्यक्ति समाज डर और नियमों के कारण बहुत सी घटनाओं को प्रदर्शित नहीं कर पाता है। यह दबी हुई इच्छाएं व्यक्ति के अचेतन में चली जाती हैं और अप्रत्यक्ष रूप से व्यवहारों को प्रकाशित करती हैं। अचेतन मन की विशेषताओं को ज्ञात करने के लिए इन विधियों का प्रयोग किया जाता है। उत्तरों का विश्लेषण करके उत्तरों के साथ सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। यह परीक्षण अधिक विश्वसनीय तथा वैध हैं। इसकी विश्वसनीयता, .60 से .95 तक तथा अर्द्ध-विच्छेद (Split-half) विधि से .95 एक एवं परीक्षण पुनर्परीक्षण के द्वारा .38 से .86 तक आई।

रोर्शा परीक्षण व्यक्ति परीक्षण है किन्तु आजकल इसका सामूहिक रूप में भी प्रयोग किया जाता है। यह परीक्षण व्यक्तित्व की असमान्यता तथा मानसिक रोगों का पता लगाने में सबसे अधिक उपयोग किया जाता है।

कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि रोर्शा परीक्षण की संस्कृति का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसलिए इसे समान रूप से प्रत्येक देश में प्रयोग किया जा सकता है किन्तु यह मत उचित नहीं है। क्योंकि कुछ देश ऐसे हैं, जहाँ पर बच्चों को प्रत्येक वस्तु का सूक्ष्म रूप में अध्ययन करने की आदत डाली जाती है। और कुछ देश ऐसे हैं जहाँ पूर्ण वस्तु का ज्ञान कराया जाता है। इन दोनों देशों के बालकों के परीक्षणों के परिणामों में अधिक अन्तर पाया जाता है।

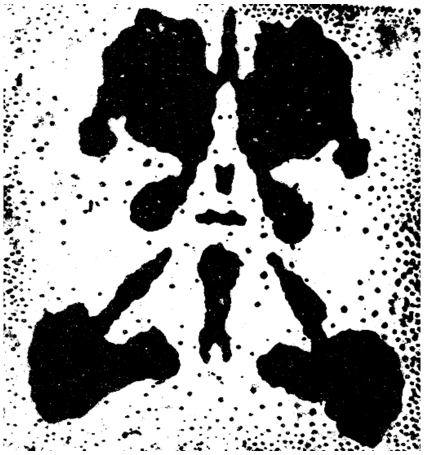

रोर्शा परीक्षण का एक चित्र.

व्यक्तित्व और शिक्षा निर्देशन (Personalilty and Educational Guidance)

शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करना है। यदि व्यक्ति का सर्वांगीण विकास होता है तो उसके व्यक्तित्व का विकास होगा। अत: व्यक्तित्व के अध्ययन का शिक्षाशास्त्रियों के लिए अत्यन्त महत्व है—

(1) व्यक्तित्व के विकास से अन्तर्दृष्टि विकसित होती है और उसमें विभिन्न शक्तियाँ संगठित होने लगती हैं।

(2) ज्ञान से आत्मविकास को बल मिलता है। स्वयं के प्रति अनेक प्रत्ययों का स्पष्टीकरण हो जाता है।

(3) विश्वास तथा आत्मविश्वास विकसित होता है।

अभिप्रेरणा, अधिकार भावना, सत्य का ज्ञान तथा अवबोध, परिचय, निकटता, घनिष्ठता आदि के विकास में शिक्षा सहायक होती है। इसलिए कहा गया है—"यहाँ इस बात को देखना है कि व्यक्ति स्वयं को जानता है अथवा नहीं, वह सम्मान, अवबोध तथा प्यार पाने के योग्य है? वह स्वयं को जानने तथा अपने का दूसरों से मिलाने के योग्य है।"

टास्क क्या व्यक्ति का मापन किया जा सकता है? व्यक्तित्व के मापन की कुछ प्रविधियों का वर्णन कीजिए।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

3. सही विकल्प चुनिए (Choose the correct option)—

1. व्यक्तित्व का सिद्धान्त है—
   (क) द्वि कारक सिद्धान्त (ख) प्राथमिक योग्यता सिद्धान्त
   (ग) मनोविश्लेषण सिद्धान्त (घ) उपरोक्त सभी
2. व्यक्तित्व परीक्षण का मुख्य रूप है—
   (क) प्रक्षेपी परीक्षण (ख) अप्रक्षेपी परीक्षण
   (ग) दोनों ही प्रकार (घ) कोई भी नहीं
3. व्यक्तित्व के मुख्य पक्ष हैं—
   (क) अभिरुचियाँ (ख) अभिवृत्तियाँ
   (ग) मूल्यों (घ) उपरोक्त सभी
4. व्यक्तित्व का शुद्ध मापन किया जाता है—
   (क) अप्रक्षेपी परीक्षण (ख) प्रक्षेपी परीक्षण
   (ग) दोनों ही (घ) कोई नहीं
5. व्यक्तित्व मापन का उपयोग किया जाता है—
   (क) शैक्षिक निर्देशन (ख) व्यावसायिक निर्देशन
   (ग) व्यक्तित्व निर्देशन (घ) पारिवारिक निर्देशन
6. प्रक्षेपी व्यक्तित्व परीक्षण का उदाहरण है—
   (क) रौर्शा परीक्षण (ख) प्रसंगात्मक परीक्षण
   (ग) वाक्य पूर्ति परीक्षण (घ) उपरोक्त सभी

नोट

बुद्धि व सृजनात्मकता का मापन (Measurement of Intelligence and Creativity)

(शाब्दिक तथा अशाब्दिक बुद्धि एवं सृजनात्मक परीक्षण)

बुद्धि शब्द का सामान्य बोल-चाल की भाषा में बहुत अधिक उपयोग है। हम प्रायः कहते हैं कि, "वह बड़ा बुद्धिमान है", "वह तो बिल्कुल मूर्ख है", "उसमें तो बुद्धि है ही नही।" इन सब वाक्यों से स्पष्ट होता है कि बुद्धि का क्षेत्र अति विस्तृत है। परन्तु यह सब अर्थ सामान्य दृष्टिकोण के अनुसार हैं। इसके अतिरिक्त बुद्धि प्रत्यय शब्द का मनोविज्ञान से भी सम्बन्ध है। मनोविज्ञान के अन्तर्गत बुद्धि का अर्थ निर्धारित किया गया है। अलग-अलग मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि की अनेक परिभाषाएँ दी हैं। कुछ परिभाषाओं का यहाँ उल्लेख किया गया है।

बुद्धि का अर्थ एवं परिभाषाएँ (Meaning and Definitions of Intelligence): यूनानी दार्शनिकों ने दर्शनशास्त्र में ही एक प्रत्यय का उल्लेख किया जिसे मनोविज्ञान संकाय (Faculty Psychology) के नाम से सम्बोधित करते हैं। इनमें विचारानुसार मनुष्य का मस्तिष्क को अनेक योग्यताओं (Faculties) में विभक्त किया है। यह शक्तियाँ विभिन्न कोष्ठों (Cells) में निहित हैं। इसी प्रकार बुद्धि के लिए भी एक कोष्ठ निर्धारित है, ऐसा कहकर शक्ति मनोविज्ञान के अनुयायियों ने बुद्धि को सर्वप्रथम व्यवस्थित रूप में परिभाषित करने का प्रयत्न किया है। परन्तु वर्तमान युग में शक्ति-मनोविज्ञान की विचारधाराओं को पूरी तरह अस्वीकार कर दिया है।

बुद्धि को परिभाषित करने में इसके उपरान्त *स्टर्न* ने प्रयास किए तथा उन्हें बुद्धि की परिभाषा देते हुए कहा–"बुद्धि एक व्यक्ति की सामान्य क्षमता है, जिसके द्वारा वह चेतनापूर्वक अपने विचारों को नवीन आवश्यकताओं से समायोजित करता है, यह नई समस्याओं तथा जीवन की परिस्थितियों के प्रति सामान्य मानसिक अनुशीलता है।

जीवन परिस्थितियों एवं समस्याओं की श्रृंखला है तथा इनमें समायोजन करना अत्यन्त आवश्यक है समायोजन उपयुक्त वस्तु के पर्यवेक्षण के अभाव में असम्भव है। वस्तु की प्रकृति उसे उद्देश्य पर निर्भर है। परन्तु प्रत्येक उद्देश्य की प्राप्ति हेतु उचित साधनों का होना भी आवश्यक है। उद्देश्य प्राप्ति की सफलता का मापन ही बुद्धि का माप कहा जा सकता है। तकनीकी भाषा में हम कह सकते हैं कि "बुद्धि उपयुक्त सम्बन्धों का, जो जीवन के अनुरूप होते हैं और समय तथा व्यक्ति के अनुसार अलग-अलग होते हैं, पर्यवेक्षण हैं।"

30.4 बुद्धि का मापन (Measurement of Intelligence)

सर्वप्रथम 1875 में व्यक्तिगत भेद को मान्यता दी गई थी। इसके पश्चात् व्यक्तिगत भेद के सम्बन्ध में अनेक प्रयोग हुए। इनमें *कैटिल* तथा *गाल्टन* के नाम प्रमुख हैं। इन्होंने व्यक्तिगत भेदों से सम्बन्धित अनेक प्रयोग किए। परन्तु बुद्धि मापन का कार्य प्रमुख रूप से बिने (1905) द्वारा प्रारम्भ किया गया।

बिने ने यह देखा कि कुछ छात्र कक्षा में पढ़ाई गयी बातों को अत्यन्त शीघ्रता एवं सफलता से सीख लेते हैं। तथा कुछ छात्र अत्यन्त कुशलतापूर्वक समझाने पर भी पाठ्यवस्तु को नहीं समझ पाते हैं। अतः *बिने* यह जानना चाहते थे कि वह कौन-सी मानसिक शक्ति है जो इस सफलता एवं असफलता का कारण है, अतः उन्होंने अपने मित्र साइमन की सहायता से ऐसे परीक्षाओं के निर्माण का काम शुरू कर दिया जिनसे वह इस मानसिक शक्ति (बुद्धि) को माप सकें। इस प्रकार (1905) में सर्वप्रथम निकाला जिसमें कुल मिलाकर 30 प्रश्न थे जो कठिनाई के क्रम में रखे गये थे। इनका प्रयोग 50 छात्रों पर किया गया सन् (1911) में इस परीक्षण का संशोधन हुआ और 'मानसिक आयु' (Mental Age) शब्द का प्रथम बार इसमें उपयोग किया गया। सन् 1911 में प्रश्नों की संख्या 54 कर दी गयी। इसके उपरांत 1916 में बिने ने स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में अपने सहयोगियों के साथ मिलकर बुद्धि मापन का संशोधन किया और इसे ***'स्टेन्फोर्ड-बिने टेस्ट'*** का नाम दिया। इस परीक्षण में कुल 90 प्रश्न थे। इस परीक्षण का प्रमापीकरण 1000 बालकों पर किया गया। स्टर्न ने इस सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण सुझाव दिया। उन्होंने बुद्धि-मापदण्ड के स्थान पर बद्धि-लब्धि (I.Q.—Intelligence Quotient) का एक मौलिक सुझाव दिया। वह बुद्धि माप हेतु बुद्धि लब्धि का प्रयोग करने लगे। इसके लिए उन्होंने निम्नलिखित सूत्र प्रस्तुत किया–

$$\text{बुद्धि-लब्धि (I.Q.)} = \frac{\text{मानसिक आयु (M.A)}}{\text{वास्तविक आयु (C.A)}} \times 100$$

नोट

इस के अनुसार मानसिक आयु में वास्तविक आयु का भाग देकर 100 का गुणा कर देते हैं। 100 का गुणा करने से दशमलव नहीं आ पाता, यही लाभ है। यदि किसी छात्र की बुद्धि-लब्धि 100 है तो उसे सामान्य बुद्धि वाला छात्र कहेंगे तथा इससे अधिक होने पर उसे तीव्र बुद्धि-लब्धि वाला एवं कम होने पर मन्दबुद्धि वाला बालक कहेंगे। कुछ व्यक्तियों ने बुद्धि-लब्धि के आधार पर भी बालकों का श्रेणी-विभाजन कर दिया है। इस प्रकार के कई श्रेणी-विभाजन इस समय देखने को प्राप्त होते हैं तथा अलग-अलग देशों में अलग-अलग 8 श्रेणी में विभाजन किया गया है। नीचे इसी प्रकार का एक श्रेणी विभाजन प्रस्तुत हैं—

1. जड़ (Idiots)	(0 – 25)	बुद्धि-लब्धि
2. मूढ़ (Imbeciles)	(20– 50)	बुद्धि-लब्धि
3. मूर्ख (Morones)	(50 – 70)	बुद्धि-लब्धि
4. मन्दबुद्धि (Dull)	(70 – 90)	बुद्धि-लब्धि
5. सामान्य (Average)	(90 – 100)	बुद्धि-लब्धि
6. उच्च बुद्धि (Superior)	(110 – 125)	बुद्धि-लब्धि
7. अति उच्च बुद्धि (Very Superior)	(125 – 140)	बुद्धि-लब्धि
8. मेधावी या प्रतिभाशाली (Genius)	(140 से ऊपर)	बुद्धि-लब्धि

इस प्रकार और भी अनेक वर्गीकरण के आधार बनाए गए परन्तु सबसे एक ही बात की धारणा होती है कि जिसकी बुद्धि-लब्धि अधिक होगी, वही अधिक योग्य होगा।

धीरे-धीरे *बिने* के परीक्षणों का अनुवाद विभिन्न देशों की भाषाओं में हुआ एवं अनेक देशों में इसको अपनाया गया था इसका अनुवाद किया गया था, इसी को आधार मानकर दूसरे परीक्षण बनाए गए; उदाहरण के लिए, *टरमैन* ने 1913—16 के मध्य संशोधित परीक्षण बनाया, 1992 में बर्ट ने बिने परीक्षण का संशोधन किया 1913 में जर्मनी में ऐसे ही परीक्षण भारत में भी इसी प्रकार के परीक्षण इलाहाबाद में बनाए गए।

30.4.1 बुद्धि परीक्षाओं का वर्गीकरण (Classification of Intelligence Tests)

निर्देशन में परीक्षाएं अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, अत: निर्देशक को मापन एवं मूल्यांकन के सिद्धान्तों का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है। हम यहाँ संक्षेप में बुद्धि परीक्षाओं का वर्गीकरण करेंगे। इस सम्बन्ध में विस्तृत ज्ञान किसी भी मापन एवं मूल्यांकन की पुस्तक से प्राप्त किया जा सकता है। अपनी सुविधा एवं सरलता हेतु वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है—

1. (अ) व्यक्तिगत परीक्षा (Individual Test), तथा
   (ब) समूह परीक्षा (Group Test)।
2. (अ) शक्ति परीक्षा (Power Test)।
   (ब) गति परीक्षा (Speed Test)।
3. (अ) शाब्दिक परीक्षा (Verbal Test)।
   (ब) क्रियात्मक परीक्षा (Performance Test)।

1. (अ) व्यक्तिगत परीक्षा (Individual Test)—इस प्रकार की परीक्षाएँ इस समय पर एक ही व्यक्ति पर प्रशासित की जा सकती हैं। *बिने* की परीक्षा तथा उसके समस्त संशोधन व्यक्तिगत परीक्षाएं थी। इसी प्रकार जितनी भी क्रियात्मक परीक्षाएं (Performance Test) हैं, वे सभी व्यक्तिगत परीक्षाएं हैं। इसके अलावा वैश्लर-वैलेव्यू बुद्धि परीक्षण भी व्यक्तिगत परीक्षा है। प्रमुख कार्यात्मक तथा लिखित व्यक्तिगत परीक्षाएं निम्नलिखित हैं—

(1) बिने—स्टेन्फोर्ड परीक्षण (2) वैश्लर—वैलेव्यू परीक्षण,
(3) बर्ट के तर्क-शक्ति परीक्षण (4) मिनेसोटा पूर्व—विद्यालय परीक्षण,

नोट

(5) मेरिल पावर मानसिक परीक्षण, (6) जैसिल विकास अनुसूची, तथा

(7) भाटिया बुद्धि परीक्षण।

(ब) समूह परीक्षा (Group Test)—समूह परीक्षा वह है जो एक ही समय में पूरे समूह पर दी जा सकती है। जहाँ एक साथ अनेक व्यक्तियों का परीक्षण देना आवश्यक होता है, वहाँ यह परीक्षण अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए हैं। यदि नियमपूर्वक लिए जाएं तो इनकी विश्वसनीयता भी कम नहीं है। यह परीक्षाएं सेना, अनुसन्धान, विद्यालय, उद्योग इत्यादि में अति उपयोगी हैं। इनमें सबसे अधिक सुविधा इस बात की है कि इनके प्रयोगों के लिए अति कुशल व्यक्तियों की जरूरत नहीं पड़ती है। सामूहिक परीक्षण प्रमुखतया शब्दिक होते हैं। ये केवल शब्दिक होने के कारण भाषा-ज्ञान पर आधारित होते हैं, इस कारण इनका प्रयोग उन व्यक्तियों पर नहीं किया जा सकता, जो किन्ही कारणों से भाषा का ज्ञान नही रखते हैं। कुछ प्रमुख समूह परीक्षणों के नाम नीचे दिए गए हैं—

(1) आर्मी-अल्फा परीक्षण (2) आर्मी-बीटा परीक्षण

(3) आर्मी जनरल क्लासीफिकेशन परीक्षण (4) क्हूलमैन-एण्ड रसन बुद्धि परीक्षण,

(5) टरमन ग्रुप टेस्ट ऑफ मेन्टल मैच्योरिटी, (6) टरमन-मैक्नीमर टेस्ट ऑफ मेन्टल एबिलिटी

(7) नार्थम्बरलैण्ड टेस्ट्स, (8) सोहनलाला की सामूहिक बुद्धि परीक्षा,

(9) प्रयाग मेहता का सामान्य बुद्धि परीक्षण,

2. (अ) शक्ति परीक्षा—शक्ति परीक्षा द्वारा किसी व्यक्ति की एक विशेष क्षेत्र से सम्बन्धित शक्ति की परीक्षा ली जाती है। इस प्रकार की परीक्षाओं में सर्वप्रथम सरल प्रश्न किए जाते हैं, तदुपरान्त प्रश्न क्रमशः जटिल होते चले जाते हैं। इस प्रकार के प्रश्न छात्र समयानुसार हल नहीं करते; अर्थात् इनकों हल करने हेतु कोई समय निर्धारित नहीं किया जाता है। प्रश्नों को कठिनाई स्तर में व्यवस्थित किया जाता है। इस प्रकार के परीक्षण को गत्यात्मक (Speeded Test) परीक्षण कहते हैं।

(ब) गति परीक्षा—इसमें शक्ति परीक्षा के विपरीत समस्त प्रश्न कठिनाई की दृष्टि से समान होते हैं परन्तु समस्त प्रश्न एक निर्धारित समय में करने पड़ते हैं। दिए समय में जो सबसे अधिक प्रश्न कर सकता है वही सबसे अधिक अंक प्राप्त करता है। इस प्रकार ये परीक्षाएँ मानसिक गति का मापन करती हैं। सभी प्रश्नों का कठिनाई स्तर समान होता है।

3. (अ) शाब्दिक परीक्षा—वह बुद्धि परीक्षाएं जिनके हल करने में शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है 'शब्दिक परीक्षाएँ' कहलाती हैं। शब्दों में हमारा तात्पर्य वर्णमाला के कुछ अक्षरों के योग से नहीं है, शब्दों में हम संख्याओं को भी सम्मिलित करते हैं। इस प्रकार इनसे शाब्दिक योग्यता का ज्ञान प्राप्त होता है।

स्टेनफोई-बिने बुद्धि परीक्षण (The Stanford-Binet Test—I.Q.)

बिने तथा *साइमन* ने (1905) सामान्य बुद्धि परीक्षण सर्वप्रथम बनाया था इस परीक्षण में तीन पदों का सम्मिलित किया गया था इसकी जाँच पचास बालकों पर की गयी तथा मानक भी विकसित किया गया यद्यपि *बिने* का प्रथम प्रयास अधिक महत्वपूर्ण इस दृष्टि से माना जाता है कि *बिने* ने बुद्धि परीक्षण का विकास किया। *बिने* ने इसका बाद में कई बार सुधार एवं संशोधन किया था।

बिने-साइमन परीक्षण का विस्तृत संशोधन *टरमन* ने (1916) में किया।

इसके बाद टरमन तथा मैरिल ने (1937) तथा (1960) में भी संशोधन किया। यह कार्य स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में किया गया इसलिए इसे स्टेनफोर्ड बिने बुद्धि परीक्षण की संज्ञा दी गई। इस परीक्षण का इतने विस्तार से संशोधन किया गया कि आज भी *बिने* का नाम हैं और बुद्धि-लब्धि का पिता कहा जाता है।

(अ) संशोधन में परीक्षा पदों की संख्या में वृद्धि की गई।

(ब) पदों की प्रभावशीलता के लिए सांख्यिकी विश्लेषण किया गया।

(स) प्रशासन तथा अंकन हेतु सावधानी से निर्देशन दिये गए।

(द) बच्चों से युवकों तक के लिए मान विकसित किए गए।

स्टेनफोर्ड बिने परीक्षण का स्वरूप (Structure of Stanford-Binet Test)—दो से पाँच वर्ष की आयु तक के बालकों के लिए प्रत्येक वर्ष के लिए छः पदों की रचना की गई और छः माही का अन्तराल रखा गया। पाँच से चौदह वर्ष के लिए वार्षिक अन्तराल रखा गया। प्रत्येक स्तर के लिए पदों का चयन सावधानी से किया गया। बुद्धि के मापन की दृष्टि से पदों की सम्मिलित किया गया। भौतिक आयु की दृष्टि से पदों को रखा गया। आयु के अन्तराल को महत्व नहीं दिया। पदों की समरूपता को भी महत्व दिया गया। प्रत्येक पद का सह-सम्बन्ध सम्पूर्ण परीक्षा से सह-सम्बन्ध भी ज्ञात किया गया।

सन् (1937) तथा (1960) का संशोधन—*स्टेनफोर्ड बिने* परीक्षण का तात्कालिक संशोधन (1960) का है। सन् (1937) के संशोधन में थोड़ा परिवर्तन किया गया। सन् (1937) में दो वैकल्पिक प्रारूप एल. तथा एम. विकसित किए गए थे। दो विकल्प होने के कारण पुर्नपरीक्षण भी किया गया। परन्तु (1960) में उत्तम पदों का चयन दोनों प्रारूपों में से करके एक ही प्रारूप एल. एम. रखा गया। जिसका प्रयोग आज भी किया जाता है।

स्टेनफोर्ड बिने परीक्षण की पाठ्यवस्तु—इस परीक्षण प्रति वर्ष के आयु के बालकों के लिए पदों का निर्माण किया गया चार विभिन्न आयु के बालकों हेतु पदों को दिया गया है—

(1) दो वर्ष के आयु स्तर हेतु (Two Year Level)

1. तीन छेदों वाला बोर्ड।
2. विलम्ब से अनुक्रिया
3. शरीर के अंगों की पहिचान।
4. ब्लाक डिजाइन का निर्माण।
5. तस्वीर की शब्दावली
6. शब्दों को मिलाना।

(2) छः वर्ष के आयु स्तर हेतु (Six-Year Level)

1. शब्दावली।
2. अन्तर करना।
3. बहु-आकृतियाँ।
4. संख्यात्मक प्रत्यय।
5. विपरीत सादृश अनुभव।
6. उत्तर की खोज करना।

(3) दस वर्ष के आयु स्तर हेतु (Ten Year Level)

1. शब्दावली।
2. ब्लाक की गणना करना।
3. अमूर्त शब्द।
4. कारण ज्ञात करना।
5. शब्द का नाम।
6. छः संख्याओं को दुहराना।

(4) प्रौढ़ स्तर, 15 वर्ष तथा उस से अधिक आयु स्तर हेतु

(Average Adult Level, Age 15 year and More)

1. शब्दावली।
2. पटुता।
3. अमूर्त शब्दों में अन्तर करना।
4. संख्यात्मक तर्क।
5. क्रिया विशेषण।
6. अभिविन्यास।
7. आवश्यक अन्तर, तथा
8. अमूर्त शब्द।

प्रशासन तथा अंकन (Administration and Scoring)—इस परीक्षण की सामग्री एक बाक्स में रखी जाती है। छात्र की अनुक्रिया हेतु एक कागज दिया जाता है। परीक्षण की अनुसूची में प्रशासन हेतु निर्देशन दिए रहते हैं। साधारणतः परीक्षण के लिए 50 से 75 मिनट दिए जाते हैं।

किसी छात्र को सभी प्रश्न सरल करने को नहीं दिए जाते हैं। छात्र की आयु के अनुसार जो अपेक्षा की जाती है वहाँ से आरम्भ करते हैं तथा जब वह सभी प्रश्नों को गलत करता है तब आगे परीक्षण नहीं दिया जाता है। एक सात वर्ष के बालक को पाँच वर्ष की आयु के प्रश्नों से आरम्भ किया जाता है। जब तक वह कुछ न कुछ प्रश्नों को सही करता है परीक्षण देते रहते हैं। जब सभी गलत करता है परीक्षण करना समाप्त कर देते हैं। सही प्रश्नों के अंकन में माह तथा वर्षों को महत्व दिया जाता है। एक प्रश्न सही करने पर दो माह दिए जाते हैं इन सभी का योग करके मानसिक

नोट

आयु ज्ञात कर ली जाती है। जिस आयु स्तर के सभी प्रश्नों को सही करता है उसे उसी आयु के 'वर्षो' में अंक दिए जाते हैं, जिसे बेसल आयु (Basal) कहते हैं IT इस परीक्षण का मध्यमान 100 बुद्धि-लब्धि तथा 16 प्रमाणिक विचलन होता है।

बुद्धि-लब्धि (Intelligence Quotient = I.Q.)—बुद्धि-लब्धि प्रत्यय सामान्य बुद्धि के सिद्धान्त पर आधारित है। इसकी अवधारणा यह है कि बुद्धि एक इकाई के रूप में होती है, जिसे सामान्य योग्यता कहते हैं। इसका एक सूचाक होता है परन्तु कारक विश्लेषण द्वारा जो अध्ययन किए गए हैं उन्होंने बुद्धि को कई कारकों में प्रदर्शित किया है। *स्पीयरमैन* दो तत्व मानता है—सामान्य तथा विशिष्ट योग्यता, इसी प्रकार थर्स्टन ने छः प्राथमिक मानसिक योग्यता (PMA) को ज्ञात किया। इसी प्रकार बुद्धि का अपना स्वरूप होता है। *गिलफोर्ड* ने मानसिक स्वरूप में 120 योग्यताओं को प्रदर्शित किया है। बुद्धि-लब्धि के मानसिक आयु की आवश्यकता होती है। *बिने* के परीक्षण से मानसिक आयु मापी जाती है।

मानसिक आयु (Mental Age)—बुद्धि-लब्धि में मानसिक आयु तथा वास्तविक आयु का अनुपात प्रतिशत में ज्ञात किया जाता है। बिने के परीक्षा से मानसिक आयु ज्ञात की जाती है और वास्तविक आयु पूछने से ही ज्ञात हो जाती है। इसका सूत्र है—

$$\text{बुद्धि-लब्धि (I.Q.)} = \frac{\text{मानसिक आयु (M.A.)}}{\text{वास्तविक आयु (C.A.)}} \times 100$$

मानसिक आयु परीक्षण के प्रश्नों को अंकन करने में महीनों तथा वर्षो में गणना की जाती है।

मूल-आयु (Basal Age)—मूल आयु उसे कहते हैं जिस आयु स्तर के छात्र सभी प्रश्नों को सही कर लेता है परन्तु उसे अधिक आयु के स्तर के सभी प्रश्नों को सही नहीं कर पाता है। इस स्थिति में छः प्रश्नों को सही कर लिया उसे 12 माह के अंक दिए जाने चाहिए। परन्तु ***मूल आयु*** (Basal) के कारण 5 वर्ष के अंक दिए जायेंगे। सात वर्ष के बालक की मानसिक आयु की गणना इस प्रकार की जायेगी।

स्तर	सही प्रश्न	अंक
5 वर्ष आयु स्तर	सभी प्रश्न सही	मूल आयु (Basal) 5 वर्ष
6 वर्ष आयु स्तर	4 प्रश्न सही	8 माह
7 वर्ष आयु स्तर	3 प्रश्न सही	6 माह
8 वर्ष आयु स्तर	2 प्रश्न सही	4 माह
9 वर्ष आयु स्तर	सभी गलत	....
	मानसिक आयु का योग	6 वर्ष 6 माह

$$\text{बुद्धि-लब्धि (I.Q.)} = \frac{\text{मानसिक आयु (M.A.)}}{\text{वास्तविक आयु (C.A.)}} \times 100$$

$$= \frac{6.5 \times 100}{7}$$

$$\text{बुद्धि-लब्धि} = 93$$

बिने परीक्षण का मध्यमान 100 बुद्धि लब्धि होती है। इसलिए यह छात्र सामान्य से निम्न स्तर का छात्र है। इसका प्रमाणिक विचलन 16 होता है।

नोट

तालिका

टरमन ने 2904 बालकों का बिने बुद्धि परीक्षण से वर्गीकरण

1916	(1937) बुद्धि लब्धि	प्रतिशत	(1937) वर्गीकरण
	160–169	0.03	
(1) प्रखर-बुद्धि	150–159	0.20	अधिक प्रतिभाशाली
	140–149	0.10	0.23 प्रतिशत
(2) अधिक प्रतिभाशाली	130–139	3.10	
बालक	120–129	0.10	प्रतिभाशाली 6.70%
(3) प्रतिभाशाली	110–119	18.10	सामान्य से अधिक 16.10%
(4) सामान्य बालक	100–109	13.50	सामान्य 50%
	90–99	23.00	
(5) मन्द बुद्धि बालक	80–89	14.50	सामान्य से कम 16.10%
	70–79	5.60	
(6) मूर्ख बालक	60–69	2.00	मानसिक रूप से दोष की सीमा 6.70%
(7) मूढ़ बालक	50–59	0.40	
	40–49	0.20	मानसिक रूप से दोषी 2.20%
(8) जड़ बालक	30.39	0.03	

इस वर्गीकरण का उपयोग शिक्षक, निर्देशक तथा परामर्शदाता को अधिक होता है। सामान्य बुद्धि तथा उससे अधिक बुद्धि वाले छात्रों को शिक्षा दी जा सकती है। इससे कम बुद्धि वाले छात्रों को प्रशिक्षण दिया जा सकता है प्रतिभाशाली छात्रों की समस्या भिन्न प्रकार की होती है, इसलिए इन्हें पहचानना आवश्यक होता है। उन्हें सही प्रकार का निर्देशन दिया जा सकता है।

30.4.2 अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण (Non-Verbal Test of Intelligence)

रैविन प्रगतिशील परीक्षण आकृतियाँ (Raven's Progressive Matrices)

रैविन ने इस परीक्षण का निर्माण (1938) में सामान्य बुद्धि के मापन हेतु किया। इसे अशाब्दिक परीक्षण भी कहते हैं। इसमें किसी भाषा का प्रयोग नहीं किया जाता है। इसे बिना पढ़े लोगों को भी दिया जाता है। इसे संस्कृति मुक्त परीक्षण (Cultural Fair Test) की भी संज्ञा दी जाती है। किसी संस्कृति का प्रभाव भी नहीं होता है। प्रत्यक्षीकरण तार्किक योग्यता (Perceptual Reasoning) का मापन किया जाता है। इन्हें पेपर पंशिन परीक्षण भी कहते हैं।

रैविन ने इस परीक्षण को कई रूपों में विकसित किया है–

(अ) रंगीन प्रगतिशील परीक्षण आकृतियाँ–बालकों हेतु (Coloured Pregressive Matrices)

(ब) प्रमाणिक प्रगतिशील परीक्षण आकृतियाँ–युवकों हेतु (Standard Progressive Matrices)

(स) उच्च प्रगतिशील परीक्षण आकृतियाँ–युवकों हेतु (Advanced Progressive Matrices)

(अ) रंगीन प्रगतिशील परीक्षण आकृतियों में 3 उपखण्ड– अ, अ ब तथा स हैं। प्रत्येक में 12 आकृतियों के पद हैं। पूरे परीक्षण में 36 पदों को सम्मिलित किया गया है। इन पदों में कठिनाई स्तर उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है। सबसे सरल 'अ' तथा सबसे कठिन 'ब' आकृति परीक्षण होता है। 'अ ब' उप-खण्ड की कठिनाई मध्यम स्तर की होती है। इनके प्रशासन की अवधि 30 मिनट होती है।

(ब) प्रमाणिक प्रगतिशील परीक्षण आकृतियों में पाँच अ, ब, स, द, तथा य होते हैं। प्रत्येक खण्ड में 12 पदों की उनकी कठिनाई क्रम में रखा गया है। इसका प्रयोग व्यक्तिगत तथा सामूहिक दो प्रकार से प्रयुक्त किया जाता है। इस प्रगतिशील परीक्षण आकृति के पदों को दो खण्डों में प्रस्तुत किया जाता है। प्रथम खण्ड को समस्या आकृति कहते हैं तथा द्वितीय खण्ड को उत्तर आकृति कहते हैं। समस्या आकृति की पूर्ति के लिए उत्तर आकृतियों में से परीक्षार्थी को चयन करना होता है। समस्या आकृति को अपूर्ण रूप में प्रस्तुत किया जाता है। सही उत्तर के लिए एक अंक दिया जाता है। प्राप्तांकों को अनूसूची में देखकर बुद्धि लब्धि या शतांश ज्ञात कर लिया जाता है।

रैविन की प्रगतिशील परीक्षण की आकृतियों का उदाहरण–

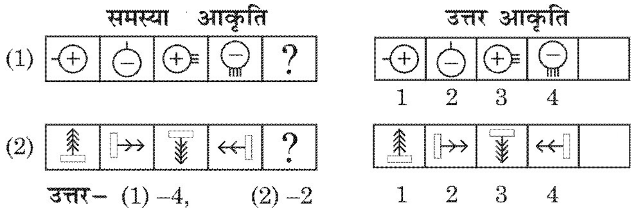

वर्गीकरण (Classification)–इसमें आकृतियों को एक वर्ग में रखा जाता है जो आकृति इस वर्ग में नहीं उसका चयन करते हैं

समस्या आकृति

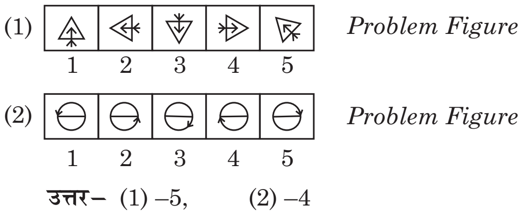

समस्या आकृति को पूर्ण करने हेतु उत्तर आकृति (4) सही उत्तर है।

इस परीक्षण का संशोधन (1956) में किया गया। इस परीक्षण को अशाब्दिक परीक्षण की संज्ञा दी जाती है। तीन प्रमुख योग्यताओं का मापन किया जाता है–

(1) प्रत्यक्षीकरण की योग्यता (Perceptual Ability)

(2) स्थान बोध की योग्यता (Spatial Ability) तथा ध्यान देना चाहिए। अच्छे विद्यालयों में जाकर वहाँ की कार्य-प्रणाली देखनी चाहिए। अध्यापकों को सृजनशील साहित्य का अध्ययन करना चाहिए।

(3) विद्यालय व अभिभावक सम्बन्ध–विद्यालय बालक को शिक्षित करने का एक प्रकल्प हैं माता-पिता तथा परिवार के सदस्य दूरे प्रकल्प के रूप में कार्य करते हैं। इसलिए अध्यापक-अभिभावक संघों की भूमिका विशेष रूप में महत्वपूर्ण है।

इसके साथ-साथ पाठ्यसहगामी क्रियाओं का विकास भी आवश्यक है। इसके लिए कक्षा को समानान्तर रूप में विभक्त करना चाहिए। विज्ञान तथा गणित के समूह, अंग्रेजी, संस्कृत तथा हिन्दी के समूह बनाए जा सकते हैं। निरीक्षित अध्ययन के द्वारा पाठ्येत्तर पुस्तकों का अध्ययन भी करना चाहिए। बुलेटिन बोर्ड, विद्यालय पत्रिका, कक्षा तथा पुस्तकालय, साहित्यिक एवं वाद-विवाद सभाएं, ड्रामेटिक क्लब, प्रिय स्वच्छाएं (Hobbies), प्रदर्शनी तथा मेले, विद्यालय, शिविर, पिकनिक तथा शैक्षिक यात्राएं (Excursions) स्काउटिंग, एन. सी. सी. सहकारी भण्डार, सामूहिक कार्य, खेल आदि के विकास के द्वारा सृजनात्मकता का विकास किया जा सकता है।

अधिगम अभ्यास

1. बुद्धि की एक व्यापक परिभाषा दीजिए और बुद्धि की विशेषताओं को बताइए। बुद्धि की प्रकार भी बताइए।
2. बुद्धि परीक्षण के प्रकार बताइए और इनका उदाहरणों से संक्षिप्त विवरण दीजिए। शाब्दिक और अशाब्दिक परीक्षणों में अन्तर बताइए।
3. बुद्धि परीक्षणों का शैक्षिक निर्देशन में उपयोग बताइए। अशाब्दिक परीक्षण का महत्व भी बताइए।
4. बुद्धि की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
5. बुद्धि और सृजनात्मकता में अन्तर बताइए।
6. बुद्धि परीक्षणों के प्रकार बताइए और अन्तर स्पष्ट कीजिए।
7. बुद्धि का शैक्षिक निर्देशन के महत्व बताइए।

30.5 सारांश (Summary)

- "अभिवृत्ति किसी अनुभव या प्रतिक्रिया करने की तत्परता से सम्बन्धित किसी राय, रूचि या उपदेश का कम या अधिक स्थायी संगठन हैं।"
- इन परिभाषाओं का अध्ययन करने पर अभिवृत्ति की निम्नांकित विशेषताएं होती हैं—
  (1) अभिवृत्ति किसी व्यक्ति, घटना, विचार या वस्तु के प्रति-अनुकूल अथवा प्रतिकूल भावना का प्रदर्शन करती है।
  (2) अभिवृत्तियों से व्यक्ति के संवेग जुड़े रहते हैं।
  (3) अभिवृत्तियाँ अर्जित तथा जन्मजात दोनों ही हैं।
- अभिवृत्ति के निम्नलिखित आयाम होते हैं—
  1. दिशा (Direction)
  2. स्थिरता (Stability)
  3. गहनता (Intensity)
- अभिवृत्ति के प्रकार (Types of Attitudes)
  1. (अ) विशिष्ट अभिवृत्ति (Specific Attitude)
     (ब) सामान्य अभिवृत्ति (General Attitude)
  2. (अ) नकारात्मक अभिवृत्ति (Negative Attitude)
     (ब) सकारात्मक अभिवृत्ति (Positive Attitude)
- अभिवृत्ति मापन का इतिहास अधिक पुराना नहीं है। आज से ठीक साठ वर्ष पूर्व सन् (1927 ई.) में अभिवृत्ति मापने का कार्य सर्वप्रथम *थर्स्टन* ने प्रारम्भ किया।
- इन विधियों को सामान्यत: दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—

  (अ) व्यावहारिक विधियाँ (Behavioural Techniques)

  (1) प्रत्यक्ष प्रश्न विधि, तथा (2) प्रत्यक्ष व्यवहार निरीक्षण-विधि।

  (ब) मनोवैज्ञानिक विधियाँ (Psychological Techniques)

  (1) युग्म तुलनात्मक प्रविधि, (2) समान उपस्थिति अन्तराल प्रविधि
  (3) योग-निर्धारण अन्तराल प्रविधि, (4) स्केलोग्राम प्रविधि,
  (5) क्रमबद्ध अन्तर प्रविधि, (6) विभेदकारिता प्रविधि, तथा

नोट

(7) सिमेन्टिक-डिफरेंशियल प्रविधि।

(अ) व्यावहारिक प्रविधियाँ (Behavioural Techniques)

व्यावहारिक विधियों को प्रत्यक्ष प्रश्न विधि तथा प्रत्यक्ष व्यवहार निरीक्षण को निम्नलिखित संक्षिप्त वर्णन किया गया है–

(1) प्रत्यक्ष प्रश्न प्रविधि (Direct Questioning Technique)

(2) प्रत्यक्ष व्यवहार निरीक्षण प्रविधि (Direct Observation of Behaviour)

(ब) मनोवैज्ञानिक प्रविधियाँ

(1) युग्म तुलनात्मक प्रविधि (Paired Comparison Technique)

(2) समान-उपस्थिति अन्तराल प्रविधि (Equal Appearing Interval Technique)

(3) योग निर्धारण प्रविधि (Summated Rating Technique)

(4) स्केलोग्राम प्रविधि (Scalogram Technique)

(5) क्रमबद्ध अन्तराल प्रविधि (Successive Interval Technique)

(6) विभेदीकरण मापनी (Discrimination Scale)

(7) सिमेन्टिक विभेदीकृत मापनी (Semiantic Differential Scale)

- **फ्रीमेन के अनुसार**–"प्रवणता एक स्थिति या विशेषताओं का समूह है, जो यह संकेत करता है कि व्यक्ति किसी विशेष ज्ञान, योग्यता या प्रतिक्रियाओं के समूह जैसे–भाषा बोलने की योग्यता, संगीत्यय बनने, यांत्रिक कार्य करने की योग्यता का विकास करना है।"
- **सुपर** के अनुसार प्रवणता की चार विशेषताएँ होती हैं–

(1) विशिष्टता (Specificity), (2) एकात्मक संरचना (Unitary Composition),

(3) सीखने की सुगमता (Facilitation of Learning) तथा

(4) स्थिरता (Constancy)।

- प्रवणता की प्रकृति निम्नांकित तीन मान्यताओं पर निर्भर करती हैं–

(1) किसी व्यक्ति की प्रत्येक कार्य के लिए क्षमता समान रूप से अवरोध नहीं हो सकती है।

(2) एक ही कार्य के लिए व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न मात्रा में क्षमता होती है कहने का तात्पर्य यह है कि एक कार्य करने के लिए दो व्यक्तियों में समान रूप से कुशलता की मात्रा नहीं होती है।

- प्रवणता परीक्षण के निर्माण की विधि लगभग वही है जो किसी बुद्धि परीक्षण के निर्माण में प्रयुक्त की जाती है। दोनों प्रकार के परीक्षणों में मुख्य अन्तर उन कार्यो व क्रियाओं अर्थात् विषय वस्तु का भिन्न-भिन्न होना है।
- **(1) सामान्य प्रवणता परीक्षण**–सामान्य प्रवणता परीक्षण वह है जो किसी की सामान्य कार्य दक्षता का मापन करते हैं। यह परीक्षण प्राय: व्यक्ति की सामान्य बुद्धि, मानसिक योग्यता अथवा सीखने की योग्यता का मापन करते हैं।
- **(2) विभेदी प्रवणता परीक्षण**–इस प्रकार के प्रवणता परीक्षण प्राय: *बैटरी प्रारूप* के परीक्षण होते हैं। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि इस प्रकार प्रवणता परीक्षण या तो अनेक परीक्षण का समूह या बैटरी होती है अथवा इस प्रकार के परीक्षणों में अनेक उप-परीक्षण होते हैं।
- **प्रथम परीक्षण पुस्तिका में**–चार परीक्षण होते हैं–

(1) शब्दिक तार्किक योग्यता (Verbal Ability = VA) – 30 मिनट

(2) संख्यात्मक योग्यता (Numerical Ability = NA) – 30 मिनट

(3) अमूर्त तार्किक योग्यता (Abstract Reasoning = AR)– 25 मिनट

नोट

(4) लिपिकीय गति तथा शुद्धता (Clerical Speed and Accuracy = CSA) – 6 मिनट अवधि

- **(ब) यान्त्रिक प्रवणता परीक्षण**

  विभिन्न योग्यताओं का मिश्रण ही यान्त्रिक अभियोग्यता है। इसके अन्तर्गत, मुख्यत: तीन योग्यताएँ आती हैं—

  (1) स्थान सम्बन्धी बोध व कल्पना,

  (2) हस्त निपुणता, जिसमें सभी अंगों का शुद्ध एकीकरण, तथा।

  (3) शक्ति, गति, धैर्य आदि की यान्त्रिक योग्यताएँ।

  इन तीनों ही गुण यान्त्रिक व्यवसायों में चाहिए, लेकिन यह गुण समान भाग में नहीं होने चाहिए।

- **(1) मिनीसोटा यान्त्रिक प्रवणता परीक्षण** (The Minnesota Mechanical Aptitude Test)—इस परीक्षण का सर्वप्रथम निर्माण जूनियर हाई स्कूल के छात्रों के लिए हुआ है। इसमें 33 यान्त्रिक वस्तुएँ होती हैं जो तीन बक्सों में रखी जाती हैं।
- **(2) लिण्डक्वाइट यान्त्रिक प्रवणता परीक्षण** (Lindquist Test for Mechanical Aptitude)—इस परीक्षा का निर्माण लिण्डक्वाइट ने किया था। इस परीक्षण में भी निश्चित समय से निश्चित यान्त्रिक विधियों द्वारा कुछ हिस्सों को जोड़ने के लिए कहा जाता है।
- **(3) जॉनसन तथा अन्य ब्लाक परीक्षण** (Johanson's O'Conner's Wiggby Block Tests)—इस परीक्षा का उपयोग इंजीनियर, ड्राफ्टसमैन, उच्च तकनीकी व्यवसायों का प्रशिक्षण देने के लिए व्यक्तियों का चयन करने से होता है।
- **(4) रूरके मेकैनीकल प्रवणता परीक्षण** (Rourke Mechanical Aptitude Test)—यह परीक्षा इस सिद्धान्त पर आधारित है कि जो व्यक्ति यान्त्रिक अभियोग्यता रखे हैं वे उन व्यक्तियों की अपेक्षा मशीन सम्बन्धी ज्ञान शीघ्र सीख लेते हैं जिनमें इस योग्यता का अभाव रहता है।
- निर्देशन के क्षेत्र में अभियोग्यता का आर्थिक महत्व है। किसी छात्र को व्यवसाय निर्देशन देते समय अभियोग्यता अपना विशेष महत्व रखती है। परामर्शदाता इसी ज्ञान के आधार पर उचित परामर्श देते हैं।
- व्यक्तित्व मापन की प्रविधियों का वर्गीकरण
- शोध कार्य में प्रयुक्त प्रक्रिया के आधार पर व्यक्तित्व मूल्यांकन की प्रविधियों को मुख्यत: दो भागों में बाँटा जाता है—

  (1) तार्किक-प्रविधियों (Logical Techniques) तथा

  (2) अनुभव-जन्य प्रविधियाँ (Empirical Techniques)।

  (अ) अनुभव-जन्य प्रविधियाँ (Statistical), तथा

  (ब) निरपेक्ष (Absolute)।

- **निरीक्षण प्रविधि**—यह बहुत ही पुरातन प्रविधि है। यद्यपि व्यक्तित्व-आकलन के दृष्टिकोण से यह वस्तुनिष्ठ नहीं मानी जाती किन्तु विज्ञान के क्षेत्र में प्रयोगात्मक कार्य इसी प्रविधि का उपयोग करके आरम्भ किया जाता है और वहाँ इसे यथेष्ठ रूप से वस्तुनिष्ठ भी बनाया जा चुका है।
- वैज्ञानिक आधार प्रदान करने के लिए विशेषज्ञों ने इस प्रविधि में निम्नलिखित गुणों का समावेश करने का सुझाव दिया है—

  1. सुव्यवस्थति निरीक्षण
  2. वस्तुनिष्ठ एवं पक्षपात रहित निरीक्षण
  3. परिमाणात्मक निरीक्षण
  4. विश्वसनीयता, वैधता एवं उपयोगिता

नोट

5. मौलिकता, नमनीयता एवं कल्पनाशीलता

- निरीक्षण-प्रविधि के द्वारा किसी मनुष्य के विषय में निरीक्षक स्वयं देकर धारणा बनाता है। इस प्रविधि को अधोलिखित प्रकार से वर्गीकृत किया गया है–

  (1) परिस्थिति-परीक्षण (Situational Tests),

  (2) औपचारिक-निरीक्षण (Formal Observation),

  (3) अनौपचारिक-निरीक्षण (Informal Observation)

  (4) विविध-आलेख (Ancedotal Records)।

  (1) परिस्थिति-परीक्षण

  (2) औपचारिक-निरीक्षण

  (3) अनौपचारिक-निरीक्षण

  अनुस्थित-मापन एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि किसी व्यक्ति ने कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के सन्दर्भ में अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के ऊपर क्या छाप छोड़ी हैं।

- प्रश्नावली एवं अनुसूची अथवा परख-सूची

  इस प्रविधि में व्यक्तित्व-गुणों के विषय में स्वयं उस व्यक्ति से पूछकर ही सूचनायें एकत्रित की जाती हैं। प्रश्न-समूह एक प्रकार की स्वनिर्धारण मापनी ही है।

- मौखिक-प्रश्नावली (Oral-Questionnaire) को ही साक्षात्कार कहा जाता है। स्पष्ट है कि साक्षात्कार दो प्रकार के हो सकते हैं–

  (1) निर्देशित साक्षात्कार (2) अनिर्देशित साक्षात्कार

- व्यक्तित्व के गुणों का मापन आज मनोवैज्ञानिकों ने सम्भव कर दिया है। व्यक्ति परीक्षणों के द्वारा व्यक्ति के जीवन की योजना बनाई जा सकती है।

  व्यक्तित्व मापन की विधियाँ इस प्रकार हैं–

  (1) मौखिक प्रतिवेदन प्रविधि (2) व्यवहार परीक्षण प्रविधि,

  (3) प्रक्षेपण प्रविधि, (4) बाह्य शारीरिक प्रविधियाँ,

  (5) निरीक्षण प्रविधि, (6) समाजमिति प्रविधि,

  (6) साक्षात्कार प्रविधि, (8) व्यक्तित्व की नैदानिक सूची,

  (9) क्रम निर्धारित मान, (10) व्यक्तिगत एकल प्रविधि,

  (11) शारीरिक प्रविधियाँ, तथा (12) मनोविश्लेषण प्रविधि।

- **व्यक्तित्व की नैदानिक अनुसूची–**साक्षात्कार में व्यक्ति से उसके जीवन की सूचनायें प्राप्त करना कठिन हो जाता है।

  1. बैल की समायोजन नैदानिक अनुसूची (Bell's Adjustment Inventory)
  2. मिनीसोटा बहु-आयामी व्यक्तित्व अनुसूची (Minnesota Multidimensional Personality {MMPI})
  3. एडवर्ड्स व्यक्तिगत अभिरूचियाँ अनुसूची (Edward's Personal Preference Schedule {EPPS})
  4. आइजिंग मोडसले व्यक्ति अनुसूची (Eysenck Maudsley Personality Inventory {EMPI})
  5. कैटिल सोलह व्यक्तित्व कारक प्रश्नावली (Cattell 16 Personal Factors Questionnaire)

- **अनुस्थिति मापनी प्रविधि–**इस मान का प्रक्रिया इन्डयाना की न्यू होम कालोनी में हुआ था। इस पर लोग व्यक्तित्व में संशोधन के लिए इस प्रकार के मानों का प्रयोग हैं। *गाल्टन* ने इसका प्रयोग व्यक्तिगत विशेषताओं एवं मानसिक प्रतिमाओं के मापन के लिए किया था।

नोट

क्रम निर्धारण मान दो प्रकार के होते हैं–

(अ) संख्यात्मक अनुस्थिति मापनी (ब) परिस्थिति परीक्षण

- **एकल अध्ययन प्रविधि**–यह विधि प्राचीन काल से प्रयुक्त की जा रही है इसका प्रयोग बालापराधियों के निदान के लिए किया जाता है। सम्बन्धित सूचनायें एकत्रित करके व्यक्तित्व विश्लेषण किया जाता है इसमें सूचनायें इन विषयों पर एकत्रित की जाती है–(1) समस्या, (2) शिक्षा, (3) शारीरिक स्वास्थ्य, (4) परिपक्वता, (5) सामाजिक सम्बन्ध, (6) बुद्धि, (7) पारिवारिक सम्बन्ध, (8) व्यक्तित्व तथा (9) व्यवसाय।
- सर्वप्रथम 1875 में व्यक्तिगत भेद को मान्यता दी गई थी। इसके पश्चात् व्यक्तिगत भेद के सम्बन्ध में अनेक प्रयोग हुए। इनमें *केटिल* तथा *गाल्टन* के नाम प्रमुख हैं। इन्होंने व्यक्तिगत भेदों से सम्बन्धित अनेक प्रयोग किए। परन्तु बुद्धि मापन का कार्य प्रमुख रूप से बिने (1905) द्वारा प्रारम्भ किया गया।

30.6 शब्दकोश (Keywords)

- **अभिवृद्धि**–दृष्टिकोण।
- **विभेदकारिता**–अन्तर करने वाला।
- **प्रवणता**–दक्षता।

30.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. अभिवृत्ति का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
2. अभिवृत्ति का मापन कौन-कौन सी विधियाँ हैं?
3. अभिवृत्ति की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
4. प्रवणता का अर्थ एवं परिभाषा दीजिए, प्रवणता की विशेषताओं को बताइए।
5. प्रवणता एवं बुद्धि में अन्तर बताइए, प्रवणता का सम्बन्ध बुद्धि तथा रूचियों से किस प्रकार होता है।
6. प्रवणता परीक्षण और बुद्धि परीक्षण के निर्माण के सोपान में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
7. क्या व्यक्ति का मापन किया जा सकता है? व्यक्तित्व के मापन की कुछ प्रविधियों का वर्णन कीजिए।
8. 'व्यक्तित्व ही सम्पूर्ण मनुष्य है' इस कथन की व्याख्या करते हुए व्यक्तिव मापन पर अपना विचार प्रस्तुत कीजिए।
9. व्यक्तित्व मापन के लिए रोर्शा स्याही धब्बा परीक्षण प्रविधि का वर्णन कीजिए।
10. व्यक्तित्व मापन प्रविधियों को बताइए। अधिक उपयोगी विधियों की समीक्षा कीजिए।
11. व्यक्तित्व का अर्थ समझाइए।
12. व्यक्तित्व परीक्षण के प्रकार बताइए।
13. प्रक्षेपित परीक्षण की आवश्यकता बताइए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1.	1. मनोवैज्ञानिक पदार्थ	2. संवेग	3. थर्स्टन	4. स्वाभाविक
	5. आर्जित	6. दो	7. अर्जित	9. मूल्य।
2.	1. असत्य	2. सत्य	3. सत्य	4. सत्य
	5. सत्य	6. सत्य।		

नोट

3. 1. (ग) 2. (ग) 3. (घ) 4. (ख)
5. (ग) 6. (घ)

30.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *शैक्षिक एवं मानसिक मापन*– डॉ. आर. ए. शर्मा, आर. लाल बुक डिपो।
2. *शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का विकास*– सुरेश भटनागर, आर. लाल बुक डिपो।
3. *मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन*– भटनागर और भटना, आर. लाल. बुक डिपो।

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY
Jalandhar-Delhi G.T. Road (NH-1)
Phagwara, Punjab (India)-144411
For Enquiry: +91-1824-300360
Fax.: +91-1824-506111
Email: odl@lpu.co.in